



(स्रज भाषा)

हिन्दी वीरकाव्य मे सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति



# हिन्दी-वीरकाव्य में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति

[दिल्ली विश्वविद्यालय की पी-एच० डी० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध प्रबन्ध]

डॉ० राजपाल शर्मा

एम० ए० पी-एच० डी०

आदर्श साहित्य प्रकाशन

दिल्ली-३१

© डॉ० राजपाल शर्मा  
हस्तिनापुर कालिज (साध्य), मोती बाग, नयी दिल्ली २१

प्रकाशक  
आदश साहित्य प्रकाशन  
बस्ट सीलमपुर,  
दिल्ली ३१

●  
प्रथम संस्करण १९७४

●  
मुद्रक  
सतीश ब० एजेंसी द्वारा  
विक्रम प्रिंटिंग प्रेस  
गाहदर, गिन्नी ३२

मूल्य  
पचास रुपये  
(५०००)

Published by R S CHAUHAN

सहपाठी एव प्रेरणा-स्रोत  
सुहृद्द्वर श्री कृष्णकुमार गिलानी  
को  
सादर—सप्रेम ।



## भूमिका

हिन्दी साहित्य का सबसे अधिक समृद्ध भ्रग ब्रजभाषा काव्य है। ब्रजभाषा-काव्य मे जितने अधिक काव्यरूपो का समावेश हुआ और जितने अधिक विषयो को कवियो ने स्वीकार किया उतना अधिक विस्तार और विविध्य हमे परवर्ती खडी बोली म भी लक्षित नहीं होता। खडी बोली मे आचार्य काटि के कवि नहीं हुए और रीति शली का काव्य भी नहीं लिखा गया। नायिका भेद, षडश्रुतुवणन बारहमासा आदि परम्परा शली का काव्य भी खडी बोली म स्वीकृत नहीं हुआ। भक्ति आदि आध्यात्मिक विषया का बाहुल्य ही ब्रजभाषा की विशेषता है। वीरकाव्य की दृष्टि से भी हम ब्रजभाषा के काव्य को अत्यंत समृद्ध पाते हैं। जिन कवियो ने वीरकाव्य-प्रणयन किया उनकी दृष्टि वीररस के साथ अथ रसो पर भी गई और उन्होने ब्रजभाषा के माध्यम से केवल रसव्यजना ही नहीं की वरन् तत्कालीन समाज का चित्र भी प्रकित किया था।

ब्रजभाषा के वीरकाव्य का हिंसी म अनुसंधानपरक दृष्टि से कई विद्वानो ने अध्ययन किया है। उनके अध्ययन म वीरकाव्य के विविध पक्ष उद्घाटित हुए हैं किन्तु समाज को केन्द्र बिन्दु बनाकर इस काव्य का अध्ययन अभी तक नहीं हुआ था। डॉ० राजपाल शर्मा ने वीरकाव्य म सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति को अपने अध्ययन का लक्ष्य बनाकर उस काव्य मे स ऐसे तत्त्वों का अनुसंधान किया है जो समाज की यथाय स्थिति को समझने म योग्य होते हैं।

वीरकाव्य म केवल प्रशस्ति या युद्ध वणन ही नहीं होता वरन् समाज-रचना के विविध पहलू भी उजागर होते हैं। वणन-व्यवस्था या जाति-संगठन, आश्रम-व्यवस्था आदि पर भी कवियो की दृष्टि रहती है यह पहली बार इस प्रबन्ध म स्पष्ट हुआ है। वीरकाव्य म सामान्य जनता के रहन सहन की प्रक्रिया और पद्धति के साथ उनके मनोरंजन के साधन पारिवारिक सम्बन्ध, सस्वार आदि का भी वणन रहता है, यह इस प्रबन्ध से स्पष्ट होता है। धार्मिक विश्वास, अथ-व्यवस्था, राजनीतिक स्थिति आदि भी प्रासंगिक रूप से वीरकाव्य म प्रतिफलित होती है, यह अनुसंधान की प्रविधि से जाना जा सकता है।

डॉ० शर्मा ने अपने शोध प्रबन्ध म इन तथ्यों की ध्यानबीन की है और जो



## हिन्दी-वीरबाल्य में सामाजिक जीवा की अभिव्यक्ति

निष्कर्ष प्रस्तुत करते हैं वे विस्तारहीन होने के साथ-साथ सामाजिक जीवा की अभिव्यक्ति की स्थिति को भी उजागर करते हैं।

वीरबाल्य की बेचन वीररस की समतली उचित तक ही सीमित न मानकर उसे सामाजिक जीवा की अभिव्यक्ति का भी अंग माना जाहिए और वीरबाल्य में अध्येता को अपना दृष्टिकोण व्यापक बनाकर हम बाल्य का अध्ययन करना चाहिए यह हम प्रबंध से स्पष्ट होगा है। डॉ० शर्मा ने अध्ययनाय पूरक अपना प्रबंध तयार किया है, जो अगुमंथा की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी है। डॉ० शर्मा गाधुना के पात्र हैं। उन्होंने एक पुनः और उदात्त विषय को सरल और व्यापक बनाया है।

—विजयेन्द्र स्नातक  
प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, हिन्दी विभाग  
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

## निवेदन

हिन्दी साहित्य के आदिकाल से लेकर रीतिकाल तक उसमें पिगल और ब्रजभाषा के नाम भेद से जिस वीरकाव्य का प्रणयन हुआ है, वह उसकी अमूल्य निधि है। उसकी रचना मठ और मंदिरों की सीमित परिधि से सम्बंधित भक्त-कविया अथवा राजदरबारों के विलासपरक वातावरण से आवद्ध शृंगारी कविया के स्थान पर ऐसे कवियों द्वारा हुई है, जो प्रायः करवाल के भी धनी थे और जिन्होंने देश और धर्म की रक्षा के लिए जनमानस में युद्धोत्साह जाग्रत करने का बीड़ा उठा रखा था। इस कालावधि में रचा गया हिन्दी वीरकाव्य मूलतः ब्रजभाषा की थाती है जो मध्य युग में अनौपचारिक रूप से राष्ट्रभाषा का जसा स्थान ग्रहण किया हुआ था और उसमें राजस्थान, गुजरात, पंजाब, असम और बंगाल तक के कवियों ने वीर रसात्मक एवं भक्ति-काव्य की रचना की है। हिन्दी वीरकाव्य के अतगत हमने अपनी आधार सामग्री के रूप में पिगल, ब्रजभाषा की कृतियाँ ही ग्रहण की हैं। बिगल (राजस्थानी) की रचनाएँ सम्मिलित नहीं की और किसी कालावधि की कृतियों में उपलब्ध निर्देशों के आधार पर उस समय की सामाजिक दशा के निरूपण की शोध परम्परा में एक नवीन कड़ी जोड़ने का विनम्र प्रयास किया है।

प्रस्तुत अध्यायों की पृष्ठभूमि के अतिरिक्त छह अध्यायों में विभक्त किया गया है। पृष्ठभूमि के अतगत हिन्दी-काव्य के आधार पर अब तक हुए सामाजिक चित्रण संबंधी शोध काय की समीक्षा करते हुए, इस सदर्भ में वीरकाव्य की उपादयता प्रदर्शित की गई है। तदुपरांत वीरकाव्य सम्बन्धी अपने दृष्टिकोण का स्पष्टीकरण करते हुए वीरकाव्य की कालक्रमानुसार तालिका दी गई है और समाज चित्रण से गृहीत अभिप्राय तथा उसके विविध पक्षों पर प्रकाश डाला गया है।

प्रथम अध्याय में तत्कालीन समाज की वर्णाश्रम और जाति-व्यवस्था सम्बन्धी धारणाओं को प्रकाशित करते हुए, वर्ण और जातियों की तुलनात्मक सामाजिक स्थिति का आकलन किया गया है। इस विवेचन क्रम का मूलाधार विभिन्न वर्ण और जातियों की बाह्यकृति के मुख्य प्रतीक, उनके कर्तव्य-क्रम तथा चारित्रिक विशेषताएँ रही हैं। वीरकाव्य के नायक मुख्यतया क्षत्रिय नरेश हान के कारण, उन्हीं के सम्बन्ध में अधिक तथ्य उपलब्ध हुए थे, जिससे इस अध्याय का लगभग तृतीयांश क्षत्रियों से सम्बद्ध है। अध्याय के अन्त में यह निर्दिष्ट करने का प्रयास किया गया है कि आश्रम-व्यवस्था का आलोच्यकाल में किस सीमा तक अनुपालन होता था।

द्वितीय घोरबाध्य म सामाजिक जीवा की अभिव्यक्ति

प्रतीय अध्याय म सात-गात, बरनाभरण, श्रृंगार प्रमापात, घातगत तथा धावागमा घोर मनाविदा के साथ ॥ पर प्रमाण द्वातत हुए, सामाय जीवन दशा का चित्रण लिया गया है । सामाय-जीवन म प्रमुखा उपायों व रणारार तथा निर्माण विधि पर प्रमाण दाला से घष का घातार बढा वडा जाता, घत उनकी नामायसी मात्र दरर ही साताय करता वडा है ।

तृतीय अध्याय म आताष्य समाज व पारिवारिक जीवन की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है । इगम परिवार व गन्म्य घोर सम्मि प्रया का पारम्परिक दृष्टिकोण, विविध सस्तर, श्वोहार तथा अभिवादा घोर अनिवि गतरार की रीतियों पर प्रमाण दाला गया है । घोरबाध्य व बन्ध विषय म मुदा व सदग विवाह प्रसगा की भी प्रपातना है, गतम उगम आताष्य गात म प्रानिा घात प्रान प्रानिों पर प्रमाण घोर दर विधि स सम्मन लिए जान वात गिता व नाना शास्त्राचार एव मुत्ताचारों का बणन मिलता है । यही कारण है कि गियाहारमव का विवचा मुख सम्बा हो गया है ।

चतुथ अध्याय म तराालीन धार्मिक स्थिति प्रस्तुत की गई है । इसने घतगत विभिन्न धर्माविविधा व अध्याय व प्रति दृष्टिकोण पर प्रमाण दालत हुए जप-सप घोर दानादिक, उा दृर्या का विवचा किया है जिनका सामाजिकता द्वारा परलाव सुधारने की कामना स आश्रय लिया जाता था । घत म उनकी स्रष्टा घोर सृष्टि मवतार, बरदान घोर शाप, शपथ, भाग्यवा, वमफन घोर पुनजम, ज्योतिष शकु. धपशकुन, स्वप्न फन, जप मत्र घोर भूत प्रेतादि सम्बधी घास्या एव विरगासी पर प्रकाश दाला गया है ।

पचम अध्याय म विवेक्यदाल की धार्मिक स्थिति का निरूपण है । इसमे धार्मिक उत्पादन के प्रमुख स्रोत - कृषि उद्योग तथा व्यवसायो पर प्रकाश दालते हुए, आयात निर्यात तथा नगर दशा का चित्रण किया गया है । घत म रायो की आय के प्रमुख स्रोतो का स्पष्टीकरण किया गया है । द्वितीय अध्याय की सामाय जीवन सम्बधी सामग्री भी प्रकारातर से धार्मिक स्थिति का ही मूर्तमत रूप है, घत प्रस्तुत अध्याय का कलेवर लघु रहू जाना स्वाभाविक था ।

षष्ठ अध्याय मे आताष्यकाल की राजनीतिक स्थिति का चित्राकन किया गया है । अध्याय के आरम्भ म शासक घोर शासित का एक दूसरे के प्रति दृष्टिकोण, तथा शासन सचालन म सहायक व श्री घोर अधिकारियों का स्पष्टीकरण किया गया है । तदुपरालत साय-यवस्था म उमराव घोर सामन्ता का योगदान, सेना के प्रमुख धग, उनकी पताकाएँ, बाद्य यत्र सनिको के धगत्राण तथा शस्त्राश्रो पर प्रकाश दाला गया है (शस्त्राश्र और धगत्राणा के विषय म आवश्यक जानकारी देने के लिए, शोषार्थी अलदर भरतपुर, मथुरा घोर दिल्ली के पुरातत्व मप्रहालया के अधिकारियों का आकारी है) । घत मे मुद्धो के प्रमुख कारण तथा जागीरदारी प्रया आदि घय-जोय वध्यों का स्पष्टीकरण किया गया है ।

अग्नी आधार सामग्री के विषय में हम यह निवेदन करना आवश्यक समझते हैं कि ब्रजभाषा की वीरकाव्य धारा के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ ही प्रकाशित हैं तथा अप्रकाशित ग्रंथ ऐसे राजकीय पुस्तकालयों और व्यक्तिगत अधिकार में हैं—जहाँ से शाघार्थी प्रयत्न करने पर भी उन्हें पाने में असमर्थ रहा है। अतः ब्रजभाषा के वीरकाव्य में से जिन प्रकाशित और अप्रकाशित ग्रंथों को प्रस्तुत उपक्रम में मूलाधार बनाया गया है, वे अप्रलिखित हैं—

पृथ्वीराज रासो, परमाल रासो, कीर्तिलता, रणमल छंद, राव जतसी की रासो, नरहरि, तानसन और गगनक प्रशस्ति परक छंद, रतन बावनी, वीरचरित्र, जहागीर जसचंद्रिका, क्यामला रासो, अलिकर्षा को पडो, गारा-बादल की कथा, शिवराज भूपण, शिवा-बावनी छत्रसैन दशक, छत्रप्रकाश, राजविलास, जगनामा, हम्मीर-रासो, सुजान चरित, रासो भगवत्सिंह का, हिम्मतबहादुर विरुदावली, प्रताप-सिंह विरुदावली, प्रताप-रासो, हम्मीर दूठ (चंद्रशेखर बाजपयो-कृत) और आल्ह-खण्ड—प्रकाशित ग्रंथ तथा हम्मीर-दूठ (खाल-द्वारा), भगवत्तराय की विरुदावली और भगवत्तराय खीचो का जगनामा—अप्रकाशित कृतियाँ।

हमारे ग्रन्थ की पूर्वार कालसीमा वीरगाथाकाल से रीतिकाल पर्यन्त है। इस काल को हमने समाज चयन का दृष्टि से, हिंदी साहित्य के इतिहास की भाँति उपकालों में विभक्त करने के स्थान पर, उसका युगपत् ही समग्र चित्र प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

हमारी आधार सामग्री के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ पृथ्वीराज रासो का रचनाकाल यद्यपि विक्रम की तरहवी शताब्दी है, तथापि यह निश्चित नहीं है कि उसका मूलरूप कौन सा है, हमने उसके सभी प्रकाशित संस्करणों में से समाज चित्रण की दृष्टि से उपयोगी सामग्री का चयन किया है। इस विषय में हमारा विचार निवेदन है कि इनमें से तरहवी शताब्दी में विरचित पृथ्वीराज रासो का मूलरूप चाहे कोई सा भी हो, कि तु व सभी हमारे विवेच्यकाल में प्रणीत हुए हैं। 'रासो' के मूलरूप में प्रक्षिप्त ग्रंथों की योजना करने वाले कवि भी तो इसी समाज के प्राणी थे, अतः प्रक्षिप्त ग्रंथों का प्रणयन चाहे जिस कवि अथवा कवियाँ न किया हो, उनमें हमारे अध्यतनकालीन सामाजिक जीवन का प्रतिबिम्बित होना निर्विवाद है।

परमाल रासो और आल्हखण्ड के विषय में भी दो शब्द अपेक्षित हैं। यद्यपि इन दोनों ग्रंथों का रचयिता जगनिक् भाट माना जाता है, तथापि हमारे द्वारा आधार-सामग्री में गृहीत दोनों ग्रंथों में से कोई भी कदाचित् जगनिक् प्रणीत नहीं है। परमाल रासो में स्थल स्थल पर उसके रचयिता के रूप में कवि चंद का नामोल्लेख मिलता है, जबकि डॉ० श्यामसुंदर दास ने उसके सपादकीय लेख में उसे विष्णु का सत्रहवीं या अठारहवीं शताब्दी में रचित किसी बुदेलखड़ी कवि की रचना होने का मत व्यक्त किया है। परमाल रासो के विषय में भी हम इस विवाद में उलझने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती कि उसकी जिस प्रति का हमने समाज-

## हिंदी-वीरवाच्य में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति

विष्णु की दृष्टि से उपमोग किया है, उमकी रचना करि पन्, जगनिन या किमी सुदेतपटी पवि म से विगने की है। हम तो यह मानकर गने हैं कि उमका रचयिता भी हमारे सामोच्य सामाज म जन्मा व्यक्तिन या घोर उमो वाच्य-गामपी म अपने दवस्तत के सामाजिक पर्यावरण की ही सामग्री की नियोजना की है। प्रस्तुत प्रबन्ध के प्रणयन नाम म अज्ञेय गुरुवर डॉ० नगेन्द्र, डॉ० विजयेन्द्र सातव, डॉ० उष्यभानुगिह, (स्व०) डॉ० सावित्री मिहा तथा डॉ० मोपप्रकाश जी के बहुमूल्य सुभावा ऽ मरा समय-समय पर जो पय प्रगस्त किया या, उमका सामार शब्दी म प्रकट नही किया जा सकता। डॉ० महेन्द्रकृमार ने आत्तून 'हम्मोर-हूठ', पट्टेन धूरवीरसिहने भगवतराय का विरदायसी घोर भगवतराय सीपी का 'जगनामा' तथा डॉ० महेंद्रप्रतापगिह ने 'रामा भगवतगिह का' शीपक कृतियों की हस्तलिखित प्रतियाँ प्रदान करने की अनुमति की थी, जिनने तिए मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। बंधुवर दामादरदास एव श्रवणकुमार उपाध्याय इस कृति का छपी देखकर प्रसन होंगे ही, क्योंकि इसके मूल म उही का प्रच्छान हाय रहा है।

मित्रवर कृष्णकुमार गिलानी के प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित करने की शोपचारिकता निभाना मुझे इस दृष्टि से अनौद्यनीय प्रतीत होता है कि उनके सभी प्रकारी सहयोग के अभाव म मेरी शोप वाय की बेल मगरे ऽ बढ़ पाती। मित्रवर बालकृष्ण शर्मा, राधेश्याम शर्मा, गोपीचंद आनेय, सुसराम शर्मा तथा सहघमिणी नवलश ने टाइप धीसिस को मूल से मिलाने म जो रात दिन परिश्रम किया या, उसके लिए मैं उनका हृदय से कृतज्ञ हूँ। डॉ० मनमोहन गीतम के सक्रिय दिशा-निर्देश घोर प्रोत्साहन के फलस्वरूप ही मैं शोप-सागर को पार कर सका या अत उनके प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन का शिष्टाचार निभाने के स्थान पर यह कहना उपयुक्त है कि इस प्रबन्ध म जो कुछ भी सुन्दर बन पडा है वह उही की कृपा का फल है, प्रबन्ध की 'मूलताए' अवश्य मरी अपनी हैं। श्रीमता म छपी कृति मे कुछ त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक ही या। मैं आदश साहित्य प्रकाशन के बहुधार० एस० चौहान का भी आभारी हूँ, जिहोंने इस कृति को छापने का कष्ट उठाया है।

प्रमोद जन्म दिवस,  
C २/७५,  
जनकपुरी कॉलोनी,  
नयी दिल्ली।

विदुषां भनुचर  
— राजपाल शर्मा

## विषय-सूची

पृ० सं०

१७—४५

पठभूमि

(क) विषय प्रवेश—हिन्दी-काव्य के आधार पर किए गये समाज चित्रण विषयक शोधकाय की समीक्षा, ब्रजभाषा के वीर-काव्य की समाज चित्रण की दृष्टि से विशेष उपादेयता तथा प्रस्तुत प्रबन्ध की मौलिकता। (ख) वीरकाव्य का सामाजिक सर्वेक्षण—ब्रजभाषा काव्य का परिधि विस्तार, वीरकाव्य से गृहीत अभिप्राय तथा ब्रजभाषा में रचित वीरकाव्य की काल-क्रमानुसार तालिका। (ग) समाज का स्वरूप एवं समाज चित्रण से अभिप्राय—समाज शब्द की व्युत्पत्ति तथा उसके साहित्यगत अर्थ विकास की परम्परा, समाज शास्त्रियों की दृष्टि में समाज का स्वरूप, स्वगृहीत अभिप्राय तथा समाज के विविध पक्षों के आकलन सम्बन्धी दृष्टिकोण का स्पष्टीकरण।

### प्रथम अध्याय

सामाजिक गठन

४६—१०७

(क) वण और जाति-सम्बन्धी विश्वास—(अ) चतुर्वर्ण, पट वण, दरस पट् अथवा पट भेष अठारह वण तथा जातियाँ। (ख) वण और जातियों की तुलनात्मक सामाजिक स्थिति—(अ) ब्राह्मण—ब्राह्मणों के लिए प्रयुक्त सजाएँ, बाह्याकृति के मुख्य प्रतीक, सामाजिक प्रतिष्ठा, कर्तव्य-कर्म, (आ) क्षत्रिय—क्षत्रियों के लिए प्रयुक्त सजाएँ, कुच्छ क्षत्रिय-वशों के उत्पत्ति-सम्बन्धी विश्वास, उनके प्रसिद्ध छत्तीस-वण, विविध वशों की सामाजिक प्रतिष्ठा, ब्रह्म-क्षत्रिय, क्षत्रियों की बाह्याकृति, शिक्षा-दीक्षा, (इ) क्षत्रियों की चारित्रिक विशेषताएँ एवं कर्तव्य कर्म—सन गो विप्रादि का संरक्षण, युद्धाय तत्परता, युद्ध से पलायन न करना, युद्धादि में उत्तम नीतियों का प्रयोग, दंड स्वामि भक्ति शरणागत वरसलता, (ई) वश्य—चारित्रिक विशेषताएँ, कर्तव्य-कर्म, (ई) शूद्र—व्यवसाय के आधार पर बनी अनेक उपजातियाँ, (उ) प्रगल्भ गायक जातियाँ—चारण,

भाट दसौधी जांगरे, ढागी (ऊ) अथ जातियाँ—जाट, महीर, गूजर कायस्थ, (ए) मुसलमान—मुसलमानों के लिए प्रयुक्त बनाए बाह्यादृति, मुस्लिम जातियाँ, चारित्रिक विशेषताएँ, (ऐ) नव मुस्लिम (घ) आश्रम व्यवस्था, निष्पत्ति।

द्वितीय अध्याय

१०८—१८४

सामाजिक जीवन

(क) पान-पान—नूतन साध पदार्थों व निर्माण की मनोवृत्ति, भोजन पकाने और खाने के आचार विचार, सुरक्षा के लिए भोजस्थल पर रते जाने वाले पशु-पक्षी, सामाजिक दैनिक भोजन, भोजी के अवसर के विविध साध-पदाय मास भक्षण पद्धति, ताम्बूल, मादक पदाय—सुरा माँग अफीम और गाँजा, दैनिक उपयोग के यतन तथा अथ उपकरण, (ख) वस्त्र—पुरुषों के वस्त्र, स्त्रियों के वस्त्र दैनिक उपयोग के अथ वस्त्र, (ग) आभरण—आभरण सम्बन्धी दृष्टिकोण, स्त्रियों के आभूषण, पुरुषों के आभरण, (घ) शृंगार प्रसाधन—स्त्रियों के सोलह शृंगार पुरय शृंगार (ङ) आवास, (च) आवागमन के साधन—(छ) मनोरंजन के साधन, (क) पशु पक्षियों के युद्ध—हस्ति महिष भेय वपम मृग बक्रे तीतरी और लवाघो के युद्ध श्वापद और विहग शालाएँ (ख) साहस और शौर्य परीक्षण सम्बन्धी प्रतियोगिताएँ—पुरुषों के सिंह और हाथियों से युद्ध लोह एवं दाह स्तम्भों का भेदन मल्ल युद्ध, नाल उठाना मुगदर घुमाना, (ग) कलापरक मनोरंजन विधाएँ—विद्यावाद या काय शास्त्र विनोद केश्या नृत्य नटों के खेल और नाट्य संगीत, ऐंद्रजालिक खेल तथा वार्ता श्रवण (घ) श्रीजात्मक विनोद—(घालक और पुरय)—चकडोरी पतंग गिलोल हड्डडुआ गबडी, हृदक, चौगान मगया जलक्रीडा, छून्नीडा शतरंज बालिका और स्त्रियाँ—पुतलिका पतंग, शुक्रसारिका पाठन, जल क्रीडा, सार पासे, शतरंज, मृगया, निष्पत्ति।

तृतीय अध्याय

१८५—२७६

पारिवारिक जीवन

(क) परिवार के विभिन्न सदस्य और सम्बन्धों का पारस्परिक सम्बन्ध, (ख) पारिवारिक जीवन के सत्कार—शास्त्रोक्त सत्कार गुड्डि-कम नादी आदर और जातकर्म, पुत्र जन्म पर बपाई, जन्म घड़ी दिखाना, निष्क्रमण, छठी, नामकरण, पासनी,

चूडावम, प्रतिमास तुलादान, विवाह—विवाह की शास्त्रोक्त विधियाँ—स्वयंवर, पूर्वानुरागाश्रित युद्धातक विवाह, गाधव-विवाह, खडग विवाह, भ्रासुर विवाह, विनिमय विवाह, अय पद्धतियाँ, (ग) देव विवाह—सगाई या वाग्दान, टीका व लगन, नहलुर, तेल घडाना, उमटन, कवण एव मौर-बधन, कुर्मी विवाहना, भ्रगवानी, तोरण एव कलश उद्वन, बारात को जन वासा देना, ऐपनवारी, बारीठी या द्वाराचार, विवाह मंडप, चढ़ावा, भाँवरें पलवाचार, लह्वौरि, समधोर, दहेज, कपा को माता की शिक्षा, बारात के विदा के समय का शिष्टाचार, वर और वधू का स्वागत, परछन कुलदेवी की पूजा, कवण खोलना, (घ) विवाह से सम्बद्ध कुछ अन्य तथ्य—श्वसुरानय म ही सुहाग रात्रि मनाना, सालह दिन पश्चात् पिता का पुत्री को शिक्षा देना जाना, वधू को विवाह के समय विदा न करके एक वष के मध्य गौना करना, चौथी या नव विवाहिता का प्रथम बार पितृ-गृह आना, वर के गुण, कयाद्या की विनय-मगल या सुखी गृहस्थ-जीवन की शिक्षा प्रदान करना, उत्तम वर-वधू की प्राप्ति के लिए तप विवाह की श्रवस्था, बहु विवाह-प्रथा, (ङ) राज्याभिषेक सस्कार (च) अत्येष्टि सस्कार—सती प्रथा, विधवाया की जीवन-यापन विधि, जोहर प्रथा, (छ) त्योहार—मदन महोत्सव सनीना (रक्षा बधन) नव दुर्गा, दीपावली, गावद्वन पूजा वमत पचमी, शिवरात्रि हाली, मुस्लिम त्याहार, (ज) अग्निवादन और आग्नीर्वादि की रीतियाँ— (झ) स्वागत सस्कार की रीतियाँ, निष्कथ ।

### चतुर्थ अध्याय

#### धार्मिक स्थिति

२७७—२३३

(क) विभिन्न धर्मावलम्बियों का पारस्परिक दृष्टिकोण—(अ) शिव, शक्ति और विष्णु के उपासकों में सौहाद, (आ) वैदिक और जन मतावलम्बियों के कटु सम्बन्ध, (इ) हिन्दू और मुसल माना का असहिष्णु दृष्टिकोण उनका सहिष्णु दृष्टिकोण, (ख) परलोक सुधारने की कामना से किये जाने वाले धार्मिक कृत्य—(अ) तीर्थाटन और देवी देवताओं की पूजोपासना, (आ) पवित्र नदियों में स्नान दान देना, (इ) तपस्या, (ई) धर्म ग्रन्थों का पठन और श्रवण, (उ) यज्ञ करना, (ग) विविध प्रकार के धार्मिक विश्वास और लोक मान्यताएँ—छण्टा और सष्टि, भ्रवतार वरदान और शाप, शपथ, भाग्यवाद कमफन, पुनजन्म और पुरुषार्थ, ज्यातिप, शकुन अपशकुन, स्वप्न फल, जत्र मत्र—मत्रवल से असम्भव कृत्य वर दिलान की क्षमता, युद्धों में तत्र मत्र का प्रयोग, भूत प्रेत, वरुण दूत तथा वीर और पीर, निष्कथ ।



## पंचम अध्याय

## आर्थिक स्थिति

३३४—३६२

(क) समाज की अर्थ व्यवस्था के मुख्य स्रोत—कृषि उत्पादन—  
व्यापार—व्यापार के केन्द्र बुध्न नगर, व्यापार में प्रयुक्त सिक्के,  
यातायात के साधन आघात निर्मात, वस्तुओं के मूल्य, व्यवसाय  
और उद्योग धर्म—मुस्लाफी की गानों के ठेके लेना स्वर्ण की  
खाना के ठेके लेना, वस्त्र धयन, गुडोपकरण, हाथी दाँत की  
वस्तुएँ, काँच की बूडियाँ तथा इत्र आदि बनाता, दुभिष्ट  
(ख) राज्य की अर्थ व्यवस्था के मुख्य स्रोत—बरद नरेशों से  
कर, भेंट या पेशकश में मिला द्रव्य संधि-वार्ता के समय मित्रा  
द्रव्य, शत्रु के नगरी और युद्ध भिखिरो की लूट पाट, चौक और  
हासिल, भूमि कर और जगाति आदि कर, जजिया, तीय सर,  
निष्कष ।

## षष्ठ अध्याय

## राजनीतिक स्थिति

३६३—४४४

(क) शासक और शासित का सम्बन्ध—नरेशों द्वारा प्रजा की  
हित चिन्ता प्रजा में नरेशों के प्रति दबी पारणा प्रजा की राज्य  
कार्यों के प्रति चेतना, (ख) शासन संचालन में सहायक मन्त्री  
और अधिकारी—रानियाँ राज पुरोहित प्रधान, वजीर दीवान,  
भडारी और मोली वरुणो सेनापति तथा अर्थ सैन्य अधिकारी,  
दूत या वकील, अर्थ अधिकारी दरबारा के सदस्य और राज  
कर्मचारी, (ग) सैन्य व्यवस्था—राजकीय सेना में सामन्त और  
उमरावा की सैन्य टुकडियों की बहुनता, सेना के प्रमुख अंग,  
सैन्य पताकाएँ, युद्ध प्रयाण के समय प्रयुक्त वाद्य यन्त्र, सन्धिकों  
के अंग प्राण—लोह टोप, कुण्डी और कुलह, भिन्नम, घुँघ, जिरह  
और बाल्तर, चितता दगल्ला, गोठा जोशन कठ शोभा  
सहस्रमेखा दस्ताने राग हाथी और घोडों का कवच, व्यूह  
रचना, सनिकों द्वारा प्रयुक्त शस्त्रास्त्र, (घ) कुछ अर्थ उल्लेख्य  
तथ्य—(अ) युद्ध के कारण, (आ) युद्ध में नरेशों की उपस्थिति  
की आत्यधिक महत्ता (इ) दंड व्यवस्था, (ई) सामन्त और  
उमरावों को जागीरें देने की प्रथा, (उ) मामन्ता का पारस्परिक  
ईर्ष्या-भ्रैप (ऊ) सनानायक के चयनाय पान के पीडे का प्रयोग,  
(ए) वीरों के सम्मान की कुछ अर्थ विशिष्ट रीतियाँ सिंगेपाव  
सैनिक पडाव पर हरम का ल जाना, (ए) शत्रु देश में सन्ध्यामी  
देशी गुप्तचर भेजना, (ओ) धर्म द्वारा न निष्कमण की प्रथा,  
(ओ) वीरों का जोहर करना, निष्कष ।

आधार एवं सहायक ग्रन्थ सूची

शुद्धि-पत्र

४४५—४५३

४५४—४५६

## पृष्ठभूमि

विषय-प्रवेश —

समाज की वर्तमान-युगीन अवस्था को भली भाँति गमभन के लिए उसकी अतीत परम्परा का ज्ञान परमावश्यक होता है, क्योंकि वर्तमानकालीन सभ्यता अपने सम्पोषक तत्त्वा के लिए विगत युगीन मायताया पर आश्रित रहती है। विगत सामाजिक दशा का परिधान इस दृष्टि में भी विशेष उपादेय होता है कि उगम परिव्याप्त कुप्रवृत्तियाँ के दुष्परिणामों तथा मत्प्रवृत्तियों के सुफल के दिग्दर्शन द्वारा हम सामाजिक में तद्वत कार्यों के प्रति विगहर्षा अथवा अभिरुचि जाग्रत करके वर्तमान दशा में सुधार एवं जन कल्याण का बीज बपन कर सकत हैं। इसी दृष्टिकोण में अनुप्ररित होकर सभी देशों में विविध उपकरणों के माध्यम में भूतकालीन दशा का प्रासाद निर्मित करने की चेष्टा की गई है।

प्राचीनकालीन सामाजिक अवस्था का स्पष्टीकरण के लिए आरम्भ में इतिहासिक विवरणों का भग्नावशेषों में उपलब्ध उपकरणों शिलालेखा तथा ताम्रपत्रादि से प्राप्त तथ्यों का आधार बनाया गया। इन आधारों पर प्रस्तुत किया गया काय समाज की अनादिन भाँकी प्रस्तुत करने में अपर्याप्त रहा है क्योंकि इतिहासिक ग्रन्थों में विभिन्न राजाओं का यशानुक्रम तथा जय-पराजयों सम्बन्धी विवरण का प्राधान्य रहने के कारण समाज के एक अग्रविशेष राजनीतिक जीवन पर ही प्रकाश पड़ पाता है। भग्नावशेषों से प्राप्त सामग्रियों तथा शिलालेखादि व्याख्यापक अधिक थे, अतः विभिन्न विद्वानों ने उनकी स्वमतानुसूल व्याख्या करके पथक् पथक् तथ्यों की स्थापना की है। साथ ही इन उपकरणों में तात्कालिक समाज की स्थापत्यकता और लेखन प्रणाली आदि कुछ सामान्य स्थितियों का ही स्वरूप स्पष्ट हो पाता है। अतः प्राचीन समाज का अधिकाधिक पूण एव विश्वसनीय स्वरूप प्रस्तुत करने के लिए जब अथ माध्यमों की ओर दृष्टिगत किया गया तो सर्वप्रथम सम्भावनाएँ तात्कालिक साहित्य में दृष्टि-गोचर हुई, जिससे अनुप्ररित होकर संस्कृत अथवा तथा हिन्दी के प्राचीनकालीन साहित्यों को आधार बनाकर, उनके वर्तमानकालीन जनजीवन का स्पष्ट करने के प्रयास किए गए हैं।

हिन्दी काव्य के आधार पर हुआ समाज चित्रण सम्बन्धी शोधकाव्य —

साहित्य के आधार पर मध्ययुगीन सामाजिक दशा पर प्रकाश डालने का शोधकाव्य इतिहास विभाग के अंतर्गत आरम्भ किया गया और सन १९५२ ई० में प्रयाग विश्वविद्यालय ने श्री आनन्दप्रकाश माथुर का १६वीं १७वीं शताब्दी का हिन्दी साहित्य के आधार पर अध्ययन नामक शोधप्रबंध पर पी० एल० की उपाधि प्रदान की। इन्होंने अपने विवेचन का आधार कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, रहीम, देव, बहारी, मतिराम भूषण और धनानन्द की कृतियों को बनाया है।<sup>१</sup> इसके उपरान्त हिन्दी विभाग में साहित्याधार पर समाज चित्रण विषयक कार्यों का अपनी धाती में सम्भाल कर शोधकाव्य करना आरम्भ किया। सन १९५५ ई० में मुन्शी मायानन्द की वश्य न राजस्थान विश्वविद्यालय के अंतर्गत आधुनिक हिन्दी कविता में समाज नामक शोधप्रबंध प्रस्तुत किया जिसमें सन १८५० ई० से १९५० ई० तक की सामाजिक दशा निरूपित की गई है। १९५६ ई० में आगरा विश्वविद्यालय ने मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में चित्रित समाज नामक शोधप्रबंध पर श्री गणेशदत्त कापी एच० डी० की उपाधि प्रदान की। यह प्रबंध मुख्यतः दो खण्डों में विभाजित है—काव्याधार पर समाज चित्रण तथा वातावरण साहित्य आदि गद्य कृतियों का आधार पर समाज चित्रण। काव्य सामग्री के विषय में अनुशासन की स्वीकाराति है— इस विषय की आधारशिला तो तुलसी, रहीम और जायसी के ग्रंथों पर रखी गई है। सूर के उद्धरणों का भी खुलकर उपयोग किया है किन्तु वे साम्प्रदायिक अधिक हो गये हैं।<sup>२</sup> इस क्रम में चतुर्थ शोधप्रबंध डा० सामनाथ गुप्त का हिन्दी साहित्य के आधार पर भारतीय सस्कृति है जिसमें सन १९५८ ई० में आगरा विश्वविद्यालय ने पी० एच० डी० की उपाधि के साथ स्वीकृत किया है। समग्र हिन्दी साहित्य का अपना विवेचन का आधार बनाए का शोधक देकर कुछ ही कवियों की कृतियों को अपने विवेचन का आधार बनाए वाला शोधप्रबंधों में अंतिम है श्री सुरद्रवहादुर त्रिपाठी का मध्यकालीन हिन्दी कविता में भारतीय सस्कृति (सन १७०० से १९०० ई० तक) जिस पर गोरखपुर विश्वविद्यालय से डाक्टरेट की उपाधि दी गई है। इन शोधप्रबंधों की काव्य-सामग्री पर दृष्टिपात करने से विदित होता है कि इनका काव्याधार भक्त और शृंगारी कवियों तक परिमित रहा है।

पूर्वोक्त शोधकार्यों के अतिरिक्त काव्याधार विषय के विवेचन की कृतियों के माध्यम से भी तदयुगीन सामाजिक जीवन का स्वरूप प्रस्तुत करने सम्बन्धी शोधकाव्य किया गया है। इन शोधप्रबंधों में रागभंग सभी अनुशासकों ने अपने तथ्याधार के लिए कृष्ण काव्य का आश्रय ग्रहण किया है। उदाहरणार्थ १९५९ ई० में श्री श्यामद्रवहादुर का अष्टछाप काव्य में वर्णित ब्रज संस्कृति १९६० ई० में मुन्शी मायानन्द टटन

१. दलिया— हिन्दी के स्वीकृत शोधप्रबंध पृ० ११६

२. मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में चित्रित समाज टंकित प्रति, पृ० ७८

को जप्टछाप काव्य का सांस्कृतिक मूल्यांकन' १९६१ ई० म श्री वेंकटरमण का 'कवित्रय (कबीर, सूर तुलसी) का सामाजिक पक्ष', तथा १९६४ ई० म श्री हरगुलान का 'मध्ययुगीन कृष्णकाव्य म सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति' शीपक शाध प्रन्धा पर ऋमश अलीगढ, प्रयाग, उम्मानिया और दिल्ली विश्वविद्यालय स पी एच० डी० की उपाधिया प्रदान की गई ह ।

### समाज चित्रण विषयक अद्यावधि हुए शोध काय की समीक्षा —

अप्टछाप, गास्वामी तुलसीदास, सत कबीर जीर दरवारी श्रृ गारिक कविया के कायाधार पर प्रस्तुन किए गए शोधप्रवधा के विषय म कहा जा सकता है कि यद्यपि इन अनुसंधाताओं न अपन आधार ग्रथा स उपलब्ध सामग्री का विद्वत्तापूर्ण उपयोग करके यथामभव तात्कालिक जीवन का पूण स्वरूप प्रदर्शित करन का प्रयास किया है तथापि उनके वष्यविषय के अनुरूप ही सामाजिक जीवन की भी मुस्पष्ट भासी प्रोदभागिन नही हा सकी है । कृष्ण भक्त कविया का अभिप्रेत अपने आराध्य युग की सत्रभावेन भक्ति तथा सामाजिक मायाजाल स जुटवारा पान ले लिए उनके अनुग्रह की याचना करना था । जयात्मजगत् की तुलना म—कृष्ण राधा जीर गापियो के महारास क समक्ष—उनके लिए समस्त गासारिक भाग जीर प्रलोभन ह्य ही रह । अपन नायक श्रीकृष्ण की गौरव गरिमा के अनुकूल सवन अतिमानुषिक वभव जीर कायकलापा की परियोजना करना, उनके लिए अवश्यम्भावी भी था । काव्य परिमाण की दष्टि से इस धारा के अवशिष्ट कविया की सम्मिलित रचनाओं स भी अधिक परिमाण म रचना करन तथा समाज चित्रण का मूलाधार बनने वाल प्रताचशु सूरदास का नेत्राभाव म समसामयिक जीवन का प्रत्यक्ष दशन करने स वचित रह जाना ता स्वत सिद्ध है ही, उनकी कृतिया स उपलब्ध होने वाल विवरणा के विषय म एक आपत्ति यह भी है कि उनके द्वारा प्रदर्शित कृष्ण जीर गापिया के उच्छ खल मन्वधा का सूरदास-कालीन व्रज समाज का वानक समभा जाए, अथवा उस काल का जिसम श्रीकृष्ण का जाविर्भाव हुआ था ? इस प्रकार या ता इनका प्रतीक रूप म ग्रहण करके किसी भी काल क जीवन का प्रतिनिधि स्वीकार नही किया जा सकता अथवा उसे श्रीमदभागवत क रचनाकाल का स्वीकृत करना अधिः निरापद ह क्याकि इस कृति म ही एस विवरण मिलत है जीर सूरदास पर भी इसका अत्यधिक प्रभाव है । सभ्यता की जगत् परम्परा प्रवाहित हान रहा क कारण, इन विवरणा का आशिक तादात्म्य सूरदासकालीन सामाजिक दशा स भी हा जाता ह तथापि क अधि काशनया प्राचीनकालीन जीवन-शशा का ही प्रतिनिधित्व करत ह ।

कबीरदास की वक्ति भक्ति परम्परा म विद्यमान जनक रुढिया के खण्डन-मण्डन म ही अधिक रमी है जिससे कारण समाज क अय विविध पक्ष उनकी दष्टि से आभन रह है । गास्वामी तुलसीदास की कृतिया स उपलब्ध समाज विषयक निर्देश भी उनके परिनिष्ठित लासादश और जघ्यात्मप्रधान विचारधारा के कारण

सामाजिकों के तथाविधि चारित्रिक एवं पारिवारिक जीवन सम्बन्धी उत्कृष्ट गुणा के प्रतीक नहीं माने जा सकते। 'कलियुग वर्णन' के रूप में प्रस्तुत समाज की भाँकी भी तात्कालिक समाज का सहज रूप न होकर, एक भक्त द्वारा समाज को अपने दृष्टि कोण से परखने और उसके दुबल पक्षा का अनिर्जित स्वरूप प्रदर्शित करने के कारण एकांगी रह जाती है। निस्संग दृष्टि से गोस्वामीजी ने समाज पर दृष्टिपात बहुत कम किया है जिसके कारण उनकी रचनाओं में सामाजिक दशा का यथातथ्य चित्र नहीं उभर पाया है।

यह तथ्य तो निर्विवाद है कि भक्तकवि राजनीतिक सम्पर्क से विच्छिन्न ही रहे। समकालीन नया स मिलन तक को इहान (हरि स्मरण) में बाधक हान के कारण कोशक ही समझा था। सतन को कहा सीकरी सी काम तथा "बाउ नप होउ हमहि का हानी" जादि उक्तिया द्वारा उहान अपनी राजनीतिक उदासीनता को स्वयं ही अभिव्यक्त किया भी है। वस्तुतः राजनीतिक उदासीनता और मंदिरा तक ही इन कवियों का परिवेश सीमित रहने के कारण इनकी कृतियों में राजनीतिक पक्ष की अपेक्षाकृत उपक्षा मिलती है जिसके फलस्वरूप इनके आधार पर प्रस्तुत किए हुए समाज चित्रण में भी इस पक्ष को उचित स्थान नहीं मिल सका है। राज्य प्रथम रहने वाले श्रृ गारिक कवियों की रचनाएँ भी राजनीतिक जीवन पर विशेष प्रकाश न डालकर विलास-परक जीवन का ही उद्घाटन करती हैं।

निष्कपत भक्तिवाच्य का माध्यम बनाकर जो सामूहिक अध्ययन और समाज चित्रण विषयक काम हुए हैं वे न तो अपने रचनाकाल के समाज का यथातथ्य समग्र स्वरूप ही प्रदर्शित करते हैं और न समाज के सभी पक्षों को उनमें उचित महत्त्व ही मिल सका है। कृष्णकायधारा पर जाश्रित सामाजिक जीवन के विवरण अधिकांशतः पूर्ववर्ती-कालीन जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसी तरह गोस्वामी तुलसीदास की कृतियों पर आधतः समाज चित्रण का उनका समसामयिक जीवन का अभियोक्तन न हाकर त्रेताकालीन औनत्य दशा का परिचायक जयना अपने मूल रूप से भी अधिक गम्भीर एवं कृत्रिम बन जाना स्वाभाविक है। मुख्य अवधारणीय तथ्य तो यह है कि इन अनुशाधका ने बीरकाव्य कृतियों की इस दृष्टि से सवधा उपक्षा कर दी है जिनमें समाज चित्रण सम्बन्धी इतनी प्रचुर सामग्री विद्यमान है कि उससे इन शाधकाओं का ही पूणता नहीं मिलती, अपितु स्वतंत्र रूप से भी सामाजिक-दशा का एक अधिकाधिक यथातथ्य एवं परिपूण चित्र प्रस्तुत किया जा सकता है।

### बीरकाव्य की समाज चित्रण की दृष्टि से विशेष उपादेयता —

बीरकाव्य के आधार पर अधिनाधिक पूण तथा यथातथ्य समाज चित्रण प्रस्तुत करने के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं —

(क) बीरकाव्यकारा के नायक पूर्वकालीन दशवरीय अवतारा के स्थान पर

प्रायः समसामयिक नरेश रहें अतः उद्देश्यवान् और वातावरण के प्रतिबन्धातुल्य, अपन काय विवरण में समकालीन जीवन के स्थान पर श्रेता और द्वापर युगीन सामाजिक मायताओं की अवतारणा करने की दिव्यशक्ती नहीं रही है जिससे वे स्व रचनाकालीन सामाजिक जीवन का यथातथ्य निदर्शन करते हैं।

(ख) वीरकाव्य प्रणेतारों का प्रतिपाद्य भक्ति पद्धति और दार्शनिक तथ्या की सीमासा, अथवा नायिकाभेद रस जलवागदि का निरूपण नहीं है अपितु समाज के प्रतिनिधि नरेशों के विविध जीवन प्रसंगा का चित्रांकित करना रहा है। "यद् वत्ता मति राजान, तदवत्ता हि भवति प्रजा" की लाकावित् व अनुसृत्य इन नरेशों के चरित्र समकालीन जन जीवन का प्रतिनिधित्व भी करते हैं। वीरकाव्य के युद्ध वर्णना से जहां नाना प्रकार के शस्त्रास्त्र और यन्त्र जादि की जानवागी प्राप्त होती है वहीं उसमें मिलने वाले मंत्रिया और राज्य-व्यवहारिया मन्त्र की निर्देशों से तात्कालिक शासन-व्यवस्था को समझने की कुंजी मिल जाती है। उसमें, प्रसंगानुसृत्य दंड-व्यवस्था संधि विग्रह के नियम, राजा और प्रजा का सम्बन्ध, तथा क्षत्रिय नरेशों की पराजय के मूल कारणों पर प्रकाश डालने वाले निर्देश भी प्रचुर परिमाण में उपलब्ध होते हैं। विवाह के प्रसंग में शृंगार-वर्णन के अंतर्गत जहां आनाच्छकालीन वस्त्र और आभरणों पर प्रकाश डालने वाले निर्देश मिलते हैं वहीं भोजन के वर्णन से खाद्य-पदार्थों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। विविध जातियों की सामाजिक स्थिति मनोविनोद के माध्यम अभिवादन की प्रणालिया, अतिथि मत्कार, पारिवारिक जना का पारस्परिक सम्बन्ध स्त्री-श्रेयता, शत्रु-अपशत्रु, भ्रत प्रेत और जन-मित्र आदि में विश्वास आदि तथ्या का भी, विभिन्न ग्रंथों की मुख्य और अन्तर्गत कथाओं में अभिव्यक्ति हुआ है। तात्पर्य यह कि राजभाषा का वीरकाव्य समाज चित्रण की दृष्टि से अति समृद्ध है और समकालीन नायकों की जीवनी पर आधृत होने के कारण, रचनाकालीन सामाजिक जीवन का भक्ति-काव्य की अपेक्षा कहीं अधिक यथा-तथ्य निरूपक है। तथापि न जान क्या अनुशोधकों ने इस अतीव महत्त्वपूर्ण काव्य धारा की उपेक्षा करके समाज चित्रण के लिए प्रायः भक्ति काव्य का ही प्रयोग करके, चर्चित चरण में अनुसृत्य प्रदर्शित की है। प्रस्तुत ग्रन्थ में इस उपेक्षित काव्य क्षेत्र का ही लेकर समाज चित्रण प्रस्तुत करने का विनम्र प्रयास किया गया है।

### प्रस्तुत ग्रन्थ की मौलिकता —

जसाकि कहा जा चुका है, वीरकाव्य को आधार बनाकर समाज चित्रण प्रस्तुत करने सम्बन्धों अद्यावधि कोई भी शाघनाय नहीं हुआ है। हाँ, वीरकाव्यधारा पर शोध काय करने हुए विद्वानों ने या तो समाज चित्रण की दृष्टि से वीरकाव्य में उनकी सभाष्यता की पार इंगित किया है अथवा आनुपमिक रूप में सामाजिक स्थिति विषयक संकेत दिए हैं। उदाहरणार्थ डॉ० टीकमसिंह तामर ने 'हिन्दी-वीरकाव्य' का कथानक, चर्चित चित्रण, रस, अलंकार, प्रकृति चित्रण, भाषा शैली तथा ऐतिहासिक दृष्टिकोण से

विवेचन करते हुए इसमें समाज चित्रण सम्बन्धी सामग्री की विद्यमानता का निर्देश किया था, और भविष्य में वीरकाव्य के आधार पर समाज चित्रण प्रस्तुत करने का विचार भी व्यक्त किया था<sup>१</sup> किंतु उनकी योजना अभी तक कायम रूप में परिणत नहीं हो सकी है। इसी तरह डा० विपिनत्रिहारी त्रिवेदी के 'चदवरदाई और उनका काव्य' नामक शोधप्रबंध का उद्देश्य—चदवरदाई की यथासाध्य प्रामाणिक जीवनी प्रस्तुत करना और पृथ्वीराजरासो की वणन सौष्टव भाव-व्यंजना, अलंकार छन्द-समीक्षा, और भाषा-सम्बन्धी विशेषताओं का उदघाटन करना था। यही कारण है कि उनके द्वारा द्वितीय अध्याय में वस्तुवर्णन के अंतर्गत प्रस्तुत—व्यूह-वर्णन, नगर वर्णन उत्सव वर्णन, ज्योनार-वर्णन स्त्रीभेद वर्णन पटक्रतु और बारहमासा वर्णन नखशिरस और शृंगार वर्णन तथा अन्धधुद्ध-वर्णन सम्बन्धी सामग्री तारनालिक सामाजिक जीवन पर प्रकाश डालने की अपेक्षा, कवि च० के वर्णन सौष्टव का प्रकाशन अधिक करती है।

डा० त्रिवेदी की भांति डा० सारयूप्रसाद अग्रवाल का भी अभिप्रेत नरहरि ब्रह्म तानसेन गग और रहीम की जीवनीया पर प्रकाश डालने के साथ साथ उनकी अज्ञात और अप्रकाशित कृतियों को हिंदी सप्ताह के समक्ष प्रस्तुत करना रहा है। यही कारण है कि उनके शोधप्रबंध अक्षयरी दरवार के हिंदी कवि के पंचम अध्याय में इन कवियों की कृतियों के आधार पर किए गए समाज चित्रण को इस प्रबंध में मात्र बीस पृष्ठ (१७६ से २६६) ही मिल पाए हैं। हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में विविध कालों की पृष्ठभूमि के रूप में दिया हुआ सामाजिक स्थिति सम्बन्धी विश्लेषण भी इतिहासादि ग्रन्थों की आधारशिला पर आधारित हान के कारण अनुल्लेख्य है।

निष्पत्त वीरकाव्य का समाज चित्रण की दृष्टि से उपयोग अभी तक नहीं हुआ है। वीरकाव्य द्वारा अथवा उसकी विशिष्ट कृतियों पर जा शोधकाय हुए हैं, उनमें अनुशोधका की दृष्टि इन ग्रन्थों की भाषा के स्वरूप पात्रों की ऐतिहासिकता, तथा काव्य मानदंडों के निकट पर उनकी रसवत्ता और सौंदर्य विवेचना करने तक सीमित रही है। यदि समाज चित्रण की दृष्टि से इस काव्यधारा के ग्रन्थों का उपयोग हुआ भी है तो अत्यल्प और जानुपगिन रूप में। फलतः व्रजभाषा के वीरकाव्य का समाज चित्रण की दृष्टि से उपयोग करने वाले प्रस्तुत उपक्रम को इस दिशा में प्रथम और मौलिक प्रयास होने का गौरव स्वयं ही मिल जाता है।

१. आरम्भ में यह विचार था कि उनके पन्तु ॥ के अतिरिक्त सामाजिक दृष्टि से भी इस साहित्य का अध्ययन प्रस्तुत किया जावे। इसी भावना से प्रेरित होकर गाम्भी भी पत्र की गर्दभी। पर इस विचार का अकार अधिक बढ़ जान के कारण सामाजिक अध्ययन सम्बन्धी गाम्भी का यहाँ उपयोग नहीं किया जा सका है। आशा है निकट भविष्य में उम गाम्भी के आधार पर अपना अध्ययन की परिणामों का पाठना के समक्ष रखा जा सकेगा।

## ब्रजभाषा के वीरकाव्य का सामान्य सर्वेक्षण —

आचार्य भिसारीदास न अनेक कवियों का उदाहरण देते हुए बहुत पूब ही निदिष्ट कर दिया था कि ब्रजभाषा की कृतियों के पण्यन के लिए ब्रजपदेश में निवास आवश्यक नहीं है ।<sup>१</sup> जघुना प्रसिद्ध भाषा-ज्ञानिक और भाषा-सम्बन्धी शोधकाय करने वाले विद्वानों का भी मत है कि ब्रजभाषा-काव्य का रचना-क्षेत्र पञ्जाब, राजस्थान, गुजरात, असम, बंगाल आदि तक विस्तृत था और पिंगल ब्रजभाषा का ही आरम्भिक रूप था । डा० मुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा० धीरेन्द्र वर्मा, डा० मोतीनाल मेनारिया, डा० शिवप्रसादसिंह प्रभृति भाषा-ज्ञानि एव शोधका द्वारा व्यक्त किए गए अभिमतता से इस तथ्य की पुष्टि होती है ।<sup>२</sup> सम्प्रति पृथ्वीराजरासो और विजयपाल-

- १ 'मूर कमो-मदन बिहारी कानिनास ब्रज,  
चितामणि मतिराम भूपन मु-कानिये ।  
लीलाधर सेनापति निपट निवाज निधि,  
गोलकठ मिश्र सुन्देव देव मानिय ।  
आनम रहौम रमखानि सुन्दरादिक  
अनेकन सुमति भए कहा ली कमानिये ।  
ब्रजभाषा हेत बजवास ही न अनुमानो,  
ऐसे ऐसे कविन की कानी हूँ सा जानिये ।'

— 'काय-निणय', पृ० ५, छ० १७

- २ (क) 'फिर यह शौरसेनी अपभ्रंश साहित्यिक भाषा, पूब से बदलती गई इसका एक नवीनतर या अर्वाचीन रूप पिंगल नाम से राजस्थान और मालव के कवियों में गहीत हुआ ।'

— 'राजस्थानी भाषा', डा० मुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, पृष्ठ ६५

- (ख) 'राजपूताना में काव्य की भाषा होने का कारण, ब्रजभाषा पिंगल कहलाई'  
— 'ब्रजभाषा साहित्य', डा० धीरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ १

- (ग) 'हिन्दी क्षेत्र के कुछ भागों में, विशेषकर राजस्थान में ब्रजभाषा के लिए पिंगल नाम प्रचलित है'  
''

— 'राजस्थान का पिंगल साहित्य' डा० मोती० मेना०, पृष्ठ १३

- (घ) 'शौरसेनी अपभ्रंश से उत्पन्न ब्रजवाली में साहित्य की रचना वारहवीं शताब्दी से आरंभ हुई । उस समय कम्का नाम पिंगल था ।'

— हि० सा० का आ० प्रति० डॉ० राम० वर्मा पृष्ठ ३५

- (ङ) 'सत्ता से पहले एक सुनिश्चित काव्यभाषा थी अर्थात् शौरसेनी अपभ्रंश जो बाद में विकसित होकर ब्रजभाषा का प्राचीन रूप पिंगल के नाम से प्रसिद्ध हुई । पिंगल उस काल की सर्वव्यापक साहित्य भाषा थी ।'

— 'संयुक्त ब्रज और उ० सा० डा० शिवप्रसाद सिंह पृ० १०



रासो आदि कृतियाँ भाषा तथा साहित्य अध्ययन के प्रयोग में विद्यार्थियों या साहित्यिक श्रम भाषा की ही विधि स्वीकार की जाती है। इसी भाँति विद्यार्थियों को पारस्य नदी में राजसुति के लिए प्रयुक्त अष्टभुजाय श्रमभाषा माँगी जाती है। जबकि बंगाल और अरुण के श्रमसुति में वाप्य रचना करने वाले साहित्यिक और पारस्य आदि कृतियाँ की कृतियाँ तथा गुरु साहित्यिक और उच्च श्रेणी कृतियाँ की गुरुसुती विधि में विद्यार्थियों रचनाओं की भाषा भी श्रमभाषा ही स्वीकार की जाती है। साहित्यिक विद्यार्थियों और बालक म अन्तर्गत में श्रमभाषा के स्वरूप में प्रयोग परियोजना एवं तामा में प्रयोग अत्यन्त आता गया है। किन्तु उम्मीद काव्य-साहित्यिकी हिन्दी-साहित्यिक आदि-

१ पृथ्वीराज रासो विद्यार्थियों की कृति है इस बात की पुष्टि के लिए दृष्टिगत -

(क) मार्गात्तामीय रासो पश्चिमोत्तर भागपटी में विद्यमान पृथ्वीराज रासो पारसी शीषक का उद्धृत करने हुए विद्यार्थियों द्वारा आया है पृथ्वीराज का इतिहास विद्यार्थियों भाषा में अर्थात् भारतीय साहित्य में कविचन्द्र चरदाई द्वारा।

—दे० हिन्दुई मा० का इति० अनु० डॉ० सधुमीयागर या० प० ६६

(ख) भाषाविद् जाज प्रियमन पृथ्वीराज रासो का श्रमभाषा की आदि कृति मानते हैं तथा चार सौ वर्ष पश्चात् हान यात्रा गुरुदास का श्रमभाषा का दूसरा कवि। — दे० लि० सर्वे आ० इ० राण्डे भाग १ पृ० ६६

(ग) राजस्थान का विद्यार्थियों साहित्य, डॉ० मोनीनाल मेनारिया पृष्ठ १५

(घ) पृथ्वीराज रासो की भाषा डा० रामबन्धु सिन्हा पृष्ठ ४४ तथा ५३

(ङ) रासो को विद्यार्थियों की रचना बताने वाला के मत का सङ्ग्रह करने के लिए लिखा गया नरोत्तम स्वामी का लेख — राजस्थान भारती भाग १ स० १, मन् १९४६

(च) डा० शिवप्रसादसिंह भी पृथ्वीराजरासो विजयपालरासो आदि कृतियाँ का श्रमप्रदेश की बोलचाल की श्रमभाषा से भिन्न साहित्यिक प्रयोग के लिए विकसित हुई श्रमभाषा अर्थात् विद्यार्थियों की कृतियाँ मानते हैं। द्रष्टव्य है—

‘सूरपूव श्रमभाषा और उसका साहित्य डा० शिवप्रसादसिंह प० १२३

२ ‘कीर्तिलता का कवि जब जनता के मनोभावों को समझते हुए प्रेम श्रुति गार या भक्ति के गीत लिखता है, तब तो अपनी वाक्यभाषा यानी मयिली का प्रयोग करता है किन्तु जब राजसुति के प्रयाजन से वाक्य लिखता है तब श्रमभाषा की चारण शली और उसके तत्कालीन जवहट्ट रूप को ही स्वीकार करता है क्योंकि यह उस काल की सवमाय पद्धति थी।

—सूरपूव श्रमभाषा और उसका साहित्य डा० शिवप्रसादसिंह पृष्ठ ६३

३ दे०—वही पृष्ठ २ तथा २२७

४ दे०—गुरुमुखी लिपि में हिन्दी काव्य

—डा० हरभजनसिंह, पृष्ठ ४

काल में अद्यावधि अजग्र रूप में प्रवाहित रही है और उसमें काव्य रचना करने वाले कवियों का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक रहा है। हमने भी ब्रजभाषा को इसी व्यापक अर्थ में ग्रहण करते हुए वीर-काव्य का चयन किया है।

वीरकाव्य शब्द से ऐसा आभासित होता है कि हमारी आधार-सामग्री में मात्र युद्ध चित्रण प्रस्तुत करनेवाले ग्रथा का समावेश होगा किन्तु हमने वीरकाव्य को इस बोलचाल वाले सयुचित अर्थ के स्थान पर काव्यशास्त्रीय अर्थ में ग्रहण किया है। अतः ब्रजभाषा के वीरकाव्य के सर्वेक्षण से पूर्व मध्ये में वीर रस के स्वरूप का स्पष्टीकरण उपयुक्त रहेगा।

आचार्यों ने उत्तम प्रकृति वाले आर्थ्य में उत्साह नामक स्थायीभाव को वीर रस की निष्पत्ति का निमित्त स्वीकार किया है।<sup>१</sup> उत्साह की परिभाषा के विषय में विद्वान् मत विभिन्न रखते हैं। उदाहरणार्थ नयायिकों ने उत्साह को 'अय लोका के लिए अशक्य कार्य को अवश्य कर सकने की बुद्धि'<sup>२</sup> माना है। आचार्य विश्वनाथ ने 'कार्य करने में मध्य और उत्कट आवेश'<sup>३</sup> को उत्साह का मूल लक्षण स्वीकार किया है। पण्डित राज जगन्नाथ के मत से 'दूमरो के पराक्रम और दानादि की स्मृति से जन्मा औन्त्य उत्साह कहलाता है।'<sup>४</sup> आचार्य रामचन्द्र गुकल उत्साह का 'साहसपूर्ण आनन्द की उमग'<sup>५</sup> मानते हैं जबकि पण्डित विश्वनाथप्रसाद मिश्र उन्ने महत्काय सम्पन्न करने में प्रवृत्त करने वाला मनावग'<sup>६</sup> स्वीकार करते हैं। इन परिभाषाओं के औचित्य पर विचार करने से स्पष्ट होता है कि नयायिकों द्वारा प्रदत्त परिभाषा से यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि उत्साह का माहस शब्द से क्या पाथक्य किया जाय? क्योंकि दूमरो के लिए अशक्य कार्यों का करने का साहस लिखान की मूल प्रेरणा आनन्दानुभूति के स्थान पर किसी प्रकार का प्रयोजन अथवा द्विवशता भी हो सकती है। आचार्य विश्वनाथ की परिभाषा में कर्ता के प्रयोजन का उल्लेख नहीं है जिससे अमृत कार्यों में प्रदर्शित उत्साह के भी वीररस के अतर्गत समाविष्ट हो जाने की सम्भावना रहती है। पण्डितराज जगन्नाथ की परिभाषा से नायक के महत्काय की ओर प्रेरित होने की ध्वनि तो निकलती है, किन्तु उन्होंने कर्ता की आनन्दानुभूति तथा स्नात प्रेरणा को महत्त्व न देकर उत्साह का

१ (क) 'अय वीरो नाम उत्तमप्रकृतिरुत्साहात्मकः । — 'नाटयशास्त्र', छ० ६६ ग

(ख) 'उत्तम प्रकृतिवीर उत्साह स्थायिभावकः ।' — 'साहित्यदपण', प० ११७

२ "अय रशक्यतया अवघतप्यवश्यकत्तव्यताबुद्धि ।"

— मतिगम कवि और आचार्य', डा० महेन्द्रकुमार पण्ड १०६ पर उद्धृत ।

३ 'कार्यारम्भेषु सरम्भ स्थेयानुत्साह उच्यते ।' — सा० दपण' पण्ड १०५

४ 'परपराजमदानादि स्मृतिज मा औन्त्याह्य उत्साह ।' — 'रसगगाधर', प० ३६

५ 'साहसपूर्ण आनन्द की उमग का नाम उत्साह है ।' — 'चिन्तामणि' पृ० ६

६ "उत्साह वह मनोवैग है जो किसी महत्काय के सम्पन्न करने में प्रवृत्त करता है ।

— हिंदी साहित्य का अतीत, पृष्ठ ६६६

पर अनुकरण-जय प्राप्त बना दिया है। आचार्य गुल ने साहस के साथ आनंद की योजना द्वारा उत्साह का साहस से व्यावहारिक रक्षण तो दिया है किंतु सत असत कार्यों का इस परिभाषा से भी स्पष्टीकरण नहीं हो पाता। पंडित विश्वनाथप्रसाद मिश्र की परिभाषा का भी मनोवेग शब्द 'प्राप्त्यापेक्ष' है। हमारी दृष्टि में 'उत्साह' की यह परिभाषा अधिक उपयुक्त प्रतीत होती है कि लाकहित अथवा स्वाभिमान रक्षण की धारणा से अनुप्रेरित काम सम्पादन की लालसा उत्साह कहलाती है।

मानव कायक्षत्र अति 'यापक' होने के कारण स्वाभिमान रक्षण और तोष कल्याण सम्बद्ध कार्यों में उत्साह प्रशिक्षित करने की अनेक स्थितियाँ मनुपस्थित हो सकती हैं। इन स्थितियाँ व अनुरूप ही वीररस के अनेक भेद हो सकते हैं, किंतु आचार्यों ने उनका उल्लेख करते हुए<sup>१</sup> भी—दानाथ सम्पत्ति लुटा देने में तत्परता स्वधर्म की रक्षा के लिए तन मन-धन 'योद्धावर करने की कामना, पर-पीडन से द्रवित होकर अपने जीवन का सबकुछ म डाल देने की जातुरता तथा अस्तजन जोर अपनी मर्यादा की रक्षा करने की अतः प्रेरणा से रिपुदलन में प्रवृत्त होने वाले 'यत्तियाँ के आधार पर वीररस के दानवीर धर्मवीर दयावीर और युद्धवीर चार भेद ही माने हैं।<sup>२</sup>

विष्णुपति वीरकाव्य के अंतर्गत हमने वे रचनाएँ परिगणित की हैं जिनका प्रतिपाद्य किसी लोकरक्षक अथवा स्वाभिमानी वीर पुरुष के दान तथा धर्मरक्षण अथवा युद्धविषयक कायकलापा की अभिव्यक्ति करना रहा है।

ब्रजभाषा में उपलब्ध वीरकाव्य की संक्षिप्त विवरणयुक्त तालिका कालक्रमानुसार आगे दी जा रही है। वीरकाव्य का सर्वेक्षण करते हुए यद्यपि हिंदी साहित्य के इतिहास ग्रंथों और पत्र पत्रिकाओं का भी उपयोग किया गया है तो भी मूलाधार रहे हैं—

(क) हिंदी वीरकाव्य (पिंगल भाषा में रचित वीरकाव्य)—डा० टीकम सिंह तोमर

(ख) राजस्थान का पिंगल साहित्य — डा० मोतीलाल मेनारिया

(ग) अकबरी दरबार के हिंदी कवि — डा० सरयूप्रसाद जगवाल

(घ) सूरपूर्व ब्रजभाषा और उसके कवि — डा० शिवप्रसाद सिंह

(ङ) मुसमुषी लिपि में उपलब्ध हिंदी काव्य — डा० हरभजनसिंह

(च) मध्यप्रदेश की हिंदी साहित्य का देन — डा० मोतीलाल गुप्त

जय स्रोता में जात ग्रंथों का विवरण उनके साथ द दिया गया है। जिन रच

१ वस्तुतः तु वही वीररसस्य शृंगाररसस्यैव प्रकारा निरूपयितुं शक्यतः । तथाहि प्राचीन एव सपदि विनयमनु सत्यवीरस्य सभवात् । एव पाण्डित्य वीरोपि प्रतीयतः । क्षमावीरे च मूयाः । — रमगगाधर पृष्ठ ४६ ५०

२ (क) स च दानधर्मयुद्ध दयया च ममवितरचतुर्धाभ्यात्

— साहित्यसूचिका ३/२३४

(ख) वीररचतुर्धा दान दया युद्ध धर्मस्तृणाधेरत्माहम्य चतुर्विधत्वान्

— रमगगाधर' पृष्ठ ३६

नामों के विषय में कोई भी टिप्पणी नहीं दी गई है, वे प्रायः डा० तोपर के 'हिंदी वीरकाव्य' नामक शीघ्रप्रकाश से उद्धृत हैं।

### ब्रजभाषा में रचित वीरकाव्य की कालानुसार तालिका

क्रम	रचना का नाम	रचयिता	प्रका० या अप्रकाशित	प्रतिपाद्य तथा विशेष विवरण	
१	१३वीं से १६वीं शता०	पथ्वीराज रामो	चन्द्रदार्द	प्रका०	उनहत्तर समय एव २६१५ प० के इम बहुदाकार ग्रंथ का मुख्य प्रतिपाद्य महाराज पथ्वीराज के शाहू गौरी महाराज जयचन्द तथा भोला भीम आदि में हुए युद्धों का वर्णन करना है।
२	परमाल रासो	अनात		प्रका०	इस कृति का कुछ अंश पथ्वीराज रासो के अन्तिम भाग में प्रकाशित महाबा खण्ड से साम्य रखता है जबकि शेष भाग में चन्दल वंश की उत्पत्ति वनाफला की दिव्य अश्वों की उपलब्धि, आदि कुछ नवीन प्रसंगा की योजना की गई है। ग्रंथ में स्थल स्थान पर उनके रचयिता के रूप में कवि चन्द के नाम की छाप मिलती है, किन्तु इसके सम्पादक डा० श्यामसुन्दर दास ने यह सत्तरह या अठारहवीं शताब्दी के किसी बुदेलखण्डी कवि की कृति होने का मत व्यक्त किया है। <sup>१</sup>
३	आल्हखण्ड	जगनिक		प्रका०	परम्परा से जगनिक द्वारा आल्हखण्ड की रचना किया जाना विश्रुत है, किन्तु आल्हखण्ड की जिस प्रति का प्रस्तुत अध्ययन में उपयोग किया गया है वह

१ 'सूरपूव ब्रजभाषा और उसके कवि', प० १०६

२ दे०— परमालरासो की भूमिका, पृष्ठ ३

- चाल्स इलियट द्वारा भाटा से सुनकर सग्रह की गई सामग्री के आधार पर सन् १९२४ वि० में प्रकाशित की गई थी।
- ८ १३वीं शता० विजयपाल रासी नरहरिसिंह प्रका० प्रथम का वण्य विषय महाराज विजयपाल की दिग्दिजय है। इस समय इसके मात्र ४२ छंद ही उपलब्ध हैं।<sup>१</sup>
- ५ १४२० वि० लग० हम्मीर रासी शाह गधर प्रका० सम्प्रति उस कति में से महाराज हम्मीर देव की रणमञ्जा से सम्बद्ध मात्र आठ छंद ही उपलब्ध हैं जो 'प्राशन पगलम नामक कति में संगृहीत है।
- ६ १४५७ वि० लग० कीर्तिलता विद्यापति प्रका० महाराज कीर्तिसिंह द्वारा स्व पिता के वध कर्ता अमलान को परास्त करने राज्यसत्ता प्राप्त करना।<sup>१</sup>
- ७ १४५७ वि० लग० रणमल छंद श्रीधर प्रका० सत्तर छंदों की इस कति में ईडर व शामक रणमन तथा पाठण के सूबेदार जपर खाँ के मध्य हुए युद्ध का वर्णन है। इसका प्रकाशन प्राचीन गुजर काव्य तथा राम और रामा कयी काव्य नामक कृतियों में हो चुका है।
- ८ १६२७ वि० लग० स्पुट छंद नरहरि प्रका० नरहरि ने शाह बाबर शेरशाह हुमायूँ और अकबर आदि की प्रशस्ति में भी स्पुट छंद लिखे हैं। इनका संकलन और प्रकाशन अकबरी दरबार के हिन्दी कवि नामक साधग्रथ व परिशिष्ट में किया गया है।

१ मूलग्रन्थ अक्षरभाषा और उक्त कवि, पृष्ठ १०१

२ वही, पृष्ठ ६३

६	१६३२ स्फुट छन्द	तानसेन	प्रका०	शाह अकबर और उनके पूर्वजों आदि का प्रशस्ति वणन उपयुक्त ग्रंथ मय छन्द भी संकलित है।
	वि०			
	लग०			
१०	१६४७ स्फुट छन्द	कवि गग	प्रका०	शाह हुमायूँ, अकबर और जहाँगीर आदि का प्रशस्ति वणन।
	वि०			
११	१६५८ रतनबावनी	केशवदास	प्रका०	इन कृतियाँ मथुरा महाराज रतनसिंह वीरसिंह देव और शाह
१२	१६६५ वीरचरित्र	वही		जहाँगीर की दान और युद्धवीरता का वणन किया गया है।
१३	१६६६ जहाँगीर जस-	वही	प्रका०	
	वि०	चन्द्रिका		
१४	१६७५ राणा रासो	दयाल	अप्रका०	शीशोदिया वंश का इतिहास वणन प्रतिपाद्य विषय है। डा०
	वि०	कवि		मोतीलाल मेनारिया ने इसका रचनाकाल १६७५ वि० माना है <sup>१</sup> , जबकि डा० तामर इस १७३७ वि० से १७५५ वि० तक मानते हैं। <sup>२</sup>
१५	१६७५ मानचरित्र	महा०	अप्रका०	—
	वि०	मानसिंह		
१६	१६८१ क्यामला	जान	प्रका०	क्यामला चौहान तथा उनके वंशजों के युद्धादि का वणन। डा०
	वि०	रासा		मेनारिया के अनुसार यह पिगल की कृति है। <sup>३</sup>
१७	१६८८ अलिफखा	जान	प्रका०	अलिफखा चौहान के वीर-कृत्यों का वणन।
	वि०	की पत्नी		
१८	१६८५ गोरा बादल	जटमल	प्रका०	महा० रतनसेन की पत्नी पदमावती को प्राप्त करने के लिए शाह अलाउद्दीन के आक्रमण तथा गोरा और बादल की अदभुत सूझ बूझ और पराक्रम का वणन।
	वि०	की क्या		

१ दे०—'राज० का पिगल सा०', प० ६५

२ दे०— हिन्दी वीरकाव्य, पृष्ठ १८

३ दे०— राज० का पिगल सा०', पृ० ८०

- १६ १६६० मृगुट छन्द वनवारी अप्रका० भमरगिह राठौर द्वारा मत्तावनगी का मारन का मृगुट छन्द म वणन ।
- २० १७०५ जगन्ना उद्यान म अपनि मिश्र अप्रका० महाराज जगन्ना गिह का वणन वणन ।
- २१ १७१० शत्रुमान दूगर गी अप्रका० शत्रुमान हाडा क वीरकाय कतापा का वणन ।
- २२ १७१० जयगिह खरित्र राम कवि अप्रका० मिर्जा राजा जयगिह का खरित्र वणन ।
- २३ १७१२ मृगुट कविता रत्नाकर अप्रका० शाह गुजा की प्रशंसा ।
- २४ १७३० शिवराज  
वि० भूपण  
गिरावावनी  
छत्रसाल दशक } भूपण प्रका० महाराज शिवाजी तथा छत्रसा  
क दान और युद्धवीरता सम्बन्धी  
कृत्या का वणन ।
- २५ १७२६ हिम्मत प्रवाश श्रीपति अप्रका० सयद हिम्मत राँ (बाँग) की  
प्रशस्तिमूत्रक रचना है ।
- २७ १७३२ रत्न रामी कुम्भवण अप्रका० महाराज रत्नासिह द्वारा जीरग  
जय के पुत्रा म उत्तराधिकार  
हनु हुए युद्ध म वीरता दिखान  
का वणन ।
- २६ १७३७ राजपट्टन रणछाड अप्रका० मवाट क राजघरान क इतिहास  
का वणन ।
- ३० १७३७ छत्रसाल निवाज अप्रका० छत्रसाल की प्रशंसापरक रचना  
है ।
- ३१ १७३७ राजविद्यास मान कवि प्रका० उज्यपुरेश राजसिह जीर औरग  
जय के मध्य हुए युद्ध ।
- ३२ १७३८ जयचन्द सतीप्रसाद अप्रका० महाराज जयचन्द के वंशजो का  
से वशावली  
१७५७वि० प्रशस्तिपरक वणन ।
- ३३ १७४० केमरसिह समर हरिनाभ अप्रका० खण्डेला नरेश केसरीसिह का  
से १७५४ वणन ।
- ३४ १७४२ साहिजा म माजम जतसिह अप्रका० मुअज्जमशाह का प्रशस्ति गान ।  
वि० के कवित महापात्र

- ३५ १७६० ग्लोड-रजिनी उत्तमचन्द अप्रका० महाराजा दिलीपसिंह के वंश  
वि० तथा विविध कृत्या का प्रशस्ति  
वणन ।
- ३६ १७६२ वचनिका } अप्रका० महाराजा राजसिंह की वीर-  
वि० वन्द कवि तादि का प्रशस्तिपरक वणन ।
- ३७ १७६४ सत्य स्वरूप } अप्रका०  
वि०
- ३८ १७६७ छत्र प्रकाश गारलात प्रका० महाराज छत्रसाल बुदला के  
वि० युद्धादि का वणन ।
- ३९ १७७० जगनामा श्रीधर प्रका० दिल्ली सल्तनत हस्तगत करन के  
वि० निरु परगनासियर और जहाँनार  
शाह के मध्य हुए युद्ध का वणन ।
- ४० १७७५ खीची जानि मूकजी अप्रका० खीची वंश के विविध नरेश का  
वि० की वंशावली प्रशसापरक वणन ।
- ४१ १७८३ वि० बाणी विनास केवलराम अप्रका० जूनागट के नवाबों की प्रशसा ।
- ४२ १७८० जगन दिग्गज हरिकेश अप्रका० जगतसिंह (जयपुर नरेश) तथा  
वि० अय राजवंश का वणन ।
- ४३ १७८५ हुम्मीर-रामा जोधराज प्रका० अलाउद्दीन और महाराज हुम्मीर  
वि० दव के मध्य हुए युद्ध का वणन ।
- ४४ १७९१ साबर युद्ध } अप्रका० सवाई जयसिंह द्वारा लड़े गये  
४५ वि० जाजव युद्ध } श्रीकृष्णभट्ट अप्रका० युद्ध का वणन एवं यशगान ।  
४६ बहादुर विजय }  
४७ जयसिंह गुण मरिता } " "
- ४८ १७९२ रामा भगवत- सदानन्द अप्रका० भगवतराय खीची (अथासर) के  
वि० सिंह युद्ध का वणन ।
- ४९ १८०७ भगवतराय कवि अप्रका० भगवन्तराय की दान दया तथा  
वि० विरदावती गापाल युद्ध धीरता सम्बन्धी प्रशस्तिपरक  
रचना है । सवत १९१० वि०  
की प्रतिलिपि की एक अनुलिपि  
कप्तन सूरवीरसिंह ए० टी० एम०  
अलीगढ के फाम विद्यमान है ।
- ५० १८०८ श्री भगवतराय मुहम्मद अप्रका० सहादत खाँ और भगवतराय के  
वि० खीची का जग खाँ मध्य हुए युद्ध का वणन करना  
लगभग नामा मुख्य प्रतिपाद्य है । स० १९११  
की एक प्रतिलिपि कप्तन सूरवीर  
सिंह के पास है ।



- ५१ १८१० भगवन्तराय शम्भुनाथ अप्रका० महाराज भगवन्तराय का यश  
वि० यश वणन मिश्र वणन । यश की प्रतिलिपि प०  
लगभग रामप्रसाद द्विवेदी, गोपालपुर  
डाक० असनी, जिला फतेहपुर  
का पाम उपलब्ध है ।<sup>१</sup>
- ५२ १७६४ तुल वशावली शाहजू अप्रका० बुदलगढी नरेशा की वशावली  
का वणन ।
- ५३ वि० लक्ष्मणसिंह पंडित महाराजा लक्ष्मण सिंह का  
प्रकाश पशस्तिगान ।
- ५४ १८६७ स्फुट-कविता माहन अप्रका० विविध नरेशा के युद्ध और दान  
वि० भट्ट वीरता सम्बन्धी वणन ।
- ५५ १८०२ जग जस यदुनाथ वसविलास क रचयिता क रूप  
वि० म ही प्रसिद्ध कवि यदुनाथ की  
जग जस नामक एक अन्य कृति  
का पता चला है जो खाण्डेराय  
रासा नामक एक बृहत् संग्रह  
ग्रन्थ में संकलित है ।<sup>२</sup>
- ५६ १८०७ अजमतख़ाँ बलदेव अप्रका० बलदेव मिश्र जाजमगन्-नरेश  
वि० प्रकाश मिश्र अजमतख़ाँ के राजकवि गुन और  
मन्त्री थे । अजमतख़ाँ के पिता  
विश्वरामसिंह को तख्तख़ाँ की बाद  
शाह न मुस्लिम बना लिया था,  
किन्तु अजमतख़ाँ स्वयं को राज  
पूत कहते थे । ग्रन्थ में महाराज  
का यश-वणन है ।<sup>३</sup>
- ५७ १८१० सुजान चरित सूदन प्रका० महाराजा सूरसेन द्वारा लड़ी गई  
वि० सात लड़ाइयों का वणन ।
- ५८ १८१२ ब्रजेन्द्र वशा माती अप्रका० भरतपुर राज्यवश का सविस्तर  
वि० बली राम वणन किया गया है ।

- १ दे०— हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की सारांश भाग २ पृष्ठ ६३
- २ विशेष विवरण के लिए देखिए 'जोभा निबंध संग्रह' चतुर्थ भाग की प्रस्तावना ।
- ३ 'हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों का अठारहवाँ श्रमामिक विवरण', सन १९४१-४३, भाग १ पृ० ६७
- ४ दे०— मत्स्यप्रसाद की हिन्दी साहित्य की दृष्टि, डा० मानीलाल गुप्त पृ० २१३

पठभूमि

- ५६ १८१५ वि० हरदो-  
वि० चरित्र  
६० १८१८ वि० ब्रजभाषा  
लगभग पचास  
६१ १८२४ वि० करहिया की गुलाब  
रामसी कवि  
६२ १८२७ वि० साखा  
६३ १८३२ वि० हम्मीर महस  
लगभग रासो कवि  
६४ १८३२ वि० कवित्त लाल  
६५ १८३७ वि० प्रताप रासो जाचौर  
जीवण कवि  
६६ १८३७ वि० करनपी घाट लान अप्रका०  
की लडाई (भा) वीर हजारा गणपति  
भारती  
६७ १८३५ वि० रतना उत्तमचन्द  
१८६४ वि० हमीर की भण्डारी  
बात  
६९ १८४५ वि० नरद भूषण मान  
७० १८४७ वि० प्रताप मित्रराम  
पचीसी भट्ट  
७१ १८४९ वि० हिम्मत पदमाकर प्रका०  
बहादुर  
विरावली
- विहारी अप्रका० राजा हरदोल व वीर-कृत्यो का  
लाल वणन ।  
दत्त (देवदत्त) राजा ब्रजराजदेव का पराक्रम  
गुलाब प्रका० परमारा (आतरी) और भरतपुर-  
कवि नरेश जवाहरसिंह के युद्ध का  
साखा रगलाल महाराज जवाहरसिंह  
लाल अप्रका० के आश्रित कवि थ । ग्रय म  
महाराज की वशावली और  
प्रशस्ति वर्णित है ।  
अलाउद्दीन और राव हम्मीर के  
मध्य हुए युद्धो का वणन ।  
महाराज महीपनारायण सिंह का  
पराक्रम वणन ।  
ग्रय म अलवर राज्य क  
संस्थापक प्रतापसिंह जी के  
साहसिक कार्यों और युद्ध का  
वणन है ।  
दरभगा नरेश नरदसिंह का यश  
वणन ।  
सवाई प्रतापसिंह का यश वणन ।  
, रणजोरसिंह का यश-वणन ।  
ओडछा नरेश प्रतापसिंह का यश  
वणन ।  
महाराज हिम्मत बहादुर और  
अजु नसिंह का युद्ध-वणन ।

१ दे० श्री हिन्दी साहित्य ममिति भरतपुर, स्वण जयती ग्रथ पठ ३४  
२ दे० 'मत्स्य' हि० सा० की देन' पठ १७८

- ७२ १८५१ वि० प्रतापसिंह पदमार प्रका० महाराज प्रतापसिंह के साथ जीव  
विश्वनाथजी युद्धवीरता का वर्णन ।
- ७३ १८५२ वि० समर सागर मान अप्रका० राजकुमार धर्मपाल द्वारा निर्गी  
(सुमान) श्रमज अधिकारी को वश में करने  
का वर्णन ।
- ७४ १८५७ वि० राठौड़ }  
लगभग चरित्र }  
रावल } मदन भट्ट  
७५ चरित्र } (ज पुर) के आश्रित कवि थे ।  
जयशाह } प्रथम जायसदाता को प्रशस्ति  
७६ मुजश- }  
प्रकाश }
- ७७ १८५३ वि० रासा भया शिवनाथ बहादुरसिंह का बलरामपुर के राजकुमार बहादुरसिंह का युद्ध वर्णन ।
- ७८ १८५३ वि० अजीतसिंह दुर्गादास अप्रका० महाराज अजीतसिंह और मराठों  
फत्ते या म हुए युद्ध का वर्णन ।  
नायक रासा
- ७९ १८५७ वि० रायसा शिवनाथ अप्रका० धारा नरेश जसवर्तसिंह तथा रीवा  
नरेश अजीतसिंह के मध्य हुए युद्ध का वर्णन ।
- ८० १८६७ वि० बघेलवश अजबश अप्रका० अजबेश नरहरि भाट के वंशज  
वर्णन और रीवा के महाराज जयसिंह तथा विश्वनाथ के आश्रित कवि व  
श्रम व गणावली का वर्णन है ।<sup>१</sup>
- ८१ १८७९ वि० उदितकीर्ति ब्रजनाथ अप्रका० काशीनरेश महाराज उदितनारा  
प्रकाश भट्ट यणसिंह का वंश वर्णन ।
- ८२ १८८२ वि० विजय सुसाल अप्रका० धाना के टिकाने के लिए विनय  
सग्राम सिंहजी और बनवतसिंह के मध्य हुए भगडे का वर्णन ।<sup>१</sup>
- ८३ १८८३ वि० हम्मीर हठ ग्वाल अप्रका० महाराज हम्मीरदब जोर शाह  
लगभग अलाउद्दीन के मध्य हुए युद्ध का वर्णन । कृति की एक अनुलिपि

१ दे०—हस्त० हिन्दी पुस्तकालय का संक्षिप्त विवरण भाग १, प० १२

२ दे०—वही, प० ८६

३ दे०—'मत्स्यप्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन' प० १८९

डा० मट्टकुमार, रीडर दिल्ली विश्वविद्यालय के पाम विद्यमान है जिसकी पुष्पिका म प्रथ का रचना-काल १८८५ वि० दिया हुआ है।

८८ १६०२ हम्मीर चन्द्रशेखर प्रका० महाराजा हम्मीरदेव और शाह  
हठ वाजपयी जलाउद्दीन के युद्धों का वणन।

### गुरुमुखी लिपि में उपलब्ध ब्रजभाषा का वीरकाव्य

१	१६८० वि०	हनूमान नाटक	हृदयशाम अप्रका० भल्गा	संस्कृत के हनुमन्नाटक का भाषा नुवाद है। <sup>१</sup>
२	५	वचित्र-नाटक	गुरु गाविन्द सिंह	यह एक संग्रह ग्रंथ है। इसमें अब तार क्याभा का गुरु गाविन्दसिंह न वीररस में वणन किया है। इस ग्रंथ में अपनी कथा शीपक के जनमन उनके भगानी युद्ध नागौन युद्ध, 'खानजादे का आक्रमण तथा 'हुसनी युद्ध भी संकलित है जिनका उन्होंने एक भुक्तभागी के रूप में वणन किया है। <sup>१</sup>
३	ता नी	गुरु शाभ प्रथ	सेनापति अप्रका०	यह गुरु गाविन्दसिंह का प्रथम पद्यबद्ध जीवन चरित्र है। <sup>१</sup>
४	का प्र थ मा	जगन्नामा	जणीराय अप्रका०	औरंगजेब के सेनापति अजीम खा और गुरु गाविन्दसिंह के मध्य आनन्दपुर के मगान में हुए युद्ध का वणन। <sup>१</sup>
५	६	गुरु विलास	मुक्तामिह	१ गुरु गाविन्दसिंह का जीवन चरित्र ७ हान के कारण उनके विभिन्न ६ युद्ध और दानादि का भी वणन ७ ई० किया गया है। <sup>१</sup>

१ गुरु० लि० म हिन्दी का०', प० १६०

२ से ५—वही, प० १६०, ६६४ ६६, ५०६ २८०

३६			हिंदी-वीरकाव्य में सामाजिक जीवा की अभिव्यक्ति	
६	स्फुट छंद	हर्षिकवि	अप्रका०	गुरु गोविन्दसिंह के युद्धों का स्फुट छंद का वर्णन है। <sup>१</sup>
७	वरण मरण	हसागम	अप्रका०	प्रथारम्भ में आश्रयदाता गुरु गोविन्दसिंह की प्रशंसा की गई है। 'वर्ण विषय महाभारत के 'वरण मरण' नामक पद्य का ब्रज भाषा में अनुवाद करता है। <sup>१</sup>
८	सलय परब	मगल	अप्रका०	महाभारत के 'शल्य पर्व' का अनुवाद है। प्रथारम्भ में आश्रयदाता गुरु गोविन्दसिंह की प्रशंसा की गई है। <sup>१</sup>
९	स्फुट छंद	मुद्गर	अप्रका०	स्फुट छंद में गुरु गोविन्दसिंह की दानशीलता प्रताप, यशस्विता का वर्णन है।
१०	अश्वमेध भाषा	टहिवण	अप्रका०	महाभारत के अश्वमेध पद्य का अनुवाद है। प्रथारम्भ में आश्रयदाता का प्रशंसा-वर्णन किया गया है। <sup>१</sup>
११	द्राणपर्व	बुधरग	अप्रका०	महाभारत के द्राणपर्व का अनुवाद करत हुए बुधरगनी ने अपना आश्रयदाता गुरु गोविन्दसिंह का यशस्वर्णन किया है। <sup>१</sup>
१२	वीर जय-मिह	बनवाराग	अप्रका०	पद्य का रचनाकाल लगभग १७७० ई० है। वर्णन विषय पटियाता-तन्त्र (मरमिह) द्वारा उग्रवी भट्टी मुसलमानों का पराजित करना है।
१३	स्फुट-छंद	जातम		गुरु गोविन्दसिंह का प्रशंसा वर्णन किया है। <sup>१</sup>

१ ब्रजभाषा के कृष्ण पञ्चाबी नाम से प्रथम गायन नाम की प्रचारिणी परिषद में २०१६ अर्थात् १९८१ ई०

२ म ७—पृष्ठ १७१, १७६, १७७, १७८, १७९, १८०

३ गुरुमुखी विद्या में हिन्दी काव्य पृष्ठ २, २

## समाज का स्वरूप एवं समाज-चित्रण से अभिप्राय —

उदभव की दृष्टि से 'समाज' शब्द सस्कृत के 'समाज' शब्द से सम्बद्ध है। उसकी व्युत्पत्ति सम' उपसर्ग-पूर्वक 'जज घातु म' घञ् प्रत्यय के योग से मानी जाती है, तथा उसके काशगत अर्थ—'पशुना स भिन्न समूह', 'सभा तथा 'हाथी' हैं। प्राचीन सस्कृत साहित्य में से वाल्मीकि रामायण में 'समाज' शब्द का प्रयोग एसी प्रदशनी या श्रीशाम्बली के अर्थ में किया गया है जिममें नट-नतकादि भाग लेने थे। महाभारत में उसका प्रयोग श्रीडास्यली के साथ साथ प्रतियोगिता और श्रीडास्य एकत्र जनसमूह' के भी अर्थों में किया गया है। मनुस्मृति में 'समाज' शब्द स पदशनी का बोध हाता है जसमें पनजनि न विशेषतया 'क्रीडाय एकत्र जनसमूह' और सामान्यतः किसी भी प्रकार के जन समवाय के लिए 'समाज' शब्द प्रयुक्त की है। कामसूत्रकार वात्स्यायन के समय में रसानापादि सम्बन्धी गाण्डिका समाज कहलाती थी। जबकि सम्राट अशोक के काल में जसमें और हिंसक कार्यों से परिपूर्ण समाजों की भी आयाजना की जान गयी थी, जिमसे विद्वान् होकर उहान एम समाजों पर प्रतिबन्ध लगा दिया था।

हरिदत्तजी यन्त्रकार न मौर्य-युग में समाजों के अन्तर्गत पशु और रथा की दौड़ा की आयाजना दिपात रूप में व्यक्त किया है कि परवर्तीकाल में व प्रेक्षया गान भी जहाँ नाटकादि का प्रदर्शन होना था 'समाज' कहलाता था। तात्पर्य यह कि प्राचीन सस्कृत काल में 'समाज' शब्द का प्रयोग, प्रदशनी श्रीडास्यली, गाण्डिका, प्रेक्षयागार और पशु प्रतियोगिता जादि एसे अर्थों का बोध कराता था, जो अज अप्रचलित हो गए हैं।

- १ समाज, पु० (सवीयन्त्रेति। स+अज+घञ्) 'अजेव्यघञयो २।४।५६, इति वीभावान। (अजि प्रज्योश्च। ७।३।६०। इति कुत्व निषध) पशुभिन्नाना समूह। इत्यमरः ॥ सभा। इति ह्रस्वचन्द्र × × × हस्ती इति अनेकाथ काप। शब्दाथ कल्पद्रुम', ५।३७१
- २ नागजके जनपद प्रहृष्टा नट नतका। उत्सावाश्च समाजाश्चवघ्नन राष्ट्रवधना। 'वा० रा०, (अया० वा०) ६७।१५
- ३ (क) 'मदी भूत समाज च वादिवस्य च निस्वन। 'महा०', आ० प० १३७।३ ६
- (ख) 'स समाजजन सर्वो निश्चल स्थिरलोचन।' वही, १३०।७
- ४ सभा प्रपाशालावणमद्यान विभ्रया। चतुष्पथाश्चक्षयवक्षा समाजा प्रेक्षणानि च। 'मनु० ६।२६४।
- ५ दे०— पनजलिकालीन भारत टा० प्रभुत्याल भित्तन, प० २४८
- ६ ७— दक्षिण— प्रा० भा० के क० विनाद', डा० हनारीप्रसाद द्विवेदी, प० ६१
- ८ देविण— भा० का सा० इति०, पृ० १२८

समाज शब्द का उगम अद्यतन अथ से अगत गम्यद्वय अथ में प्रयोग भूत है।  
 'नीतिशतक' में मिलता है, जिगम 'विद्वद्वय का समाज की गणा दी गई है।'  
 श्रीमद्भागवत में समाज को गमाथ साध माथ 'गम्बध-गूयन अथ में भी प्रयोग  
 किया गया है।' प्राचीन हिन्दी साहित्य में भी यग विशेष का नागा का गगटन का  
 'समाज अभिहित कर्म की प्रवृत्ति मिलती है। पद्मीराजरागः म उम राज-गमा,  
 मित्रो की गोप्यो,' सगोत्रिया का गगटन तथा परिजना का गमूह' का अथ में प्रयोग  
 किया गया है जबकि गोस्वामी तुलसीदास ने भी उगवा शाक-समाज राज-गमाज  
 और 'सबलत्र मतनि' के रूप में उगवा गग विशेष के गगटन के अथ में प्रयोग किया है।

'समाज शब्द के अंग्रेजी पर्याय सोसायटी शब्द का भी प्रायः इन्हीं अर्थों में  
 प्रयोग मिलता है। मुरे-बोश में उगवे अथ विवाग पर प्रकाश डालने हुए सोसायटी  
 शब्द को अंतरगता, साथ की इच्छा करना मानवा के समागम तथा जनगमूह जग  
 अर्थों में प्रयुक्त दिखाया गया है। तात्पर्य यह कि हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का ही  
 साहित्या में उसका यापक अथ के स्थान पर सवुचित अथ में प्रयोग मिलता है।  
 इस दृष्टि से समाज शास्त्रियों ने समाज शब्द से क्या अभिप्राय ग्रहण किया है इस  
 तथ्य पर दृष्टिपात करना अनुपयुक्त न होगा।

समाज शास्त्रियों द्वारा समाज की जो परिभाषाएँ दी गई हैं उनमें भी  
 पर्याप्त अंतर मिलता है। अधशास्त्री गडम स्मिथ के मत में— पारस्परिक मित  
 व्ययिता की कृत्रिम विधि के आधार पर गगठित समूह को समाज कहते हैं।"

१ विशेषतः सबविदा समाजे विभूषण मोनमपशितानाम । नीति०' श्लोक ८६

२ (क) 'धम्मपतिप्रमोहस्य समाजस्य ध्रुव भवेत् ।' श्रीमद्भा० १०।४४।६

(ख) तथा विभो समुचितो भवत समाज

पु स स्त्रियारच रतयो मुखदु खविनोः । वही १०।६०।३८

३ लरन हृथ चिय तैग बर । वगमि राज तव बाज ।

लिय कूरभ कुल उज्जल । सीम नवाइ गमा । पृ० रा०' का० ११५६।१०

४ उर सरल सजोग वत्त सभरि नाथ समाज । प० रा० मो० ३।५५२।१५

५ 'हज्जार बीस उदितल गमाज । कूदे सुपग पर उमगि साज ।

प० रा० क० २५८०।५४०

६ भूमि कलिजर जाहु । मिली परिमान समाजह । वही २।७५।५००

७ चढ बधूरें चग जया ग्यान ज्यो साक समाज । दाहा० दा० स० ५।३

८ (क) प्रभु कर सेन पदादिवा बालक राज समाज । वही दो० स० ५२५

(ख) रअत राज समाज घर तन धन धरम सुवाहु । वही दो० स० ५२१

९ तुलसी ते दमकव ज्यो जइह सहि समाज । वही दो० स० ४१६

१० द०—'ए यू गलिश किगनरी जान हिस्टारीकल प्रितिपत्त भा० ६, प० ३७६

११ समाजशास्त्र की विवचना प० १५ पर उद्धृत ।

जबकि राजनीति पर विनाय बल दन वान धीम्स हॉ म के जनुमार — मानव (समाज) क अपन ही अनिरुद्ध स्वभाव के परिणाम स वचन के निरु मनुष्य न जा साधन बनाया है, वह समाज कहताता है।<sup>१</sup> दु तीम का धार्मिक धारणाआ पर विशेष बल रहा है, अत उ हान समाज का घम की भानि भावात्मक, आदर्शात्मक जोर भावना-प्रधान बतात हुए मत व्यक्त किया है कि समाज मानवा का समूह नहीं है, अपितु उन विचारा की मूर्ति है, जिनका वह समुदाय परस्पर आपन प्रदान करता है।<sup>१</sup> १५० १५० हास्मि का प्रजाति के जविरल प्रवाह से चनाए रगन पर विशेष बल रहा है, अत उत्पान पुण्या बच्चा और स्त्रिया के एत रथायी समूह का समाज कहा है, जा साम्यतिक स्तर पर स्व प्रजाति के गानत्य का बनाए रखा और उसका परि पापण करन म समथ जाना है।<sup>१</sup> ते० गिरन न 'विभी रिशित भूत' क समान छय और जीवत रिधि म विश्वास रगन वाल परस्पर सम्प्रद मानवा के समुदाय को समाज की सना ती है।<sup>१</sup> जबकि समाज शास्त्र क विश्वकाय म मानव क अपन गायिया क साथ विविध प्रकार क सम्बन्ध से समान बताया गया है।<sup>१</sup> मकाइवर न समाज का एक एमी सगु फिन व्यस्था बनाया है जिनम विविध प्रकार के चरन और रिधि निर्देशा की म्यामित्त और पारम्परिक मह्याग की स्वतन्त्रता और मानव आचरण क नियमन की, गगन और समुदाय की गतन परिवतनशील प्रक्रिया

१ 'समाजशास्त्र के मून तत्त्व प० ३४ पर उद्धृत।

२ Society is essentially a set of ideas shared by individuals Social facts are things but things that exist only in the minds of individuals Society like religion is abstract, normative and emotional ' 'The ways of men , p 340

३ "We may for our purpose have define a society as any permanent or continuing grouping of men, women and children, able to carry on independently the process of racial perpetuation and maintenance on their own cultural level'

'An introduction to the study of society , p 444

४ "A society is the largest relatively permanent group who share common 'esprit de croques or belongingness, whereby they distinguish themselves from others

The ways of men , p 340

५ Society may be regarded as the most general term referring to the whole complex of the relations of man to his fellows "

'Ency of Social Sc , Vol IVX p 225



वापरत रहती है। वेन्डर ने समाज का—समान धर्म के कारण सांग का स्वतः सभूत समागम अथवा ऐसा संगठित समूह कहा है जो साथ साथ रहता या साथ करता हो, निश्चित अवधि व पश्चात् समान म्याय, विश्वास या व्यग्रमाय के कारण मिलता अथवा पूजा करता हो। प्राणेश्वर रामपाल सिंह के शब्दों में, 'समाज एक ऐसा संगठन है जिसमें परिवार पशा, पतक सम्पत्ति राजनतिक सत्ता और सञ्चति के विभिन्न विभागा की व्यवस्था और प्रतिमाना का प्रवण रहता है।'

समाज की उपयुक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि किसी प्रदेश के निवासियों की ऐसी जटिल व्यवस्था को जिसमें वे व्यावसायिक पारिवारिक धार्मिक आर्थिक या राजनीतिक सम्बन्धों की दृष्टि से अन्तर्सम्बन्धित रहते हैं समाज कहते हैं। अतः किसी देश और कालविशेष का समाज चित्रण प्रस्तुत करने के लिए आलोच्य समाज की इन्हीं व्यवस्थाओं पर दृष्टिपान करना प्रयोजनीय सिद्ध होता है। हमारी दृष्टि में इनके साथ साथ सामाजिक दशा के दो अन्य महत्वपूर्ण पक्षा का उदघाटन भी आवश्यक है। प्रथम को सामाजिक जीवन की सना दी जा सकती है। इसके अन्तर्गत सामाजिक के खान पान वस्त्राभरण और मनोविनोद के साधन आदि ऐसे तथ्य समाहित किये जा सकते हैं जिन पर किसी समाज की पूर्वोक्त सभी प्रकार की व्यवस्थाओं का सम्मिलित प्रभाव रहता है। द्वितीय तथ्य एमा है, जिस पर भारतीय समाज का अध्ययन करने हुए ही प्रकाश डालने की आवश्यकता पड़ती है। कारण यह है कि विभिन्न देशों की सामाजिक स्थिति पर वहाँ के परावरण तथा समाज के संस्थों के चिन्तन की अमिट छाप होती है। उसके मूल में सांस्कृतिक और सांभौतिक सिद्धांत भी नहीं होते जिसमें विभिन्न दशा के समाजों की कुछ अत्यंत विशेषताएँ हुआ करती हैं। भारतीय समाज की चतुर्वर्ण और चतुराश्रम व्यवस्थाएँ इसी कोटि में आती हैं। वर्ण-व्यवस्था में विकसित हुए जातिवाद का सामाजिक उच्चल पुथल में भी पर्याप्त हाथ रहा है। अतः भारतीय समाज के चित्रण को तब तक पूर्णता प्राप्त नहीं हो सकती जब तक उसकी इन जातियों की स्थिति पर प्रकाश नहीं डाला जाता। इस प्रकार भारतीय समाज का चित्रण प्रस्तुत करने

१ Society is a system of usages and procedures of authority and mutual aid of many groupings and divisions of controls of human behaviour and liberties. This ever changing complex system we call society. *Society, p 5*

२ A voluntary association of individuals for common ends especially meeting or worshipping together because of a community of interests or beliefs, or a common profession.

International Dictionary, p 2162

३ दे०—'समाजशास्त्र परिचय प० ४

के लिए हम उमरे छ पक्षा की स्थिति प्रदर्शित करना उचित प्रतीत है— वणाधम-व्यवस्था या सामाजिक गठन, सामाजिक जीवन, पारिवारिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन से सम्बद्ध व्यवस्थाएँ। हमने अपने अध्ययन का इन्हीं छ वर्गों में विभक्त करत हुए समाज चित्रण प्रस्तुत किया है। इन विषय में यह तथ्य निवेदनीय है कि मानव-सम्बन्धों की जटिलता के कारण सामाजिक जीवन पर प्रकाश डालने वाले बहुत से तथ्य गूँ हैं जो कई पक्षा में अनुस्यूत रहत हैं। एसी दशा में उनका किसी पक्ष विशेष में ही आबलन करत समय हमने प्राधायन व्यपदेशा भवति के सूत्र को आधार बनाया है। समाज के इन छ पक्षा की स्थिति प्रदर्शित करत समय हमारा अधालितित दष्टिवाण रहा है।

विभिन्न विद्वाना के वण-व्यवस्था सम्बन्धी अभिमतों से जान हाता है कि वह आरम्भ में कर्माघत थी और गृद्धा के अनिर्गित शप त्रिवर्णों की सततियों विवण में से चात्र जिम वण के लिए निर्धारित काय कर सकती थी। कालांतर में यह व्यवस्था जन्मा आघत हा गई और किसी वण का भदस्य होन के लिए, उस वण का काय करने के स्थान पर वण विशेष में जन्म लेना मूलाधार माना जान लगा। प्रमुख चार वण भी अनेक वग और उपजातिया में विभक्त होन चल गए तथा विभिन्न कारणों से कुछ एसी जातियाँ भी उत्पन्न हुई जिन्हें निर्विवाह रूप से किसी भी वण में स्थान नहीं दिया जा सकता। इन वण और जातियों के पवन पथक कतस्य कम रुद्ध हा गए थे, और तद्दुबल उनको सामाजिक प्रतिष्ठा में भी अंतर था। जत समाज चित्रण की दष्टि से हमने वीरकाव्य में उल्लिखित वण और जातियों की स्थिति का आबलन करते हुए उनको प्रमुख चारिणिक विशेषताया, सामाजिक प्रतिष्ठा-प्रतिष्ठा और परम्परागत कर्मों में आए हुए व्यपम्य का स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इनो भाति चतुराधम-व्यवस्था की वीरकाव्य के पराक्ष तथ्या के निष्कर्ष पर परीक्षा करके, यह प्रदर्शित करने की चष्टा की गई है कि जालाध्ययन में कुछ वीरकाव्य प्रणेताया द्वारा उसका अनुपालन दिखाना किम सीमा तक सत्य है, क्याकि उत हमारे जालीच्यकाल से पूव जन और बौद्धकाल में ही पर्याप्त हसो मुत बतलाया जाता है।

१ स्मृतियों के जाति प्रकरणों तथा विभिन्न पुराणों के तद्गत प्रसंगा में अनुलोम और प्रतिलोम विवाह-मदतियाँ तथा सामाजिक नियमों का पालन न करने पर जाति च्युति के लिए दिए गए दण्डों द्वारा अनेक वण मकर तथा अधम जातियों का जन्म दिलाया गया है—शोधक।

२ “धर्मशास्त्र यथ ही राजाआ से वण धम चलाने की प्रेरणा करते रहे। पेट के सवाल के सामने वण-व्यवस्था चुपचाप राठी रह गई। आश्रम-व्यवस्था भी मुख्यतः पुस्तकों की ही व्यवस्था है। जातियों के समय में भी इसके सिद्धांत में विश्वास किया जाता था पर बहुत से बालक तो कभी गुरु के महा पत्ने ही न जाने थे और न मंत्र गृहस्थ समय आने पर बाल्यप्रस्थ बन्त थे।”

— हिन्दुस्तान की पुरानी सम्यता, डा० वेणीप्रसाद पृ० २७६

सामाज्य जीवन के अन्तगत व्यापक पान, उत्तराभरण, शृंगार प्रसाधन तथा जाग गमन और मनोविनोद के साधनों पर प्रकाश डालते हुए तत् तत् सम्बन्धी विशेष धारणाएँ भी प्रदर्शित की गई हैं। विविध उपकरणों का परिचय देते हुए प्रथम का धाकार अति स्थूल हो जाता अतः यद्यपि उचित नामावली देकर ही सतोष करना उचित समझा गया है।

परिवार को सामाजिक जीवन का मूलधार स्वीकार किया जाता है। कांटे तथा टूरविले आदि विद्वानों के मत में व्यक्ति के स्थान पर परिवार ही समाज की इकाई मानी जाती है। समाज परिवार के प्रति एक दृष्टि से श्रेणी रहता है, कि वह उनके अग्रभूत सामाजिक जीवन का शिष्टाचार के नियम भाषा का पान तथा धार्मिक एवं राजनीतिक आदि विचारों की परम्परागत विरासत प्रदान करता है। मनुष्य जाति के अविरल प्रवाह को बनाए रखने तथा उच्च स्तर पर जीवन गुणवत्ता के नियमों की समझ भी परिवार के ही माध्यम से सुलभ होती है। अतः परिवार को किसी समाज की एक ही घुंटी माना जाता है जिसकी चार छेद पीछे के इतिहास पर दर्शाते हैं कि मनुष्य समाज की दशा के विषय में धारणा बनाई जा सकती है। इस प्रकार पारिवारिक जीवन व्यवस्था के स्पष्टीकरण के लिए हमने परिवार के मूल्य और सम्बन्धों के पारम्परिक दृष्टिकोण, वंशजों के सर्वांगीण विकास में किए जाने वाले सकारण आदि श्रेय तथा अनिवार्य सत्कार और शिष्टाचार के नियमों पर प्रकाश डालना उचित समझा है।

प्राचीनकालीन समाज-व्यवस्था पर धर्म का सर्वांगीण प्रभाव रहा है। एफ० डी० कुल-जीज आदि विद्वानों के मत का सार यह है कि मनुष्य ने कहा कि प्राचीन काल में सामाजिक-व्यवस्था का धर्म पूजित स्वामी था— धार्मिक समुदाय राज्य के पाप उनका राजा था पुरोहित या यथार्थ की धार्मिक नियम कानून के मुक्ति ही

१ कांटे के अनुसार समाज की इकाई व्यक्ति नहीं अपितु परिवार है। परिवार का महान् कार्य उन बुनियादी सामाजिक और मानसिक गुणों का सज्जन करना रहा है जो कि अन्ततोगत्वा राज्य को जन्म देते हैं।

— सामाजिक विचारक अनु० रघुराज गुप्त, पृ० १७

२ सारोकिन ने परिवार को समाज व्यवस्था में अप्रतिम स्थान देने वाले टूरविले आदि विद्वानों के मत का समर्थन इन शब्दों में किया है—

*In short the family is the universal and the simplest model of society and contains all of its essential characteristics*

— Contemporary Sociological Theories, Sorokin p 67

३ एक सामाज्य भारतीय घर का अध्ययन करके ही एक प्रकार से भारत की सृष्टि के पान का अनुमान लगाया जा सकता है। भारतीय घर की भाँति ही मनुष्य समाज का रूप बनाता है।

— मध्य० वि० मा० का वि० अध्या० डा० मलयद्व, पृ० १०

राज्य भक्ति थी, जबकि, धर्म से युक्त कर्तव्य देश निष्कासन के सदृश (दृढ़ व्यवस्था) था।<sup>१</sup> दुर्भाग्य के भी घत का मार है कि प्रायः सभी महत्वपूर्ण सामाजिक संस्थाएँ धार्मिक जास्याओं के कारण विकसित हुई हैं। समाज (संगठन) के लिए आवश्यक तत्त्वा का मूलस्त्रान धार्मिक धारणाएँ हान का कारण यह है कि सामाजिकता की भावना का प्राण ही धर्म है।<sup>२</sup> तात्पर्य यह कि समाज का स्वरूप निर्धारण में धार्मिक आस्था और विश्वास का अप्रतिम योगदान रहता है, और किसी समाज की दशा के चित्रण में सम्बद्ध अध्ययन तब तक अपूर्ण ही रहता है जब तक उसमें इनका आकलन नहीं किया जाता।

प्रायः सभी देशों के निवासियों की जपन में भिन्न मत और धर्म का अनुयायिता के प्रति महिष्णु अथवा अमहिष्णु धारणाएँ हुआ करती हैं। जालाच्य समाज में भी हिन्दुओं के विभिन्न मतों के अनुयायी तथा हिन्दू और मुस्लिम आदि धर्मापलम्बी निवास करन थे। आश्राता और विजेता मुसलमानों की जीवन और शासन पद्धति में धर्म का अपरिहाय स्थान भी स्वीकृत किया जाता है।<sup>३</sup> उस दृष्टि में हममें विभिन्न मत और धर्मों का अनुयायिता के अन्वय के प्रति दृष्टिकोण का स्पष्ट वर्णन प्रयोजनीय समझा है। विभिन्न दृष्टी स्वताओं में सम्बद्ध धारणाएँ तथा परलोक सुधारण की कामना से किये जाने वाले जप-सप और तीर्थाटन आदि कृत्य भी किसी समाज के सदस्यों की जीवन विधि पर प्रभाव डालने हेतु हमारी दृष्टि में उनका विवेचन करना भी आवश्यक रहा है। शकुन अपशकुन भूत प्रेत जन्म आदि में विश्वास करना भी एक तथ्य है जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्षतः धार्मिक धारणाओं में उत्पन्न

- १ 'In the social system of ancient religion was absolute master the state was a religious community, the king a plaintiff the magistrate a priest and the law a sacred formula patriotism was piety, and exile, excommunications, individual liberty was unknown' —'Contemp Socio Theo p 664
- २ 'Nearly all the great institutions have been born in religion If the religion has given birth to all that is essential in society it is because the religious idea is soul of society' Ibid, p 667
- ३ 'The Muslim state in India was a theocracy the existence of which was theoretically justified by the needs of religion The Sultan was considered to be Caesar and Pope combined in one In theory, indeed his authority in religious matters was limited by the Holy Law of the Quran and with the exception of Ala ud-din, no Sultan could clearly divorce religion from politics' — An Advanced History of India p 391

रखने है। डा० सत्यद्व के मत में (मयकानीन) भारतीय घर का इन पाँच पर नष्टि डालें तो पहला स्तर टाने टोटका का मिलना। किसी भी प्रकार का अनुष्ठान हा, कोई सस्वार हो, कोई उत्सव हो, एक न एक टोना टोटका उसके साथ लगा हुआ होगा। दूसरे स्तर पर दई देवताओं की भावना है। इन दई देवताओं में पितरा की मतात्माएँ भूत प्रेत हवाएँ, सतफकीरा की मृतात्माएँ विविध दैवियाँ तथा अनेक अन्य देवता सम्मिलित हैं।<sup>१</sup> आज चाहे इन विश्वासा का अथर्वविश्वास की श्रेणी में ही परिगणित किया जाए, कि तु मध्ययुगीन सामाजिक जीवन को पूणत समझने के लिए इन विश्वासा पर प्रकाश डालना भी हमने आवश्यक समझा है।

अथ का पुरपाथ चतुष्टय में स्थान मिलना उसकी सामाजिक महत्ता का अभिसूचक है। अथ का सर्वाधिक प्रभाव सामाजिक जीवन या खान पान वस्त्राभरण आदि पर पड़ता है। इसके साथ ही साथ वित्त का अभाव में न तो पारिवारिक जीवन शान्तिपूर्ण चल सकता है, न राज्य की सुरक्षा के लिए सैन्य और पुलिस की ही व्यवस्थाएँ हासिल की जा सकती हैं और न धनापेक्षा धार्मिक कृत्य ही सम्पन्न हो सकते हैं। तात्पर्य यह कि समाज का प्रायः सभी पक्षों पर अथ-व्यवस्था का स्पष्ट प्रभाव रहता है। समाज चित्रण की दृष्टि से हमने उसके इन तथ्यों का स्पष्टीकरण आवश्यक समझा है कि ज्योंपाजन का प्रमुख साधन क्या था उस काल की प्रमुख उपज तथा गन्निज पदार्थ क्या थे किन उद्योगों का उस काल में विशेष प्रचलन था व्यापार के प्रमुख उपानान क्या थे दिनचर्या की वस्तुओं का मूल्य क्या था तथा राज्या की आय के प्रमुख स्रोत क्या थे—आदि।

सामाजिक जीवन का राजनीतिक पक्ष भी बड़ा महत्वपूर्ण है। वायट के मत में—सरकार के अभाव में समाज की सत्ता उनकी ही असम्भव है जितनी समाज के अभाव में सरकार की।<sup>१</sup> वायट के मत का अभिप्राय यही प्रतीत होता है कि समाज की विविध व्यवस्थाओं के नियमन में जब धार्मिक नियम अगम्य हो जाते हैं तो उनके नियमन का भार राज्य को सभारतना पड़ता है। आतनायिया का सदेश जात्रात्ताओं से सामाजिकों की रक्षा करना का भार भी राज्य को ही वहन करना पड़ता है। यदि तदर्थ राज्य की सत्ता न हो तो परतंत्रता का प्राप्त हुए समाज की सभी प्रकार की व्यवस्थाएँ छिन्न भिन्न हो सकती हैं। 'यथा राजा तथा प्रजा की लाकात्ति में भी राजनीति के नियन्ता नरेशों की जीवन विधि का समाज पर अप्रतिम प्रभाव पड़ने का तथ्य भन्नक रहा है। अतः समाज के राजनीतिक पक्ष के ऐसे तथ्यों का ज्ञान प्राप्त किए बिना जो सामाजिकों के चिन्तन मनन और जीवन विधि को प्रभावित करते हैं—सामाजिक दशा का चित्रण अपूण ही रहता है। यह तथ्य अवश्य निवेदनीय है कि समाज-व्यवस्था में राजनीतिक पक्ष की महत्ता स्वीकार करते हुए

१ 'म० हिन्दी-साहित्य का लोक-साहित्य अध्ययन पृ० १०

२ द०—सामाजिक विचारक अनुवाचकाना गधुराज गुप्त पृ० १६

भी हमने त्रिगुद्ध राजनीतिक तथ्या को अपनी विषय सीमा में स्थान नहीं दिया है। हमने इन तथ्या पर प्रकाश डालना उचित नहीं समझा है कि विभिन्न प्रदशों के शासक कौन कौन थे, उनकी जय और मरण तिथियाँ क्या थीं, उन्होंने कितने वर्ष राज्य किया उन्हीं किन प्रदशों पर आक्रमण किए तथा उनकी वशावली क्या थी आदि। हमने तो राजनीति को उन पहलुओं पर प्रकाश डालने की चेष्टा की है जो सामाजिक दशा के निरूपण से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रखते हैं। उदाहरणार्थ आलाच्यकाल के युद्धों का कारण राज्यनिप्सा मात्र नहीं थी अपितु उसमें शरणागत-वत्सलता प्रजा रक्षा धर्म प्रचार, विवाह और धर्म रक्षा आदि ऐसे कारणों का प्राधान्य मिलता है जो राजनीति के स्थान पर अन्य प्रकार की सामाजिक धारणाओं से अनुप्रेरित हैं। नरेशों में देवी-पुत्र मानना और अपने हित अथवा अहित के राज्य-कार्यों पर हृष या रोष व्यक्त करना आदि तथ्य जन चिन्तन का स्वरूप स्पष्ट करते हैं। इसी प्रकार मन्त्री और राज्याधिकारियों के विवरण विविध प्रकार के सय उपकरण दंड व्यवस्था और प्रथा और जागीर प्रदान करना आदि ऐसे तथ्य हैं, जिनके मूल में यद्यपि राजनीति विद्यमान है तथापि ये समाज के गठन से स्पष्ट सम्बन्धित हैं। अतः सामाजिक स्वरूप के पूर्ण परिचय से लिए उपयुक्त राजनीतिक व्यवस्थाओं पर भी संक्षिप्त दृष्टि डालना आवश्यक समझा गया है।

(क) वण और जाति सम्बन्धी विश्वास -

ब्रजभाषा के वीरकाव्य में उपलब्ध निर्देशों में एम उल्लेख की प्रधानता है जिनसे समाज का गठन परम्परागत वण चतुष्टय में ही स्वीकार करने की धारणा का प्रवर्तन होता है। साथ ही, उसमें छः और अनेक जातियों के विषय में भी उल्लेख मिलते हैं।

चार वर्णों का सर्वाधिक उल्लेख पथ्वीराजरासा में मिलता है। उसमें महा राज सामेश्वर 'पथ्वीराज' और सनख पत्तार' के राज्या में चारों वर्णों को सुखमय जीवन-यापित करते तथा होलिकावसर पर चारों वर्णों का सभी प्रकार के भेद भावों को तिलाजनि देकर परम्पर क्रीडा-क्लाप करते चित्रित किया गया है। कवि नर-हरि' केशव' भूषण मान' गारलान जाधराज' और मूत्न' न भी विविध सदर्थों में चार वर्णों का उल्लेख किया है। कवि मूत्न न विराट पुष्प के शरीरगा सा चतुर्वण की उत्पत्ति सम्बन्धी परम्परागत धारणा में भी आस्था प्रकट की है।"

पञ्चोक्त रामो परमाल रासा जगोरी गग चन्द्रिका और राजविलास में षट-वण ररग षट अथवा षटभेद सम्बन्धी उल्लेख मिलता है। महाराज पथ्वीराज

१ से ११—७०— प० रा० मा० ३।१।३ प० ग० का० ८०।१४६ प० रा०'  
 मा० १।३२२।७० प० रा० का० ६१७।३ मूरपूव ब्रज० और  
 उमका का० ३२२।१२१ वी० च० १४।६३ शि० वा० २०  
 ग० वि० १५।३६ छ० प्र० १२।१० ह० रा ६५०  
 मु० च० ६।६१७।

१२ ऋग्वेद में रूपन श्लो में विराट पुष्प के मुष्प में ब्राह्मण भुजाआ से क्षत्रिय जघाआ से वैश्य और पग से शूद्रा की उत्पत्ति सिद्ध हुई है।

१३ 'विप्र वरन वट्ट सीम वाट्टु जवनीम वाट्टु भव ।  
 वनिन जत्यज परन चप चरन भण मव ॥ —'मु० च०', १०।६०।१२  
 —'मु० च०', ४।२।२

के राज्याभिषेक व जवम 'पट-वण' उह षण और आशीर्वाद प्रदान करा ह, तथा महाराज उनके प्रति शीघ्र भुक्ताकर दिनमता प्रकट करत ह ।<sup>१</sup> पदमावती का अपहरण और शाह गारी का पगमन करके दिल्ली लौटने पर दिल्लीशहर पटभप का दात और मान प्रदान करत हैं ।<sup>२</sup> अ यत्र कवि च द न महाराज पथ्वीराज के राज्य म पट-वण का सुयमय निराम<sup>३</sup> तथा शाह गारी के अतिम आश्रमण स पूव प्रजा-जना के साथ साथ पट-वण का भी चिन्ताबुल हाना चित्रित किया है ।<sup>४</sup> कवि च द न गजनी-गमन व समय स्वय का पट-वणों म श्रेष्ठ बताकर जात्मशनाथा भी की है ।

परमालगामा म विजयी आरहा व गहागमन पर रानी मल्हना उमकी भारती उतारकर पटभप का दान देती है तथा महाराज पथ्वीराज चडी की पूजा व उपरांत पटभप का दान प्रदान करत चित्रित किय गय ह ।<sup>५</sup> केशवदामजी न सम्राट जहाँगीर की प्रशस्ति म कहा है कि उनका शीश 'पट दरस' के अतिरिक्त अय किसी को भी नही भुक्ता ।<sup>६</sup> केशव न वीरचरित्र म पडिता के लिए भी पट दरसन विशेषण प्रयुक्त किया है<sup>७</sup> किन्तु प्रतीत होना है कि उनका अभिप्रेत उह पट शास्त्रा<sup>८</sup> का मूर्तिमत रूप प्रदर्शित करना रहा है । कवि च द ने भी ब्राह्मणा का पट कर्मो कहा है,<sup>९</sup>

कवि मान न महाराज गहादित्य का नवग्रहा म दरस-पट की पूजा करत आर

- १ 'पट दरस दरमि आसिप्य दन । प्रथिराज वदि सिर मेनि लेत ।'  
— प० रा० , वा० ६००।६०
- २ 'द दान मान पटभप की । चर राज दुग्गा हुजर ।'  
—वही, ६४१।६६
- ३ 'आव न पाग लच्छी मह । पट्ट वरन मुप्पह ह्यन ।'  
—वही, ६६३।१७८
- ४ ग्रह वभन ग्रहवात नर ग्रह छिथी छह वन ।  
मुणी वत्त नर नारि मुय मह लग्ग सनमान ॥ — स० पृ० रा० पृष्ठ १४६
- ५ पट्ट वरन भग भट्ट की । ददि त्रिरद् वर छोह ।  
—वही २३६६।६१
- ६ वर आरती मल्हन द, कचन थार उतारि ।  
दियवत्तन पटभप कह, गावन मगलचारि ।  
—पर० रा० ६।६५
- ७ 'दियव दान पट भप वह चाट्टवान सुलपाय ।  
—वही, ४।२५
- ८ दरमो मुग्ग स गेन मिग् नाव निन पट दरसन हीका सिर नाइयतु है ।'  
—'ज०ज०च० , छ० ३४
- ९ "पडित करत विचार जनत, पट दरसन ज मूरति मत ।' — वी०च०' १६।२६
- १० ब्राह्मणा को अपन छ कर्मो—पत्ना, पढाना, यन करना यन कराना, दान लेना और देन के आधार पर पटकर्मो कहा जाता है ।  
—देविए— ना० वि० श० सा० , पृष्ठ १३७०
- ११ 'कुनि पडित मडप मडिय वेद पाठ आधार ।  
सट बग्गी भरमी जधिक मुग्ग सगह गुर भार ।' —'प०रा० ,मो०, १।३११।४५



नात एव विविदा दिया है। रात्र छत्रगात्र हाथ म्त्र पु ती त परिणयान्तर पर पट वण को अमित नात एव गणुष्ट करी है। ' भगवत्पतिगत् ति की पट म्त्र त त्रिण म्त्र पर ऊँवा ग्नात रात्र म्त्र म प्रशस्ति की गयी है। ' तत्रि गात्र त शात्र जीवगजव का पट म्त्र त ताम स त्रि प्रशस्ति की है। ' तत्रि उच्यते म पट म्त्र का वट्ट म्त्रा त्रिगात्र हृण वही पर उच्य जाभम जीव शात्राण त्रिगात्र है। क्वि मात के शब्दा म व जमिन नात जीव मात प्राप्त् त्रम हृण त्रिगात्रिया म उपसवित रहत थे।'

पट वण पट म्त्र या पटभय म्त्राधी उपगुवन विवरण त उनम एत सायासी जीव गहम्य पुखा का म्त्रिमित हाता मिद्ध हाता है जा पूव समभे जात थे और जिन्हे विविध अवमरा पर नात प्रणात दिया जाता था। राजस्याती सबद कास' के जगुमार त्राक्षण जागी जगम भाट स यासी जीव साध—य छ समूह म्त्रदरमण या म्त्रवरण वहाता थ। ' रा० मातीनात मनात्रिया त उनम ब्राह्मण यति योगी स यासी जगम जीव चारणा का परिगणन किया है। इमके विपरीत जाति भास्त्र नामक ग्रथ म म्त्रदशा व जतगत बहुत मी जातियो के भिक्षुव पुखा का मिलकर एवागार हाता त्रिनिगत किया गया है। उसम बहा गया है कि य मारवाड म काई डेट लाल पाय जात है और विमी समय इनका याय चारण जाति के यकिन किया करन थ। इनम पहन कुछ भी भेदभाव न था और सब एक रूप से रहते थ। ' कदाचित यागी यती सायासी ब्राह्मण जगम और भाटा के दशना का शुभ ममभने की धारणा स उनम त्रिण पट म्त्रमन या पटभेप अभिधान का प्रचलन मारम्भ हुआ होगा और साधारणतया उह पट वण भी कह दिया जाता होगा।

अठारह वर्णों का पथ्वीराज रासो और रात्रविनास म उल्लेख मिलता है। रासाकार न रावल समरविक्रम का मकर मन्त्रानि के जवमर पर अठारह वर्णों का

- १ 'सकत देव सबत भितिप पूजत दरस पट।  
देत नवग्रह दान हस्त्रि ह्य हैम हीर पट। — रा० वि० १।१०५
- २ (क) 'हात्र तरिद मड्यो हरप सतोप पटवरन युत। —वही २।१००  
(ख) वर सतोप पटवरन हृदय सु पूरिय हाभ। —वही २।१०१
- ३ महाराइ अरिसिह नद पटदरस ऊच कर। —वही १८।१८
- ४ न मुहाइ जास पट दरस नाउ, घीघिटठ दुद्रु वट्ट पाप घाउ। —वही, ६।१६
- ५ किन पट म्त्रमन आमम अ न सात्रा जल वाग ममेत सचन।  
लहै बहु दानर मान भुगति सब जग सबत याग युगति। —वही २।१३८
- ६ देखिए—भाग १, पृ० ५८८
- ७ देखिए—रात्रविनास पृष्ठ २१६
- ८ देखिए—'जाति भास्त्र सपादक प० ज्वालाप्रसाद मिश्र, पृष्ठ ३६६

ब्राह्मण अपन ग्यान पान म आचार विचार का बहुत ध्यान रखन थे। एस अवसरा पर जत्र उह भाजन पकान और खान से गम्बद्ध जाचारा की रक्षा करन म कठिना का सामना करना पडता था वे फताहार मात्र पर निर्बाह करत चित्रित किए गए है।<sup>१</sup> धारणी का सवन, उनके लिए नितान्त वज्य समझा जाता था। धारणी का सवन ता दूर रहा, उनकी इच्छा मात्र करन म ही उनके सुख और सम्पत्ति विनष्ट हो जाने की धारणा प्रचलित थी।<sup>२</sup>

### कत्तव्य-कर्म —

ब्राह्मणों के प्रमुख कत्तव्य-कर्म वेदाध्ययन दान देना और देना, पीरोहित्य अध्यापन और यज्ञ कराना थे। वे ज्योतिष शास्त्र और व्याकरण जादि म भी नपुण्य प्राप्त करत थे, तथा अवसर जान पर शास्त्रों के स्थान पर शस्त्र धारण करने म भी नहीं हिचकिचात थे।

### वेदाध्ययन —

ब्राह्मणों के परम्परागत कत्तव्य—वेदाध्ययन का जानोच्यकाल म भी पर्याप्त प्रचलन और महत्त्व था। वेदों का पान न रखने वाले ब्राह्मणों की पृथ्वीराजरासो म खडित कहकर अवमानना की गई है।<sup>३</sup> कीर्तिलता वीरचरित, सुजानचरित 'राजविलाम' और जाटहृषण म विप्र वेदाध्ययन करते चित्रित किए गए हैं। वेदा के अतिरिक्त वे पुराण ज्योतिष, व्याकरण और स्मृतिया म भी पारंगत खियाए गए है।<sup>४</sup>

### प्रतिग्रहण —

ब्राह्मण दान के क्षत्र को अपना जन्ममिद्ध ईश्वर प्रदत्त अधिकार समझत थे। कवि केशव न ब्राह्मण वग का प्रतिनिधित्व करत हुए यह धारणा व्यक्त की है कि परमात्मा न हम उत्पन्न करत समय ही मागन का अधिकार प्रदान कर दिया था।<sup>५</sup> ब्राह्मणों का नरेशास्त्रि स नतिन क्रिया, पारिवारिक सम्कार युद्ध अभिदान विजय, तथा त्याहारा के अवसर पर दान म जनक प्रकार के उपानान मिलत चित्रित किए गए है, जिनके आधारे पर कहा जा सकता है कि उनकी भौतिक आवश्यकताओं की बहुत कुछ पूर्ति, दान म मिल रित पर निर्भर रहती हागा।

### अध्यापन —

क्षत्रिय और वश्या म यथाव्ययन का अप्रचलन होत जान के कारण, ब्राह्मण

१ स ३ खण्ड—प्रम कीर्ति० प० ७० , वी० च० , ११२६ , 'पू० रा० , का० १०४१।४१

४ स ६ खण्ड—प्रम कीर्ति०, प० ६ , वी० च०, १६।२१, २१।१६, , 'मु० च०', ४।६ रा० वि०, १।६८ 'आ० ८४।१३ 'वी० च०', १८।७

१० दण्ड—प्रम ज० ज० च० , १६

उनको वेद पढ़ाने का नहीं निश्चय किन्तु वीरकाव्य में अध्ययन सम्बन्धी जा उल्लेख मिलता है, उनमें ब्राह्मण ही शिक्षण काय करना निश्चित किया गया है। "नर" आधार पर कहा जा सकता है कि जालाच्यनाल में भी अध्यापन काय मुख्यतया ब्राह्मण वर्ग के ही हाथों में था। पद्मवीरराजराजों में पद्मीराज का गुणगम पुरोहित वर्णाङ्गी सिम्बाने के पश्चात् चौदह विद्या बृहत्तर इला और चौरासी विद्याओं में पारंगत करते हैं।<sup>१</sup> उसमें स्यागिता और उसकी गणियों को विनय मंगल की शिक्षा भी एक ब्राह्मणी ही प्रदान करते प्रदर्शित की गई है।<sup>२</sup> जाल्दण्ड में भी प्रह्लाद का पतन हेतु एक ब्राह्मण पंडित के नियुक्त करने का उल्लेख किया गया है जो पाठन काय का श्रीगणेश ओना मासी घण के मन से करना है।<sup>३</sup> पद्मवीरराजराजों में महाराज पद्मीराज को भी अक्षर ज्ञान कराने से पूर्व ओ३म नम मिद्धम का मन सिखाया जाता है।

### पौरुहित्य —

ब्राह्मणों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थिति पुरोहितवर्ग की थी। उनको अपने कुल का पुरोहित निश्चित करते समय ही यह वचन दिया जाता था कि यजमान और उसकी भावी सततियाँ उनके पर पूजा करेंगे।<sup>४</sup> नये नगर बसाते समय नपतिगण स्व पुरोहित के वहाँ बसाने का प्रबंध करते थे।<sup>५</sup> यजमानों की दृष्टि में वे—कुल देवता कुल की परिपाटियों के विनाता तथा भूज और भविष्य की घटनाओं का सार समझने वाले समझे जाते थे।<sup>६</sup> यजमान पुरोहिताओं के लिए वर निर्धारित करने में कुल पुरोहिता का प्रमुख हाथ रहता था। बहुधा उन्हें तमन-सामग्री सौंप कर यह अधिकार प्रदान कर दिया जाता कि वे कया पक्ष की मर्यादा को दृष्टिगत करते हुए जिस किसी भी वर का कया के लिए उपयुक्त समझे उसका तिलक करके वर मनोनीत कर आयें। पारिवारिक विवादाओं के सुलभाते समय कुल पुरोहिता को मध्यस्थ बनाने का प्रचलन था।<sup>७</sup> यजमान नरेशों पर भी उनका पर्याप्त नतिक प्रभाव होता था और विविध राजमन्त्रणाओं में नरेश कुल पुरोहितों की भी सम्मति लिया करते थे।

### नमित्तिक यज्ञ कराना —

ब्राह्मणों का एक वर्ग विशेष यज्ञ के शास्त्रोक्त कर्म-काण्ड और वेद-मन्त्रादि में अधिक पारंगत होता था। इनका प्रमुख कर्तव्य नमित्तिक यज्ञ सम्पन्न कराना होता था। वीरकाव्य में इनके लिए यद्यपि यदाती और पंडित सनाया का भी प्रयोग मिलता है तथापि प्रधानतया उन्हें भूदक विप्र या द्विज ही कहा गया है। प्रतीत होता

१ स ३ दलित—प०रा० मा० १।२८।६ ०६१ वटी ३।२७६ 'जा० ६०६।६ १०

४ ओ३म नमो मिद्ध प्रथम पद्याय। सब भाव नेद अवगमर यनाय।

—प० रा०' का० ११४।७३०

५ स ८ दलित—नम वी० च० २।३३ १।६३ १०।४० ४१ ४।३७

है कि यन करान घाना क त्रिण पत्ति शब्द आलोच्यवान म जाजकल की भानि रुठ नही हा पाया या ।

महागरा वीगलदव पथ्वीराज वीरगिण दन, जोर राजसिंह क राज्याभिषेका के अवमर पर यन-वदी की रचना करके वदन विप्रा द्वारा यन और हवन किय जात है ।<sup>१</sup> विवाह आदि सस्वार<sup>२</sup> महन या नरात्र के निर्माण,<sup>३</sup> तथा त्रिष्ट ग्रहा के उप शमनाय<sup>४</sup> भी ब्राह्मणा का पटिनवग ही यन करत चित्रित किया गया है ।

इन वदाती या पटिता का ज्यातिप की भी सामाय जानकारी होती थी । महाराज पथ्वीराज मयागितापहरण के त्रिण जाने का शुभ मुहू त पटित से पूछत हैं ।<sup>५</sup> आल्हण्ड म नाररें डानन<sup>६</sup> 'गधू का विदा करन<sup>७</sup> या विधवा की चूडिया गिराने<sup>८</sup> जस अवमरा पर पटिता स साइत पूछी जाता है, जा आजकल के पडितो के कायों क अधिक निकट है । इसके विपरीत पथ्वीराजरासो, हम्मीररासो और राजविलास आदि ग्रथो म महत्वपूर्ण कायों के मुहूत शोधन तथा ग्रह नक्षत्रादि की स्थिति पूछने के लिए ज्यातिपी या गणना का बुलान क निर्देश किय गय है जिससे स्पष्ट होता है कि ज्यातिप शास्त्र म विशेष दान ब्राह्मण ज्यातिपी कहताने व ।

### ज्योतिष-कर्म —

वीरकाय म ज्यातिपिया का प्रात कात ग्रह नक्षत्रा की स्थिति बताने स्वप्न पना की व्याख्या मुहूत शाधन, शकुन विचार तथा ज म पनी लेखा जस प्रसगा म बुनान का चित्रण किया गया है जिसस प्रतीत हाता है कि उनके मुख्य कार्य यही रह हाय ।

महाराज सोमशर प्रात कात जगकर आनस्य भी नहा त्याग पान व कि उनका ज्यातिपी उहें उस दिवस की तिथि यागिना विचार तथा नवग्रह की उनके त्रिण गुमागुभ स्थिति बतान जा पहुचता वा ।<sup>१</sup> महाराज वीरसिंह दव का भी उनका गणक, प्रात कात आकर जागीवाद प्रदान करत तथा ग्रह नक्षत्रादि की स्थिति बतात चित्रित किया गया है ।<sup>२</sup>

महाराज जनगपान यमुना पाण क एक सिंह का दिल्ली की ओर आत दगन

१ स ४—दविण—क्रम ५० रा० का० ६६।३४<sup>१</sup> १६६।७१, वी० च०, ३३।२, रा० वि०, ५।१४, ५० रा०' मो० १।१७।१६८, १।३१।१।४५, रा०वि० ८।१/५, ५० रा०, का० ७४।४३८

५ 'वाल्मी बभन मूर तहें, कही सु मन की घान ।

गा त्रिण पटित दहि हम, जिहि दिन चन सघान ।'

—'५० रा०', मा० ३।२५६।१६

६ स ८ 'जी०, ३५०।२१, २३१।२०, ६२।१ २

६ १०—द०—क्रम ५० रा० मो० ३।१०।२।१।२१ २२, 'वी०च०', २२।६-१०, ...

ह जो इस तट के सिंह के साथ शीड़ा करता है। उमी रात्रि म वे तोमरो का दक्षिण की ओर यात्रा करत देखत हैं। इन स्वप्ना की व्याख्या के लिए व ज्योतिपी बुलाने हैं, जोर उहे आसन और ताम्बूल प्रदान करके अपने स्वप्न सुनाते ह।<sup>१</sup> ज्योतिपी उह स्पष्ट कर देते है कि शीघ्र ही तोमरा का विनाश होन बाता है और दिल्ली पृथ्वीराज के आधिपत्य म जाने वाली है।<sup>२</sup> इसी भाति कुमर पृथ्वीराज स्वय को योगिनी द्वारा दिल्ली के राज्य पर अभिपित करन का स्वप्न देखते हैं। उनकी माता इस स्वप्न की व्याख्या के लिए ज्योतिपियो का बुलाती हैं।<sup>३</sup> जो भविष्यवाणी करते है कि पाँच त्रिवस की अवधि म पृथ्वीराज वस्तुत ही दिल्लीपति बन जायेंगे।<sup>४</sup>

महाराज जतराव किले की नीव रखन की शुभ लग्न पूछने के लिए विन गणक बुलाते हैं।<sup>५</sup> पित वर शाधन के जाकाधी महाराज पृथ्वीराज को उनके सामतो द्वारा परामश दिया जाता है कि आप ज्योतिपी से यात्रारम्भ की शुभ लग्न पूछ लीजिए।<sup>६</sup> ज्योतिपी शुभ लग्न बतात हुए कहता है कि—इम घडी म आश्रमण करन से आप अवश्य ही वर शाधन म वृत्त वृत्त्य हागे। महाराज सामेश्वर<sup>७</sup> जोर जजु न सिंह<sup>८</sup> भी बुद्ध अभियान से पूव ज्योतिपियो से तदथ शुभ लग्न पूछन चित्रित किए गए है।

ज्योतिपी जत्र मत्रो से जमुम ग्रहाद के उपशमन जोर अभिमन्त्रित कीली जाति उपकरणो के माध्यम से स्व यजमाना के राज्यों का जचल बनाने के भी प्रयास करते थे। खटटवन म गढे हुए धन का निवालन स पूव ज्योतिपी जत्र मत्रा से जरिष्टगहो को शात करते चित्रित किए गए हैं।<sup>९</sup> तोमर वंश का दिल्ली पर अचिचन रूप स राज्य स्थिर रखन क लिए महाराज कलहन के ज्योतिपी द्वारा एक अभिमन्त्रित कीली गान्धी जाती है। महाराज अनगपाल क निष्पुत्र होगे क कारण पूर्वोक्त ज्योतिपी की भविष्यवाणी अमत्य प्रतीन हान लगती है अत उनका ज्योतिपी शुभ लग्न म उस कीदी का पुन गान्ता है जोर कहता है कि यदि इस पाच घडी तत्र न हिनया जायगा, ता तोमर-वंश ध्रुव-तुल्य जचन रगा।<sup>१०</sup>

ज्योतिपिया का जय काय जम पत्रिया बनाता था। महाराज अनगपाल स्व शौहित पृथ्वीराज के जमावसर पर ज्योतिपी बुलाकर उनकी जम पत्रिका त्रियवान है। उम जम पत्रिका क आधार पर महाराज सामेश्वर का, ज्योतिपी

१ म ५—त्रिया— ५०१० का० ५६२।१८ वही ५६३।१६ ५० रा० मा० १।८५।६ वही १।८६।१० ह० रा० छ० ८१

६ म ६—त्रिया—त्रम ५०१० का० १२०१।१८ वही १२०१।१६ '५०१०, मा० १।१७६।६ त्रि० व० त्रि० छ० २०

१० मत्त मत्त जानिभी। मन्व त्रिया उतर।

द्विष्ट राह ग्रह टुष्ट। मत्र जत्र वर टार ॥' — ५०१० का० ७३५।३६७

११ ५० १० मा० १।८६।१६ १६

भाज वने चित्रत किया है।' कवि 'मान ३ उदयपुर' म अठारह वर्णों के व्यक्तियों का अपनी उपनामिया, गात्र और वशा क गाय निवाम करन प्रदर्शित किया है।' कवि मान द्वारा इन वर्णों का स्व स्व वर्णों म निपुण प्रदर्शित करन से', इन अठारह वर्णों का स्वस्व स्पष्ट हा जाता है कि कवि च द जी० मान का अभिप्राय गूढा की परम्परागत अठारह श्रेणिया अथवा प्रकृतिया की जार इंगित करने से रहा है। डा० वामुन्वशरण अग्रवाल न अभिमत व्यक्त किया है कि पाणिनि काल म बुनकर, त नी मानी जाणि शिन्धिया के जातीय जी० आशिय मगठन 'श्रेणि कहलान थ और एषी अठारह श्रेणिया की सूची प्रसिद्ध हा गई थी। डा० दशरथ शमान भी कहण प्रत्येक नामक कृति म अठारह वर्ण शब्द का प्रयोग मिलन तथा उसस कमकर जातिया की अठारह श्रेणिया क निर्दिष्ट हान का मत व्यक्त किया है।' मत्स्यपुराण म गूढों की अप्रलिखित अठारह प्रकृतियाँ प्रदर्शित की गइ ह—' शिल्पी २ नतक, ३ काष्ठकार, ४ प्रजापति ५ यक्षिक, ६ चित्रक, ७ सूत्रक, ८ रजक, ९ गन्धक १० तनुकार ११ चित्रिक, १२ चमकार १३ मुनिक १४ ध्वनिक १५ कौलिक, १६ मत्स्यघातक १७ जीनामिक जी० १८ चाटाल।' इनम स छ प्रकृतिया उत्तम पाँच अधमाधम जार मात अत्यजा के वर्णों म रखी गई हैं तथा प्रत्येक प्रकृति पुन जनक उपवर्णों म विभक्त दिगवाई गई है।' कवि मान न भी, अठारह वर्णों का उल्लेख करने क पश्चात कमकर जातिया का एक दीध नामावली दी है जिसम प्रतीत हात है कि उमका अभीष्ट इन प्रकृतिया का ही विवरण दना

- १ "भुजाइ राबर समर। जान वरन अठार।  
नह का पूज अप्प पर। दिञ्ज जन अपार।" — प० रा० का०, २११६।६६
- २ (क) 'जानि गीत बहू वश युत बमत अठारह वर्ण।  
निय निय कम, मत्र निपुन, सधन सुवाप, सुवण। — रा० 'वि०', २।८५  
(ख) "उदपुर इद्रलाक अनुहार, वम सुववासहि वर्ण अठार।" — वही, २।८७
- ३ देखिए—उ० स०—२ (क)
- ४ देखिए—'पाणिनिकालीन भारत प० २५२
- ५ देखिए— अर्लो चौहान 'आइनस्टीज', प० २५२
- ६ शिल्पी च नतकश्चव काष्ठकार प्रजापति। घमकश्चिकश्चव सूत्रको रजक स्तया। गन्धकस्तनुकारश्च चित्रिकश्चमकारक। मूनिका ध्वनिकश्चव कौलिको मत्स्यघातक। जीनामिकस्तु चाणान प्रकृत्यष्टादशवता।"  
— मत्स्यपुराण, ६।२०, २१
- ७ इनम से शिल्पी स्वर्णकार दाम्बक कर्मरे काष्ठक और कुम्भकार का उत्तम खरवाही, उष्ट्रवाही ह्यवाही गाल और इष्टकाधार (इस जातिभास्कर म इटपज कहा गया है—देखिए पृष्ठ ३३३) का अधमाधम तथा रजक, चमकार, नट, वाग्नी, कवत, भेद जी० भीता की अत्यजा म गणना की गई है।  
—देखिए—वही, ६।२२ २४

रहा है। हाँ उसमें इन प्रकृतियों के लिए कहीं प्रबंध के रचयिता के सङ्ग वृण शब्द प्रयुक्त किया है, तथा उनमें उपरगों का भी मिश्रण करा हुआ लगभग पचास जातियों की नामावली दी है।<sup>१</sup> विभिन्न धारणाओं का जभाव में, उगम मिश्रण तथा कायस्थ और भाट आदि जातियाँ भी इन्हीं में सम्मिलित कर दी हैं।

पृथ्वीराजरासा में भाटा के लिए जानि शब्द प्रयुक्त हुआ है। जबकि चम्पौर रासा में क्षत्रिय-वृण के स्थान पर क्षत्रिय जानि शब्द का प्रयोग मिलता है।<sup>२</sup> वृणन ब्राह्मणों को द्विज जाति की संज्ञा से अभिहित किया है। राजजिलास काव्य भाग के शब्दों में तो जगत में जितने प्रकार के काय हैं उतने ही प्रकार की जातियाँ हैं। क्यामराँ रासा<sup>३</sup> और आन्हूराण्ड में वृण शब्द का प्रयोग ही नहीं मिलता और विविध प्रसंगा में जातियों का ही उल्लेख किया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि—समाज का गठन वर्णों के स्थान पर जातियों में समभंग की धारणा भी प्रचार पाती जा रही थी।

निष्कपत विवेच्यकाल में समाज का गठन अधिकतया परम्परागत चतुर्वर्ण में ही स्वीकार किया जाता था। ब्राह्मण, यात्री, यता, सयात्री जगम और भाटा के लिए पट वृण, पट भैरव या पट दरश शब्द प्रयुक्त किए जाते थे जबकि गूढा को परम्परागत अठारह श्रेणी या प्रकृतियों को अठारह वृण कहकर अभिहित किया जाता था। व्यवसायों के आधार पर चतुर्वर्ण भी विविध वर्ग एवं उपजातियों में विभक्त थे। इन वर्ण और जातियों की सामाजिक प्रतिष्ठा और प्रमुख कृत्य-कर्मों पर आगे प्रकाश डाला जा रहा है।

१ देखिए—रा० वि० २।८७ ६७

२ बरनाय द्रुग द्रुगह सुजिय । भट्ट जाति तीह दुनी ।

—प० रा० का० २१७६।४२६

३ (क) रह्यो नहि क्षत्रिय जाति विश्व । भए निमूत जा क्षत्रि जशेप ।

—ह० रा०, छ० ३६

(ख) दूज तीज ऊपज क्षत्रि जाति पडिहार । —वही छ० ५५

४ जितो जग जाति तित तिन कम । सब सुखलाक बढ धन धम ।

—रा० वि० २।१३६

५ “जह तह बंद पढ द्विज जाति जह तह हाम हात बहु भाति ।

—वी० च० ३३।२

६ यक यक त जात बहु कीनी है जग माँहि । —क्या० रा० छ० ६

७ “नो स बिटियाँ तम्बलिन की, और बारह स साती जाति ।”

—आ० १६२।११

## ब्राह्मण

ब्राह्मणा के लिए प्रयुक्त सजाएँ —

वीरवाय म उपलब्ध निर्देशों से ज्ञात होता है कि ब्राह्मणा के लिए त्रिप्र और द्विज सजाया का सर्वाधिक प्रचलित था। इसके अतिरिक्त त्रिवण या द्विजातियों में उनका मुख्य स्थान सूचित करने वाली द्विजराज, तथा उन्हें भूतल के देव समझने की जनधारणा का प्रकाशन करा वाली भूदेव, भूमुर और मुर सजाएँ प्रचलित थीं। उनमें से मुर-तत्र बभन या वामन शब्द का भी प्रयोग मिलता है।

वाह्यावृत्ति —

केशवदासजी ने महाराज वीरगिह देव के दरबार में आने वाले ब्राह्मण पीपी घातिया बाघें तथा ऊर्ध्वग म उपरना आड़े चित्रित किया है, जो उदात्त उनका पर्वों पर पहना जान वाला पहनावा रहा होगा। कवि चन्द, विद्यापति और केशव के निर्देशों से ब्राह्मणा की वाह्यावृत्ति के अर्थ प्रतीकात्मक—उनका स्व-काया को ध्वस्त चर्चित रखने मस्तक पर तिनक लगाने तथा यज्ञोपवीत धारण करना का मुख्य स्थान परिनिमित्त होता है। स्व-जलाट का तिनक मण्डित रखना, उनके त्रिण इतना आवश्यक था कि तिलक-हीन ब्राह्मणा को जनता अपशकुन का निमित्त स्वीकार करती थी। कवि चन्द ने तिनकहीन ब्राह्मण के सम्मुख पटा पर यात्रा ही स्थगित कर देने का परामर्श 'वर' उक्त धारणा का अभिव्यक्ति प्रदान की है।

- १ (क) "बोति विप्र प्रथिरात, तत्त बुद्धी अधिसारिय । देखिए—क्रम प० रा० का० ११८१।१२७ और भी देखिए—र०वा०', छ० २३, बी० च०, २६।३५, 'रा० वि०' २।८८, 'गा० म०', छ० ३१
- २ देखिए—क्रम प०रा०, मा० ३।१०।२२ और भी देखिए—कीनि०', प० ५४, बी० च० ३३।२ 'प० रा०', १४१
- ३ देखिए—क्रम प० रा० मो० ३।१०।३६, ह० रा०, छ० ७
- ४ देखिए—क्रम प० रा०', मा० १।६१।३८ ज०ज०च० छ० १७२ पदमा० ग्र०', प्रकीणक, छ० २३, 'हि० व० वि०' छ० २२
- ५ देखिए—क्रम 'प० रा०', मा० २।६२।१५, 'कीनि०', प० ४४, बी०च०' १०।८० देखिए—शि० भू०' छ० ७५
- ६ "महाराज द्व विप्र उदार । अद्भुत दुति टाढे दरवार । पीत धोत्रनी पहिर गात । ऊपर उपरना अवदात ।' — बी० च०', २८।१२
- ७ देखिए—क्रम, 'प० रा० मो० ६।६५।२२, 'प० रा०', का० २१३।१८६ कीनि०', प० ४४, 'बी० च०' २८।३
- ८ 'अतिलक बभन स्याम जसु जोगी हीन विभुत । समुह राजपरस्त्रिय । गमन वरज्ज नित्त ॥' — प०रा०', मो०, ४।६०।६।६७



## सामाजिक प्रतिष्ठा —

ब्राह्मणों की जातीय स्थिति पर प्रतिष्ठा का रूप मिला हुआ है कि उनका समाज में बड़ा सम्मान प्राप्त था। ऐसा विश्वास किया जाता था कि ब्राह्मण में विशेष शक्ति या शक्ति का गुण निहित है। 'तातः' उनसे आसना पर उरें तब उनका उठकर स्वागत करा जाता, परन्तु समाज तथा उनके समाज का अर्थ है, 'सत्त्व' का गुण स्वीकार किया जाता था। 'प्रातः प्रातः विप्रमुनि का श्लाघना एक प्रकार का धार्मिक-व्यक्त का रूप में समाज था। महाराज गुरुद्वारा की शिष्य शिष्या का यह एक आवश्यक भाग निहित किया गया है। ब्राह्मणों का चरित्र में स्व-शक्ति का शिष्य भी अतीव पुण्यकर सम्मान प्राप्त था तथा यह धारणा व्याप्त थी कि, ब्राह्मण अज्ञानी और मूर्ख भी बना हुआ फिर भी उमका आन्तरिक ही सम्मान प्राप्त है। ब्राह्मणों का समाज सभी प्रकार के कार्यों का निश्चय सहज करते थे तथा उन्हें अथवा सम्मान की धारणा ही प्रदान था। विश्वास किया जाता था कि तीर्थ यात्रा और दानार्थि श्रद्धा में अथवा समाज का तो प्रधानता किया जा सकता है किन्तु श्रद्धा श्रद्धा एक ऐसा जगत् कृत्य है जिस पुण्य कार्य भी उमका प्राप्त में परिष्कार तथा शिवा मन्त्र। सम्मानित श्रद्धा श्रद्धा का पात्र में वचन का लिए महाराज धीरगिरि दत्त का भाग्य तन्निष्ठ मुक्त करता से विरत हान भी प्रशिक्षण किया गया है। आत्मज्ञान में छोटा ब्राह्मण दान आत्म श्रद्धा की धर्मोद्वेग दधी का दृष्टि-पूर्वक करता का लिए किया करने का मूल में भी उमका सावधानता ही भाव रही है। परमानन्तरात्मा में ना सामाजिक-शक्ति में ही उही अन्तिम मुक्त स्थल में भी ब्राह्मणों पर प्रहार करने वाले उनके सामाजिक भागी बतलाए गए हैं।

ब्राह्मणों की वृत्ति का जलहरण करता जातीय शक्ति एक पाप का मूल स्वीकार करते हुए विश्वास किया जाता था कि वसा करता वाचा का सहसा वर्षों तक विष्ठा-श्रीट के रूप में नाम तथा पड़ता है।"

१ दलित—श्रम 'वी० च० २१।२२ १४।१६ वी० च० २१।२२ वही १४।१६

२ दलित - श्रम वही २८।६ १२, — ज० ज० च० १६३

३ 'प्रातः रात जगत् प्रथम गा दुज दरसन किन्तु। — प० रा०' मा० १।१२८।६४

४ 'द्विज चरणादक बुद्ध सौचित सुख बद्धित्य। — २० बा० १४

५ अनाचार साधार अमाधु। मूरस पठयो कि साधु असाधु।

विप्र होत जगत् जुग अनुरूप। तार्ते विप्र अतिथि को रूप।

— वी० च०, २८।२२ २३

६ "भली बुरी विप्रन की सह। सुत ज्या प्रजा पालि सुख लहे। — वही ३१।३०

७ ब्रह्मघात का पातकहि तारथ दान सक न हरि। — ज० ज० च० छ० १६

८ से ११—देखिए, श्रम, 'वी० च०, १०।४६ ५१, जा०' ५६५।१८ पर० रा०,

३५।२८, वी० च०, ३०।११ 'सु० च०, ७।२।२६

महत्त्व अभिवद्ध हुआ था, और विवाहादि सम्बन्ध परस्पर इही कुलाम मर्यापित कर दिए गए थे ।<sup>१</sup>

वीरकाय प्रणेताजा न छत्तीस राजवशा की जा तालिकाएँ दी हैं उनमें कुछ वशाक नाम समान हैं जबकि अथ वशा की नामावली ग्रन्थानुसार भिन्न भिन्न है । पथ्वीराजरासाक छत्तीस वशा का नामोस्लेख करने वाल छदक आधार पर बनल टाड ने तीस वशा के नाम दिए हैं ।<sup>२</sup> रासा के सम्पादकान उसके आधार पर छत्तीस वशा की नामावली दी है जबकि चिंतामणि विनायक वक्ष<sup>३</sup> और डा० राजवली पाण्डेय न उसन उतालीस वशो का नामाल्लस प्रदर्शित किया है ।<sup>४</sup> वह छदक निम्न लिखित है —

रवि सप्त यादव दस ककुस्थ परमार सदावर ।  
चाहुवान चालुवक छदक मितार आभीयर ।  
दोयमत्त मखवान, गरुभ्र गोहिल पुत्र ।  
चापोत्कट परिहार, राव राठौर रोमजुत ।  
द्वरा टाक सधव अनिग, यौतिक प्रतिहार दधिपट ।  
कारट्टपाल कोटपाल हुल, हरितट गौर कलाप भट ।  
धयपालक निकुम्भवर राजपाल कविनीस ।  
काल छुरक्के आदि दे वरने दस छत्तीस ।<sup>५</sup>

प्रस्तुत छ म छत्तीस वशो की नामावली का स्पष्ट उल्लेख किया गया है जिाकी नामावली रासो सम्पादकान इस प्रकार दी है — १ रविवश २ चद्रवश ३ यादव वश ४ कछुवाह ५ परमार ६ सदावर ( तामर ) ७ चौहान ८ चालुवक ९ छदक (रानल) १० सितार ११ आभीर १२ दोयमत्त (राहिमा)

१ देखिए— 'हिन्दू भारत का अन्त', पृष्ठ ५८६-६०

२ बनल टाड ने उपयुक्त सूची के १—यौतिक २—हरितट ३—दधिपट, ४—आभीयर ५—मदावर और छदक शब्दो का राजवश सूचक न मानकर शप तीस काम ही दिए हैं । दे०—'एन्स एण्ट ए टिक्विटीज ऑफ राजस्थान' पृष्ठ ६६

३ देखिए—'हिन्दू भागत का अन्त', पृष्ठ ७२ से ७८

४ डा० राजवली पाण्डेय न उपरिलिखित बुलियाक अतिरिक्त १—रामजुत २—गौर (गौड) तथा कविनीस नामक तीस अथ बुलिया की भी नामावली दी है, और अभिमत व्यक्त किया है कि प्रथम तीन वश (मूल क्षत्रिय वश) मध्ययुग म भी दुहरा लिये गए हैं । अर्थात् सूय, चद्र और यदुवश का पथक करने पर मध्ययुग म शप छत्तीस वश थे ।

—देखिए हि० सा० का व० ३०, भाग १, पृष्ठ १०७

५ 'प० रा०', का०, ५३।२७८

- १३ मत्तगात्र १४ भोर १५ माहित १६ मतिवीर १७ पापापात्र (पापपात्र)  
 १८ परिहार १९ गीत २० ज्ञान २१ टांग २२ वषट २३ जतिग २४ मोतिका  
 २५ प्रतिहार २६ विपट २७ वास्तवगत २८ वाप्यात्र २९ दूत ३० रसिग  
 (रसि) ३१ कताप (कमपा) ३२ भू (ज) ३३ त्रिभु ३४ पत्तगात्र  
 ३५ राजपात्र ३६ पात्रपात्र ।

सूचीय वंशों का विवरणार्थक अत्र जब हम उक्त उक्तग त्रय का-  
 प्रधा की समायती पर दृष्टिगत करता है ता योग्यार्थ में उक्तग सत्रप्रिाग म  
 लीग 'हम्मारागया म मागह गथा आहगाट म गतागया गता वा समायती मिता  
 है । तत्र अतिवा मुजात चरिा म नीग जीव हिम्मावपान रिसवत् । म भी  
 लनीग रतिग वशा का सामान्य मिता है । कि म त गथा म उचितगत वशा पर  
 गुणत र्व म विचार करत पर उतरी गथा सूचीय व स्या पर आगी बटा है—

- १ गदराह २ चौदा ३ भोर ४ पवार ५ परिहा ६ गटोर ७ तामर  
 ८ पात्र ९ हांग १० वषट ११ चान १२ वग १३ गाहित १४ भोर  
 १५ जीगात्रिया १६ बुन १७ मन्वीर १८ रघुवं १९ धधत २० पुडीर  
 २१ मालवी २२ वनाचन २३ भोरिया २४ गेंगर २५ वग्नूर २६ भोर  
 २७ चरणी २८ पाहिमा २९ तारटा ३० मधय ३१ जाभीर ३२ गीची  
 ३३ र्वना ३४ टाक ३५ त्रिभु ३६ रजिया ३७ भागी ३८ कतु ती ३९ नाहर  
 ४० भाला ४१ मुर ४२ तपध ४३ चाकुव ४४ मन्वाना ४५ प्रतिहार  
 ४६ गदर ४७ मिता ४८ जतिग ४९ मोतिका ५० वषिपट ५१ वास्तवगत  
 ५२ वाप्यात्र ५३ दूत ५४ कताप ५५ पात्रपात्र ५६ राजपात्र ५७ जन-  
 गात्र ५८ सरगात्र ५९ गुत्था ६० टार ६१ दुर्गिनी ६२ पवया ६३ बीसल  
 ६४ ववेय ६५ दद्या ६६ डाभि ६७ वारड ६८ सरगु ६९ गगार ७० वषट  
 ७१ ग वारन ७२ मुहरवार ७३ गीतम ७४ इटारिहा ७५ दूर ७६ विपरिहा  
 ७७ वितचन ७८ कविनीग ७९ सडा ।

उपर्युक्त तालिका से प्रतीत होता है कि क्षत्रिया के सूचीय वंशों के विषय में  
 निम्नान्त धारणाएँ न होने के कारण बीरका ये प्रणताओं ने स्वगानानुसार उनके वंश  
 और उाग में नि सत उपजाटाओं का मिश्रण करके उनकी सूचीय सरथा पूरी करन  
 का प्रयास किया है । ऐतिहासिक साक्ष्यों से भी यह सुक्थो सुनभ नहीं पाती । श्री वद्य  
 पथरीरानासा भ प्रदत्त तालिका को बारहवीं शताब्दी में स्वीकृत सूचीय वंशों की  
 सूचक ता अवश्य बताते हैं किन्तु उन्होंने सूचीय वंशों की नामावली देने की जा

१ से ६ देखिए— पं०रा० का० ५३, बी०च० का० १४२० रा०वि० ६।१८७  
 ८६ हं०रा०' छ० ६१८ 'आ० २।८ १६, हि० व० वि० छ०  
 २७ ३८  
 ७ देखिए— हिंदू भारत का उत्प, पृष्ठ ७६

चेष्टा की ह उमम व मात्र इक्कीम राजवशो का ही उल्लेख करते हैं ।<sup>१</sup> उहान मराठा के द्वारा अपनी ६६ युत्रियाँ निर्धारित करने का भी उल्लेख किया है ।<sup>२</sup> बनल टाट न छत्तीम वशा मन्मधी चार भिन सूचिया दकर जत म स्वय एव नवीन सूची दी है<sup>३</sup> किंतु यह भी सिद्धान्त का ग्रह्य नहीं है । अबुल फजल ने स्वयाल म क्षत्रिया की पाँच सौ से अधिक उपजातिया बतात हुए उनम स बाबा कुलिया सर्वोत्तम और बारह सामाय महत्व की बताइ है ।<sup>४</sup> इस विषय म हम डा० दशरथ शमा का अभिमत अविन मभीचीन प्रतीन हाता है जिनके अनुसार 'राजपूत क्षत्रिया के ३६ वशा का निर्धारण ता अवश्य किया गया था किंतु उनम स कुछ वश एम थे जिनकी इन छत्तीम वशा म परिगणना स्थायीय अथवा अधिक से अविन प्रातीय मात्र ही थी । तात्पर्य निष्कप यह निदश क विभिन्न भागा म क्षत्रिया क छत्तीम वशो की संवमा य तालिका क स्थान पर कुछ राजवश एम थे, जिनकी स्वीकृति मावभीमिक थी, तथा उनम सम्मिलित कुछ वश एम थ कि ह उनन प्रात विणपा म ही यह गौरव प्रदान करने का प्रयास किया जाता था । बीरकाथ्य प्रणेताजा के सम्मुख भी यही यवधान रहा है, और उहाने अपन आश्रयदानाजा की इच्छाजा के अनुरूप छत्तीम वशा की तातिनाए देन की चेष्टा की है । इन आधार पर कि किस कुती का अधिक से अविन क्षत्रिया न उल्लेख किया है बीरकाथ्य क आधार पर छत्तीम-वशा की अधालित सूची प्राप्त हाती है — १ कछवाह २ चौहान ३ गोर ४ पवार ५ पडिहार ६ राठीर जोर ७ तामरा का मातो सूचिया म उल्लेख मिलता है । इसी भाति ८ यादव ९ हाडा जोर १० घघला का छ सूचिया म ११ चदेत १२ वस और १३ गौहिल वशा का पाच सूचिया म, १४ मीर १५ श्रीशादिया और १६ बुदला का चार सूचिया म, १ गहलोत १८ रघुवशी १९ घघल २० पुटीर २१ सालकी २२ बगफा २३ भदौरिया २४ मंगर २५ वटगूजर २६ सूयवशी जोर २७ पोरव वशा का तीन सूचिया म तथा २८ चद्रवणी २९ दाहिमा ३० चावडा ३१ सघव ३२ गीची ३३ दवडा ३४ टाक ३५ निकुभ ३६ डानिया ३७ भाटी ३८ कचुली ३९ नाहर और माला वशा का दो सूचियो म उल्लेख मिलता है । इनम स सूयवश, चद्रवश और रघुवश को इस तालिका म सम्मिलित करना उचित नहा है, कयाकि रघुवश ता सूयवश की ही एक शाखा है । जबकि सूय वश स ही अ य मस्त क्षत्रिय वशा का विकास माना जाता है । बनाफला का भी अपना कोई स्वतंत्र राज्य न था, अत उ ह भी राजवशा म सम्मिलित नहीं किया

१ हिंदू भारत का अत, पृष्ठ ५८३

२ वही, पृष्ठ ५८८ ८९

३ दखिए— ए० ए० जा० राज०, पृष्ठ ६९

४ दखिए— आइन ए अक्वरी, भाग ३, पृष्ठ १३०

५ देखिए— 'अली चौहान डाइनेस्टीज, पृष्ठ २४५

जा सकता है। जत धर सुधीर वत ही बीरबाध्य म विराय प्रसिद्ध गिद्ध हात है। घराय यह विषय नी जप्रामणित त हागा वि हाग भागा गहिमा धीरगाका भाति स्वयत्र रात्र-वगा क म्म म उा विगा विर गत है तर्था य क्यामगा रागा क अनुगार बीहात वत की उपागागा-माय म। म्मग म्मग हागा है वि कायत्रम म धारिगा क तबीर गत्रगा का उाय म्मा प्राचात गत्रवगा का हाग हागा त्रा रहा था। फिर भा एक पात्र निरिात की गई सु तीग म्मगा परम्परागत वत म्म धी र्मिगम उासी म्मगा अह्य या जपित हा। हूण भी धारिगा की सुगाग गत्ररुतिगा मानन का ही परिगाी पता है।

### विधिध कुत्त की सामाजिक प्रतिष्ठा

पथीगत्रगा का एक प्रसंग म यद्यपि धारिगा क सु तीगा कुत्त की ममान सामाजिक प्रतिष्ठा हात का मत ध्यान दिया गया है तथापि प्रधानता एत उल्लगा की है जिनम चौहात ममरा-भुतिगा म गवध्रष्ट वनाय गय है।<sup>१</sup> क्यामगा रागा म भी तीहाना की मममन राजपूता म गुगा का वायत्रम म वहृत्तम निगात स उप मिात दिया गया है। कति जान त चौहाना की जपराजयना दग तध्य पर आधन वना है वि भारत क अय धारिग वश तीगा की गाभर भीन स निनाता गया नमन गात है जिनम व उा विग्द लडात नमय हागी ममभन है।<sup>२</sup>

पथीगागरगा क कई प्रतगा म रामराय व-गुजर का अय गामन मूग कह कर मम्वाधित करत है। यही तही वह स्वय भी अत्यन्त उपयुक्त परामग दन हुए भी अपन आपन। प्रामीण गुजर अपनी मत्रणा का हास्याम्प वताकर 'इम धारणा

१ दगिए - क्या० रा०' छ० ५६

२ सिन्धीन वग छनीस कुत्त सम गमात गतिय अवर। प०रा० मो० ४।६२०।१\*

३ (क) सुरनाथ सग सुग सवल साभ। वसह छनीस चहुआन जोप।

— प०रा० का० ३००।४

(ख) पुत्री पुत्र पवित्र पथ अधनी छत्तीस यसा वन।

— प० रा० मी० १।२१२।६

४ जित्ती नात रजपूत की सगरे हिंदुमतान।

सबम निहृक जानियो बडा गात चहुआन। — क्या० रा० छ० ६८

५ जैसे सय याजिन म है बडडी नीसान।

तस सबही जात म बडा गात चहुआन। — वही छ ६३७

६ वही छ० ५० ५१

७ (क) रे गुजर गवार राज ल मत न होई। प०रा०, मो० २।७६४।१८

(ख) गुजर गमार सस्नह बली। मत दव दुग्गन गन। प०रा०, का० २१३३।

१८५ और भी दे०—२१८४।४८४ २१८७।४६५ २१८६।४६१ २१६२।५११

८ 'मह गामी गुजर गव्हिया। हसाई हँसाइया। — वही, २१८५।४८७

यह भविष्यवाणी सुनाता है कि यह शिशु उड़ा हाकर दिल्ली और पचाद प्रेश का के भू भाग का अधीश्वर होगा, तथा गजनीपति को यथा प्रस्त कर्म का सुपुत्र प्राप्त करेगा। राजविलास म महाराज जगतसिंह ज्यातिपी से स्व पुत्र की जन्म पत्रिका सिलमान तथा प्रतिदान म अपार द्रव्य प्रदान करे है।

वीरवाच्य म ज्यातिपिया के लिए प्रयुक्त आदरगम्यद विशेषणा तथा उनके निर्भीक होकर नरशा तब को भूत मति अभिहित करन, और गिबट-भविष्य म उनके विनाश या पराजय तब का स्पष्ट उल्थाटन कर दन सम्बन्धी तथ्या से प्रतीत होता है कि उनका स्थिति अति मम्माय थी। महाराज जापान जब अपन व्यास क कथन पर विश्वास न करके यह परीक्षा करन के लिए कि क्या कीली वस्तुतः शेषनाम क शीश म जा धमी है—उस उखाड लेत हैं, ना वह उह मूत्रमति बताता है और भविष्यवाणी करता है कि आप चौहाना से जोर चौहान तुर्कों से पराभूत होंगे। इसी भांति प्रियाकुवरि ने विवाहावमर पर हान वान अपशकुना की ध्याप्या करत हुए ज्यातिपी का यह भविष्यवाणी करत चित्रित किया गया है कि मरे कथन का चाहे सम्मान करा अथवा उपहाम किन्तु दिवनी राज्य इक्कीग वष मात्र ही गिरापर रहगा। तत्पश्चात् हि दू या तुर्कों म न किमी एक की ही कीर्ति शेष रहणी।<sup>१</sup>

ज्यातिपिया के विषय म कुछ हीन धारणायें भी प्रचलित थी। कदाचित् आनायकाल म भी कुछ ज्यातिपी अपन कपट पूण हथकटा द्वारा जनता का धन ऐंठन का प्रयत्न करत थे यही कारण है कि रामानार न एक स्थल पर ज्यातिपियो का छत्र प्रपच के मूर्तिमत रूप गणिकाश्री की काटि म स्थान दिया है।<sup>२</sup>

### अथ वम —

ब्राह्मण मात्र शास्त्र जीवी ही गही हान थे, अपितु वे सडग सचालन म दण यादा भी हान थे। परमानामा 'मुजानचरित' छत्रप्रकाश' और जाल्हमण' म ब्राह्मण युद्ध करत मित्रत हैं। कुछ ब्राह्मण रमास्या का भी काय करत थे। कवि चन्द न गजनी म कभी महाराज पृथ्वीराज का स्वामा पवान के लिए दम ब्राह्मण नियुक्त किया है।<sup>३</sup>

१ 'प० ग०' भा० १।८६।२२

२ यही १।३८२।६४७

३ गनिका गनिक कथन की ठम प्रिया परवीन। — क०, ३।६५।१८

४ चलति विप्र तागर। करत चाह आगर। — पर० रा०, २१।३६

५ "कित विप्र कर्म घनुप रग जयगु के जता।

कित रथनु अमवार मुजम कीर्ति के दना।" — सु० च०, ६।६।७

६ म ८—दगिण—अम ६० प्र० ७।७६, आ० ६१।२३२४, प० रा०, का० २३७।१६६६

### क्षत्रिय

क्षत्रिय के लिए उनकी परम्परागत सभ्यता—क्षत्रियों के गमान ही राजपूत शब्द का भी बहुत प्रचलन था। उनके लिए त्रिनिपति<sup>१</sup> अग्नीश जो टागु<sup>२</sup> मनाग भी प्रचलित थी जो उनका शासन मन्चागन से घनिष्ठ सम्बन्ध सूचित करती है। कीर्तिलता में राजपूत शब्द का प्रयोग मिलता है<sup>३</sup> जो उनका सम्बन्ध राजपूतों से मानने के तथ्य की पुष्टि करता है किन्तु पध्नीरागरातो में क्षत्रिया के लिए राजपूत शब्द का प्रचलन आरम्भ होने के मूल में एक जय धारणा प्रकट की गई है। इसके अनुसार परशुरामजी ने क्षत्रिय वंशों मूलन की प्रतिज्ञा करके जिस समय धरा के

- १ दलिये—क्रम प० रा०, ता० २५, ६० ६७८८७ ११३६६६८ २१६६६५००  
 २१८११४६२ २१८६१४८० २१६०१५०४ पर० रा० १८० ३११११  
 २११२० २१११६७ २७१०० २५१४५ ३८५७ वी०च० १३११११८१२६,  
 २० वा० छ० ५२ ५३ छ० प्र० १६ ८८ १११७ १११५० १२१७  
 १८११० ह०रा० छ० ४२० ५८३ ६०/६५२ ७०० ह०ह० च० छ०  
 १४५ १४६ १४७ २७६, ६५२ ७०० रा० त्रि० ७८८ ८१०५ ३१७०  
 ६१५४ गा० व० छ० १३० आ० १११२ १२१२२ १५१ ५ १६१०४
- २ दलिये—प० रा० वा० २५०६११५ २५१०१२१ २५१११५४ ५५१२१३६  
 र०वा० छ० ४६१४६ १२ ५५, वी०च० ३१५६ ८१५६ १०११० १४१३५  
 १६११० २६१५७ गा० व० छ० १२१३१ १३२ १५७ सु०च०  
 ५१४१४४ शि० वा० छ० ८८ प्र० रा० छ० १५ टि० व० वि०  
 छ० ३१ २२

- ३ परमराम द्विनिपति हा द्विनिपति जपी निज नम ।  
 —प०रा० वा० २१०१०६४ जोर भी दलिये—प० रा० वा २१६४५१७
- ४ दलिये—क्रम सु० च० ४१२१२
- ५ दलिये—क्रम प० रा० वा० १५२४१२३१ वी० च० १६११६ पर० रा०  
 १०१०७५ १५११४६ १५१११८ १५११६५ ३५१५७ सु० च० ८१२१२५  
 ८१२१०८ ४१२१२८ छ० प्र० ७१८ ८१५ आ० १५१२१
- ६ श्री चित्तामणि विनायक वचन अभिमत यवन शिवा है कि राजपूत शब्द का प्रयोग अधिकतर राजपूतों के अर्थ में होता था। उन्होंने दक्षिणी भाग में जाध (प्रान्त) जोर महाराष्ट्र में लिखित ग्रन्थों में साक्ष्य पर यह भी गिद्ध किया है कि क्षत्रिय साम्राज्यवादी न हान पर भी राजपूत कह जाते थे।

—दलिये हिन्दू भारत का उत्थाप पृष्ठ ८३ ८८

- ७ वचन बम्हण वचन का अर्थ राजपूत कुन वचन जानि मिनि वदम चणार ।

—'वीनि० पृष्ठ ३२

समस्त क्षत्रियों का सहार कर लिया था, उस समय धरा न त्यस हजार गभवती क्षत्रा  
 णियों स्व उदर म छिपा ली था । जब पशुराग भूमण्ण कश्यप को मीषकर तपस्या  
 चन गये तो धरा न अपनी रगा की कामना म उन गभवती क्षत्रियों का रत्रगभ  
 म मुख कर दिया । उत जा सताने उत्पन्न हुई, ध म रज थी अत नदनून  
 उट्ट रजपूत' सना प्रणा की गट ।' तात्पर्य यह कि राजपूता का राजपुत्रो के  
 वाच्य मानन के साथ साथ, रज अथवा पशु की के पुत्र मानन का भी विश्वास किया  
 जाता था ।

उत्पत्ति — ब्रजभाषा क वीरकाय म कुछ क्षत्रिय वंश की उत्पत्ति-कथाए दी  
 गई हैं । पथ्वीराजरासो जीर हम्पीररासो म पात हाता है कि क्षत्रियों के प्रतिहार  
 चातुर्व्य, परमार और चौहान कुतो की उत्पत्ति दुष्ट दान क निमित्त आरू पवत पर  
 वशिष्ठ आदि ऋषियों द्वारा किए गए मन स मानी जाती थी ।' पृथ्वीराजरासा म  
 दी हुई मूय और चद्र वंश की उत्पत्ति कथा क अनुसार मातण्ड का पौत्र दमम  
 शिव शक्ति वन म जान से स्था हो गया था । चद्र मुत तुम उस पत्नी क रूप म स्व  
 गह ले गया जिसम चद्र रज चना है । मातण्ड का पौत्र एक माह पश्चात पुत्र्य भी हा  
 जाता था जिसस मूम-वंश की नीव पडी है ।' 'पथ्वीराजरासो म चौहान की हाडा  
 गाय्या का उन्भव एक जस्त्रिय-खड स दिमाया गया है ।

परमालरासो म पथ्वी की वंश पुकार मुनकर प्रता आश्वासन दत हैं कि  
 क्षीर ही बलि जीर मलि आन्हा और उदन के रूप म अवनार लन तुम्हांग भार  
 कम करेग । उयम चन्द्र-वंश के आरि पुरप च द्रव का दिरान हूग उनके मातपक्ष  
 का सम्ब ध एक विधवा ब्राह्मणी से समभन की धारणा प्रनट की गई है ।'

क्यामर्गा रासा म चौहान, नूह क ज्वष्ट पुन नाम क वंशज लिखाए गए है ।  
 कवि जान न उनके पूर्वजों की जा अरगल नामायली दी है उनम पवत ममुद्र नाम  
 आरि भी ब्रह्मा के वंशज चित्रित विन गए है । ब्रह्मा का भी वह नाम की सातरी

- १ दम हजार गभवत । रिपि प्रिय ढकि धरती ।  
 परमराम क करत । वाग उन जीर न पित्री ।  
 वागिग क, ल द्विगौ । उदिन मार्गो मटिमटन ।  
 तपन तात पन छडि । गयी गन ग्रहे कमडन ।  
 वसुधा विचार तव कडिड । तिज रथा वाग्न थपिय ।  
 उत्पन्न गूर तिनक गरज । दिपि नाम रजपूत (रजपूज) दिम ।'

— ५० रा०' का० २११८८६

- २ दत्तिका— ५० रा० का० ६८१२४३ से १३१२७५ २० रा०, छ० ३७ ६६
- ३ ५०१० का० २११८८७ ८८
- ४ लिपि— '५० रा०' का० १४६११९६ म १४६२१२०६
- ५ दत्तिका— ५० रा०, ११६/ ७३ ११७७ १५५



पीढ़ी का राज निर्वाह है तथा परंपरागत राज्य की सीमा पीढ़ी का राज बनाए गए हैं। अतः यह स्पष्ट है कि यह विचार ही भी अस्ति म उक्ति है।

इस प्रकार राजतंत्र का मूल पुराण का लक्ष्य कुमार का प्रशिक्षण किया गया है जो राज्य द्वारा विध्वंसित हो सके या क्षीणित न हो सके। अतः राज भूषण में क्षीणित या राज का मूलाधार उठाए गए प्राणी पुरुष द्वारा राज का क्षीणित न हो सके तथ्य पर आधारित किया गया है। अतः अस्ति म उक्ति का उद्देश्य ही उल्लेख क्षीणित या अहीन माताओं के मतों में निर्धारित है।

क्षत्रियों का युद्ध यथा ही उत्पत्ति में सम्बन्ध राजन या राजा जिन मता का पीछे उल्लेख किया गया है उक्त विषय में हमारा नियोजन है कि ये राजा इतिहासकारों की दृष्टि में तथ्याधरत है। तथापि जालाच्यारानी राज धारणाओं पर प्रकाश करने की दृष्टि में उक्त पर्याप्त महत्व है।

क्षत्रियों के राज क्षत्रिय राजा का विषय में यह तथ्य अवधारणीय है कि पद्मीराजराजा 'रणमत्त' 'धीरारिष' राजमिताम 'हम्मीरराजा' भूषण के स्फुट पद और 'अस्ति म' में पुत्रज में विवाह राजाभिषेक एव युद्ध आदि का अवसर पर उक्त छत्तीस राज या राज राज होना प्रदर्शित किए गए हैं जिससे स्पष्ट होता है कि हमारे समग्र ज्ञानाध्यक्षों में क्षत्रियों के छत्तीस राजवश या कुल मानन की प्रसिद्धि थी। श्री चित्तामणि विनायक बच्च के अनुसार छत्तीस राजकुला की तालिका के नाम महाभारत में उपलब्ध नहीं होते। छत्तीस धमनिष्ठ राजकुला की यह सूची मत्त ११०० के लगभग तयार की गई थी जिसमें परिगणित प्रत्येक राजकुल का

१४६०— कथा० रा० ७० ३ म ४७ छ० प्रा०, ११० १६ 'जि० भू० छ० ५  
भा० १४११६

५ (क) छत्तीस कुली वर वस प्रिय। चरि प्रथि राज नरि चरि ।'  
प० रा० १० ७४६१२४२

(ख) विगतत वत्त छत्तीस वस। जन्नाथ जम जनु जदुन वस ।  
वही १६८१७११ ६७१२६० १४८१७२८ ३००१४ २४६१४६, ६२८१२६  
११६६१२ २२२४३६

६ 'छत्तीस कुल वर वरिसु घण पय भगि सु रा हम्मी' तण। रण० छ० छ० ३१  
७ 'गम ररत छत्तीसा कुरी। मानो रामच द्र की पुरी। — वी० च० १८१५  
८ वस तह राजपुत्रीम छत्तीस। ह्यद्वल गयत्त पदरत हीम। वा० वि० २१८८  
९ छत्ताम त्रश छत्ती चरि जिमि पावत वदन वर।' — ह० रा० छ० ७००  
१० भई है नदानी बग छत्तिम म ववरी। — भू० प्र० स्फुट छ०, १६  
१ 'कुली छत्तीसा सा सजनाई टका हान गात म लाग। १२३१६६

का प्रकाशन करता है कि गूजरा द्वारा सामान्यतया बुद्धि म काम न लेन की प्रसिद्धि व्याप्त थी ।

राजविलास म राठौर वशी महाराज जमवतसिंह और सूयवशी महाराजा राजसिंह की वारारतें एक ही तिथि म आन पर—तारण वदन पहन कौन सा राजवश करे इस तथ्य पर विवाद उठ खड़ा होता है । महाराज राजसिंह राठौरो की अवमानना के लिय यह तथ्य प्रस्तुत करते हैं कि ये मुगला के अधीन हैं तथा उहाने मुगला को अपनी पुत्रियां दे रखी हैं<sup>१</sup> जिसका राठौर कोई उचित प्रत्युत्तर नहीं दे पात । महा राज छत्रसाल हाडा के कथन से भी मेवाड के सूयवशी महाराणाआ को अय क्षत्रिय प्रशा से उच्च ममभन की धारणा व्यक्त होती है । वे कहत हैं कि हमारा और आपका मेवाड नरेशा की समता करने का प्रयत्न कग्ना दुरभिमान मात्र है क्योंकि हम म्लेच्छो के अधीन हैं ।

आरुहखड म वापला को ओच्छी-जाति का बताते हुए<sup>२</sup> स्थल स्थल पर यह मत व्यक्त किया गया है कि उनके साथ रोटी-बेटी का सम्बन्ध करने वालो के कुल का कलक लग जायगा ।<sup>३</sup>

ब्रह्म क्षत्रिय —

पथ्वीराज रासो मे क्षत्रियो के चालुक्य कुल को ब्रह्म चालुक्य<sup>४</sup> तथा चालुक्य द्विज<sup>५</sup> सजाआ स अभिहित किया गया है, तथा उनकी उत्पत्ति के प्रसंग म, उनके आदि पूवज को भी ब्रह्मचय व्रतधारी और कुशा मडित शरीर वाला प्रश्रित किया गया है ।<sup>६</sup> 'परमालरासो' म महागज परमाल से पूव के नरेशा के नामा म 'ब्रह्म शब्द जुडा दिखाते हुए'<sup>७</sup> उनके मातपक्ष का सम्बन्ध एक विदवा ब्राह्मणी स जाडा गया

१ "तुम आसुर आधीन धीय द घरनि मु रक्खहु ।

इत करनी हम अग्ग ऊँच मुँह करि करि अक्खहु ।" —'रा०वि० ३।६।१

२ "जाति बनाफर की जोछी है, सब जानिन स जाति उतार ।"

—आ० १२५।११ और भी दे०—१३६।१०, २०६।२१ ६०६।१५

३ 'जो कहू व्याहि जायें महुवे के काइ न पियहि घडा को पानि ।

लील का टीका तुमको हूइहै, हमरो जियत मरन हूइ जाय ।"

—वही, १३६।२३, २४ और भी दे०—२२१।४, २२५।१

४ 'रठौर पवार मरस्थलिय । ब्रह्म चालुक ज गल भरा ।

—'पू० रा०', का० २१६५।३७२

५ 'चालुकक वाह चालुक्य दुज । कुसित कुसन मडित तन ।' —वही, ५५।२७६

६ 'पुनि प्रगटयो चालुकक । ब्रह्मचारी व्रतधारिय ।' —वही, ४६।२५०

७ चणेल वश की वशावली म सभी नरेशा के नाम के पीछे ब्रह्म शब्द दिखाया गया है । दे०—'पर० रा०', का 'चदन वश-वणन शीपक द्वितीय अध्याय ।

है। अभी भी यह कति जाना जाता है। प्राचीन काल में परशुराम का नाम और यम्य मातृश्रीय का नाम है। तब यह जायगा कि भी योडा । का भगुवशी अभिहित बना हए । उक्त उद्भावना हए म्म म परशुरामका का म्ममा । व पर पर जागीत वि गान् म्म द्दिगि बना की भन्ना की म्म है कि व पर शुरामका व यत्र है । ताभ्य म्म कि जातापयान म सातुस्य म्म त ओर भागत यमा का शास्त्र-यम म धिहित म्मम्य स्वीकार विमा जाता था—व म्मम्य म्म सा म्मम्य का म्म हए म्मम्य वसन्ध-नमो म समाजा का । म्मभापय म्मही है कि कुद्द शास्त्रा त या ता अपा धात्रिययत् कायो व कारण धात्रियत्व का श्रणा म म्मया प्राप्त का विमा या जयमा कुद्द धात्रिय अपन शास्त्रा दन कर्मो व तिम शास्त्रा की श्रणी म्ममान पात जा म्म थ । द्म तयता जाति का बाध करान व तिम विमा सन्ना की गात्र की म्म और अत्र उद्द म्म अभिभागा म्म म्ममाधित विमा जा समा त्रिम उक्त शास्त्रात्त ओर धात्रियर—गात्र का मुग्गा ही तभाग हए जाता था । सातुस्य शीर वन्ना व गात्रो के माय तो द्मम श्म सन्ना जा म्म विमा गया था जबकि चौहाता का भगु-वशी ओर वस्तुमात्रीय मातृ हए भी द्मम श्म विहा कारण स न्ना जु म्म पाया था ।

इतिहासिक विवरणा म भी बारहवी शताब्दी व पूव द्मम-धात्रिय नामक एक नवीन जाति की उद्भावना का पता चलता है । वगान व सन राजाआ व पट्ट परमाना म, डा० वासुदेव उपाध्याय त उक्ती द्मम-धात्रिय जाति दी हुई हान का उल्लेख विमा है तथा द्म जाति के विषय म्म मत धमिय पर प्रवाश डालत हए कहा है कि डा० सन वगान व सन राजाआ का जन्म स धात्रिय त्रितु सस्मृति की दष्टि स ब्राह्मण होने के कारण द्मम-धात्रिय स्वीकार करते हैं जबकि भण्णरकर उह जमना ब्राह्मण विन्तु कमणा धात्रिय मानत हैं । डा० गौ० हीरा० ओभा न अभिमत व्यक्त विमा है कि मुज के काल तव परमार द्मम श्म वहे जात थे । डा० दशरथ शर्मा न भी एव

१ (क) पौडस वप सुता तव भई इद्रशाप स विधवा भई । — पर० रा० १।१०१

(ख) 'ता दुजकर की वयना प्रगटे वस चदेत । — पर० रा०' १।७८

२ परसराम सुत मूर है ताके बछ बठ जोत ।

चाहुवान है जगत म्म त सब बछ सगोत । — क्या० रा० छ० ४७

३ भगुवश सुनो अतिशय उदार चाहुवान भए तिनतें अपार । ह० रा० छ० २६

४ परशुराम जजमान करि होम करन मुनि लाग । — वही ५६

५ In the last quarter of this period under review, an unique caste known as Brahm Kshatriya came into existence'

—The Socio Rel Cond of N India, p 32

६ दे०—The Socio Rel Cond of N India Dr Vasudeva Upadhyaya p 32

७ दखिए—राजपूताने का इतिहास, जिल्द ३, भा०, १ पृष्ठ ५१

ऐसा तथ्य प्रस्तुत किया है जो ब्रह्म-क्षत्रिय जाति के आत्रिभाव की पुष्टि करता है। उनके अनुसार नवा स तरहनी शताब्दी के मध्य चाह क्षत्रिय अधिक सख्या म ब्राह्मण न हा पाय हा, किन्तु बहुत स ब्राह्मण क्षत्रिय-वशा क प्रतिष्ठाता अवश्य बन गए थ।<sup>१</sup> जत कर्मों के आधार पर ब्राह्मण स क्षत्रिय जयवा क्षत्रिय स ब्राह्मण बन पुर्या तथा उनकी सत्ताना के लिए कल्पित ब्रह्म-क्षत्रिय माा प्रचलित हुई थी, जा कालक्रम म पुप्त हो गई है। परमानराता म ता यह उल्लस किया भी गया है कि महाराज परमाल न अपने वश-नाम स ब्रह्म सता का हीनता-मूचन मानकर (उसका सम्बध विधवा ब्राह्मणा स हान क कारण) उसे पुयक बग दिया था।<sup>१</sup>

### क्षत्रियो की बाह्याकृति

अल चाहमान की सृति का वणन करत हुए रामाकार की मन स्थिति म एक प्रकार स समग्र क्षत्रिय वण की स्याकृति प्रस्तुत करन का लक्ष्य रहा ह जिमसे अभिप्रेरित हाकर उमन उका उत्तु गकाय उनत-मध प्रचड भुजाएँ, विशाल-वक्ष, आरकन-मृशुन-नत्र बालानवत रकिनम-आनन एव दूर भ्रू निक्षप वाला चित्रित किया है।<sup>१</sup> मान न भी महाराज राजमिह क पूर्वपुत्र्य वाप्यारावल का नवहस्त लम्बी काया वाल एव मवा मन का जाहारी प्रदर्शित करके क्षत्रिया के दीघकाय हाने पर प्रकाश टाला है। क्षत्रिया के अनिमानुषिक कार्यों के विवरण भी उनके अपरिसीम शारीरिक पौरुष के निदर्शक हैं। क्षत्रिया की चौडी छातिया और आरकन-नयना का आल्लखड म मनारजक वणन मिलता है। छननीति का आश्रय लत हुए यनाफल भ्राता जहाँ कही भी जागी-वश म जरि भेद सन जाते है, वही उनकी गजभर चौडी छानियाँ और मशाल-वत् जलत हुए नत्र उनके क्षत्रिय पुत्र होन का गृह्यादघाटन करके उह विपत्ति म फसा दत ह।<sup>१</sup> बेशकदाम न रवन-वण अशवा को क्षत्रिय जाति म परिगणित करके<sup>१</sup> प्रनरातर स क्षत्रिया का स्वाभाविक रग लाल हाना अभिद्योतित किया है।

क्षत्रिया की बाह्याकृति म उनकी वनखाती हुई मूछा का अप्रतिम स्थान हाता था। वीरकाव्य म महाराज पथ्वीराज \* जयचन्द 'हम्मीरदव,' छत्रसाल 'शिवाजी', और अजु नन्द<sup>१</sup> की प्रभाजशाही मूछा का उल्लस किया गया है। इसके साथ-साथ उनके योद्धाजा को भी जिनम अधिकाशत क्षत्रिय ही हाते थ—पृथ्वीराजरासो,

१ दे०—Early Chauhan Dynasties, p 242

२ "सुनिय वस उत्तपत्ति सब भूपति गया लजाय।

अब बुधधर मम वन मेंह दिज्जिय ब्रह्म मिटाय ॥" — पर० रा०, २।१०७

३ से ६—दक्षिण—पर० रा०, वा०, ५१।२५६, ५६ 'रा० वि०, १।२४०, आ०, ५१।२१ २५

७ से ११ दक्षिण—त्रम 'प० रा०, वा० १३७।१।६६, 'आ०' ६।५, 'क्या० रा०', ५७, छ० प्र०' २०।८, गि० भू०' ३१०

१२ "मुच्छ उमटत उमडि ऐँठत कठिन कर बुहुचान वा।" —'हि०व०वि०', ११३

परमात्मता का प्रतिपादन मुद्रा में किया गया है। मित्रता भ्रम और विनाश  
बटाव के विचारों में मुद्रा में सामाजिक अभिव्यक्ति का स्वरूप है।

यथावेग में क्षति का भय भी मूर्त्ति पर गहरा छाप पड़ा था जो कि  
उत्तम उमेर के ही चोपाभिप्राय का रूप था। मद्रास में प्रयोग होने वाले अनाउरीन  
की अनुपस्थिति का मुद्रा में सामाजिक विचारों का प्रारंभ और प्रगति का उ  
त्प्रेरण था। उत्तरी चोपा के अनुपस्थिति का प्रगति का रूप था। अनाउरीन  
का मूर्त्ति पर गहरा छाप पड़ा था।

मूर्त्ति क्षति का भय भी मूर्त्ति पर गहरा छाप पड़ा था जो कि  
उत्तम उमेर के ही चोपाभिप्राय का रूप था। मद्रास में प्रयोग होने वाले अनाउरीन  
की अनुपस्थिति का मुद्रा में सामाजिक विचारों का प्रारंभ और प्रगति का उ  
त्प्रेरण था। उत्तरी चोपा के अनुपस्थिति का प्रगति का रूप था। अनाउरीन  
का मूर्त्ति पर गहरा छाप पड़ा था।

दूसरा सामाजिक चित्रण का चरित्र-मुद्रा के द्वारा  
प्रदर्शित गया है। जो सामाजिक जीवन के प्रति चोपाभिप्राय का रूप था।  
मद्रास में प्रयोग होने वाले अनाउरीन की अनुपस्थिति का प्रगति का उ  
त्प्रेरण था। उत्तरी चोपा के अनुपस्थिति का प्रगति का रूप था। अनाउरीन  
का मूर्त्ति पर गहरा छाप पड़ा था।

मूर्त्ति के अतिरिक्त क्षति का वास्तविक जीवन का अर्थ उन्नत प्रतीक उनकी  
पगड़ी होती थी। यथावेग के आरम्भ से ही पगड़ी बांधना आरम्भ कर दिया था।  
शिवार सेना यात्रा हुए स्वयं और बनाए गए भाताजा के लिए मद्रास में मद्रास  
छाटी छाटी डाल और तलवारा के साथ साथ दक्षिणी चीर और बलगी मगावर  
पगड़िया का भी प्रबंध करती हैं। जागी बंधपारी बनाए गए के मद्रास पर पगड़ी  
बांधने से पहले हुए टिका (निशान) देखकर गाड़ी नरेश जन्म उनके क्षति का  
आशका व्यक्त करता है। जिससे पगड़ी क्षति का परिधान का आवश्यक अंग सिद्ध

१ देखिए—क्रम० प० रा० वा० ४७८।१७६ पर० रा० १०।५२१, 'रा० वि०  
६।६, मु० च० ६।३।६ शि० वा०, छ० २२ शि० भू० छ० ३२८,  
हि० व० वि०', छ० १८४

२ से ६—देखिए—क्रम०, ह० ह०, च०, १०८, शि० भू०, ३० आ०, ६।८,  
प० रा० वा० २८।५।६१

७ 'पुनः कही कह नप जत सी स्वामि रविल जिनु तन लज ।  
तिन जननि दोस बुध जन कहैं मुछ धरत मुख लज ॥

— प० रा०, मो० १।३३।६।२१

८ से १०—आ० २०८।१५, २६।२३, ६१।२३ २४

होती है। कवि चन्द ने महाराज की जरकमी पाग का मनारम वणन किया है।<sup>१</sup> इसके साथ ही वह महाराज पृथ्वीराज की अगुपस्थित म दिल्ली की रक्षा करन वाल गवल समर विभ्रम द्वारा पगनी के बांधन का साथक बताता है,<sup>२</sup> तथा रामु डराय की प्रशमा म कहता है कि जय व्यक्ति ता विवाहानसर पर या शोभामात्र क लिए पाग बांधत ह जबकि तुमने शाह गौरी का रू करन की प्रतीक टटो पाग बांध रखी है।<sup>३</sup> गजविनाम मे महाराज राजमिह<sup>४</sup> परमालरासा म ऊदल<sup>५</sup> और मलिसान<sup>६</sup> और शिवराज भूपण म महाराज शिवाजी<sup>७</sup> पाग बांधे चिथित किए गय है तथा आल्हखड म युद्धस्थन म गिरी हुई पागे शोणित नद म विकसित कमना के समूह मे उपमित की गई ह<sup>८</sup> जिससे क्षत्रिया द्वारा पाग के प्रयोग पर प्रकाश पडता है।

पाग क्षत्रिय मयादा की प्रतीक भी समझी जाती थी। पृथ्वीराजरासो मे महाराज पृथ्वीराज भालाभीम क ममीप पाग जोर चोली भेजकर, किमी एक को चयन करने का सदेश भेजने हैं।<sup>९</sup> (पाग का चयन करन का अभिप्राय था कि व युद्धाय प्रस्तुत है, जबकि चोली का चयन करन मे उनकी अधीनता स्वीकार करन की इच्छा का अर्थ ग्रहण किया जाता) म पिता के युद्ध म वीरगति पाने का समाचार पाकर महाराज पृथ्वीराज की डम प्रतिना स कि मैं पिन कर शोधन तक पगडी नही बांधूगा<sup>१०</sup> पगडी की क्षत्रिया के लिए महत्ता भलक रही है। परमालरासा म ब्रह्मा के विवाहाथ दिल्ली आन वाले महाराज परमाल के लिए द्वाराचार से पूव त्ल्लीयवर एक जष्ट घातु का स्तम्भ भेदन करने की शत लगा दत् हैं। उसम जसमथ महाराज परमाल का के भूचना भिजवाने ह कि यदि आप यह स्वीकार कर लें कि मरी पाग स्वय की न हाकर किसी से मागी हुई है ता मैं स्तम्भ भेदन क अभाज म भी स्वपुत्री का विवाह करन का प्रस्तुत ह।<sup>११</sup> आल्हखड म मागी शरेश से अपन पिता का बदला लेकर लौटा हुआ आल्हा, महाराज परमान के चरणा म अपनी पाग रखकर<sup>१२</sup> यह अभिव्यक्ति करता है कि दस दुष्कर काय म हम आपक ही जाशीर्वाद स कृनकृत्यता प्राप्त हुई है। उसम अयत्र उल का भी महाराज पृथ्वीराज के चरणा पर पाग रखकर विनमता प्रदर्शित

१ से ६—द०—क्रम० प० रा०' का० १५६।७५१, वही १०६।१२२०,  
'प० रा० मो० ४।६६०।१०१, 'रा०वि०' ६।११, 'पर० रा०' १८।१५,  
वही २।१४३

७ से ६—दक्षिण—क्रम० 'शि० भू०, १०४, 'जा०', ७।१।१७, प० रा०', का०  
११४८।१२८

१० 'घत मुक्कि पाघ वधन तजिय। सुवत थीर लीनी त्रियम।  
चालुक्क भीम भर भजिव'। कडी नात उदरह मुपम।'<sup>१</sup>

—प०रा०' का०', ११४८।१२४

११ "नानर असुव ग्रीभ धरि अन दत्त दवार्द।

नाम वचना मुट्ठे क० मम पाग पराद ॥'

—'पर० रा०' १५।५

१२ देखिए—आ०, १६।२३ २४,

करते चित्रित किया गया है।<sup>१</sup> ऊँच जोर गाता तो तथा महाराज चपतिगाय और बहादुर गीतों की अपनी पगडियाँ बल्लवर मंत्री गम्बूध स्थापित करत भी प्रदर्शित किया गया है।

पृथ्वीराजरासो और राजविलास से पात होता है कि आलोच्यकाल में क्षत्रिय पर्वों के समय योपवीत भी धारण करत थे। रासो में, इच्छिनी व पिता, द्वाराचार के अवसर पर अथ उपहारों व साथ साथ एक जरी का योपवीत भी प्रदान करत हैं।<sup>२</sup> यदि मान में महाराज राजसिंह द्वारा राधाभिक्ष के अवसर पर योपवीत धारण करने को, उनका वंश परम्परागत रीत्य अभिहित किया है।<sup>३</sup>

### शिक्षा दीक्षा —

वीरकाव्य में उपलब्ध विवरणों के अनुसार क्षत्रियों की शिक्षा का मुख्य अंग शस्त्रास्त्र संचालन में निपुण्य प्राप्त करना होता था। रासोकार ने महाराज पृथ्वीराज द्वारा छत्तीसों प्रकार के आयुध चलाने की शिक्षा प्राप्त करने का उल्लेख किया है।<sup>४</sup> मान ने महाराज राजसिंह को आठ वर्ष की अवस्था मात्र में ही मल्लयुद्ध और हाथी युद्ध करने में निपुण बताया है।<sup>५</sup> गोरखाल में अनुमार महाराज छत्रसाल की बाल्यावस्था में ही शस्त्र संचालन की ओर बड़ी अभिरुचि थी और वे तुपक तीर, शक्ति, वृषाण, छुरी, जोर [गुज चलाने मल्लयुद्ध अश्वारोहण और चोगान बटा चलने में बहुत दक्ष थे।<sup>६</sup> डा० मोतीलाल मनारिया ने करणीदास कृत बंहर प्रकाश के जावार पर क्षत्रियों की शिक्षा का जो विवरण दिया है उससे भी हमारा उपयुक्त मत की परिपुष्टि हाती है।<sup>७</sup>

किंतु शस्त्र विद्या के साथ साथ क्षत्रिय कुमारा का विविध शास्त्रों की भी

१ देखिए—'जा०' २८२।८ ६

२ 'पगिया पलटी तव गाजर में गंगा करी बनोजी राय ।

जा दिन चलिहो तुम गटुये को हमहू चल तुम्हारे साथ । — वही ४२५।२३-२४

३ इन चपति सौ भाइय मानी बदली पाग जगत में जानी । — छ० प्र० १०४

४ जर बमर जनेउ ह्यथ सकर नग मडित । — प० रा०, का०

५ "ध्रुव जनेउ धारण वही सुवस कारण । — रा० वि०' ५।६

६ से ८ देखिए— प० रा० मा० १।२८।२१० गज० वि० २।१६२  
'छ० प्र० ६।३

७ 'राजकुमार भावी राजा हुआ करत थे अतएव उन्हें राजागो व उपयुक्त उत्तर दायित्व के निर्वाह करने के लिए मल्लयुद्ध तथा उसके विभिन्न दाय, करेती (तलवार चराना) बिनोट (तलवार के वार से रक्षा के उपाय) जलवाक (जल में युद्ध करने के दाय पैत्र) और चढेती (अश्वारोहण) इत्यादि में निपुण होने के लिए पूरा शिक्षा प्रदान की जाती थी ।' — डिगल साहित्य' प० ३४४

शिक्षा दी जाती थी। महाराज पृथ्वीराज ने चौदह विद्या, बह्तर कला, सत्ताईस शास्त्र, और तात्कालिक पडभापा सस्कृत प्राचिन, अपभ्रंश, पशाची मागधी और औरसेनी पर अधिकार प्राप्त किया था।<sup>१</sup> मान ने महाराज जगतसिंह को वेदा और व्याकरण में विचक्षण तथा राजसिंह को वेदपाठ में ब्रह्मा से भी अग्रणी घोषित किया है।<sup>२</sup> महाराज छत्रमान ने मामुद्रिन शास्त्र, ज्योतिष शास्त्र और काव्य शास्त्र में शस्त्र-सचानन के सदृश ही निपुणता प्राप्त कर रखी थी।<sup>३</sup> जाह्नवण्ड में डेना का ज्योतिष शास्त्र का नाना और वेद चतुष्टय का अध्ययन कहा गया है।<sup>४</sup>

शिक्षा के कुछ अंगों में तो क्षत्रिया का ज्ञान ब्राह्मणा से भी बढ़ चढ़कर होता था। खट्टवन ने महाराज पृथ्वीराज द्वारा निष्कृत धन निरालत समय, उम गुप्त काप के ऊपर एक पापाण पुस्तिका मिलती है, जिस पर कुछ रहस्यमय संकेत द्रवित थे। जब जय लाग उसका रहस्य नगी बता पात तो अंत में उसका रहस्यार्थघाटन करने के लिए महाराज पृथ्वीराज चतुदश विद्याओं में निष्णान अपने साले कमाम का आदेश देने है, जो उसमें वृत्तवृत्त गिद्ध हाता है।<sup>५</sup>

क्षत्रिय धर्म-तत्त्वन भी हात थे। पृथ्वीराजरासो में समर विभ्रम रावल और यागीन्द्र उपाधिया में विभूषित लिखाय गया है।<sup>६</sup> महाराज जयचंद का मंत्री मुमत जब उनके ममीप जपन स्वामी के राजसूय यज्ञ में मम्मिलित होने की प्रार्थना लेकर जाता है तो वे उस वलिर्वाजित बनाते हुए उसने फनाफन की व्याख्या करने ह तथा महाराज जयचंद के प्रयास का अममवाचिन और उपहासास्पन्न हाने की तत्परयुक्त मन्त्रणा देते हैं।<sup>७</sup> मुहम्मद गारी में हान वाल अंतिम युद्ध से पूर्व जामराय उह यागिराज, मूनब्रह्म के नाता, राजा, व्यास और त्रिकानन कह कर मम्बोधित करता है, तथा उनमें क्षत्रिय धर्म, राज धर्म सबके धर्म के साथ साथ जालास्य, सारूप्य, और मायुज्य भक्ति पद्धतिया पर भी प्रकाश डालने का निवेदन करता है।<sup>८</sup> इनके प्रत्युत्तर में वे जो एक लम्बा तत्त्वनामगमित उपदेश देते हैं।<sup>९</sup> उनमें इस तथ्य में शका का स्थान नहीं रह जाना कि आनाध्यकान में भी कुछ क्षत्रिय राजा जनक की भांति धर्मन हाते थे।

१ पृ० रा०, मा० १।१८।६० ६१

२ 'सम्भृत प्राचिन च अपभ्रंश पिशाचिका।

मागधी शारसनीच, पट भाषाश्वत्र नायत ॥" — प० रा० मा० १।२८।६४

३ स ६—'रा० वि०', २।३८, ५।३८ द्व० प्र०, ६।३, 'अ०', ३।११ २, पृ० रा०, मो०, २।५ ३६।४

७ 'जागिदरा जग हयय तुथ सुवर वीर उणर करज।'

— प० रा०, मा० ३।३६।६६

८ १०—दण्डि—त्रम० प० रा०, मा०, ३।८।८, ८।१०७।२५४ वही, पृष्ठ १०७१ स १०७५



### क्षत्रियों की चारित्रिक विशेषताएं और प्रमुख कर्तव्य-कर्म

वीरवाक्य के क्षत्रिय नायका ने अपने कर्तव्य कर्मों के विषय पाय एक जस मत व्यक्त किए हैं। महाराज वीरसिंह देव—सत्त गो विप्र और मित्रा की रक्षा करना तथा आपदग्रस्त स्वामी का परित्याग न करने का क्षत्रिया का प्रमुख धर्म या कर्तव्य बताते हैं।<sup>१</sup> महाराज छत्रसाल क्षत्रिया के लिए भू भार का वहन, गाय, वेद और ब्राह्मणा की रक्षा करना युद्ध में विजय, प्रजा का पालन आपत्तिकाल में धैर्य रखना दानशीलता, शरणागत वत्सलता और समाग पर चलना आवश्यक समझने की धारणा व्यक्त करते हैं।<sup>१</sup> इसी प्रकार महाराज हिम्मतबहादुर<sup>२</sup> ने गा विप्रा के परिपालन, शत्रुओं के दलन शस्त्राघाता को सधम सहन करने एवं युद्ध के भार का स्वप्न में भी परित्याग न करने को, तथा महाराज हम्मौरदेव ने शरणागतों के पालन<sup>३</sup>, युद्धालि में उत्तम नीतियों के निवहण और युद्धक्षेत्र सपग न मोड़कर शत्रु प्रहारों के वीरतापूर्वक सहन करने को क्षत्रियों के प्रमुख कर्तव्य कर्मों के अंतर्गत परिगणित किया है। तात्पर्य यह कि क्षत्रियों के प्रमुख चारित्रिक गुण और कर्तव्य थे—

- (क) सत्त गो विप्र आदि वदिक धर्म में समादत्त प्राणिया को संरक्षण प्रदान करना
- (ख) युद्धाथ सदव तत्पर रहना
- (ग) युद्धभूमि से पलायन न करना
- (घ) युद्धादिक जीवन प्रसंगों में उत्तम नीतिया का आश्रय लेना
- (ङ) अटूट स्वामि भक्ति, और
- (च) शरणागतों की प्राणपण से रक्षा करना

(क) वदिक धर्म में समादत्त सत्त गो और विप्रादि की संरक्षा —

क्षत्रियों की उत्पत्ति-कथा के अनुकूल जिसमें उनका उदभव दुष्ट-दलनाथ दिखाया गया है सत्त गाय और ब्राह्मणादि की रक्षा करना, उनका प्रमुख कर्तव्य होता था। महाराज पृथ्वीराज गो और विप्रा की पूजा करते चित्रित किय गये हैं।<sup>१</sup> छत्रप्रकाश में महाराज रत्नप्रताप एक आपद ग्रस्त गाय की रक्षा में प्राणात्संग करत मिलते हैं।<sup>२</sup> वीरचरित्र में महाराज राजसिंह और वीरसिंह देव की गो विप्र सहायक कहकर प्रशंसा की गई है।<sup>३</sup> जगनामा में वही क्षत्रिय धर्म कहा गया है जो स्वामी की

१ सन्न गाय द्विज भीत को सतत रक्षा कर्म ।

स्वामी तज न सौकर यहै हमारा धर्म ॥' — २० वा०, छ० १४

२ ३ देविए—धर्म छ० प्र०' १६ हि० व० वि' १०१

४ सरनागत पालन कर अस सरत मुचि नीति ।

समर सस्त्र सनमुख सहै यह छत्रिन की रीति ॥' — ह०ह० छ० १४

५ से ७—दक्षिण—धर्म० प० रा०, मा० १२६।६४, छ० प्र० २।५, वी० च० ३३।६४

मर्यादा रक्षा के लीन और विप्र तथा मुरभिया की रक्षा करन क गुणा म युक्त ह।<sup>१</sup> छत्रप्रकाश म महाराज शिवाजी छत्रमानजी को परामर्श दत हैं नि गा वेद और ब्राह्मणो की रक्षा करना क्षत्रिया का परम पुनीत कर्तव्य है।<sup>२</sup> भूषण न महाराज शिवाजी के युद्धा के मून म उनको वृत्तिक धम की रक्षा करन की कामना प्रदर्शित की है।<sup>३</sup> राजविनाम म महाराज जगत्सिंह स्व प्रजा गा जोर ब्राह्मणा के प्राण म्बन्ध कुवर नीमसिंह मुरही और सज्जना क सहायक,<sup>४</sup> तथा महाराज राजसिंह मुरही मत और विप्रा क रक्षक ण्य महायक विप्रित किये गप हैं।<sup>५</sup>

### (ग) युद्धाध तत्परता —

क्षत्रिया क हृदय म यह धारणा बद्धभूल रहती थी नि उनके सृजन के समय ही भगवान न उनको 'वृत्ति युद्ध निश्चित कर दी है। पृथ्वीराजरासो म पञ्जूनराव कछुवाह (कछुवाह) का कथन है कि सप्टिकर्ता ने क्षत्रिया को उनक जन्म क समय तत्पार धारण किए सजा था अत अग्नि-संचानन म नपुण्य प्राप्त करना मात्र ही उनका सबस्व है।<sup>६</sup> राव जेतसिंह ने भी एम ही विचार व्यक्त किए ह।<sup>७</sup> परमलरासो मे आल्हा का कथन है कि— 'क्षत्रिय हान के कारण न तो मैं कपि-काम क सक्ता हू, और न वाणिय के द्वारा ही जीविकाजन कर सक्ता हू। मागत म मेरा धम नष्ट होता है। अत सप्टिकर्ता द्वारा क्षत्रिया के सजनवाल म उनके साम करवाल बांध देने के तथ्या का दृष्टिगत करते हुए—युद्धस्थन म नमक ह्ताल करत हुए बीरगति प्राप्त करना ही मेरा जीवनाद्देश्य है।<sup>८</sup> महाराज छत्रसाल भी क्षत्रिया की जीविकाजन का मुख्य माध्यम सडग का बताते हुए 'युद्ध को उनका वण धम बताते ह'<sup>९</sup> तथा कहत हैं कि ईश्वर ने क्षत्रिया को सडगहस्त करके युद्धाध ही भेजा था।<sup>१०</sup> पृथ्वीराजरासो म हल की मठ पकडने को क्षत्रिया का अपद्वम बताया गया है,<sup>११</sup> तथा शूरवीरा की कृषि सडग-मरण मानी गद है।<sup>१२</sup> विविध नरणा की सना म भी प्राय क्षत्रिय सनिक ही युद्ध

१ से ६—देखिए—क्रम० 'जग०छ०, ८८२ ८३ छ० प्र०' ११७ शि० बा०,

छ० ५१ रा० वि० ३१७ वही ५८३, वही ५४०

७ 'करतार हृथ्य तरवार दिय, इह मु तत्त रजपूत करि।

—'प० रा० मा० २१७७१४४८

८ 'जिन हीना जीयन मरन दई हृथ्य हम तेक।

और न चितन चिनिय, सा गन रप्य एक ॥' — प० रा०, वा० ४२७१५८

९ देखिए—प० रा०, १६१२

१० छत्रिन की यह वृत्त बनाद। सना तेग की साइ कमाई।' — 'छ० प्र०, ११७

११-१२—देखिए—वही, १२१८, १८१६५

१३ 'एक ठौर प्रथिगज राम मग हत काज।

समो ताकि गाविद अग जरसिध सु भाज।' — 'प० रा०' मा० ४१६५७१२३

१४ "भग्दा खेती खग मरन, अथिय समप्यन हृथ्य।' — वही ३१०११८

करते चित्रित किये गये हैं जिससे स्पष्ट पता है कि आलोच्यकाल में भी क्षत्रिया का प्रमुख वृत्त य युद्धवृत्ति ही थी ।

उनकी दृष्टि में युद्ध करना माक्ष प्राप्ति का अमोघ साधन भी था । उन पुरुषों को अच्छा राजपूत ही नहीं स्वीकार किया जाता था—जा युद्ध चर्चा सुनकर जाह्लाह से नाच उठें ।<sup>१</sup> महाराज अजु सिंहवर्मा का नाम— क्विंही सद्वर्मा के पत्रस्वरूप युद्ध करने का सौभाग्य मिलता है उन उग्रता अग्रज जान पर आगा पीछा साधन वान अपन ज म लता के उद्देश्य का ही नष्ट कर देते हैं ।<sup>२</sup> वे युद्ध में वीरगति प्राप्त करने का माक्ष प्राप्ति के लिए काशी-नरपट जादि साधना-जा से भी बल्लभ बनाने है, क्योंकि उनमें ता मोक्ष मान ही प्राप्त होती है जबकि वीरगति प्राप्त करने से मोक्ष के साथ साथ अपनी यश सुरभि से श्लिष्ट को सुखमिष्ट छोड़ जाने का भी अवसर मिलता है ।<sup>३</sup> महाराज पृथ्वीराज की यही आशा रहती थी कि उक्त अस्मिन् पर प्राण त्यागन का सौभाग्य मिल जत भगवान से इसी प्रकार की त्रिजती करना उनकी नित्यक क्रिया का एक अंग था । जाअपुर निवासी क्षत्रिय वीरा का यह कथन भी उनकी युद्ध शीत चारित्रिक विशेषता का समा भूतिमत् रूप है— हमारे कुल की लड़ग ही गती और अक्षय निधि है खडग के द्वारा ही हम गलक का वशीभूत करके अपनी वात्सि चिरस्थायी बनाते हैं । खडग ही मायम से हम अपन विपक्षिया का निदतन अभीष्मिन्त का अधिवरण स्वक्षिति का रक्षण और अशिव तत्वा के निराकरण की सामर्थ्य प्राप्त करते हैं । करवात वार पर पाण त्याग करना हम जावागमन के बंधन से मुक्ति भी दिलाता है । त क्षत्रिया का सर्वस्व खडग जब तब हमारे हाथों में है तब तब हम कोई भी शक्ति अपन श्लिष्ट महाराज के वाप को शाही राजाने में मिलान के लिए तिवंग नहा कर सकते हैं ।

पृथ्वीराजराजा में राक्षस समर विजय और चामुडगय क्षत्रिया की युद्ध के विषय में उदात्त धारणा का प्रकटा करते हैं कि क्षत्रिया के ता दोनों ही हाथों में लड्डू रहते हैं यदि युद्ध में वीरगति प्राप्त हुई तो मुग्ध का अधिवास और अपारा

१ जग बचन मुनि के गीर्ह नच्यय ।

त रजपूत धर्म नहीं सच्यय ।

प० ग० का० २५-२६/१६१

२ ३—दण्डिण— हि० व० वि० छ० १०० १०६

४ तुलसीदास हर अरवि । मत्स्य अस्मिन् की मणिया । - प० ग० का० १६६/१६५

५ सती हम कुन रण गण मम अग्रय गजातय ।

गण करे वग मन्त्र नाम हम रण निजान ।

राज दन गहन गण सत च्छेदन हम गण ।

तिनि र्वान पुनि गम अन्ति भग्यी इनि गण ।

गण धार तिच क्षत्री धर्म लावगमर्नि अपर ।

सा गण वध हम मूर गय धर्य न साहि गजान घन । —'रा० वि० ६।७३

वरण का सौभाग्य प्राप्त होगा, जबकि जीत की दशा में भी कीर्ति विस्तार के साथ साथ सौभाग्य उपभोग का अवसर मिलेगा ।<sup>१</sup> महाराज हम्मीरदेव के आत्मक कथन में भी ऐसा ही भाव व्यक्त किए गए हैं ।<sup>१</sup>

इसी प्रकार युद्ध में योग्यता पाते वाले वीरों के सुयमलन का भेदन करने, जल्मगजा द्वारा उनका वरण किया जाने और शिव द्वारा उनका मुष्ण को अपनी मुष्ण माना में स्वर्गादा के उत्पादक उल्लस छत्रप्रकाश 'पद्मीराजगमो' रत्न वासनी,<sup>२</sup> और शीर चरित्र<sup>३</sup> आदि ग्रंथा में भर पड़े है ।

युद्ध मध्यमधी इन ज्ञात वारणाओं के कारण क्षत्रिया के प्रथम युद्ध प्रयाण के अवसर पर विवाहात्मक जमा आयोजन किया जाता था । महाराज हम्मीरदेव के भताजा के प्रथम वार युद्ध गमन के अवसर पर उनका शीशा पर मुकुट वात्र<sup>४</sup> तान हुआ तथा उस अवसर पर वजाण जाने का मंगल-वाद्या का ध्वनि से दिग्गत विनादित हुआ उठता है ।<sup>५</sup> ताह जनाउनी जपा मद्रिया स रणथम्भीर तुम में इस आवसर शीर जप्रत्याशित राग रग का वारण पछा है<sup>६</sup> और उक्त आशचय की सीमा नहीं रहती जब उक्त बनाया जाता है कि क्षत्रिया की परम्परा के अनुसार महाराज हम्मीरदेव के भतीजा के प्रथम वार युद्ध करने जाने के शुभासमर पर हर्षोत्तम मनाया जा रहा है ।<sup>७</sup>

अनुदिन चलने वाले युद्ध चक्र के वारण क्षत्रिय-पत्नियों का वधव्य, उनसे आख मिचौनी खेलता रहता था । तात नहीं, शिष्टुदल मदनाय उनका पति किस क्षण कूच कर जायें और उनका सौभाग्य के प्रति इच्छानु रम्य वारागनाए उनका वरण कर लें । जाल्हवार के शब्दा में— जिाके पति निशित्ति युद्धावरत रहत हैं, ऐसी

१ देखिए—'प० रा०', मा० ८१२०५/८१२२६

२ जीत सौ घर भुग्नि व, जुझभे सुगुण वास ।

दोऊ जस किन्ही अमर तजी माह जग जाग ।' — ह० रा० , छ० ६६०

३ 'पग पग जशमध फन चाह । ते वृषान रन मनसुग जाहै ।

भेदन भानु सुभट रन माचे । रा म र्द्र तात द नाच ॥

रन अवलाकि जमर सुख पाव । रन म उमटि जपछरा गाव ।

रा म र्प सुजस जग छाव । तात रा छत्रिन की भाय ॥' — 'छ० प्र०', १८१५

४ स ६ — दत्तिए—'प्र०', 'प० रा०', मा० ११८०/८१२१, ६११/६११७ , र० वा० छ० ७ , 'वी० च० ३१११६

७ 'घरा तुम सीस हमारे जु मार । लर गिर गहर बांधि सजार ।

बँध्यो तव मोर कुमार्गन सीम । देखे बहु भातिन श्रीमा ।' — ह० रा० , छ० ५२०

८ 'वरि अमवारी तुमर दाउ, उनरे पौत्रि मु छौ ।

ररा के उछाह जु वजि भोवति तीमार । — वही, छ० ५३०

९-१०—दत्तिए—'ह० रा० , , छ० ५२० ३०

वीरगनाओं की चूड़ियाँ बस तब गुरुधन रह सकती हैं।<sup>१</sup> कनि चंद ने भी मान सत्रह-बस के चक्रसन का वीरगति प्राप्त करत चित्रित किया है।<sup>२</sup> महाराज हम्मीर दब ने इस धारणा का प्रकाशन किया है कि क्षत्रिया की जायु बीस उप मान होती है और उनमें स विरते ही तीस उप की जायु प्राप्त कर पात हैं।<sup>३</sup>

यह तथ्य भी ध्यातय है कि वीरगति प्राप्त करन वाक्य व्यक्ति के सम्प्रिधया को क्षत्रिय शोक मनान के स्थान पर हर्षाभि प्रकत करन के लिए कहत थ। महाराज सोमश्वर के मत रहन स सनापित महाराज पथ्वीराज समभाय जात ह, कि सटग धार पर शरीर त्याग कर मूयमडन ता भेत्न करना क्षत्रिया का आदिधम है जत आपका शोक मन होना उचित नहीं है। हम्मीररामा में अभिमत व्यक्त किया गया है कि सती होन वानी स्त्री और गूर वीर के मरण पर उत्तम मनाना चाहिए।<sup>४</sup>

### (ग) युद्ध से पलायन न करना

युद्ध से पलायन करने को क्षत्रिय अतीव अवम कृत्य समभत थ। पथ्वीराज रासा में ऐसे क्षत्रिया की कुल कलक कहकर निंदा की गई है।<sup>५</sup> रामो में जयच नाहर राय का कथन है— म एक राजपूत यादवा हू जत सग्रामस्थल स भागन की अपक्षा वीरगति पाकर अपनी कांति अवशिष्ट छाटना थ यस्कर समभता हू। आल्ह रण्य में उरनि वीरा स कहता है— जा क्षत्रिय अपना मोर्चा छोडकर भागगा उसकी सात पीलिया तक का नाम टूब जायगा।<sup>६</sup> परमालरासा और जात्हण्ड में स्थल स्थल पर इन तथ्या का अभि यजन हुआ है कि— मरता तो एक त्ति रायका है ही फिर युद्ध से पलायन करके यण मरित क्या किया जाय तथा राजपूत का वक्तव्य है कि उसके शरीर की चाह बाटी बाटी उड जाय किन्तु वह रणस्थली में पर पीछे न हटाए।<sup>७</sup> गारा वादन की कथा में गारा अपनी माना का यह वचन दवर जाता है कि

१ रोज लटाई जिनकी रन में तिनकी कह चुरिया की आग। — आ० ४३५।१६

२ दलिया— प० रा० वा० ११६६।१२१

३ छथी बरस वीग त जाग। जिय तीस ला ज बटभाभ।

— ह० ह० च० २७५ ७६

४ दलिया— प० रा० वा० ११६६।३

५ गनी मूरमा पुग्ग का मरतहि मगत हाय। — २० रा० ६६६

६ ज भाग तऊ मर तिन कुन साय्य गह।

भिर गु ट गय जोति मिनि वम जमर पुग्ग ॥

— प० रा०' मा० २।१८।१८

७ 'भागान भु मि रजपूत हा कर्गे नाम जिमि जचन ध्रुन। — २१ १।१६।१७

८ ने १०— दलिया— २० रा० ६१६-१० ११ पर० रा० ५।१८७ वही

'युद्धस्थल म अश्व तया माडरु म तुभ वीर प्रसूता वे दूरा वा कलकित नही हाने दूगा ।'<sup>१</sup> हम्मीरहठ म महाराज हम्मीरदेव भी अपनी माता का वादत जसा वचन देते हैं ।<sup>१</sup> आल्दखण्ड म युद्ध मे पलायन करत वाला गी जहा सात पीढिया कलकित होने का उल्लेख है, वही हिम्मतवाहादुर विम्दावली म—रणक्षत्र म बार वन्त हुए अगसर होन वान क्षत्रिया का यण से भी जविक पल मिलन तथा शस्त्राघाता से शरीर त्याग करन वाला की पचास पीढिया तर जान की धारणा प्रकट की गई ।<sup>१</sup>

(ग) युद्धादि जीवन प्रसंगो मे उत्तम नीतियो का आश्रय लेना

युद्ध नियमो के विषय म क्षत्रिया की अपनी रीशय धारणाए थी । वे अधम युद्ध का शत्रिय मर्यादा के विरुद्ध अतएव त्याग्य समभेत थ । उनके प्रतिपक्षी अधिकतर मुसलमान होने के कारण, जा हि दू आस्थाओ ओर रण प्रश्रिया के विपरीत अपनी राजनीति का मेन्द्रण्ड छल-रपटालि अधम बतिया का बनान थ क्षत्रिय भी यदा-वदा अनुकरण मक जोर जापद घम क रूप म छन पपचादि का आश्रय ग्रहण करत थे, तथापि इनका प्रयास जहा तक सभव हा उत्तम नीतिया का ही प्रयाग करना हाता था । मालव नरेश द्वाग सामेश्वर पर जात्रमण करन के समय उनक समेत उह उस पर रात्रि म अचानक छापा मारकर पराजित करने का परामश देत ः जिस महाराज सोमेश्वर यह कहकर अम्बीकर कर देले हैं कि, रात्रि म युद्ध करना क्षत्रियो क लिए अधम बनाया गया है । साथ ही किसी का मुपुष्ठावस्था मे कपट मे मारना मलत्याग करत हुए, स्त्रीरमण करत हुए पूजन, म्नान या मत्रजाप करत हुए का मारना क्षत्रिय घम विरुद्ध है जोर इन कार्यों म अपयश स भय न खान वाल ही प्रवृत्त होते है ।<sup>१</sup> पथ्वीराजरामो म अयत्र भी हिन्दुओ द्वारा अधम युद्ध न करने के तथ्य का अभिव्य जन हुआ है ।<sup>१</sup> हम्मीररासा म शाह अलाउद्दीन की विशाल वाहिनी का दृष्टिगत करत हुए, हम्मीरदेव का अनुज रणधीर उनक समक्ष रात्रिकाल म छापा मारकर शत्रु दल को छिन भि न करने की याचना रगता है जिम के अधम कहकर ठुकरा देत है ।<sup>१</sup>

१ गा० बा० व०, ११०

२ ३ देखिए—कम ह० ह०' २७, 'हि० व० वि०, १०७

४ 'रतिवाह छनयुद्ध अधम खिकी परिमान ।

रूड कपट मारिय, अधम निद्रागत जान ॥

मलमाघन रति रखन सब पूजन जल हान ।

मत्र जाप जप्पत, करे नह घात मुजान ॥

तुम मत तत मन्ची कहिय इह अधम्म धम्म हारिय ।<sup>१</sup>

जो गिनन पुहल निदा अपर, सो रतिवाह विचारिय ॥<sup>१</sup>

—'५० रा०', मो० २।८०३।११

५-६—देखिए—५० रा०', मो० २।४६६।२, 'ह० रा०', ५७५ ७६

वीरचरित्र में महाराज वीरसिंह दत्त का दिग्गज राजधर्म के उपदेश में कहा गया है कि — युद्ध से भागकर जान हूँ हथियार डालकर हा हा करता हुए कपिन गात यान-रहित और दाँता में तिनका टबाए हुए शत्रु का मारता धमकित है।<sup>१</sup> छत्रप्रकाश और शिवराज भूषण में भी दाता में तण दबाए शत्रु का क्षमा करा की प्रथा दिखाई गई है।<sup>२</sup> जाल्हण्ड में रागन हाथी के मार तात के कारण जमीन पर गिर चौड़ा का जीवनगन मृता हुआ कहता है कि हम ता पदता पर वार करते हैं और न पनायन करन वाना पर। भूमि पर गिर जात शस्त्रा का भी नहीं उठान। तुम युद्धाथ दूसरा हाथी मँगा ताग में तभी वार करेगा।<sup>३</sup>

क्षत्रिया में यथासम्भवं समप्रलण्ठीत शत्रु से ही युद्ध करन और शत्रु भय के कारण अपनी जार से संधि वाना का प्रस्ताव निश्चय सम्भन की धारणा भी प्रचलित थी। मवाती मुगा का सामना करन के लिए स्वयं महाराज पखोरान के जान का अनैचित्य गांधिदराज यह कह कर प्रबुद्ध करता है कि आपका ता कनीतपति जय च द अथवा मुहम्मद गांगी से ही भिना शाभनीय लगता है इस गवार मवाती के लिए आप शत्रु क्या धारण करते हैं? जाल्हण्ड में ऊँच जय युद्ध दिल्लीश्वर को लासत पर मरणात्ता प्रहार करने के लिए उद्यत दयता है तो उनके इस कृत्य को इसी दृष्टि से अनुपयुक्त बनाता हुआ, लासत की प्राण रक्षा करते चित्रित किया गया है।<sup>४</sup>

दुग की रसद गमाप्न हान की सूचना देकर संधि का प्रस्ताव देने वाले सुरजन का महाराज हम्मीरदत्त पुत्रुन कहकर निंदा करते हैं और उससे क्षत्रिय मर्यादा से अनभिन्न हान की भक्तता करन है।<sup>५</sup> राव बहादुरसिंह बख्शजर संधि करन का निवदन लखर ताए हुए प्रताप प्रतिनिधि जार मत्रिया को निरंतर करते हुए कहते हैं कि शत्रु के प्रताप के श्रवण मात्र का क्षत्रिय जसीम बरगजर सम्भन है जबकि उनकी जार से संधि प्रस्ताव भजन से बढकर जय कोइ नारकीय कृत्य नहीं है।<sup>६</sup> इसी भांति शत्रु भय में प्रस्त होकर धमद्वारा से निष्प्रमण का क्षत्रिय अतीव गहिा सम्भत ध, और तदवत जाचरण करन वाना की जारज पुत्र कहकर निंदा की जाता थी।<sup>७</sup>

धामल स्व शत्रु का भी युद्धस्वा से तावर उपचार कराना और उमर स्वास्थ्य

१ स १—२०—प्रम० जी०च० ११२० छ०प्र० २१६ जि० भू०, छ० १८२।  
२५० जा० २१२१७२० प० ग० मा० ११२८७१२ जा०  
५२६।१ २

६ दणिए— ह०रा० छ० ६२२

७ त्रिपु प्रताप वाना गुन गजमीनु ट्य २१६।

ननन लसिय दीन हू या सा ता न वा ॥ — मु० च० ११४१२७

८ ता नस्थि पुन बापट नो धम्म ह्वा हां निज्जर ।

— प० ग० मा० ३१३०११३

लाभ करत पर दानादि दत्त हर्षाभिव्यक्त करना तथा प्रती शत्रु को जीवन्तान ही नहीं देना अपितु उसकी मूर्त्ता का प्रवचन करत हर्ष सादर निदा करना<sup>१</sup> भी एम तथ्य हैं जो क्षत्रिया का चरित्रोन्मात्य का अभिसूचन करत हैं ।

(ट) दृढ स्वामिभक्ति —

क्षत्रिया की एक अन्य चारित्रिक विशेषता उनका जनरतन में स्वामि धर्म की दृढ भावना मिलती है । स्वामि धर्म का पालन का क्षत्रिय अपना प्रमुख कर्तव्य समझता था ।<sup>२</sup> सकटापन स्वामी का साथ द्वाडवर पनायन करने वाल क्षत्रिया की राज्य पुत्र बहक निदा की जाती थी,<sup>३</sup> तथा उनके द्वारा मूर्छे रमान का लज्जास्पद समझा जाता था ।<sup>४</sup> इसके साथ ही स्वामिधर्म का अनुपालन न करने वाल क्षत्रिया द्वारा दण्ड रूप में गौरव नक भोगन<sup>५</sup> तथा पुनाम में सूकर की यानि प्राप्त करने का विष्वाम किया जाता था । जयवि स्वामि रक्षण में प्राणात्मन करने वाल क्षत्रिया के दाना नाम सफत मानत हुए वे स्वर्ग का भाग तथा पग पग पर यत फल के अधिकारी नमस्के जाते थे ।<sup>६</sup>

१ दक्षिण— ५० रा०, मा० २।८३०।७०

२ "धर धम सीस मु छत्रीय मूर । उवारत स्वामी अपार हजर ।

— ५०रा० का० २५७७।११

३ (क) जासी जार जाति मो कहिय । अमल बीज रजपूत न कहिय ।

— वही २२५१।३०६

(ख) 'जे जन जाण जार के त निज निज घर जाइ ।

स्वामि सकट में तज का एतौ सुग पाइ ।' — ह० ह०' छ० २६८

४ पुनि कही कह नप जन सौं स्वामी रक्षिय जिनु तनु तज ।

तिन जननि दास बुधजन कट मु छ धरन मुक्कन लज ।

— ५० रा० मो० ११।७६

५ (क) "रत तर स्वामि सबक पराय ।

सत जम जोर जम लाव जाय ।" — ५० रा०' मा० १।३३६।२७

(ख) पावद की दपे वुरी अग रमावत मूर ।

कहै अरुह रजपूत की । दीजे नरक कल ।" — ५० रा०' का० २२।३।३२४

(ग) 'माई पग सकरें तिमहि नरन नहि जो ।" — ५० रा० वि०, १८ ६१

(घ) स्वामी को सकट पर, जो सजि भाज कर ।

लोक अजस परसाक म, जमपुर जात जम्पर । — 'ह० ह०' व० ३० २६६

६ चटु न लाव तिन ठाम जिन न साईं ता रक्त्री ।

नगर निवट है जीव, मुयनि अदभक्कनु भक्त्यो ।" — ५० रा०' मा० १।३३६।२७

७ (क) ज जूभत रन भट सुग पाय । अपना राजा का पटुवाय ।

पद पद जयनि का पत हाय । ताक सुद्ध सुनि तिनके दाय ।"

'— वी० व०' २१।१८



स्वामी वं मुभ अमुभ कायों न काई प्रयाजन न रगत र उगवे तिय प्राणात्सग वरगा ही उनका प्रमुग वत्तव्य समभा जाता था ।<sup>१</sup>

महाराज पथ्वीराज के सामंत राजमराय द्वारा स्वामि धम का पालन करत हुए प्राणात्सग करन की घटना अपना सानी नहीं रगती । गम्भीर रूप से घायन हान व कारण महाराज मूर्च्छित हो जात है । तभी उनके नयन निवासन व लिये तत्पर एक गिद्ध उनक वक्षस्थल पर जा बठता है । समीप ही पायल हाकर गिरा हुआ राजमराय अपन स्वामी की विपनायस्था को हृत्पयगम करव उनकी रक्षा का तुरंत उपाय साच सता है और अपना शरीर मास काट काट कर उस गिद्ध की चार फरन गगना है जिसस गिद्ध अपन मूलोद्देश्य का भूलकर उग मास का भक्षण करन में जुट जाता है । चतना वस्था का प्राप्न हुए कि तु अग मचावन में असमय महाराज पथ्वीराज डबडवाए नेत्रा से अपन स्वामिभवन मामन को स्वर्ग का पथिक बनत देखत है ।<sup>२</sup>

(च) शरणागत वत्सलता —

क्षत्रिय शरणागता की रक्षा करने को अपना एक आवश्यक धर्म समझत थे ।<sup>३</sup> अपनी इस चारित्रिक विशेषता के कारण उह आय दिन युद्ध मोल लने पडत थे किंतु सयस्व योद्धावर कर देन के मूल्य तक भी व शरणागत का भग्नाश लौटात नहीं मिलत । वीरकाव्य में वर्णित अधिकांश युद्ध चक्रा के मूल में क्षत्रिया का यह अनुपम गुण ही कायरत मिलता है ।

महाराज पथ्वीराज और शाह गारी के मध्य वर भाव के बीज-वपन का मूल कारण यह था कि—उहाने शाह गौरी द्वारा देश निष्वासित भीर हुसन को शरण प्रदान की थी । दिल्लीश्वर मीर हुसन के शरणाथ आन पर आरम्भ में इस दुश्चिन्ता में तो अवश्य पड जात है कि मलच्छ का मुख न देखने तथा शरणागत को निराश न लौटाने में से अपनी किस प्रतिज्ञा का पालन करू किंतु अन्तत उनकी दूसरी भावना ही विजयिनी होती है । शाह गौरी उसके अपराधी को शरण न देने की धमकी दता है

(ख) साइ काम सेवक मर तो तिन स्वर्गाहि ठौर । — रा० वि०' १८।६१

(ग) स्वामि राप आपन मर छनी धम सीस पर घर ।

माया घर की दूरी सुपेद व नर सूरज मडल भेद ॥<sup>४</sup>

— ५० रा० का २४५।३१०

१ 'ऐगुन तजि सब भूप के । स्वामिधम सह काम । — पर० रा०, ३।१०७

२ देखिए—'पर० रा० ३७।१४

३ सरनागत पालन कर अरु करत सुचि नीति ।

समर सस्त्र सनमुख सहै यह छत्रिन की रीति ॥' — ह० ह०', छ० १४५

४ मेछ मुप देखे न नपति विपति परी दुह क्रम ।

इव सरनाइ कर ग्रहन इव घर रथन ध्र म । — ५० रा०' का० ३८६।१४

किंतु वे उसकी युद्ध की चुनौती को स्वीकार करते हुए मोर हंसन को अपन आश्रय से नहीं निकालते। गारा और बादल द्वारा महारानी पदमावती की प्राण-पण से रक्षा करने के मूल में महारानी का उनसे शरण याचना करना था। महाराज राजसिंह रूप कुबेर द्वारा शरण-याचना करने पर शाह औरगजेव से विराध माल लेकर भी उससे विवाह करने जान है। इसी प्रकार वे शाह औरगजेव की इग धमकी का कि यदि तुमने राठौरे का शरण प्रदान की तो तुम्हारे राज्य का नष्ट-भ्रष्ट कर दूंगा प्रत्युत्तर देते हैं—'शरणागतता की रक्षा करना हमारा जादिकान से ही विरुद्ध रहा है जन राठौरा न चाहे तुम्हारे शताधिक अपराध क्या न किये हों, फिर भी मैं उन्हें तुमको नहीं सौंप सकता।' परिणामतः दानो पक्षा में भीषण युद्ध चत्र चरता है।

अलाउद्दीन और हम्मीरदेव के मध्य दीघकाल तक हान वाले युद्ध का कारण भी अलाउद्दीन के अपराधी महिमाशाह को महाराज हम्मीरदेव द्वारा आश्रय प्रदान करना था। हम्मीर हठ के अनुसार महाराज के दरबाना का जब यह बात होता है कि मीर महिमा अपनी प्राण रक्षा की कामना से महाराज की शरण में आया है तो वे उसे अभिवान्न करते और गले मिलते हैं तथा उसके जातिथ्य का सौभाग्य मित्रता अपन पुण्या का प्रतिफलन बताते हैं। महाराज हम्मीरदेव की प्रसन्नता का भी पाग बार नहा रहता। उनके भुजदण्ड फडक उठते हैं और वे विह्वल हुए कहते हैं कि चाहे मेरे शरीर की बाटी-बोटी कटकर गिर जाय और मेरा घडरण प्राणण में रुधिर धारा बहाता हुआ नश्य करेता फिर किंतु मैं शरण में जाए महिमा मगोल को, शाह अलाउद्दीन को समर्पित नहीं करूंगा। हम्मीररासा में की गई उनकी प्रतिज्ञाएँ भी कम प्रभुविष्णु नहा है जब वे कहते हैं कि—चाह मर तन धन, गड सब विनष्ट हा जायें मूय पूव के स्थान पर पश्चिम दिशा में उदित हान और गंगा अपन प्रवाह की त्रिपरीत दिशा में बहने लग किंतु मैं शरण में आय मीर महिमा का विराधित करने शाह का नहीं सौंप सकता।

१ से ४ दक्षिण—क्रम, 'गा० वा० का०', ६२ 'रा० वि०, ७३८ ३१, वही, १०१६ वही, १०११०

५ "मुनी प्राण रागिव की जुवाली। दुर्दै आनि पीछ यहै बात जानी।

गहै बाँह एक मिल जो जुहारें। कहं पु य के पाहुन हो हमारें।" — ह० ह०, ५५

६ "भुज परवत हरपत सुनत सरनागत की बात।

बात त्रिहंस हमीर तव उमग न गात समात।

धन नच्य, भाइ वटै, परि बाल गिर बाल।

कटि कटि तन रन में परै तो नहिं दहु मगाल।" — वही ६१

७ (क) 'ता धन गत् घरण जावे प महिमा पनिगाहा पाव।' — ह० रा० २६१

(ख) 'पच्छिम गुरज उगव, उनटि गग वह नीर।

वही दूत पतिगाह गो, हठ न तज हम्मीर।'

— ह० रा०, ३०६



उल्लेख मिलता है।<sup>१</sup> इसी प्रवृत्ति का परिणाम हो, अथवा केशवदासजी का वश्या के प्रति विद्वेषी अतमन कायरता हा रहा—उहान वश्या का गणना अपराधवृत्ति वाली निम्न जातिया व साथ की है, तथा उनम भाग, अफीम आर सुगान के दुगु णा के साथ साथ वेश्या-गमन की भी दुवृत्ति प्रदर्शित की है।<sup>१</sup>

वश्या का मुख्य वाय व्यापार करना ही था। कवि चन्द न बाजारा म उनकी लास-करा<sup>२</sup> तक की पूंजी तगी प्रदर्शित की है।<sup>३</sup> आरूहण्ट म दिताया गया है कि वे व्यापाराथ विदेशा तक की यात्रा किया करते थ।<sup>४</sup> कवि विद्यापति त जनक बननिगी भी जौनपुर के बाजार म प्रय विप्रय करते दिखाई हैं।<sup>५</sup> लूट-पाट की चिन्ता करते हुए वश्या का मुद्र शिविरा के निकट दूकानें ल जान का मूत कारण भी व्यापार लाभ ही रहता हागा। वीरचरित्र और हम्मौररागा म क्रमश महागज वीरमिहदेव<sup>६</sup> जोर शाह अलाउद्दीन<sup>७</sup> की सनाजा के साथ अनन वणिक् अपनी दूकानें तबर जाते हैं।

बुछ वश्य सनिक्-मवा करते मिलत ह जिस उनके पीछे निम्नष्ट अहिगा प्रधान स्वभाव के सिद्ध ही कहा जायगा। कवि सूदन न युद्धाय चारा वर्णों के योद्धाजा को मज्जित हान दिखानर<sup>८</sup> इस ाथ्य की जार प्रवारातर स इगित किया है, जबकि पथ्वीराजरासा व महोवा गड म गया तथा परमानरागा म दसुर नामक वनिए व युद्ध करने का स्पष्ट उत्तरेय मिलता है।<sup>९</sup>

कार्याघर पर वश्य हनवाई पमारी, जोहरी, आदि अनन वर्णों म विभक्त थे। अबुल फजल के अनुमार अववर-वाल म उनके चौरामी उपनग थ।<sup>१०</sup>

### शूद्र —

वण यवस्था पर प्रकाश डालन हुए, हम निवदन कर चुके हैं कि वर्णों व स्थान पर जाति शब्द का प्रचलन उत्तरोत्तर बन्ता जा रहा था। शूद्र वण के गन्धध म यह प्रवृत्ति और भा अधिक् याप्त थी। उह प्राय यवगाया के आधार पर निर्मित उपजातिया के ही नाम स अभिहित करा या प्रचलन था। हमार जालाच्यवाल स

१ परंतु प्राचीन काल स ही वश्या न स घरे का छा<sup>२</sup> दिया था और जा प्रयय वेगी करते थ, उसी गणना शूद्रा म ही हुआ करती थी।

— १८० भा० का उत्कप' पृ० ३०६

२ 'अधिक जमाती वनिक् सुनार। इह आदि ह मीत अपार।

पुस्ता पीरहि भांगहि खाइ ग्राह। मदिरा पी विम्बा पह जाइ।' की०च०' १।२०

३ मोहन नगर जिहि बडे भाहि। तप कोट २<sup>३</sup> जिन हट्ट माह।'

— ५० ग०', का० २१२६।१२६

४ दखिए—अ०', ८१।१६, ४६५।२१

५ स १० दखिए—प्रम कीति०', ५० ३२, 'वी०च०', ४।१७, 'ह० २० ३७६, सु० च०', ४।६।७, ५० ग० का० २५८५।५७६, 'पर० रा०', २४।६१

११ देखिए—'जाइन ए अववरी, भा० ३ प० १३२

व्यासगीता यह उपायों का एक मण्डल है। यह मण्डल उपायों का उपायों का भी परस्पर ऊँच-नीच की धारणा बनाए धी ।'

धूम्र का मुख्य धर्म विवेक की सेवा करना समझा जाता था ।' उपाय म कुछ जातियों अस्पृश्य मानी जाती थी । विद्यापति । गोरपुर के बाबा म भीष्मपति के कारण मित्रता की श्रुतियाँ टूट जाई। वरनाम म पदाध्याय म योगिया म टकरा जान आदि विमर्शिता का विवेक कर। हूए यह भी उल्लेख किया है कि उगम ब्राह्मण म यज्ञोपवीत घाण्डाला स हू जाते थ ।' इस म यही स्पष्ट होता है कि विवेक द्वारा घाण्डाल आदि हिन्दू जातियों अस्पृश्य समझी जाती थी । धूम्र को नीच भूकाना या अभिवादा करना जिस घाण्डाला म नगर म भी धूम्र की पुराण म अध्याय म प्रमाण बना है ।

धूम्र जातिया का प्रमुख धर्म विवेक म जिस विविध जीवापयोगी यस्तुएँ बनाए था किन्तु धीर्याध्य म उपाय म कुछ साम सति मया म भी प्रविष्ट चित्रित किया गया है ।' विविध म कु के अगुगार धूम्र को मात्र पदाति-सना म ही स्थान मिलता था ।' राजपूतो की घट भारता म कारण यह मवया सम्भव है कि शूद्रा का राजपूता की भाँति अरर या गजाङ्क हायर गुड करना विविध रहा है । वीरवाय्य म अप्रतिष्ठित धूम्र जातिया का उल्लेख मिलता है ।

### सुनार —

वशरनासजी न सुनारा को सकर भाजन बताकर, उलका सम्बन्ध यण सकर जातिया स जाना है ।' उहा उनी मणना बधिव-जगाती आदि धूम्र-जातिया क साथ की है तथा उनम इन जातिया जैसे अफीम भाँग और मदिरा सेवन के दुगुण दिखाय हैं ।' इस विवरण से प्रतीत होता है कि कथय-यातम सामाजिक स्थिति की दृष्टि स सुनारा की दशा आकल की अपक्षा कुछ हीन थी ।

१ 'सोशल लाइफ इन नानन इण्डिया

—डा० ब्रजनारायण शर्मा टकित प्रति, पृष्ठ ५०५

२ "दया सु धम्म वनिकर । सेवा धम सुद्र सदाइ ।' — प० रा०' वा० २०१२

३ 'यात्राहतह परस्त्रीक वलया भाँग । ब्राह्मणक यज्ञोपवीत घाण्डाल हृदय लूल ।  
वेष्यानि करो पयोधर जटीक हृदय लूल । — कीर्ति० पृष्ठ ३०

४ 'वरु बँवहि सतान बरकु सुपचनि शिर नवाहि । — वी० च० २।१२

५ देखिए—'छ० प० १६।१०, 'सु० च०', ६।६।७ अ०' ६०२।१

६ देखिए—टब्लस इन इण्डिया वाई जे० वी० ट्रवनियर—भाग २, प० १४५ की पा० टि०

७ 'सकर भाजन भवन, भूरि भूपनन बनावत । — ज० ज० च०', छ० १६

८ ६—देखिए—'धम, 'वी० च०', १।२०, 'जा०', २।७।१८ १६

नाई—नाइया का मुख्य त्रिवण के परिवारिक सस्कारा से सम्बन्ध मिनता है। यजमान दुहिताश्री क लिए वर अवपणाय जावेवा ल नेगिया म नाई भी सम्मिलित रहता था। विवाह के अवसर पर हाग याल नह्युर' और उवटन' नामक लावाचार नाई द्वारा ही सम्पन्न किय जात थ। उस हम भोजो के अवसर पर लोगो को बुनाने क लिए भी जाते पात हैं। नाइयो का इन कार्यों क बदल नेग प्रदान किया जाता था।

माली—इनका प्रमुख काय बागा की रक्षा करना तथा भाँति भाँति क पुष्प हार बनाना होता था। पथ्वीराजरासो म महाराज परमाल के बाग की रसवाली करने वाले माली का चित्रण मिलता है। आल्हखण्ड म मालिन का राजकुमारी क लिए नित्यप्रति पुष्प हार ल जात प्रदर्शित किया गया है। इस काय म व्याघात पडने पर वह दडित हान की दुश्चिन्ता व्यक्त करती है ' जिसस प्रतीत हाता है कि वह गजवीय सेवा म नियुक्त रही होगी। विवाह के अवसर पर माली मोर लकर आत और नग प्राप्त करते थे।

बारी—बारियो का छत्रप्रकाश' और आल्हखण्ड म उल्लेख मिलता है। आल्हकार न उनकी गणना नागियो म की है तथा कुल पुगहित नाई और भाट के साथ उह वर-अवेपणाय जात प्रदर्शित किया है। आल्हखण्ड म बारियो का काय ऐपन-नारी लकर जाना तथा भाविरा स पूव वधू क लिए आभूषण पहनाते' दिखाया गया है।

पटवा—राजविलास और आल्हखण्ड म पटना जाभूषणो म रशमी धाग गूथत चित्रित किय है।

छोपी—छोपिया का काय वस्तुत वस्त्रा पर बल-बूटा की छपाई करना होता है, किन्तु छत्रप्रकाश म नन्दन नामक छोपी का युद्ध म वीरगति पाकर देवराज के आग का व्योत करते प्रदर्शित किया गया है। प्रतीत हाता है कि वह अपने जीवन काल म मिलाई करता हागा। इस उद्धरण स यह तथ्य भी प्रकाश म आता है कि विविध व्यवसायी अपनी इच्छानुबूल, पतक काय के स्थान पर दूसरा काय भी अपना सकते थ।

वीरकाव्य म जिन अय शूद्र जातिया के विषय म उल्लेख मिनत हैं, उनक व्यवसाय इस प्रकार थे—

१ से ७ दखिए—प्रम वही ११६।२१ २२, वही, २५।२१, 'पर० रा०', १५।१५७, आ०', ११६।२३, 'प० रा० का० २५०।७।८, आ०', २४०।२०।२१

८ से १५—दखिए—आ०', २४०।२२, १६२।२२ २४, छ० प्र०' ८।१०, 'आ०', १६७।४, वही, २११।४, वही, २७४।१२०, रा० वि०', २।१३१, 'छ० प्र०', १६।१०

इधर तौं गतात जीर गता ।'

मिस्लीगर — यत्रा वा गताद वरता ।'

वरदिया — यत्र गता ।'

सवाई जरा वा यत्र रित्रय गता ।

जल्लाद — हाथी घाट गतात जीर मत्तु गता ।'

घधिर ब्याध वा पट्टिया पक्षी पकटात जीर मागता ।'

यनजारा यत्रा पर माता तानत्र बचा त गता ।

पीछ उल्लिखित तातिया व जीर्णित पीरवाय म अप्रतिगत मूत्र जातिया वा भी उतर मिता है—ताहार गरीर वटार पामी छठग, शपन चाणन, हाम तवी भन्भूजा वमरा घोर बन् ।'

नीच, वाच विरान जीर मात नटी दुडी डागरा नीर मट्टू जगती जातिया वा भी वीरवाय्य म उल्लय मिता है ।'

### प्रशस्ति गायक जातियां

चारण हिंदी रोजा म चारण वा अथ भाट जीर भाट वा अथ चारण निया गया है' जा वस्तुन भामक है क्याकि यदा भिन्न जातियां ह । ज० एच० हुटन न उनके रीति रिवाजा म गाम्य जग्य वताया है किन्तु चारणा द्वारा अपनी उल्लिखित वा सबध राजपूता म जोडन के आधार पर मन व्यक्त किया है कि—सम्भव

१ 'बकुचा बांध उन डानन के ओ बांधि म लीह डारि ।

हम तो डवगर है जपुर के जी डालन की कर बेपार । — जा०' १०१

२ 'धर सिक्कीगर सस्त्र मुधारि ।' — रा० वि० २१३५

३ बल चरावत हते वरदिया ऊनि उनसे पूछन राग । — जा०' २३६

४ 'बनी सदाई ऊनि बाकुटा घाटा वेचन की ल जाउ । — वही १३८११

५ (क) जभ बुगावी जल्लादन की हाथी घोडा देउ दगाय । — वही ३६२१०

(ख) 'मारत-मारत जालहा थकिग तब जल्लाद लय बुलवाय ।

नन वरजा जाकी वाणी मेरी नार गुजारी जाप ॥' — जा०' ३१७८८ ६

६ ७ देसिए— 'वी० च० ११२७ ह० ह० ३४५ 'जा० ३७२११८, ३८४४

८ ६ देसिए— वी० च० ११८ 'ह० प्र०', ५१३७, 'कीति ४२, आ०, २८१५ 'रा० वि० २१३५ आ०, ३०४६ परा० रा० ११२१, प० रा०, मा० ११४६१२७ ह० रा० ८०१, क्या० रा०' ८३५

१० (क) देसिए— हि० मा० को० २१३२ और ४१२०६

(ख) देसिए— हि० श० सा०, पृष्ठ ६७५ जीर २५५६

(ग) देसिए— ना० वि० श० सा०' पृष्ठ ३७२ और १०१६

भाट, ब्राह्मण पिता और क्षत्रिय माता की सतान हैं, जबकि चारण क्षत्रिय पिता और ब्राह्मण माता की सतानें हैं।<sup>१</sup> 'इतिवट' में भाट और चारणा का सम्बन्ध में एक कथा नकलिया है, उनके आचार पर भी चारण, भाटा की अपेक्षा अधिक बली और साहसी सिद्ध हात है।<sup>२</sup> इसी भाति 'आचार और धर्मशास्त्र के विषयवाश' में चारण और भाटा में 'त्रया' नामक आत्म पात की पद्धति की तो दोनों जातियाँ में समान तथा अवश्य दिखाई गई है,<sup>३</sup> किन्तु जनगणना के समय उत्तरी भिन्न भिन्न सरयाएँ दन<sup>४</sup> के अतिरिक्त उनमें एक अन्य 'यावतक' लक्षण यह भी दिखाया गया है, कि बहुत से भाट मुसलमान, जैन और सिख मतावलम्बी भी हैं जबकि 'चारण विगुद्धतया हिन्दू ही हैं।'<sup>५</sup> उपयुक्त विवरण से इसमें सन्देह नहीं रहता कि चारण और भाट वस्तुतः पृथक्-पृथक् जातियाँ हैं, हाँ उनमें काय और रीति रिवाजा का साम्य अवश्य मिलता है। चारणा के विषय में यह निर्देश भी आवश्यक है कि—पञ्च-पुराण में उन्हें 'गधव-

१ 'कास्ट इन इण्डिया', पृष्ठ २७६, २७८

२ इतिवट द्वारा दी गई कथा का मार यह है कि शिव ने अपने शेर और बल की रक्षण के लिए 'भाट' की उत्पत्ति की थी। भाट शेर से बल की रक्षा नहीं कर पाता था, जब उन्होंने 'चारण' की सृष्टि करके, उक्त काय चारण को सौंपा। चारण भाट की अपेक्षा अधिक साहसी था, अतः शिव का प्रतिदिन नए बल को सृष्टि करने के भ्रष्ट से छुटकारा मिल गया।

—'मैमोयम ऑन दि हिस्त्री, फाक्लोर एण्ड डिस्ट्री-यूशन आफ दि रेसेज आफ नाथ वस्त इण्डिया', पृष्ठ १८

३ 'त्रया' पद्धति का अग्रलिखित स्पष्टीकरण दिया गया है—

चारण और भाटा को, और इनमें से भी विशेषतया चारणा को यदि नगर द्वार की रक्षा, ग्राम पशु या किसी कोप का निरीक्षण काय सौंप लिया जाता था, तो वे उसकी रक्षाय आत्म बलिदान तक कर देते थे। आत्म-बलिदान से तात्पर्य उनके द्वारा युद्ध करने का नहीं है, अपितु वे आत्म घात कर लेते थे। (इस आत्म घात का परोक्ष प्रभाव यही पड़ता हागा कि उनमें ब्राह्मणत्व का अर्थ विद्यमान समझने के कारण उनकी आत्महत्या ब्रह्म-हत्या की काटि में परिगणित की जाती होगी तथा अथ लोग ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति में बचने की चेष्टा करते होंगे) विश्वकोप के अनुसार काठियावाड़ के प्रायः प्रत्येक ग्राम प्रवेश पर 'पालिया' या 'सरक्षण पत्थर' खड़े मिलते हैं, जिन पर आत्म-बलिदान करने वाले स्त्री-पुरुषों का नाम और तिथि लिखे रहते हैं। इन पालिया पर छुरा भाकती हुई चारण स्त्री अथवा अश्वारोही चारण द्वारा भाले या तलवार से आत्म घात करने की विधि भी उत्कीर्ण मिलती है।

—दे०—'एनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिजिजन एण्ड एथिकस', भाग २, पृ० ५५४

४ ५ वही, पृष्ठ ५५३



विशेष', भागवत में 'दर यानि विशेष' तथा 'अमरकाव्य' में बुझाव या उट ब्यापना गया है।'

धारणा का पृथ्वीगजरागा गजत्रिनाग और क्यामर्गा गगा में उदात्त मिलता है। रामोदार न मत्स्यात्रता प्रमग म मत्स्य व। का उदात्त वरव उट चारण और भाटा का गोपने प्रदर्शित किया है—जिगम चारणा का वरव गना ध्वनित होता है। मान न उट चो-न-न की गना दवर 'उा पर दवी की जमीम वृषा रहन के तथ्य का अभिव्यक्ति किया है। दही दाना वविया जोर जान न चारणा व प्रमुग वम प्रशस्ति गान का भी चित्रण किया है।'

भाट—वीरकाव्य में उपनयन विधा में स्पष्टता है कि भाटा की सामाजिक स्थिति, ब्राह्मणा से बहूत कुछ माम्य रमती थी। व ब्राह्मणा की भीति ही हाथ उठा कर जाशिय प्रदान करने तथा अवश्य ममभे जान थ। शिक्षा की दृष्टि से भी उरना पान वरुमुगी होता था जोर व वेराग, पुराण बट नापा जोर विविध वता के साथ साथ अभिचार किया शकुन शास्त्र आदि के भी पाता हाने व। प्रात वान नरगा को जगा के लिए विरु पाठ करन तथा विवाहात्मिक अवमरा पर जाश्रयदानाआ की वश परम्परा के कृत्या का स्तुति परव विवरण मुगाने के अनिरिक्त उनके कत य की चरम परिणति गुडावगरा पर उनम जमीम युडो माद जाप्रत करन म हाती थी।

पृथ्वीगजरागा में दुर्गा वैदार की महागज पथ्वीगज जुहार करन प्रदर्शित किए है। उनकी वधन प्रस दशा में कवि चद उट गजनी में जाशीवात् प्रदान करता है किन्तु व आत्मगतानि और वनाचित चर से कुछ रष्ट हान के कारण उमक प्रति शीश नहीं भुवाने। उनके शीश न भुवान का उल्लेख मिद्ध करता है कि ज य अकमरा पर के अवश्य ही शीश भुवामा करने हागे। मत्री उनत पर छूने जोर जध्य पाद लत दिखाए गए हैं।' भाटा द्वारा हाथ उठाकर जाशीवात् प्रदान करने व प्रसगा में कवि चद द्वारा रावल समर विराम 'व ह चौहान' जोर शाह मुहम्मद गौरी' को श्रीवठ भट्ट द्वारा महाराज बालुकाराह को " तथा दुर्गा केरार द्वारा महाराज पथ्वीराज" का दमी पद्धति से जाशीवादि देन का चित्रण मिलता है।

१ दखिए—'शत्रुवल्पद्रुम २।४४४

२ से ४ दखिए—'प० रा० का० १८६।१०४ 'रा० वि० २।६३, 'प० रा०', का० ६८६।१६१ व रा० वि० १६।१०।१० व क्या० रा० ८६५

५ "करि जुहार चहुआन भट्ट जादर बहु कियो ॥' — प० रा० का० १२२।१०२

६ दस हृष्य रणिव दीनी असीम सिर नयो नही मन करिय रीस ।'

—वही २४३।७।३८८

७ "किय अध पाद पत्री सु कबि । उपचार विमल बानी सु तवि ।'

—वही, २४१।७।२४४

८ से १२ दे०—वही २२१।६।७६, २११।७।८४, २४१।४।२२१, ६०।६।३३, १५२।१।७०

महागज पथ्वीराज द्वापरा के साथ साथ भाटा को भी दान देते चित्रित किए गए हैं। पुरस्कार के रूप में महागज पथ्वीराज दुगा बेदार का एक ग्राम इस लेख के साथ प्रदान करते हैं कि दिवाकर और चंद्र के आकाश में चमकते तथा गंगा के प्रवाहित रहने की अवधि तक, उसका पुत्र प्रपौत्र का उमर पर स्वामित्व रहेगा। शाह मारी के वजीर के शब्दों में हिंदू और मुस्लिम दोनों की ही नीतियों में भाट आवश्यक है। पन्मानगरा में आल्हा का कथन है कि माधवारण तथा में ही नहीं जपितु मुद्रका में भी भाटा पर शस्त्राघात करने में नरक-वास मिलता है। इस प्रसंग में यह उल्लेख करना अप्रामाणिक न होगा, कि ग्रीक युद्ध में भी, वहाँ के भाटा (Bards) का अवयव समझा जाता था।

पथ्वीराजस्य भाटा अनुमार भाटा भट्ट पण भापाविद और नाटक संगीत तथा नव द्रितवादि में दक्ष था। उमर दुगा बेदार और चंद्र का वक्ष्य करी गया है। कवि 'चंद्र' न स्य के विषय में चौगसी विद्या अठारह पुराण पट भापा और चौदह त्रियाभा का ज्ञान की दर्पोक्ति की है। 'हम उमकी स्वप्न पत्र की व्याख्या और शकुन शास्त्र में भी गति पाते हैं। भट्ट दुर्गा बेदार और कवि चंद्र दाना ही तन मंत्रा में भी दक्ष थे।

इच्छिनी विवाह के अवसर पर भाट गण क्षत्रिया के छत्तीसा वंश की विम्बदा बनी का गायन करते हैं। सयागिता म्वयवर में महाराज गयचंद्र के भाटा का स्वयंवर में जागत नरेश की वंश परम्परा के कृत्यों का विवरण दत्त दिया गया है। पथ्वीराजस्य भाटा 'क्यामवाराता', 'राजविलास' और 'सुजान चरित' में उह युद्ध वसंत पर अपन वीरगीता स यादवाजा का उत्तजित करते प्रदर्शित किया गया है। भाटा द्वारा युद्ध करने के निर्देशों में कवि चंद्र, 'जल्हन जगनिक का युद्ध करने' जाते हैं।

१ से ४ दखिए—क्रम, पं० रा०' का० २६६५०, पं० रा०, मा० ३५२०५३, वही, २१४३१४६, 'पर० रा०' ३१२८

५ देखिए—'एनमा०' ग्लो० ए० एचि०' भाग २, पं० १५५

६ उ दखिए—'पं० रा०' का० ६०४८ पं० रा०' मा० ३५०६१३८

८ ६ दखिए—पं० रा०' का० २४०८१७७ ८१, ७६३१२३६, 'पं० रा०, मा० ४६०६१६४

१० 'वस छत्तीस छत्री छह। भाटा विरह भनत ॥' —'पं० रा०' का० ५४६१४४

११ से १५ देखिए—क्रम 'पं० रा०, का० १५६६१११, ६८६१२६१, 'क्या० रा०, ८६५, रा० वि०', १५१७, 'सु० च०', ७१२१२४

१६ "कविराज सु सागि तई कर म क्यामास सु डार दयो घर म ॥"

—'पं० रा०' का० २६०७१७०

१७ "जगन भाट चल्लिय। सुजाहि पग विल्लिय ॥"

"चलो सुभट्ट जल्हन। नही सुभट्ट हल्लन ॥"

—'पर० रा०', २११४०

पथ्वीरारागा म भाग की अगमाया-गुण उत्तम भी मित्त जिनम के अतिशयनीय बालूरी, लभी और व्यथ ही नरार्ई भगन परा रात न मण १। कवि चण का वायत वीर मिद्र हात की वाता गुनार महाराज न गामन बहा है कि भाग चरण और तला की वाता वा विशयाम तनी वरता गारिण । महाराज भोलाभीम के शर्या म— रायात वरत ताल का भाग-गुण गमनना चारिण । महाराज नीमन्व एक-दूगरे म नरार्ई तगा का भाग वा स्वाभावित दूषण या गुण स्वभाव प्ररणिगत वरत ह । जयश्र भाग लभी और दूगगा व रित्त पर लरि रगन वाते दिताण गण है । शाण वीरी के जितम आश्रमण स पूर रित्ती व प्रजा जन राज्य वी अधोदशा का शाण कवि चण का ही दा है कि व महाराज की गता व वहत भाग को सयागिता अपररण म वरवायन म म म गाया परा है ।

दसौधी—ज जाति ता पथ्वीराजगगो और वीर-चरित्र म उत्तम मित्ता है । कवि चण वनीज गमन पर उम अपन ररवार म बुजाने म पूर महाराज जय चन्द अपने दसौधी को उमके वाय गुणा ती वरीक्षा वरत भेजत हैं । तेयर न वीर चरित्र म महाराज वीरसिंहदेव का जगगीरपुर म वहत म मागध और सूता के साथ माध गुणन लगीधिया को भी वमात चित्रित किया है । महाराज व राया भिषेक के अवसर पर बुद्धिमान दसौधी माहिवराय की पहिरावनी भी की जाती है । प्रस्तुत सदभों म दसौधिया की गामाजिक स्थिति भाटा म भी उच्च फ्वनित हा रही है । नालला विशान शब्द सागर म उह ब्रह्म भाट बनाया गया है कि तु 'रासो' के बहन सस्करण के समादवा ने दसौधिया को नीची जाति व त्राग बतात हुए वार्याधार पर उनके जानने या जोगवर और नाजि या नाजिर नामक दो प्रभद होन का उल्लेख किया है । वीरका य म लसौधिया के प्रति किसी प्रवार की अव

१ ' भट नट चारन जू जारतह । इनकी गति न मनिय सत्तह ।

—'प० रा० , का० ३२१।१४३

२ वन वाद सो करे । होह भदह को जायो ।' —वही १२१३।१०६

३ 'जहा च' दद न करहु । तुम कुल दद सुभाय । —वही १०१८।१६

४ 'भट डिभी जावरह । जर पर जानन वित्त । —वही १५२०।६३

५ ' घर घालि भट्ट सूती घरह । सुबर विप्र तोही बहन । —वही, २१३३।१८२

६ ' तिन दसौधिय सो कह्यो । बोति परप्यहु तद ।' —'प० रा० का० १६१।०।४८८

७ ' बहु वदी मागध सूत गुनि गुनी दसौधिय साधि नित । — वी० च०' १४।६३

८ सुबुधि दसौधी माहिवराय । पहिराए बहु भाति बनाय ।

—वही, ३३।२३

९ देखिए— ना० वि श० सा० पृष्ठ १७१

१० पथ्वीरारागा के पृष्ठ १६/० की पादटिप्पणी म दरवार के नाजि या कडखे गाने वाते जोगवर बनाए गए हैं । 'रासासार' के पृष्ठ २७२ पर उह नीति के

मानना का सवन् नहीं मिलता । सामाजिकता य भी कारण जोर भाटा व समाज ही परिगणित किए गए हैं ।

जागरे—जागरा का उदय कवि परमात्म न महाराज हिम्मतवहादुर' जोर प्रतापसिंह' के मन्त्रिणा का वीर रम न आजात्मक बहरी मुनावर मुद्राय उत्तजित करन व मन्दम म किया है मर हारी एम० इतियत् न अपन ममायग म अभिमत व्यता किया है नि कुछ लाग गया जोर भाटा का एन ही ताति मानत ह, जय नि उनम पायस्य मानन मान उर प्रमश जगा भाट जोर ब्रह्म भाट कहन्त अभिहित कर । ह । इम स जगा भाट विशेषतया गजपूता की वश परम्परा व टृत्या का प्रियरुण सुरमित रगत हैं । 'नता मह काप जापुरविक एग म नरता है, जवनि ब्रह्म भाटा का अपसर विशेषा पर किरण पर बुताया जाता है ।' प्रनीत हाता है नि जागर जाग जगा भाट म काई अन्तर नी है । ताका उलय ववल युद्ध प्रमगा म हुआ है ।

दाड़ी—गदिया का 'गारा गान्त की कथा,' 'सुव प्रकाश प्रनाप विम्वला' जोर 'आहृपड म रवाव (मारगा विशेष) दान और मजीर आदि वजान हुए वीर-रम व बहरी मुनावर, मन्त्रिणा म अदम्यात्माह जाप्रत करत प्रशित किया गया है ।

जाट—युद्ध-वीर्य और शौर्य व कारण जाट सामाजिकता राजपूता के मम वध समझे जात थे । मुजान चरित म कवि मूदन न महाराज मूरजमन के पूव पुत्र्य भूरामहजी कस विगाशक श्रीरुष्ण के वृत्त म—अर्थात् यदुवश म उत्पन दिताय भी हैं । 'उक्त लिए जट्ट और जाट' के अतिशक्ति ठादुर,' अभिधान का भी प्रयाग मिलता है ।

लाग बतात पुं वहा है कि इग समय य लाग पदे निसे नही होत जोर केवल गान-वजान का गजगार करत हं । जव व वश्याया या गवया की जाच परत करत हैं ता नाजिर कहलान हैं और जव सवारी निवलन के समय बहरी या गीन गान हं ता जानिड कहनात हैं । रासा म उहे एक स्थान पर 'नाजिर' और दूसर स्थान पर 'नाजिर' कहा गया है ।

१ 'जहें जागरे करमा कहें अनि उमगि आनन्द को चहे ।

—'हि० व० वि०', छ० ४२

२ जागे जागर राग मारु अलाप, सुन काताग के तहा अग काप ।'

—'प्र० वि०', छ० १८

३ देखिए—मेमायस आन दि हिस्ट्री, फीव नार एण्ड डिस्टीब्यूशन आफ दि रेमेज',  
पृष्ठ १८

४ स ७—देखिए—क्रम० गा० व० व०' १०७ २८, 'छ० प्र०' २०१३,  
प्र० वि०' २०, 'जा०' १३१२, ७६१३

५ जग उदित उदत जदकुलन म भयी भूरे भूप । — सु० च०', ११११३

६ से ११ देखिए—पर० ग०', २४१४, 'सु० च०', ६१०१६, वही, ४१२१२२

जाट जाति अनेक उपशाखाओं में विभक्त थी। गून्ना में उनकी मिश्रितजात, सूतल सेंगरवार चाहर, मगवार, भागर, सतवार गिनवार, तीटवार, गोधे, भितवार गून्ने डागुन्, अरीरिया रावत जीर पछार नाम उपशाखाएँ का उदय किया।

क्षत्रिया की भाँति ही युद्ध प्रियता और दूर स्वामिभक्ति उनकी मुख्य चारित्रिक विशेषताएँ मिलती हैं। यदि गूदन व शशा म महाराज गून्नामन का यद्यपि सभी प्रकार व सुगोपभोग व साधन उपलब्ध तथापि उन्ने युद्ध व धिना शांति नहीं मिलती थी। महाराज गूरजमन के इस बचन में कि हम सुगन वादशाहा व चावर है, और उनकी बदगी में रहने हुए उनसे शत्रुओं व दना निमित्त सन्त्र तत्पर हूँ उनकी दूर स्वामिभक्ति भनक रही है।

अहीर—पथ्वीराजराजाके अनुमार अहीर एक पशु-पात्र जाति थी जिनका यहाँ बहुसंख्यक माय भग और उन जाति पशु हों थे। उनका घरा में दूध-ही का अपार भण्डार होता था और प्रायः काज जब अहीर कधुएँ दधि मथन करती थी तो मेघ गजन जसी घनि मुनाई पती थी। उनकी स्त्रियाँ दधि का विषय करने भी जाना करती थी।

अहीर क्षत्रिया की भाँति हृष्ट पुष्ट होने थे। यदि चन्दन चाचिग नामक 'मटर का दीप-काय उसु ग स्वध वञ्चतुत्य बाहु और बहन बलाइया वाला चित्रित करके उबन तथ्य का प्रारटन किया है।' युद्ध वार्ता सुनकर प्रफुल्लित होना और रण प्रागण स पग पीछे हटाने को निच नमभना उनकी क्षत्रियो जसी चारित्रिक विशेषताएँ थी। 'वीरचरित्र' और गुजान चरित' में अहीर सनिक दिखाए गए हैं तथा पथ्वीराजराजा में दो सहाय सनिकों को अचूक लक्ष्यबधक बताते हुए कहा गया है कि ऐसी पराक्रमी जाति का कोई बात भी बर्बा नही कर सकता।

१२ देखिए—'सु० च० २।१।१३, १।२।२

३ "करत चाकरी साह की हम पाया यह देस। —वही, ३।१।५

४ हम जमींदार सरदार किए जायु जाइ, हम निरधार बदगी में नित जानीये। राजा राना राय उमराय सब साहिब के कह एक बार के अनेक करि मानीये। सुदन सुजान कहै साहिब नवाय सुनी करनी है माहि जोई मुपत बखानोय। चक्कव चक्ता जू व चौरनु की चूरि करि, चुगल ब्याइन को चौकरन व मानोये। — सु० च०, ४।२।३४

५ स ११ देखिए— ५० रा० का० ५८२।३३ आ०, ४५।१२, ५० रा०, का० ५८२।३२ वही, ५८२।३४, 'वी० च० ६।३६, 'सु० च०', ५।३।२२, ५० रा०' का० ५८२।३३

१२ गुज्जर अहीर अस जाति दोइ।

निन लीह तापि मक्क न कोइ।'

—वही, ५८२।३५

गूजर—गूजरा व विषय म धीरवाच्य म अधिक निर्माण नही मिलत । कुछ तिहासकारा के मन म व बड़गूजरा स अभिन हैं ' जिनका क्षत्रिया व' छत्तीस वषा परिगणन किया जाता है । अहीरा की भीति गूजर स्त्रिया भी गारम विषय किया रती थी । ' कवि केशव' और मुदन' न क्रमश सम्राट अकबर और महाराज शीरसिंह' की सेनाओ मे गूजर सनिक दिगाए है जबकि कवि चंद्र न गूजरा को भी अहीरा की भीति अपराजेय प्रदर्शित किया है ।

कामस्य—आलाध्यवाल म यह जाति लखको व रूप म प्रसिद्ध थी ; पष्वी-राजरासा म—परमानंद कामस्य को मुद्धाय आया दत्तकर, धीर पुण्डरी' उसका परिहास करता है कि—लखनी-बाटव हाथ करवाल का क्या संचालन करेंगे ?' कवि मान ने उत्पपुर म कई महस वापस्या का नियाग दिसाते हुए कहा है कि व लम लेखा के त्रिया म लक्ष हैं, जिह अथ (जातिया के) व्यक्ति नही त्रिय सकत, केशवनासजी न वापस्या का वषण सम्य शीपक व' धन्यगत किया ह, और उह गत्रकीय पत्रा म त्रिमे जान के लिए आवश्यक मुभाव दिय है । ' आहवार न कामस्यो को अपनी दावात-नयम और वमता लवर भागन चित्रित करके, उनकी मुख्य जीविकावृत्ति लेसन' ही होन की पुष्टि की है । कहा न हागा कि यह उनका पारम्परिक काय समझा जाना है ।'

कवि केशव न कामस्या की परम-माधु निर्लोभी सत्यवादी, धर्माधम व विनाता और राज-घदहार को इगित मात्र स भीष रने वाल वाले कहकर प्रशसा की है ।' कामस्या को हम राजदरवारा में प्रतिष्ठित पदो पर भी नियुक्त पात हैं । महाराज बीमलदेव का कोषाध्यक्ष किरपाल नामक वापस्य पदगित किया है ।' परमालरामो म महाराज चंद्ररत्न द्वारा मुजान नामक वापस्य का दीसन नियुक्त किया जाता है ।' महाराज वीरसिंह दन मुदर नामक वापस्य का भेजकर, सम्राट अकबर की श्रुषा प्राप्त करने की चंटा करते है ।' महाराज परमान, दिल्ली

१ देगिए—अर्ली चौहान साइनस्ट्रीज', डा० दशरथ शर्मा, प० २४६

२ स ६ दलिए—धम था०' १५०१८ 'बी० च०', ६३६, 'सु० च०' २१११८, प० रा०', का०, ५८२।३३

५ 'लखि वापस्य मरद' १ च० पु डीर अफोई ।

कर लेपनि किरवात । दत्त सातन साई ॥' —/प० रा०' का० २५७३।८८३

६ स ८ देगिए—धम 'रा० रि०', २।६२, बी० च०' ३१५७, 'आ० ४६६।७

६ देगिए—'हि दुस्मान की पुरानी सम्यता' टा० वताप्रसाद प० ५१६

१० परम गाधु वापस्य जानिय । निर्लोभी सांचो मानिये ।

जान धर्माधम विचार । जान द गित नय श्योहार ।' — बी० च०, ३१।३

११ १२ दलिए—प० रा०, का० ८८।४१६ 'पर० ग०', २।१६

१३ दलिए—बी० च०', १५।३६

शरर के आक्रमण का प्रतिकार करने की मन्त्रणा में अपना कामस्य मन्त्री का भी चुनाव है। 'कमाग ना मणि मन्त्र कश्च स्व पशु म मित्रात व पडयन और शाह गोरी ना परास्त करन का भार महागात भावाभीम अपन भग भाट और कायस्य मन्त्री की बुद्धि पर लीवते चित्रित किए गए हैं।'

अतः में यह निर्देश करना आवश्यक है कि अपना परम्परागत काय लखन बलि पर ही आश्रित न रहकर जालाच्यकाल में कामस्य स प सवा ढांग भी जीवित काजन लगे थे। पथ्वीरातरासा 'मुशान चरित', 'जगतामा' और हिम्मतमहादुर विस्त्वावली' में उनके युद्ध करन का उल्लेख मिलता है।

मुसलमान - पीछे उदितितन भारतीय जातियों के अतिरिक्त मुस्लिम नव मुलिस्म, फिरगी जाति कुछ विदेशी जातियाँ भी भारत में निवास करती थी। इनमें सर्वाधिक उत्तरा मुसलमानों के विषय में मित्रते हैं।

इस जाति के लिए आजकल प्रचलित मुसलमान सत्ता का तो धीरकाव्य धारा में क्यामखारासा जीर जहागीर जग चन्द्रिका नामक ग्रंथ में मात्र एक एक बार प्रयोग मिलता है। धीरकाव्य में जालोच्यकाल में उनके लिए सर्वाधिक प्रचलित अभिधान 'म्लच्छ सिद्ध हाता है।' उनके दशा के आधार पर उन्हें 'तुर्क' और

१ २ दक्षिण— ५० रा० का० २१२५१३७ ५० रा० सो० २१६०१७६

३ से ६ दक्षिण— ५० रा० का० २१६५१४११ सु० च० २१४६ जग, छ० १३३७ ३८ हि० ब० वि० छ० १२१ १३२

७ 'तवही दीन में जायो खान। निमल मो मन मुस्सलमान।'

— क्या० रा०, १५३

८ मुसलमान शक दिसि असुर एक देव नरदेव।

जामखान जहागीर को सागर को सा मेव। — ज० ज० च० छ० ६८

९ (क) चढे मच्छ हिन्दू मिली जुद्ध अनी। — ५० रा० का० ११०६१७५

जीर भी दक्षिण— १११०१७६ १११११८७ १११५११५ १११६१२०  
१०६४७ १३०११६८ १३४६१३ १३५३१३६ आदि

(ख) दक्षिण— शि० भू० ७८ ३४ १६ ६१ ६२ ८४ ८७ ६६ १६३  
१६६ १८४ २०८ २५२ २७५ २६५ २६६ ३०५ ३२८ ५८८ ३५७

(ग) शि०वा० २५ ३६ ५२ (घ) रा०वि० ३१२० ३१२१ ३१६४ ६१३७  
७१२८ ६१७ ६१५४ १२११, १३११० १८१६६ (ङ) छ० प्र० ३१११

(च) सु० च० ११४११६ (छ) ह० रा० ४२४ (ज) २० बा० ५

१० (क) दक्षिण— ५० रा० का० ११६११८७ ११६३११०४ ११६५१११६,  
२०४६१५२ २०५२११६६

(ख) दक्षिण— बी० च० २११ २१३४ ६१२८, ६१५१, ६१५४, १२१६६  
१५१२०

(ग) दक्षिण— छ० प्र० १११६, १२१२, १२१७ १३१७, १५१३ १६१४, २११२

मुगल' भी कहा जाता था, किन्तु वदिक मर्यादाओं के प्रति असुरों की भांति विद्वेष होने कारण माघम्य के आधार पर उन्हें असुर, पिशाच दाव और निशाचर जसी सनाओ से अभिहित करने का अधिक प्रचलन था ।' इस प्रसंग में यह निर्देश प्रासंगिक न होगा कि उपयुक्त सनाओ का प्रयोग मुगलों से युद्धरत रहने वाले नरेशों के आश्रित कवियों ने किया है, जिनसे उनके द्वारा जान-बूझकर कुछ अधिक गहिरे शब्दों का प्रयोग करना स्वाभाविक माना जा सकता है किन्तु आश्चर्य तो यह है कि, शाह जहांगीर की प्रशस्ति में जहाँगीर जस चंद्रिका त्रिसने वाले केशवदासजी ने भी उनके मुस्लिम दरबारियों के लिए असुर सनाओ का प्रयोग किया है ।' परमालरासा में बहुश तथा पृथ्वीराजरासो, शिवराज भूषण, कीर्तिरता और राजविलास में अल्बरनी ने भी उल्लेख किया है कि हमारी वंशभूषा और रीतिरियाज से भारतीयों को केश भूषा और रीतिरियाज इतने भिन्न है कि वे अपने बच्चे कि हमारा नाम लेकर और हम दिखाकर डरान हैं, तथा हम पिशाचों की सनाओ देते हैं ।'

१ (क) देखिए—'वी० च० , ४१४ ६१३६, ८१२४ ६१३६ ६१५२, १०१७  
१०१४० १२१४२ १४१३१

(ख) 'क्या० रा०', १६५ १७३ १७७, २३० ४५३ ४५४, ५६१

(ग) छ० प्र० १११६, १११७ १२१२ १२१७, १३१७ १५१३ १६१४,  
१६११२ १८११२ २०११२ २११२ २३१५

२ (क) "उत्तर आसुर सनाओ रची । मझ्जे हाटुलि जजु ।

— प० रा० का० २२७६१००६

और भी ते०— प० रा०' का० ११०७१६०, ११६८१२१, १३७०१२६,  
२२८६१०७६, २२८६१००, २२८६१०६ २२८६१०७ २२८६११०६  
२५००१२०८ २५०२१२१८

(ख) 'विश्विय चिराक प्रद्योत पथ पड ममुग पाण असुर ।

— रा० वि० ६११०० और भी देखिए—३६१, ५६०, ५६४, ५६८,  
६११ ६१२६, ६१३६ ६१३६, ६१३७, ६१३६, ७१२६, ७१३५ ७१८२,  
८१२७ ८१६८ ६१८, ६१७३ ६१७६ १२१६ १२१५ १८ ६७

(ग) जिन नाम मत्तच्छ पिसान जनी सुरही रिपु ही जन म्याम मना ।

— 'रा० वि०', ६११६८

(घ) नळ्योन श्रीव वस वीर रम । दह दिमि भिगि दानव मितिय ।

— प० रा० , का० १०३५१२

(च) वीर विजयपुर के उजीर निगिचर गात कुआवार, धूषेत उणाण है जहान सा ।'

— भू० छ०' ६६

३ "मुमलमान इक दिमि असुर एक दन तग्य । — ज० ज० च० ६६

४ 'In the third place in all manners and usages they differ from





मुगलाना म मूछा के साथ साथ दाढी रखान की भी प्रथा थी। पृथ्वीराजरासा, क्यामला रासा, 'सुजानचरित', 'जगनामा', और हम्मौररासो' स मूछा और शिवा-वावनी, 'सुजानचरित', पृथ्वीराजरासो, और छत्रप्रकाश स दाढी रखान के तथ्य की पुष्टि होनी है। क्षत्रिया को जहा अप ि मूछा की मर्यादा का ध्यान रहता था, वही मुसलमाना म हम दाढी की प्रतिष्ठा अधिक पान हैं। सुजानचरित म वजीर मन सूर का महाराज सूरजमल को युद्ध भार सौंपत समय यह निवेदन करना कि आप मेरी दाढी की लज्जा रखना 'सदभगत तथ्य का निदशक है। मिर पर के पगडी का प्रयोग करते थ, और उसकी मर्यादा का क्षत्रिया की भांति ही पालन करते थे। पज्जून कछ-वाहे से पराजित होने पर शाह गौरी प्रतिना करत हैं कि मैं तब तक पगडी नही वाधूगा, जब तक पज्जून कछवाह का परास्त नही कर लेता।' प्रतापरासा म नजबवान भी अपनी पराजय का—युद्धमयल म पगडी का उतर जाना बताता है।" जिनम उक्त मनाप्रति ही भनक रही है।

हिन्दुआ की भांति मुसलमाना की भी आक उपजातिया थी। कवि चंद्र और जान न कइ बार उनकी भिन भिन जातिया रा उल्लेख किया है।" उनम जाति-प्रथा थी तो अवश्य त्तिन्तु, उसका आगर भिन भिन कर्मों के स्थान पर, कदाचित् स्थान विशेषो के निवासो हाना रहा है। पथ्वीराजरासा म शाह मुहम्मद गौरी की सना म—गहवर, तक्षर गक्खर, सरामानी वल्ही, ह्मसी उजवक रूमी, सरखानी, ऐराकी और मुगल जाति के योद्धा सम्मिलित भिनत है।" वीरकाव्य द्वारा क अय प्रथा मे से क्यामपारासा म किररानी," राजविलास म—शख, सयद, पठान, लोदी,

- १ स न दक्षिण—क्रम 'प० रा० का० २४०५।१४६ 'क्या० रा०, ३८६, सु०च०', १।३२८ 'जग०', ११३ १७, ह० रा० ५३६, 'शि० वा०', ४६, 'प० रा०', ५० २४०७।१६७, 'छ० प्र०', ६।६
- ६ "इस दाढी की लाज कुँवर बहादुर है तुम। है यह काज दगाज हावगा तुम्ह हाथ स।' —'सु० च०, ६।१।१३
- १० 'गयो साह गज एम, पाण बंधा कूरम हनि।' प० रा०, मी० ३।३६२।३
- ११ "हिथी हार नवाबजू पटक दए दुग हाथ। पाण रही या खेत म वाहू दिया न साथ।' — प्र० रा० छ० १२३
- १२ (क) 'सरखानि ऐराकि मुगल कही। बहु जाति अन्क अनक मती ॥" —'प० रा०', का० ६४८।२०
- (ख) 'जनेक जान जानति कुल। विरह नत असि ग्रहि करद। तुरकान बीच बल्लाच घर। चित्तपुर हासी मरद।' —वही, १३६२।६६
- (ग) 'किररानी हो जात की, मुमकीक्षा तिहि नाम।' —क्या० रा०, श्र० ४१६
- १३ दक्षिण—प० रा०' का० ६४८।१७ २०, १३६२।६६
- १४ दक्षिण—क्या० रा०', ४१६

बलना ही गख्याती हजी, रहन मुगल रही और गागर ' मुजातरगित म—मुगल, पगात शग, गयत मर दीगनी और पूग ती ' छत्रप्रसात म—भीर मुगल गटात और सयत ' तथा जगातामा म सयत तयय यग और अरया व उरतग मितत है । गत्र टिवर जाग इण्डिया म गात हाता है ति उत तीर त भन्भार का प्रगतन तथा उतात शादी तिसादा म दि दुआ की भीति ही घ्यात रगा तात मुगलमाना म भी व्याप्त है ।'

शीरगाय प्रणताआ । मुगलमाना की तागितित रिगपताआ का भी गतानु भूतिपूरा त्रिपण तिया है त्रिगग गात हाता है ति क्षत्रियो ती भीति मुगलमाना भी युद्धरथा म वीरगति प्राप्त ररत (शरीर हातर) यगित म दूग द्वाग वरण त्रिय जाा की उतात धागणाग रगत थ । उता स्वामि धम की भी दू भावना रिचमान रहती थी । पद्यशीरगायगा म शाह गौरी व गनित बहा है ति जा स्वामी का जापत प्रस्त करव पताया ररग उता त्रिग पितातर है । य दूगम की गन्ता है और उह बहिन व स्यात पर तात्रतत्यात मितगा । एग अपम व्यतिआ के माग का शान जीर काग तन भणण तही करेग ।' मुजातरगित म मुग्धमन्त्रनी नश्यत-वाया की चिन्ता न वरत दूग स्वामि धम व पाता म शरीर त्याग व ओजात्मक त्रिवार व्यतन वरता है ।

मुगलमाना म स्वामि धम की भावाा अपा हिन्दू स्वामियो व प्रति भी उती ही दत थी । भीर हूस्मन (जिसे शाह गौरी का चचग नाई त्रियाया गया है) शाह गौरी व जात्रमण के समय स्व मुगल बाववा स वस युद्ध वरु, यह सोचतर शाह

१ स ४—दखिए—यम० रा० वि०' ६।१७६ सु०च० १।३।५ छ० प्र०, १४।३ जग० १३६२ ६६

५ 'गजेटियर आफ इण्डिया के अनुसार — जाति प्रथा भारत की वायु म प्रविष्ट है । इससे सक्रामक कीटाणु मुसलमाना तक म फत गय और मुसलमाना म हिन्दू दूग पर ही इसका विकास हा गया । दाना समुदाया म विदेशी तत्व सबसे ऊच होने का दावा करत है । X > < एग समय शत की लडकी से शादी कर सकता है, पर तु वह अप ती लडकी शख का नहीं दे सकता । निम्न वग, नियमित जाति के आधार पर संगठित है ।

— भारतीय ससृति एतिहासिक जवलाकन मोहनलाल विद्यार्थी भाग २, पृष्ठ ३०६ पर उद्धत ।

६ (क) बडि सु वर भिस्त अर वान जिय आनछो गौरी गरव ।'

— प० रा०, मो० २।५०५।२६

(ग) छत्रिनि इच्छा अछरी मिच्छणि इच्छति हूर । —वही, ४।७४।१।

(ग) वरि हूर सनूर सपूर तु सूर सनह गर वरमाल दव । — रा० वि०,

८ ८ देखिए—यम० प० रा० मो० २।५८१।२०, सु० च० ४।५।४

गौरी से नहीं मिल जाता, अपितु महाराज पथ्वीराज की ओर से युद्ध करता हुआ, वीर-गति प्राप्त करता है।<sup>१</sup> यही दशा मीर-महिमा के विषय में मिलती है जो अनेक प्रलोभन देने पर भी शाह अलाउद्दीन के पक्ष में नहीं मिलना और महाराज हम्मीरदेव के पक्ष से शाह अलाउद्दीन के विरुद्ध युद्ध करता हुआ खेत रहता है।<sup>१</sup>

उनके चरित्र का प्रमुख अवगुण निन्दयता मिलती है। रणमल<sup>१</sup> छन्द और कीर्तिलना में मुगल घग्गडा का बड़ा क्रूर चित्रित किया गया है। विद्यापति के शब्दों में—  
“इन घग्गडा को न ता जोरू-बच्चो की चिता थी और न लोक निन्दा का भय। वे सारे दिन खाते-पीने और मदिरा-मत्त रहत थे। दया उनका छूतक नहीं गई थी। वे जिस किसी भी दिशा में निकल जात थे, उधर ही गाँवों में आग लगा देने थे अवोध शिशुओं की हत्या कर टालते थे और स्त्रियाँ को ले जाकर बाजारों में बेच देते थे।”  
शाह गौरी द्वारा, उह आदर-महित बंधन-मुक्त करन वाले महाराज पथ्वीराज को चम्पु हीन करना भी इसी काटि में आता है।<sup>१</sup>

### नया मुस्लिम —

हिन्दू और मुस्लिम जातियों के अतिरिक्त आलोच्यकाल में घम परिवर्तन द्वारा मुस्लिम बनाए गए जागीरों की कर्ताचित पथक-पथक उपजातियाँ थीं। क्यामखारामा में फीरोजशाह तुगलक, माटेराव चौहान से उनके पुत्र करमचन्द को पाँचहजारी भू-सब प्रदान करने का आश्वासन देकर मुस्लिम घम में दीक्षित कर लेते हैं।<sup>१</sup> करमचन्द का नाम बदलकर क्यामखारामा रख दिया जाता है, किन्तु वह अपने नाम से चौहान शब्द पथक नहीं करना, और उसका नाम क्यामखारामा चौहान हो जाता है।<sup>१</sup> क्यामखारामा के वंशजों के नाम में भी चौहान शब्द जुड़ा रहता है और उनके नाम मुस्लिम आर हिन्दू पद्धति के नामों की खिचड़ी दिखाई देते हैं।<sup>१</sup> कदाचित् अन्य जातियों के हिन्दू भी मुसलमान बनने पर इसी रीति का अनुसरण करत होंगे।

सुन्नत कराकर विधिवत् मुस्लिम घम अपनाते से पूर्व, क्यामखारामा चौहान की

१ से ४—देखिए— पृ० १०, मो० १।२६।७१, ४० रा०, ८३१, वही, ८६७, १० छ०, ७

५ देखिए—‘कीर्ति०’, पृ० ६० ६२

६ ‘तुम कडकह चहुआन। नयन दिठ बका छडय।  
भ्रम पारि तेन चहुआन गहि। वधिय राजन कडिठ द्रिग ॥’

— पृ० रा०, वा० २३७३।१६३१

७ तुमक भय की बरहु न चित। यानों राशी ज्यो सुत मित।  
याकों करिही पचहजारी। तांचु कहत हों वीह हमारी।”

— क्या० रा०, १४०

८ से १० देखिए—‘क्या० रा०, १४२, वही, २४४ वही, ३२६



सदस्यों में किया गया है, जो अनि प्राचीन-कालीन सामाजिक दशा में सम्बद्ध है अथवा साधारण उल्लेख मात्र हैं। उदाहरणार्थ कथक में शिव का वष और आश्रमों के नियन्त्रा' कहा है तथा लोभ द्वारा दण और दानवा व साथ-साथ 'वनुराश्रम' का भी बशीभूत करने का उल्लेख किया है।<sup>१</sup> जाधराज द्वारा दानवा को कुल-धर्म और आश्रम-मर्यादाओं का उत्पाक चिह्नित करना भी<sup>२</sup> इसी श्रेणी में आता है। जोधराज ने महाराज चन्द्रमानु' और हम्भीरदेव' के राज्यकाल में चारा वर्षों तथा चारा आश्रमों का धर्म का पालन अवश्य दिखाया है जो आश्रमदान और उमवे' पूजना व सुशासन की मिथ्या प्रशस्ति मात्र ही है क्योंकि वीरवाव्य में वर्णित पराक्ष तथ्या में उसकी पुष्टि नहीं होती।

वीरवाव्य में कोई भी राजकुमार शिक्षा प्राप्ति के ब्रह्मचर्याश्रम को पच्चीस वर्ष की अवस्था तक विरहित शिक्षाजन में मागित करत नहीं मिलता। वे प्रायः ग्यारह या बारह वर्ष की अवस्था तक पढ़ाई लिखाई और शस्त्र-मवालनादि का ज्ञान प्राप्त करते उनकी इतिथी करत चित्रित किए गए हैं। पृथ्वीराज गुग्गम में कुछ ही दिन शिक्षा प्राप्त करत हैं।<sup>३</sup> महाराज राजमिह अपनी ग्यारह वर्ष की अवस्था को खेन-बूद, मल्लयुद्ध, हस्तियुद्ध, आदि का प्रेक्षण तथा नाटक-मगीनादि का रमास्वात्न में व्यतीत करत उचित किए गए हैं।<sup>४</sup> तत्पश्चात् व सर्व शत्रु नामक व्याग रागदाने हैं,<sup>५</sup> स्थावृत्ति स विवाह करने जात हैं<sup>६</sup> और तईस वर्ष की अवस्था में उनका सम्मान-निषेक हा जाता है।<sup>७</sup> महाराज छत्रमाल की बाल्यावस्था, अस्त्र शस्त्र-संचालन अथवा राहण और चौगान आदि खेलन में वचक्षण प्राप्त करन में ही व्यतीत होती है।<sup>८</sup> बनाफन प्राप्ति भी वादयावस्था में शिक्षाजन के स्थान पर आसेटाभ्यास करत मिलते हैं।<sup>९</sup> तात्पर्य यह कि किसी भी राजकुमार का हम गुरुकुल में जाकर पच्चीस वर्ष की वय तक शिक्षाजन करत नहीं पाते।

गृहस्थ आश्रम का व्यवहारत ता सभी वीरवाव्य-नायक पालन करत मिलत हैं किन्तु किसी भी ग्रथ में गृहस्थ का आश्रम की सजा नहीं दी गई है।

वानप्रस्थ का पालन सम्बन्धी धारण ग्रथ रूप में अवश्य विद्यमान थी। पृथ्वी-राजरागा में महाराज जनगपान परलाक साधना की कामना में मपलीक बदीनाथ में जाकर तपस्या करत प्रदर्शित किए गए हैं।<sup>१०</sup> हाँ उनकी वानप्रस्थ का अनुपानन में

१ स ७ दक्षिण—यम० 'वी० च०' १३१, 'ज० ज० १० ३० १० २०', ४४ वही, ६, '१० २०, ३३७ 'प० १०, मो० ११२८६०, २० वि० ४११६० ६४

२ स ११ दक्षिण—'रा० वि०, ३११०८, ४११ ४११ ३० प्र०', ६१३

३२ दक्षिण—'आत्मवृत्त', प० २६ २०

३३ "त चन्वो मय निज तस्मि द दिल्लिय जगनम।

मन वच श्रम बद्धी चन्वी, सावन जोग जागस।" — 'पू० रा वा०, ६०६१२०

सच्ची आस्था नहीं थी यही कारण है कि जब उनके प्रजा तब उनसे महाराज पत्नी राज के दुग्धवहार की शिवायत करते हुए शिल्पी राज्य पुत्र इस्तगत बगने या निवेदन करते हैं तो वे अपने धराग्यधारी साधिया के साथ शिल्पी पर आश्रमण कर देने हैं।<sup>१</sup>

असमय ही गृह-त्याग करने धराग्य का ढोंग रचाने वालों की धान प्रस्थ अथवा सत्यास आश्रमों में से किसी भी आश्रम के अंतगत स्थान नहीं लिया जा सकता जबकि ऐसे साधु सतों की आलोच्यकाल में वृद्ध सस्या प्रतीत होती है। पृथ्वीराज रासो में उन कारणों पर प्रकाश डाला गया है, जिनसे प्रताडित होकर अनेक व्यक्ति गृह-त्याग कर स्यासी बन जाया करते थे। उसमें दुःख आनाजी के गृह त्याग करके वनों में भटकने के सभावित कारणों पर प्रकाश डालते हुए कहता है—सू दारिद्र्य अथवा शारीरिक व्याधि से तो पीडित नहीं है, तुम्हें शत्रु द्वारा राय च्युत अथवा पत्नी द्वारा परित्यक्त तो नहीं कर दिया गया है मू किसी दबी आपद से प्रस्त सज्जना की दृष्टि में गिरा हुआ गुरु से शापित अथवा रसश्चरी पत्नी की मृत्यु के कारण तो जगलो में नहीं चला आया है।<sup>२</sup> कवि नरहरि ने नाना प्रकार की पदवियाँ माता और धनप्रदान करने वाले—शाह अबबर के निधन पर भी घर बार छोड़कर तपस्या में चले जाने पर जो अपनी आत्म प्रतारणा की है उसमें भी रासो में प्रदर्शित धारणा ही भलक रही है।<sup>३</sup> पृथ्वीराजरासो में युवराज रनखी को धराग्य लेने के लिए उद्यत चिपित किया गया, है जो इस तथ्य का अभिसूचन करता है कि आश्रमों के विहित काल की चिन्ता न करके युवक भी वानप्रस्थी अथवा स्यासी हो सकते थे।

सत्यास की पृथ्वीराजरासो में कति वज्य बताया गया है जिसकी पुष्टि

- १ सत्त तीन भर सुमर जे निज धराग्य सत्तप ।  
तिन बधी तरवार फिर बदलि भेप वर रूप । —'पृ० रा० का० ६२६।८३
- २ ' कि दारिद्र्य मु दुष्ट बुष्ट तनय कि भूमि सत्रु हर ।  
कि वनिता च वियोग दव विपदा, निर्वासिता कि नर ।  
कि जन मानस रट्ट जुष्ट जुगता कि आपत्ति सगुर ।  
कि माता अित रग भग सरसा आलिगता सुदरी ।  
—वही १०६।५४३
- ३ गिनक मरत न मुएउ नहि न ग्रह तजि तप कि हउ ।  
—जक० हि० क०', ३३०।६६
- ४ वरी चूकि सवि लागि राज सु वाज सजी व न मारग्य बदी सुआज ।  
जटा बधि लमोट अग तयेस महा मौनधारी वध पडवेस ।
- ५ वनिठ बद्ध बडबद्ध, कीय आचरण प्रेह वर ।  
अत सत्यास आचरण पच चव कलि न होइ धर ।

बहिःसाक्ष्या से भी होती है।<sup>१</sup> जब यह आधम वज्य ही समझा जाता था, तो फिर उमका पाता भी उसे सम्भव था। उ० गात्रली पाठ्ये व अनुमार मयाम वी वनि वज्यता नो शकराचाय न ताड दी थी, परंतु मयाम आश्रम केरत प्राप्ति तव ही मीमित कर दिया था। मध्यवर्तन म वानप्रस्थियो और मयामिया वी सख्या ता वम थी जबकि उनके बदले म अर्वादिक् धार्मिक सप्रदायो ने साधुओ की सख्या वन्ती जा रही थी।<sup>२</sup> केशवनाम के शब्दा म कलियुग के अंतगत मच्चे साधुओ के वम ही दशन होन है।<sup>३</sup> पथ्वीराजरासो मे वय फल पत्रो पर निर्वाह करत हुए निजन पत्रत-मुत्ता मे जा ऋषि तपश्चया रत दिखाया गया है 'वह वदातित ब्राह्मण ही रहा हागा।

आश्रम-व्यवस्था सम्बन्धी उपयुक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि आलोच्य काल म उसका अंशत ही पालन होता था। क्षत्रिय तुमार न ता शिक्षाजा के लिए गुग्गुला की शरण धते थे और न वे अनिवायत वानप्रस्थ या मयाम आश्रम म ही प्रविष्ट होते थे। मयाम को तो वलि वज्य ममभन वी धारणा व्याप्त थी। ममा म विविध प्रकार के वरामी और यागिया का समूह अवश्य विद्यमान था, वितु उनके वराम्य वी मूल प्रेरणा आश्रम-व्यवस्था के अनुपात अथवा अत प्रेरणा के स्थान पर अधिकतया सामाजिक वलेश हुआ करत थे। निजन वता या गिरि-वन्दराजा म तप करने वाले बुद्ध ऋषि मुनि भी थे, जा स्वच्छा मे प्राचीन ऋषि मुनिया के पव के अनुयायी मान जा सकत है।

### निष्पत्त —

आलोच्यकालीन समाज स्थूलत परम्परागत चार वर्णों म ही समष्टित था जीर इत वर्णों के वतव्य कर्मों म भी परम्परागत वतव्यों की ही प्रधानता थी। वण शब्द का अर्थपक्व अवश्य हो गया था जिससे उम ब्राह्मण योगी यती, सयासी जगम और भाटो के समूहो के त्रिण पट पण के रूप म प्रयुक्त किया जाता था, तथा शूद्रा की परम्परागत अठारह प्रकृति या श्रेणिया भी अठारह-वण कह दी जाती था। पट वण या पट-दरस तथा अठारह वण शब्दा का एकाधिक कथिया द्वारा प्रयोग करने से इसम सन्देह नहीं रहता कि ये शब्द रूढता म प्राप्त हा चुक थे। ब्राह्मण और क्षत्रिया का वण के स्थान पर जाति' बहकर अभिहित करन तथा शूद्रा का नेक उपजातिया का उल्लेख मिलने से आलोच्यकालीन समाज का हम वस्तुत अनेक जातिया के रूप म समष्टित पात है। उसम भाट, चारण, दसावी, जागरे, जाट, कायस्थ आदि मभी

१ स यासश्च न वत्तया ब्रह्मणेन विजाननेति ध्यामरचम ध्याम्यातम।

अग्निहोत्र गवालम्भ सयास पत्रपतिवम।

देवराच्चमुतात्पत्ति कत्री पच विवजयेत। — हिन्दू भारत वा त प० ७५३

२ देखिए—'हि० सा० वा व० इति० प० १२२

३ 'विररे दोसत है जगवन, जैसे कलियुग म वे सत। — 'वी० च० २१२२

४ देखिए—प० रा०' वा० २००७।१५५ ५६



जातियाँ भी विद्यमान मिलती हैं, जिन्हें निर्विवाद रूप से किसी भी वंश में नहीं रखा जा सकता। मुसलमान नव मुस्लिम और यूरोपियन लोग भी फिरगियों के रूप में समाज का अंग बन चुके थे। तात्पर्य यह कि सामाजिक संघटन की दृष्टि से हम विवेच्यकालीन समाज को उसकी आजकल की स्थिति से बहुत भिन्न नहीं पाते। विविध जातियों के कतव्य कर्मों में इस समय आशिक अंतर अवश्य मिलता है जिसे इन वंश और जातियों की सामाजिक स्थिति सम्बन्धी विवरण में स्पष्ट परि-लक्षित किया जा सकता है।

सामाजिक दृष्टि से हम ब्राह्मणों की मूध्य स्थान पर प्रतिष्ठित पाते हैं। उनके लिए प्रयुक्त किए गए द्विजवर सुर, भूसुर विप्र और भूदेव जसी जादराम्पद सजाओ में सदभगत प्रवृत्ति ही भलक रही है। उह अदडय और अवध्य समभने तथा उनकी सम्पत्ति के अपहरण का वज्य समभने से भी इसी तथ्य का प्रकाशन होता है। विप्र विद्वेषियों के कुल विनष्ट हो जाना तथा उनके दशना को शुभ समभने सम्बन्धी निर्देशों में भी उनकी सम्माय दशा का पता चलाता है।

ब्राह्मण प्रायः पीली घोतिया बाधकर ऊर्ध्वांग में उपराना ओढा करते थे। विविध शरीरांगों को बदन चर्चित रखने के अतिरिक्त उनके मस्तक पर तिलक लगा होना आवश्यक था जिसके अभाव में व अपशकुन के निमित्त समझे जाते थे। यज्ञोपवीत का धारण करना भी उनके लिए परमावश्यक ममभा जाता था। उनके कर्त्तव्य कर्मों में वेदाध्ययन अध्यापन प्रतिग्रहण और यज्ञ करने कराने की ही प्रमुखता थी। शास्त्रों के अध्ययन और अध्यापन में ही उनके कर्त्तव्य की इतिथी नहीं हो जाती थी अपितु आवश्यकता पड़ने पर वे शस्त्र ग्रहण करके घोर युद्ध भी कर सकते थे।

कुल गोत्र आदि की दृष्टि से वे अनेक उपवर्गों में विभक्त थे। कार्यधार पर भी उनके तीन भेद स्पष्ट परिलक्षित होत हैं—पुराहित वगैरे नमित्तिक यज्ञ कराने वाले या पण्डितगण और ज्योतिर्विद्या द्वारा जीविकाज्ञा करन वाला ज्योतिषी। पुरोहित यज्ञमान दुहिताओं के लिए वर अर्पण, तथा पारिवारिक विवादों में मध्यस्थता करने के साथ साथ राज्यकार्यों में भी पर्याप्त योगदान प्रदान करत और नरेशों पर नैतिक प्रभाव रखत पाये जाते हैं। पुराहित अभिचार क्रियाओं में भी विशेष दक्ष होत थे। इनकी सहायता से वे स्वयंजमानों की कार्यों का अभिमंत्रित करके शस्त्राघातों से सुरक्षित बनाने तथा शत्रु-दल को निरस्ताह और निश्चिष्ट करन का प्रयास करत थे। ज्योतिषियों को भी पर्याप्त सम्मान प्राप्त था। वे नरेशों को उनके भावी पराभव की सूचना देन और उनका भूत मति तत्र करन में सहाय करत नही मिलते।

क्षत्रियों की भी सामाजिक स्थिति बड़ा समुन्नत थी। उनके लिए प्रयुक्त राजपूत टाकुर धवनीम और द्विनिपति अभिषाण व प्रचरन में उनका राज्य-महात्ता से अटूट सम्बन्ध भलक रहा है। जातार्थ्यनाम में उनका उत्तम राजवण या राजकुल विशेष प्रसिद्ध माना जात था। यज्ञ तथ्य उल्लगनीय है कि उक्त चौहान चानुक्य और चालुक्य के प्रतिष्ठाताओं का सम्बन्ध ब्राह्मणों से मानों की धारणा प्रचलित

धी, और उनके चालुक्य वंश तथा च्देल वंश के नरेशों के नामों के साथ तो ब्रह्म या द्विज शब्द सलग्न भी मिलता है।

हुण्ट पुष्ट वाया प्रज्वलित दष्टि निक्षेप तथा बलखाती हुई मराडदार मूछा के कारण उनकी आकृति प्रायः बड़ी प्रभावशाली दिखाई देती थी। पगड़ी उनकी वेशभूषा का एक आवश्यक अंग थी। विवाह और राज्याभिषेक के अवसरों पर वे यथापनीत भी धारण करते थे।

शिक्षा की दृष्टि से उनकी स्थिति सतोपजनक थी। उनके द्वारा यद्यपि शास्त्र सञ्चानन और मल्लयुद्ध आदि भावी जीवनापयोगी कृत्यों में नपुण्य प्राप्त करने पर विशेष बल दिया जाता था तथापि वे विविध शास्त्रों के ज्ञाता एवं कला-कर्मों के ममत्त भी हाते थे। शिक्षा के कुछ अंगों में तो उनका ज्ञान ब्राह्मणों से भी बढ़ चढ़कर मिलता है।

क्षत्रियों के प्रमुख कर्तव्य कम उनकी सृष्टि तथा के अनुकूल सत्तों का और विप्रादि का संरक्षण, युद्धाय तत्परता संग्राम में प्राणों पर चा बचन पर भी उत्तम पीठ न दिखाना मकटापन स्वामी का साथ न छोड़ना और सर्वस्व यौद्धावर करके भी शरणागतों की रक्षा करना थे। शत्रु से युद्ध करने के स्वभावसत्तों को वे अपने किन्हीं विगत सुकर्मों का सुफल समझकर तत्पथ में सदैव सन्नद्ध रहते थे। उनकी धारणा रहती थी कि संग्राम में विजयी होने पर जहाँ हम जाना सामारिक एष्वर्षोपभोगों का अवसर मिलेगा और हमारी कुत्र कीर्ति दिग्गत तत्र प्रसरित हागी वही यदि देवगति में वीर गति भी मिली तो सामारिक भोगों में भी उत्कृष्ट स्वर्गीय विहार उपलब्ध हाग। इसी दृष्टि से उत्तम अपनी करवाला का शत्रु दलन, अभीप्सित के अधिवरण सातभू-रक्षण, अशिवत्व के विनाशीकरण जीवन-सर्वस्व और माक्ष प्राप्ति का जमोघ सम्बन्ध समझने की धारणा परिग्याप्त थी।

युद्धाय प्रथम बार अभियान करने का क्षत्रियों के लिए जीवन के स्वर्णिमावसर परिणय सूत्र में बंधन से कम महत्त्व नहीं होता था, जिसका वह बड़ समाराह और माक्ष मन्त्रापूर्वक शीर्षण करते थे। युद्ध में जयम नीतियों के प्रयोग जैसे— प्रसुप्त शत्रु पर रात्रि में अस्मात् जातमण शौचकर्म स्त्री गमन या पूजा कर्म में रत शत्रु पर आघात करना, दाता में निनका देवाए नृण यानाति विच्छिन्न हान के कारण पत्न रह जान जाने जयवा निम्न शत्रु पर प्रहार का वह अपनी मर्यादा के विरुद्ध समझने थे। युद्ध में पीठ दिखाने अथवा पनायन करने वाले क्षत्रियों को सबत्र स्वबुल का नाम ड्योने जाना जननी का दूध लजाना जाना तथा जारज सत्तान बहवर निन्दा की जाती थी।

क्षत्रिय, शत्रु के समक्ष दीन वचन बोलना और स्वपक्ष से संधि प्रस्ताव रखना अपनी जान के विरुद्ध समझने थे। इसके विपरीत घायल हुए शत्रु का भी रण प्राण सत्तान उभना उपचार करना और उमक स्वाभ्य गम पर दानादि दवर हृष प्रशट करना उनके चरित्रगत्य में अभिगूचित कर्तव्य। मकटापन स्वामी का साथ छोड़न वाल क्षत्रिया का—जारज सत्तान सूअर की भाँति भक्षामध्य का विचार त्याग

कर जीने जाता मूढ़े रगता व अयोग्य जीव तगागागी बतारा—उनकी दृष्टि स्वाभिमान भक्ति का निरूपण करा है।

शरणागतता का भंगनाम त तोटार शपना सबस्य योद्धावर कर्म त मूय त उनकी रक्षा वना क्षत्रिया का एक एका चारित्रिक गुण था जिसके कारण उ प्राय ही युद्ध मान तन पडन थे। वीरकाव्य में एकी प्रचुर घटाए मिलनी हैं जिनमें शरणागतवत्सलता के कारण ही क्षत्रिया न अपना ता मा घने राज्य जीव परिवार सभी की जादृति थी है। अनुदिन चरत रहा वाल युद्ध तारा व कारण उनकी पतिय का वधाय उक्त मन्व जात मिचोनी सनता रहता था और यह धारणा बद्धमूल ह गई थी कि क्षत्रिया की आयु वीम त्रप मात्र होती है।

निष्पत्त आलाच्यवान के आरम्भ में क्षत्रिया की स्थिति अत्यन्त उत्कृष्ट थी राज्य एक सग मेवा पर उनका पूण प्रभुत्व था जबकि शिक्षा के अनेक भ्रगा के वे साधिनार जाता होने थे। चाण्डिक विशेषताओं की दृष्टि से ता विश्व की वाई भी जाति उनकी समानता कर सकती है हम उगम से देह है। प्रजा रक्षण स्वाभिमान जीव स्वामिभक्ति को जीवन सरस्व समभवर विहसाने हुए करवाल धार पर नत्य करने वाले शत्रु के प्रति भी जगीम करणा पनाविन ह्य मपन आय ससृति के मून-तत्वों के सरक्षक तथा शरणागतता की रक्षा में सबस्व होम कर देन वात क्षत्रिया का विदशी आना-जाया व हाया पराभव होना निश्चय ही शिवतन की पराजय होने का विक्षोभ जाग्रत करता है—चाट इगके मूत में उनका मिथ्या कुनाभिमान समयोचित व्यवहार करने की दूरदर्शिता का अभाव जप स्वाभिमान एक पाररपरिक मनोमातिय जस कारण भी क्या न रह हा।

वश्य स्व तावत भीर थे। उनमें अस्ति यत्ति का अनुपालन करने वाले जन मतावलम्बिया की प्रधानता थी। उनका प्रमुख काय ता यापार था जबकि शी पालन वृषि, और सूद वत्ति द्वारा भी पित्तजन करत थे। यवसाय के आधार पर वश्य थाक उपवर्गा में विभक्त थे।

शूद्र वण यवसाया के आधार पर अनेक उपजातिया में विभक्त था। उनका प्रमुख काय निवण की रोधा करता ही माना जाता था। उनकी चाटाल आदि जातिया अस्पृश्य समभी जाती थी।

मिश्रित जातिया में स भाट, चारण दसोधी तांगरे और ढाढियो का प्रमुख काय प्रशस्ति गायन था। इनमें से भी वीरकाव्य में भाटा व सम्बन्ध में जदिक निर्देश मिलते है जिह ब्राह्मणा की तरह पूज्य दिखाया गया है। जाट जाति शौर्यादि की दृष्टि से क्षत्रिया व निवट थी जबकि अहीर और गूजरो के वतय कर्मों में क्षत्रिय आर वश्य वर्णा व कर्मों का सम वय मिलता है। कायस्य वीरकाव्य में मुख्यतया एक लेखन वत्ति जानी जाति दिखाई गई है।

मुसलमानों के लिए म्लच्छ अगुर और पिशाच आदि सनाथा का अधिक प्रयोग किया जाता था। व भी अनेक उपजातिया में विभक्त थे। युद्ध प्रियता और

स्वामिधम की दृष्टि से व बहुत कुछ अशा म क्षत्रियो जसी विशेषताजा से युक्त चित्रित किए गए है । हा, उनम स्वभावतया निष्कर्मण हान का दूषण अवश्य प्रदर्शित किया गया है ।

चतुराश्रम व्यवस्था का न तो पूणतया अनुपालन किया जाता था और न उसके आश्रमों के विहित काल का ही ध्यान रखा जाता था । क्षत्रिय-कुमार शिक्षाजन के लिए प्रायः गुस्कुलो में नहीं जाते थे । वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करने की धारणा अशत जीवित थी । नाना भौतिक आपदाजा से तस्त हाकर गह का त्याग करके वानप्रस्थ या म यासी बन जाने की प्रथा अवश्य जोरो पर थी ।

## खान पान —

मानव जीवन-यात्रा के संचालन पदार्थों में भोजन सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। आदिकालीन मानव माम जोर कच्चे फल-फलादि खाकर येन-येन प्रकारण अपनी बुभुक्षा शांत करता था, किंतु सम्भ्रता के विकास क्रम में यह स्थिति कितने दिन टिक सकती थी। फल-फल-जीवन के प्रत्येक अंग सुखी और रमणीयता लाने के सदृश भोजन को भी अधिकाधिक सुस्वादु और वविध्यमय बनाने के प्रयास किए गये। इनकी चरम परिणति में भोजन पकाने को एक विद्या के रूप में उपस्थापित करते हुए, उस एक स्वतंत्र कला का गौरवात्त पद प्रदान किया गया। भोजन पकाने में दक्ष रसोइये राजकीय पाकशालाओं के एक महत्वपूर्ण अंग बन गये। इन रसोइयों का पद तभी तक सुरक्षित रहता होगा जब तक कि वे खाद्य-पदार्थों में प्रयुक्त सामग्री के आशिक हेतु फेर से ही नित्य नूतन यंत्रण तयार करने की क्षमता रखते होंगे अतः यदि उनका अधिकांश समय नूतन पदार्थ पकाने की उधेड़-बुन में ही व्यतीत होता हो तो क्या आश्चर्य। अपनी बड़बोहट के लिए प्रसिद्ध नीम की पत्तियों का साग बनाने वाले पृथ्वीराजरासा में उल्लिखित रसोइयों में 'निस्सादेह उक्त मनोवर्ति का ही प्रति फलन है।

वीरवाय में यद्यपि जन सामान्य के खान-पान सम्बन्धी निर्देश भी मिलते हैं तथापि उनमें राजकीय भोजन के वर्णनों का ही प्राधान्य है। इन भोजनों में परोसे जाने वाले अनेक पदार्थ काल-कालिन हो गये हैं जिससे उनके रूपाकार के विषय में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। भोजन देने वाले नवीन खाद्य पदार्थ निर्मित करने के लिए किस भाँति व्यग्र रहते थे इसका परिचय सयोगिता द्वारा अपने रसोइया का दिए गए इस आदर्श से मिलता है कि तुम मदा-वेमन-जोर-दुग्ध-आदि में

१ नव-पल्लव-नीव-र-नाय-धरी-करई-गति-काटि-मु-दूरि-करी।

विविध पदार्थों का मिश्रण करके ऐसे भोज्य पदार्थ प्रस्तुत करना कि खाते वाने उनके नाम तक न जान सकें ।<sup>१</sup>

### भोजन-सम्बन्धी आचार विचार —

बौर-काव्य में भोजन पर्वों और खाते समय के आचार विचार सम्बन्धी कतिपय निर्देश मिलते हैं । पृथ्वीराजरासा में महारानी सयागिता अपने प्रघात का यह सावधानी रखने का आदेश देती हैं कि गाठ के लिए भाजन पकाने समय उम पर किसी नीचे व्यक्ति सम्भरत तूदादि की परछाई तक न पड़ने पाय ।<sup>१</sup> मुगल सना के सान्निध्य में भाजन पकाने सम्बन्धी वजताआ के कारण ही विद्यापति ने महाराज कीर्तिसिंह को फलाहार मान पर जीवन-यापन करने चिन्तित किया है ।<sup>२</sup> मुगल के साथ बैठकर भाजन न करने की प्रवृत्ति का संकेत परमालगमा में भी मिलता है । ब्रह्मा विवाह के अवसर पर राजकुमारादि ता मेवा आदि मिठाइयाँ का भाज्यता पर बैठकर खाते हैं जबकि मुसलमानों के लिए पुनाइ पका कर उनके सिक्किरा में भेजा जाता है ।<sup>३</sup>

पृथ्वीराजरासा में पाते हाता है कि गामय में नीचे दूई भाज्यता की गफे लादने लीक कर पयक्-पृथक् चौका में विभक्त कर दिया जाता था ।<sup>४</sup> अलग-अलग बैठकर भाजन करने की भाग्यतीय प्रथा की तत्त्वानीन गिनेनी यात्रियाँ न भी एक विचित्र प्रथा कह कर आलाचना की है ।<sup>५</sup> इन चीजों में पढ़ने के लिए आगन डातकर बाजीठें रख दी जाती थीं ।<sup>६</sup> जिन पर भाग्य पक्षय पगम जाते थे । बाजीठ या

१ "करिया अनेक पकवाने वानि, सबक न काइ जिन जाति जानि ।"

—'पृ० रा०', का०, १६८८।१८

२ 'कीजहु बहु आचार सा, दरसन लहे न नीच ।' —'प० रा०', का०, १६८६।१७

३ बटुल ठाम फल मूल भण्डिअ, तुलुक सग सचार परम कट्टे आचार रधिअ ।

—'कीर्ति', पृ० ७०

४ 'मवा बहु पकवाने भरानिय । सब ठकुराइम भाजन किनव ।

तुरकन काज पुलाव पकायव । सिक्किर सिक्किर सबक पडुचायव ॥'

—'पर० रा०', १७।३। ३२

५ 'गा गोमय चौका । विचित्र चिप्रे अनि चापक ।

लीक धवल घर हरित । घरी सिगरी भरि पावक ।

—'प० रा०' का० १६६।१७

६ देखिए—'अल्हेरनीज इणिया', प० १८०

७ प० मोहनलाल विष्णुलाल पाठया के मतानुसार बाजीठ बहु पीड़ा हाता है जिन पर भोजन के घाल रखे जाते हैं । —दे०—'पृ० रा०', का० गमामार पृ० १२८

८ "कीमल आसन मडि । मडि बाजीठ अग्र मुप ॥"

—'वही', १६८

चोरियों पर रगड़ भोजन करने की प्रथा मौर्य युग में भी प्रचलित थी जिसका मगस्थनीज ने उल्लेख किया है।<sup>१</sup> नीति व्यवहार में तो पातिया जादि में ही भोजन परोसा जाता था किन्तु गाठ जादि क अमर पर उपास स्थान नूतन पल्लवों से निर्मित तथा बिना छिद्र वाली पत्तों की दो तलत था।<sup>२</sup> मग की आर मुद्र करके बटना उत्तम समझा जाता था।<sup>३</sup> भोजनारम्भ में त्रिप्रा द्वारा आचार मन्त्र तथा श्री रघुनाथ चरित के पठन का भी निर्देश उपलब्ध होता है।<sup>४</sup>

दिनाई (विप) से सुरक्षा के लिए भोजन के समय उपस्थित रहे जान वाले पशु पक्षी —

पारिवारिक मग राजनीतिक पद्धति के फलस्वरूप तरणाटि के भोजन में विप मिला होना की आज्ञा रहती थी। मग निदान कुछ एत पशु पक्षियों का भोजन स्थल पर रत कर दिया जाता था जो भोजन के विषयक हात की रक्षा में विभिन्न प्रतिप्रियाएँ करके रहस्यारुघातन कर देते थे। पशुगजरागा में कुक्कुट नवला पाच कपि हिरण्य मग गुण मार तथा चकोर का मग परीक्षण के लिए उपलब्ध बनाया गया है क्योंकि त्रिपावन भोजन को दग्ध ही हम की गति मग मयूर के कटु श श्लोच चोच एत मग क अश्रुपात कपि द्वारा भोजन त्याग गुण के वमन नवत जीर कुक्कुट के मित्र भाव तथा चकोर दपति के परस्पर मग त्याग का अवरोधन करके यह सहज ही पाता जाता था कि उसमें दिनाई (विप) का मिश्रण किया हुआ है।<sup>५</sup> छत्रप्रसाश के उदाहरण से भोजनस्थल पर रहे जान वाले पशु-पक्षियों की उपयोगिता भली भाँति सिद्ध भी हो जाती है। महाराज चपतिराय से आन्तरिक विद्वेष रखने वाला पहाड़ सिंह उन्हे भोजनाथ निमन्त्रण देकर उनके भोजन में विप मिला देता है। उनके भोजन को देखकर गुण जीर सारिका चिल्लाने लगते हैं तथा चकोर अपन मन्त्र बंद कर लत है।<sup>६</sup> पक्षियों के इन चरित्रों को देख कर चपतिराय के साथी भीम

१ देखिए— इण्डिका वाइ मगस्थनीज एण्ड एरियन' पृ० ७२

२ 'नूत नूत पल्लव पक्षारि पनावलि मडिय ।  
धोय तोय विन छिद्र धरे दोना दिग ठडिय ॥ — पृ० २०, का०, १६६५।७०

३ देखिए— पृ० २०, का० १६६५।७०, वही, १६६५।७१

४ इस होत गति मग मोर कटु सबद उचार ।  
रोवत श्रीच कुरग सुकपि छडत आहार ।  
सूआ वमन करत निकुल कुक्कुट मित्राद ।  
एसे चरित करत जानि आगम दिनाइ ।  
चकोर परस्पर हित रहित, कहत चद पागण्य लहि ।

तिहि काज आनि रण्यत इनहि भूपत भोजन सात महि ॥"—वही, २१५७।३३६

६ 'पनवारी चपति को जानी । देखि सुवा सारो विग्नरानी ।  
लोचन मूदि चकोर डेरान । जानि गय जे चतुर सयाने ॥"—छं० प्र०, ५।१०

बुढ़ला को पहाउ सिंह के दूषित मोतोभाजा का भमभन दर नही लगनी, और वह उनकी प्राणरक्षा हलु भोजन के थाला का वरतनर स्व पाणात्मग वर होता है।<sup>१</sup> यह तथ्य ध्यातव्य है कि इन पशु पक्षियों की उपयागिता इस दृष्टि से और भी बर जाती थी कि दिनाई एक प्रकार का एसा विष होता था, जिसका निपाकन भोजन करन वाक पर तुगत प्रभाव न पड कर शन शन दुःप्रभाव पडता था और एगी दशा म यह भी चाल रही हा पाता था, कि त्रिप किमन दिया है। इसका किसी औपध से उपचार भी नही किया जा सकता था।<sup>१</sup>

### सामान्य दैनिक भोजन —

भूषण न तीर चार भाजन करन जानी वगम जगता म मात्र तीन वर खाकर निर्वाह करत चित्रित की है<sup>१</sup> जिसम चान हाता है कि भाजन तीर चार दिया जाता था। प्राण कान का भोजन कलक बहनाता था। छत्रप्रनाश म महाराज छामाल म्ब माता के निधन पर अश्र पात करत हुण कहत है कि माता के भाज म मुभ प्राण-काल कनेऊ कौन दिया करगा ? कनि चद<sup>२</sup> और मान<sup>३</sup> त शिगुजा के भाज म दनि तदुल, पून शकरा मिश्रित खीर और मिष्टान सम्मिलित दिलाण ह।

जन सामान्य के भाजन म रावनी और भात की प्रधानता रहनी थी। त्रि चद न राजकुमारिया द्वारा दुग्ध शकरा मिश्रित भात खान के स्थान पर गूजरिया रावनी पर निवार करत चित्रित की है।<sup>४</sup> जाल्हखड म ता चाह विवाह का अवसर हो अथवा मत्स्य का प्रत्येक अवसर पर भात का खाना अथवा उसका परित्याग करना

१ 'छ० प्र० ५।११

२ 'दिनाई एक प्रकार का विष होता है जो शर जयना तेंदुण की मूछा के बाल बाछू के हक साप के मुँह म भर लिए गए चारल अथवा मत्स्य से बनाया जाता है। उस विष को मिला देने से खाने वाला कभी तो अतिशीघ्र पर तु अधिनतर घुल घुलकर मरता है। यह त्रिप किमी औपध से अच्छा नही होता और कुछ दिना म अपना घातक प्रभाव दिलाता है। इसी कारण इमे दिनाई कहत है।

— छ० प्र० ५० ३७ पर पा० टि०,

३ दखिए—'शि० घा०' छ० ८ ६

४ स ६ देखिए— छ० प्र० ६।५, ५०१०, का० २२०।३०८, रा०वि०' २।१८६

७ राबडी—याजर या गहू चन के जाट को शीत या गढठ म घानकर कुछ दर तब धूप म रम दत है। उस मन्द अग्नि पर उबालने मे जो पदाथ तयार हाता है उसे राबडी कहत है—शोधक

८ 'पय सक्करी सुभत्ती एकत्ती काय राय भायमा।

कर कसी गुज्जरीय, रवरिय नव जीवनी ॥

—'स० ५० रा०', ५० १६, छ० ६



प्रदर्शित किया गया है। ऊदल और मलिरान क विवाहावसरा पर बड-बड बडाहा म भात तयार कराकर परोसा जाता है ।' उसमें प्रसिद्ध वीरा के मरण पर राजा और प्रजा सभी को भात न पानर शाक मनात दिलाया गया है ।' आल्हवा के म निर्देश उत्तरी पूर्वी भारत क नियासियो के भाजन म भात का प्रमुख स्थान दियात है ।

भोजो के अवसर पर पकाए जाने वाले भोज्य पदार्थ —

पृथ्वीराजरासा म इच्छिनी विवाह क अवसर पर दूध, घत जोर अग्नि म पकाए हुए भोज्य पदार्थ माम साग जोर फल परास तात है ।' महाराज पृथ्वीराज भी अपन नविय क भोजन म घत दूध जल और जाग म पकाए हुए पदार्थ माम साग अचार जोर पद्यावरि का उपभोग करते दित्ताए गए है । प्रस्तुत सदमों के अतिरिक्त उसमें पानीपत क मदान म रची जान वाली माठ का विस्तृत वर्णन किया गया है । इसमें परोस गए पदार्थों की नामावली स तात हाता है कि गोठा म कच्ची रसाई (बिना तल पदार्थ) पक्वान मिष्टान चरवा भात खीर दाल साग माम, और पद्यावरि की परसन की जाती थी । परमालरासा म राजपुमार ब्रह्मा का टीका चदन के समय भी प्राय इ ही पदार्थों का परोसा जाना प्रदर्शित किया गया है ' जिससे स्पष्ट होना है कि इन भोजो म पूर्वोक्त प्रकार के भाज्य पदार्थों के सम्मिलित रहने का प्रचलन था । इन भोजो के वर्णना से अधानित भोज्य पदार्थों के वर्णनाय जाने पर प्रकाश पडता है —

(क) पक्वान और मिष्टान—अगा कचौडियाँ खुरमा गिरीरा गुनगुल गूजा घेवर, जलेबी पापड पूडी पेठा फेनी बडई माठ भाडे मालपुआ राटियाँ सुचई सकरपारे सिघारे सुखपूी, सूते और रोब ।

(ख) मदा के फल—रासोकार के अनुसार मदा म सुमन गधें मिलाकर

१ देखिए— आ०, २७।१६७ १६२।१६२०

२ खवरि सुनी जब राजा जचद सुद्ध त जूझि गभा रन जाय ।

परो सनाका सब लमिकर म काई रध भात ना खाय ॥ — जा० १४।६७

३ देखिए— प० रा० का० ५५६।५६

४ भाजन साल पधारि, सग प्रधीराज सुभट सत्र ।

घत पक्व जल पक्व, पक्व पावक परसि तब ।

दूध पक्व पक्वान मस रस भनि जमय ।

साक फलणि सधान छ रस यजन वनेय ।

तिन पक्व पद्यावरि स्वाद सुचि अनजात पचि पियत ही ॥

— प० रा० मो०, १३।४५

५ परमानरासा म पृथ्वीराजरासो क ही छद यत्र-तत्र पाठान्तर के साथ दिए गए हैं ।

—देखिए— पर० रा०', ३।४५ स १३।५५

ने महाराज वीरसिंह देव की बनिनाएँ क्षुद्रघटावली पहन चित्रित की है। कवि मान न सरम्बती<sup>१</sup> जोर रूपकुवरि<sup>२</sup> मेखना धारण किए प्रदर्शित की है।

कवि मान ने किकणी और क्षुद्रावली परा के भी आभूषण दिखाए है<sup>३</sup> जिससे स्पष्ट होता है कि साधारणतया किसी भी किकणी या घटिका पर आभूषण को किकणी की सजा प्रदान की जा सकती थी। किकणिया ता नूपुरा म भी जुड़ी रहती था<sup>४</sup>—कवि मान ने भी हाथिया का घुघरु लग नूपुर पहन चित्रित किया है<sup>५</sup> किन्तु उनका प्रयोग कधनी म ही अतिव हान व कारण किकणी कधनी के ही जय म अधिक था<sup>६</sup>।

बाहु—बाहु या बाजुआ म बाजूबद और टाट नामक आभूषण पहने जाते थे। कवि चन्द मान<sup>७</sup> और स्वात<sup>८</sup> ने बाजूबद का प्रयोग दिखाया है जबकि आल्हवार न गजमातन बाजूबद के साथ-साथ आठ गांठ चाल नाड भी पहने चित्रित की है।<sup>९</sup> कवि सुन्दन ने टाट परा जोर बाजूबद का प्रयोग दिखाया है।<sup>१०</sup>

बलाई—बलाद म बूढनी पयत वगन वनय चूरी चूडिया, पट्टी गजरा, वगुरी, जगनिया, बगलिया और पट्टलिया नामक आभूषण धारण किए जाते थे। कवि चन्द ने बलय, वगन, चूरी और पट्टी,<sup>११</sup> मान ने चूरी, गजरा, पट्टी और वगन,<sup>१२</sup> तथा आल्हवार ने पट्टी और वगन का उल्लेख करने के साथ-साथ चूडिया के जाग अग लिया पीछे पछनिया, तथा मध्य म बगलिया धारण करने की प्रथा दिखाई है।<sup>१३</sup> कवि सुन्दन ने वगुरी, चूडा, पट्टी, चूडिया कवण, गुजरी और पट्टी नामक कनाइया के आभूषण का उल्लेख किया है।<sup>१४</sup>

१ स ४६०—प्रम० वी०, च० २२।६६, 'रा० वि०' १।१६ वही ७।१८, १।१४

२ 'स्वर्गीय राष्ट्रल माहृत्यायन न किकणी लग नूपुरा का उल्लेख किया है—

— राजस्थानी रत्नवास, प० ८

३ "नपुर मु पाइ घुघरु निनाद, रतभनत चतन जनुरदत बाद।

— रा० वि०', ८।१०

४ "कुच निहार क बुकिय। भुजनि वधे बाजूबध।

— 'प० रा०', वा० १६७६।१४२

५ देविका— रा० वि०' १।१८, वही, ७।१६ 'ह० ह०, स्वा० ६

६ "जाठ गांठ की टांडे पहिरे बाजूबद भूमि भूमि गहि आय।'— वा० ६३।२५

७ "बाजूबद बराबर छिनिय। वगुरी चूरा तत न गिनिय।

गान पट्टी छिल निनादय। चूर चरि चुरी चनादय।"

— 'सु० च०, ६।२।४१

८ से १४ देविका— प्रम० 'प० रा० वा० १६५।२५१८, १०८५।१८४, रा० वि०, ७।१६, आ० १६३।२१ २४

९ 'सु० च०, ७।२।४१

उंगलियाँ—हाथ की उंगलियाँ में मुद्रिका जा रही, भ्रमकन, हृष-पान और छलने पहन जात थे। कवि चन्द<sup>१</sup> बेशक<sup>२</sup> आरमान<sup>३</sup> ने मुद्रिकाओं का प्रचलन दिखाया है जबकि जाल्हवार ने बीम मुद्रिकाओं के साथ साथ छल्ला का भी प्रयोग उल्लिखित किया है। मूदन न छल्ला अगूठी जा रही और गजोर लगे भ्रमकन नामक उंगलियाँ के आभरण का उल्लेख किया है।<sup>४</sup> कवि जाधवराज ने हृष पान पर हृष फून नामक आभूषण का प्रचलन लिखा है जो हाथ के पृष्ठभाग पर पहना जाता था।<sup>५</sup>

पर—परा के अगूठी में जनकट या जगाट और ग्याट तथा उंगलियाँ में बीछिया जोर छल्ल पहन जात थे। ग्यल्ला के आभूषण में भ्रमकिया, भ्रमकन पायल शुभ्रमती किञ्चित् नूपर ताण्डर जहरि घघुर छल्ल पायजय नहियाँ गुजरी जोर घोध पतान का प्रचलन था। कवि चन्द ने अनोठे भाँभरि नूपुर जहरि घघुर बीछिया ग्याट जोर तोडर नामक आभूषण का उल्लेख किया है। इसी भाँति कवि मान ने जाण्ड बीछिया भाँभरि पायज शुभ्रमती जोर किञ्चित् का<sup>६</sup> बशक ने नूपुर गहरि जोर घाचा का<sup>७</sup> ग्यात ने पायज छल्ल और छल्ला का<sup>८</sup> आह्वार ने जनकट पायज नूपुर बीछिया गहियाँ जोर गुजरी का<sup>९</sup> तथा मूदन न पायज पग पात नूपुर चुटकी केन भाँभ जोर गुजरी नामक आभूषण के प्रयोग पर प्रकाश जाता है।<sup>१०</sup> नूपुरों के विषय में यह तथ्य उल्लेख्य है कि वे उंगलियाँ में पहने जाने वाले बीछिए नहीं जाते थे। विधु घघुर या विविणिया में गुनग टाँगा में बाँधा जाता था आभूषण होता था जिसे हाथिया की टाँगा में भी बाँधा जाता था।<sup>११</sup> कवि चन्द के माध्यम पर कहा जा सकता है कि विधु मियरा जोर घाघीण-घाघाण अगती आभूषण घाघण करन की सजापूर्ति मानकन (जरीण के समीप कम फुनगन कहा जाता है) के फता का विविध आभूषण का रूप दर्शन कर सती था।<sup>१२</sup> फता का टिठू और मुगनमा मियरा शरा भिन्न अंग पर प्रयोग मियरा है। टिठू मियरा उट

- १ म ८—दणिल प्रम० प० ग० का० १०८३।१६० वी० प० २२।३५  
 रा० वि० १।१६ जा० १८३।८, गु० प० ६।२।४१ ६० रा० ७।६  
 प० ग० ६६।१६१ प० ग० का० १६६६।६५ १०२६।६० प० रा०  
 १५।१८० वहा १०८५।१८१ वही १७७६।१४२
- २ म १०—दणिल—प्रम० ग० वि० १।१६, १६ ७।१६ २० वी० प० २२।८५  
 १५ ६० ६० १० जा० १६३।५ वहा ४६०
- ३ ग्यात जो पगता मु नूपुर। घुटरी फून अतो गुभूषण।  
 त रि नीना गुनरा टाँटन। व भूदन म एष न लुट्टिय। — गु० प० ६।१।६१
- ४ नूपुर गु पा घ घघ निता रनभाज घनत त्रु वन वा।  
 — ग० वि० ८।१०
- ५ गम गत जसाम मरि तान मरु ग नूपुर्या।  
 मरुतन बरुन नवगा। पधरिय नैव धावति। — गु० रा०, १।१।७०

हाथ की उँगलियाँ म पहनती थी, जबकि ग्वाल ने मुस्लिम स्त्रियाँ को उन्हीं पगों म पहने चित्रित किया ह ।

पुरुष—धीरवाक्य स जातार्थनाम म पुष्प भी स्त्रियाँ की भाँति जाभरण प्रिय सिद्ध हान ह । कवि चन्द्र न महाराज की पराजय म दुःखित नर नारियाँ का जाभरण हीन लिगाकर पुष्पा द्वारा जाभूषणा क प्रयोग पर प्रकाश डाला ह ।<sup>१</sup> कवि सुन्दन न भी सनिवा क शरीर जाभूषणा स मलित प्रदर्शित करके पुष्पा की जाभरण प्रियता का प्रकाशन किया है ।<sup>२</sup> जल्द्वेदनी के विवरण स गात हाना है कि—पुष्प काल बाहु तथा हाथ और परा की उँगलियाँ म जाभूषण पहना करत थ ।<sup>३</sup> पुष्पा के काना म कवि चन्द्र ने स्वाति सुत नामर जाभरण का प्रयोग दिमाया<sup>४</sup> है जबकि परमालरासा<sup>५</sup> और जाह्नवण<sup>६</sup> म श्रवणा म बुडना का प्रयोग पल्लित किया गया है । हाथ म स्वर्ण के बडे पहनन का प्रचनन शिशु और युवक दाना म था । परमानरासा म गण बाल्हा ऊल का मनान क लिए मुक्तामानाण और कपे भेज जान ह । महा रानी मल्हना बरह वर्षीय बनाफन प्राताशा का स्वर्ण उड पहनात चित्रित की गई है ।<sup>७</sup> अथन भी जाभीवशधारी बनाफन स्वर्ण कड पन्न मितत है<sup>८</sup> तथा ऊदा जपन सनिना का प्रलाभन दना है कि 'विजयी हान की दशा म म तुम्हार हाथा के लिए स्वर्ण कडे बनवा दूगा'<sup>९</sup> जिसस पुष्पा द्वारा उडा क प्रयोग पर प्रकाश पडता है ।

पुष्प भी स्त्रियाँ की भाँति अपनी ग्रीवाजा म मुक्ता मानाण पहना करत थ जिसका पृथ्वीराजरागो<sup>१०</sup>, परमालरासा<sup>११</sup> और जाह्नवण<sup>१२</sup> म चित्रण मिलता है ।

१ विन आभा नर नारि सब । विना तज ग्रह भूप ।<sup>१</sup>

— 'प० रा० , का० २३८८।११

२ (क) "बहु शीम द्विच्छ अति लाल लाल जनु उद्र बहु करि रहिय जाल ।

बहु भूपन कचन के लिपत जुगनु जमात चमकत द्विपत ।

— सु०च० १।४।६

(ख) "मते बहु कचन भूपन जग । जडे मनु वाहन अग ।

पडे रन रग अमग सुधीर । ठडे ह भूमि जहा जदुनीर ।' — वही २।३।८

३ 'The men wear articles of female dress, they use cosmetics, wear ear rings, arm rings golden seel rings on the ringfinger as well as on the toes of the feet' — 'Alburuni's India' p 181

४ 'श्रवण विराजत स्वाति सुत । करत न बन वपान ।'

— प० रा० का० १५६-१०३

५ स १०—दे० 'प० रा०' ५।५४ आ०, ३६।८, पर० रा०' १६।१२, 'जा०, २६।६, ३६।३६ ७७।१२

११ से १३—देखिए—प्रम०, प० रा०' का० १२।६।११७ 'प० रा०' ५।४३, 'आ०' ४७।२०,

शिशुभा के कठम केहरि नगयुजन मणिया का कठुना पहनाया जाता था।<sup>१</sup> क्षत्रिय योद्धाओं में अपनी एक टांग में मोने का बड़ा या जजीर पहनने की भी प्रथा थी। कवि चंद ने उमें पवग<sup>२</sup> और सकर<sup>३</sup> तथा कवि मान न टोडर<sup>४</sup> के नाम से अभिहित किया है। कवि सूतन न दिल्ली की लूट में म्त्रिया के साथ माध पुरपा के भी जाभू-पणा की लूट का वणन किया है जिसमें जान है कि वे—सिर पर कलंगी तुरा, भीर और सिरपच, काना में कुटल मोती गुरदा गाखर और रक्षा के मनके ग्रीवा में तोटा, कठी रत्न मालाए चौकी और साकरें, हावा में बटा पट्टुची हथ साकर और छाप, कटि में क्विनी और बाधनी तथा पगा में पानी धारण करत थे।<sup>५</sup>

### शृंगार प्रसाधन

मानव स्वभावतः शृंगार प्रेमी है। निज मसग में आन खानी सभी वस्तुओं का एक विशेष कलात्मक साज मज्जा से युक्त देखने की उम महजाकाशा रहती है। उमकी इस मोदय विपासु अतः पिट न म्त्रिया की नमगिक शृंगार प्रियता को जोर भी अधिक अभिवद्ध किया है। वे आदिम युग से ही प्रकृति प्रदत्त मौकुरमाय और लावण्य में चार चांद लगाने की जाकाशा से विविध शृंगार-उपायों का प्रयोग करके स्व प्रेमिया की हृदय हारिणी बनने की चेष्टा करती रही है। वीरकाव्य की नायिकाएँ राज कुमारियाँ और रानियाँ थीं जिससे उह सभी प्रकार की शृंगार सामग्री महज उपलब्ध थी। दास-दासियाँ के बाहुल्य के कारण वे गह-कार्यों की जोर से निश्चिन्त भी रहती

१ 'प० रा०' का० १५१।७२६

२ "फुनि कहा प्रथिराज नप पाव पवग परटिठ।

सेइ नही मन सक मल निटठ च्चाइय हटिठ ॥'

— प० रा० का०, १२१६।११६

३ 'मकरह हेम तोलह त्रिसत्त। निय पाय कटिठ किय धीर दत्त।'

— वही २०३२।८३

४ 'पल बावन टावर रक्क पय। बापा रावर अनुतबल।'— ग० वि०' २।२४०

५ म्त्रियों के आभरणों का सूतन न छत्री जग के इकतातीमवें छत्र में वणन किया है। इसके आगे उहान अधानिनिन छंद दिया है—

कनकी तुराँ जोर जग मिरपेच मु कुटन।

माती गुट्टा और गापर र्गक्ष मन ॥

तोरा कठी मान रत्न चौकी बट साकर।

बेग पट्टुची कटन मुमग्नी छाप मुभाकर ॥

क्विनी कौधनी पजनी हथ मकर भकर मुटे।

आभरन नर यत्त नाति क पट्ट बुट टूट लुट ॥

— मु० ष०, ६।२।४२

थी, जत अपनी माज मज्जा पर उन्हें इच्छित समय लगाने का पूण अवकाश मिलता था। बहुपत्नी प्रथा के प्रचलन ने उनकी यह अलकरण प्रियता, वदाचित उनके जीवन का मून सखन ही बर दी थी। पति प्रेम पात्री बनने के लिए सपत्निया म अभिनव शृंगार प्रणालियाँ अपनाकर एक दूसरी से बढकर आकषक प्रतीत हान की प्रतिद्विदिता सी व्याप्त रहती थी। पध और उश्मव पर साधारण परिवार की स्त्रिया भी जनक प्रकार के शृंगार प्रमाधन प्रयोग करती चित्रित की गई हैं।

स्त्री शृंगार के सदभ म बीरकाय प्रणेताआ ने सोलह शृंगार करने का बटुश उल्नेय किया है, जिसम स्पष्ट होता है कि शृंगार क्रिया क सोलह भग स्वीकार किए जात थ। कवि चन्द्र न शशिप्रता,<sup>१</sup> इ द्रावती,<sup>२</sup> प्रियाबाई,<sup>३</sup> सयोगिता<sup>४</sup> तथा दासियाँ<sup>५</sup> सातह शृंगारा स मडिन प्रदर्शित की हैं। रामाकार के अतिरिक्त कवि जटमल न बादल पत्नी,<sup>६</sup> परमान रामाकार न मल्हना<sup>७</sup> तथा जाल्हकार न गजमानिन 'नरवर गढ की मानिन और बीरीगढ की स्त्रिया'<sup>८</sup> द्वारा सोलह शृंगार करन का उल्लेख किया है।

सोलह शृंगारा के बीरकाव्य म प्रचुर निर्देश मिलत हुए भी न ता किसी बीर कायप्रणेता न उनकी तालिका दी है और न उनके द्वारा वर्णित शृंगार प्रकारो की सख्या ही निश्चित रूप स सोलह बटनी है। समृत्त साहित्य म भी उनकी देश और काल के भदानुसार बपम्ययुक्त तालिकाए मिलती ह। श्री अत्रिदेव विद्यालकार न 'सुभा पिनाबली', 'उज्ज्वल नीलमणि और उत्तर मेघ के जाधार पर षोडश शृंगारा की जा तीन सूचियाँ दी है,<sup>९</sup> उनम—१ उबटन २ स्नान ३ सुवसन ४ तिलक-रचना ५ कश पाश रचना ६ चरण राग या आलकनक का प्रयोग ७ भ्रगरागो से शरीरागा का चचित करन और ८ ताम्बूल सेवन को तीना सूचिया मे स्थान दिया

१ "सुवन छुद्र घटिकाणि । पाटस वपानय ।" — प० रा०' का० ८०४।३१६

२ 'सिगार साटप कर । मुहस्त दपन घरे ।" —वही १०२५।७

३ 'पट दून त्रवगुन म वरन । सिनगार अभूपन एकहन ।" —वही ६५३।८८

४ 'सुवीर चारु सारस । सिगार मडि पाडस ।" —वही १६५५।२५२० और भी ६० वही, १६७५।१०५ १६७७।१२६

५ ६० वही, २११२।४८

६ 'नब सत साजि सजाइ नारि वाल पै आई ।" —'गो० क०' छ० ११३

७ 'यह कहन ग्रथ मनिजान वर, ये पाडश सिगार गनि ।'

—'पर० रा०', १०।३३५

८ 'वारहु भूपण सज सुहागिल ओ करिके मोरहु सिगार ।' — आ०' ४४०।६

९ १० दक्षिण—वही, ४४०।६ २३६।६

११ ६० —'प्राचीन भारत के प्रमाधन', प० ४० ४१



मालह शृ गारा के विषय म यह तथ्य भी निवदनीय है कि इन बाह्यारोपित सोलह शृ गारा के स्थान पर, स्थिरमा के शरीर म सोलह प्रवृत्ति प्रकृत शृ गार भी स्वीकार किए जाते थे। कवि चन्द ने महारानी इच्छिनि क गुक के मुत से (जो सयो गिता के वामकोनि गह म निवास का सीमाव्य प्राप्त कर आया था) सयागिता के- कुच, भुजमूल नितव एव जघाआ को पृथुल उमक कर, कटि, और कमलस्थन (गुह्याग) को व्रण, नग हास कण और माग को उज्ज्वन तथा कुचाग्रभाग कच एव दृगतिना का श्यामवण क बलबाकर, उमकी तन बहारी सोलह शृ गारा का आकर प्रकृत की है।<sup>१</sup>

वीरकाव्य म उपलब्ध निर्देशा क आधार पर सोलह शृ गारो पर प्रकाश पालन स पूव यह निवचन करना भी आवश्यक है कि, उसम हाथ म कमल-पुष्प लेना, दन मजन, होठ रचान आदि का चित्रण नहीं मिलता। टमी भाति मिम्सी का प्रयाग भी शृ गार-वर्णन के प्रसगा म अनुत्तिर्नासित है। मुस्लिम लेखक अबुन फज्जद द्वारा भी मिम्सी क प्रयाग का सोलह शृ गारा म परिगणित न करना विशेष महत्वपूर्ण है कयाकि इम प्राय मुगल सम्यता का ही दन स्वीकार किया जाता है। वीरकाव्य म भकुटिया को कञ्जल रग्या से श्याम और वश्र बनान तथा कपाला पर चन्दन चित्रा की रचणा करने क एा अभिनव शृ गारा का भी चिाण मिलता है। स्त्रियो की भाति पुरप भी इनम कई प्रकार क शृ गार करने मिलत है किन्तु विवेचन सीक्य की दृष्टि स पहन स्त्री शृ गारो पर प्रकाश डाला जा रटा है।

(१) उबटन— उबटन मानन का मूलाद्देश्य शरीरामा म मादव लाकर उमकी कातिवधन करना हाता है। कवि चन्द ने इच्छिनि<sup>२</sup> और शशिव्रता<sup>३</sup> शृ गारागम्म मे म्ब-दासिया से उबटन मतवान चित्रित की है।

(२) स्नान— स्नान का नत्यिक कम के स्थान पर सोलह शृ गारो म परि कथित करने का मूलकारण कथाचित यही है कि उसम शरीरामा की काति निरार उठती है। इच्छिनि,<sup>४</sup> शशिव्रता<sup>५</sup> उबटन मतवान के पश्चात स्नान करती हैं। स्नान क

१ विमल पूव सित भगित। धान चव एक-एक प्रति।  
पाति पाइ कटि कमत। मथल रजे मुक्षम जति।  
कुचमडल भुजभूल, नितप्रजघा गुरअत्त करज हाम गोधान माग उज्ज्व साउत्त,  
कुच अग्र कच्च द्विग मद्धि तिन, म्यामा अग साय वरन।  
पाडस सिगाय साम्ब सजि। साइ रज सजागितन।<sup>६</sup>

— ५० रा० का० १६७५११०५

२ "विन यस्तर अग सुरग रसी। मुहल जतनाप मन्त करसी।  
नर नोनइ सोइ उरट्टन की। कि वम्यो मनु वाम सुपट्टन की।"

— ५० रा० का० ५०१४६

३ म ५ दविया—यही ८०२।३०४, ५५१।५३ १०२५।५७



लिए प्रयुक्त जल को घनसार<sup>१</sup> और केसर<sup>२</sup> आदि डालकर सुवासित कर लिया जाता था। इन्द्रावती<sup>३</sup> हमावती<sup>४</sup> और सयोगिता<sup>५</sup> भी अथ शृंगार करने से पूर्व स्नान करती हैं। केशवदासजी ने महाराज वीरसिंह देव की वनिताएँ अगराग रागाकर आभूषण धारण करने से पूर्व स्नान करते चित्रित की है।<sup>६</sup>

(३) गंध द्रव्यादि का प्रयोग—स्नानापरांत शरीर का केसर चदन और कपूर आदि के विलेपना से चर्चित किया जाता था। उच्छिन्नि स्वशरीर पाद्यकर उसे बहु धूपा के धूम्र से सुगन्धित करती हैं।<sup>७</sup> इन्द्रावती कंचुकी धारण करने से पूर्व चदन का विलेपन उगाती है 'जबकि सयोगिता स्वशरीर का विविध प्रकारीय सुगन्धिया से विभूषित करती है।<sup>८</sup> वीरसिंह देव की रानिया बट्टुनिधि अगरागो का प्रयोग करती<sup>९</sup> तथा चदन के चार तिलपन से अगच्छुनि अभिवद्ध करती हैं।<sup>१०</sup> भूषण न इन्द्र गुलाब चोया और घनसार का प्रयोग परोक्ष रूप से प्रदर्शित किया है। उनका नाम महा राज शिवाजी के पास के कारण वगमा का इन सुगन्धित द्रव्यों की याद ही विस्मृत हो जाती है।<sup>११</sup>

(४) बेसी-ब घन—भाग कशा को सुगान के लिए उह अगर जाति सुवासित धूपा का धूम लिया जाता था। सयोगिता अपने जलकण भरत हुए केशो का सुवासित धूम्र में सुखात चर्चित की गयी है।<sup>१२</sup> धनी या कवरी बांधा से पूर्व उनमें इन्द्र पुनल डाले जाने थे। शशिब्रता<sup>१३</sup> सयोगिता<sup>१४</sup> और गजमातिन<sup>१५</sup> अपने केशों में सुगन्धित तैला का प्रयोग करने प्रदर्शित की गई है। कशा का घुगराने सुबोमल और राम्य बनाने के प्रयास किए जाते थे। कवि चरन सयोगिता और उच्छिन्नी अपने गुगार विन्दा पर केशों की एक एक लट गिराय प्रदर्शित की है।<sup>१६</sup> जोषगजन अम्पराजा की जलको मधुमर समूह का प्रमत्त रहना चर्चित किया है।<sup>१७</sup> केशवनामजी ने भी छोटी-छोटी अलकों चमकन दिखाई हैं।<sup>१८</sup> श्रीजतिवैद विद्यालकार ने भी प्राचीनकालीन केश प्रसाधन में जननजात बनाने घुगराने तट्टे तटाट और मन्क पर सुशाभिन करने तथा उह मुस्ता या पुण्या में गूँथकर सजाने की प्रथा हाने का उल्लेख किया है।

१ म १ दे०—प्रम० ८०२।१०३ ३०/ १०२५।५७ १०५४।१५८ १६६८।५१

६ बहु नियमज अजन कर अगराग बहु अगनि घर। — वी० प० २०।२०

७ करि मजा अगाधि तन धूप वागि बर अग। — प० रा० का० १/१।१३

८ स १६—रगिए—प्रम० १० रा० का० १००६।६१ वहा १६१।१२५२०

'वी० ३० २०।२० वही २६।४ शि० वा०' ११ प० रा० का १६६८।

५५ वही ८०३। १० वही १६६८।५३, 'वा० १६४।

१७ म १६—रगिए—प्रम० १० रा० का० १६६८।१७ ६७।१/० ६० रा०

१४० वी० प० २२।६६

२० 'प्राधात नारत के प्रसाधन, प० ४४

कवि पदमाकर ने उरट्टुष्ट सौन्दर्य के परिमाण श्याणिपुट केशा का ही नहीं, बरन एडिया का चूमन घान, केशा वाली स्त्रिया प्रदर्शित की है।<sup>१</sup>

वेणी बाँधने की रीतिया म या तो नागिन मण्ण एक लटवाली कवरी का प्रचुरन था, जयवा अधुना बहु प्रचलित दुहरी वेणी क स्थान पर तीन वेणिया बनाइ जाती थी। कवि चन्द न शशिव्रता तथा जाधराज ने जप्सराएँ तीन वेणिया धारण किए चित्रित की है। गूदन<sup>२</sup> और आल्हकार<sup>३</sup> ने चुटील के प्रयोग पर भी प्रकाश डाला है।

(५) माँग निकालना—केशा का पीश क मध्य भाग स दाना और विभाजित करत हुए माग या पटिया निकाली जाती थी।<sup>४</sup> कवि चन्द ने पटिया का प्रेम की घाट<sup>५</sup> बताकर, तथा जाधराज ने गुघन पटिया का शृगार-भूमि क फटन स उपमित करके,<sup>६</sup> उनकी स्त्री शृगार म महता का अभिघातन किया है। आभरणा के प्रयाग म पीछ माग या सोम त का मोती और लाल आदि स विभूषित करने का उल्लस किया जा चुका है। सघना स्त्रिया माती जादि के ऊपर सिद्धर का भी प्रयाग करती थी, जिमका कवि चन्द,<sup>७</sup> केशव<sup>८</sup> और आल्हकार<sup>९</sup> ने चित्रण किया है।

(६) काजल लगाना—वीरकाव्यकारा ने स्त्रिया क कजल कलित नेत्रा का वशीकरण का अमाघास्त्र बताकर<sup>१०</sup> नेत्रा म मसि का प्रयाग उनके शृगार का एक महत्त्व पूण अंग सिद्ध किया है। काजल को सुगन्धित और गुणकारी बनाने के लिए घनवान् स्त्रिया उसम कम्बुगी भी मित्रा लेती थीं, जबकि निधन स्त्रियाँ मात्र साधारण मसि का ही जाजकर अभीष्ट-साधन करती थीं।<sup>११</sup> जाखा म काजल लगाने क साथ साथ, उनके काजा क इतस्तत सुरमा की रखा सीचकर, व अपने नेत्रा का अनियाएँ एव काननचारी दिखाने का भी प्रयास करती थीं।<sup>१२</sup> च्छिनि इन्द्रावती शशिव्रता, सयोगिता, वीरसिंह की रानिया और गजमोनिन, सभी स्त्रिया, शृगार करत हुए काजल

१ 'शुटि वनी सुनफें निजियत दुलक छ छ गुनक द्विनि छहरै ।'

— प्र० त्रि०, ११३

२ 'अन्क पुष्प वीचि ग्रथि । भासिता त्रिपडिय ।

मना सनाग पुष्प जाति । तीन पथि मयिय ।' — प० रा०' का० ८०३।३१०

३ 'श्ववम कम पागय, मना कि मन फासय ।

गुही प्रिविद्धि वनिय कि माह किन मनय ।' — 'ह० रा०' १३२

४ स ७ द०—कम० सु० च० ६।२।४१ 'आ० १६४।४, प० रा०, का० १५३।६८ वही, ८०३।१११

५ स १४ द०—कम० 'ह० रा० १३३ प० रा०' का० ८०३।३११ 'वी० च०' २०।१६, आ०' ४४०, प० रा०, का० १६।१।१६ वही १८।४८, आ०' १६४।६

लगाना नहीं भूलती। काजल के प्रयोग में मुगल-स्त्रियाँ भी पीछे नहीं थी। भूपण ने उनके कज्जल-मिश्रित अध्रुओं से यमुना-जल का और भी अधिक श्यामवर्ण हो जाना प्रदर्शित किया है।<sup>१</sup>

(७) बकिस भूकुटियों की रचना करना—जनियारे दूगो पर बकिस भू विलास का सगम प्रियजन हिय-वेधन में राम बाण जसा सफल रहता है। यही कारण है कि कवि चन्द न सयागिता<sup>१</sup> जोर प्रियाकुवरि<sup>१</sup> कज्जल मसि स अपनी भौह श्याम वर्ण तथा बकिस बनात प्रदर्शित की हैं। डॉ० बी० एन० चापडा न भी यह मुगलकालीन नारी शृंगार की एक बहु प्रचलित रीति बताई है।<sup>१</sup>

(८) विन्दी एवं तिलक रचना—मस्तक पर तिलक आठ जोर विन्दिया के लगाने का प्रचलन पर पीछे प्रकाश डाला जा चुका है। इनके प्रतिरिक्त सिद्धूर कज्जल और बेसर जादि से भी तिलक और विन्दिया की रचना करने का प्रचलन था। पृथ्वीराजरासो के दो भिन्न प्रसंगों में दपण-हस्ता सयोगिता कस्तूरी बेसर और काजल से तिलक रचना करके उनके इतस्तत कज्जल रेखाएँ खींचत चित्रित की गई है।<sup>१</sup> हम्मीर रासो में जप्तगजा के मस्तक बूहदाकार लाल रंग की विन्दिया से मुशो भित दिखाए गए हैं।<sup>१</sup> कवि मान ने सरस्वती का चन्दन और बेसर चर्चित मस्तक पर सिद्धूर की लाल विन्दी नगी प्रदर्शित की है। भूपण ने काम केतिरत वामाआ के मस्तक पर नगी लाल विन्दियाँ विशरत दिखाई हैं<sup>१</sup> तथा दबन-पत्निया के मस्तकों को भी सिद्धूर बिहीन दिखाकर<sup>१</sup> प्रकारांतर से मस्तक पर सिद्धूर की बँनियाँ लगाने का प्रचलन पर प्रकाश डाला है।

१ देगिए— गि० नू० २६६ और भी देगिए छ० १०१ २६७

२ रचे जल कज्जल रेप सुमय । मुपी भय काम जर जनु एप ।

— प० रा० का० १६६८।५८

३ बनी घर भौह सु बन्धिय एह मना धनु काम धर बिन जेह । —वही ६५२।७५

४ It was usual for high class ladies to use missia for blackening between the teeth and antimony for darkening their eyelashes<sup>१</sup>

— Society and Culture in Mughal Age p 22

५ (क) निवकर द्रवण करी । थव न मन्त पा ।

— प० रा० का० १६४।२४१४

(ग) निवकर सभात रची रवि रप । मना भय घट्ट टुआग्नि दप ।

धत भुअ दूअ निवकरग गनि । जिन धर अदर मण गुतानि ।

—वही १६६८।५७

६ मे ६— ० प्रम० ह० रा० १२१ रा० त्रि० १।२७, भू० प्र० सप्त ६०

४४ गि० भू० १७३

कवि भूपण द्वारा सद्यवा मुस्लिम स्त्रियों का भी सिद्दूर की विदियाँ लगाय प्रदर्शित करने के विषय में दा शब्द अपेक्षित है। भूपण ग्रथावली के सपादक एव टीकाकारा न इसके विषय में शका उठाकर भिन भिन मत व्यक्त किय है। इम छन्द में सिद्दूर का प्रयोग प्रदर्शित करने वाली पंक्ति के विषय में मिश्रवधुजा और ब्रजरत्नदास में पाठ भेद भी मिलता है। मिश्रवधुजा न उमका पाठ—तर रास दपियन जागर दिल्ली में तिन, सिद्दूर क बुद मुग इदु जमनीन के देकर पादटिप्पणी में सम्भावना व्यक्त की है कि उन तिन सद्यवा मुगल स्त्रियाँ सिद्दूर का प्रयोग करती थीं। श्री ब्रजरत्न दास न, उसका पाठ—

‘तर रास देलियत आगर दिल्ली क बीच सिद्दूर के बुद मुस इदु जमनीन के’  
दकर परिशिष्ट में टिप्पणी दी है कि मुसलमानों में सिद्दूर शब्द की प्रथा नहीं है पर कवि न यह प्रकट किया है कि माना व आरम्भ ही में मिश्रवा हो गई थी, इमीलिए उनके मुगल चंद पर सिद्दूर बुद नहीं लिखता। कहना न हागा कि ब्रजरत्नदास द्वारा दिए गए पाठ में सिद्दूर बुद लिखने का उल्लेख है। श्री राजनाथ शर्मा न एक अर्थ ही कल्पना की है। उनके अनुसार मुगल स्त्रियां न सिद्दूर विद्दु इर्माण लगा रखे हैं कि व हिन्दू स्त्रियाँ जान पड़ें और उनकी रक्षा हा जाय। यह अर्थ भी दा दृष्टिया स अग्रह है—प्रथम तो प्रस्तुत पं की पहली पंक्ति—सरजा समत्य बीर तर बँर बीजापुर बरी बपरिन कर बीह न चुरीन के ‘ में भूपण मुगल पत्नियों के बधव्य का वर्णन करत है अतः सदभगन पंक्ति में भी बधव्य का ही वर्णन तबसगन है। दूसरे जगता में भक्तों के दुर्द मुस्लिम स्त्रियों की मात्र सिद्दूर बुद के कारण सनिका से रक्षा हाता और वह भी उाका सम्मान करने के लिए प्रसिद्ध महाराज शिवाजी के सदभ में सवधा अनुपयुक्त लगता है। अतः हमारी दृष्टि में मिश्रवधुजा द्वारा प्रदत्त पाठ ही अधिक उपयुक्त है। हा सद्यवा मुस्लिम स्त्रियों द्वारा सिद्दूर का प्रयोग करने के सम्बन्ध में हमारा अनुमान है कि इस मुगल की सभी पत्नियों के स्थान पर उनकी हिन्दू पत्नियों के लिए प्रयुक्त समझना चाहिए, जो अपन हिन्दू सम्कारा के कारण यदि सिद्दूर का प्रयोग करता रही हा ता वगम अनाचित्य ही गया है ? अधवरिया मुसल माना अर्थात् विद्दुआ न मुस्लिम बन लागा की पत्नियों के विषय में भी यही सम्भावना की जा सकती है।

(६) त्रिबुज पर तिल बनाना—गौराभ मुयचन्द्र पर काने तिल की शोभा न कवियों का तिन शतक जसी कृतियों के प्रणयन की प्रेरणा दी है। आलोच्यकाल में भी शक की इतनी महत्ता थी कि यदि स्वाभाविक तिल न हा ता उसकी पूर्ति छोड़ी

१ स ३ दे०—क्रम० ‘भू० य०’ मिश्रवधु, प० ६१ ‘भू० प्र०’, ब्रजरत्न, प० ११,  
‘भू० य०’ राज० शर्मा, प० १०६  
४ ‘शि० भू०’, प० १७३

पर मणि का कृत्रिम चित्र बनाकर बरती जाती थी। सयागिना सामान्य गिणार करने हुए चित्र पर चित्र रखा करता चित्रित की गई है।<sup>१</sup>

(१०) कपोलों पर चित्र रचना—शुमार क कागज का कागज अथवा म अन्व-हिरण्य, इन शुमार पदार्थ का कवि चित्र और केवलकाल न उन्मत्त किया है। कवि चित्र त सयागिना समुदाय का कम्पूरी और पनमार चित्रा म मन्त्रित करा चित्रित की है। महाराज धीरंगी का भी जन शोभा का चित्रन करता है कवि चित्र त उनकी रागिया क कपाला म काली और कगर चित्रित किया का मित्र जाता प्र-जित करके परीक्षण म मन्त्रित किया है कि कपाला पर चित्र रचना भी स्या गिणार का एक आवश्यक अंग थी। अतिरिक्त चित्राकार त भी प्राचीनकाल म कपाला पर चित्र-रम जोर पन भंग की रखा करता का प्रचलन किया था है।

(११) मेहडी राना—कवि चित्र न अतिरिक्त क हाया क कागज-कागज उन्मत्त पन भी महती रचना प्रदर्शित किया है। कवि मान त मन्त्रणी और स्यागिना का तथा कवि चित्र और जाधराज त जगन्नाथ शुमार का चित्रन करता है उन्मत्त करता पर महती रनात चित्रित करके महती के प्रयोग का स्त्री शुमार का आवश्यक अंग किया था है।

(१२) महाहर नायक या स्यागिना से लडियाँ रचना कवि चित्र न इच्छी द्वारा सुरग लडिया का जावन स रमन क कृत्य का उन्मत्त गीभाग्य का प्रतीक बताया है जिसम स्पष्ट हाता है कि सयागिना क चित्र लडिया का राना आवश्यक अंगभा जाता था। श्री अतिरिक्त विद्याकार क अभिमत म भी महाहर का न चित्रना शोच या शुग का कृत्रिम चित्रना था अत मुन्मत्त चित्रों मन्त्रित चित्र म्म म्म द्वाका धारण करती थी। महाहर शुग या जावन का प्रयोग उन्मत्त मभी चित्रना क शुमार-चित्रन म मित्रता है। चन्द ने कहावती 'लीड' जोर सयागिना

१ 'चित्रुक्कट्टि चिद असत गु वानि, प्रसागित का जली सिसु टाति।

— प० रा० का० १६६६।६१

२ 'बु डली मडि वन्त मु त्त कगतूर डिगट घनसार चित्र। — वही १६७५।१०३

३ 'मिटे कपोलिन चन्त्र चित्र ताग कसरि तहौ चित्रित।' — वी० पी० २५।२१

४ द० प्राचीन भारत के प्रसाधन प० ७३

५ दान दल तप जोति। सुरग मिहनी रधि रचिय।'

— प० रा०, मो० १।३२७।८१

६ ७ रा० वि० १।१८ ७।१७ प० रा० का० २५४६।२६६ ह० रा० ७।२३

८ एडो इगुर रम। उपम जोपिय सु सचिय।

सोतिन मबल सुहाग। भाग जावक तल वधिय।' — प० रा०, का० ५६५।१६०

९ प्राचीन भारत के प्रसाधन प० ६०

१० स १२—देखिए—क्रम० प० रा०, का० १०८६।१८२ १०८७।१६१

का जावक से, केशव और मान ने प्रमथ वीरमिन्द्र देव की यन्त्रिणाएँ तथा गरम्पती देवी रूपकुवरी एवं धान्दूकार न गजमोतिन तथा मयागिता महावर से ण्डियाँ रचाए प्रदर्शित की है। पद्मकार ने तन्व इगुं और जावक के प्रयाग पर प्रकाश दाना है।

(१३) पुष्पमाताएँ धारण करना—शृंगार र सोरठ अगा म पुष्प प्रयाग का परिगणन मोदयोभिर्वाद्ध का निमित्त हान ने गात्र माय म्रियया की प्रकृति व प्रनि वृत्तता पापन का भी प्रतीक है। शृंगार व अ द प्रमाणा ता मन्थता की पर वर्तिकातीन उपनक्षया है जबकि आदिम युग म व पुष्पा का देगा म गधन तथा उनकी माताजा को यणी और श्रोवा जाति म धारण करने व जतिगिन पुष्पा का रचकी और वगन बनावर भी पहनती था। शशिप्रागे और मयागिता वेशा म पुष्प गधती है। मयागिता अपनी यणी म गुमन मात धारण करती है जबकि पारमिह त्व की गतिया की कवयियाँ कुमुम भार म विचरते प्रदर्शित की गई हैं। मान न म म्पती को चरनी जूही चपा वृद केसर मचन म्पती, और मागर पुष्पा व हार पहन प्रदर्शित करने के साथ साथ मानिने पुष्पा की इतनी सुत्त रचुकी गिदुः और वचन निमित्त करत प्रदर्शित की है जिनके जवनाका मान से म्रियया के मर उह धारण करने का मचन उठा थ। जाधराज न मय वीर विन्तर बानाण म न म पुष्पमाताएँ धारण किए प्रदर्शित की है।

(१४) घान खाना—मालहू शृंगारा का ताम्बूत मवन भी एक आवश्यक अंग था, जिसका अभिप्रत मुखशराम का सुवासित करना तथा हाठ रचाना रहता हागा। कवि चन्द न सयोमिता का तीन बार शृंगार वणन किया है, और प्रत्येक

१ से ४—दे०—प्रम० 'वी० च०' २२।८३, 'रा० वि०' १।१३ ७।२१, 'आ०', १९३।१८ १४।१५ प्र० वि०' ११० ११२

५ "अनेक पुष्प वीचि ग्रथि । भामिना त्रिपथि । — ५० रा०, वा० ८०३।३१०

६ वर रचिय केम विधि सुमन पनि । विच धरे जमन जल गग वति ।'

— ५० रा० वा०, १८७।१०६

७ "कधरो कुमुम विमरत नय । श्रुति कुत्त लाल दुमाजनय ।

—वही, १९६३।१३

८ कुमुम भार कगरी छुटि गई । ताचा वचन सिर्विल गति भई ।'

— वी० च०, २४।१

९ द०—'रा० वि०', १।३०

१० "किती तहें मालनि पूतनि माल, गुहै कर चौसर भाक कमाल ।

सु कचुकि गिदुव कचन भति, विलोकहि बाँस करे मन पति ।" —वही, २।२७

११ दे०— ह० रा०', १०८, ११४

सदभ म यह ताम्बूल का सत्रा रत्न निमित्त की है ।<sup>१</sup> इगत अतिगित उगा इछनी वा,<sup>२</sup> तथा आल्टवार 'गजमार्ति'<sup>३</sup> का पात गात निमाया है । कवि मान न भी सरस्वती का मुग ताम्बूल म मडित प्रदर्शित किया है ।

(१५) सुवसन गुवता का अभिप्राय यही है कि धारण तिम जान यात वस्य पटाव द्वाव तथा रग आदि का चिटि म मुग्चिपूत हा, और उ हें एम तातुम से पहता जाय कि व चिन्ध शरीरागा म एव अतिव तापण पता कर मर्के । वीरवाण्य म वर्णित गरिया की तात और हा न रग त वदया क प्रति की अभिवि प्रदर्शित की मर्के है<sup>४</sup> । तोर उाकी गीर-यण वाया पर एा रगा त कपता म निमित्त कचुकी जीर घापर आदि पोथूप फुतु ज ओर अनम धादि क सता कामात जक चिन्धित विय मर्के है । एा वस्य का मुमधित द्वाया म चकि कर्न का भी प्रतात था ।<sup>५</sup>

(१६) आभूषण पहनना आभूषणा का तागी मीत्य क अभिरधन क तिम किम प्रकार जपरिहाय समभा जाता था तथा व निविध शरीरागा का तिम तिम आभूषणा से मडित करनी थी इा तथ्या पर पीछ प्रमाण टाता जा चुका है ।

## पुरष

दत्त-धावन —

पृथ्वीराजरासा म आल्टा और उता तनुा करत प्रदर्शित किए गए है जबकि वीरचरित्र म महाराज वार्गमह दव की एत धावन क्रिया का सम्पूर्ण विवरण दिया गया है । इगवे अनुसार महाराज क तिम कमत पत्र क नाना म कपूर एव बत्तीस तातुनें प्रस्तुत की जाती थी । व दातुता का कपूर म दुवावर प्रयुक्त करत थ तथा प्रति वार बुलता करन क साथ ही उ ह फा दत थ । यही क्रम बत्तीस वार चलन पर उनवी दत्तधावन क्रिया समाप्त हाती थी ।

१ म ४ दे०—क्रम० प० रा० का० १६५४/२५१६, १६५७/२५६० १६७६/१४२ ५६५/१६१ जा० ६४०/१६ रा० वि० १/३०

५ दखिए—क्रम०, प० रा० का० ८०२/२०३, वही ८०३/३१६ वही १६७६/१२० 'रा० त्रि० ७/१५ वी० च० २६/१५ ह० रा० १४० ह० ह० छ० ६, जा०, १४/१४

६ "आनन पर सुभ सीकर घने । वमन सगीर मुाधित घन ।

— वी० च०, २५/३

७ ' करि दातौन सनान । ध्यान गारप का ध्यायी ।

— 'प० रा०, का० २५५५/३३७

८ कर पद है सुचि श्री नरनाथ । तव दातौनि लइ निज हाथ ।

कमल दलन के दोता चार । तिनम धर्यो मनो धनसार ।

अग-मदन —

यह कृत्य स्त्रिया द्वारा उन्नतन लगवाने का स्थानापन था । कविचन्द ने इसमें धातु एव शरीर लता की अभिवृद्धि होने का उल्लेख किया है ।<sup>१</sup> महाराज पृथ्वीराज का अगमदन शृंगार रस की वृष्टि करती हुई नवयौवनाशा द्वारा प्रदर्शित किया गया है । जिससे स्पष्ट होता है कि नरेशा के अग-मदन के लिए प्रायः कुछ नसिया नियुक्त रहती थी । रामो म चन्द पुण्नीर का अग मदन उ मदलिए करत दिखाए गए है । उसका अग मरदन म पर्याप्त सुगन्धित तेल प्रयुक्त होता था ।<sup>२</sup> परमालरासो म आल्हा उन्नत और सनिक् अग मदन करान चिन्तित किए हैं ।<sup>३</sup> महाराज वीरमिह दव के लिए भी मदनिए नियुक्त थे, जो स्नान से पूर्व उनका अग मदन करत थे ।<sup>४</sup>

स्नान —

स्नान के लिए गगाजल का प्रयोग उत्तम समझा जाता था । यही कारण है कि अत्रिवाण नरेश गगाजल से स्नान करते मिलते हैं । कवि चन्द ने महाराज पृथ्वीराज का ता पूणत गगाजन मे ही स्नान करत प्रदर्शित किया है ।<sup>५</sup> जबकि धीरपु डीर आरम्भ म साधारण जन म स्नान करवे अत म एव कउन गगाजन म स्नान करत मिलता है ।<sup>६</sup> महाराज हम्मीरदेव<sup>७</sup> और माणै का राजकुमार<sup>८</sup> अनुषी भी गगाजल से स्नान करत मिलते हैं । आनाच्यवाण म गगाजन म स्नान की महत्ता का अनुमान इस तथ्य

तितम वारि घोरि के कुची । गचिर दन धावनि रचि रची ।

प्रति गडूक टारि तव देत । बहुरि कुची कर और लत ।

वत्तिम कुची भरि जब कर । तव सुदत धावन परिहर । — 'वी० च०' २२।४७

१ "वरि पावन पवित्र वर, माहन मुरभि सु तल ।

मदनीक मदन कर बढ धात तन वन । — प० रा० का० ३१।६।३१०

२ "मुनि मरदन का हुवम । होत मरदनी बालि लिय ।

वय किसार धन घोर । कच्छि अच्छरि ममान त्रिय ॥

तित नह देह मनि दह सुप । वरपि मेह सिगार रस ।' — वही, १६।४

३ म ५ द० — प्रम० प० ग०' का० २०।६।२।२७, प० रा०', २१।६।१, 'वी० च० २१।१४

४ "वरि मनान गगादकट, दिव सु गाइ दम दान ।" — प० रा०', का० ३१।६।१३१

५ महस बलम भर नीर । इक्क बिच वनस गगाजल ।

वरि मनान पावति । कीय पव गो महाबल ॥' — वही, २०।६।२।२७

६ "आप राइ चहुआन हमीर । तुरत मगाइ गग का नीर ।

वरि अमनान दान बहु दीह्यो । बहुरि विप्र मुह पूजन कीह्यो ।

— ह० ह०' व०, २४६

७ "घट भरबावें गगाजल का जोर डिडदी म कर असनान ।' — आ०' ६८



से लगाना जा सकता है कि जबकि जाति मुगल बादशाह भी अंगन स्नान के लिए उमना प्रयाग करत था।

गंध द्रव्यादि का प्रयाग —

स्नानापरान्त स्त्रिया की भांति पुग्ग भी मुग्गधित विनयता का प्रयाग करत था। कवि ने नाना महाराज पृथ्वीराज का कस्तूरी मृग और जगति के विनयेना से स्व काया का रचित करत प्रशिक्षित किया है। 'जयप्र श्रीष्मापराण के लिए भी नाना उक्त कपूर कंगर और गुमकुम के अंगनता का प्रयाग करत प्रशिक्षित किया है।' वीरचरित्र में वीरगति प्राप्त अनुपपन्न तथा परमातराग में उक्त और प्रह्लाद के शरीर का स्नान का मुससित बनाकर उनके द्वारा मुग्गधिया के प्रयाग पर प्रकाश पाना गया है।

आवास —

वीरकाव्य में मुग्गधिया राजमहता तथा उक्चवग के आवासा का चित्रण मिलता है। हम विवरण से आनाच्यकानीन आवासा सम्बन्धी अधोनिमित्त तथ्या पर प्रकाश पडता है।

राजमहान प्रायः मतखड बनाए जात था। पृथ्वीराजराजा में महाराज पृथ्वीराज कानीन वासिया तथा सामा यतया घनाढ्य लागी के पथ वीरचरित्र में महाराज वीरमिह के महान मतखडे प्रशिक्षित किया गया है। जाल्दखड में महाराज जयचन्द 'माडो नरेश' और पथगीण नरेश के भवन मतखड बनाए गए हैं। कवि विद्यापति ने जौनपुर में शाह इब्राहीम लादी के महला से मूय रथ के सप्त अशवा की टापा के टकरा जान के उल्लेख करके तथा कवि मान ने उदयपुर के महला के ध्वजाण्ड और स्वर्ण कलशा को आकाश तुम्बी प्रदर्शित करके 'उनके बहुत उच्च होने का अवबोध कराया है। कवि भूपण ने महाराज शिवाजी के महला का ऐसे स्पष्टिक से निमित्त दिखाया है जिनमें मुस प्रतिविम्ब देखा जा सकता था। 'इन महला में केशवनामजी ने चन्दन की कल्पिया और स्वर्ण पुष्प जटित कपाटा का तथा चन्दन स्वर्णमटित कपाटा का प्रयोग दिखाया है।' जाल्दकार ने भी चन्दन की सिडकिया का प्रदर्शित की है।'

१ दे०—नार्डिन ए अकबरी भा० ३ प० ५७

२ से ६—दे०—क्रम० प० रा०, का० ३१६।११२ प० रा०' मा० ३।५६८।  
१२६ वी० च० ५।६७ प० रा० ३१।३०, ३५।८५

७ म १७—वेविए—क्रम० प० रा० का० १५५।५।२६ वही १६३०।३५४ वही  
१८।४४, भा० १२।१०, वही ५१।१२ वही १७२।७ कीर्ति० प० ५२  
रा० वि० २।६६, शि० भू० १८ वी० च० २०।३ वही २०।७

१८ १६—दे०—क्रम० 'प० रा० का० १२६६।२२ आ०' ५१।१३

उ मगराज वीरगवत की रीतिगणों क्षुद्रपरायणी पदा विहित की है। कवि मात न मरम्बरी' और रूपसुखि' मगना धारण विण प्रश्रित की।

कवि मात न विरपी जीर सुद्रावनी परा क भी भाभूषण सिगात है, जिगग मल्ल हाना ३ रि मापारणतया विगा भी विरगा या घटिता तग आभूषण का विरगा की मना प्रशा की ता मपती थी। विरगियों ता तुरा म भी जुष्टी रहती थी—कवि मात न नि हापिया क धपम तग तुरा प ३ विरित्र सिया है' विरु उता प्रयाग कपती म ही अधिन हान क कारण विरपी कपती क ही अथ म अधिा म थी।

घाट—घाट या वाजुना म वाजूवद भ्रांटी' तामन त रूपण पाने तां थ। कवि त मात और मयने त वाजूवत का प्रयाग सिगात है जबकि आल्टवार न मजमानन वाचय क ताथ-माथ आठ गांग तात टोट ती पदन विरगा की है। त्रि मूत त री' वर और वाजूवत का प्रयाग सिगाया है।"

बलाई—तनाद स कुती पया तगत तत्रय चूमे चूणियां पृ ति मजरा वगी अगनियों वगनियों और पदगियों नामत आभरण धारण सिग जाा थे। कवि चद त बलय तगत तू ती जीर पट्टी " मान त चूमे मारग पट्टी जीर वगत," तथा आल्टवार " पृ ना और तगत ता उत्तरग करा क माथ माथ चणिया क आग अग नियों पीध, पदगियों तथा मध्य म वगनियों धारण करत की प्रया सिगाद है।" कवि मूत त वगुरी चूरा, पदनी चूणियां, करण मुजरी और पट्टी ती तामक कनादया क आभूषणा का अंतर विया है।"

१ म ४००—प्रम०, धी०, १० २२।२६, 'रा० रि०' १।१६ वही ७।१८, १।१८

५ 'मरगीय राट्टन गाट्टवाया न विरणी लग तुरा का उल्लग विया है—

—'राजम्यानी रनवास, पृ० ८

६ "तूपुर सु पाद घुपर निना, रागतन चतत जनुमदा बाद।"

—'रा० वि०, ८।१०

७ "कुच निहार कचुविय। भुजति वधे वाजूवध।

—'पृ० रा०', का० १६७।१।४०

८ ६ दविण—'रा० रि०' १।१८, वही, ७।१६, ६० ह०, स्वा० ६

१० आठ गाठ की टां पहिरें वाजूवद भूमि भूमि रहि जाय।"—आ० ६३।२५

११ 'वाजूवद बराकर छिनिय। वगुरी चूरा लत न गिनिय।

टाड पछेनी छिन छिनादय। चूर चूरि तुरी चत्वादय।'

—'सु० च०', ६।२।४१

१२ से १४ दविण—प्रम० 'प० रा०' का० १६५।२।२५१८, १०८५।१८४,

'रा० रि०', ७।१६, आ० १६३।०१ २४

१५ 'सु० च०', ७।२।४१

उंगलियाँ—हाथ की उंगलियाँ म मुद्रिका, आरती, भमकन हथ पान और छल्ले पहने जात थे। कवि चंद' कश्य' और मा' ने मुद्रिकाओं का प्रचलन किया है, जबकि आल्हार ने बीग मुद्रिकाओं का साथ साथ छल्ला का भी प्रयोग उचित किया है। मूदन न छल्ला अगुठी आरती और जजोर लग भमकन नामक उंगलियाँ के आभरण का उल्लेख किया है। कवि जाधराज न हथ-गान पर हथ फूज नामक आभूषण का प्रयोग किया है जो हाथ के पृष्ठभाग पर पहना जाता था।

पर—परा क अगुठी म जनवट या अनाट और पाट तथा उंगलियाँ म बीछिया और छल्ला पहन जात थे। ग्यना क जानूपणा म नभग्या, नाभन पायल कुद्रायती विविध नूपर ताडर जहरि घुघुर छ' पायाव नहियाँ गुजरी और घौच पहनन का प्रचलन था। कवि चंद न जनौट भाँरि नूपुर जहरि घुघुर, बीछिया खाट और तोडर नामक आभूषण का उल्लेख किया है। इमी भाँति कवि मान न जनवट बीछिया भाँरि पायल कुद्रायली और विविध का कश्य न नूपुर जहरि और घाचा का ग्याल न—पायजेव छ' और छल्ला का आल्हार ने जनवट पायल नवर बीछिया, नहियाँ और गुजरी का तथा मूदन न पायल पग पान, नूपुर चुटकी फूज भाँभ और गुजरी नामक आभूषण के प्रयोग पर प्रकाश डाला है। नूपुरा क विषय म यह तथ्य उल्लेख है कि ये उंगलियाँ म पहन जाने वाले बीछिए नहीं हाँते थे अपितु घुघुरु या विविणिया स युक्त टाँगा म बाँधा जाने वाला आभूषण होता था जिस हाथियाँ की टाँगा म भी बाँधा जाता था। कवि चंद के साक्ष्य पर कहा जा सकता है कि निधन स्त्रियाँ और ग्रामीण-वर्ग अपनी आभूषण धारण करने की इच्छापूर्ति सतफल (अलीगढ़ के समीप इसे पुनमन कहा जाता है) के फला को विविध आभूषण का रूप देकर कर लेती थीं। छल्ला का हिंदू और मुसलमान स्त्रियाँ द्वारा भिन्न अंग पर प्रयोग मिलता है। हिंदू स्त्रियाँ उह

- १ स ८—देखिए—क्रम० प० रा०' का० १०८७।१६० वी० च०, २२।७५,  
रा० वि० १।१६ आ० १६३।८, मु० च०, ६।२।४१, ह० रा० ७५६  
प० रा० ६६।१६१ प० रा०', का० १६६६।६५ १०२६।६०, 'प० रा०  
१५।१८०, वही १०८५।१८१ वही १७७६।१४२
- ६ स १२—देखिए—क्रम० रा० वि० १।१३ १४ ७।१६ २०, वी० च० २२।८५  
२५।३ ह० ह० १० आ० १६३।५ वही ४४०
- १३ पाइल औ पगपान सु नूपुर। चुटकी फूल जनौट सुभूपर।  
तहरि भाँभन गुजरी टुट्टम। बहु भूपन म एक न छुट्टिय। — मु० च० ६।२।४१
- १४ नूपुर सु पाइ घु घरु निनाद, रतभनत चलत जनु वदत बाद।  
— रा० वि०', ८।१०
- १५ सत्त खन आवास महिलान मद् सद नूपरमा।  
सतफल बज्जनु पयसा। पत्ररिय नव चालति।" — प० रा०, ११।७०

हाथ की उँगलियाँ म पहारती थी, जबकि माल न मुन्निम स्त्रियाँ वा उह परा म  
पहा चिप्रित किया ० ।

पुरुष -धीरकाव्य स जाताच्यनाम म पुष्प ती स्त्रिया की भाँति जाभरण  
प्रिय मिद्ध हान ह । कत्रि चन्द न गहाराज की परगाय म टु गिन तर-नागिया की  
जाभरण-हीन स्त्रियाँ पुष्पा द्वारा आापणा क प्रयोग पर प्रकाश जाना है ।<sup>१</sup> कवि  
सूक्त ३ भी गतिवा क गरीर जाभूषणा स मउत प्रदर्शित करके पुष्पा की जाभरण  
प्रियता का प्रकाशन किया है ।<sup>२</sup> अल्वेन्नी क सिद्धम स पात हाता ह रि—पुष्प  
वान बाटू तथा हाथ जीर परा की उगलियाँ म जा भूषण पटा करत थ ।<sup>३</sup> पुष्पा क  
बाला म कवि च न स्वाति-गुता तामर आभरण का प्रयाग दिग्गाया<sup>४</sup> है जसकि  
परमात्रगमा<sup>५</sup> और आहृगण<sup>६</sup> म श्रुतना म कु टना का प्रयाग प्ररशित किया गया है ।  
हाथ म स्त्रण क बडे पन्नन का प्रचरन शिशु जीर घनन नाग म था । परमात्रगमा  
म रष्ट आल्य उन्नत वा मनान क लिंग मुस्तामानाग जाग र न भेज जात ह । महा  
रागी महारा बागह-वर्षीय बनाफत गताआ ता स्वण-बडे पहारा चिप्रित की गइ  
है ।<sup>७</sup> अपय नी जागीवेशधारी प्रनाफत स्वण उड पहन मितन ह<sup>८</sup> तथा उदन अपन  
गतिना का प्रलाभन दना है कि विप्रयी हान की दगा म म नुष्टार हावा के लिए  
स्त्रण-बडे बनवा दूगा<sup>९</sup> जिसम पुष्पा द्वारा बना क प्रयोग पर प्रनाग पन्ता है ।

पुरुष भी स्त्रिया की भाँति अपनी श्रीमाना म मुक्ता मानाण पटा करने थे,  
जिसका पृथ्वीराजगमो<sup>१०</sup>, परमालगमा<sup>११</sup> और आहृगण<sup>१२</sup> म<sup>१३</sup> चित्रण मिलता है ।

१ 'वि आभन नर नारि सव । रिता नज ग्रह रूप ।

—'प० रा० का० २५८८।११

२ (क) "बहु श्रौन छिच्छ अति ताल लाल, जन न्द्र बधू करि रहिय जाल ।

बहु भूपन कचन के न्विन जुगनू तमात चमकत छिपत ।"

—सु०च०<sup>१</sup> १।४।६

(घ) "मडे बहु कचन भूपन अग । जडे मनु बाहन अग ।

पडे रन रग अमग सुधीर । ठडे न भूमि जहाँ तदुधीर । —वही २।४।८

३ "The men wear articles of female dress, they use cosmetics,  
wear ear rings arm rings golden seel rings on the ringfinger as  
well as on the toes of the feet" —'Alburuni's India' p 181

४ 'श्रवन विराजत स्वाति सुत । करत न वन वपान ।"

—पृ० रा०<sup>१</sup>, का० १४६-१०३

५ से १०—६० 'प० रा० ५।५४, आ०<sup>१</sup>, ३६।८, पर० रा०<sup>१</sup> १६।१२, आ०<sup>१</sup>,  
२६।६, ३६।३६ ७७।१२

११ से १३—देखिए—क्रम०, प० रा० का० १२१६।११७ प० रा०<sup>१</sup> ५।४३,  
आ०<sup>१</sup> ४७।२०,

शिशु प्रा के बठ म केहृगि नगयुक्त मणिया का बठना पटनाया जाना था ।<sup>१</sup> क्षत्रिय योद्धाओं में अपनी एक टोंग में मोते का बड़ा या जजीर पत्तन की भी प्रथा थी । कवि चण ने उसे पवग<sup>२</sup> जोर सकर<sup>३</sup> तथा कनि मान न टाटर क नाम से अभिहित किया है । कवि मूत्न ने त्रिनी की बूट म स्त्रिया के साथ गाय पुरपा के भी जाभू-पणा की लूट का बणन किया है जिसे जात है कि वे—सिर पर बरेंगी तुरा और और सिरपच, बाना म कु डत माती गुरदा गागर जोर स्ट्राण क मनन ग्रीया म तोडा पठी रतन मानाए चौकी जोर मांकरें, हाया म बग पडुची ह मारर जोर छाप, कटि म किकिनी और बाधनी तथा पगा म पजनी धारण करत व ।<sup>४</sup>

### शृ गार प्रसाधन

मानव स्वभावतः शृगार प्रेमी है । निज समग में जाने वाली सभी वस्तुओं का एक विशेष बलात्मक साज सज्जा से युक्त देतन की उम महजानाया रहती है । उसकी इस सौंदर्य विषामु अतद्विष्टि ने स्त्रिया की नमगिन शृगार प्रियता को जोर भी अधिक अभिवद्ध किया है । वे आदिम युग में ही प्रकृति प्रदत्त सौकुमार्य जोर तावण्य में चार चाद लगाने की आकांक्षा में विविध शृगार-उपादानों का प्रयोग करके व प्रेमियों की हृदय हारिणी बनने की चेष्टा करती रही है । वीरकाव्य की नायिकाएँ राज कुमारियाँ और रानियाँ थीं जिसे उह सभी प्रकार की शृगार मामग्री मन्त्र उपलब्ध थी । दास नायिका के वादृत्य के कारण वे मह-नायों की जोर से निश्चिन्त भी रहती

१ प० रा०' का० १५१।७२६

२ "फुनि कहा प्रधिराज नप पाव पवग परटिठ ।

लेइ नही मन सभ मल, निटठ चनाइम हटिठ ॥'

—प० रा० का० १२१६।११६

३ "सकरह हेम तोलह निसत्त । निय पाय कटिठ बिय धीर दत्त ।"

—वही, २०३२।८३

४ 'पल बावन टोडर इक्क पय । बापा रावर जतुलबल । — 'रा० वि० २।२४०

५ स्त्रियों के आभरणों का मूत्न ने छठी जग के इवतालीसवें छंद में बणन किया

है । इसके आगे उन्होंने अधोनिखित छंद लिखा है —

बलगी तुरा और जग निरपेच सु कु डल ।

मोती गुरदा और गाखर स्ट्राण मल ॥

तोरा बठी मान रतन चौकी बहु मावर ।

बेडा पडुची कव सुमरनी छाप सुभावर ॥

किकिनी कौधनी पजनी हथ सकर भकर त्रुटे ।

आभरन नर बहु भांति के पुटे बुटे टूटे त्रुटे ॥'

—'सु० च०', ६।२।४२

थी, अतः अपनी सात-मज्जा पर उन्हें इच्छित समय लगाने का पूरा अवकाश मिलता था। वृषभनी प्रथा के प्रचलन में उनकी यह अवलोकन प्रियता, कदाचित् उनके जीवन का मूल सत्र ही जाना दी थी। पति प्रेम-गात्री वनन के लिए सपत्नियों में अभिनव शृंगार प्रणानियाँ अपनाकर एक-दूसरी में बहुराज्य जाकपक प्रतीन होने की प्रतिद्वि द्विता सी व्याप्त रानी थी। पर और उरुमव पर गा.रण परिवार की स्त्रिया भी अनक प्रकार क शृंगार-प्रमाधन प्रमाण करती चिभिन की गई हैं।

स्त्री शृंगार के मदभ में वीरकाव्य प्रणेताओं ने सालह शृंगार करन का बहुश उल्लेख किया है जिसमें स्पष्ट होता है कि शृंगार क्रिया के सालह ग्रग स्वीकार किए जाते थे। कवि चन्दन शशिब्रता 'इ द्रावती' प्रियाबाई 'मयागिता' तथा दासियाँ सातह शृंगारा से मडिन प्रदर्शित की हैं। रासाकार के अतिरिक्त कवि जटमल न वादन पत्नी, 'परमाल रासोकार न मल्लना' तथा आल्हकार न गजमानिन, 'नरवर गड की मालिन' और वीरीगण की स्त्रिया द्वारा सालह शृंगार करन का उल्लेख किया है।

सालह शृंगारा के वीरकाव्य में प्रचुर निर्देश मिलते हुए भी न तो किसी वीर काव्यप्रणेता ने उनकी तालिका दी है और न उनके द्वारा वर्णित शृंगार प्रकारों की सख्या ही निश्चित रूप में सालह बटती है। सम्वृत साहित्य में भी उनकी देश और काल के भदानुसार, वपम्ययुक्त तालिका मिलती है। श्री अग्निदव विद्यालकार ने सुभा पितावली' उज्वल नीलमणि और उत्तर मेघ के आधार पर पाठश शृंगारा की जा तीन सूचिया दी है "उम—१ उमटन, २ स्नान ३ सुवसन ४ तिलक-रचना ५ वण पाण रचना, ६ चरण राग या आलकनक का प्रयोग, ७ अगरागो से शरीरागा का चचिन करन और ८ ताम्बूल-सेवन को तीनों सूचिया में स्थान दिया

१ "सुवन छुट्ट घटिकादि। पोटस वपाय।" — प० रा०, का० ८०४।३१६

२ 'सिगार सात्प कर। मुग्ग्न दपन धरे।' — वही, १०२५।७

३ 'पट दून चवमुन म उरत। सिनगार अबूपन एकहन।' — वही ६५३।८८

४ 'सुवीर चारु सो रस। सिगार मडि पोटम।' — वही १६५।२५२० और भी ८० वही १६७।१०५ १६७।१२६

५ दे० वही, २११२।८८

६ 'तव मन ताजि मजान नारि वादल प आई।' — गा० क०, व० ११३

७ 'यह कहत ग्रथ मनिजान धर य पाडश सिगार गति।' — 'पर० रा०', १०।३३५

८ 'वारहु भूपण सज सुहायिन जो करिके मारहु सिगार।' — आ० ४४०।६, ६१० ददिए—वही, ४४०।६ २३६।६

११ दे०—'प्राचीन भारत के प्रमाधन, प० ४०-४१

गया है। १ घाट-गाने, २ गाना-गाने का कुत्ता-गाना ३ भगना या मूर्खी-  
घारण करण, ४ गाना मोलता क प्रयाग ५ पुष्पमाता धारण करण ६ हाथ म  
कमल सेने, ७ तितुत पर तितुत यगा का दा मूर्खिया म तथा १ कानुत,  
२ कानुत और ३ कानुत गाना ४ हाथ म कानुत का १ कानुत म पुष्प-गाना  
६ गाना पत्राणि स गरीर का तितुत-गाना ७ मन्त्री-गाना ८ गाना भग और  
दाता म मिम्मी गाना का माग तितुत एक मूर्खी म शृंगार क गाना घना म परि  
गणित किया गया है। इन अर्थों के कारण तीनों मूर्खिया म मानह शृंगार क गाना  
पर पञ्चीम शृंगार की सामाजिकी प्राप्त होती है।

आर्द्र-ए-अवधरी म भी शृंगार क मानह घना की जा सामाजिकी की गई है  
उत्तरे अनुसार १ तन या उबटा गाना २ हात ३ कानुत बांधता ४ गाना म  
मोती भरता, ५ घना विनयन, ६ मुसता ७ सम्प्रदाय या जानि विनय स सम्प्र-  
विह्व बाना-उह मुकता या रक्षा-भरणा स जातुत करता ८ काजत गाना  
९ कर्षा-भरण पहना, १० गान म काज या तय पहना ११ श्री-भरण धारण  
करना, १२ मुता जीर पुष्पा क हात पहना १३ मन्त्री-गाना १४ किकिणी  
पहनना, १५ परा म जाभूषण पहना १६ गान गान तथा स्त्री का मधुर गानिणी  
हो के साथ साथ उगवा कामना चातुय स्त्री गान क मानह प्रग हान है।<sup>१</sup>

हिन्दी शब्द 'गानर' जीर प्रामाणिक हिन्दी वाक्य म - १ उबटा २ हात  
३ गध द्रव्याणि का प्रयाग ४ काजत गाना ५ कणी कषत ६ माग भरता  
७ विन्ती एक तितुत रचना ८ विबुत पर तितुत गाना ९ मन्त्री रचना १०  
महावर लगता ११ पुष्पमाता क पहना १२ साम्प्रदाय १३ दाता पर मिस्ती  
लगाना १४ मुसता जीर जाभूषण पहना तो गान काश म मानह शृंगार म परि  
गणित किया गया है। 'गान' गानर म मानहों शृंगार हाठ रचना का माना गया है  
जबकि द्वितीय वाक्य म उगवा गाना दन गाना करन का दिया गया है।

मानह शृंगार क सम्प्रदाय म इन अर्थों के कारण हम जानाय केशवदास  
का कवि नियम कणन शीघर क अन्तगत 'यत्न किया गया यत्न मन अधिक समी  
चीन प्रतीत जाना है कि यद्यपि स्त्रियों का प्रसार के शृंगार करती है तथापि कवि  
प्रमिद्धि म मानह शृंगार क हान गान क तिससे उत्तरे शृंगार-कणन क प्रसंग म मानह  
शृंगार का ही उल्लेख करना चाहिए।

१ दे०— आर्द्र ए अवधरी' भाग ३ प० ३४२ ४३

२ दे०— हिन्दी शब्द गानर प० ३६६२

३ दे०— प्रामाणिक हिन्दी कोश प० १२२८

४ महज सिंगारत गुदरी जल्प सिंगार जपार।

तदपि बखानत मवल कवि सौरहई सिंगार। — कविप्रिया, ४।१६

सोलह शृ गारा के विषय म यह तथ्य भी निवेदनीय है कि इन बाह्यारोपित सोलह शृ गारा के स्थान पर स्त्रिया के शरीर म सोलह प्रकृति प्रदत्त शृगार भी स्वीकार किए जात थे। कवि चन्द न महारानी इच्छिनि के 'कुच क मुख से (जो सयो गिता क कामवनि गह म निवास का सौभाग्य प्राप्त कर आया था) सयागिता के कुच भुजभून नितप्र एव जघाआ को पृथुल, उसके कर कटि, और कमलस्थल (गुह्याग) का कृश नग हास, कण थोर माग को उज्ज्वल तथा कुचाग्रभाग कच एव दगतिला का श्यामवण के वतवाकर उमकी तन वल्लरी सोनह शृ गारा का जाकर प्रदर्शित की है।<sup>१</sup>

वीरकाव्य म उपलब्ध निर्देशों क आधार पर सोलह शृगारा पर प्रकाश डालन स पून यह निवृत्त करना भी आवश्यक है कि उमम हाय म कमन-गुण लेना, दन मजन, होठ रचान जादि का चित्रण नहीं मिलता। इसी भाति मिम्मी का प्रयाग भी शृ गार वणन के प्रसमा म अनुल्लिखित है। मुस्लिम लखव नवुन फजन द्वारा भी मिम्मी क प्रयाग का सालह शृ गारो म परिगणित न करना विशय महत्त्वपूर्ण है क्योंकि दस प्राय मुगल साम्यता की ही दन स्वीकार किया जाता है। वीरकाव्य म भकृटिया का वज्जल रेखा स श्याम और वत्र वनान तथा कपोला पर चन्दन चित्रा की रचना करन क दा अभिनव शृ गारा का भी चित्रण मिलता है। स्त्रिया की भांति पुरुष भी इनम कई प्रकार के शृ गार करत मिलते है किन्तु विवेचन सौक्य की दृष्टि से पहले स्त्री शृ गारा पर प्रकाश डाला जा रहा है।

(१) उवटन— उवटन मलन का मूलाद्देश्य शरीरागाम मादव लाकर, उनकी वातिवधन करना हाता है। कवि चन्द ने इच्छिनि<sup>१</sup> और शशिब्रता<sup>१</sup> शृ गारारम्भ म म्ब-दासिया से उवटन मनवाने चित्रित की है।

(२) स्नान— स्नान को नित्यक कम के स्थान पर सोलह शृ गारो म परि गणित करन का मूलकारण कदाचित यही है कि, उससे शरीरागाम की वाति निखर उठती है। इच्छिनि,<sup>१</sup> शशिब्रता<sup>१</sup> उवटन मलवाने के पश्चात स्नान करती है। स्नान के

१ मिंगल धून सित असित। थान चव एक एक प्रति।

पानि पाइ कटि कमल। सथन रजे सुधम अनि।

कुचमन्त्र भुजभून, नितप्रजघा गुणभक्त करज हास गोत्रान माग उज्ज्व माउत्त,  
कुच अग्र कच्च द्विग मद्रि तिल, स्पामा जग सत्र गवत।

पान्स सिंगार सारून सजि। साइ रज सजागितन।<sup>१</sup>

—प० रा०<sup>१</sup> का० ११७५।१०५

२ "विन वमैर अ ग गुरग रसी। मुहल जालाप मदन कमी।

लव सानइ लोइ उमट्टन कौ। कि वस्यी मनु काम सुपट्टन कौ।<sup>१</sup>

—'प० रा०<sup>१</sup> का० ५५०।५५

३ स ५ ऋणि—वही, ८०२।३०४, ५५१।५३, १००५।५७



निर प्रयुक्त जा को धारण' और 'वेगरे' आदि 'गान्ध' मुद्रांगित कर लिया जाता था। 'द्रात्रयी,' 'हमात्रयी' और 'मयोनिता' भी अन्य श्रुतार करत म पूर म्नात करती हैं। 'वेश्यागमत्री' ने महाराज वीरगिरि स्व की पत्न्याने भगवत समारत जाभूषण धारण करत स पूर म्नात करत चित्रित की है।<sup>१</sup>

(३) मध द्रव्यादि का प्रयोग—सामाजिक शरीर का मगर चरत और कपूर आदि के विलयन स चरित किया जाता था। 'चिद्वि' स्व शरीर पाद्यरत उस बहु धूप के धूम स मुगधित करती हैं। 'द्रात्रयी' कान्ती धारण करत स पूर म्नात का विलयन लगाती है 'जवकि सयोगिता म्नारीर का चिद्वि प्रवागीय मुगधिया म विभूषित करती है।' वीरगिरि स्व की रानिया बहुविधि भगवत का प्रयाग करती तथा चदन के चार चित्रपन स भगवुति अभिवद्ध करती हैं।<sup>२</sup> भूषण न दय मुनाव चोवा और घनसार का प्रयाग परोक्ष रूप स प्रदर्शित किया है। उनर श्रुत म महा राज शिवाजी क भास क कारण वेगमा का इन मुगधित द्रव्या की माद ही विस्मत हो जाती है।<sup>३</sup>

(४) वेशी-म घन—भीम वेशा का मुमान के लिए उह अमर आदि सुवा सित धूपो का धूम दिया जाता था। सयोगिता अपन जावण भरत हुए वेशा का सुवासित धूम म सुसात चित्रित की गयी है।<sup>४</sup> वशी या कवरी बांधन स पूर उनम दय पुनेल डाले जाने थे। शशिप्रता 'सयोगिता' और 'गजमातिन' अपन वेशा म सुगधित तेल का प्रयोग करने प्रदर्शित की गई है। वेशा को धुधराल सुयोमल और राम्य बनाने के प्रयास किए जात थे। कवि चन्द न सयोगिता और चिद्वि अपन मुसार विदा पर वेशा की एक एक लट गिराय प्रदर्शित की है।<sup>५</sup> जोधराज ने जणराजा की जलबो म भ्रमर समूह का प्रमत्त रहना चित्रित किया है।<sup>६</sup> 'वेश्यागमत्री' ने भी छोटी-छोटी अलकें चमकत कियाई है।<sup>७</sup> श्रीजगिदव विद्यालकार ने भी प्राचीनवाली केश प्रसाधन म जलकजाल बनाने धुधरानी लटें ललाट आर मस्तक पर सुशोभित करन तथा उह मुक्ता या पुष्पा स मूधकर सजाने की प्रथा होन का उल्लेख किया है।

१ से ५ द०—म० ८०२।३०३ ३०५ १०२५।५७ १०८४।१५८ १६६८।५१

६ 'कहु निय मजन भजन कर भगवत बहु भगति धर।' — वी० च० २०।२०

७ 'करि मजन अगाछि तर धूप यानि बहु अग। — प० रा० व० ५५।५३

८ स १६—दलिए—म० ५० रा० वा० १०२६।६१ वही, १६५।५२।२०

वी० च०, २०।२० वही २६।४ शि० वा०' ११ प० रा० वा १६६८।

५५ वही ८०३।३१० वही १६६८।५३ वा०' १६४।५

१७ से १६—दलिए—म० ५० रा०, वा० १६६८।५७ ६७।१५०, ६० रा०

१४०, वी० च०, २२।६६

२० प्राचीन भारत क प्रसाधन, प० ४४

कवि पदमाकर ने उत्कृष्ट सौन्दर्य के परिमाण श्राणिपुत्र केशा का ही नहीं, बरन् एडिया का चूमने जाने, केशो वाली स्त्रिया प्रदर्शित की है।

वेणी बाधने की रीतिया म या तो नागिन मद्गुण एक जटवाली कवरी का प्रचलन था, अथवा अधुना बहु प्रचलित दुहरी वेणी के स्थान पर तीन वेणिया बनाइ जाती थी। कवि चन्द ने शशिक्रता तथा जाधराज न अप्सराएँ तीन वेणिया घाग्ण किए चित्रित की है। सूदन और जाह्नकार ने चुटीने के प्रयोग पर भी प्रकाश डाला है।

(५) माग निकालना—केशा का शीश क मध्य भाग से दाना जोर विभाजित करत हुए माँग या पटिया निकाली जाती थी। कवि चन्द ने पटिया का प्रेम की वाट बताकर, तथा जोधराज ने सुघर पटिया का शृगार-भूमि क फटन से उपमित करके 'उनकी स्त्री शृगार म महत्ता का अभिद्योतन किया है। जाभरणा क प्रयाग म पीछे माँग या सीमात का माती और लाल आदि से विभूषित करने का उल्लेख किया जा चुका है। सधवा स्त्रिया माती आदि के ऊपर सिद्धू का भी प्रयाग करती थी, जिसका कवि चन्द 'केशव' और जाह्नकार ने चित्रण किया है।

(६) काजल सगाना—वीरकाव्यकारो ने स्त्रिया के वज्जल कलित नेत्रो को वशीकरण का अमाधास्त्र बताकर 'नेत्रो म मसि का प्रयाग उनके शृगार का एक महत्त्व पूर्ण अंग सिद्ध किया है। काजल को सुगन्धित और गुणकारी बनाने के लिए धनवान् म्रियया उसम कम्तूरी भी मिला लेती थी जबकि निधन स्त्रियाँ मात्र माधारण ममि का ही जाजवर जभोष्ट साधन करती थी।' जाँखा म काजल उगाने के साथ साथ, उनके बोआ क इतस्तत सुरमा की रमा सीचकर व अपने नेत्रा जो अनियारे एव कामनचारी दिखाने का भी प्रयाग करती थी।' दृच्छिनि, द्रावती शशिक्रता, सयोगिता वीरमिह की रानिया जोर गजमातिन, सभी म्रियया शृगार करत हुए काजल

१ 'गुणि धनी गुनफे निजियत तुलन छ छ गुनफ छिनि छहर ।'

— प्र० वि०, ११३

२ 'अनक पुण धीचि प्रिय । भामिना त्रिपडिय ।

मग सनाग पुण जाति । तीन पचि मडिय ।' — प० रा० वा० ८०३।३१०

३ 'स्ववेस बग पामय, मना कि मन फासय ।

गुही शिखिद्धि बनिय कि माह किन मनय । — 'ह० रा० १३२

८ स ७६०—प्रम० मु० च० ६।२।६१, 'जा०' १६४।४, प० रा०, वा० ५५३।६८, वही, ८०३।१११]

८ स १४६०—प्रम०, 'ह० रा० १३३, प० रा०, वा० ८०३।३११, वी० च०' २१।४, जा०, ४६०, प० रा०, वा० ५६४।१४६, वही १८।४८, वा०' १६४।६

समाप्त नहीं होती। काजल के प्रयोग में मुगल स्त्रियाँ भी पीछे नहीं थीं। भूषण ने उनका बज्जल मिथ्या अथवा मयमुता-जल का और भी अधिक श्यामरण हा जाना प्रदर्शित किया है।<sup>१</sup>

(७) यक़िम भूकुटियों की रचना करना—अनिचारे दगा पर यक़िम भू विनाम का सगम प्रियजन द्विप-वधन में राम राण जाता गफन रहना है। यही कारण है कि कवि 'द ग सयोगिता' और प्रियाकवरि' बज्जल मति में अपनी भोट श्याम-वण तथा यक़िम बनाते प्रदर्शित की हैं। डॉ० बी० ए० घापडा न भी यह मुगलकालीन नारी शृंगार की एक यह प्रचलित रीति बताई है।

(८) बिन्दी एवं तिलक रचना—मस्तक पर तिलक आइ, और यक़िया के लगाने के प्रचलन पर पीछे प्रकाश डाला जा चुका है। इनके अनिश्चित सिद्ध बज्जल और केसर आदि से भी तिलक और बिन्दी की रचना करने का प्रचलन था। पृथ्वीराजरासो के दो भिन्न प्रसंगों में दपण-हस्ता स्यागिना कस्तूरी केसर और काजल से तिलक रचना करने उनके इतस्तत बज्जल रखाएँ सींचते चित्रित की गई है।<sup>२</sup> हम्मीर रासा में अष्यागत्रा के मस्तक बहुदाकार लाल रंग की बिन्दीया से सुशोभित दिखाए गए हैं।<sup>३</sup> कवि मान न सरस्वती के चन्दन और केसर चिह्नित मस्तक पर सिद्ध की लाल बिन्दी लगी प्रदर्शित की है।<sup>४</sup> भूषण ने काम कलिरत बामाजा के मस्तक पर लगी लाल बिन्दीयों विषयत दिखाई हैं<sup>५</sup> तथा यवन-मलिन्या के मस्तकों को भी सिद्ध बिन्दीयों दिखाकर<sup>६</sup> प्रकारांतर से मस्तक पर सिद्ध की बिन्दीयों लगाने का प्रचलन पर प्रकाश डाला है।

१ देविए— शि० भू० २६६ और भी देविए छ० १०१, २६७

२ 'रच जल बज्जल रेप सुमेप । मुपी भय काम जर जनु एप ।'

— प० रा० का० १६६८।५८

३ 'बनी वर भौह सु बकिय एह मनो धनु काम धर त्रि जेह ।' — वही ६५२।७४

४ 'It was usual for high class ladies to use missta for blackening between the teeth and antimony for darkening their eyelashes'

— Society and Culture in Mughal Age, p 22

५ (क) 'तिलक द्रव्यन करी । थव न मडन धरी ।

— प० रा० का० १६५४।२५१५

(ख) तिलक सभाल रची रचि रप । मना भय गेह दुआरिन दप ।

धन भुअ दूज तिलकस्त रानि । जित धर अद्वर सग्य मुतानि ।

— वही १६६८।५७

६ से ६— दे० नम० ह० रा० १३५ रा० वि० १।२७ भू० प्र०, स्फुट छ०

४४ शि० भू०, १७३

कवि भूषण द्वारा मधया मुस्लिम स्त्रिया का भी सिद्धर की विन्दिया लगाय प्रशंसित करत के विषय म ना शब्द अपगित हैं । भूषण प्रयावली क संग्रहक एव टीकाकारा न, एगवे विषय म शरा उठाकर भिन्न भिन्न मत व्यक्त किय हैं । इस छन्द म सिद्धर का प्रयोग प्रशंसित करन वाली पविता र विषय म मिश्रवधु ॥ और प्रजरत्नगता म पाठ भेद भी मिलता है । मिश्रवधुआ न उगवा पाठ - तर रास दगियत जागर दिल्ली म तिन गिट्टर क बुद मुग ददु जमनीन क' देवर पाटिष्णी म सभावना व्यक्त की है कि उन तिन मधया मुगल स्त्रिया सिद्धर का प्रयोग करती था ।<sup>१</sup> श्रावजरत्न दान न, उगवा पाठ -

'तर रास देखियत आगर तिल्वी क बीच सिद्धर न बुद मुल ददु जमनीन क'<sup>२</sup>  
 देवर परिगिष्ट म गिष्णी दा है कि मुगलमाना म सिद्धर दा की प्रथा नहीं है पर कवि न यह प्रशंसा किया है कि माना क आरम्भ ही म विषया हा गर्द थी, इगोलिए उनक मुग क द पर सिद्धर बुद नहीं गिता । कर्ता न होगा कि प्रजरत्नगता द्वारा लिख गए पाठ म सिद्धर बुद दिखन का उल्लेख है । श्री राजनाथ शर्मा न एक अय ही कल्पना की है । उनसे अनुसार मुगल स्त्रिया न सिद्धर विदु इसलिए लगा रसे हैं कि क हिंदू स्त्रियां जान पड़ें जोर उनरी रक्षा हा जाय ।<sup>३</sup> यह अय भी दो दष्टिया स अग्राह्य है—प्रथम ता प्रस्तुत पद की पठनी पविता— सरजा समक्ष वीर तर वर बीजापुर वरी बयगिन कर चीह न चुरीन क ' म भूषण मुगल पत्निया के बधव्य का बणन करत है अत सदभगत पविता म भा बधव्य का ही बणन तबसगत है । दूसरे जगता म भटाती हुई मुस्लिम स्त्रिया की मात्र सिद्धर बुद क कारण सनिका म रक्षा होना और वह भी उनरा सम्मान करन क लिए प्रसिद्ध महाराज शिवाजी के सदभ म सबया अनुपयुक्त गगता है । अत हमारी दष्टि म मिश्रवधुओ द्वारा प्रदत्त पाठ ही अधिक उगयुक्त है । हा मधया मुस्लिम स्त्रिया द्वारा सिद्धर का प्रयोग करन के सम्बन्ध म हमारा अनुमान है कि इस मुगता की मभी पत्निया क स्थान पर उनकी हिंदू पत्निया क लिए प्रयत्न समझना चाहिए, जा अपन हिंदू सम्पारा क कारण यदि सिद्धर का प्रयोग करती रही हा ता इसम अनीचित्य ही क्या है ? अधररिया मुसलमाना अर्थान हिंदुआ न मुस्लिम बन लागी की पत्निया क विषय म भी यही सम्भावना की जा सकती है ।

(६) चिबुक पर तिल बनाना—गोगभ मुलचन्द्र पर काल निल की शोभा न कनिया का निल शतन जसी वृत्तिया र प्रणयन की प्रेरणा थी है । आलोच्यका न म भी इसकी इतनी महत्ता थी कि यदि स्वाभाविक तित न हा तो उसरी मूर्ति ठोड़ी

१ स ३ दे०—कम० 'भू० घ०' मिश्रवधु, प० ६१, 'भू० घ०', ब्रजनाम, प० ११,  
 'भू० घ० राज० शमा प० १०६  
 ४ 'शि० भू०', प० १७३

पर ममि का वृत्रिम निल बनाकर करली जाती थी। सयोगिता सोलह सिगार करते हुए चिबुक पर तिन रचना करते चित्रित की गई है।<sup>१</sup>

(१०) कपोलों पर चित्र रचना—शृंगार के बोधगन सोलह जगो म अनु-ल्लिखित श्रम शृंगार पद्धति का कवि चन्द्र और केशवदाम ने उल्लेख किया है। कवि चन्द्र ने सयोगिता स्वमुगचन्द्र या रस्तूरी और घनसार विदुजा से मणित करते चित्रित की है।<sup>२</sup> महाराज बीरगिह दम की जन प्रीडा का यणन करत हुए कवि केशव ने उनकी रागिया के कपोला में चन्द्र और केशव निमित्त चित्रा का मिट जाना प्रदर्शित करके<sup>३</sup> परोक्ष रूप में मणित किया है कि कपोला पर चित्र रचना भी स्त्री सिगार का एक आवश्यक अंग थी। जयिन्द्व विद्यालवारन भी प्राचीनकाल में कपोला पर चित्र कम और पत्र भग की रचना करने का प्रचलन दिखाया है।

(११) मेहदी रचाना—कवि चन्द्र ने चन्द्रिका के हाथों के साथ उगव नरा भी मेहदी रचित प्रदर्शित किए हैं।<sup>४</sup> कवि मान ने मरम्बती और रूपचुवरि का<sup>५</sup> तथा कवि चन्द्र और जोधराजने अप्पारा-शृंगार का यणन करत हुए उह स्व करा पर मेहदी रचाना चित्रित करके<sup>६</sup> मेहदी के प्रयोग का स्त्री शृंगार का आवश्यक अंग दिखाया है।

(१२) महावर जावक या भ्रातृवत्क से एडिया रचाना—कवि चन्द्र ने इच्छनी द्वारा मुरग एडिया का जावन ग रगन के दृश्य का उसका गीभाग्य का प्रकाश बताया है जिसमें स्पष्ट होता है कि सधवाआ के लिए एडिया का रचाना आवश्यक समझा जाता था। श्री जयिन्द्व विद्यालवारन भी मगवर का उल्लेखना शांत या चन्द्र या मूर्ति चन्द्र या अन गुणगिन म्पिया मगन चित्त रूप में एडिया धारण करती थी।<sup>७</sup> महावर शृंगार या जावक का प्रयोग उगभग मभी स्त्रिया के शृंगार यणन में मिलता है। चन्द्र चन्द्रावती<sup>८</sup> बीर<sup>९</sup> और सयोगिता<sup>१०</sup>

१ चिबुक पर चित्र रचने में यानि, प्रयोगिता का जगो मगु टाति।

— प० रा० का० १६६।६१

२ कुट्टी मणि चन्द्र म चन्द्र कमतर् चित्र पागार चिन्दा। — स्त्री १६७।१०७

३ मिटे कपोलित चन्द्र चित्र नाम कगरि च्ची शिचि। — वा० गी० १।२१

४ च० प्राचीन भारत के प्रमाण प० ३३

५ चन्द्र चन्द्र चन्द्रावती। मगव म्पिया चिन्दा चिन्दा।

प० रा० मा० १।२।३।५१

६ ३ 'रा० चि० १।१८ ३।३ प० रा० का० २।६६।६६ ६० रा० ३।३

७ चन्द्र चन्द्र चन्द्र। उगम जीविय म मगिय।

गीवन चन्द्र मगव। म चन्द्र चन्द्र चन्द्र चन्द्र। — प० रा० का० १६६।६०

८ च० प्राचीन भारत के प्रमाण प० ६०

९ म १२—चिन्दा—चन्द्र चन्द्र चन्द्र का १०६६।६२ १०६३।६१

१६६६।६१६

का जायक मे, बेशक और मान ने प्रमाण वीरमह देव की यन्त्रात्में<sup>१</sup> तथा सरस्वती देवी रूपकुरि<sup>२</sup> एव आल्लवार न गनमोतिन तथा मयागिता<sup>३</sup> महाधर से पण्डिया रचाण प्रशित की हैं। पन्माकर ने नदध गुर और जायक के प्रयाग पर प्रयाग डाला है।

(१३) पुष्पमात्रां धारण करना—शृंगार के सातह अंग म पुष्प प्रयाग का परिगणन मीर्याभिबद्धि का निमित्त हा। क माय माय म्रिया की प्रति के प्रति टुनाता पापन का भी प्रतीक है। 'शृंगार क' लम प्रयापन वा मय्यता की पर वर्तमानादीन उपाधियां<sup>४</sup> जबकि जादिम युग म व पुष्पा का अंग म गवन तथा उनकी मात्राभा का बगी और गोवा आदि म धारण करन क अनिगित पुष्पा का तनुकी और बगता चाकर भी पढ़ता थी। 'शशिप्रा' और मयागिता<sup>५</sup> का म पुष्प मयती है। मयागिता अपनी बणी म गुमन मात धा ण करती है<sup>६</sup> 'वकि शीरमि' स्व की गनिया की बबगिया कुमुम तार म विधरन प्रशित की मर है।<sup>७</sup> मात न म यती का चरती जूही चपा बुन कसर मररद मारती, और मागर-पुष्पा क टार पहर प्रशित करी<sup>८</sup> क माय-माय मात्रिनें पुष्पा की दानी सुदर कचुकी गिदुन जाण ववन निमित्त करन प्रशित की हैं। 'निन' तयनाका मान म म्रिया क मन उह धारण करन का मचन उठत थ।<sup>९</sup> जाधराज न मय्य और विरार बाताण गल म पुष्पमात्राण धारण कि प्रशित की हैं।<sup>१०</sup>

(१४) पान खाना—मालह शृंगारा का ताम्बून मवा भी एक आवश्यक अंग था, जिमका अभिप्रेत मुलशशास को सुवासित करना तथा हाठ रचाना रहता हागा। कवि चन्द ने मयागिता का तीन बार शृंगार धणन किया है, और प्रत्येक

१ से ४—'०—'प्रम० 'वी० च० २२।८३ 'रा० वि० १।१३ ७।२१ 'आ०',

१६३।१८ १।११५, प्र० वि० ११० ११२

५ "आक पुष्प वीचि ग्रथि । भामिता म्रियन्थि ।" —प० रा०' का० ८०३।३१०

६ वर रचिध वम विधि सुमा पनि । निच धरे जमन जल गग कति ।'

—प० रा०, का०, १६७।१०६

७ "कचरी कुमुम विसरत नथ । श्रुति कु डन ताल दुमाजनय ।

—वही, १६६३।१३

८ कुमुम भार कचरी छुटि गई । तचन वचन सिधिल गति भई ।

—'वी० च०', २५।१

९ द०—'रा० वि०', १।३०

१० 'किनी तहें मालनि पूरति मान, गुहे क चौर भाव भमान ।

सु कचुकि गिदुक वचन भति, विलोकहि वाम करे मन खनि ।' —वही, २।२७

११ दे०—'ह० रा०, १०८, ११४

सदम में बहताम्बुज का मयल रंग विविध की है ।<sup>१</sup> इसका अतिरिक्त उमन इच्छनी का,<sup>२</sup> तथा आल्लक्षार 'गजगोपि' का पात गाया विगाया है । कवि मान न भी सम्भवती का मुप ताम्बुज म मटित प्रशिक्षण किया है ।

(१५) मुषसन गजगज का अभिप्राय यही है कि धारण विण जात यान वस्तु पतार छटात तथा रंग आदि की शक्ति म मुष्निपूण है । गीर उह मम चातुय स पतार जाय कि २ विविध शरीरगंगा म एक अतिरिक्त आरपण पत्र कर मर्के । पीरवाध्य म वणिन तागिया ती तात ओर तीन रंग म वस्तु का प्रतिबन्धी शक्ति प्रदर्शित की गई है ।<sup>३</sup> गीर उताती गीर रण गाया पर दा रगा र कपणा म विभिन्न यतुकी जोर घोषण तां पीयूष पत्र त्र ओर ताम जाति क सत्त कासात्त जत विविध विषय म है । एत वस्तु का मुग्धित द ग म चर्चित कर्ता का भी प्रचरन था ।<sup>४</sup>

(१६) धातुपण पहनना आभूषणा का नागी गीय क अविषय क विण विस्त प्रकाश अपरिहाय ममभा ताता था तथा क विविध गीरगंगा का विविध आभूषणा स मन्त्रित करती थी इन तथ्या पर पाद्य प्रमाण उगा जा तुता है ।

पुरुष

दन्त-धातु

पृथ्वीराजगंगा म आल्लक्ष गीर उता शीतु करण प्रदर्शित विण मग है 'नवनि पीरचरित्र म महागज वीरगि' २ व की दन्त धातु प्रिया का सम्पूर्ण विवरण दिया गया है । रंगक अनुसार महागज का विण कमन पत्र क ताना म कपूर एव वत्तीस दानुन प्रस्तुत की जाती थी । ये दानुना का कपूर म दुबोतर प्रयत्न करण थे तथा प्रति बार कुल्ला करन क गाथ ही उता कक दा थ । यही प्रम वत्तीस बार चलन पर उनकी दन्तधातु प्रिया ममाप्त होती थी ।

- १ म४ द०—मम० प० रा० का० १६५४।२५१६ १६५७।२५६० १६७६।१४२ ५६५।१६१ आ० ४४०।१६ ग० वि० १।३०
- ५ देखिए—मम० 'पू० ग० का० ८०२।२०३ वही ८०२।३१४ वही १६७६। १२० 'रा० वि०, ७।१५ 'वी० च० २६।१५ ह० रा० १४० ह० ह० छ० ६, 'आ०', १४।१४
- ६ "आतन पर सुभ सीवर घन । वसन सरीर मुग्धित घन ।  
— वी० च०' २५।३
- ७ ' करि दातोन सनात । ध्यान गारप का ध्यायी ।  
— 'प० रा० का० २५२५।३३७
- ८ कर पद है सुचि श्री नरनाथ । तय दातीति लइ निज हाथ ।  
कमल दलन के दोना चार । तिनम धर्यो घना धनसार ।

अगम-मदन —

यह कृत्य मंत्रिया द्वारा उद्वेतन लगवान का स्थानापन था । कविचन्द ने इसस धानु एव शरीर तता की अभिवृद्धि हाने का उल्लेख किया है ।' महाराज पृथ्वीराज का अगममदन शृंगार रम की वृष्टि करनी हुई नवमीवनाभा द्वारा प्रदर्शित किया गया है । जिसस स्पष्ट हाता है कि नरेशा के अगममदन के लिए प्रायः कुछ नितिया नियुक्त रहती थी । रामा म चन्द पुष्पीर का अगममदन उ मदनिए करत दियाण गए है । उसके अगममदन म पर्याप्त सुर्गाधत तेन प्रयुक्त हाता था ।' परमालराधा म आत्मा उद्वल जोर सनिक अगममदन करान चित्रित किए हैं ।' महाराज वीरगिह दव के लिए भी मदनिए नियुक्त थे, जा स्नान से पूव उनका अगममदन करत थे ।'

स्नान —

स्नान के लिए गंगाजल का प्रमाण उत्तम समझा जाता था । यही कारण है कि अधिकांश नरेश गंगाजल से स्नान करत मिलत है । कवि चन्द महाराज पृथ्वीराज की तो पूणत गंगाजल से ही स्नान करत प्रदर्शित किया है । जबकि धीरपुंजीर आरम्भ म साधारण जल से स्नान करके, अन्त म एव कनक गंगाजल से स्नान करत मिलता है । महाराज हम्मीरदव' और मावी का राजकुमार' अनुपी भी गंगाजल से स्नान करत मिलते हैं । आनोच्यवान म गंगाजल से स्नान की महत्ता का अनुमान इस तथ्य

तिनम वारि दोरि के कुची । रचिर दत धावनि रवि रची ।

प्रति गढूक डारि तव देत । बटूरि कुची कर ओर उत ।

वत्तिम कुची भरि जब कर । तव सुदत धावन परिहर । — वी० च०' २२।४-७

१ "करि पावन पवित्र बर माहन मुरभि सु तल ।

मदनीक मदन कर बढ धान तन बल । — प० रा० का० ३१।६।३१०

२ "मुनि मरदन का हुकम । होत मरुनी बोलि लिय ।

वय किसोर यन घोर । कच्छि अच्छरि समान त्रिय ॥

तिन नेह वेह मनि देह सुप । बरपि मेह सिगार रस । — वही, १६६४

३ स ५ दे० — नम० प० रा० का० २०६।५।२१७, 'प० रा० २१।६।१, वी० च० २१।१४

६ "करि सनान गगादकह दिय सु गाइ दस दान ।' — प० रा०', का० ३१।६।१३१

७ महस कलन भर नीर । इक्क विच कलस गगाजल ।

करि सनान पार्वति । वीष पञ्च गो महाबल ॥' — वही, २०६।२।२१७

८ "आप राइ चहुशान हमीर । तुरत गगाद गग का नीर ।

करि असनान दान बहु दीह्यो । बहुरि विप्र गुरु पूजन कीह्यो ।

— ह० ह०' च०, २४६

९ "घट भरवावें गगाजल को और डिडढी म कर असनान । — 'आ० ६५



से लगाया जा सकता है कि अकबर आदि मुगल बादशाह भी अपने स्नान के लिए उसका प्रयोग करते थे।<sup>१</sup>

गंध द्रव्यादि का प्रयोग —

शाहीपरायन स्त्रियाँ की भाँति पुरुष भी सुगंधित विलपना का प्रयोग करते थे। कवि चन्दन महाराज पृथ्वीराज का कस्तूरी कमर और गजानि के विलपना से स्वकाया का चर्चित करते प्रशंसित किया है। जयन श्रीरामाचारण के त्रिण भी चन्दन उड़कपूर, केसर और कुमकुम का अग्रतया का प्रयोग करते प्रदर्शित किया है।<sup>१</sup> वीरचरित्र में वीरगति प्राप्त करने पर तथा परमाणुरागो में उत्तम जोर प्रह्ला<sup>१</sup> के शरीर का इत्यादि से सुवासित बनाकर उनका द्वारा सुगंधिया के प्रयोग पर प्रकाश रखा गया है।

आवास —

६०

वीरगाय में मुख्यतया राजमहता तथा उच्चवर्ग के जातियों का चित्रण मिलता है। इन चित्रण से जातच्यका गीन जातियाँ सम्बन्धी अधोत्थित तथा पर प्रकाश पड़ता है।

राजमहता प्रायः मतलब दे बनाए जाते थे। पृथ्वीराजरासो में महाराज पृथ्वीराज के नौजवासियाँ तथा सामान्यतया धनाढ्य लोगों के एक वीरचरित्र में महाराज वीरसिंह के महान मतलब दे प्रदर्शित किया गया है। जाल्खन में महाराज जयचन्द<sup>१</sup> माडो-नरेश<sup>१</sup> और पथरीगत नरेश<sup>१</sup> के भवन सतलख बनाए गए हैं। कवि त्रिद्यापति ने जौनपुर में शाह इब्राहीम गद्दी के महता से मूय रथ के सप्त अश्वों की टापा के टकरा जान<sup>१</sup> का उल्लेख करते तथा कवि मान ने उदयपुर के महता के ध्वजादट और स्वर्ण बनना को जाकाश चुम्बी प्रशंसित करते<sup>१</sup> उनके बहुत ऊँचे हान का अवबाध कराया है। कवि भूषण ने महाराज शिवाजी के महता को एस स्फटिक से निर्मित किया है जिसे मृत् प्रतिविम्ब देखा जा सकता था।<sup>१</sup> इन महता में केशवनासजी ने चन्दन की कडियाँ<sup>१</sup> और स्वर्ण पुष्प जटिल कपाटा का<sup>१</sup> तथा चन्द ने स्वर्णमटिल कपाटा का प्रयोग किया है।<sup>१</sup> आल्हवार ने भी चन्दन का सिडकियाँ गी प्रदर्शित की हैं।<sup>१</sup>

१ दे०—आर्देन ए अकबरी भा० ३ प० ५७

२ से ६—दे०—अम० प० रा०, का० ३१६।११० प० रा०, मा० ३।५६८।  
१२६ वी० च० ५।६७ प० रा० ३१।३०, ३५।८५

७ न १७—नेमि—अम० प० रा० का० १५५।२६ वही, १६३।३५४, वही  
१८।४४, जा० १२।१०, वही ५१।१२ वही १७२।७ कीर्ति०, प० ५२  
रा० वि० २।६६ शि० भू० १८ वी० च० २०।३ वही, २०।७

१८ १६—द०—अम० प० रा० का० १२६६।२२, जा० ५१।१३,

अतमहलाम दरवाजा पर प्राय मुक्ता और चित्र विचित्र विद्रुमा की भालरो वा, परदो के रूप म प्रयोग किया जाता था ।<sup>१</sup> हम्मीर रासो म जरवाप के परदे दिलाए गए हैं ।<sup>२</sup>

इन महलाम विभिन्न प्रयोजना के लिए पृथक पृथक वस्त्र हात म । केशव<sup>३</sup> ने महाराज वीरगिह देव के महल म वस्त्रगाला जलगाला, मेवा गाला, पानगाला, शृंगार गाला मत्रगाला और धनगालाएँ प्रदर्शित की है ।<sup>३</sup> पथ्वीराज रासो मे चित्रगाला<sup>४</sup> तथा धाल्लवण<sup>५</sup> म रनमहन या गीगमहल का<sup>६</sup> उल्लेख मिलता है । वनावट के आधार पर भी महल या मकाना के विभिन्न भाग पथक पथक अभिधानाम अभिहित दिए जाते थे । इनम से बीरकाव्य म अटारी और अटा<sup>७</sup>, तिवार और चौवार<sup>८</sup> दरीचो, तिवारी और दुवारी<sup>९</sup> ड्योड़ी<sup>१०</sup>, सिदरी<sup>११</sup> और वारहदरी<sup>१२</sup> और चौपाल<sup>१३</sup> का निर्देश मिलता है ।

वीरचरित्र म अहन के प्राण को पाच चौका मे विमन्न दिनात हुए प्रथम मे समा, दूसरे म नत्यादि, तीसरे मे भोजन करने, चौथे म मचना करने तथा पाँचवें मे सुन्दरिया क मुक्किलास का चित्रण किया गया ।<sup>१३</sup> कवि गोरेलाल और धाल्लकार के निर्देशो से स्पष्ट होता है कि साधारण लोग के मकाना पर बास और गॉडर के छप्पर पड़े रहते थे ।<sup>१४</sup>

इन महला के आस पास भाति भाति के लता वृक्षादि स युक्त उपवन और बाग लगे रहते थे । कवि च<sup>१५</sup> ने महाराज पथ्वीराज के 'निगम-बोध के समीप स्थित महल को बाग स घिरा हुआ और मुगधित वातावरण से आपूरित दिखाया है ।<sup>१६</sup> 'परमाल रासा' मे महाराज पथ्वीराज और परमाल के बागो मे अनेक प्रकार के लता-वृक्षादि होन का चित्रण किया गया है ।<sup>१७</sup> इसी भांति कवि जोधराज ने महाराज हम्मीरदव,<sup>१८</sup> मान न महाराज राजसि<sup>१९</sup> और भूषण न महाराज शिवाजी के महला<sup>२०</sup> का बाग-वगीचो स घिरा प्र<sup>२१</sup>णित किया है ।

महलो की चारदीवारी क अतगत त्रीडा पवन, धारा धाम जल-यत्र, वृत्रिम दौल शिखर और वागी तडागादि मुखोपमोग के उपा<sup>२२</sup>गानो का भी वर्णन किया जाता था । विद्यापति ने गाह इब्राहीम लोदी के महल की चारदीवारी म—'प्रमद-वन',

१ स ५ देखें 'वी० च०' २०।६७, 'ह० रा०' छद ६३, 'वी० च०' २१।१२ १५, प० रा० का० २४०६।१५३, आ० ५१।७८

६ स १४ देखें प्रम० वी० च०' १६।२०, 'सु० च०' ६।२।१५, वही, ७।१।१०, आ०' ७७।१।७, वही ७४।५, वही, २६।११, वही, ५१०।१७, वी० च०' १७।८ ६ छ० प्र०' १८।४, 'आ०', ४६४।११

१५ स १६ दे० प्रम० 'प० रा०' का० १५५४।५, 'प० रा०' ४।६६-७१, ह० रा० ३५५, रा० वि० ४।१-२२, 'शि० मू०' २३

'पुष्प वाटिका', वृत्रिम नदी, 'श्रीडा गन', 'धारा गृह', 'यत्र-व्यजन 'शृंगार सकेत' माधवी मडप', विश्राम चौरा, त्रिभुगानी हिन्दोल 'कुसुम शय्या' और चन्द्रकान्त शिला तामस विनास स्थान और उपकरण का विवरण दिया है।<sup>१</sup> कवयत्रीम जी ने महाराज बीरसिंहदेव द्वारा अपने वागम शीला पत्र की रचना कराने का पूरा विवरण दिया है। इससे पता होता है कि श्रीडा पत्र प्रति बहूतार हाता था। उस पर मृग, वपम, सिंह घाति मनु और मम मयूर घाति पशु विवरण करत रहते थे।<sup>२</sup> उसमें वृत्रिम गल गिगर, गूढ गह्वर और दीघ दरिया भी बनाई जाती थी।<sup>३</sup> इन वृत्रिम पत्रों पर धाराधार धाम भी बनाए जाते थे जहाँ चपला की चमक व साथ साथ जल धारा (वर्षा) भी बरसती हुई प्रतिभासित होती थी।<sup>४</sup> वृत्रिम घन गजन से पूणत पावम ऋतु का मान होता था।<sup>५</sup> इन पत्रों से वृत्रिम नदियाँ भी बिकाली जाती थी। कवय ने महाराज बीरसिंहदेव व श्रीडा-पत्र से तान भिन भिन वर्णों व जल वाली नदियाँ निवृत्तते चित्रित की हैं। एक नदी में कुकुम वर्ण का जन प्रवाहित होता था।<sup>६</sup> दूसरी

- १ डा० बाबूराम सनसना ने धारा गृह का अर्थ 'फव्वारा दिया है, दे० कीर्ति, प० ५३
- २ यत्र-व्यजन किसी ऐसे उपकरण का नाम रहा होगा जिसकी सहायता से भ्राजकल व विजली के पक्षे की भाँति हवा भजन का काम लिया जाता था। उसके दूसरे अर्थ— हवा से चलने वाला यत्र के अनुसार वह पत्र व माध्यम से पानी ऊपर उठाने का साधन रहा होगा। हवा व माध्यम से चलने वाली ग्रहणें भ्राजकल भी यत्र-तत्र मिलती हैं और विजली के आविष्कार से पूर्व जल उठाने का यत्र बनाने के तथ्य पर प्रकाश डालती हैं—शोधक
- ३ प्रमदवन पुष्पवाटिका वृत्रिम नदी श्रीडागल धारागृह यत्र व्यजन, शृंगार सकेत माधवी मडप, विश्राम चौरा खटवा हिंदोल कुसुम शय्या प्रतीप माणिक्य चन्द्रकान्त शिला चतुस्सम पल्लव करो परमाथ पच्छिहि सिमान ए वाप अम्यतर करी वार्ता के जान। कीर्ति० प० ५२
- ४ तिनमें श्रीडापत्र रच्यो। मग पच्छिन की सोमा सच्यो। वपम सिंह क्रीडहिं अहि मोर। सिव गिरि सो सोहत चहु ओर।  
—वी० च० २४।१ ४
- ५ गूढ गुफाहू दीरघ दरी। त्रिय मनु सिद्धन की सुदरी। —वही २४।५
- ६ बहु तापर धाराधार धाम। मुभ्रक लोक बलाका वाम।  
वरपति सो दरसति जलधार। चपला सो चमकति बहुवार। —वी० च०, २४।५
- ७ सत्र सरासन चातिक मार। सुनिजत विच त्रिच घन की घोर। —वही २४।६
- ८ 'तातें प्रगटी नदिका तीनि। सरितन की लीनी छवि छीन।  
एक कुवमा के जत बहै। ताकी सोमा को कवि बहै।' — वी० च०' २४।७

के जन कारण रजत काति की भाँति श्वेत था,<sup>१</sup> जबकि तीसरी म वस्तूरी की आभा वाला श्याम जल प्रवाहित रहता था ।<sup>२</sup> इन वृद्धिम नृत्यो क निर्माण की यह भी विगपता थी कि उनके पुनिन और वातुनाराणि दोना ही गुमासिन थे ।<sup>३</sup> जल यत्र या पत्तारा का परमाल रासो,<sup>४</sup> वीरचरित्र' और हम्मीररामा,<sup>५</sup> म उन्नय मितता है । इन जल यत्रा स पाणि की पुहारें निश्चय ही बहुत उची उठता हागो, यही कारण है कि वे गगनचुम्बी अभिहित की गई हैं ।

### आवागमन के साधन

आनोच्यकाल म वाण्य के माध्यम म चलने वाल माटर और रेल घाटि, आवा गमन के द्रुत गति वाल साधना का आविष्कार नहा हा पाया था, अत तदय अश्व और बला द्वारा कीचे जान वाल वाहना का प्रयाग किया जाता था । वीरराव्य म एत माध्यमा म स बला के रथ, अशवा व रथ, गजरथ, फिरक, घट्सी और गत्रिया (गाडिया) का उल्लप मिलता है । पध्वीराजरासा और परमानरामो म प्रमस महा राज पध्वीराज और परमाल के रजवासो की यात्रा म रथो का प्रयोग किया जाता है ।<sup>६</sup> (य रथ सम्भवत बला के ही रहे हागे) कवि मान न महाराज राजसिंह को तीथयात्रा व गमय चारा चत्रो (पहिया) म घटियाँ लगे हुए रथा म चचल तुरग जोडकर प्रयोग करन चित्रित किया है ।<sup>७</sup> उसन बला की बहली और गत्रिया का भी प्रयाग दिखाया है ।<sup>८</sup> केशवकास जी ने फिरका म घला के साथ-साथ अश्व भी जुत प्रदर्शित किए हैं ।<sup>९</sup> हो सगता है कि अशवा का उहाने उमी पनिन म उल्लिखित मुखचालकी नामक वाहन म प्रयाग लिखाना चाहा हो, जो उस नाम की किसी सवारी का उल्लेख न मिलने के कारण हमन विगपण रूप म प्रयुक्त प्रहीन किया है । मूदन ने रथा का प्रयोग दिखाया है,<sup>१०</sup> जबकि आह्वकार ने उनमे उजली-वधियाँ जुती होने का उल्लेख करके बला के

१ 'मुष्य' मुग व दान जल बहै । गगा सी त्रिभुवन पति लहै । —वी० च० २४१८

२ 'दूजी मगमद क जल बहै । ज्या यमुना त्या ही जग बहै । —वही २४१०

३ 'कुमुम परागिन व रम सर्न । पावन पुलिन दुहँ दिसि बन ।

एलाकन बालुवा सत्रास । सेवति ललित लवग प्रकास ।' —वही २४१७ १८

४ 'जलजतु छुट्टि महाराज आय । रानीन जुवन मन मोट पाय । —प० रा०, ३१३१

५ 'जहाँ तहाँ जननन प्रकास । परतें धारा चनी अकास । —वी० च० २३१२८,

६ 'बहु धार सघन पवत मुग'व । जब जत्र छुट्टै उच्चैस बध । —ह० रा०, २६१

७ स ६—६० व्रम० प० रा० का० १६६१।३२, 'प० रा० ६।६६, 'रा० वि०'

८।२० वही ८।२२

१० मुष्य' मुषासन बहु पालकी फिर वाहिनी मुखचाल की ।

एकनि जात ह्य सार्हिष । वपम कुग्गनि मत मोहिय ।' —वी० च० २६।२५

११ रथ पालकि नालकी अहछ । चलत चाल भुव ज्वाल जमद । —मु० च०, ४।३।५

र्यों का प्रयोग प्रचलित किया है। उगो घरातियाँ रा मन्त्रणा म बन्धर जा घोर दायज म भी मन्त्रण मिया का उ- र्ण किया है।

सायाजिन क घण सायाजिन म जि- कलार उगार म जाण म। विराट् घादि घातरा गर नगामा न भा- नारा प्रय म करत हावे विन्दु उनका बहु प्रथमन ममाज क उभारय म हो मानता मगा है। बीरबाल प्रयाया ते सायाजिन क हा सायाजिन म जाणो पाणो म मान गुणगा गुणागन होना घोर बन्धरान या घोटोन का प्रथमन सिंहाया है। इतम मन्त्रण रीय सायाजिन का गुण्या डारा ही प्रयाग सिंहाया गया है। तिम म स्पाट हाया है वि- म्पुटाया मन्त्रणी सवारी ही रत हावे। पृथ्वीराजरागा म क ते पाण गोरी गुणागन म बिगार म जाण जा है। परमाण रागा म घाटा रत बगवा म्पित गुण बाया म बन्धर यात्रा करता है। कान-सायरा ते गुणागा घोर पालनिया का प्रयाग सिंहाया है। कवि मून म मानरा को मालका घोर पालनिया म बन्धर यात्रा करत ही मरी धियत किया है घातु रतमगा म्ठान को म्पी पालनी म बन्धर मुट्ट करने भा प्रचलित किया है तिम बहारा क स्थान पर उसा मनिर उगाय हूण म। कवि मान ते मन्त्रात्र राजगिह की तीर्थयात्रा क समय मन्त्रात्र घोर गुणागा का प्रयाग सिंहाया है। जवाि भा-हारा ने गुणागा को मालकी घोर पालनिया म बन्धर यात्रा करत विरचित किया है। पृथ्वी राजरागा म महाराज पृथ्वीराज क रनयाम की यात्रा क लिए पाणो घोर घाटोन क साय साथ पूर्वोक्त गुणागन घोर गुणागन का भी प्रयोग सिंहाया गया है।<sup>१८</sup>

जलमाग से सायाजिन क विण प्रमुत्त रिण जावे यावे सायाजिन म त परमान रातो<sup>१९</sup> घोर राजविनास<sup>२०</sup> म जहाया का निराशरनी म नाव घोर डागा<sup>२१</sup> का प्रयाग सिंहाया गया है। कवि मोरसात ने उनसे अमाय म काठ क बडा का भी तन्त्र्य प्रयोग करने पर प्रकाश डाला है।<sup>२२</sup>

- १ 'उजरी बधियत के रघ गाज शत्री म भी मय नयार। घा० ८१५।२५  
 २ 'बोड पालनित रोड नाननित बोई मन्त्रण म मगवार। —घा०, २५६।२२  
 ३ से ४ दे० 'प० रा० का० १११८।१३८, प० रा० २।६  
 ४ 'मैं मरने को तयार हूँ जो कौड साथहि देड। काम बहारा का नहीं हाय पावकी सेड।  
 मुनत पाच सौ जवान ने घोड दाने छोड तिनम त दस बीग ने लई पालकी घोड।'  
 'मु० च० ४।४।१३-१४  
 ६ से ६ दे० क्रम० रा० वि० का० १०० 'घा० २५६।२२ 'प० रा० का० १६६।३१  
 ३२ प० रा०' २।८७  
 १० 'जयम जिहाज मु गढ़ाइ जब जलनीडा श्रीहतनुप।' 'रा० वि०, का० १४६  
 ११ २२ दे० क्रम० 'वि० म्पा०' १३, 'छ० प्र०' ११।५

## मनोरजन के साधन

वीरकाय म उसके नायका की मनोवृत्ति के अनुरूप एसी मनोरजन-विधाओं का अधिक चित्रण मिलता है जो साहस एव शौर्य परीक्षण सम्बन्धी प्रतियोगिताओं से सम्बद्ध होनी थी। मनोरजनाय अनक प्रकार के पशु पक्षी पानन और उनक युद्ध करान का भी प्रचलन था। राज दरबार जिविध प्रकार के कलाकता की आश्रय स्थली हात थे अत उनम काय शास्त्र चर्चा और नत्य संगीत आदि मनोरजन क कलापरक साधना के भी आयोजन चलत रहत थे। बठकर छल जाने वाले खेल कदाचित वीरकाय के नायका के स्वभाव विरुद्ध थे, जिससे वीरकाय म उनक सम्बन्ध मे अत्यल्प उल्लेख मिलते है। वीरकाय म उल्लिखित मनोरजन विधाएँ स्थूलत चार वर्गों म विभक्त की जा सकती हैं—(क) पशु पक्षियों के युद्ध। (ख) साहस और शौर्य परीक्षण सम्बन्धी प्रतियोगिताएँ। (ग) काय शास्त्र चर्चा और नाटय मगीत आदि कलापरक साधन तथा (घ) विविध प्रकार के श्रीढात्मक विनोद। इनम स प्रथम तीन प्रकार के साधन प्रेक्षण और श्रवण से सम्बन्धित रहते थ, जबकि चतुथ वर्ग म आन-दानुभव का मूलाधार उनम सम्मिलित रहना हाता था।

### (क) पशु पक्षियों के युद्ध

#### (१) हस्ति-युद्ध —

पशु-पक्षियों क युद्धा का आयोजन करके, मनोरजन करने के माध्यमा म स 'हस्ति युद्ध' सर्वाधिक लोमहृषक हाता था। औरगजव काल म भारत आनेवाले मनुची और बर्नियर नामक यात्रिया ने इसे महावतो के लिए अतीव प्राण घातक बताया है। मनुची के अनुसार हस्ति युद्ध कराने जानवाले महावता की पत्निया अपने आसन्न वैधव्य की दुर्निवारता को दृष्टिगत करक युद्धारम्भ स पूर्व ही चूडियाँ आदि सौभाग्य चिह्ना का परिार कर दती थी।<sup>१</sup> बर्नियर के शब्दा म युद्ध कराने जाने वाले महावत अपने सम्बन्धिया स इस भाँति अतिम विदाई लकर जात थ माना के फाँसा की सजा पाए हुए नदी हा जिससे उनके जीवित लौटने की आशा ही न हो।<sup>२</sup> हा भाग्यवग जीवित बचे हुए महावतो को वेतन वद्धि तथा अन्य पुरस्कार प्राप्त करने की आशा रहती थी जिससे थ इस जीवन मरण के खेल को कराने क लिए प्रलोभित रहते थे।

पृथ्वीराज रासो मे महाराज पृथ्वीराज वीरचरित्र म महाराज<sup>३</sup> वीरमिह देव, जहा-गीर जस चन्द्रिना म गाह जहागीर<sup>४</sup> तथा राजविनास म महाराज राजसिंह<sup>५</sup> और स ह

१ दे० मुगल इण्डिया मनुची, भा० १ प० १३३

२ दे० ट्रैवला इन मुगल एम्पायर, बर्नियर प० २७७

३ 'महिप मय मग वृषभ बहू गिरत मल्ल गजराज।' बी० च० ७१७

४ बहू थीर राज बहू मेप मूने। बहू भक्त दनी तर लोहारे।' —ज० ज० च०, छ० ५०

५ 'सरावति मल्ल महाराज लुह करी मयमत भर य' युद्ध। —रा० वि० २।१६३

जादा भयंकर को' हस्ति युद्ध करात विप्रित किया गया है, जिसमें यह घालाच्य कालीन नरेशा ने मनोरजन की एक व्यापक विधि सिद्ध होनी है। रामाचार न महाराज पृथ्वीराज के मनोरजन के निमित्त कराए गए हस्ति युद्ध का विवरण भी किया है, जिसमें उसकी अधोलिखित परिपाटी ज्ञात होती है।

युद्ध से पूर्व हाथिया की टांगा में लगर और मस्तक स अप्यारी (हाथी की आंखा को ढके रखने वाला उपकरण) का हटा दिया जाता था।<sup>१</sup> हाथिया के स्वयं और पीठ को धपधपाते हुए महावत उह युद्धाय जोग त्नात थे<sup>२</sup> जिससे उत्प्ररित होकर परम्पर टवकर मारने वाले हाथिया के दाता की किचियाँ उत्तरापान के समान छितगन लगती थी।<sup>३</sup> जब घड़ियाँ व्यतीत हो जाने पर भी कोई सा भी हाथी हार न मानता था ता, उह विनग करने का काय चरतीदारो<sup>४</sup> को सौपा जाता था।<sup>५</sup> चरतीगरा द्वारा युद्ध विरत किए गए हाथिया का साँट मार धरकर लड हो जात थे और उनके मस्तका पर सिरौ और टांगा में लगर एक जजीरा के बंधन पुन डाल थिय जात थे।<sup>६</sup> यदि हाथियों का युद्ध प्रदर्शन उच्च कोटि का होता था ता उनके रातिवा में वद्धि करने के साथ साथ उनके महावता की जागीरा में भी वद्धि कर ली जाती थी।<sup>७</sup> महावता का ऐसे भवसरा पर सिरपाव और एक बहुमूल्य माला प्रदान करने का भी प्रचलन था।<sup>८</sup>

- १ 'कबहु लगवहि मल्ल, कबहु मद मत्त कुजर।' —रा० वि० १८।६
- २ 'जजौर सल्लि लगर वज्रिय अघारी सिर पर खुलिय। —५० रा० मो० ३।७।१३
- ३ 'ठाकि कध माहान, पिठिठ मोइय पच्चारिय। वही ३।७।१४
- ४ 'उसरि उसरि मुह करहि, दत विरची उडि अस्तह।  
परहि कि प्रब्वत धाद प्रबन बडडे बलमतह।' वही
- ५ 'भाईन ए अकवरी' में भी युद्ध रत तथा विगडे हुए हाथिया को वग में करने के लिए चरती का प्रयोग करने का उल्लेख किया गया है। चरती के विवरण के लिए द्रष्टव्य है— भाईन-ए अकवरी, मा० ३ प० १३६
- ६ 'मिटैन कोइ दू महि हको, धरी इक दुइ दुरद लरि।  
छुडडवन तिनहि मुसकित परी चरती आरिण हुकम करि।' —५० रा० मा० ३।७।१४
- ७ 'चरतीआरिणि हुकम बल सुडडाय गज दोइ।  
रहे धरि गडदार बड, अवरण छिप्प कोइ। वही ३।८।१५  
'सोस अघ्यारी राखि निण नीठि नवाय फेरि।  
लगर पग लागे तुचनि लग्गाय पग करि। वही ३।८।१६
- ८ 'दुनो रातिउ दुवन कह कयन हुकम प्रथीगज।  
अममा रगि दून पद्री, गुदरि अप्पु सम राज। वही ३।९।१८
- ९ 'पीलवान पहिराई दुव मिर सिरपाव मगाइ।  
इक इकमाला बडडवा, यह बर वस्त सदाइ। वही ३।९।१९

बनिधर द्वारा किया गया हस्ति युद्ध का विवरण रासो वं उपयुक्त विवरण से मात्र यह वचन रखता है कि उसम दाना हाधिया व बीच म एक मिट्टी की पीवार बनाने का उल्लेख किया गया है। परस्पर व आघात म यह दीवार गन गन टूटती जाती थी, और अन्त बनी हाथी उस पार करके स्वप्रतिपक्षी पत्र धावा वान नेता था।<sup>१</sup>

### (०) अन्य पशुओं के युद्ध

हस्ति युद्ध की भांति य व पशुओं व भी घात प्रतिघातात्मक प्रहारा का अवेक्षण करत हुए मन प्रमाणन करन का प्रचनन था। कणवनामजी न महाराज वीरसिंह देव<sup>२</sup> और ग्राह जहांगीर<sup>३</sup> क तरवारा म महिषा मया मया वपमा और बकरा की लडाइया व चन चनत रहा का चिषण किया है। अबनाट नामक इटली यात्री ने भी मुगल-बादशाह की इन पशुओं व युद्ध प्रेक्षण म बड़ी अभिरुचि हान का उल्लेख किया है।<sup>४</sup>

### (३) तीतर लडाना —

कवि पद्माकर न महाराज प्रतापसिंह की तीतर पालकर उनकी लडाई करान में अभिरुचि प्रदर्शित की है। उनक गद्या म महाराज व तीतर पिजडा स वजात निकल कर उड जाने की चेष्टा करत रहत थे। गरीर स वे बडे हृष्ट पुष्ट एव वति से बड नडावू थे। उनकी आवाजें विजय दुःखिक समान आतङ्कारी थी। उनके चबु प्रहार एत घातक और अचूक थ कि स्वजातीय तीतरा तथा छोटे छोटे शिकारी पक्षियों—जैम वासा और जुर्रा रा तो कहना ही क्या एक बार को तो वे बाज के भी दात खट्टे कर देत थे।<sup>५</sup>

### (४) लवा युद्ध —

लवा रूप रग म तीतर जसा कि-तु आकार में उससे कुछ छोटा पक्षी होता है। उनकी मुदरता पर मुगल होरर पद्माकर ने लवाओं को छवि क छवा कहकर अभिहित किया है। पद्माकर न महाराज प्रतापसिंह की तीतरा की भांति लवाओं के युद्ध करान का भी गौबीन चित्रित किया है। पद्माकर न महाराज के लवा अनीक चचन तथा चुनीन प्रहार करन म अद्र के वचन म भी बतकर बनाए हैं।<sup>६</sup> कवि मूदन न भी

१ द० दृ वल्लभ इन मुगल सम्पादन, प० २७६ ७७

२ मन्थि मय मय वपम कट्ट, मिश्र मल्ल मजराज। —वी०च० २७।७

३ बहू वच मया मित्र भीमराजी कट्ट एन मनीनि क जूथ मारी।

कट्ट वीर वाक कट्ट मय मूरे। कट्ट मत दनी तर लाहू पूरे।

—ज० ज० च०, छ० १०

४ द० इण्डियन ट्रे वन्स धार धवनान, प० ५३

५ ६ द० पद्या० प्र० प्र० छ० १८, वही, १७



गाजीउद्दीन खा की लवा पालने में अभिरुचि प्रदर्शित की है।<sup>१</sup> डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लवा-युद्ध का प्रचलन प्राचीन काल में भी दिखाया है। उनके अनुसार नराम्रा के युद्ध पर प्रक्षक दाव भी लगाया करते थे जिनके कारण उनकी हार जीत विपत्ती मानवदला में रक्तपात तक का निमित्त बन जाती थी।<sup>२</sup>

### (५) श्वापद और विहगशालाएँ —

युद्धाथ पाले जाने वाले पशु पशुधिया व अतिरिक्त अन्य प्रकार के पशु-पक्षी पालने का भी प्रचलन था। इनमें से कुछ का उपयोग तो आखेट में भी किया जाता था, जबकि शेष मुख्यतया मन प्रसादन व निमित्त ही पाले जाते होते। कवि मान ने महाराज राजसिंह की 'श्वापद गाला और विहग शाला का वर्णन किया है। उनकी श्वापद-गाला में सिंह जोड़ (वाराह)<sup>३</sup> चीता स्याहगोश रोछ सरभ (हाथी का बच्चा, ऊट अथवा सिंह में भी बलवान एक कठिन पशु जिसे अटपाद कहते हैं)<sup>४</sup> मृग, बन्दर, सांभर, गडा और रोभ्र (नीलगाय)<sup>५</sup> दिखाए गए हैं।<sup>६</sup> जबकि विहगशाला में विभिन्न बर्णों के कपोत मना, मयूर चक्रोर गुह मराल सारंग और बलबे प्रदर्शित की गई हैं।<sup>७</sup> आल्हकार ने लाखन को कपात और तलमुनिया पालने का शौकीन चित्रित किया है।<sup>८</sup>

### (ख) साहस और शौर्य परीक्षण सबधी प्रतियोगिताएँ

#### (१) वीर पुरुषों के सिंह और हाथियों से युद्ध —

आलोच्यकाल में केवल निरीह पशु-पक्षियों का ही परस्पर झिझक उनमें मनु-सञ्चर से मन-प्रसादन की प्रवृत्ति नहीं थी। उसमें राम के सदृश बुभुक्षित हिंस्र पशुओं से गुलाम और कदियों को लड़ाकर, आत्मपरितोष करने की अमानुषिक बरता का भी स्थान प्राप्त नहीं था अपितु सिंह प्रमूना क्षत्राणियों का मतान स्वयं भी बन्दराज और मत्तानुल हाथियों से झिझक ग्रहण का मन प्रसादन और स्व-कीर्ति का विस्तार करती थी। प्रथम प्रकार के युद्धों की रमस्फली आखें स्थान हुआ करते थे, जबकि

- १ वासा बटेर लव भी सिवान। घूती रु चिप्पवा चरन मान। सु० प० ६।२।३१
- २ दे० प्राचीन भारत क कला० वि० पृ० ४६
- ३ से ५ 'बहन् हिन्दी कोश' प० ३२० १३१५, ११६०
- ६ सिंह जोड़ चित्रा सरभ, सिंहपोस कवि रिच्छ।  
सबर गडा राम मृग स्वान साल सु भ्रच्छ। — रा० वि०, २।७८
- ७ 'पारायन बहु रग क, मना मार चरार।  
मुक मगन सारंग बतर विहग सान बरजार। चही २।७६
- ८ 'साह छान्दिसी मव चिडियन की लापन गिराई दई तुताप।  
भुइ उदान चर मुनियन क बानर नही सतारी छाय। — भा० ८६८। १२ १३

हाथिया से युद्ध राज द्वारा पर दियाए गए हैं। पथ्वीराज रामो म, लघरीराय, कह चौहान, राजकुमार रंससी घोर जतराय द्वारा सिहा को द्रुन्द-युद्ध म पठाडने के एसे दृष्ट चित्र प्रस्तुत किए गए हैं कि व पूणतया प्रत्यक्षदर्शी घटनाओं पर आपन प्रतीत होत हैं। इनम स हम लघरीराय व सिंह स हुण द्रुन्द-युद्ध का ही सार द रहे हैं—

महाराज पथ्वीराज न गेर के गिकार के लिए हाँका लगवाया। उन समय पक्षिया की चहचहाहट हस्निया की चिंघाड अश्वी की हिनहिनाहट और कुना व भौंरन का एसा शोर हा रहा था कि माना जान वान सुनाई नही गेनी थी।<sup>१</sup> नमी एक सिंह आना दिखाई दिया जिस दखर कायर तो पलायन कर गय किन्तु लघरीराय स्व स्थान पर अविचल खडा रहा।<sup>२</sup> धरन अपनी पूछ फरकारकर सिर स लगाई और लघरीराय की आर प्रख्वलित दृष्टि निक्षेप करते हुण आनमण स पूव अपने अग्रिम पजा पर झुक्कर इतने आर स दहाडा—मानो पथ्वी और आरान ही पट पड हैं।<sup>३</sup> सिंह को आनमणाय प्रस्तुत देखकर लघरीराय न अपना खडग फेंक दिया<sup>४</sup> और उमे अपने भुजयुग्म म दवाकर धर पटका।<sup>५</sup> सिंह के नख और दण्ड लग जान व कारण उमके शरीरागो स यत्र-तत्र रक्त भलमलाने लगा। परस्पर मिडते हुए सिंह और लघरीराय को देखकर एसा प्रतीत होता था, मानो दो सहोत्र पंतुक सम्पत्ति के विभाजन के लिए लड रहे हैं। अतन गज कुमो को विदीण कर देने, तथा गिरि वन नद और सरा को पनमान म लाधने की सामर्थ्य रखन वाला सिंह लघरीराय को न लाध सका और लघरीराय न उसका उदर विनीण कर डाना।<sup>६</sup> पथ्वीराजजी और उनके साथिया न उसे गले लगाया और उसकी वीरता की मुक्त वठ से सराहना की। मराहना के साथ साथ युवराज पथ्वीराज न अपना राज्याभिषेक होने व समय उसे अनेक प्रकार के दुलम पुरस्कार प्रदान करने का भी वचन दिया।<sup>७</sup> पथ्वीराज रामो म दिए गए कह

१ से ४ दे० प० रा० मो० १।१६२।२ स १।१६६।५

५ चपि स्वामि विडडुरिय, लोहसजुरि नग मुक्यो।

लोहा लगर रा० वीर अवसान न चुक्यो।

स्वामि सध्य परि वध्य सड घरवर उख्वार।

रहिर अ ग भ्रुकरिय, मिध पारिय अक्खारे।' पृ० रा० मो० १।१६६।६

६ दे० पृ० रा०, मो० १।१६५।१२ १७

७ भो प्रमान प्रथिराज बोन लुनयो सु नगरिय।

इतो दउ प्रचण० पयजा मडि मोहि जिय।

अद्धा राज सु उद्ध, पाट अद्धा तम्पून। अद्ध वेस सुदस करा आदर समून।

बोनत वैन पृथिराज मुनि, जीव सज्जि नीची नजरि।

लगगाद वठठुकि पिटठर भलो भलो सब सध्य करि।

वही, १।१००।१५

चौहान<sup>१</sup> राजकुमार रनसी<sup>२</sup> और जनकुमार<sup>३</sup> द्वारा सिपा के हनन सम्बन्धी विवरण भी पाये उपयुक्त विवरण म ही साम्य रखत है।

आल्हाबाद म अनामक आताप्रा के बल पराक्रम के लिए महाराजा जयचं राजद्वार पर हस्तिया का भाग पिनारर छोड देत है।<sup>४</sup> व आल्हा म कहत ह कि तुम्हारी हाथिया का पछाड दंत वाला क रूप में बड़ी प्रशंसा सुन रखी है, जिमकी मैं परीक्षा करना चाहता हूँ।<sup>५</sup> ऊदल उन हाथिया का पछाडन में उत्तुल्य हारा है, जिसस प्रसन्न होकर, महाराज जयचंद पुरस्कार रूप म जागीर प्रदान करने चिचिन क्रिय गय है।<sup>६</sup>

### (२) लौह एवं दारु स्तम्भा का भेदन —

पराक्रम परीक्षण के माय साय मनारजन के लिए कभी लौह और कभी लकड़ी के स्तम्भा का तलवार साग या तीर से वेधने अथवा उन्हें उगाडने की प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाती थी। पश्वीराज रामो म विजय शशी के अवसर पर महा० पश्वी राज द्वारा अष्टबाहु स निर्मित लम्बे क वेधन की शन रखर आयोजित की गई प्रति योगिता का विवरण मिलता है। महाराज पश्वीराज स्व बीरो का कहत हैं कि व तीस मन लोहा भिभिन करके बनाए गए लम्बे के वेधन का वेध खेचें और अपनी तलवार तीर या साग से उसे वेधन का कौशल सिखाए।<sup>७</sup> महाराज के समी योद्धा जत स्वम्भ के वेधनाथ उस पर साग तलवार और बाणा के वार करने हैं, किन्तु उनका घस्य गस्य उसमें दो अगुल माय भी प्रविष्ट नहीं होत।<sup>८</sup> वाद्य यत्रा की ध्वनि के साथ यह श्रम पाच त्रिवस तक चलता है।<sup>९</sup> अंत में महाराज पश्वीराज उस पर स्वयं साग का प्रहार करत है,<sup>१०</sup> जो जत-स्तम्भ में प्रविष्ट ताहा जाती ह किन्तु उनका शरव की तीव्र गति के कारण उनका मन्तुलन बिगड जाता है और वह उसी में फँसी रह जाती ह। निदान वहाँ पर उपस्थित क्षत्रिया के छत्तीसा पुत्रा के वीरा का महाराज द्वारा यह चुनौती दी जाती है कि व उस माय को हा निरान द।<sup>११</sup> समी वार प्रयत्न करत हैं किन्तु साग न निगडने

१ स ० दे० पू० ग० का० १२०६।८२ म १०१०।८३ बहा १५१=।।<sup>२</sup> ५६ वनी  
३३२।८३ ५०

४ स ६ द० भा० ०७६।१५ १६ वनी ८०।२७ वनी ८०।८ ११

७ विहमि कश्यो चट्टधान मूर सह मन बुतायो।

जंत यम रापयो लोह मन तीम भितायो।

मयो राय भागम कवर मव रिभो धातु।

सोधि तीर तरवार। मय मरवर तर मरुतु। —प० रा० का० २००३।३४

८ (क) तास्त्रनग म मन्तार। इम अश्याम त्रिन त्रि कररु।

श्र मुष्टि दु मुष्टि नि मुष्टि त्रि मुष्टि मार दुम्र घग मरु। वनी २०२०।७

(ख) रिपु न चार दुय मगरिप। उरिन् मय मध्य धरिय। वनी २००३।३६

६ स ११ ० वनी ० ३।३६ म ६०

में अक्षय्य रहते हैं।<sup>१</sup> अतः मैं दिल्लीद्वर द्वारा तदर्थ धीरे-धीरे पुष्पों को अक्षय्य प्रदान किया जाता है जो राग के साथ-साथ उमर-स्वप्न का भी उपाय करता है। उमर-दश-पौरुष प्रदान से प्रसन्न होकर, महाराज उसे सिंहासन लेकर सम्मानित करते हैं।<sup>२</sup> यही नहीं, महाराज उसे पाच हजार ग्रामों की एक जागीर तथा अपना राजसी ध्वज रखने की अनुमति प्रदान करके अपना सामन्त भी बना देते हैं।<sup>३</sup>

### (३) मल्लयुद्ध —

भारिया में मल्ल विद्या का बहुत प्रचलन था। राजकुमारों को बचपन में ही मल्ल विद्या में नपुंस्य प्राप्त करा दिया जाता था। कविमान न कुमार राजमिह को मान आठ वर्ष की अवस्था में मल्ल युद्ध कराने में विशिष्ट धारित किया है।<sup>४</sup> इसी भाँति गोरान ने महाराज उन्नतसाल का बाल्यावस्था में ही बाहु विद्या और मल्ल का छुटाने में निष्णात प्रदर्शित किया है।<sup>५</sup>

मनोरजन के लिए राजकीय मत्तन भी हुआ करते थे। कविमान ने महाराज जगतसिंह तथा गणेशदा अक्षय्य के दरबार में मल्ल के युद्ध लिखा है। केवल ने महाराज धीरमह देव और जहागीर के दरबार में भी मल्ल युद्ध हाते प्रदर्शित किए हैं, जिससे यह मनोरजन की एक बहुत प्रचलित विद्या सिद्ध होती है।

### (४) नाल उठाना —

चन्दन महाराज जयचन्द के शलध्वनि नामाख्यात वीरों को सात सान मन की स्फटिक शिखरों एक हाथ में ऊपर उठाते चित्रित किया है जिससे उसका इगित आजकल की नाल उठाने की प्रथा की धार प्रतीत होता है।<sup>६</sup> 'नाल का आकार चकरी के पाट की भाँति गोल होता है तथा वह पत्थर या कंकड़ का बना होता है। नाल का उठाने के लिए उसके बीच में एक मूठ डली होती है। नाल उठाने वाला एक हाथ से लाठी पर चल देता है तथा दूसरे हाथ से उस मूठ को पकड़कर नाल का टाँगा के मध्य भाग का स्तर ऊपर उठाना है। आजकल महाराज जयचन्द के शलध्वनि वीरों जस सात मन के नाल उठाने वाले पुरुष तो कदाचित् नहीं हैं हाँ तीन साढ़-तीन मन वजन वाले नाला का तो अलीगढ़ के समीप अब भी कुछ पुरुष एक ही हाथ से उठाते हैं।

### (५) मुगदर-घुमाना —

आजकल प्रायः होली के अवसर पर मुगदर उठाने की प्रतियोगिता आयोजित की जाती है। पृथ्वीराज रामा और आल्लखण्ड में भी यह कृत्य क्षत्रिया के व्यायाम तथा

१ से ३ 'पृ० रा०' २०२३।३४ स ४०

४ से १० द० तम० 'रा० वि०' २।१६३, छ० प्र०, ६।२ 'रा० वि०' २।१४०, वही १।६६, 'वी० च०' २३।७, 'ज० ज० व०' ४७, 'प०, रा०' मी० ४।६४।२०६

प्रेमता व मनोरंजन का माध्यामिक विविध किया गया है। महाकाव्य त्रयान्त व शरदार में 'गणपति' 'गणपति' तथा 'महाकाव्य' में भी विविध मन्त्रिय मुगल पुमान् प्रस्तुत किया गया है।

### (ग) काव्यशास्त्र-धर्मादि कलापरक साधन

#### (१) विद्यावाद या काव्यशास्त्र विवाद —

मनु हरि द्वारा बुद्धिमत्ता व विद्या का परमात्र साधन बताते हुए काव्यशास्त्र धर्मादिकालोत्थान में भी प्राथमिक थी। प्रायः एक शरदार का कवि दुर्गा राज शरदार में जाता और वही व कवियों का शास्त्राय धर्म का काव्य रचना की प्रतियोगिता करता था जिस पृथ्वीराजराजा में विद्या-वाद रहा गया है। उक्त का प्रथम मिनत है —

साह गोरी का दरबारा कवि दुर्गादेव महाराज पृथ्वीराज से स्व मनोभाव व्यक्त करते हुए निवेदन करता है कि, कवि चन्द स्वयं तो दूरी से बरतान प्राप्त धर्मात् बरतयो कहा करता है, धर्म में उसका विद्याकाव्य एवं उमता गव लज्जित करना चाहता है।<sup>१</sup> कवि चन्द उसकी तुनीती स्वीकार करता है और महाराज पृथ्वीराज द्वारा उनको 'धर्म (वर्ण विषय) प्रदान किए जाते हैं कि एक कवि धर्मार्थ और कथ साध वाली गता का तथा दूसरा पूणचन्द्र और प्रौढा का एक ही छंद में श्रेणायक वर्णन प्रस्तुत करे।<sup>२</sup> कवि चन्द प्राप्त थला में से प्रथम का चयन करके उसका ऐसा उच्चकोटि का वर्णन प्रस्तुत करता है कि दिल्लीद्वार का सामान उनसे चन्द को ताम्बूत प्रदान करने का आग्रह करते हैं।<sup>३</sup> दुर्गादेव भा पीछे नहीं रहता और वह भी अपने वर्ण विषय का श्लेषायक वर्णन कर देता है।<sup>४</sup> इस पर चन्द जब एक ही छंद में दोनों थला का वर्णन कर देता है तो ऐसा करन में स्वयं को असमर्थ पाकर दुर्गादेव मान मुक्त हो जाता है। महाराज उसके औदास्यता यह कहकर दूर वर्णन की चला करते हैं कि आज सरस्वती तुम पर उपावती नहीं है, और उस उसकी काव्य प्रतिभा से बढ़कर पुरस्कार देकर उसका मनोबल बनाए रखने का प्रयास करते हैं।

कविराज मोहनसिंह द्वारा संपादित रासो के संस्करण में तो कवि चन्द और दुर्गादेव के विद्यावाद की मही इतिथी हो जाती है किन्तु कागी से सम्पादित संस्करण में, दुर्गादेव काव्य कौशल में परास्त होकर तत्र मन्त्रात्मक काव्यों की प्रतियोगिता का आश्रय ले लेता है जिसका विवेचन सौम्य की दृष्टि से चतुर्थ अध्याय में तत्र मन्त्रात्मक विश्वास के सदम में वर्णन किया गया है।

द्वारिका तथा की यात्रा से लौटता हुआ कवि चन्द गुजर-नरेण भोलाभीम की राजधानी में रचता है। भोलाभीम उससे उनके मन्त्री अमर सेवरा से विद्यावाद करने की

१ से ३ 'प० रा० मी० ६६४४२०६ आ० ४४११४ 'प० रा० मी० ३४६६११४

४ से ८ 'प० रा० का० १५२२१७२ से १५२३१८१

रूखा प्रकट बग्न हैं।<sup>१</sup> इग प्रयाजत के लिए अमर सेवरा चन्द के समीप पहुच भी नहीं जाता कि कवि चन्द उसको रम्यहित भाकाग म उठा देता है जिममे डरकर अमर सेवरा विद्या वाद विग विना ही लौट जाता है।

पृथ्वीराज रासो म महाराज जयचन्द की भी अत्यन्त विनादी एव काव्य कला म निष्णान प्रशंसित करत हुए उनके कवि चन्द से हुए मनोरञ्जक विद्या का विवरण दिया गया है। महाराज जयचन्द, कवि चन्द के असे प्रशस्ति वचन से सीक उठते हैं, जिनम प्रत्यन्त ता वह उनका पना-वणन करत है किन्तु उससे ध्वनिन यह होता है कि महाराज पृथ्वीराज उनमे बढकर हैं। सीककर चन्द की हतप्रभ करत के लिए, कवि चन्द की वरछिया, और महाराज पृथ्वीराज की जगलश्वर उपाधिया का क्रमश बरह — बलीबन् या बल तथा सिंह के अर्थों म ग्रहण करत हुए एसा श्लेषाभक प्रश्न करते हैं<sup>२</sup> जिसका कविराव मोहनसिंह म शब्दा म प्रत्यन्त अर्थ तो यह था कि ह बरदाई<sup>३</sup> तुम मिनमायी नअतामुवन, जगलश्वर पृथ्वीराज के समीप रहने वाले, बुद्धि के दिवाले से रहित प्रस्तार (छन्दो का विस्तार करने के तरीके) विस्तृत करने वाले हात हुए भी क्यों कभी मुझे और कभी पृथ्वीराज को थोष्ठ कहत हैं<sup>४</sup> किन्तु श्लेषम प्रश्न था कि— एसे वनराज की जगलस्थली म रहने हुए भी जिसका उमने घास चरने वाले पशुधा से रहित कर दिया है तुम्हें धुद काय बँल से घाम क्यों नहीं चुगी जाती, जिससे तू दुबना हा गया है। कवि चन्द महाराज के व्यग्राय की समझ जाता है और स्व प्रत्युत्पन्नमति के आधाय पर उनको मर्महित करने वाला प्रत्युत्तर देता है। वह कहता है कि महाराज पृथ्वीराज के अस्वाकूठ होकर समस्त शिशया म स्वतामन की आन धरन के समय उनका प्रतिरोध करने वाले नरंगा का उनसे युद्ध म मुझ की रानी पढी थी जबकि निबल नरंगा ने युद्ध के बिना ही उनकी प्रधानता स्वीकार करली थी। इस प्रकार युद्ध म मान मर्तिन होकर प्राण रक्षा की भिगा मीगने वाल तथा युद्ध के बिना ही जीवन दाज मीगने वाले नरंगा न वशा के समस्त पत्राणि तथा अरण्यस्थनी की समय घास के तिनका का दाता तल दबाकर दिल्लीश्वर की अ-पथना की है। जत्र नरंगा ने जगल की समस्त वनस्पति इम मीगि उजाड दी हो तो फिर बँल दुबला क्या न होता<sup>५</sup> कानौजेश्वर और कवि चन्द का यह मनोरञ्जक वातालाप और भी चलता है। किन्तु ग्रथ विस्तार के मय से हम उसका म रोप म दिग्गशनमात्र म ही मतीय कर रहे हैं।

१ न० 'पृ० रा०' का० ११७७।८१

२ मुह दरिद्र अरु तुच्छ तन जगल राव मुहद्।  
वन उजार पमु-तन करत, क्या दुबरी बरह ॥

—पृ० रा०, भा० ४।६७२।२६१

३ ६ दे० वही, ४।६७३।२६२

## (२) वेश्या नृत्य —

आराध्यकाल में मनोरजनाथ वेश्या नृत्य-प्रदक्षण एवं दुःखसन की सीमा तक परिश्रान्त मिलता है। समाज के उच्चवर्ग का प्रतिनिधि व कर्ने वाले नरेश और बादशाहा व महारा की गणशासना में ता उसकी आयोजना हाती ही थी, राजदरबार भी वेश्याओं के घुंघराओं की रस भुज संनिर्वाहित रहत थ। वेश्याओं का भय विषय भी प्रचलित था। नरेशा द्वारा नृत्य मगीत में दश वेश्याओं को सधि रूप में प्राप्त करन व उल्लेखाम भी तात्कालिक शासका की इस व्यसन व प्रति अभिरुचि का पना चलता है। समाज व नेताओं की यदि यह दशा हो तो जनसामान्य स भी इस सत्कामक रोम सं छछता रह जान की दुराशा कसे की जा सकती है? यही कारण है कि नगरा में वेश्याओं के पृथक् मूटल्ला की स्थिति दिखत हुए वीरकाव्य प्रणेतारों ने मनोरजन की इस विधा का व्यापक प्रचलन दिखाया है।

स्वतन्त्र सगीत और रूपमाधुरी व माध्यम स लोगो का मनोरजन करके जीविकाजन करने वाली य रमणिया पातुर, कचिनी, भडिनी बिन्वा, वेश्या गणिका, रडो तथा पात्र अभिधाना का सम्वाधित की जाती थी। पात्र सजा का प्रयोग एसी नवश्रीवनाओं के लिए किया जाता था जो शारीरिक सौन्दर्य के बलीमो ल गणा से युक्त तथा नृत्य और सगीत कलाओं में प्रवीण होती थी।<sup>१</sup> शाह गौरी तथा महाराज पृथ्वीराज जयचित्ररखा<sup>२</sup> और करनाटी<sup>३</sup> नामक पात्राओं का प्राप्त करके अपने शासन में स्तम्भित करत चित्रित किए गये है। करनाटी को पूजन कला सम्पन्न बनान व लिए तिल्लीश्वर एक बन्हन नामक नायक (नृत्यादि शिक्षण में दक्ष यत्नित का नायक कहा गया है) स उस राजमहल में रखकर गिम्नित करत है,<sup>४</sup> तथा स्व-सामन्तो की उपस्थिति में उसकी कलाओं की परीक्षा करत है।<sup>५</sup> परीक्षा में सफल हुए करनाटी के गुरु को महाराज द्वारा आधा मन स्वर्ण प्रदान करने<sup>६</sup> का निर्देश स्पष्ट करता है कि वेश्याओं को गिम्नित करान व लिए सत्प्रयत्न प्रया व्याप्त रही हागी। चित्ररखा और करनाटी के विषय में यह निर्देश करना भी आवश्यक है कि वे दोनों रत्नवासा में स्वयं प्राप्त करके अपने सरभवा की गलहार बन जाती हैं।

महाराज पृथ्वीराज द्वारा स्वमहल में करनाटी व नृत्य प्रशण का उत्तम पीछे किया जा चुका है। महाराज का शाह गौरी की वत्त में भी इस बात का बड़ा परचाताप रहता है कि मरे मनोरजन व लिए यहाँ सगीतलाप व साथ नृत्य करन में प्रवीण पातुरों

१ म ३ द० प्रम० पृ० २१० वा० ६६०।५ ३८६।<sup>२</sup> पृ० २१० मा० १।२६०।११

पृ० २१० वा० ६५६।३४

४ स ६ द० पृ० २१० वा० ६६०।१ स ६६६।५६

७ महिना मु मुनि सब बस्मि भय महिना महिन मु मति बसि।'

—पृ० २१०, मी० १।२६१।३

नहीं हैं।<sup>१</sup> महाराज जयचन्द का यहाँ कवि चन्द न वश्या नृत्य के लिए प्रयुक्त एक विशाल यवनिका युक्त नृत्य गृह प्रदर्शित किया है, जिसमें उसका अतिशयांकितपूण शक्ति में दस हजार मन तन में मी मन अगम और पुनलाग्नि मिश्रित करके, स्वर्ण का शत-सहस्र दीपक जलाय जात था तथा उम स्वर्ण निर्मित मिह मृग, हाथी तथा अनेक जल और थलचर पशु पक्षिया की प्रतिमाया स सजाया हुआ था। अतिशयांकित का निरावरण करन पर यह कहा जा सकता है कि महाराज जयचन्द की यह रगस्थली निश्चय ही बहलाकार रही होगी। कवि चन्द का महाराज जयचन्द, वश्याया के नृत्य संगीत और नाटकादि के प्रेक्षण के लिए रात्रि के प्रथम प्रहर में बुलात है<sup>२</sup> तथा यह कार्यक्रम रात्रि का एक प्रहर मात्र अवशिष्ट रह जान तक चलता है।<sup>३</sup> इस अवसर पर चन्द ने नरेशा के इस वश्यानु राग से अत्यधिक हाकर जो मार्मिक उदगार व्यक्त किए हैं, व ता कालिक महिषियों के आत्म व्रदन के पुजीभूत रूप हैं। उसके बाद म—पति साहचर्य और रमण का सौभाग्य प्राप्त करन वाली पत्निया ता विरल ही हाती हैं अथवा अविनाश की रात्रिया पत्यागमन की प्रतीक्षा में तडपत ही व्यतीत हा जाया करती हैं।<sup>४</sup> चन्द ने धीर पुण्डीर का भी स्व चित्रसारी में वश्या-नृत्य दम्बत चित्रित किया है।<sup>५</sup>

वीरचरित्र में महाराज वीरसिंहदेव के रगमहल में चित्र पुत्तलिका जसी नतकिया उनका मनारजन करत प्रदर्शित की गई हैं।<sup>६</sup> कवि मान न महाराज राजसिंह की चारित्रिक विशेषताया पर प्रकाश डालत हुए उनके वद और पुराणा के श्रवण से प्रमुदित होने तथा उनके यहाँ वश्याया के नृत्य करन का एक-साथ इस माति चित्रण किया है, मानो इन परस्पर विरोधी गुण दाया में, मान की दृष्टि में कोई अंतर ही नहीं था।<sup>७</sup>

कवि जान न नाहरवा को अनक पातुरें श्रय करके, रात्रि दिवस उनका नृत्य प्रेक्षण में अनुरक्त दिखाया है। कवि जान के इस उल्लेख से वश्याया के त्रय वित्रय के तथ्य पर प्रकाश पडता है।<sup>८</sup>

महला की भांति राजदरवारा में भी वश्या नृत्य की व्यापक आयाजना का चित्रण मिलता है। महाराज पथ्वीराज स्व-सामता सहित राज समा में पातुरा के

१ नहीं पातुर चातुर नृत्यकारी। नहीं ताल संगीत आलापकारी।'

'पृ० रा०' का० २३७१।१६४२

२ स ४ द० पृ० रा० का० १७००।८३ स १७०४।८६०

५ जाम एक छिनदा न घट सत्तमि सत्तनिवार।

कहु कामिनि सुप रति समर। त्रिपनिय नीद निवार।'

पृ० रा० मो० ४।६६६।३२३

६ म ६ दे० क्रम० 'पृ० रा० का० २०६२।२१५ 'वी० च० २०।२८ ३२ रा० वि०' १।४५ ४६, क्या० रा०' ५७८ ७६



## (०) वन्द्या नृत्य -

घामाच्यरान में मंगोरजनार्थ वन्द्या नृत्य प्रेषण एक दुःखमय की सीमा तक परिध्यात मितता है। समाज के उच्चारण का प्रतिनिधित्व करना यात्रा करण और वात्साहा के महत्ता की रणगाताघ्रा में ता उगरी घामाजता हाती ही थी राजतरंगर भी व याघा के घुषरघा की रन भुन म निनार्थित ररन थ। वन्द्याघ्रा का प्रथ विषय भी प्रचलित था। तरगा द्वारा न य गगीत म द र वन्द्याघ्रा का सधि रूप म प्राप्त करन के उन्नता से भी ता हातिव गागरा की इस व्यसन के प्रति अभिरुधि का पता चलता है। समाज के नताघ्रा की यति यह दगा हो तो जनसामान्य से भी हम सकामक राग म अछूता रहे जान की दुःशा का म की जा सकती है? यही कारण है कि नगरा म वन्द्याघ्रा के पृथक मुहल्ला का स्थिति स्थित हुए बीरकात्र प्रणताघ्रा न मनारजन की इस रिधा का व्यापक प्रचलन स्थिता है।

स्वनाय सगीत और रूपमाधुरी के माध्यम से लागू का मंगोरजन करके जीविराजन करन वाली ये रमणियाँ पातुर कचिनी उद्विनी विश्वा वन्द्या गणित्ता, रडी तथा पाथ अभिधाना का संवाधित की जाती थी। पाथ मज्ञा का प्रयोग ऐसी नवयोवनाघ्रा के लिए किया जाता था जो शारीरिक सौंदर्य के बत्तीसा लक्षणों से युक्त तथा नृत्य और सगीत कलाओं में प्रवीण होती थी।<sup>१</sup> गाह गौरी तथा महाराज पृथ्वीराज श्रमश चित्ररत्ना<sup>२</sup> और करनाटी<sup>३</sup> नामक पात्राघ्रा को प्राप्त करके, अपने आक्रमण स्थगित करके चित्रित किए गए हैं। करनाटी को पूणत कला सम्पन्न बनाने के लिए तिल्लीश्वर एक बलहन नामक नायक (नृत्यादि शिक्षण में दक्ष व्यक्ति को नायक कहा गया है) से उस राजमहल में रखकर शिक्षित कराते हैं<sup>४</sup> तथा स्व सामन्तो की उपस्थिति में उसकी कलाओं की परीक्षा करते हैं।<sup>५</sup> परीक्षा में सफल हुई करनाटी के गुरु को महाराज द्वारा आधा मन स्वर्ण प्रदान करने<sup>६</sup> का निर्देश स्पष्ट करता है कि वेश्याओं को शिक्षित कराने के लिए सदमगत प्रथा व्याप्त रही होगी। चित्ररत्ना और करनाटी के विषय में यह निर्देश करना भी आवश्यक है कि वे दोनों रनवासो में स्थान प्राप्त करके अपने सरक्षका की गलहार बन जाती हैं।

महाराज पृथ्वीराज द्वारा स्वमहल में करनाटी के नृत्य प्रेषण का उत्तम पीछे किया जा चुका है। महाराज को गाह गौरी की मदद में भी इस बात का बड़ा पश्चात्ताप रहता है कि भरे मनारजन के लिए यहा सगीतालाप के साथ नृत्य करने में प्रवीण पातुरों

१ स ३ दे० क्रम० पृ० रा० का० ६६०।५ ३८६।५ पृ० रा० मा० १।२६०।११

'पृ० रा०' का० ६५६।३ ४

४ स ६ दे० 'पृ० रा०' का० ६६०।५ स ६६६।५६

७ महिला सु मुक्ति के सब वस्ति मय महिला महिल सु मत्ति वस्ति।

नहीं हैं।<sup>१</sup> महाराज जयचन्द व यहाँ कवि चन्द ने वेदया-नृत्य के लिए प्रयुक्त एक विशाल यवनिका युक्त नृत्य गृह प्रश्रित किया है जिसमें उमा अतिगयाक्लिपुण गब्दा में १९ हजार मन तल में सौ मन अन्न शीश पुत्रनादि मिश्रित करके स्वर्ण के गत-भद्रय दीपक जलाये जाते थे तथा उमा स्वर्ण निर्मित सिंह मृग हाथी तथा अनेक जल और थलचर पशु पक्षियों की प्रतिमाओं से सजाया हुआ था।<sup>२</sup> अतिगयाक्लिपुण का निराकरण करने पर यह कहा जा सकता है कि महाराज जयचन्द की यह रमस्यली निश्चय ही बह्मणकार रही होगी। कवि चन्द का महाराज जयचन्द, व यामा के नृत्य मगीत और गीतवादि के प्रेक्षण के लिए रात्रि के प्रथम प्रहर में बुलाते हैं,<sup>३</sup> तथा यह वापक्रम रात्रि का एक प्रहर मात्र अवशिष्ट रह जाने तक चलता है।<sup>४</sup> इस अवसर पर चन्द न नरशा के इस वक्ष्यानु राग से अत्यधिक हावरा जा मामिक उत्साह व्यक्त किए हैं व ता कालिक महिषियों के आम ऋदन के पुजीभूत रूप हैं। उसके गब्दा में—पति साहचर्य और रमण का सोमाय्य प्राप्त करने वाली पत्निया ता विरल ही हाती हैं, अथवा अधिकांश की रात्रियाँ पत्यागमन की प्रतीक्षा में तड़पत ही व्यतीत हो जाया करती हैं।<sup>५</sup> चन्द न धार पुण्डरीक का भी स्व चित्रकारी में बर्णा-नृत्य दंगत चित्रित किया है।<sup>६</sup>

वीरचरित्र में महाराज वीरसिंहदेव के रंगमहल में चित्र पुनलिका जमी नतकियों उनका मनागजन करत प्रदर्शन की गई हैं।<sup>७</sup> कवि मान न महाराज राजसिंह की चारित्रिक विगणनाओं पर प्रकाश डालते हुए उनका वद और पुराणा के श्रवण से प्रमुदित होने तथा उनका महा वक्ष्याओं के नृत्य करने का एक-मात्र इस भाँति चित्रण किया है, माना इन परस्पर विरोधी गुणों का, मान की दृष्टि में कोई अन्तर ही नहीं था।<sup>८</sup>

कवि जान न नाहरवा को अनेक पातुरों श्रय करने, रात्रि दिवस उनका नृत्य प्रेक्षण में अनुरक्त लिखाया है। कवि जान न इस उल्लेख से वक्ष्याओं के श्रय विषय के तथ्य पर पक्का पड़ता है।<sup>९</sup>

महला की भाँति राजदरवारा में भी वक्ष्या नृत्य की व्यापक आयोजना का चित्रण मिलता है। महाराज पथ्वीराज स्व सामता सहित राज ममा में पातुरा के

१ नहा पातुरा चातुर नृत्यकारी। नही तान समीत आनापकारी।

पृ० रा० का० २३७५।१६४२

२ स ४ द० 'पृ० रा०' का० १७००।८२० स १७०४।८६०

३ 'जाम एक छिन्ना न घट सत्तमि सत्तनिवार।

बहु कामिनि सुप रति समर। श्रियनिष नोद निवार।'

पृ० रा० मा० ४।६६।३२३

६ सँ ६ दे० क्रम० 'पृ० रा०' का० २०६२।२१५ 'वी० च०' २०।२८ ३०, ग०

वि० ४।४५ ४६, 'क्या० रा० ५७८-७६

गाय गीत और नृत्य का रसास्वादन करते शिवालय हैं।<sup>१</sup> इसका प्रतिरिक्त महा राज पृथ्वीराज के सामाजिक और महाराज जयपाल के राजगुप यज्ञ<sup>२</sup> के अन्तर्गत पर भी कवि चन्द्र वदया-नृत्य की आयोजना प्रशस्ति की है। वयामगों रासा में गायगा द्वारा तीन वयामगों के तत्त्व प्रेक्षण मनिर्गति अतुरन रहने का उत्तम किया ही जा चुका है। हम्पीररागों और हम्पीर हट म मन्तराज हम्पीर<sup>३</sup> व उन्नत किम का धरा डान हुए गाय अनाउरीन की गिना न करत हुए वदया नृत्य प्रेक्षण म अतुरन मिलत है।<sup>४</sup> वयाम गायगाह जहाँगार व अरवार म वनिर्गति की नय गान परत प्रशस्ति किया है।<sup>५</sup> कवि श्रीधर न जगनामा म मौजूदीगों व अरवार की राग रग म दूत्र व अगाइ स भी वदर शिवाया है। उन्नत दग्धार म गरी गराव व दौर चलत व तो वही मीग और अरीम की मोनियों चलाई जाती थी। उमम बाह्य तय और ताप व स्थानाप न दारु पाटाई और मृत्पादि वने रतन थ। दग्धार म किती और दिजडे तय करत थ और वही पातुरे नृत्य-नग रहनी थी।<sup>६</sup> राजविलास म गाय जात अरवार अतन सनिक गिविर म वदया-नृत्य स मनोरजन करत प्रशस्ति किया गया है।<sup>७</sup> मान ने कुमार भीमसिंह की भी पातुरा व नृत्य और संगीत से प्रमुत्ति हाते चित्रित किया है।<sup>८</sup> आहृगण्ड म राजअरबारा तथा सनिक पडावा पर वचनिया और मगतों के तडको व नृत्य चत्र चलन का उल्लस मिलता है।<sup>९</sup>

सामाजिक नगरवामिया द्वारा वयाम-नय के प्रेक्षण से मनोरजन कर्न का कवि चन्द्र और विद्यापति के निर्देशों से पना चलता है। कवि चन्द्र ने वनीज के प्रवेग द्वार के समीप ही वदयाग्रा का निवास शिवाया है। उनके गानों म, उन वदयाग्रा के सुगन्धिया स अपूरित श्रुतुराज की भाति उमाअर आरास आकरक वेग भूपा वीणादि पर छतीमा रागा की मधुर रागनिया तथा मेनका के सप्रस नृत्य कौशल लोमा के चित्र को हठात् ही चलायमान कर देता था।<sup>१०</sup> विद्यापति ने जौनपुर म राज माग व निरट वदयाग्रा के प्रति सुअर आवासों की स्थिति शिवाई है।<sup>११</sup> उनके अनुसार

१ से ४ नै० नम० ५० रा० का० १५६५।१२, वही ५६७।६१ वही, १३२२।६ ह० रा० ६२७ ह० ह० च० १८७ ८८

५ 'वहूँ माट माटी करेँ मान पाव कहूँ बेडिनी लालिनी गीत गाव।

ज० ज० च०' छ० ४६

६ इत मौजनी मगमर मस्त अलस्त अमल खाइव।

सिगरे कलावत है अमीर भरे रहे चित चाइक।

दारु सु दारु भरत गोली अमल गोली रग की।

कहुँ समामस्त कलावती कहुँ पातुरन की गाह की।

कहुँ नचत हरखे हीजरा भर लगी अहि डरू आहि की। जगा० ५० ६७४ ८७

७ स ११ दे० नम० रा० वि० १८।८ वही ५।४५ आ० ६०।६, १३७।१२

१५ प० रा०' का० १६००।४२७ ३०, कीर्ति प० ३२,

वश्याघ्रा के कटाक्ष, गँवारा को छाड़कर, अथ समस्त नागरिका के मनाको विद्ध करत थे।<sup>१</sup> वेश्याघ्रा की श्रृं गारावपित्त तन-बन्नीरी, कुटिल अन्नावनी सनेने रूप और मट्टु मुस्वान-युक्त चितवन की प्रशसा करत हुए, विद्यापति का यह कथन कि ऐसी इच्छा होती है, पुरपाय चतुष्टय म से गेप तीन की चित्ता छोडकर मान काम की साधना की जाय,<sup>२</sup> कदाचित् तात्कालिक नागरिका के चित्तन का वानन है।

वश्या नृत्य द्वारा मनोरजन करने का समापन कवि चन्द की गानावनी म उपयुक्त रहगा जिमम उहनि इस व्यसन पर कटु-व्यंग्य वसा है— मद्ग ध्वनि एव पातुरा की अधनस्थनी ही जिनके लिए सर्वोच्च मुग ह काव बनानुगया वश्याघ्रा के कठ से नि मृत मादक स्वर ही जिाके लिए मुमापित वाक्यावनी ह, नामकलापापी रामाप्रो के कठ से लगना ही जिह विष्णु और शिव की सेवा क सदश सारयुक्त प्रतीत होना है तथा वारागनाप्रो के पतनकारी नि स्वासा की सुरमि स सुवामित हाना अपना ग्रहामाग्य मानते हुए, जो उनके ही साहचय म अपनी रात्रिया व्यतीत कर दत हैं, ऐसे काम प्रसित नरेशा की जय हो ! जय हो !”<sup>३</sup>

(आ) नटा के नृत्य-सगीत तथा अथ खेल —

वारकाव्य म उपलब्ध निदोंगा से यह स्पष्ट होता है कि, यद्यपि नट बदरा के युन गारीरिक उठल-बूद स सम्बद्ध श्रीडाएँ तथा बटाघ्रा के खेल दिपात्र मी सामाजिका का मनोरजन करत थे तथापि उनका प्रमुख वनन्य सामाजिका का न्य और सगीन द्वारा मनोरजन करना हाता था।

पथ्वीराजरासा के शक्तित्रना वणन नाम प्रस्ताव म महाराज पथ्वीराज के दरवार म अान वाला नट स्वय का दवगिरि के यदुवगी नरश का राज नट वताना है,<sup>४</sup> जिमसे आलाव्यकालीन नरगा के यहा राजकीय नटा की उपस्थिति अभिव्यक्त होती है। महाराज बीसलदव स्वमहल म पटरानी पाँवारी के साथ मनाविनोत्ताय गग रग युक्त नाट्य का प्रेक्षण करते चित्रित किए गए हैं।<sup>५</sup> महाराज जयचन्द की यवत्रिका युक्त जिस रगगाना का वश्याघ्रा के सदम मे उन्नेख किया गया है वह नाटका के लिए मी प्रयुक्त होती होगी।<sup>६</sup> तात्पर्य यह है कि राजमहला की नाट्य गानाघ्रा म मनो विनोत्ताय नाटक हुआ करत थे। नटा द्वारा नृत्य और सगीत के माध्यम स प्रकाश का

१ स ७ वही, पं ३६ वही, पं ३४

२ 'मुग्ग्य मुग्ग्य मग्ग तल्ल जघन, राग वला कोजन।

कठी कठ मुमास ने सम जिन, काम बना पोपन।

रमी रमरिता गुन हरि हरो मुरमीय पवन पता।

एव गुासह काग वभ गहिता, जय राज रात्र गता।—पं ० रा० मो० ४।६६।३२८

४ म ६ पं ० रा० वा० ७६।।१६, वही, ७४।३७०, वही १७०।६।३४

मन प्रसादा करी का पृथ्वीराजरागो,<sup>१</sup> परमालरासा,<sup>२</sup> राजविताग,<sup>३</sup> वीरचरित्र,<sup>४</sup> जहागीरसचरित्रका<sup>५</sup> और जगामा म,<sup>६</sup> चित्रण मिनता है। उह पृथ्वीराजरागो म बंदर उचार<sup>७</sup> छत्रप्रराग और गुजानपरित म बटाभा व गुन रितावर,<sup>८</sup> तथा पृथ्वीराजरासा, हम्मीररासा और छत्रप्रराग म गारीरक उछन कू<sup>९</sup> म सम्पद गृत्पा<sup>१०</sup> द्वारा सामाजिक वा मनोरजन करत प्रदर्शित किया गया है।

(इ) भगर-विद्या या एद्रजालिय खन —

पृथ्वीराजरासो का बनबज्ज-समय में भगर का मूल का प्रत्यक्ष वर्णन मिलने के साथ साथ उसके अनन्त प्रसंगों में मुद्रम्पल में मची मारताट से थीरा के छिन मिलने अर्थात् इतस्तत् गिरने तथा पत्र धा के चवन फिरने को भगर का मूल से उपमित किया गया है।<sup>१</sup> जिससे स्पष्ट होता है कि विनायत हमारे आलाच्यकाल के पूर्वार्द्ध में, भगर के छेन सामाजिक वा मनोरजा की एक बहु प्रचलित विधा थी। कबीरजी हुए महागज पृथ्वीराज और उनका सामत किसी एद्रजालिय नट को सात सागा री नोचो पर जय जयकार बोलते हुए गया त्रत क्षयत हैं। तदुपरात आकाग से कही उसका सर, कही हाथ और कही छत्रपाता हुआ धड आकर गिरता है जिसे देखकर उनसे विस्मय की सीमा नहीं रहती।<sup>२</sup> प्रस्तुत सन्तम में कवि का<sup>३</sup> वा अभिप्रेत इस अफातुनमूचक

१ से ६ दे० क्रम० प० रा० का ७६०।११ 'प० रा०' ५।१६६ 'रा० वि०'  
३।७२ 'बी० च० २७।७ ज० १० च० छ० ४७ जग० प० ८५ पू० रा०  
का ४८६ २६८ छ० प्र० २०।१७ 'मु० च० ६।६।७ प० रा० का  
२६०।४६, 'ह० रा० छ० ७६८, 'छ० प्र०' २०।१७

१० कहर भगर जिय पेल। ठेल सलन सम ठिल्लहि।  
इक धुक्त घर तुकिर। इक पल भगल मिल्लहि।  
इक कमध उठत। इक अतन आनुझहि।  
इक हृथ पग भरहि। रिक्कि पग पग तिन मुझहि।  
तरफरत इक घर मीन जनु। रन खन छिनन करयो।  
घन घा<sup>४</sup> घुम्मि घर घुक्कि घर। इत गुजुट्ट कह मिरयो।<sup>५</sup>

— प० रा० का ११३।६८

और भी दे० ५।४।३७७ ११६०।८३, १३२६।२४६ १३४५।४६ २४८६।  
१२४

११ 'चलत मग्य चहुआत। निकट वर गाम समतर।  
नट पेलत नाटकक। मगल मडयो भ्रम तनर।  
सत सगु उपपर। नट्ट सुत्तो जय जपत।  
बहुत सीस कहु पानि। घरनि घर परयो सुकपत।  
इह चरित पिप्य सामत सब। अण्य चित्त विभ्रम लहे।  
पिप्यत परस्पर मुप सकल। न को बुद्धभन राजन कहे।' वही १६० ६।१६८

घटना द्वारा भावी मारकाट का पूर्वाभास देना रहा है, अतः उसने इन खेल में उस सामाजिक पक्ष को अवगणित छोड़ दिया है जिसमें वे शरीरगत यथास्थान जुम्पर नट पुनः जीवित हो जाता था। रामी में अत्यन्त कब्रघा के उठ सके हाथ की मगर के खेल से उपमा दिए जान से यह इंगित अवश्य मिथ्या है कि रातोरात को पूरे एत नः ज्ञान था। अतः इस मतप्राय विद्या के विषय में रातो में उपनः विवरण ने मुग्घना करते हुए बाह्य माथ्या से कुछ अधिक् प्रकाश डालना उपयागी रहा।

रामाकार ने नट को 'सत्त सगु उप्पर' लेटत दिखाने सागा का प्रयाग दिनाया है जबकि अत्रुन फजल न कारे चमडे की पटार के एक मिरे का ऊपर पञ्जर, अदश्या काग म लटका तन ना उल्लभ किया है। रातोकार न नट क जीवित हाा ना चित्रण नहीं किया है किन्तु अत्रुन फजल क अनुसार - 'नट दशाा म १ तिसी एन का उसक आवाग स उतरने के समय तः अपनी पत्नी की रथा करने ना मार सौप जाना था। नट क छिन मि न अगा के साथ सती होने का हठ करती हुई नट-पत्नी सती हाकर राल मे परिणत हा जाती थी। अचानक तमी कही स नट प्रकट हो जाता था आर अपनी पत्नी की माग करता था। दशका द्वारा विगत घटनावली का वस्ताः मुनान पर वह उसम अविश्वास प्रकट करता और कहता कि आपन मेरी पत्नी का अकथ ही अपने घर म छिया दिया है। और वस्तुत लागा क आदक्य का टिकाना नहीं रहा था, जब नट द्वारा आवाज लगाने पर उसकी पत्नी अपनी सम्पक देवभाल क लिए उस पुग्घ को धयवाद दती हुई, उमक गृह म जीवित निक्कर आती थी।'<sup>१</sup>

ऐना उच यात्री लडवड मलाने मगर के सत्र म नट-पत्नी क सती हाने का उल्लेख करत हुए कहा है कि नट पत्नी उन शरीरगत को एक टाकरी म रखती जाती थी, आर सर क भी कटार गिरन पर उह इतस्तत छितरा दती थी। विविध शरीरगत रग रगनर यथास्थान जुड जात थ और नट जीवित हाकर पुनवत चलन फिरन और बोलन लगता था। दसक इसी विभ्रम म विमूढ हा जात थ कि सद्य घटित घटनाए कही स्वप्न ता नहा थी।<sup>२</sup>

मनारजन की इस मृत प्राय विद्या का समापन करत हुए, हम साह जहागीर के ममायम म स भा मगर क खेल का साराग देने न लाभ का सवरण नहा कर सकत। जहागीर क अनुसार अत्र दिखान वाले एक जजीर को अधर आनास म लटका देते थ, उस जजीर पर क नमस एक एन कृत, सुधर, नेंडुप्रा, चीन और गः को लीडता हुमा ऊपर चगन जान थ और अत म जजीर की लडिया बनाकर थल म रख लन थ। दसक यही साचत रहन थ कि वे पः कहां गय।<sup>३</sup>

उपयुक्त विवरण म स्पष्ट हागा है कि मगर क खन न तिरु माता सागे गाड सी जानी था, अथवा चमडे की पट्टी या जजीर का आनास म लटकाया जाना था।

१ द० आईन ए प्रकथगे, भा० ३, प० १३०

२ ३ द० बही पृ० १३३ पर डा० अहुताथ सरकार की पाद टिप्पणी

बहुधा गट उत पर स्वयं चढ़ाकर, अपने पिछे न गरीराग वानीच गिराया जाता था। अतः गरीराग एतद् हानर गता गीवित हाहा गाना था यथा एतद् इगम भी अधिष दश ऐद्रजातिा दगवा व रामन मती हृई पत्नी या भी जीवित कर दन थ। इस खेल या दूसरा रूप मानाग म लटक ती जजीर पर पगुषा को चढ़ाकर उह धदुश्य कर दन व बीतुक से सम्भा धन रहता था।

### (उ) कथा वाता मुनना

वीरकाव्य में ऐसे निर्योश मिलते हैं जिनसे ज्ञात होता है कि नए राजपर्यारों में, तथा शयन से पूर्व मनोरंजन कथाएँ सुना करती थीं। शिशु भी मातापिता की कहानी सुनाते व आग्रह करत मिलत हैं जिनका आधार पर कल्याण की जा सकती है कि अथ सामाजिकता में भी मनोरंजन की यह प्रणाली प्रचलित रही होगी।

पृथ्वीराजरागो में महाराज पृथ्वीराज के दरबार में महाभारत का पाठ किए जाने का उल्लेख मिलता है।<sup>१</sup> बौद्ध और जना की भी कथाएँ उस समय सुनी जाती थीं किन्तु पृथ्वीराजरासो में उह शान को नष्ट करने वाली तथा मानव व पौरुष का हास करके उसे स्त्रण बनाने वाली कहानर निर्दा की गई है, तथा क्षत्रिया के लिए रामायण और महाभारत की कथाओं व श्रवण को ही उपयुक्त बताया गया है।<sup>२</sup> रासो में शिशु आना अपनी माता से निवेदन करता है कि आप मुझे सदव रामायण और महाभारत की कथाएँ सुनाया करती हो जिनमें बर्णित भोषण प्रसंगों से मुझे कभी भी भय नहीं लगता। अतः आपका यह तक व्यय है कि मुझे अपने बाबा वीसलदेव के नर से दानव बनने की कथा सुनते हुए डर लगेगा।<sup>३</sup> आना व इस कथन से स्पष्ट होता है कि बच्चों द्वारा माता से कहानी सुनाने का आग्रह किया जाता था, तथा विशेषतः क्षत्रिया को रामायण और महाभारत सम्बन्धी प्रसंग सुनाये जाते थे।

शयन से पूर्व कहानी सुनने का उल्लेख महाराज पृथ्वीराज व कनौज गमन के अवसर पर मिलता है। महाराज का शयन काल होने पर, उनका कथक उहें कहानियाँ सुनाना आरम्भ करता है जिन्हें सुनते हुए ही वे निद्रा ग्ग्न हो जाते हैं।<sup>४</sup>

१ 'कहै भर भारथ बत स वान । धरयो परतापसि मुञ्जन पान ।

—प० रा० का० २८६।३६

२ 'जुध धम लियौ बध न सग । सुनि श्रवन राज मन भौ उदग ।

इह नष्ट ग्यान मुनिय न कान । पुरपातन मज्ज किति हान ।

परमोध तजो बोधक पुरान । रामाइन मुन मारथ निदान । वही ७१।३४६ ५२

३ 'जसी कहि मो कहू डर पावहु । मरे कछु इह ताय न आवहु ।

रामाइन भारत की माता । सोही सन सुनत हा माना ।'

वही ६४।३३४

४ 'मइत निसा तिन भुति विनु उडपनि तेज विराज ।

कथक सध्य कथ्यहि कथा सुकल सयन प्रथिराज ।'

उपयुक्त विवरण स आलोच्यकाल म रामायण और महाभारत की कहानिया अधिक लाक्षणिक हाना अभिव्यक्त होना है। इस समय मुसलमाना क आक्रमण की बाद सी आ गई थी, अतः निर्वन्त, उपराम वसि और अहिंसक मनावृत्तिया को जाग्रत करने वाली बौद्ध और जन कहानिया की उसम जो अवमानना की गई है उसने मूल म निश्चय ही युग प्रवृत्ति भन्क रही है।

### क्रीडात्मक विनोद

क्रीडात्मक विनोद के साधन विवचन मौखिक की दृष्टि मे दो वर्णों मे रके जा सकते हैं — (अ) बालक और पुरुषों क क्रीडात्मक विनोद। (आ) बालिका और स्त्रिया क क्रीडा विनोद।

#### (अ) बालक और पुरुषों के क्रीडात्मक विनोद

##### (१) चकडोरि घुमाना

बच्चा की इस क्रीडा का मात्र पृथ्वीराजरासा म उपमान रूप मे उल्लेख मिलता है।

##### (२) पतंग उड़ाना

सुज्ञान चरित<sup>२</sup> और हमीररामो म<sup>३</sup> पतंग उड़ाकर मनोरजन करने की विधि का उमान रूप म चित्रण मिलता है। कवि चन्द ने महाराज पृथ्वीराज के राज्याभिषेक के अवसर पर समस्त नगरवासिया को गुडिडया उड़ाते प्रदर्शित किया है<sup>४</sup> जिससे स्पष्ट होता है कि विनाय हर्षोत्सास क समय आबाल बद्ध ममी गुडिडया उड़ाया करते थे।

##### (३) गिलोन से गिकार खेलना

रामोत्तर ने महाराज पृथ्वीराज<sup>५</sup> और छात्कार न उदल की<sup>६</sup> कुमारावस्था म गिलोन से गिकार खेलत चित्रित करने लडकों की सदभगत मनोरजन विधा पर प्रकाश ड ला है।

##### (४) हड्डूडुआ

कवि चन्द न बई प्रमगा म परम्पर मारकाट मचाते भनिका की हड्डूडुआ खेलते बच्चा स तुनना की है जिसम जात हाता है कि यह मन् गिकारा के मनोरजन का एक

१ से ६ द० प्रम० पृ० २१०' बा० ६/०१/३ मु० च०' ६६/१२ ६/३/४० ह०

रा० ८०३, पृ० २१० बा० १/०७/६१ बही १/३/७२७, प्रा० ३३/१६

७ (ब) 'दुह गीन दीन चहुवान गारी। हड्डूडु खेलत वानन जारी।

पृ० रा० बा० १३६३/१६२

(ख) निय धुम्म रण सगारा ग्रेण। हड्डूडु खेलत वानन जह। बही १४१३/८६ और भी दे० बही १३६/१५, १०८/१५



दिनाया २।<sup>१</sup>

कवि केशव प्रदेन विवरण से उस काल में चौगान के अधालिखित स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है।

एक व म्यान की लम्बाई सवा कोस होता था।<sup>२</sup> केशव के अनुसार इसका दानो सिरा पर हाल या हात थ<sup>३</sup> जबकि भूषण ने उह मीनारा की सजा दी है।<sup>४</sup> ब्लोखमन ने आईन ए अकबरी का अनुवाद करते हुए 'हाला का फोडा क्षेत्र में सिरा पर लगे हुए दो दो सम्भा का आतक बताया है जिनका बीच से गद निकान देने पर गोल हो जाता था।<sup>५</sup> प्रतीत होता है कि भूषण ने मुस्लिम शैली पर बन हुए इन हाला की हा मीनार' कहकर अभिहित किया है जो कदाचित् हाला के लिए उस समय दूसरा प्रचलित शब्द था।

विभिन्न रंगों की (केशव ने काली पाली, नीली और हर रंग का उल्लेख किया है) छड़ियाँ (हाकी स्कि जैसी) लिए हुए अश्वारोही खिलाडी दो दला में विभक्त हो जाते थे।<sup>६</sup> गन् जिम किसी खिलाडी की पहुँच में आ जाती थी वही उस छड़ी मारकर हाल (गान) की आर ले जान की चेष्टा करता था जबकि विपक्षी उसका प्रयास को विफल करने हुए गन् को दूसरी आर ले जान की चेष्टा करते थे।<sup>७</sup> इस खेल की त्वरित गति के कारण अश्व और सवार, सम्भवतः शीघ्र ही थकान अनुभव करने लगते थे अतः प्रति प्रीम मिनट में पदचाल दो पुरान खिलाडियों का स्थान नवीन खिलाडी ग्रहण कर लेते थे।<sup>८</sup> केशवरासजी ने भी प्रति घड़ी के उपरांत इस नियम का पालन दिखाया है।<sup>९</sup> उहान खिलाडियों की संख्या निर्दिष्ट नहीं की है जो आईन ए अकबरी से भी

१ 'मु रोहाल की घाल उताल ऐने

चल चार चौगान में चित्त जसे।

—प्रता० वि०, छ० ४४

२ पट्टि विधि गय नपति चौगान। सवा कोस सब भूमि समान।

—वी० च० १६।६

३ जय जय जीन हान नय तन-नय बजत निसान।

—वी० च० १६।१७

४ भूषण ने नय नो छन दग किय हुन ठीक ठिकान मिनार।

—भू० प० स्पृ० छ० २३

५ द० आईन ए अकबरी भाग ३ प० २६७

६ एत कालि नय परम उतार। कालि टुमरि रजपूत जुभार।

साहन सीत नायनि छगी। तारी पीरी राती हरी।

—वी० च० १६।१०

७ गाना जाय भाग जाय। मारि ताहि चय मननाय।

वही १६।१३

८ २० आईन ए अकबरी भा० १ प० २६७

९ परा घरी प्रति टाकुर मय। बदना वामन बाहन तरि।

—वी० च०, १६।१६

स्पष्ट नहीं हो पाती। उससे यह पता भ्रवश्य चलता है कि चौगान म दस स अधिक खिलाडी नहीं हात थ।<sup>१</sup> वैशय न प्रत्यक् बार 'हाल जीतने' (गोल करन) की दशा म महाराज वीरसिंह देव को निगान बजवाकर, विधा को दान देते चित्रिन किया है<sup>२</sup>—जो खल के स्थान पर उनकी राजकीय मर्यादा से सम्पन्न प्रतीत होता है।

(८) मृगया —

मृगया आर्योच्चकाल की एक एमी मनोरजन विधा थी, जिसम वीरकाय म उल्लिखित प्रायः समा नरन और वात्साह अनुरक्त मिलत हैं। पृथ्वीराजरासा म महाराज सारगदेव,<sup>३</sup> वीमलदव<sup>४</sup> जयच द<sup>५</sup> और धीर पुण्डरी<sup>६</sup> क आशुट वणना का यदि छोड भी दिया जाय, तथापि उसक उनहत्तर सभया म स अधिकाश म महाराज पृथ्वी राज मगयापुरक्त चित्रित किए गए हैं। वीरकाव्य क अय नायका म स महाराजा परमाल<sup>७</sup> वीरसिंह<sup>८</sup> छत्रमाल<sup>९</sup> रतारसाह<sup>१०</sup> मूण्जमल<sup>११</sup> साह अराजडीन<sup>१२</sup> और औरगजेव<sup>१३</sup> भी शिकार द्वारा मनोरजन वरत भिन्नत है। वस्तुतः आर्योच्चकालीन नरेशा के तीन ही प्रभुय जीवन लक्ष्य थ—शत्रु-दलनाय युद्ध करना, गतिकाल म सगीत नाटय और वक्ष्या नत्यादि के प्रेक्षण म कालयापन तथा इतन उचे समय को मृगयाय वन विहार म व्यतीत करना। गारीरिक बल वधन और अस्त्र शस्त्र संचालन म नपुण्य प्रदान करन की क्षमता के कारण क्षत्रिया की दृष्टि म इसका महत्व भी अधिक रहा है, और जसा कि बनल टाड न प्रदर्शन किया है जगनी मूअर या गेर के प्रथम शिकार क उपलक्ष्य मे व विशेष समारोहा की आयोजना किया करत थ।<sup>१४</sup>

मृगया की एसी लोकप्रियता भिन्नते हुए भी, उसक विषय म कुछ प्रवात् भी प्रचलित थे। पृथ्वीराजरासा म उसकी परिणति सदव अतिष्टकर ही हाने का दाप दियाया गया है।<sup>१५</sup> परमानरामो म उसे नरेशो के अधपतन का मूलकारण<sup>१६</sup> सदव

१ दे० 'आ० अक०, भा० १, प० २६७

२ जब जब जीन हाल नप तब-तब वजत निशान।

हय गय भूपन दान पट, दीजत विप्रन दान। वी० च० १६।१७

३ से ६ द० 'प० रा० का० ६१।३१५ वही ७३।३५३ वही १७०।७।८८३ वही २०६१।२११

७ महाराज पृथ्वीराज के आशुट वणना के लिए अवनकाकीय है छोडे समय का प० ३०१ तथा इमी भाति, ६।३८८, १०।५४१, १५।५७० १७।५७७, २४।६८१, २८।७२६, २५।७६६ २६।८८३ २७।८८६ २९।६८६ ३४।१००१, ४२।११६६ ५७।१४७० ६०।१५७२, ६३।१६०८

८ मे १० दे० नम० प० रा०, ३१, 'वी० च० ३।५६ छ० प्र० ६।२

११ से १८ दे० नम० 'छ० प्र० ३।३ 'पु० च० १।७।२ 'ह० रा०' १६८०१० नि० मू० ६०

११/ द० राजस्थान', भा० २, पृ० ५६० ६१

१६ १७ दे नम० 'प० रा०' का० २००१।११३, प० रा०' १।१४६

तीतर दूसरे तीतरा को इसी रीति से पकड़वात मिलने है ।<sup>१</sup> इसमें अनिरीकत इन पतिया का एक आम उपयोग यह था कि व पतिया क भुण्णा का गिक्कारिया क निशाने की परिधि म आने के लिए विवश कर देते थे जिसस उनका आशानी म बय किया जा सके ।

पतिया द्वारा पशुओं क गिक्कार म सहायता दना आश्चयजनक प्रतीत होते हुए भी सत्य है । लगर भगर और चरग नामक पशु जिनका पथ्वीराजरासो, परमान रासो और सुजान चरित तीना ग्रथा म उल्लेख मिलता है—मृतन न खरगोणा का हनन करते प्रदर्शित किए हैं ।<sup>२</sup> चरग ने बाज जुरा और कुही को मृग तथा बाराहा पर भपटत चित्रित किया है ।<sup>३</sup> इन पक्षियों के मृगादि पर भाट्टा मारने का उल्लेख बनिवर के विवरण से भी स्पष्ट होता है जिसमें उसने बाजा द्वारा मृगों को अपने पजा तथा डना की मार से अघा करके उनका गिक्कार को सुगम बना देने का उल्लेख किया है ।<sup>४</sup>

इन शिकारी पक्षियों म से कुही या कुई चील के बराबर हातीह तथा बाज की तरह छोटी बिडिया का शिकार करती ह । इसमें मिनता जुलती शिकारी चिन्धिया म टीसा तुरमती गिद्ध, बहरी बाज चीन जुरा (माण बाज) और गिक्कारा प्रसिद्ध हैं । तुरमती लगर और खेरमुतिया बहरी की ही जातीयां ह । बहरी शिकार स बड़ी और बाज स छोटी होती ह ।<sup>५</sup>

### शिकारी पशुओं के माध्यम से मृगया

मृगया के लिए कुत्त चीत स्याहगोण (सियाह गोश) हिरण हाथी और खरगोशा का शिक्षित करके उपयोग म लाया जाता था । चरग ने महाराज पथ्वीराज को आखेटाय इन सभी पशुओं को साथ ले जात हुए चित्रित किया है ।<sup>६</sup> परमालरासा म कुत्ते और चीता का प्रयोग लिखाया गया ह ।<sup>७</sup> जोधराज न हम्मिररासो म शाह

१ द० प० रा० मो० भाग २ प० ६०६

२ बहु लगर भगर पुनि चगर तग । ज हनत मुसा बुज्जर उतग । —मु० च० ६।२।३१

३ प्रापटक रमि राज । बाज जुर कुही छडि कर ।

एन एन बाराह । हनहि बर हृक्कि तक्कि डर । —प० रा० वा० २००२।१२७

४ दे० टू वंग इन मुगन एभापर प० २६२

५ अलीगढ़ जिन की कृपा जीवन सम्बन्धी प्रज्ञा-पत्र० भाग २ प० २१

६ सित पच दीपीय, एण फनेत पच मौ ।

सहम स्वान म डोरि ग्रहै पवान पच सो ।

कुही बाज उतग पस प्राधान मु बज्ज ।

खरगोम मित्र पजर गुण - धनुम धनत्रिय धार धन । वहा १।२७।१।११

७ प० रा० ३०।२६

अलाउद्दीन के शिकारी दल में इबान, चीत, मृग और स्याहगोशा के समूह प्रदर्शित किए हैं।<sup>१</sup> सूत्र न इनमें से गाजीउद्दीनखा के महा स्याहगोश और चीत हाने का उल्लेख किया है जिनका उपयोग वह निश्चय ही शिकाराय करता होगा।<sup>२</sup>

उपयुक्त पशुओं में कुत्ते सर्वाधिक लोकप्रिय थे। चन्दन महाराज पन्धीराज के पास महत्मा शिकारी कुत्ते बताते हैं। उन कुत्ता की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए चन्दन का कथन है कि वे - उज्जयिनी और नाहर को भी पछाड़कर उमका करने जा सकते हैं।<sup>३</sup> तीव्रगति में चलने में भी उनका माना नहीं था। अपनी तीव्रगति और छल-बल नपुण्य के कारण वे शत्रुमात्र में शिकार जा सकते थे।<sup>४</sup>

चन्द ने पहाडराय तामर नगरीराय, जैत पवार आदि पृथ्वीराज के अथ सामन्तों के भी शिकारी कुत्ता का वर्णन किया है।<sup>५</sup> परमानरासोकार ने महाराज परमाल के शिकारी दल में वाण के समान श्वेत गति वाले पन्धीय तथा अनेक जातियाँ के सह में ऐसे श्वान बताए हैं, जो शरीर में बड़ भीमकाय एवं तीव्र बुद्धि वाले थे।<sup>६</sup> उनके शिकार कौशल और मजबूती के लिए इस तथ्य का परिचय ही पर्याप्त है कि वे जिन दिनों में होकर निकल जाते थे, उममें दस दस कोस पर्यन्त वन जीवों का नामोनिशान नहीं बचता था।<sup>७</sup>

मठ के उपकरणों में कुत्ता का भी सम्मिलित होता, उनकी महत्ता का परिचायक है। दिल्ली से निष्पामित मीर महिमा मगान राव हम्मीर को अथ उत्पादाना के साथ साथ एक कुत्ता, दो बाज और इबान भी भेंट स्वरूप प्रदान करता है।<sup>८</sup> यह शिकारी कुत्ता निश्चय ही उज्जयिनी आदि से आयात की हुई किसी अच्छी नस्ल का होने के कारण, इस सम्पत्ति समझा गया होगा। मुगल दरबार में उज्जयिनी से आयात किए हुए कुत्ते हाने का बर्णन उल्लेख किया है।<sup>९</sup>

चौत्ते आवा पर पट्टिया बांधकर तथा छत्रडा में बिठाकर आसुट-स्थल पर ले

१ २ दे० प्रम० ह० रा० ४० 'मु० च०' ६।१।३१ पृ० रा० का० १५२८।८

३ पक्ष में मद्धि नाहर पछारि। जीव ल जाव वच्छतिवार।

इह महत्मा वधन वाणाह तेज। जुटि पवकि भुम्मि वरुण केज। वही १५१२।६

४ सारद सटस वल गन कौन। घावन भुम्मि भुरलाइ पौ।

छन छत्र भेद जीवन लपति। जुहनि अत पपु पन भपति। वही १५१३।१०

५ स ८ दे० प्रम० प० रा० १५१३।१६ १६ प० रा० ३०।४८ १० वही, ३०।५,

'ह० रा० २६२

६ दे० द्र वल्म इन मुगल इण्डिया, बनियर, पृ० २६२

जाय जात प्रदर्शित गिरा गये है।<sup>१</sup> गिरात कहा जा सकता है कि उक्त प्रतीक पशुपति पर छोड़कर गिरात कराया जाता होगा। तिया-मोग भी चीन की ही जाति का हिन्दू पशु है, अतः उसका भी गिरात में इसी भाँति उपयोग किया जाता होगा। अतः टिरणा का दूसरे मृगा को पकड़ना में उपयोग किया जाता था। कवि चन्द ने गिरात में वृक्ष मृगा को उसी प्रकार बना कर बना था जैसे कुचटारों पर बन बनाया सड़ितान मन बना कर लेती है, तथा चानिया क मुक्ति वश में रहता है।<sup>२</sup> थवनाट नामक यात्री का विवरण में जान होता है कि मृगा के सींग में एक विषाणु प्रकार का जान बाँधकर उक्त श्रावण स्थान पर मृगा में समीप छोड़ दिया जाता था। य प्रतिगति में वन मग का भ्रम में मिलकर, उनको स्वयं से लड़ने के लिए प्रेरित करता था। वन मग जग ही उनगे मित्रना प्रारम्भ करता था कि उनके सींग उन जालों में फँस जाते थे, जिससे वे भागने में असमर्थ होने के कारण गिरारिया द्वारा पकड़ लिये जाते थे।<sup>३</sup> खरगोशों का भी स्व जातिधुआ को पकड़वाने के लिए इसी प्रकार की रीति से उपयोग किया जाता होगा।

### नाद से रिझाकर —

अनेक पशु पक्षी नाद से रिझाकर पकड़े जाते थे। कवि चन्द ने घटा के राग से महाराज पथ्वीराज के शिकारी दल द्वारा अनेक पशु पक्षी पकड़े जाने का उल्लेख किया है।<sup>४</sup> अथवा उसने नाद द्वारा मृगा को वश में करने का उल्लेख किया है।<sup>५</sup> कवि जटमल ने 'राघवचरित' में वीणा राग को सुनकर जंगल के समस्त मृगा का उसके समीप एकत्र हो जाना चित्रित किया है।<sup>६</sup> कवि गोधराज ने भी वीणा राग के श्रवण से अरुण के पशु पक्षियों का शाह अलाउद्दीन के शिकारीदल की ओर खिंचा आना प्रदर्शित किया

१ (क) 'रथ सथ्य चीती बाग। चण ढकि पथ्य पयान। —१० रा०, का० १६६४।६२

(ख) पारधि पट्ट प्रथिराज। रम बट्टपुर पासह।

बाहिल नीस चित्रकर। ससिब रेसम धर रासह। वही ३८८।६

और भी दे० १०१।१३, १४६।६

२ २० प० रा० का० ७६६।६५

३ २० अण्डियन ट्र वल्स आफ थवेनाट प० ५४

४ घटति राग कितक किते चित्तय तकि दवत। प० रा० मो० १।१२५।५५

५ ज्या वसि नाद तुरग थास वसि जेम मधुकर। वही १।२६।१।१३

६ मृग तजि सथ वनवास पास राघव के आय।

सुखी रागघट वान साह मृग कहू न पाय।

है।<sup>१</sup> इस विषय में यह निर्दोष कर्मा आवश्यक है कि, नाट्य से रिभावर मगा का परटना धिया का अपान करपना मात्र नहीं है अतिउ अलत्रन्ती न स्वयं तो वस कृत्य का प्रयत्न दर्शाता है नाट्य मारनीया तो नाट्य से रिभावर पशु पशु परउन म दगता की पुष्टि की है।<sup>२</sup>

### अन्य विधिया —

शिकारी वन वना के रग रग मिनत जुनत हरे रग व वसन पहनकर जान थे जिसमें पशुआ को उनकी उपस्थिति का जान न हा सके।<sup>३</sup> जगन के अनभाग म डिपे हुए वय पशु पशिया का करील या हावा लगान वान डोल पीटत हुए यह आया, वह आया' आन्ति आवाजे लगात हुए बाहर निकानत थे।<sup>४</sup> इनम स अनेक ता स्थल स्थल पर बंधे हुए वागुरा (जाना) में फँस जात थ।<sup>५</sup> कुछ के शिकार के लिए पीछे उल्लिखित पशु पशिया का उपयोग किया जाता था, जबकि गण के शिकार में नावक व तीर बर्छी माल और उदून आदि का प्रयोग किया जाता था। सप विच्छू आन्ति विपल जन्तुओ को मत्रो से वश में करके पकडन और मारन म दश -पक्षिया को भी शिकारी दल में सम्मिलित रखा जाता था।<sup>६</sup> शिकार में मारे और पकडे गय पशुआ की सग्या इतनी अधिक होती थी कि उनके बहन के लिए अनेक गाडिया ऊटा, हाथियो और कावरो का प्रयोग किया जाता था।<sup>७</sup>

### (६) जलक्रीडा —

नदी और सरावरानि में नौका विहार या किसी प्रकार का खेल खेलने का

- १ बहू चीन वादित्र बाजत ऐसी। सुने राग मो= मृग मान वसी।<sup>१</sup>  
करे गान तान पशु पच्छि माहैं। सुन जीव आवन्त जान न बाहैं। —१० रा० २०५ ६
- २ I myself have witnessed that in hunting gazelles, they caught them with the hand xxx This however rests as I believe I have found out simply on the device of slowly and constantly accustoming the animals to one and the same melody  
Alberuni s, 'India,' vol I P 195
- ३ स ५ दे० '५० रा०' का० ७६६१२२ पृ० रा०' मो० ११ १२७।४६, ति० भू० ६०, प० रा० का० ६१।३१५ 'प० रा०' ३०।८६
- ६ 'वाप वराह रारि कह जुट्टेय। तयु कुप्पि रजपूतन कुट्टेय। —५० रा० ३०।८३
- ७ वीछी सप विपग मत्र वान्ति मिनि लुट्टिय।' —५० रा०, मा० ११२५।५६
- ८ गाडिनि पल्लिय जिने कित उटाणी पिठि डारेय।  
पनि राभ पर कित, कितिक हटियन पर धागेय।  
कावरि वष वहार, कितिक स्वानन मुग खुट्टिय। वही वही

पथ्वीराजराजो परमानराजो छत्रपति, वीरनरि, राजविनाग घोर घातहान्त म विषण मिलता है। कवि चन्द्र न मन्मथ पथ्वीराज का निवृत्त जन मान गगार म 'हड्डुडुप्र मेला त गाय गाय भयव जन श्री' रत प्रशंति दिया है।<sup>१</sup> परमान रातो म महाराज परमान गोताम म बठार जनति करते है।<sup>२</sup> जयति मन्मथ राजविनाग म रत जहाज म रत राजतरावर म जन श्री करत प्रशंति रिय गए है।<sup>३</sup> घातहान्त म मोहा म रत नारा तामर मन मनन का उन्नय दिया गया है।<sup>४</sup> कवि ने महाराज वीरगहन्त का स्व वर्णनाभा त साथ जन जोडा करत चित्रित किया है।<sup>५</sup> गांगान त जल म छुप्रा छुपवल त मन का विषण किया है जिनम एक लडका दूसरा को छून की चटा करता था। जन जन म दुःखी लगान वान लडका को छून की चटा म छून वाला भ्रूज पाद प्रहार न कर पाता था ता उसक सभी साथी, उसकी गिल्ली उडात थ।<sup>६</sup>

### (१०) छूत श्रीडा -

यह एक गुम लक्षण ही है कि घाताच्यकाल म महाराज युधिष्ठिर या नल की भांति हम किसी भी नरेश या बादशाह का छूत श्रीडा के माध्यम स मनोरजन करत नही पात। कुछ लोग जुम्मा खेलते अवश्य थे क्योकि कवि चन्द्र ने कानोज क वश्यालयो के समीप छूत गृह प्रदर्शित किए हैं और कहा है कि उनमे भाग लन वाल कौपीन धारी मात्र रह जाते हैं।<sup>७</sup> छूत श्रीडा क प्रति रासाधार ने अथ सदमों म भी भवहेतनात्मक भाव यक्त किए हैं जिनम उसने युद्ध म पराजित हुए महा० मोला<sup>८</sup> मीम और गह गारी का<sup>९</sup> हारे हुए जुमारिया के सद्गतिनचित प्रशंति किया है। परमालरातो म भी छूत श्रीडा की निन्ता की गई है और उस नरेशा क पतन क चार कारणा वश्या नुरक्ति वाग्गी सेवन, और ब्रह्म हत्या की श्रेणी म स्थान दिया गया है।<sup>१०</sup> कसक ने दीवानी की रात्रि को जुम्मा खेलने का प्रचलन निखाया है।<sup>११</sup> तात्पर्य यह कि छूत श्रीडा का निर्दिष्ट समभत हुए भी समाज के एक अंग म उसका प्रचलन अवश्य था।

### (११) शतरज -

महाराज पथ्वीराज आपाड मास क एक एस दिन शतरज खेलते प्रदर्शित किए

१ स ४ दे० प्रम० प० रा० मो० १४६३२ प० रा० १७१०६ रा० वि०  
८१६६ आ० ३१०२२ २३

५ स १२ द० प्रम० बी० च० १५४ छ० प्र० ३७ प० रा० का० १४४०१६२,  
वही १६६०४२५ प० रा० मो० १२६१, वही ४३५३३५ प० रा०  
११२२ बी० च०, १६२४

गए हैं जिस दिन धुंध छाई हुई थी और आकाश मेघाच्छन्न था ।<sup>१</sup> इससे प्रतीत होता है कि शतरंज ऐसे अवसरों पर ही खेली जाती थी, जब किन्हीं कारणों से क्षत्रियोचित मृगयादि का क्रम न हो सकता था । विनोदत वर्षाकाल में कालापनयन के लिए ऐसे खेलों की आयोजना की जाती होगी । शतरंज के खेल के विषय में कविमान जान और चन्द्रशेखर ने भी उल्लेख किया है । कविमान ने अकस्मात् आनन्दमणिस भयवस्तु मुगल सैनिकों को अपनी शतरंज और सार पामों के मुहरों को छोड़कर पलायन करते प्रदर्शित किया है ।<sup>२</sup> जान ने पत्तन के फरजी बन जाने पर उसके शीश के बल चलने<sup>३</sup> (पदल की चान आगे की ओर एक घर होती है जबकि फरजी अपने चारों ओर के घरों में टेढ़ी सीधी, चाह जिस ओर को मार करता है) का एक उल्लेख करके तथा चन्द्रशेखर ने बान्शाह की अवध्यता को शतरंज के बादशाह की अवध्यता से उपमित करके,<sup>४</sup> इस खेल के प्रचलन पर प्रकाश डाला है ।

### बालिकाओं और स्त्रियों के क्रीडा-विनोद

#### (१) पुत्तलिका या गुड्डियों से खेलना —

पद्मिनीराजरासो में कुछ सयानी हुई गयोगिता अपनी सभी से कहती है कि न जाने क्या अब मुझे पुत्तलिकाओं का विवाह रचात समय हृदय में एक बसमसाहट, और उनको एक गाय पर गायन कराते समय लज्जानुभव होने लगा है ।<sup>१</sup> इससे स्पष्ट है कि वह अल्प वय से ही पुत्तलिकाओं से खेला करती थी । आल्ह्वड में हिरिया मालिन मुनमा का बचपन में गुड्डियों के साथ साय खेलने वाली सभी बताकर,<sup>२</sup> लडकियों के इस खेल का प्रकाशन करती है ।

#### (२) पतंग उड़ाना -

कविचन्द ने राजकुमारी के अट्टालिका पर से पतंग उड़ाने का उपमान रूप में प्रयोग करके,<sup>३</sup> विनोदत राजकुमारिया की पतंग उड़ाने में अभिन्वि प्रशंसा की है । राजस्थानी रत्नवाम का वर्णन करते हुए राहुन साहृत्यायन ने भी इस अत पुरिकाओं

१ पतरंज राज वर खेल मडि । सत्रीन भण्य आरम्भ घडि ।' — प० रा०, का० १४६६।५६

२ शतरंज पासा सारि, भरप, मु खेलहि डारि ।' रा० त्रि० १२।१०

३ पाइक त फरजी मय चन सीस के जोर । क्या० रा०, छ० ५५

४ 'साह न मारत वाट को, जो खेलत शतरंज । 'हं हं', छ० १६१

५ से ७ दे० प्रम० 'पृ० रा०', मौ० ३।२५३।५, प्रा० २३।२३, पृ० रा० का० ३५२।११३



के मनोविनोद का प्रमुख माध्यम था। यथा व्यंग्यमायिका शब्दादि विनोद है कि वहाँ उसने व्यंग्यमायिका के साथ व्यंग्यमायिका का प्रयोग भी किया है।

### (३) गुप्त-मायाविजय का पाठ

मायाविजय का मायाविजय का प्रयोग भी किया है। यथा व्यंग्यमायिका शब्दादि विनोद है कि वहाँ उसने व्यंग्यमायिका के साथ व्यंग्यमायिका का प्रयोग भी किया है। यथा व्यंग्यमायिका शब्दादि विनोद है कि वहाँ उसने व्यंग्यमायिका के साथ व्यंग्यमायिका का प्रयोग भी किया है।

वर्षोंप्रायः समाप्त होने के कारण ही यद्यपि यथा व्यंग्यमायिका शब्दादि विनोद है कि वहाँ उसने व्यंग्यमायिका के साथ व्यंग्यमायिका का प्रयोग भी किया है। यथा व्यंग्यमायिका शब्दादि विनोद है कि वहाँ उसने व्यंग्यमायिका के साथ व्यंग्यमायिका का प्रयोग भी किया है। यथा व्यंग्यमायिका शब्दादि विनोद है कि वहाँ उसने व्यंग्यमायिका के साथ व्यंग्यमायिका का प्रयोग भी किया है।

### (४) अन्य पालतू पशु पक्षियों से मनाविनाद करना —

वनितावण यथन नामक प्रकरण में 'वैश्व' ने महाराज श्रीरसिहदेव के रनिवास का वनितावण को स्वयं-रत्नला से गुप्त सारिका मयूर श्रीरत्नला को चुगा दत्त तथा दुर्वाण्ड को चरने में प्रानावानी करते हुए मृग गावका से प्रपना मनोविनोद करते चित्रित किया है। कुछ वनितावण गम्भीर प्रथमवी सूक्तिमा के पठन तथा शुद्ध

१ दे० राजस्थानी रनिवास पृ० ५५  
 २ से० दे० प्रम० पृ० रा० सो० १३५७।६ १० वही ३, ३६२।२५ पृ० रा० का० १४७।६०, पृ० रा० का० १६६३।१४, वही १६८२।१७१, दे० पृ० रा० का० १६८३।१७८ से १६८४।१८६, 'वी० च०' २०।२४, मा०, २६१।४५

और सारिकाया व पाठन में भी अनुरक्त दिखाई गई हैं।<sup>१</sup>

(५) सता-वक्षा का सिचन और पुष्प चयन —

सता वक्षा व सिचन तथा पुष्प चयन द्वारा मन प्रसन्न करने की विधा का भी वेगवदास ने, महाराज वीरसिंहदेव की वनिताया क सदम में प्रकाश डाला है।<sup>१</sup>

(६) उपवन और शीडा पवतो पर परिभ्रमण —

भावासी की बनाघट का चित्रण करते हुए उनके समीप व उपवना में शृंगार सकत माधवी मत्प, धारा गह और शीडा पवन आदि बनाने का उद्देश्य किया जा चुका है। इनका मनोविनोद उपयोग किया जाता था। कवि केशव ने महाराज वीरसिंहदेव की वनिताया उपवन और शीडा पवत पर परिभ्रमण करते चित्रित की हैं।<sup>२</sup>

(७) जल शीडा —

पुष्पों के सट्टस स्त्रिया व लिए भी जल शीडा स्त्रियों के मनोरंजन का सुखद साधन थी। केशव ने शीडापवत पर परिभ्रमण से थकित महाराज वीरसिंहदेव की वनिताया तथा जोधराज ने शाह अलाउद्दीन की आसनाव गई वेगमा और अक्सराया की उन शीडा के मनोरम चित्र दिए हैं।

(८) सार-पासे या चौपड —

विविध लाक कथाया में राजकुमारियों के सार पासे खेलने में दक्ष होने का तथ्य हम प्रायः सुनते ही रहते हैं। वीर काव्य में भी इस खेल को पुरुषों की अथवा स्त्रियों द्वारा खेलने के अधिन निर्देश मिलते हैं। कवि केशव ने महाराज वीरसिंहदेव की वनिताया को चौपड खेलत प्रदर्शित किया है।<sup>३</sup> माहल्लखण्ड में चंद्रावति पुलवा मुभिया बन्नी तथा लाधन और उसारी पत्नी का चौपड बिछाकर सार पासे खेलत चित्रित किया गया है। आल्हवार ने तीना मदमों में दो खिलाड़ी होने का उल्लेख किया है, जबकि आजकल इसमें प्रायः चार खिलाड़ी भाग लेते हैं।

(९) शतरंज —

धनापत्ति होने के साथ साथ शतरंज के लिए लीज प्रवृत्ति की भी आवश्यकता

१ एक चतुर चुगावति मोर। लीनी सारो मुक चित चोर।

धमन जलज वर कमलति निय। इस चुगावति चुचनि छियै।

जव अतुर कोमन वर धर। मृगनि चरावति प नहि चर।

सूछम यानी लोरष अथ। पत्ति पदावति मुक्न समय। — वी० च० २२।६२-४४

०३ द० वही २२।४२, वही, ०५।१५

४ स १० द० क्रम० वी० च० २।१२०, 'हा० रा० २१०, वही, १२० वी० च०'

२०।१६ 'आ० २४३।१६ १८, 'मा०' ४६६।१२ वही, ३५४, २४ २५

पड़ती है। अतः यह खेल गृहस्थों से सबर्था मुक्त रहने वाली रानिया आदि के लिए उपयुक्त रहा होगा। कवि केशव न इसको महाराज वीरसिंहदत्त की अतः पुरिकाप्ता के मनोरंजन का माध्यम प्रदर्शित किया है।<sup>१</sup>

### (१०) मृगया —

असूयम्पश्या जसी बुलीनता की भावनाप्रा तथा पर्दा प्रथा व दब होत जाने व कारण मृगया मध्यकाल में स्त्रियों के मनोरंजन का उपयुक्त माध्यम नहीं रह गई थी। यही कारण है कि सम्राट चंद्रगुप्त व समकालीन मैगस्थनीज ने जहाँ नरेशों के साथ अनेक शस्त्रसज्जित स्त्रियों के भी रथा, हाथिया और अश्वों पर आरूढ़ होकर शिकार खेलने जाने का चित्रण किया है।<sup>२</sup> वहाँ पश्वीराजरासो में हम सयोगिता आदि रानियों को महाराज पश्वीराज से यह निवेदन करते पाते हैं — वृषया आप हम यह देखने का अवसर प्रदान कीजिए कि शर और हाथिया का शिकार कस किया जाता है तथा वाराह आदि जन्तु जाला में कस फसाय जाते हैं।<sup>३</sup> जब दिल्लीश्वर द्वारा शिकार के समय होने वाली गौठा का व्यवहार बहान करने की शत को<sup>४</sup> सयोगिता स्वीकार कर लती है<sup>५</sup> तो रानियाँ तदर्थ पानीपत के मैदान में पहुँचा दी जाती हैं।<sup>६</sup> इससे आगे के पक्षों में उनके शिकार खेलने या देखने का कोई निर्देश नहीं मिला किन्तु जसा कि उनका आग्रह था रानिया ने उसका प्रेषण अवश्य किया होगा।

महाराज पश्वीराज की रानिया ने तो शिकार देखने मात्र की इच्छा व्यक्त की थी, जबकि शाह अलाउद्दीन की बेगम शिकार खेलने जाते चित्रित की गई हैं। कवि चंद्रशेखर ने वे ऐसे बानस<sup>७</sup> और ग्वात न एस खाम-बाग<sup>८</sup> में मृगया खेलते प्रदर्शित की है, जिनके चारों ओर कनातें खड़ी कर ली गई थी। कनाता का प्रयाग पर्व के

१ बहु चौपर खेलें बनिवाल। बहु सतरज मतिरज रसाल। —वी० च० २०।१६

२ 'A third is to go to the chase for which he departs in Bacchanalian fashion Crowds of women surround him and out side of this circle spearmen are ranged Of the women some are in chariots some on horses and some even on elephants and they are equipped of with weapons of every kind as they were going on a campaign (military expedition)

India as seen by Megasthenese and arrian P 71

३ चरन लगि युग जोरि करि। वहाँ सुनहु महि इ द।

हमहि शिकार लियाइये। मत्त मृगानि मयत्त।

—प० रा० वा० १६८७।४

४ से ८ द० वम० 'प० रा०' वा० १६८७।६ वही, १६८८।७, वही, १६९३।४४

'ह० ह०, च० १५ ह० ह०', ग्वा०, ३

लिए किया जाना होगा। इसी प्रकार मुगल बादशाह या तो बेगमों के शिकार खेलने के लिए पगु-पशियों से युक्त सुरक्षित-बाग रखते हांग अथवा कवि ग्वाल का तत्सम्बन्धी उल्लेख उस परंपरा का अनुकरण है जिसमें आचार्य चाणक्य ने नरेशा को दण्ड-नख विहीन करके छोड़ गये पशुवाले सुरक्षित अरण्य में शिकार खेलने का परामर्श दिया था।<sup>१</sup> कवि चन्द्रशेखर न वगम मरदान-वेग में आखेटाथ जात दिमाई हैं,<sup>२</sup> जबकि ग्वाल और जोधराज न जनान-वेश का ही उल्लेख किया है जो मुगलों की कट्टर पदा प्रथा के अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। इस सदर्भ में यह निवेदन अप्रासंगिक न होगा कि मुगल वगमा द्वारा शिकार खेलने व तथ्य की पुष्टि बेगम नूरजहाँ के वृत्तान्त से भी होती है जिसने डा० ईश्वरीप्रसाद के अनुसार सिंहा का कई बार शिकार किया था।<sup>३</sup>

निष्कर्ष —

वज्रभाषा के वीरकाय में खान-मान और वस्त्रामरणादि पर प्रकाश डालने वाले निर्देश यद्यपि समाज के उच्चवर्ग से अधिक सम्बद्ध हैं तथापि यह अनुमान करना अनुपयुक्त नहीं है कि समाज का मध्य वर्ग भी अनुकरण के रूप में इन उपादानों का प्रयोग करता होगा तथा किन्हीं अशांति व जन सामाय में भी प्रचलित रहे होंगे।

जन्म भोजों के अवसर पर सदथा नूतन भोज्य पदार्थ खिलाने की और बड़ी जागरूक थी। वसन मैदा और गन्धक आदि भाषारण सामग्री के ही मिश्रण से ऐसे भाज्य पदार्थ बनाने की प्रथा की जाती थी जिनके खाने वाले नाम तक न जान सकें। मैदा और वसन में कुछ अथ पदार्थों के योग में पुष्प और फना की आकृति वाली एसी वस्तुएँ प्रस्तुत की जाती थी, जिनका पहचानना मानव चक्षुषों के लिए दुस्साध्य हो जाता था। इसी प्रकार अपनी कड़वाहट के लिए प्रसिद्ध नीम की कोपलों का साग बनाने में भी उनकी नित नूतन व्यंजना के प्रति अभिरुचि प्रतिबिम्बित हो रही है।

भाजों के अवसर पर तले हुए पत्रवान मिष्ठान, खीर और चरबन के साथ माथ कच्ची रसाई में परिगणित किए जाने वाले अग्रा दाल और मात भी परोसने का प्रचलन था। भोजनान्त में पाचन शक्ति-वर्धक पछावरि का अनुपान किया जाता था जिसमें खट्टे और चरबपरे पेयों की प्रधानता रहती थी। मुत्र स्वास का सुवासित रहने के लिए भोजन के उपरान्त ताम्बूल भी अनिवार्यतः ग्रहण किए जाते थे। पथक चौको में बैठकर, भोजन करने की प्रथा के कारण भोजस्थानी चूने आदि की सफेद लाइनें डालकर पृथक्-

१ दे० 'अथंगारत्र' पृ० ८१

२ 'मरदानी सब वगम, आप भूर सुलितान।

हरपि सुरगनि प चढ, गहि कर बान वमान।

३ दे० 'मध्य० मा० का सं० इति०', पृ० ३६५

पथक चौका में विभक्त कर ली जाती थी। किसी पदार्थ के फलस्वरूप भोजन में दिनार्द्र (विष का मिश्रण) न कर दिया गया हो इस दृष्टि से भाजन-स्थान पर कुछ पशु पक्षी रखे जाते थे जिनकी प्रतिप्रिया विशेष से रहस्योद्घाटन हो जाता था।

जन-सामाज्य के दैनिक भोजन में भात और रावड़ी का प्राधान्य रहता था। ब्राह्मण वंश और भाटा के लिए तो मासाहार वज्य था किंतु क्षत्रिय और मुसलमानों का भोजन में मास प्रायः अनिवायत सम्मिलित रहता था।

मादक द्रव्यों में मसुरा का अनुपान ब्राह्मणों के लिए निषिद्ध होना के साथ साथ उसका क्षत्रिया में भी बहुत कम प्रयोग होता था। मुसलमानों और निम्न हिंदू जातियों में मसुरापान का व्यसन अधिक व्याप्त था जबकि राजपूतों में अफीम के सेवन का प्रचलन अधिक था। भाग का प्रयोग कदाचित् उच्च वर्णों में भी हेय नहीं समझा जाता था। कुछ लोग चरस और गाजे का भी प्रयोग करते थे।

नर और नारियाँ में आमरण प्रियता पराकाष्ठा को पहुँची हुई थी। आभूषणों के अभाव में स्त्री सौन्दर्य को पूर्ण ही नहीं सम्झा जाता था। स्त्रियाँ अपने शींग मस्तक, कान नासिका ग्रीवा बाहु कलाई हाथ की उंगलियाँ कटि और पैरों में इतनी अधिक सस्या में आभूषण पहनती थीं कि उनका कोमलांग आभूषण के भार से दब रहते थे और उनमें से दो एक के गिर जाना तो उन्हें पता तक न चल पाता था। पुष्प भी आभूषणों के प्रयोग में स्त्रियाँ सँधी नहीं थीं और कानों ग्रीवा कलाई तथा पैरों में आभूषण पहने रहते थे। वीरकाव्य में उल्लिखित स्त्रियों के अति अधिक आभूषणों में से तो कुछ का प्रयोग आजकल भी देखा जाता है जबकि पुरुषों में उनका प्रायः सबका अग्रचयन हो गया है। सधवाँ स्त्रियाँ अपनी पूर्ण रूप सज्जा के लिए सानह प्रकार के शृंगार करती थीं। स्नान से पूर्व उबटन कराना स्नानोपरांत शरीर पर गन्धद्रव्यों का अवलपन केशों का सुवासित धूम्र में गुप्ताना बगो बंधन नयना में काजल अंजना तथा ताम्बूल सवन आदि शृंगार के इन अंगों का चरम अभिप्रेत सौन्दर्य में अधिनाशिर नियंत्रण माना होता था।

वीरकाव्य के अभाव में सम्बन्धी विवरण प्रायः राजमहल से सम्बद्ध हैं। ये महल सतम्ब बनाए जाते थे जिन पर गगन चुम्बी ध्वजाएँ फहरती रहती थीं। उनसे द्वारा पर मुस्ता और विन्दुमा की भाँवरें अथवा जगन्नाथी वस्त्रों के परदे लटकते रहते थे। इनकी चारदीवारी के अंतर्गत कृत्रिम गल गिगर घारा-गह यत्र व्यजन जन-यत्र, शृंगार सक्त माधवी मंडप आदि विनाम गस्याना का निर्माण किया जाता था। दुवारी तिवारी चौकरी दरौची मिन्नी और वारहूरी आदि उस काल की विविष्ट वास्तु कला के अंग नमूने थे जिनका प्राञ्जल अग्रचयन होता जा रहा है।

मानाच्यकारान पटनाव के तयार करने में अंग उत्कृष्ट कालिका वस्त्रों का प्रयोग किया जाता था जिसके तारों का प्रमाण में भी कठिनाई मन्दिर्माई रहते थे। रत्नमा उर्मी मूर्ती तथा जरा और रत्न के तारा से युक्त वस्त्रों की वीरकाव्य में तदनुगण गाठ हिस्से मन्दिर्माई गर्भ हैं। निचय ही अंग वस्त्रों का मरीन्ना जन-सामाज्य की सामर्थ्य

से परे रहा हागा और व वीरवाव्य मे उरिलखित दुकरी और खादी आदि वा ही प्रयोग करते हाग ।

पुण्या के पहनाव म सिर पर पगडी बाघने वा बहु प्रचलन था । ऊर्वाग के वस्त्रा म नीमा, नीमास्तीन, दगला जामा तथा कुरता पहनन, एव अधोवस्त्र के रूप मे मुख्यत धोतिया बाघने और पाजामा पहना वा उल्लष मिलता है । कटि-बन्ध भी मुख्यत सनिक-वेश वा एक आवश्यक अग था । परा में पनही वा जूते पहने जाते थ ।

हिन्दू स्त्रिया ऊर्वाग मे कचुकी अँगिया वा चोली पहनती थी जबकि मुस्लिम स्त्रिया तनिया तिलक और कान्ठीरी वा प्रयोग करती थी । हिन्दू स्त्रिया मे अधोवस्त्र के रूप म लहंगा वा 'घाघरा पहाने वा बहु प्रचलन था जबकि मुस्लिम स्त्रिया 'सुथनी' और लवा पहना करती थी । हिन्दू स्त्रियो मे साडिया' बाघने वा भी प्रचलन था । इन वस्त्रा व ऊपर व चुनरी चादर वा दुपट्टा ओती थी जबकि मुस्लिम स्त्रिया इनके स्थान पर कुरता ओढा करती थी ।

अथ वस्त्रा म तौलिए वा स्थानाप न अँगोछा मिलता है, जिसका राज परिवारो में भी प्रयोग किए जान के निर्देश मिलते हैं । छनरी वा काय अमीष्ट व्यक्ति के ऊपर चादर तानकर चलने स लिया जाता था । शया पर त्रिछाने के लिए सेमर व पुण्या से भरे 'गद्दे तथा 'तोगक' और पलग पाशा वा प्रयोग होता था । सिर के नीचे तो गेंडुव लगाये ही जात व कपोला व नीचे 'गलसुइया वा भी प्रयोग होता था । आढने के उपादानो म दुलाई लो कवल आदि का आश्रय लिया जाता था । सारत आलोच्य-कालीन पहनावे के अनेक वस्त्रा वा आजकल वा तो लोप हा गया है अथवा उह नवीन अमिधाना से अमिहित किया जाने लगा है । पुण्या के पहनाव के नीमा जामा आदि उपकरण जो मुगल-दरवारीय सभ्यता व अभिन्न अग थे आज विलुप्त हो गये हैं । स्त्रियो के पहनावे म भी पुण्या नी नाति आज पर्याप्त अ तर आ गया है ।

आवागमन के साधना म से वपभन्थ अन्वरथ रजरथ बहली और फिरक आदि पशुआ द्वारा खीचे जाने वाले साधन थे । बहाग द्वारा उठाकर ले जाय जाने वाले साधना म डोना पालनी ननकी चकनेन सुखपाल और सुखासन नामक उपकरण वा प्रयाग किया जाता था । आजकल इनम से कुछ व दशन रामलीला के अवसर पर विविध अवतार पुरुष और नरेगाि की सवारिया म ही हा पाले हैं ।

मनोरजन की अनक विधियाँ प्रचलित थी । पशुआ म हागिया महिषा, मया, वृपभा और वकरा तथा पशिया म लवा और तातरा की गडाइयो वा अवेशण करके मन प्रसादन किया जाता था । बश्या नत्य नटा के खेल तथा ऐन्द्रजालिक कुर्या वा अवेशण भी इसी कोटि की मनोरजन विधियाँ थी । अनेक प्रकार की श्रीहापरक प्रतियोगिताआ की आयोजना से मनोरजन के साथ साथ शारीरिक बन-बधन को भी प्रोत्साहन दिया जाता था । इनम लोह और लक स्तम्भा को साग अथवा तीरा से भेदने, नाल उठाने मुगदर घुमाने हदक वा लक्ष्य-वेधन की प्रतियोगिताएँ परिगणित की जा

सकती है। 'हृदहृद' गवरी, मान-मुद्र, शीघान-भवनता, जम शीश धीर मृगता भी एसी ही मत्तोरजा विधियाँ भी त्रिम वर्गीय सामाजिक व्यवस्था में जाया था। मगया का प्रस्ताव तो दूषण की भीषा तक परिष्कार था। मृगयाय जान था- उर्य धीर बाणार। न शिवाही न म तुरी मुरगी मगर धूनी दूरी धीर मात्र धानि शिवाही पनु सध धीर धिान धानि का मत्र-व-र म म म करे था। मया कुरगाि का ना म रिभातर उरयो पररणा। म मयापय। म मय पारधी मभिमिन रर म। विमिन प्ररार क पनु-निये का पाया। मया धानि मुरता धान्य कभा धीर पारर मन्ता पुरवा की धाय मत्तोरजा विधियाँ भी थीं।

यह पतले उदाहर, गिान न गितार मेतरर तथा पारयाय म मत्तोरजन करत मिलत है जबकि बाविहार्य पुतसिरा या मुहिया क मन्ता म धमिन्वि रणी था। शिवाय क मनोविान। म मुत मारिररानि क पाठा पुण तथा जम शीश शीश गन्ता पर परिभमण शिवाही सार पाम या शीश तथा पारर मन्ता का प्रान्त था। य मृगया क धव ण क माय माय य म म म म म भी गितार मन्ता जाया करती थी।

मारत धाला-यवाली म सामाजिक क गान पाय य म भूया धामरणा के प्रयोग धावासा की बनाय धावागमन क मापन तथा मत्तोरजन की विधियाँ क विवरण म स्पष्ट हाना है कि यामात काय म उनम म धान उपरणा का प्रयोग ममाप्त हो गया है। उरता स्याय ययवि तमी उपरणा न न विधा है तथाकि पररणा की धमिन् छाव प्राय दू मभी धमा पर रगी जा मन्ती है।

## पारिवारिक जीवन

भारत की समुक्त परिवार प्रणाली पश्चिमी देशों की तुलना में अपनी अनूठी विशेषताओं के लिए विख्यात रही है। यहाँ के पारिवारिक सम्बन्धों का ताना-बाना अति मजबूत रहा है और प्रत्येक परिवार के सदस्य एवं सम्बन्धियों की मर्यादा इतनी अधिक होती है कि उन्हें सुविधा देना उनके हिन्दू धर्म के अंग्रेजी में पयाय ही नहीं मिलते। विविध कारणों से भारत की समुक्त-कुटुम्ब प्रणाली में आज विघटन के कृमि कीट लग चुके हैं, अतः उसकी अतीतकालीन मर्यादाओं पर दृष्टिपात करना और भी अधिक उपदेय रहूँगा। ब्रह्मसंहिता ने बोरकाव्य में उपलब्ध हुए पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित निर्देश, विवेचन सौक्य की दृष्टि से चार उपयोगों में विभक्त किए गए हैं—

- (क) परिवार के सदस्य और सम्बन्धियों का पारस्परिक सम्बन्ध,
- (ख) पारिवारिक उत्सव या सरकार,
- (ग) विविध त्यौहार, तथा
- (घ) अभिवादन और आशीर्वाद एवं अतिथि सत्कार की रीतियाँ।

(क) परिवार के सदस्य और सम्बन्धियों का पारस्परिक सम्बन्ध —

आलोच्यकाल में समुक्त-कुटुम्ब प्रणाली अपने पारस्परिक रूप में ही विद्यमान थी। परिवार के विभिन्न सदस्य और सम्बन्धियों की पथक पथक मर्यादाएँ और कर्तव्य निर्धारित थे जिनसे पारिवारिक जीवन में सुख सौहार्द और सौजन्य बना रहता था। गृहस्वामी का परिवार की धुरी मान लेने पर उसके जिन सम्बन्धियों और उनसे सम्बद्ध धारणाओं का बीर बाण्य में प्रकाशन हुआ है। वे अग्रलिखित हैं—

बाबा —

पितामह को बाबा या दादा कहा जाता था। जब पचाकर ने बाबा की पिता



य भी अधिकांश प्रमाणों की है । तथापि भी पौरुष की शक्ति का मान का विचार करता है। यही कारण है कि भारत में मातापिता की शक्ति का मान का उच्च स्तर पर है। यही कारण है कि भारत में मातापिता की शक्ति का मान का उच्च स्तर पर है। यही कारण है कि भारत में मातापिता की शक्ति का मान का उच्च स्तर पर है।

### पिता —

पिता की शक्ति की शक्ति का मान का उच्च स्तर पर है। यही कारण है कि भारत में मातापिता की शक्ति का मान का उच्च स्तर पर है। यही कारण है कि भारत में मातापिता की शक्ति का मान का उच्च स्तर पर है। यही कारण है कि भारत में मातापिता की शक्ति का मान का उच्च स्तर पर है।

पुत्रीराज्यमो म माता एता है कि पिता और माता की शक्ति परस्पर-निर्भर है। यही कारण है कि भारत में मातापिता की शक्ति का मान का उच्च स्तर पर है। यही कारण है कि भारत में मातापिता की शक्ति का मान का उच्च स्तर पर है। यही कारण है कि भारत में मातापिता की शक्ति का मान का उच्च स्तर पर है। यही कारण है कि भारत में मातापिता की शक्ति का मान का उच्च स्तर पर है।

### माता —

अधिकांश की दृष्टि से पिता की तुलना में, माता का स्थान योग्य या किन्तु पूजनीयता की दृष्टि से उसका स्थान पिता से अधिक समझा जाता था। पश्चीराज्य में उसे तीर्थ और पवित्र नदियाँ से भी अधिकांश महत्त्वपूर्ण माना गया है तथा उस

१ २ द० प्र० प० प्र० प्रकी०, ८ 'शु० च० ७।२।१३

३ छत्री बरस बीस तें आय । जियें तीम रों ज बडमाग । — ८० ह०' व० २७६

४ 'अहो धाति माना पिता मूत्र जान । पछ तीरथ भाट सटठ प्रमान ।

वहै मय मोदावरी घेह माहै जिन मात सेव पिता सेवताहै ।

धरा धूम राप पिता बाच मानै । ग्रहै राज भार मुर पथय मान ।

— ५० रा० वा० २१६६।५५५५

५ स० ७ दे० प्र० ५० रा०' वा० ३८०।५६ भू० प्र०', स्फु० २।६५६।२३५ व

शु० च० २।१।८

पिता से पूव स्मरण किया गया है। रासो में अपत्र इम धारणा का प्रकटन किया गया है कि सतति को बेचने के लिए प्रस्तुत पिता का साथ छोड़ा जा सकता है किंतु घुट्टी में विष मिश्रित करके देने वाली माता का भी साथ नहीं छोटना चाहिए।<sup>१</sup> केगवदाम जी ने भी पिता की अपथा माना का गौरवास्पद पद प्रदान करते हुए, माता के लिए पिता का त्याग करने का मत व्यक्त किया है।<sup>२</sup>

महत्त्वपूर्ण कार्यों से पूव यदि पिता की आज्ञा लेना आवश्यक समझा जाता था, तो माता से आशीर्वाद के रूप में उसकी मौन स्वीकृति भी अनिवार्य मानी जाती थी।

पुत्र के वीरत्व अथवा उमरी कायरता के लिए उसके पिता की अपेक्षा माता को अधिक उत्तरदायी समझा जाता था। वीर पुष्पा की जननिया धय कही जाती थी,<sup>३</sup> और उन्हें सिंहनी की पदवी प्रदान करते हुए, सिंह प्रसविनी की सम्मान्य सजा दी जाती थी<sup>४</sup> जबकि पुत्र के कायर निकलने पर उनके दूध को दूषित समझा जाता था।<sup>५</sup> यही कारण है कि वे पुत्रा की कल्याण कामना और उनके जन्म हेतु नाना व्रत अनुष्ठानों का आश्रय लेते हुए भी कायर अथवा स्वामि रक्षण में आज्ञानानी करने वाले पुत्रों को जन्म देने की अपेक्षा बर्खास्त रह जाना ही बरेष्य समझती थी।<sup>६</sup> अपने पुत्रों का युद्धाय प्रेषित कृत समय भी उनके आशीर्वादमय आज्ञास्वी उपदेश का यही सार होता था कि चाहे बानी-बोटी कट जाय किंतु नुम युद्धम्यन सपनायन करना ता दूर रहा पर तक पीछे न हटाया।<sup>७</sup> पुत्र भी हम माता को यह वचन देकर जात मिलते हैं कि किसी भी दशा में वे ऐसा कोई अथम आचरण नहीं करेंगे जिससे उनकी कुक्षि और दूध को लज्जित

१ विष्णु घुट्टी माता लिये। बेचि पिता ल दाम।

माता सरा न मुक्किय। पिता सरन मन मानि ॥

—प० रा०, का० २०६४।६०६

२ 'मातु हेतु पितु लजिय, पिता के हेतु सहोदर।

—२० वा० छ० ५३

३ से ५ दे० क्रम० गो० क०' छ० १३८ प० रा० का० २१६६।३७६

—प० रा० मा० १।३३६।२१

६ (क) दवल द कहि वांभन रषिय। अत्रिय धम कम गय मषिय।

स्वामि सारर देह न कटिय। हा करतार रूप नहि फटिय ॥

पर० रा० ११।१३१

(ख) पातिसाह श्रवतन सुनी जषी मात निधान।

में ग्रम्मह भुभयो धरयो मुठिन पहीपान।

—प० रा० का० १३५४।६६

७ १० जम० 'ह० ह०' चद्र० २८१-८२ व पर० रा० ५।१ व 'ह० ह०' खाल० छ० १४८,

हाना पड़े।<sup>१</sup>

सास —

हिंदी-बीराव्य म सामाजिक जीवन की प्रमिथ्यक्ति

पुत्र की वधुमा द्वारा पति की माता को सास कहा जाता था और उनके लिए उसकी आज्ञा का पालन करना एक आवश्यक धर्म का रूप में समझा जाता था। उम्मीद आज्ञा की अवहेलना करने वाली वधुमा पर दही प्रापत्तियां धान की धारणा प्रचलित थी। महाराज पृथ्वीराज को चशु हीन होने का पाप मिलने पर सयोगिता मनस्वाप करती हुई उन पाप टारणा के विषय में विचार करती है जिनका कारण उसकी पति से विद्वेष होने का दुःख भोगना पड़ेगा। इन कारणों में से वह एक कारण यह भी सोचती है कि कहीं असावधानी में मुझसे सास की किसी आज्ञा का उल्लंघन तो नहीं हो गया था।<sup>२</sup>

बाका या चाचा और चाची —

पिता के छोटे भाई के लिए पृथ्वीराजरासो में बाका तथा आल्हवण्ड में चाचा का व्यवहृत रूप है जबकि उसकी पत्नी को आल्हवण्ड में चाची कहा गया है। पिता की भाति चाचा की आज्ञा का पालन भी आवश्यक समझा जाता था। महाराज पृथ्वीराज स्व-बाका कह कर इच्छानुसार गाह गोरी को वधन मुक्त कर देते हैं जबकि उनके अर्थ सभी सामंत इस विषय में एकमत थे कि शाह को मृत्यु दण्ड दिया जाना चाहिए।<sup>३</sup>

देवर-भावज —

पति के अनुज को देवर<sup>४</sup> तथा अग्रज पत्नी को भावज<sup>५</sup> कहा जाता था। आल्हवण्ड में दिए गए ऊदल और मछला सम्बन्धी विवरण से आलोच्यकाल में भी देवर और भाभी के सम्बन्ध लक्ष्मण और सीता के सम्बन्ध की भांति उन्नत सिद्ध होते हैं। ऊदल मछला के चरणस्पर्श करता है<sup>६</sup> तथा वह अपने अग्रज आल्हा से छिपाये गए तथा को भी मछला के सम्मुख प्रकट कर देता है<sup>७</sup> जिससे स्पष्ट होता है कि अनुजों पर बड़े भाई की अपेक्षा उनकी पत्नी का महत्त्व और भी अधिक होता था। मछला द्वारा ऊदल को स्वपुत्र से वर्णन करने में भी भावजा के देवरो के प्रति मातृवत् स्नेह का प्रकटन हुआ है।

१ ह० ह० चद्र० छ० २८७ गो० क० छ० ११०  
२ क० योति विप्र परहरयो। करयो नन वन सामु कौ।

— प० रा० का० २०१५।२०२

३ दे० प० रा० का० ६५४।४२ ४४

४ से ७ दे० 'आ० २५५।१७ वही ३१५।१८ वही ४४५।१० ११ २५५।१६,

८ दे० २३२

### अग्रज और अनुज —

वेशवदामजी ने सहोदर की महत्ता पुत्र स वडकर समभन की जनधारणा का प्रकाशन किया है।<sup>१</sup> परमालरामा और आल्लखण्ड म उड भाई का पिता-तुल्य मानन तथा उसकी आना का पिताना तुल्य पालन करने की प्रथा दिखाई गई है।<sup>२</sup> कीर्त्तिय म महाराज वीरसिंहदेव ज्येष्ठ भ्राता की सवा करना अपना कतव्य बताते हैं।<sup>३</sup> महा० सोम-श्वर के निघन पर उनके अनुज क ह को मनस्ताप होता है कि उनसे पूव मरे प्राण पखर क्या नहीं उड गथ हैं।<sup>४</sup> महाराज वीरसिंह देव अपन राज्य क पट्टे परवानों को स्व अग्रज को प्रस्तुत करत हैं।<sup>५</sup> इनसे अनुजा की स्व अग्रजा के प्रति आदरास्पद भावनाओं और झूट स्नेह का परिचय मिलता है। अग्रज कम से कम एन सहोदर की कामना करता था जिसस वह आपद काल म उसका माय द सके।<sup>६</sup>

### जेठ और अनुज पत्नी —

जेठ की कानि करना आवश्यक समझा जाता था। सयोगिता अपने पति को शाप मिलने पर यह भी विचारती ह कि कहीं इसके मूल म जेठ की कानि न करने या उनके प्रश्न का प्रत्युत्तर न देने का पाप का कुफल तो नहीं है।<sup>७</sup>

### पत्नी —

पथ्वीराजरासो म पत्नी महग्य जीवन की मूल कही गई है।<sup>८</sup> उनम अयत्र इम प्रश्न के उत्तर म 'परिवार के सभी सदस्या म सच्चा प्रेम किसका होना है? यह अनिमित्त व्यक्त किया गया है कि पति के विलास रस को तप्त करने वाली, तथा पति मरण पर स्व-जीवन का मोह त्याग कर सहगमन करने वाली पत्नी के प्रेम का ही सच्चा प्रेम मानना चाहिए।<sup>९</sup> आल्लखण्ड म पुत्र या माता पिता का अधिकार तभी

१ मुनिह महोदर हेत सखा सुन-हन तजहवर। —२० वा०, छ० १३

२ (क) जठा घष आह मम होइय तात तुल्य जाना जग सोय्य। —पर० रा० ६।३६

(ख) मलिन्य समुभावो आल्ला को तुम मुनि लेउ हमारो बात।

बाप बराबर तुम लागत ही, जेठ भाई लगी हमार। —आ० ३०२।१५ १६

३ से ६ द० क्रम० वी० च० ६।५५ 'पृ० रा०' भो० ३।१०।५८ 'वी० च०' ६।५६ 'आ० ५६५।११ १२

७ कीनी न कानि क जेठ की। क बोलत जवाव न दयो।

बुल्लयी सराप रिपि कत की। सती हारु के हर लयो।' —पृ० रा०, का० २०।५। २०२

८ त्रिप व्याह राह च्यती सुचित घर तरणी तरुणी ति घर। —प० रा० मा० ४। ७६७।४८३

९ पूरन सभल विलास रस। सरस पुत्र फन दान।

भत होइ सहगामिनी। नेह नारि का मानि। वही, २०१२।१७६

तक दिखाया गया है, जब तक उसका विवाह नहीं होता। विवाह के पश्चात् उग पर पत्नी का स्वामित्व बताया गया है।<sup>१</sup> रासो में अथ स्थल पर कहा गया है कि मान युद्ध क्षेत्र को छोड़कर पत्नी का साहचर्य जीवन के समस्त प्रसंगों में काम्य होता है।<sup>२</sup> महाराज सायबखर चंद्रग्रहण के समय अपनी तोमरवशी रानी के साथ ग्रथिग्रहण करके दान देते हैं।<sup>३</sup> इसी भांति महाराज पृथ्वीराज के राज्याभिषेक के अवसर पर उनकी पटरानी इच्छिनी को भी उनके साथ ग्रथिग्रहण करके सिंहासनासीन करना<sup>४</sup> पति के धार्मिक अनुष्ठानों में पत्नी के अत्यंत महत्त्व के अभिसूचक हैं।

पत्नी अपने पति के माता पिता और ज्येष्ठ भ्रातादि की मर्यादा का निर्वाह करती थी जबकि उसके लघुभ्रातादि के साथ उसका मान वत् स्नेहमय व्यवहार होता था।

वीरों की पत्नियाँ स्व-पत्नियों को अपना जीवन स्वयं समझती थीं। पतिमरण पर स्व-जीवन को बचा समझकर वे उससे स्वर्ग में जा मिलने के लिए तुरंत ही सती होने को तयार होती थीं। पारिवारिक जना का मोह एवम् उनका हिताकारियों की शिक्षाएँ उन्हें अपने निश्चय संचयन मात्र भी नहीं डिगा पाती थीं। परमात्मासो में मल्लिकार्जुन की पत्नी के मुख से पत्नी धर्म के अग्रलिखित मार्मिक उद्गार व्यक्त हुए हैं—'पत्नी को वेदों में अर्धांगिनी कहा गया है अतः उसे पति के मुख में ही नहीं बरन दुःख में भी सम भागी होने का पूर्णाधिकार है।<sup>५</sup> वह आगे कहती है— पति की अत्यंत भाव से सेवा करने वाली स्त्री को सहज ही सद्गति प्राप्त हो जाती है। अपने पति को परमेश्वर मानकर चाहे वह बीना बधिर धाना कुआँ, अथवा गूँगा ही क्या न हो सेवा करने वाली स्त्री को दानों लोक सुधर जाते हैं। मत्स्यलोक में उसका यज्ञ प्रसरित होता है जबकि मरने पर वह स्वर्गगमिनी होती है। इसके साथ साथ उसके मातकुल और पति कुल की भी पुष्टि प्रशंसा करते हैं।<sup>६</sup>

पति की सेवा को अपना अत्यावश्यक धर्म मानते हुए भी वीरकाव्य में उल्लिखित वीर-क्षत्रियाणियों की कायर पत्नी कहलाने के कलक को सहन करना मत्स्य से भी अधिक दुःखप्रद था। परमालरासो में ऊँल पत्नी उन क्षत्रियाणियों को जो युद्ध से भागे हुए पति को अपना शरीर सौंप देती थीं, क्षत्रिय-बाला न मानकर कुक्करी कहकर लाञ्छित करती हैं।<sup>७</sup> वीर वादल की पत्नी अपने मतीजे गारा के समान यही जिनासा

१ 'तव लो लडिका माइ बाप को जब लगि ऊँनि होय न ब्याहू।

ब्याह मय पर तिरिया मालिक बहुप्रर तुम्हें देइ लजाउ। — आ० ४६४।१० ११  
२ से ४ द० प्रम० प० रा० का० १७६।१।२५५, प० रा० मो० ३।१७।२६  
वही ३।६२।४६

५ ६ प० रा० ४।१४४ ४।१६६ ६६

७ पिय माग तिस अहूर सोरे सकल सरीर।

वह रजपुननि कुक्करी, मुमृतन कही गहीर। वही, २२।२१

व्यक्त करती है कि वह उस इस तथ्य की सूचना दे कि उसके चाचा युद्ध करत हुए ही वीरपति का प्राप्त हुए हैं अथवा पलायन करते हुए मारे गए हैं।<sup>१</sup> जब उस वीर रमणी को यह ज्ञात होता है कि उन्होंने गन्धु-महार करते हुए रण-सामाधि ली है तो उमक आनन्द का पारावार नहीं रहता, और वह आदवम्न होकर वह उठती है कि— बहुत अच्छा हुआ कि उन्होंने युद्ध करत हुए प्राणत्याग किए हैं। इससे उनका तो कीर्ति-गान होगा ही उन्होंने मुझे तथा स्वकुल को भी बलक लगने स ववा लिया है।<sup>२</sup> गौरा की पत्नी भी स्वपति की बनिहारी सेत हुए उस गज दन्ता का मर्न करत हुए ग्राह के गीत पर खडग प्रहार करने के लिए साधुवात देन मिलती है<sup>३</sup> तथा महारानी पद्मावती भी उसकी आरती उतारती है तथा गौरा की पत्नी को पसा गौरवान पति प्राप्त करने पर बधाई और करोड वष जीवित रहने का आशीर्वाद देती है।<sup>४</sup> आल्हाण म लावन की पत्नी स्वपति को यह धमकी देकर युदाय विदा करती है कि यदि मुझे आपके युद्ध स पलायन करने का समाचार मिलगा तो मैं कटार भाकर आत्म-हत्या कर लूंगी।<sup>५</sup> वे गवदासजी न भी मर्यादा हीन पति का पत्नी द्वारा अनादर करने का उल्लेख किया है।<sup>६</sup> आलोच्यकालीन वीर रमणिया के उक्त चारित्र्यात्म्य की पुष्टि बनिवर द्वारा वर्णित उस अपमानजनक व्यवहार की घटना से हो जाती है जिस महाराज जसवत सिंह का युद्ध से पलायन करत पर भोगना पडा था।<sup>७</sup>

### मपत्निया

बहु विवाह प्रथा के कुपरिणाम स्वरूप पारिवारिक जीवन बलह और पडयनो का केन्द्र बन जाता था। पृथ्वीराजराजो की सौतिमा डाह सम्बन्धी कुछ उक्तिया द्रष्टव्य हैं—

महाराज बीसलदेव की पत्निया सपत्निया स मिलन वाली आन्तरिक पीडा को बध्या की पीर की मौति भुक्ता भोगिनिया द्वारा ही अनुभव गम्य बताती हैं।<sup>८</sup> महाराज पृथ्वीराज की रानी इच्छिनी के मर्मोत्तारा के अनुसार— 'पितघातक स कालान्तर मे मन मिल सक्ता है तथा बिन्दव के अणु बरा का भी ज्ञान गन प्रतिगोघात्मक दण क्षीण हा जाता है किन्तु सपत्नी ग्राह की दु खामि मर्न होन के स्थान पर, ग्रीष्मकालीन

१ 'बाकी वाल सों कहै गारल न लायो काइ।

मिड मूओ के भजि मुओ सो मुक वात मुणाइ। —गो० क०, छ० १८१

२ भला हुआ जा मिड मुआ कलक न आयो काइ।

जस जप सब जगत म, हिव रण डूडो जाइ।' वही छ० १४४

३ स ६ द० त्रम० 'गो० क०' छ० १३६, वही छ० १३८, 'आ०' ४६६, १०४ बी० च०' ६।८

७ द० टू वल्स इन मुगल इण्डिया, प० ४० ४१

८ की जानि मात विभनी पीर। सौनि की माल साल गरीर। —पृ० २१०, का० ७५३७५

मूमा की मोति हृदय का निगि स्निग्ध करती रहती है।' कवि पदक पाठ्य म—  
 'सपत्निया प्रत्यगत ता निगि शुभरी वान करती है किन्तु धनमन म सापत्नी रहती  
 है, कि ह भगवन्।' इस हृदय मूलम नीधिति निघ्न सुन्दारा निनाइय।' म्प्राजन्त  
 क प्रत्यक पत्न्य—धन, गह मानी नम इम घोष धार धारि वा यदवाग मन्त्र कर  
 सक्ती है किन्तु पति प्र म मात्र ही एव म्प्रा निधि है जिस बह म्पत्नी क साथ बीटना  
 सहन नहीं कर सक्ती।' सपत्नी का पति साहचर्य का गुण सुन्दर्यना स्त्रिया का उनक  
 गरीर स अगार सुनान या करवन (धारा) चलाने की मोति काटकर हाता है।' म्प्रा  
 काल्हवार ने ता घाटे की वी कृपिम सप नी को भी हृदय दाहा समझा की धारणा  
 का प्रकटन किया है।'

सपत्निया के अनुनाग का उस दगा म पारावार नहीं रहता था जब काई नव  
 योवता पति प्र म की पूजा अधिष्ठात्री बन जाती थी। सयागिता अयहरण क पत्नान  
 महाराज पश्वीराज की पटरानी इच्छिनी का सम्भगन स्थिति का सामना करना पड़ता  
 है। राजमहल म रानिया की गाष्ठी धायोजित की जाती है जिसम महाराज पश्वी  
 राज यशवि इच्छिनी का भी सयोगिता के साथ साथ तिहासन पर रिटाने हैं, तथापि  
 उनके हाव भावा स इच्छिनी यह तर्जित कर लती है कि मुझ प्रीडा के स्थान पर महा  
 राज मुग्धा सयोगिता के प्रमाणव म धामून पून निमग्न है।' यह ईर्ष्या स सजा गुन्य  
 सो हो जाती है और इसी अनुताप म दग्ध रहती हुई म्प्रा पान का त्याग करत अयन  
 कृण हो जाती है।' इसस अग हाता भी यह है कि सयोगितानुरक्त महाराज क इच्छिनि  
 तथा अय रानिया को एव वप तव दान भी नहीं होत। वे सभी एव्य होकर मपत्नी  
 दुःख का राना रानी हैं।' अतत स्व गुरु क परामश पर मान का अभिनय करती हुई,  
 श्रुत्याग करके जाने वाली इच्छिनि को पुन पति-साहचर्य प्राप्त होता है।'

महाराज श्रीसचदेव की रानिया स्वपति और सपत्नी स ऐमा प्रनिगीथ लेती हैं,  
 जिमवा पयवसान अनेक अनर्थों म हाता है। पटरानी पावारी म अनुरक्त महाराज

१ विप्र घात सा मन मिले। और बर मिट जाइ।

सोनि रूग् अन्तर जलनि। निन प्रति प्रीयम लाइ। —प० रा० का० १६६३।१७

२ 'मुप मिट्टी बिता कर। मन म देत सराप।

बट प्रेम सु प्रीय बी। अन्तर लक्ष्म अाप।' वही १६६३।१८

३ 'धन ग्रह बठन मुक्ति ठग। हम पटवर सार।

पुनि त्रिय प्रिय बठन मुरति। लग अधिक पगधार।' वही १६६४।२१

४ मोति मुहागिल मुण्य दिपि। लग नन अंगार।

ज्यों ज्या बह छदा कर। लो त्या करवत धार। वही १६६४।२०

५ 'मोति नून का धर मे साल और बरी को साले नाम। —प्रा० ६१५

६ स ६ दे० प० रा०' १६६१।६७, वही, १६६२।१० वही, १६६६।४३, वही,

१६८३।१७७ से १६८५।१८८

बीसलदेव का,<sup>१</sup> उनकी अथ रानिया एक पत्र यत्र रचकर<sup>२</sup> योगिनी स नपुमव करा देनी है जिसस सपरनी कामकेल का आनन्दलाम ही न कर सके।<sup>३</sup> नपुसवता व अभिशाप से मुक्ति पाने के लिये महाराज तीर्थाटन और शिवाराधना करत है जिसस उन्हें उनकी कामाग्नि अत्यधिक प्रबुद्ध हान का बरतान प्राप्त होता है। अपनी अथ कामच्छा की अमर्यादित गति व कारण पहले तो वे स्व प्रजाजना के बोधभाजन बनत हैं<sup>४</sup> और अतत उन्हें तपस्यारत वणिक पुत्री का सतीत्व मग करने व फनस्वरूप रा उस हो जान का गाप भोगना पडता है।<sup>५</sup> सारत सपत्नियो के कारण पारिवारिक जीवन बलह और पडयना का बद्र रहता था।

बहन

आल्हखण्ड की चद्रावलि उन बहनो का प्रतिगधित्व करती है जिनकी दृष्टि म माइ का महत्व पति से भी अधिक होता था। चद्रावलि ऊल की सकेत करके विप मिथित भाजन के थाल को, स्व पति व थाल से ही नही बदलवा देनी<sup>६</sup> अपिनु मारकाट मचन पर उस स्वपति का खटग भी सौपते चित्रित की गई है। इसके विपरीत थला स्वपति की सतुष्टि-हेतु अपने माई का शिरच्छेद<sup>७</sup> करके स्वपति को सौपन प्रदर्शित की गई है।<sup>८</sup> गारेचाल के अनुमार आपदकाल म कौन किमवा भाई है और कौन किसकी बहन। य सुखकाल म तो घादरभावदिखात हैं जबकि आपत्ति के समय किनारा बाट जात हैं।<sup>९</sup> गारेलाल की इस उक्ति के मूत्र म आपद प्रस्त महाराज छत्रसाल म उनकी बहन का धात तक न पूछन का तथ्य रहा है<sup>१०</sup> जिम सावभौमिक तो नही कहा जा सकना किन्तु माई बहन की सकटकाल म रमाई दिखाना वस्तुस्थिति से बहुत भिन्न भी नही है।

पुत्र --

परिवार की पुत्र-जन्म पर विविध आशा आकाक्षाएँ केत्रित रहनी थी। पैतृक सम्पत्ति के रक्षण वग व विस्तार, कुत्रकीर्ति व प्रसार तथा पिता के मरगोपरात, उमक ऋण के विमोचन तथा अनुष्ठास वर साधन व लिए पुत्र का हाना आवश्यक समझा जाता था। पुत्रा की सप्राप्ति और उनकी कल्याणकाक्षा स माता पिता मनोतिया मागत और धार्मिक अनुष्ठान तथा ब्रतानि सम्पन्न करत थे। पथ्वीराज रामो म महाराज पथ्वीराज का ज म उनक पिता सोमेश्वर के अपूत्र तथा का फन कहा गया है।<sup>११</sup> परमाल रामो म हमवती पुत्र कामना म तीर्थाटन करती और देवताआ स मनोती मागनी है।<sup>१२</sup> राजविनाम म महा० गृहाण्टिय पुत्र प्राप्ति के लिए देवा की उपासना पटदरस की पूजा और तीर्थाटन करते हैं तथा तत्र मन्त्रात्मक विधिया की शरण लेत है।<sup>१३</sup> कवि नरहरि न

१ स ३ पृ० रा० का० ७४।३७०, वही ७४। ३७१ वही ७४।३७२

२ से ११ दे० क्रम० प० रा० का० ८३।४११, वही, ६७।४६१, आ०' २८८।२२,

३ वही २८६।२० २१, वही ५८३।२ वही ५८८।८, छ० प्र० ८।११ वही ८।११

४ ५ म १४ द० क्रम० पृ० रा० का० १४५।६६६ प० रा० १।१२३, रा० वि०' १।१२५



शाह भयंकर को, पुत्र-नामाग से भीर मोहूद्दीन चिन्नी की प्रत्याहता पत्न उदार जाते चित्रित किया है। माहृगण व गुद्ध प्रगमा म धाना प्रत्या स दान जान वान बीरो की प्राण रक्षा का मून कारण उाके माता पितामा व प्रतीपरागा की प्रशानि बनन हुए,<sup>१</sup> पुत्रा की कल्याणरामा म माता पिता द्वाग ग्य जान धाले प्रता पर प्रकाग डाग गया है।

निष्पुत्र महाराज अगणाल मनस्ताप व्यसन करत है ति पुत्र व अभाव म ससार नून्य है कयाकि वही सना का खण्डन करत हुए स्वपितृ राय की रणा करता है, तथा वश वृद्धि करते हुए वग का यग प्रमारित करता है।<sup>२</sup> पथ्वीराज रामा म अयत्र उसी घर को घर की मजा व उपगुन रनाया गया है जिसम कम सनम एक पुत्र हो।<sup>३</sup> उसम अगे कहा गया है ति पुत्ररहित-परिवार स्तम्भ रहित मन्दिर की भाँति असमय विनष्ट हो जाता है दुनिया स उसका नाम मिट जाता है तथा परिवार के धार्मिक कृत्या के अत्ररुद्ध हो जान व कारण गिरा की योनिया का भी उद्धार नहीं हो पाता।<sup>४</sup> रासो मे अयत्र उसी पुत्र को मच्चा पुत्र माना गया है जो त्विगत पिता क ऋण का चुकाकर उसका उद्धार करता है।<sup>५</sup> वयामखां रामो म निष्पुत्रा के 'अडत' की योनि प्राप्त करने की धारणा का प्रकाशन किया गया है।<sup>६</sup>

पिता व वर का गनु स बदला न लेने वान पुत्रा को विककारा जाता था<sup>७</sup> तथा उह यह उलाहना दिया जाता था कि पहल स्व पिता का बदला तो चुगा लो तमी यत् बढ कर वान वगागा।<sup>८</sup> इसी दृष्टि स महाराज पथ्वीराज स्वपिता व वध का बन्ला चुकान तक पगडी न बांधने और आहार म घत का प्रयोग न करन की प्रतिज्ञा करते हैं।<sup>९</sup> महाराज कीर्तिसिंह स्व पितृ हता असलान द्वारा सोपे जानेवात राज्य को, पिता का वर शाधन न कर लेने तक स्वीकार नहीं करत।<sup>१०</sup> पित वर शोधन का सर्वाधिक ज्वलत उदाहरण आलूखण्ड म मिलता है जिसम बनाफल भ्राता स्वपिता के हृयारे नरेश जम्ब के पुत्रा का वध कर देते हैं<sup>११</sup> जम्ब को कोलू म पिलवा देन हैं<sup>१२</sup> तथा उसकी एकमात्र पुत्री का भी तलवार के घाट उतारकर<sup>१३</sup> उसका कुल मे किसी गामनवा या पानी-देवा को नेप नहीं छोडते।<sup>१४</sup> आलूकार न गिन वर शोधन करने वाले बनाफल पुत्रो की धय धय कहकर प्रशसा करने क रूप म युग प्रवृत्ति का ही प्रकाशन किया है।<sup>१५</sup>

१ से ७ दे० क्रम० आ० १३४।१६ प० रा० का० ५६३।२१ वही २१६५।५२६ वही २१६५।५३० ३१ वही २४३।२।३५४, क्या० रा० १११, प० रा० का० ११४।१।२४

८ से १५ दे० क्रम० आ० ३७।३ प० रा० का०, ११४।१।२५ कीर्ति० प० १८, आ० ७४।१३ वही १०५।२४ वही, १०६।२२ वही, १०६।६ १०, आ० १०६।३

पुत्री —

वीरकाव्य म पुत्री के सम्बन्ध म वही सदम प्राप्त होत है जहाँ वय सधि को प्राप्त पुत्रियाँ प्राय घोर त्रिपत्ति अथवा परिवार की शान को धूनिसान करने का निमित्त बन जाना थी क्योंकि पड़ोमी नरेश और वादसाहा की दृष्टि उन पर लगी रहती थी। पिता या तो अपने से हीनकुलीय नरेश और विधर्मी बादशाहो को स्व पुत्रिया के डोले सौंपने का कुन अर्थात् विरोधी कृत्य करने पर विवश हो जात थे जिससे उहे लोच निंदा का सामना करना पडता था। अथवा उनके विवाह मयकर रक्तपात की रगस्थली बन जान थे। क्षत्रियो की वीरकाव्य म चित्रित विवाह पद्धति भी इस दोष स युक्त मिलती है कि अत्रिंशत् विवाह रक्त रजित मिलते हैं। यही कारण है कि पुत्र जन्म पर तो नाना प्रकार से हर्षोल्लास व्यक्त किया जाता था जबकि किसी भी पुत्री के जन्म के अवसर पर समारोह मनाए जाने का वीर-काव्य म चित्रण नहीं मिलता।

पिता और माता मे स पुत्रियाँ स्व माता को मनोप्यथामि-यक्ति के अधिक उपयुक्त समझती थीं। आल्हवण्ड मे सुनमा गजमोतिन और बला अपनी सखिया व इस उपहास की कि तुम्हारे पिता हीन-कुल के प्रतीत होते हैं जिससे तुम्हारा कोई कुलीन राजकुमार, विवाह करन को प्रस्तुत नहीं होता अपनी माताप्रा के अवल म ही मुह छिपाकर परियाद करती हैं।<sup>१</sup> चद्रावली की चौथी विदा न हाकर आने पर रुन्न करने वाली रानी मल्हना के रूप मे हमे एक पुत्री-वत्पला जननी का हृदय ही वरण व्रतन करते सुगई देता है।<sup>२</sup>

हत्तीली पुत्रिया की हठवादिता व समझ, पिता भी निष्ठुर ही नहीं बने रहते थ। महाराज जयचंद जो सयोगिता और महाराज पथ्वीराज के विवाह-सूत्र म बंधने व अतिगय विरोधी थे, सयोगिताहरण सम्बन्धी युद्ध में विजय की सीमा के सन्निकट पहुँचा पर भी स्व पुत्री के अश्रु सित्त नयन और विवर्ण मुख को देखकर द्रवित हो उठते हैं और यह कहते हुए कि मेरे मन का त्रिबस तथा क्या का अग्रहरण करने वाले दिल्लीश्वर, मैं तुम्हें अपनी लज्जा प्रतिष्ठा और पुत्री समी कुछ समर्पित किए जाता हू कन्नोज लौट जाते हैं।<sup>३</sup> इसी भाँति इन्द्रावती के पिता स्व पुत्री द्वारा आत्मघात करने के निश्चय स अवगत होकर वीरचंद के साथ विवाह निश्चित करने के वचन को मग करने की चिन्ता न करत हुए महाराज पथ्वीराज को गुप्त रीति से सूचित कर देने हैं कि आपके द्वारा पुत्री-हरण कर ले जान का, मैं प्रतिरोध न करूँगा।<sup>४</sup>

१ तुम आसुर आधीन, धीय द धरनि मु रक्त्वह ।  
 इन करनी हम अग, ऊँच मुँह करि करि अक्खह । — रा० वि०' ३।६१  
 २ ३ द० क्रम० आ०', १५५।२ ७, वही, २७७।११-१२  
 ४ ५ द० क्रम०, प० रा०' भो०, ४।८१।१६५५ ५८, 'प० रा०' का० ७६६।

राजपुत्रियाँ स्वयं को विस सीमा तट नीन-हीन समझती थीं इस तथ्य का महा राज हम्मीरदेव की पुत्री का कथन में अभिप्रेत ज्ञापन हुआ है। वह कहती है कि आप मुझे शाह भलाउद्दीन को सौंपकर स्व राज्य और प्राणा की रक्षा कीजिए। भरे विषय में आप यह सोचकर सतोष कर लना कि एक घर पालन वाला कबाल पत्नी हुआ था, जिस आपने कुल कलक समझकर दूर फिक्का दिया था।<sup>१</sup> दवलकुवरि का शाह भलाउद्दीन में विवाह करने के अनिच्छुर हृदय की यह छत्पटाहट इस तथ्य को दृष्टिगत करते हुए और भी महत्त्वपूर्ण है कि राजविलास में रूपकुवरि शाह औरगजेव द्वारा गाने का मदेश भेजने पर आत्महत्याय प्रस्तुत मिलती है,<sup>२</sup> तथा वीरचरित्र में अनुल फजल की हिंदू पत्निया (जिनके विवाह निश्चय ही बलात् किए गए होंगे) उसी निधन पर विनाप करने की तो कौन कह—प्रत्युन आंचल में मुह छिपाने हमत और डोलक आदि वजावर प्रमुदित हात चित्रित की गई हैं।<sup>३</sup> सारत, क्षत्रिय राज परिवारों में पुत्री का जन्म विपाद का ही कारण रहता था।

### नाती —

पुत्र के पुत्र को 'नाती' कहा जाता था। कवि सूदन ने भरतपुर के जाटा के गहो में पुत्र और नातियों की अपार संख्या प्रदर्शित की है,<sup>४</sup> जबकि आल्हकार ने ताला-सयद के नौ पुत्र और अठारह नातियाँ का होना<sup>५</sup> उल्लिखित किया है।

### धाय —

ब्रजभाषा के वीरकाव्य में धाय<sup>६</sup> पारिवारिक जीवन का एक ऐसा अभिन्न अंग चित्रित की गई है, जिनका आचार-व्यवहार और परामर्शों का, उनके द्वारा पालित शिशु अपने माता पिता से भी अधिक आदर करते थे। उनकी नियुक्ति दो दशाघ्रा में मिलती है—शिशुओं की माताओं की मृत्यु हो जाने पर उन्हें दूध पिलाने के लिए तथा माताओं के जीवित होने पर भी उन्हें स्नानादि कराने के लिए। महाराज बीसलदेव की रानी पुत्र-प्रसव के समय ही बालकबलि हो जाती हैं<sup>७</sup> अतः व शिशु को एक वक्ष्य वर्णा धाय को सौंप देते हैं। उस धाय की पुत्री गौरी के साथ वे एक शयन तथा एक स्तन का पय-पान करते हुए पोषित होते हैं<sup>८</sup> और अपनी धाय बहन के साथ उनका इतना

१-२ ह० ह० च० २५३ रा० वि० ७।२७

३ राजकुमारि हस मुह मोरि। तुरकि नीनि उपज दुख कोरि।

रोवति तन तोरति प्रति बनी। बिच बिच बजति डोलक घनी।

—'दी० च० ६।१६

४ से ७ दे० प्रम० 'सु० च०' ७।१।६०, 'आ०' २५।१०, 'प० रा० का०' ७०।३४७

वही, ७१।३४७

ममत्व हो जाता है कि उसके वधव्य से विन होकर वे बौद्धमत स्वीकार कर लेने हैं।<sup>१</sup> उनकी वध्या माना के मस्कारा का उनकी इस अहिंसक मनावृत्ति में अवश्य ही योगदान था, यही कारण है कि महाराज बोसलन्व उसे कुमार को मुष्नी (बौद्ध-माधु) बनाने का अभियोग लगाते हैं।<sup>२</sup> व राय त्राय के लिए यन-जन प्रकारेण प्रवाहित किय हुए राजकुमार का उसके ससग से प्रचान की चेष्टा करत हैं और उस घाय का आगाह कर देत हैं कि यदि उसने राजकुमार के समीप जान का प्रयास किया तो उसे निश्चय ही प्राण दण्ड मिनेगा।<sup>३</sup>

रासो में सयोगिता की धाय-माता का महत्व उसकी माता जाल्लवी से भी अधिक प्रशंसित किया गया है। सयोगिता पर जब माता भिता तथा दूतियो आदि किसी के भी समझान का अनुमूल प्रभाव नहीं पडता तो अन्तत उसकी माता सयोगिता की धाय से कहती है कि तुम पुष्पी क अतमन क रहम्या को मुझमें भी अधिक समझनी हो अन अब तुम्हा उस उमके पथ्वीराज-वरण-सम्बधी निश्चय म विरत करने की चेष्टा करो।<sup>४</sup> सयोगिता भी दूती और सविया का ता दा दून उत्तर देती है 'अरी तुम इस कुलकानि को क्या समझागी कि मरे पिता को वाप (स्वामी) कहन वाले नरेग मेरे लिए भ्रता और सबका के तुल्य हैं' किंतु अपनी धाय माता को उत्तर दन से पूव वह क्षमा-याचना करती है कि मैं आपक सम्मुख मुख खालन की घष्टता कर रही हूँ।<sup>५</sup>

राजविलास में मातहीन बाणा रावन के परिपोषण के लिए एक तो प्रचुर दुग्ध वाली धाय रखी जाती है<sup>६</sup> तथा पाच धायें उह स्नान और वस्त्राभूषणादि स सज्जित करने के लिए रखी जानी हैं।<sup>७</sup> राजसिंहजी का जम होने पर भी मान ने उनके लिए पाच धायें दिखाई हैं किंतु उन्हें दूध राजमाता ही पिलाती थी<sup>८</sup> जिससे माता की जीवितावस्था नियुक्त में क्षत्रियोचित गुणा का नैसर्गिक विकास हो सके।

### धाय पुत्र या दौवा —

धाय का समवयस्क पुत्र दौवा कहलाता था। दौवे का छत्रप्रकाश में उल्लेख मिलता है।<sup>९</sup> छत्रप्रकाश के सम्पादक डा० श्यामसुन्दरदाम के अनुसार बुदेलखण्ड क राजदरवारा में दौवा की जाति का विचार न करते हुए उसका विनोप सम्मान किया जाता है। दौवा को नरेग सहोदर की भाँति मानत हैं और उसके पिता को 'कक्का' कहकर संबोधित करते हैं।<sup>१०</sup>

### समधी —

पति और पत्नी के पिता आपस में समधी कहनाते थे। विवाह के अवसर पर उनके

१ से ६ दे० क्रम '५० रा० का० ७१।३४७ ४६ वही ७२।३५६ वही ७२।३५६ ५७  
 ५० रा० मो० ३२८०।३ वही, ३२३६।१० '५० रा० का०, १३४१।२६  
 ७ से ११ दे० क्रम 'रा० वि०' १।१४० वही, १।१४१ वही २।१७१ छ० प्र०'  
 ८।४, 'छ० प्र० ५० ५६ पर पाद टिप्पणी

गले मिलने का 'समघोरा' कहा गया है।<sup>१</sup>

नाना और दौहित्र —

माता के पिता को 'मातुल पिता', 'मात पित' और नाना सनाया स अभिहित किया जाता था जबकि पुत्री के पुत्र लिए 'दौहित्र और पुत्री पुत्र' सनाए प्रचलित थी। (ब्रजप्रदश में पुत्री पुत्र को धेवता कहा जाता है)। कवि चन्द ने महाराज पृथ्वीराज के मुख स स्वमाता के पिता महाराज अनंगपाल के लिए 'मातुल पिता'<sup>२</sup> और मात पित<sup>३</sup> शब्दों का प्रयोग कराया है जबकि कवि जान और मान ने नाना शब्दों के प्रचलन पर प्रयोग डाला है। अनंगपाल पृथ्वीराज जी को 'पुत्री पुत्र'<sup>४</sup> अभिहित करते हैं जबकि महा० सोमेश्वर स्व पुत्री के पुत्र के लिए दौहित्र<sup>५</sup> शब्द का प्रयोग करते हैं।

साले बहनोई —

पृथ्वीराज में बहनोई को देश विशेष के अधिपति<sup>६</sup> या जिस बहिन से उसका विवाह होता था उसका कत बहकर अभिहित करने की प्रथा दिखाई गई है जबकि आल्हखण्ड में बहनोई कहने का प्रचलन दिखाया गया है। छत्रप्रकाश मुजान चरित और आल्हखण्ड में सारे या साले शब्द का प्रयोग मिलता है।

बहनोई को गुन-पूज्य पाहुना में शिरोमणि तथा अतीव सम्मान्य समझा जाता था। महाराज पृथ्वीराज की बहन पृथाबाई के आगमन पर उनका माग में जाकर स्वागत करते हुए उन पर धान भरकर मोतिया को याछावर करके बधावा दिया जाता है।<sup>७</sup> महाराज पृथ्वीराज उक्त पाहुना में शिरोमणि एवं चौहान तुल के पूज्य पुरुष बहकर सम्मानित करते हैं।<sup>८</sup> आल्हखण्ड में मलिनान का सूरजमल को उतार है कि आपने सम्बन्ध में बहनोई लगने के कारण ही मैं अब तक आपकी मर्यादा का निर्वाह करता हुआ निश्चिंत हूँ अथवा बीरीगढ़ में आग लगाकर अपनी बहन चन्द्रावली को बलि करवा ल गया होता।<sup>९</sup>

आपदकाल में सारा और बहनोई प्रायः एक-दूसरे की निश्चिन्ता में अपना गवस्त्र बिनगान करने का प्रस्तुत रहते थे। महाराज पृथ्वीराज और रावल समर विश्रम सम्बन्धी वृत्तांत इस तथ्य की पुष्टि करता है। महाराज पृथ्वीराज गढ़ गौरी में होने वान धर्मिण युद्ध में रावल समर विश्रम को अपने साथ में लौट जान का निश्चय करते

१ द० प्रम० मा० २२११५

२ म० ७ द० प्रम० पृ० रा० का० ५६५।६० वही ६२४।५७ क्या० रा० ६६६,  
रा० वि० १।७६२ पृ० रा० का० ५६६।२७ वही १०६२।२१ पृ० रा  
का० २१६३।२६७

३ म० १० द० प्रम० पृ० रा० का०, ५११२।६१ वही २१६४।३६२ मा०  
२६८।१२

हैं क्योंकि व नही चाहता कि उसका बहन व मौमाल्य मिन्दूर का किसी प्रकार की शान प्राप्त हो। यह प्रस्ताव सुनकर श्रीमती का रागन समर विभ्रम का यह प्रयुक्त कि साधन दुर्लभ म यदि मैं, स्वप्राण सोम स मान नही दंगा, ता फिर किम प्रयाजना व निष्पत्ति रूपा व मान और बरगोइया व घट्ट राह वा अभिन्नजा है।

### (आ) पारिवारिक उत्सव या सस्कार

परिवारा व निष्पत्ति जन्म तथा विवाह प्राप्ति प्रसन्न हर्षोल्लास व निमित्त बात है, जबकि किसी सन्स्य की मृत्यु उह गोच-भारताकार म निम्न कर दनी है। गार्भागत स मृत्युष्टि ता का जीवन घटनाएं प्रात प्रकार की प्रतीकित भयप्रद और रिही शशा म पात्र धारणाया स भी घुसुद्ध हाती है। इन घटनाया म मयारुह और पात्र धारणाया के निरगत तथा शान्तिव निमाण म माना वा राय करे जाने जीवनासरा की धार सामाजिक रा उचित श्याा ज्ञान ही कामना स प्राय मनापिया व कुछ कमराण्डीय विधि विधात और प्रातनामि का मयाजित रर श्या या जित धमरास्त्रीय गल्लव ही मस्कारा का सत्ता प्रातन की गई है। इन गगाग स विविध जीवन प्रसग गरीर की दनिक श्रावश्यकताया ण्य शान्ति-श्यागार व समान घनापर कमरास्त्रीय और जावन व भुज सगीन स रिरति होन म बच जात है व तथा एत वातावरण म पापिन व्यक्ति समाज ही महत्त्वपूर्ण इकाई बनार उसने सर्वांगीण विरासत म उचित योगदान करन की शमता प्राप्त करता है।

सस्कारा की सगा तथा गामावली व विषय म मु' मु' मतिमिना' ही उक्ति चरितान् मितनी है। डा० राजनी पाडेय न स्पष्ट किया है कि 'शा-वालायन गृह्यसूत्र' म—विवाह, गमापान पुसवन सीमतानयन जातकम नामकरण, गूडाकम अन्न प्रातन उपनयन, सभावन और अ-वष्टि ग्यारह सस्कार मान गय हैं जबकि पारस्वर गृह्यसूत्र तथा वीधायन-गृह्यसूत्र म, इनम प्रमग निशमण और केगात तथा उपनिष्क्रमण और ण-यथ नामर सस्कारा की याजना करके उारी सस्या तरह बनाई गई है।<sup>१</sup> इसी भांति शारदानयन गृह्यसूत्र' म उनी सस्या ग्यारह, याचकत्व-स्मति म दारह तथा शैतम स्मृति और शैतम धमसूत्र म चात्रीस मिलती है। उनके अनु सार परवर्ती स्मृतिया और श्राधुनिकतम पढतिया म सस्कारा म नाम भे' ता अवश्य दृष्टिगत होता है किन्तु उनी सस्या प्राय सालह ही मानी गई है। उहने अपन दाध ग्रथ म १-गर्भाधान २-पुसवन, ३-सीमतानयन ४-जातकम, ५-नामकरण, ६-निष्क्रमण, ७-अ-प्रातन, ८-गूडाकम ९-नणवध, १०-विद्यारम्भ, ११-उपन

१ स ३ द० प्र० 'प० रा० वा० २१६०।३५६ वही, २१६३।३६६, 'पृ० रा०' वा०

२१६१।३५६

६ द० 'हिन्दू सस्कार, डा० राजवली पाण्डेय, प्राक्वचन, प० ५

५ वहां पृ० २१ २८

यत्न १२-वेदारम्भ १३-वेशांत या गोदान, १४-समावहन या स्नान १५-विवाह और १६-अत्यष्टि का परिगणन किया है। श्री शिवदत्त चानी ने सोलह सस्कारों की जो नामावली दी है उसमें इन सदभगत सस्कारों में से विचारम्भ और वेशांत या गोदान के स्थान पर वानप्रस्थ और स्यास की सोलह सस्कारों में से स्थान दिया गया है।<sup>१</sup> तात्पर्य यह है कि सोलह सस्कारों में से जातकर्म विवाह आदि कुछ सस्कारों को तो प्रायः सभी मनीषियां न सस्कार माना है जबकि कुछ सस्कार ऐसे हैं जो सर्वसम्मति से सस्कारों में सम्मिलित नहीं किये गये हैं। ऐसी दशा में वीरकाव्य प्रणेतार्यों द्वारा भी कुछ ही सस्कारों का प्रचलन लिखाना अनुचित नहीं है।

ब्रजभाषा के वीरकाव्य में जन्म निष्क्रमण नामकरण विवाह और अत्यष्टि सस्कारों का ही अधिष्ठान चित्रण मिलता है। उसमें जूडाकर्म और पासनी (घन प्राण) का भी उल्लेख मिलता है किन्तु उनके विधि विधान का वर्णन नहीं किया गया। हाँ छठी आदि कुछ नवीन शोध रीतियाँ तथा मुख्यतः नरेशों के लिए ही होने वाले राज्याभिषेक सस्कारों का उसमें अल्प उल्लेख मिलता है। इन सस्कारों तथा उनसे सम्बद्ध आचारों का वर्णन करने से पूर्व जिन सस्कारों का वीरकाव्य में चित्रण नहीं मिलता उनका विषय में दा शब्द अपेक्षित हैं।

गर्भाधान सस्कार जिसमें गर्भसंस्कार और धोत्रसंस्कार<sup>२</sup> मानने सम्बन्धी दो भिन्न धारणाएँ प्रचलित थीं अति उत्पन्न भावनाओं पर भावित हान हुए भी जनसाधारण में वर्णित ही प्रचलित रहा होगा। इस सस्कार के समय की ये प्रायनाएँ— विष्णु गर्भांग्य निमाण करें प्रजापति बीजवपन करें धाताभूगस्थापन करें<sup>३</sup> आदि विद्वत्त्वों में ही प्रचलित रही होगी। इसी भाँति पुसवन सस्कार जिसमें गर्भस्य गिणु में पुत्र ही हान का उपक्रम करते हुए गर्भिणी के दाहिने नासा रंध्र में घट-वृक्ष का रस डाला जाता था<sup>४</sup> तथा सोम-तोषण-संस्कार जिसमें गर्भिणी की सोम-त का उन्नयन करते हुए उसकी भ्रमणकारी गतिरथा से रक्षा करने के लिए श्री का आह्वान किया जाता था<sup>५</sup> एक सस्कार के तिनमें पवित्र प्रकार से पत्नी के गर्भवती होने का विनायन करता था। ये वृत्त्य मर्यादाएँ नहीं मान जा सकने, और अत्यंत सभ्रान्त परिवारों में ही इन सस्कारों के अनुष्ठान का संभव मानने हुए यह कल्पना करना समीचीन है कि, अन्ततः ये वृत्त्य पति की माता का सोम-गिणु गण हांग। पति के स्थान पर पति की माता का

१ अष्टांग काव्य का माहुरितिक मूल्यांकन पृ० १८८ पर उद्धृत।

२ गौ. गणना पाण्ड्य के अनुसार— धोत्र संस्कार में से सम्बद्ध न हानर स्त्री की जनन-रिच्य की गुद्धता में था। इसमें पति जनन-रिच्य का स्थापन करता हुआ विष्णु योनि में गर्भ का उच्चारण करता था। ८० हि० सं० पृ० ६८-६९

३ ८० व. १० ६०

४ ८० वही पृ० ७६

५ ८० व. १० ७८-७९

इन सस्कारों की सम्पन्नता का भार मिलने का एक प्रधान कारण यह भी प्रतीत होता है कि शास्त्रकारों ने सीमन्तो नयन के पश्चात् पिता के लिए नग और बेगा का बटवाना, मेषुन, तीप-यात्रा, श्राद्ध करना आदि कर्मों में सम्मिलित हुआ तथा मुद्रा करना आदि कृत्य निषिद्ध कर दिए थे।<sup>१</sup> इन निषेधात्मक कर्मों का पालन करना बस तो मवसामाय के लिए भी कठिन ही प्रतीत होता है किन्तु नूट पाट करने हुए मुद्राव आण नग म नरग और उनके मामात इन निषेधा का पालन करते हुए स्वशुद्धा में छिप बैठे रहने यह कस सम्भव हो सकता था ? अतः प्रागजन्म सस्कारों का आलोच्यकाल में विनोपत क्षत्रियवर्ण में अप्रचलन असंगत नहीं प्रतीत होता। यह तथ्य ध्यातव्य है कि कृष्ण-भक्ति शायी के अष्टछापों के विषय में भी इन सस्कारों का प्रचलन नहीं किया गया है।<sup>२</sup>

अथ सस्कारों में सवर्ण बंध होता तो अथर्व वेदा की वीरगाय म पुण्या का भी बाना में आभूषण पहन चित्रित किया गया है<sup>३</sup> किन्तु वर्ण वेद सस्कारों के विषय में पहले से ही यह विवाद था कि उम सस्कारों में स्थान दिया जाय अथवा नहीं<sup>४</sup> ऐसी दशा में वीरगाय प्रणेताओं द्वारा उस अनुष्ठानपूर्वक सम्पन्न हात न दिवाना विनोप महत्त्व नहीं रखता। शेष अनुल्लिखित सस्कारों में म विद्यारम्भ उपनयन वेदा रम्भ, कशांत या गोपान तथा समावतन या स्नान गेम सस्कार हैं जिनका सम्बन्ध डा० राजवली पाण्डेय ने शिशाजन से दिखाया है<sup>५</sup> जयक वानप्रस्थ और सत्याम चतुराश्रम व्यवस्था से सम्बद्ध हैं। चतुराश्रम व्यवस्था का चित्रण करते हुए पीछे किया जा चुका है कि ब्रह्मचर्य वानप्रस्थ और सत्यास आश्रमों का उाके परम्परागत रूप में पालन नहीं जाता था, अतः उनसे सम्बद्ध इन सस्कारों का भी वीरगाय में अप्रचलन मितना ही संगत है। हा उपनयन सस्कारों का विद्यारम्भ का मूलक हान के स्थान पर गन जन जनेऊ धारण का वाचन हा गया था, तथा द्विजा का उसे विवाह से पूर्व किसी भी समय करा देने की स्वीकृति मिल गई थी<sup>६</sup> वीरगाय में विवाह तथा रायामिपेक के अवसर

१ दे० हि० स०, पृ० ८५।

२ 'अतएव जिन सस्कारों का वर्णन अष्टछाप शास्त्र में मिलता है व दस है—जात कर्म नामकरण निष्क्रमण, अन्नप्राशन, वर्णवध, चूडावर्ण उपनयन, वेदारम्भ विवाह और अत्यष्टि।' — अष्ट० का० सा० मृ० प० १८८

३ वही प० ३

४ दे० हि० स०, प० १२६ ३०

५ डा० पाण्डेय के अनुसार—विद्यारम्भ सस्कार पाचव से सातवें वर्ष तक की आयु के (प० १४०) उपनयन सस्कार—ब्राह्मण शत्रिय और वश्य को भ्रमण आठवें, ग्यारहवें तथा बारहवें वर्ष में (प० १५१) वैश्या व अथवा गोपान प्रायः सालह वर्ष की आयु में (प० १८१) तथा समावतन या स्नान सस्कार वेदाध्ययन की परिसमाप्ति पर (प० १८७) किया जाता था—दे० 'हि० स०', कोष्ठांकित पृष्ठ संख्याएँ।

६ दे० हि० स०, प० १५५



राजवित्तास म जन्म के दिवस तुलाया गया ज्योतिषी जन्म समय के ग्रह-नगत्राणि पर विचार करता हुआ उनका नाम मय राशि म रखा जाना निश्चित कर जाता है।<sup>१</sup> वारहव दिवस महाराज जगतसिंह स्व परिजनो को भोग दार उा ही पहरावनी करत हैं,<sup>२</sup> तथा स्वपुत्र का नाम भी इन्ही परिजना से पूछत हैं<sup>३</sup> जो उनका नाम राजसिंह निर्धारित करत हैं।<sup>४</sup> यह निवेदन करना भी आवश्यक है कि मान ने मन्त्रोच्चार या यज्ञ किए जाने का उल्लेख नहीं किया है तथा राजसिंह नामकरण ज्योतिषी द्वारा उताई गई मेपरानि के भी अनुसूल न हाकर तुला राशि म आता है। नाम निर्धारित हो जान पर मान ने विप्रा को स्वर्ण दान करने का अवश्य उल्लेख किया है।<sup>५</sup> डा० राजवली पाण्डेय ने भी पद्धतिया म नामकरण की कवि मान प्रदत्त विधि म अशत सादृश्य रखने वाली परिपाटी प्रदर्शित की है जिसके अनुसार पिता शिशु क दाहिने कान की ओर झुकाता हुआ, उसका कुलदेवता, जन्म के मास जन्म के नक्षत्र के आधार पर तथा लौकिक चार प्रचार के नामा का उच्चारण करता था जिन्हे वहा पर एवत्र ब्राह्मण यह प्रतिष्ठित हो बहुकर स्वीकृति प्रदान कर दते थे। अत म उसका अभिवाग्नीय नाम भी रखा जाता था जिससे उगरे नामा की सरया पाच हो गानी थी। ब्राह्मणा को दिए गए भोग तथा देव और पितरों को स्व स्थाना को लौटने का निवेदन करने के साथ सस्कार की समाप्ति होनी थी।<sup>६</sup> तात्पर्य यह कि आजकल सामान्यतया नामकरण की जो प्रणाली अपनाई जाती है वह आलोच्यकाल मे प्रचलित नहीं थी।

### पासनी या अनाप्राशन -

अन प्राशन सस्कार को लोक शब्दावली म पासनी कहा जाता है। इस सस्कार का कवि गारेनाल ने शिशु छत्रसाल क सदम म उल्लेख किया है। गार्सकारा ने यह सस्कार शिशु की छ मास की अवस्था स एर वष की आयु होने तक सम्पन्न करने का विधान किया है।<sup>७</sup> गारेनाल ने छत्रमालजी को यह सस्कार होने के समय घुटुरुआ क वन चलत तो प्रशंसित किया है किन्तु आयु का उल्लेख नहीं किया। इग अवसर पर ही कदाचित् शिशु के भावो जीवन श्रम का पूर्वाभास पाणे क लिए उमो सम्मुख नाना प्रकार क खिन्नोत जिनम लेपनी करवात आदि हात य रखतर देखा जाता था कि वह किसका चयन करता है? कवि गारेनाल ने शिशु को प्रथम बार अनाहार देने के स्थान पर इसी प्रथा का चित्रण किया है, जिसम छत्रसालजी करवाल का चयन करके स्व युद्धवृत्ति

१ म ५ द० श्रम० रा० वि० २१६६ वही २१७१ वही, २१७२, वही, २१७३, वही २१७४

६ द० हिन्दू सस्कार, प० १०८ १०९

७ दे० वही, पृ० ११५

वीरवाय्य म चूडावम या चूडाकरण संस्कार जिनका धर्मशास्त्रा म कोई निश्चित विहित काल नहीं दिया गया है<sup>२</sup> किसी शिशु का होते नहीं प्ररिगित किया गया है। वे संवत्स जी न स्वतन्त्र रूप स बाला क नास का चूडावम को सत्ता देकर इस संस्कार का प्रचलन अत्रय शिवाया है।<sup>३</sup>

शिशु का तुला दान करना —

कवि मान ने शिशु राजमिह क एक वष क हान तक उनसी प्रतिमास मुक्ताओं स तुला करन और उन मुक्ताओं का दान करन की प्रथा शिवाई है।<sup>४</sup> नियम लोग म मुक्ताओं क स्थान पर अनाम आदि स तुला करने का प्रचलन रहा होगा।

विवाह —

मनुस्मृति म—ब्राह्म देव आय प्राजापत्य आगुर गाधव रा स और पशाच आठ प्रकार के विवाह बताए गए है।<sup>५</sup> इनका उत्तरोत्तर निवृष्ट मानत हुए पशाच विवाह को निम्नतम वहा गया है जिसम अचतन सुप्त अथवा प्रमत्त कया क साथ पशाच म बलात् मैथुन करन सम्बन्ध स्थापित किया जाता था।<sup>६</sup> गाधव और रागस विवाह की पद्धतिया को यद्यपि शास्त्रकारान अत्र पाँच विवाह पद्धतियों से निवृष्ट बताया है तथापि पृथक वर्णों क लिए पृथक प्रकार क विवाहों को प्रशस्त दियात हुए क्षत्रियों क लिए यही दो पद्धतिया प्रशस्त घोषित की हैं।<sup>७</sup> कर्त्तावित् यही कारण है कि ब्रजमापा क वीरनाय्य म वर्णित अधिनास विवाह गाधव और रागस विवाह-पद्धतियों की ही काटि म

- १ प्रगट पामनी में छवि छाई। भुवमर सहित कृपान उठाई।  
सा निन कविन कवित बनाय। शि्य दान निन कौ मन भाये।  
मुटुरन चलत घूघरू बाज। सिजित मुनत हस हिय लाज। —छ० प्र० ४।३
- २ डा० राजबली पाण्डेय ने स्पष्ट किया है कि चूडाकरण के समय निर्धारण में सूय का उत्तरायण में होना आवश्यक था तथा वह शिशु क पाच वष स बडा हो जाने पर भी किया जा सकता था।  
—द० हि० स० पृ० १२३
- ३ बालनास है चूडावम। तीछनता आयुध क धम।  
—वी० च० १८।१०
- ४ द० 'रा० वि०' २।१८२ ८३
- ५ ब्राह्मणो देवस्तथवाप प्राजापत्यस्तथागुर।  
गा धवो रागसदचव पशाचश्चाष्टमापम।  
—मनु० ३।२१
- ६ सुप्ता मत्ता प्रमत्ता वा रहो यत्रौषगच्छति।  
स पापिष्ठी विवात्ताना पशाचश्चाष्टमौषम।  
वही, ३।३४  
मनु० ३।२४
- ७ (क) रागस क्षत्रियस्यकामगुर वश्य यूद्रयो।  
(ख) गाधवो रा सदचव धर्म्यो क्षत्रियस्य तौ स्मृती।  
—वही, ३।२६

घात है कि यह तथ्य अपराधीय है कि शास्त्राग द्वारा प्रस्तुत इन विवाहों की लक्षणाओं, शिवाय द्वारा विवाहों की शर्तों की पूर्ण माध्यम नहीं रखती। उदाहरणार्थ, मनुस्मृति में राजा की विवाहों की शर्तों — राजा की पत्नी हुई कन्या को उमरी सम्पत्ति प्रया की मारण या शत्रु विगत करत दूष वदान् अपहरण करत नामा<sup>१</sup> किया गया है। धीरकाव्य में विवाह अपहरण की माध्यम से होता है। धीर विनाया में मुद्र भी होता है कि कन्या पूर्वानुरागिन हान की कारण राजा की पत्नी की मिलती। वहीं दगा गांधव विवाह की विषय में मिलती है। शास्त्रीय शर्तों में शास्त्रों से आमजन मुक्त द्वारा मधुनाथ किया गया सम्पत्ति गांधव विवाह कहना है<sup>२</sup> जबकि धीरकाव्य में इम सादृश्य रगन वाले विवाह सम्बन्धों में मधुनाथ प्रया विन्युक्त है। सभी शर्तों विवाहों के पूर्वोक्त शर्तों में अनुचित शिवाय स्वयंवर प्रया विनिमय विवाह, पद्धति गडग विवाह की शर्तों आदि सभी पद्धतियाँ हैं जिनका गुणगुणान्ति में भी उल्लेख नहीं मिलता और उनमें ग अन्तिम दो उदाचित् शानोच्यकानी विवाहों की ही विषय शीतिया है। अतः शास्त्रीय विधि से सम्पन्न किए जानवान विवाहों में विन्युक्त शिवाय का अनुपात किया जाता था, इसका चित्रण करने से पूर्व धीरकाव्य में उपलब्ध परम्परागत और नवीन पद्धतियों का शिवाय में अवलोकन प्रयोजनीय रहगा।

### स्वयंवर-पद्धति —

सीता द्रौपदी इन्दुमती और दमयन्ती आदि के विवाह स्वयंवर-पद्धति से प्राचीन साहित्य में दिखाय गये हैं। हमारे शानोच्यकाल के शिवाय में भी इसका प्रचलन था। डा० राजश्री पाण्डेय के अनुसार— शारम्भ में सभी वर्णों की कन्याओं के विवाहों के लिए स्वीकृत यह विवाह पद्धति शान गन मध्ययुग में प्रायः राजकुलों तक ही सीमित रह गई थी।<sup>३</sup> डा० दशरथ शर्मा ने भी हमचन्द्र और जयानक के शिवाय पर ईस्वी सन एक हजार के लगभग तक स्वयंवर प्रया का प्रचलन दिखाय है।<sup>४</sup> पृथ्वीराज रासो और आल्हादण्ड में लिए गए शिवायिता स्वयंवर के विवरण से इम पद्धति के विषय में अधोलिखित तथ्य शिवाय में आते हैं —

स्व पुत्री का स्वयंवर पद्धति से विवाह करने के दृष्टिकोण नरेग इतस्तत के नरेगों का शिवायित करते थे।<sup>५</sup> निश्चित दिवस स्वयंवर शिवाय सज्जित किय पाण्डाल में विवाहेच्छु

१ ह्वा छित्वा च मित्वा च शोभती स्ती गृहात् ।

प्रसह्य कन्याहरण राक्षसो विधिरच्यते । —मनु० ३।३३

२ इच्छयाभ्योय संयोग कन्यायाश्च वरस्य च ।

गांधव स तु विज्ञयो मथुय का सम्पत्ति । वही ३।३२

३ दे० हिंदी साहित्य का बहत् इतिहास, भाग १ पृ० १२०

४ दे० अर्ली चौहान डाइनेस्टीज प० २५६

५ दे० प० रा० का० १५६६।११, 'भा०' ६।१४ १५

व्यक्तियों को मम्मवत मण्डलाकार रूप में बिठाया जाता था। हाथ में जयमाल लिए कन्या को राजकवि प्रत्यक्ष नरग क देग, जाति, गुण तथा पितरा के विष्णु सुनाता हुआ पाण्डन में चारा भोग भ्रमण कराता था।<sup>१</sup> जिस किसी भी नरग के पास कन्या पहुँचती वही स्व ग्रीवा को झुकाकर, उसमें बरमाना डाले जान की प्रतीति करता किन्तु जब कन्या आग में जाती तो उसकी आत्मगानि की सामान रहनी थी।<sup>२</sup> पृथ्वीराज रासो में यह तथ्य भी प्रकाश में आता है कि यदि किसी कारण बश कन्या का आत्मनिर्णय पिता को स्वीकार्य न होता था, तो वह पुत्री को किसी दूसरे वर का चयन करने के लिए, दा अथवा और प्रदान करता था। मयोगिता द्वारा दिल्लीश्वर की प्रतिमा ग्रीवा में माना डालने पर महाराज जयचम उक्त रीति का आश्रय लेन चित्रित किए गए हैं।<sup>३</sup>

### पूर्वानुरागाश्रित युद्धातक विवाह पद्धति —

जैसा कि पीछे कहा जा चुका है धीरवाच्य में उपलब्ध कन्यापहरण के विवरण, शास्त्रानुरागी रास विवाह पद्धति से साम्य नहीं रखते इनमें कन्या और वर एक दूसरे का गुण श्रवण करके पूर्वानुरागित मिलते हैं। इन विवाहों को कन्या की कपोल बन्धना की मज्ञा नहीं दी जा सकती। प्रथमतः तो यह रीति सुमद्रा और रुक्मिणी के अपहरणों की परम्परा से साम्य रखती है। द्वितीय कारण यह है कि राजकुमारियों के विवाह उनकी प्रायः पौडशवर्षीय अवस्था में होने चित्रित किये गये हैं<sup>४</sup>, जिससे यह सहज कल्पना की जा सकती है कि उन्हें अपना मला-चुरा सोधन और रुच्यनुकूल पति वरण की ममता होनी थी। साथ ही प्रेम संदेश के माध्यम हस<sup>५</sup> और सुक<sup>६</sup> ही नहीं ये अपितु एक दरवार से दूसरे दरवार में जाने वान नट भाट अथवा इसी प्रकार का श्रय कोई स्त्री या पुत्र्य पान<sup>७</sup> उन्हें एक दूसरे के गुण सुनाकर उनमें एक दूसरे के प्रति अनुराग जाग्रत

१ से २ द० अ० पृ० रा० का० १५६६।१३ आ० ६।२३ २४, पृ० रा० का० १।६६।१० १४

४ द० कन्याओं के विवाह का आयु प्रकरण।

५ शशित्रता के अनुराग का विवरण दिल्लीश्वर को हम देन दिखाया गया है जिस कविराव माहर्नामिह ने हस नामक ब्राह्मण माना है—दे० पृ० रा० मो० २।६११

६ पद्मावती और दिल्लीश्वर के मध्य प्रेमाकुर गुरु द्वारा एक-दूसरे के गुण सुनाने से हाना है—दे०

७ (क) महाराज पृथ्वीराज के हृदय में शशित्रता के प्रति प्रेमाकुर शशित्रता के पिता का राज गट तथा शशित्रता के हृदय में एक विधवा क्षत्रियणी दिल्लीश्वर के धीर वायकलापा का विवरण सुनाकर जाग्रत करत चित्रित की गई है। दे० 'पृ० रा० का० प० ७६१ ६३ तथा पृ० ७६६

(ख) मयोगिता और पृथ्वीराज के परस्परानुरागित होने का मूल कारण उन्हें ब्राह्मणी और ब्राह्मण, तथा जगम साधुओं द्वारा एक दूसरे के गुण सुनाना दिखाया गया है। दे० प० रा० का० प० १२७५ तथा १५६५

कर देता था। पिता द्वारा मनोनीत वर को अपने लिए योग्य न समझकर, य क्षत्रिय कयाएँ अग्रोष्ट वरा को शत्रियत्व की दुहाई देकर अपना अपहरण कर ले जान का मदेश भेजकर इष्ट माधन कर सकती थी जिसका वीरकाव्य में प्रयोग दिखाया गया है।<sup>१</sup> आत्महत्या की धमकी<sup>२</sup>, और क्षत्रियत्व की दुहाई ही, किसी वीर पुरुष का अपहरण के लिए स नद्ध वरन की पर्याप्त थी, फिर य नरक तो स्वयं भी पूर्वानुरागित हात थे, अत युद्ध की चिन्ता किए बिना वे अपहरणाथ आत थे, और मार काट का सामना करने हुए उनकी भावी पत्नियां द्वारा निर्धारित सवेत स्थला स<sup>३</sup> उनका अपहरण करके लात थ।<sup>४</sup> पृथ्वीराज रासो में वर्णित पद्मावती और शशिव्रता के अपहरण इसी कोटि में आते हैं। सयोगिता स्वयंवर की चरम परिणति भी इसी प्रकार के युद्धातक अपहरण में हाती है, जिसमें दिल्ली और कन्नौज की साथ शक्ति का वृद्धदाश विनष्ट हो जाता है।<sup>५</sup> स्व पुत्री की इच्छा से अवगत होकर यदा-कदा सहृदय पिता अपने द्वारा पूर्व निर्धारित वर स विवाह करने के स्थान पर पुत्री क चाह हुए वर स विवाह करान में गुप्त-सहायता पहुँचात थ। शशिव्रता के पिता, कन्नौजेश्वर के मनीजे वीरमदेव के स्थान पर (जिससे वे रिश्ता तय कर चुक थ)<sup>६</sup> महाराज पृथ्वीराज को स्व पुत्री का अपहरण कर ले जाने की सहमति भेजत दिखाए गये हैं,<sup>७</sup> क्योंकि उहे यह चात हो चुरा था कि 'वीरम' स विवाह की वार्ता को सुनकर शशिव्रता ने आत्मघात करने का प्रण कर लिया है।<sup>८</sup> अपहरण करके लाई गई कयाओ स म्व नगर में तुम लगन में विवाह कर लिया जाता था।<sup>९</sup>

### गाधर्व-विवाह —

क्षत्रियो के लिए प्रशस्त बताई गई इस विवाह पद्धति के उस म-यतर रूप को जा अक्षयण जय तो है, किंतु मैथुनाघत नहा है, पृथ्वीराज रासो कयामर्या रासो और राजविलास में चित्रित किया गया है।

पृथ्वीराज रासो में सयोगिता का विवाह वस्तुतः स्वयंवर गाधर्व और रागस

१ 'जा पित्रो कुल मुद्ध। वरनि वर रप्यहु प्राणह। — प०रा० का०, ६५।५६

२ (क) 'मानो तुम चहुमान वर। अर कहि इहे सदस।

सास सरीरह जो रहे। प्रिय प्रियराज नरेस ॥ वही, ६३५।५३

(ख) तहाँ तुम पिता शृपा करि जाउ। दिल्ली व अनुराग उपाउ।

मान पटह हौं वृत्तह मडो। ध्युना आव ती तन छडो। वही ७७२।७६

३ (क) 'या रकमनि कहर करी। ज्या वरि समरि का।

निव मठप दच्छिन निसा। पूजि समय स प्रात। वही ६३।१३५

४ स ६ द० क्रम० प० ग० का० ६३८।५६ ४८ वही १७३।१०५८ में

१६४६।५५८, वही ७७१।७३, वही ७६६।६६, वही ७६६।६५,

वही, ६४०।६६

पद्धतियों की एक एकी त्रिवर्णी है—जिसका भारत तो स्वयंकर प्रथा से होता है किन्तु मध्यान्तर गांधव और भ्रवसान राक्षस पद्धति में होता है। रासोनार व अनुसार यमुना पुलिन पर मछलियाँ चुगात हुए शिल्लीशर को सयागिता की मन्त्री उसक महन म बुना ल जाती है। वहाँ सभियाँ दोना का ग्रथि-व्यघन करती है तथा महाराज को सयोगिता का कर थमा देनी हैं जिस वे वामाग म बिठा लत हैं और विवाह सपन हा जाता है।<sup>१</sup> यह तथ्य ध्यात प है कि यह विधि विधान सखी और दासिया द्वारा ही किया जाता है तदथ किसी पत्रकमी पद्धित को नही बुलाया जाता। रासो म इस विवाह पद्धति व विषय म यह उगार मी व्यक्त किए गए हैं कि यद्यपि इस विधि का निपिद्ध बताया जाता है तथापि इसकी रसाग्रता को भुवनमागी मली प्रचार जानत हैं।<sup>२</sup> इससे स्पष्ट हाना है कि आलो-यकाल म यह विधि उत्तम नही समभी जाती थी।

वयामखाँ रासो म घष' तग्नावस्था म स्नान करती अप्सराराधा व वस्त्र चुराकर उह तमी लोटाना है जय व उमकी अमोष्ट अप्परा म उसका विवाह कर जाती है।<sup>३</sup> इस सदम म कवि जान का यह उल्लेख मी नि हूय म प्रम जाग्रत हाने पर प्रमी कुल और जानि व बधना की चिन्ता नही करत, इस गांधव विवाह की कोटि म ल गाता है।<sup>४</sup>

राजविलास म एक सी आठ कुमारियाँ बाप्पा रावल व शीय और कदर्पाकृति पर मुग्ध होकर उनका सामूहिक वरण करत चित्रित की गई है। वे जगल म स गुञ्जरनी हुई मदभगन कयाग्रा की एक सिंह स रना करते हैं जिससे प्रभावित होकर व उनसे अरण्य म ही विनाह कर लती हैं।<sup>५</sup> उनके विवाह व समय तरुवरा व विवाह मण्डप तथा आन्न मजरिया के मोर बनाए जात हैं।<sup>६</sup> कुमारियाँ का वय लता पुष्पादि से शृंगार करक मगलगाना क मय विवाह रचा जाता है। इन कयाग्रा वे पिना मी पुषीनण स उन्मण होने की कामना स वहाँ आ पडुचते हैं तथा दायज अरण करते हैं।<sup>७</sup> इनम म काव जान और मान क विवरण अगत कल्पनायत प्रतीत हाते है फिर मी उनस गांधव विवाह की रीति पर प्रकाश भवश्य पडना है।

### खड्ग विवाह पद्धति —

पथ्वीराज रासो म इन्द्रावती का महाराज पथ्वीराज व खड्ग व साथ विवाह चिन्तित है जिसस अघालिपित तथ्या पर प्रवास पडता है—  
 पूव निर्धारित तिथि पर यदि वर किसी कारण विवाह व लिए स्वय नहीं जा सवना था तो कमी समवयस का तदय अपना खड्ग सौगर प्रपित कर देता था।

१ स ३ दे० त्रम० प० रा० का० १७२/११२०२०५ प० रा० मो० ४।७२०।  
 ३७६, क्या० रा०, ६८ १०१  
 ४ स ७ द० क्रम० क्या० रा० ६२, रा० वि० १।१६४, 'रा० वि०' १।१६५,  
 वही, १।१६७



को यथागतिन घन प्रदान करने स्वच्छदतापूर्वक विवाह करता था<sup>१</sup> आसुर विवाह बताया गया है। राजविलास म गाह औरगजेव मानसिंह राठीर को, अश्व गज ग्राम और देश खण्ड प्रदान करने का प्रलापन देकर उसी बहन की जा माग प्रस्तुत करत है तथा मानसिंह जिसे स्वीकार कर लेता है वह इसी कोटि में आती है। हा रूप कुमारी क तदथ प्रस्तुत न होने तथा महाराज राजसिंह को स्व रक्षा क निमित्त निवदन भेजकर बुला लने स<sup>३</sup> यह विवाह सम्भव पूरा नहीं हो पाता और रूपकुमारी से महाराज राजसिंह विवाह कर ले जाते हैं।

प्रलोमन देकर विवाह करने के गद्य ही शत्रुआ म उनकी पुत्रिया के डोला का माग रखकर की गई अनाक्रमण सिंधिया भी इसी श्रेणी में रखी जा सकती हैं। परमालरासा और आह्लयण्ड म महाराज पथ्वीराज का महाराज परमाल से तथा हम्मीररासा और हम्मीरहठ म शाह अनाउद्दीन का महाराज हम्मीरदेव से ऐसी ही माग करते चित्रित किया गया है।

पुत्रियों क स्थान पर पत्नियों की माग रखने की अधमता हिंदू नरेशा म किसी भी प्रसंग म दृष्टिगत नहीं होती जबकि केशव ने शाह अलाउद्दीन द्वारा देवगिरि नरग की पत्नी छिताई का बलात् अपहरण करने का उल्लेख किया है<sup>४</sup> तथा कवि जटमन न वह महाराज रतनसेन की पत्नी पद्मावती को प्राप्त करने के लिए आक्रमण करत प्रदर्शित किया है। पद्मावती को अपनी बहन बतात हुए उसके मुख-दर्शन मान की लालसा प्रकट करना<sup>५</sup> विश्वासघान स महाराज रतनसेन का बंदी बना लेना<sup>६</sup> उह राजमहल के सम्मुख काडा से पिटवाकर तथा अथ कष्ट देकर पद्मावती समर्पित

- १ नातिम्यो द्रविण दत्त्वा कयाय चव शक्तिन ।  
कयाप्रदान स्वाच्छद्यासुरा धम उच्यत । — मनु०' ३।२१
- २ हर्माहि दहु चित हरपि वहिन तुम मुनिय रूप धर ।  
देहें तुमहि घर देस, गाउ हय गय समान गुर । — रा० वि०' ७।२३
- ३ प्रभु क सु लुलि लुलि पाय परों, कर जारि इती अरदास करो ।  
सजि सेन सु आवहुनाह दत, अबला सु छुडावहु आसुर तै ।' वही, ७।३४ ३५
- ४ (क) साहि छिताई कौ ल जाइ । विहना पूनो अग न माइ । — बी० च० १।३६  
(ख) हती छिताई अति सुदरी । सा पुनि छनवल तुरकनि हरी । — वही, ३।१
- ५ म्हे वहिन कर पदमिनी तुम्हे माई कर थप्पू ।  
दहैं मुख पदमिनी, अवर बहु देस समप्पू ।  
गल कठहार पहिराइ कें नाव नवण कर बाहडू ।  
राणा रतनसेन । मुलताण कहै नहीं गढ़ पर चडू । — गा० क०' ७६
- ६ 'रहे प्राल जडलोक सारे सकल गड म परो ।  
रागा ल गया रोक कपट कियो मुलताण ने । — वही, ८७



करने के लिए विवश कराया—सनातनीय के एक कथ्य है जो भारतीय मर्यादा की दृष्टि से प्रतीय गति ही कते जायेंगे।

### विभिन्न विवाह-सम्बन्ध

सामान्यतया समाज में दाम्पत्य ही परिवार का मुख्यमात्र होना ही समाज में एक सम्प्रदाय का प्रत्यक्ष निमित्तक मया है कि एक परिवार का विवाह प्रथमी पुत्री प्रथम बहन या दूसरे परिवार में विवाह कर लिया और उक्त परिवार की पत्नी या बहन या अपने परिवार में विवाह कर लिया जाता था किन्तु हिन्दुधर्म के स्थान पर मुस्लिम धर्मनाम की ही विविध गीति समझना उचित है। साह बहनामगी नामी पतनहमी गीतन का समाज यह प्रस्ताव रखता है कि यदि हममें प्रस्ताव बन्नी या विवाह-सम्बन्ध स्थापित हो जाय तो यह पारस्परिक प्रीति के विवधान में एक बहुत माध्यम का कार्य करेगा।<sup>१</sup> पतनहमी गीतन सम्भवतः इस हीन मानकर प्रथम यही काई भी प्रविशतिन कथान होना या बहाना मया देना है<sup>२</sup> किन्तु भक्तिय का भीन रूप साह बडे कुपित होना है।<sup>३</sup> साह द्वाय जब यहा प्रस्ताव समझना चौगन का सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है<sup>४</sup> ता वह उमे स्वीकार करके उनका साथ प्रथमी बन्नी का विवाह कर देता है और उनी पुत्री का स्वपुत्र में विवाह कर देता है।<sup>५</sup> एक प्रकार का विवाह सम्बन्ध का वीरकाल्य में प्रथम उक्त हरण नहीं मिलता और जगा कि यहा जा चुरा है किन्तु समाज में इस प्रकार का विवाह सम्बन्ध का प्रचलन भी नहीं है।

### अन्य विवाह पद्धतियाँ —

आल्हाण्ड म वर्णित आल्हा और मुनमा का विवाह में कई पद्धतियाँ का सम्मिश्रण मिलता है। मुनमा का पिता द्वारा भेजे गए टीर को उसने प्रतीक लडाकू तथा जादू में पारगत होने का मय स काई भी नरस स्वीकार नहीं करता।<sup>६</sup> वह अपने नगर की सीमा पर एक नयाडा रखवाकर घोषित कर देता है कि उस पर चोट मारन वालों के साथ मुनमा का विवाह कर दिया जायगा।<sup>७</sup> स्वपुत्री के वर निर्धारण में वे इस वार भी असमर्थ रहते हैं क्योंकि किसी भी नरस का डके पर चोट लगाने का साहस नहीं होता। निम्न स्वयं मुनमा आल्हा को चुनौती भरा प्रेम सदेव भेजती है कि यदि सच्चे राजपूत हो तो मुझे विवाह कर ल जाइय।<sup>८</sup> महाव स काई हुई बरात डके पर चाट लगाती है।<sup>९</sup> मुनमा का पिता का उनसे दीधकाल तक भयकर युद्ध होता है किन्तु अन्त में

१ दे० गो०क० छ० ८८

२ से ६ दे० प्रम० क्या० रा० ४३८ ३६ वही ४४० वही ४४१ वही, ४४२ वही ४४३

७ स १० दे० प्रम० आ ११२।६ १० वही, ११२।१७ १८ वही ११३।११ १२, वही ११६।१६

पत्र विजयी होकर विवाह कर ले जाते हैं।

फुनवा और उदल का विवाह राणागिता से आरम्भ होता है। नरवरगढ़ आय हुए उदल पर आसनत होने पर फुनवा उमक साथ गुप्त रीति में भावों डलवाने के लिए प्रस्तुत हा जाती है। किंतु उदल गुप्त रीति से कथापहरण को क्षत्रिय मर्यादा के विरुद्ध बताने पर जारी जोरा (मागवाट के पदचान्) विवाह करने जान का वचन देता है,<sup>२</sup> जिसकी प्रतिपूर्ति भयकर युद्ध के पदचान् ही हा पाती है।<sup>३</sup>

विधिवन् विवाह के अवसर पर किए जाने वाले आचार-विचार एवं मागलिक कृत्य —

वीरकाल्यमे सभी विवाह-रीत उल्लिखित विधियां स हा सम्पन्न हुए नहीं मिलती, उसमें तात्कालिक विवाह-सम्बन्धी उन आचार-विचार और मागलिक कृत्याके भी प्रचुर निर्देश मिलते हैं, जिनकी शान्ति का हम आजकल विरामत के रूप में उपयोग करते हैं और जिन्हें हिन्दुमा की सामान्य विवाह-पद्धति की सजा दी जा सकती है। पश्चीम राजसा में इस प्रकार की विवाह-पद्धति को 'देव विधि' का विवाह बनाया गया है।<sup>४</sup> धर्मशास्त्रों में विवाह के आचारों की सर्वसम्मत सूची नहीं मिलती। डॉ० राजबली पाडेय ने अपने 'हिन्दू-संस्कार' नामक 'गोचरप्रथ' के विवाह-प्रकरण में—पारस्कर और वीनायन के शुद्ध सूत्रों में इनकी सम्मेलन प्रतीति और पश्चीम प्रणित की है जबकि उनकी वर्तमान सरथा पर प्रकाश डालते हुए, उन्हें माडलिक द्वारा वर्तमान तथा गदाधर द्वारा तत्तीस मानने का उल्लेख किया है। इसके साथ साथ हिंदी साहित्य के बृहत् इतिहास में उन्होंने, विवाह के समय सम्पन्न किए जाने वाले आचारों की सम्मेलन वयालीस प्रणित की है।<sup>५</sup>

१ स ३ 'आ० २४६।३, वही, २४६।४ १, २० वही, प० २६१-२७६

४ (क) गणहता सयागिता की भाँवरों आदि डानकरदेव विधि से विवाह सम्पन्न कर आने के लिए महा० जयचंद अपने कुलपुरोहित को दिल्ली प्रेषित करते हैं।

विधि विचित्र सजोगी की। करहु देव विधि ब्याह।' — प० २।०', का० १८५०। २४८४

(ख) राजल समर विधम और प्रियाहुँवरि के विवाह की भी देव विधि की सजा दी गई है

देवत्य ब्याह चहुँधान कीन। दध्य सु ब्याह सम विरह चीन्। — वही ६।६। १३६

(ग) दे० हिन्दू संस्कार, पृ० २५६ ६३

५ इन वैवाहिक आचारों की सूची इस प्रकार है — १—वर-वधू गुण परीक्षा, २—वर प्रथण (कथा का देखने के लिए वर का भोजना) ३—वाग्दान (विवाह की स्वीकृति) ४—मण्डपकरण, ५—पुण्याह वाचन तथा नादी आदि, ६—वधू-

डा० पांथे ने वैवाहिक आचारा के प्रति इतिहास का विचार करने में स्पष्ट किया है कि गुप्तालय के पश्चात् उनका विधि विधानों में परिवर्तन ध्यान लगा था तथा बहुत से गुहा गुप्त में यह स्थापना मिलती है कि विवाह में जनपद पक्ष तथा ग्राम पक्ष का विचार करना चाहिए और पद्धतियों का अनुसरण धर्म शास्त्र के अनुसार करना चाहिए। संस्कार की संतुष्टि के अनुसार तो धर्म शास्त्र की स्पष्ट विधियों का अतिशय ध्यान देना चाहिए और अनुसरण करते हैं। वीरराज्य में वैवाहिक विवाह-पद्धतियाँ भी इन दशाचारों की बहुलता मिलती है। उसमें यह स्पष्ट है कि भी गया है कि हमारे देश में यह आचार इसी रीति से सम्पन्न हुआ है। धर्म गुहा चारा में वैवाहिक होने का कारण इस कारण हमारा ही पद्धति में सम्पन्न करना पड़ा। प्रायः ही गण आचारा में से कुछ ऐसे भी हैं जो युद्ध प्रिय एवं स्वतन्त्र बना राजपूतों की ही निजी परम्परा प्रतीत होते हैं अतः युद्धाजित प्रसंगात् जनजीवन के स्थान पर शक्तिपनरणा की विवाह पद्धति के प्रतीक मानना ही अधिक उपयुक्त है।

(क) मगाई या वाग्दान —

धर्मशास्त्रीय शास्त्रों की वाग्दान आचार लोह शास्त्रों में मगाई कहलाता है जिसे वर विधरण के लिए प्रयुक्त किया जाता है। पश्चिमी राजस्थान में महाराज नाहरराय साठ वर्षीय पृथ्वीराजजी का एक माला पटनाकर तथा वस्त्र प्रदान करके यह वचन दत्त हैं कि उनकी अगम्या मोलह वयसि होने पर मैं स्वपुत्र का विवाह कर

गृहामन (व्यापक के घर वरपण का जाना) ७—मधुपक ८—विष्टारान्न (वर को बैठने के लिए आसन देना) ९—गोरीहरपूजा १०—स्नापन ११—परिधापन एवं सनहन १२—समजन (वर वधु को समराग लगाना) १३—प्रतिसर वचन (क्या क हाथ में कवच बाधना) १४—वधु वर निष्कमण १५—परस्पर समक्षीण १६—क्यादान १७—अक्षत रोपण १८—वरण वरन १९—आदिकाशन रोपण २०—तिलवन्दन २१—घट फलिदान २२—मंगल सूत्र बाधन, २३—गणपति पूजा २४—वधु वरयोत्तरीय प्रतिबधन २५—समी पावती शची पूजा २६—वापनदान २७—अग्नि स्थापन तथा होम २८—पाणिग्रहण २९—लाजाहोम ३०—अग्नि परिणयन ३१—अक्षमारीहण ३२—शाधा गान ३३—सप्तपदी ३४—भूद्धामिपेक ३५—मूर्धोदीरण, ३६—हृदय स्पृश ३७—सिद्ध वरदान ३८—प्रक्षकानु मन्त्रण ३९—दक्षिणादान, ४०—गृह प्रवेश, ४१—गृहप्रवेशनीय होम, ४२—धुवाक्षती दहन, ४३—आग्नेय स्थानी पाक ४४—नारायणत ४५—चतुर्थी कम, ४६—दवरोपान ७७—मङ्गोद्घासन। हि० सा० का० व० ६० भा० १ अ० ५, प० १३२

१ स २ द० हि० स० वही प० २६१

३ 'देश हमारे यही रीति है आगे कुला कुला व्योहार। — सा०, २१०।२५

हूँगा।' रासोवार ने इस घातार के लिए किसी विशेष सभा का तो प्रयोग नहीं किया किन्तु यह 'वाग्धा' प्रथा का ही प्रचलन ज्ञात है। गोरेलाल ने महाराज छत्रसाल की लग्न घात के समय उल्लेख किया है कि उनकी सगाई पहले ही हा चुकी थी।<sup>१</sup> इस प्रसंग में यह तथ्य उल्लेखनीय है कि वीरकाय म वर्णिन अधिकांश विवाहा का समाारम्भ टीका अथवा लग्न-पत्रिका भेजने से ज्ञाया गया है।

### (ए) टीका लग्न अथवा श्रीफल भेजना

इसरी तार पद्धतियाँ मिनती हैं यथा—तुन पुरोहित को लग्न सामग्री प्रदान करके यह अधिार दे देता कि वह जिस किसी घर को कुनीतता प्राप्ति की दृष्टि से उपयुक्त समझे उसका साथ विवाह निश्चित करेगा। यह प्रथा पृथ्वीराजरासो के पचावती विवाह में अनाई गई है।<sup>२</sup> द्वितीय पद्धति में पहन ब्राह्मण और माटा का घर अवगत भजा जाता था, तथा उनका द्वारा बताए गए घर को उपयुक्त समझने पर 'लग्न-सामग्री भज दी जाती थी। यह प्रथा परमानरासो के लावन विवाह में घटित होती है।<sup>३</sup> तृतीय प्रथा में ब्याक पिता स्व निर्धारित लड़के का कुल पुरोहित के हाथों नारियल भाकर घर मनातीत करने भेजता था। पृथ्वीराजरासो ने इच्छिनी,<sup>४</sup> प्रियाकुवारि<sup>५</sup> इ द्रावती<sup>६</sup> और रकमणि<sup>७</sup> परमानरासो के बला,<sup>८</sup> तथा राजविलास के राव छत्रसाल हाडा की पुत्रियाँ<sup>९</sup> के विवाहा में इसी रीति का अनुसरण किया जाता है। चतुर्थ पद्धति में नाई वारी गाट और पुरोहित के साथ ब्याक माद को टीके की सामग्री के साथ भेजा जाता था। उह ब्याक पिता वर्णिन देगा के नाम बताकर यह अधिार सौंप देता था कि इन देगा के अतिरिक्त जहाँ वहाँ भी उपयुक्त घर मिले उसका टीका चढाकर विवाह सम्बंध निश्चित करेगा। आह्वण्ड के गजमातिन,<sup>१०</sup> बला<sup>११</sup> सुनमा<sup>१२</sup> और कुमुमदे<sup>१३</sup> के घर निर्धारण में इसी पद्धति का आश्रय लिया जाता है।

### (१) टीके में अथवा लग्न पत्रिका के साथ प्रेषित की जान वाली सामग्री

टीका अथवा लग्न के रूप में विविध प्रकार के वस्त्र गज अथवा पालकी स्वर्णमरण स्वर्ण मुद्राएँ स्वर्ण मन्थित बटार तथा मेवा मिष्टानादि भज जाते थे। पृथ्वीराजरासो में इच्छिनी की लग्न के साथ रत्नघटित नारियल भेजा जाता है<sup>१४</sup> तथा प्रियाकुवारि की लग्न पत्रिका के साथ अरु मुवनामालाएँ तथा लालों की निधि भेजी जाती है।<sup>१५</sup> परमालरासो में लालन की 'लग्न (नाकशब्दावली में लग्न को लग्न ही

१२ दे० ५० रा० का ३३५।२५ २६ छ० प्र० ६।६

३ से १० दे० प्रम० ५० रा० मा० १।३६०।१६ पर० रा०, २४।८२ ८४ ५० रा०'  
मो० १।२६३।३ वही १।३७२।६ वही, २।८६६।५ 'गृ० रा०' का० ३६४।  
१७५, पर० रा०, १३।१४ रा० वि० ३।५० ५५

११ स १६ दे० प्रम० आ० १।५।१० २१, वही १६६।३ १३ वही ११२।२ ६,  
वही ३८१।११ १६ पू० रा० मो० १।२६३।३, पू० रा०, का० ६४४।८ ११

कहा जाता है) म सौ अश्व, दस हाथी तथा पाँच सौ महागुरु स्वर्ण मुद्राएँ धानी हैं<sup>२</sup> जबकि महाराज पृथ्वीराज रज्जा की लगुन में अनेक गज और अश्व यह मूल्य अगुरु, पाँच स्वर्ण पत्र विविध अस्त्रास्त्र तथा एक लाख राण मुद्राएँ भद्रत चित्रित किए गए हैं।<sup>३</sup> राजविनास म छत्रसाल हाडा अपनी पुत्रियाँ के श्रीपत्र प्रेषित करत समय स्वर्ण मरण एव जरी की जीन कस हुए अश्व अनेक प्रकार के जरकसी सिरपाव मुक्ताफन, मणिमानाएँ स्वर्णनचित कपूर तथा प्रचुर माया म मेवा मिल्पा न भेजत हैं।<sup>४</sup> मालह कार न सुनमा<sup>५</sup> और कुमुम<sup>६</sup> के टीके तो तीन-तीन लाख क बचाए हैं जबकि बला<sup>७</sup> और गजमातिन<sup>८</sup> के टीका म वावन पालनी नख गजरथ एक हजार उत्तम नाटि के अश्व गान-दुगाने मोहनमाला चीरा-कलगी दा रूमाल माहरथ के न तो<sup>९</sup> तथा एक स्वर्णमाल न उल्लेख करते हुए उ ह तीन लाख का टीका हाने की मना प्रगत की है।

### (३) लगुन और टीका चढाने की रीतियाँ

कवि चंद ने लगुन चढाने की रीति का बणन करने म रुचि नहीं ली है,<sup>१०</sup> और मात्र प्रिया कुवरी के प्रसंग म मोतिया मे चौक पूरकर नारिकर प्रदान किया जाना चित्रित किया है।<sup>११</sup> अथ पया म डम अवसर पर विद्या के वेद पाठ चौक पूरे जाने वर को निलन करन नेगिया को नंग प्रदान करन तथा सम्बन्धिया का प्रीतिभाज दन की प्रथा लिखाई है। परमालरासो में नाखन के हाथ पर लगुन सामग्री रखी जाने के समय पढिन वेद पाठ और स्त्रियाँ मंगल गायन करती हैं, तथा उसके पिता सुश्री मनाते हुए

१ से २ पर० रा० २४१८७ वही १३१३३ ३४

३ मन हरवन सु पट्टव नातिकेर नर राव ।

तपनिय सावति वर तुरग भूपन बनव सुभाव ।

जरकस क बहु मातिगुत प्रवरमति सिरपाउ ।

मुक्ताफन माला समनि, जारित कटार जराउ ।

मेवा खादिम बहु मधुर अरु कहि बहु अरदास ।

पठयो प्रीहित उग्रयपुर, अपि मुदन उल्लाम । रा० वि० ३१५२ ५८

३ तीनि राख का टीका लने सौ नगिन को दसो गहाय । 'भा० ११२।३

५ २० भा० ३८१।१८

६ वावन पनरो नख गजरथ उम्दा घाडा एक हजार ।

गान दुशाला माहनमाला चीरा कलगी दुइ रूमाल ।

धारिख तीण दुइ मोहरन क औ एक थार सोवरन कपार ।

तीन लाख की टीका लक सा नगिन की दसो गहाय । — भा० १६७।० १०

७ से ६ द० भा० १५५।१६ १८, 'प० रा० का० ७४३।६ वही ६३४।२७

करोड़ा का द्रव्य लुटा देते हैं।<sup>१</sup> राजकुमार ब्रह्मा के जन्म-हेतु चौक में बठने पर विप्र वेद पाठ करते हैं। रागुन लकर जाने वाला पन्ति उसे पान का बीडा खिलाता है और उसके हाथ पर नारियल रगता है। जगुन में आई हुई मामथी उतने हाथ से छुनाकर चौक में रख दी जाती है।<sup>२</sup>

राजविलाम में महाराज छत्रमाल हाडा द्वारा प्रेषित पुरोहित राजकुमार राजसिंह को नारियल अर्पित करते हुए उनके मस्तक पर तिलक लगाता है तथा आशीर्वाद देता हुआ कहता है कि भावी नववधुनी दीधामुष्य प्राप्त कर।<sup>३</sup> महाराज जगत सिंह इस अवसर पर उम पुरोहित का अपार द्रव्य, अश्व सिरोंपाव जरखसी एवं रत्न जटित वपड़े के धान तथा स्वर्ण आभूषण प्रदान करते हुए, आदर भाव प्रदर्शित करते हैं।<sup>४</sup>

माल्हासण्ड में ब्रह्मा का टीका चढ़ाने आते हुए ताहर की सूचना पाकर रानी मल्हना स्वयंसेवक प्रदान एवं ताहर के स्वागतार्थ महावक प्रथेक शृङ्खल पर बचन कलश स्थापित करा देती है तथा गलिया म त्रिछौन त्रिछाकर उा पर इत्र ठिडकवा देती हैं।<sup>५</sup> महोदय की धीधकथी में गुजरने समय उस पर चदन चौवा अवीर गुनाल तथा केशर जल की वर्षा की जाती है।<sup>६</sup> टीका चढ़ाने का स्थल गाय के गोबर से लीपा जाता है, तथा उसमें चन्दा की चौकिया डालकर मंगल-कलश स्थापित कर दिए जाते हैं।<sup>७</sup> ब्राह्मणों द्वारा कल पाठ एवं स्त्रियों के मंगल गाना की मुमधुर ध्वनिया के मध्य ताहर ब्रह्मा को पान का बीडा खिलाकर लीका चढ़ाता है।<sup>८</sup> ताहर महाराज के नेगिया को नेग में स्वर्णभूषण प्रदान करता है जबकि महाराज चदेल की आर में टीका लेकर आण हुए नेगियों का ही स्वर्णभूषण प्रदान नहीं करते, अपितु बहुत में अथ आभूषण यह रहकर चामुडराय पन्ति का सौच करते हैं कि आपने जो नेगी तिली म रह गय हा, य आभूषण उन्हें नग में दे देना।<sup>९</sup> मलिनवान और लाखन वाणीका चढ़ाते समय भी इसी भाँति मुरभि के गाबर से चौका लगाया जाता है कलश स्थापन, वेदपाठ मंगल गान विददावली गुनना आदि कृत्य होते हैं।<sup>१०</sup> उनमें इतना अन्तर अग्रश्य है कि टीका लाने वाला का पूर्वा भास न हाने के कारण उनका ताहर की भाँति स्वागत नहीं किया जाता, इसका प्रतिरिक्त टीका चढ़ाने की राति म यह वषम्य भी भिन्ना है कि कथा का आई वर के चरण-स्पर्श करके उनको पाच पान का बीडा प्रदान करता है।<sup>११</sup> जबकि ताहर ब्रह्मा के चरण स्पर्श

१ प० रा०' २४।८७

२ से ४ द० प्रम० पर० रा० १३।३१ ३० 'रा० वि०, १।६१ ६२, वही ३।६४

५ से १० द० प्रम० आ० २०।३।१८ २०, वही, २०।४।८ १० वही २०।३।२५,

२०।४।१ वही २०।४।६ वही २०।५।८, वही, २०।४।२० २५

११ से १२ दे० प्रम० आ०' १।६।१-१७, आ०' १।५।१११,

दिए गये हैं। नीचे दत्त चित्रों द्वारा किया गया है। दूध प्रयोग में घाटदार १ टील व चित्र सगुन<sup>१</sup> तथा जनान<sup>२</sup> शब्दों का भी प्रयोग किया है।

(४) लगुन सम्प्रधी तुष्ट अ य उन्नम्य तथ्य -

राजकुलाम तथा परमात्मरामो म सगुन सम्प्रधी १। अ य उन्नम्य तथ्य का धीर पता चलता है। राजकुलाम म राजकुमार रागादि जो श्रीमान् एतत् चित्रा वरन क उपरात एतसान हाहा का पुरोहित उन्मयपुर म ही निपाय किया है तथा विवाह का पत्र सति उन्म घाट कर उनक विवाह महाराज जगामिह स उन्म विवाहाय भजन का निवन्धन करता है।<sup>१</sup> परमात्मरामो म महाराज एतत् महामं पृथ्वाराज द्वारा सगुन म भेरी गई एत लाग स्वयं मुग्धा क साथ गाय दा वरयो धीर भी मुग्धा का विपत्ता म बीटार एत प्रकार स हिन्दी-धर ता धरमात् करता है।<sup>२</sup> जिनकी सूचना पाकर व भी बा- म बरात क आममन पर उन्नम घामायाय विवाह स पून जत सम्म भन्त की गत लगानर उहें द्विविधा म डाल एत है।<sup>३</sup>

(ग) नहगुर -

यह शब्द तदा शीर गंगा का अपभ्रष्ट समास रूप प्रभाव होता है, जिससे ध्वनित होता है कि इस आचार क समय स्मृत्तु धीर सिर क कंग तथा नागुना का बाटा जाता था। धमगास्त्रीय ग गवनी म इस कंग न का स्वाभाविक माना जा सकता है जो डा० राजली पाण्डेय क अनुसार आरम्भ म तो ब्रह्मचारी क स्मृत्तुमा का शीर करके उस यौवनपूण प्रवृत्तिया का नियमन करत हुए एत वष तत पुन ब्रह्मचय्य ग्रन क पाला का स्मरण लिलाने के लिए सम्भन किया जाता था कि तु बाल विवाह का प्रचलन बन्धन पर उन्नम ब्रह्मचय्य की समाप्ति का प्रतीक माना जाने लगा था।<sup>४</sup> हमारा अनुमान है कि गुरुकुलों म शिक्षाजन करने न जाने वाला का यह संस्कार विवाह स पून उसी भांति किया जाता होगा, जस विवाहावसर पर यज्ञावीत संस्कार या जनऊ लने की प्रया प्रचार पाती जा रही थी। आल्हसण्ड म गोमय से लीपी हुई संस्कार स्थली म मोतिया का चौक पूरकर तथा पडित द्वारा बताया गय शुभ मुहल म नाई द्वारा घर को चौकी पर बिठाकर यह आचार सम्पन्न होते दिखाया गया है तथा स्त्रियाँ इस अवसर पर मंगल गात करते चित्रित की गई हैं।<sup>५</sup> आल्हसण्ड मे

१ स ५ द० अम० आ० ३८३।१३ १५ वही ३८३।१६, रा० वि० ३।६४ ६६,  
पर० रा० १३।३८ ३६ वही १३।४०

६ दे० हिंदू संस्कार पृ० १८५ ८६

७ सलिया मगत गाती आम ल ल नाम बीर मलिगन ।

सुरह गऊ जो गोबर लवे गजमातिन के चौक पुराय ।

चौकी परि मद्र मलियागिरि की तापर मलिखे बडे गाय ।

नहबुर होन लयो मलिखे को पडित वद विचारन लाग ।

मनिमान,<sup>१</sup> झाह्ला,<sup>२</sup> ऊन<sup>३</sup> और लावन<sup>४</sup> सभी वं विवाहों में इस सम्भार का उल्लेख मिनना उम विवाह का एक आवश्यक अंग अभिधातित करता है। नाई भी इस अवसर पर अपने नंग व लिये भगडा करते थे।<sup>५</sup>

### (घ) तेल चढाना —

नहसुर वं पदचातु तल चढाने समय आजकल मान सौभाग्यवती स्त्रियाँ वर के पात्र जानु स्वध, वण तथा गिर पर तन लगानी हैं। झाह्लवार ने गरीरगा का तो उल्लेख नहीं किया किन्तु मान-सुगागा झाहा<sup>१</sup> मलितान,<sup>२</sup> ऊन,<sup>३</sup> और लावन,<sup>४</sup> पर तल चढान प्रदर्शित की हैं।

### उवटन —

हल्दी, बमन और तल का मिश्रित करके, वर एक ब्या का उवटन करने से उनकी गरीर काति दीप्त हो उरनी है। झाह्लवार ने इस सामान्य उवटन वं स्थान पर ऊन<sup>१</sup> मनिमान<sup>२</sup> और झाह्ला<sup>३</sup> का वेगने उवटन किया जाना, तथा नाई द्वारा उन्हें गगाजल में स्नान कराना चित्रित किया है। ब्याओ का उवटन करने की भी प्रथा दिखाई गई है। स्त्री शृगार का वणन करते हुए, गणित्रना और इच्छिती व उवटन नगाक व स्नान कराने का जो चित्रण किया गया है वह उनका विवाह में पूव व शृगार वणन से सम्बद्ध है।<sup>४</sup>

### (ङ) वरण वधन —

वदि वर ने इच्छिती विवाह की ज्योनार के समय महाराज पृथ्वीरान वं वर में वरण सुगोमित दिखाकर<sup>१</sup> वरण वधन की प्रथा दिखाई है। झाह्लवार ने झाहा<sup>२</sup> और ऊन<sup>३</sup> की स्व नरा में वरण वधन दूल्हा वगत चित्रित किया है। वेगवत्सजी ने भी महाराज वीरगसिंह व योद्धाअन का दूल्हा क वेग से उपमित करत हुए उनके वर में वरण रूपी जयवरण वधा दियाया है।<sup>४</sup>

१ मे ४ दे० झा०' १६२।१६ झा०' ११२।१८ २१, वही, २२८।१७ २०, वही, ३८।१३ १४

५ नाऊ भिगर रनि मल्हना स हमरो नेगु वऊ मगवाय। — वही १६२।२७  
 ६ स १७ द० प्रम० 'झा०' १६२।१७ वही, ११६।२० वही १६२।२०, वही, २२८।१६ वही ३५८।१५, वही, २५८।२१, वही, १६२।१६, वही ११६।२५, प० रा० का०, ५५६।६३, 'झा०', ११७।१, वही, २५८।२३, वी० च०, ८।२६



## (च) दर्जी या वस्त्र लहर आना —

राज्य नगर द्वारा पहने जाय या वस्त्र विपणन कायम की गजा दी है।<sup>१</sup> आठ बार न मात्र मलिनान विवाह व सम्पन्न मर्जी का वस्त्र लहर आना तथा दानाम पाने विप्रित किया है।<sup>२</sup>

## (छ) मोर तथा सहरा बांधना —

कवि राजन मवादेवर राखल ममर विप्रम आनन् प्रौर ह्य व मध्य मोर बांधन<sup>३</sup> तथा दिल्लीश्वर पृथ्वीराज हमायती विवाह प्रमग म स्त्रीलमाय मोर पहन प्रर्णित कित हैं।<sup>४</sup> यह उल्लेख है कि सयोगिता स विवाह रचना समय स्त्रीलपति मोर व स्थान पर मुकुट पहने निराय गए हैं।<sup>५</sup> कवि मान न राजकुमार राजगिह का तो मोर र स्थान पर सहरा बांध चित्रित किया है।<sup>६</sup> जक्रि राज्याभिषय व उपरान्त विवाहाय जान समय व स्वण, नग एव लाल गनित सहरा बांधने के साथ गाय शीत पर श्वतछत्र म धारण करके जात हैं।<sup>७</sup> आठवार ने मोर को मालिन द्वारा लान व तस्य पर भी प्रकाण डाला है।<sup>८</sup> वर व सट्टा व या न भी सहरा बांधन की प्रथा का कवि मान ने निर्देश किया है। रूपकुंवरि स्वण एव मणियां जटिन सहरा बांधे हुए विवाह मण्य म पदापण करती हैं।<sup>९</sup> मालिन को मोर लाने पर नग भी प्रणन किया जाता था।<sup>१०</sup>

## (ज) कुर्मा विवाहना अथवा कुएँ की भावरे (कुँअनावरो)

इस लाजाचार म घर की माता कुएँ मे टाग लटका कर बठ जाती है। वर-यात्रा आरम्भ करने स पूव, वर उस कुछ वचन देता हमा कुएँ से टाग निकालने का आग्रह करता है। इस अवसर पर वर कुएँ के सात चक्कर लगात हुए उसमे प्रत्यक चक्कर के पश्चान् साकें भी गिराता है। इस लोग श-दावली म कुएँ की भावरे डालना या कुर्मा व्याहना कहा जाता है। धारात के प्रस्थान ताल म सम्पन्न होने धाने इस दशाचार के विषय म लोगो क विविध विश्वास है। एक मत के अनुसार पहन मोदलो जय तक धीय नही तथा खा पी लाजव तक बहू नदी की लाजोक्ति व अनुरूप बध्वागमन पर रूपनी खान पान सम्बन्धी सुविधाएँ नष्ट होजाने के मय स वधूस ईर्ष्या करती हुई वर की माता अपन पुत्र का कुएँ म वृद्धने की धमकी दकर विवाहाय जाने से रोकन की श्रेष्ठा करती है। इस मत की पुष्टि वर द्वारा माता को दिये जाने वाले इस वचन से भी होती कि वह उसक लिए एक दासी लेन त्रा रहा है अर्थात् अर्धांगिना या गृहस्वामिनी जसे किसी श्री श-द का उल्लेख न करके—वर माता को प्रवारातर मे यह विश्वास दिलाता ह कि नवागत वधू की व-द्र परिवार मे एक दासी की भाति हागी, जिसस किसी भी प्रकार के

१ से १० दे० क्रम० बी० घ० ८१५ आ० १६२१२१ प० रा० का० ६२०१५५  
 वही १०८८१६७ वही २७२१२६ रा० वि० ३१७६ वही ७१२१  
 आ०, १६२१२२, रा० वि० ७१६७, आ०, १६२१२४

भय की भावस्थिरता नहीं है। इस देशाचार की सम्पन्नता का द्वितीय पक्ष वर की विवाहिन जीवन की कठिनाइयों से प्रागाहित करने से सम्बद्ध है। इसका अनुसार वरम कुएँ की सात बार प्रशंसा लगातार हुए उनमें भँकवाना यथा उसका गुमचिन्ताकी ओर से इस चेतावनी का प्रतीक होता है कि, तुम्हें गृहस्थ जीवन की कठिनाइयाँ कल्पित मधुला जा रहा है। अतः यदि उसकी प्राप्ताप्राप्त मुक्त रहना चाहना है तो अतः भी विवाहाय जान को स्थगित कर लो। इसका मूल प्रयोजन चाहे जो कुछ ही यह देशाचार अज प्रदेश की एक अनूठी परम्परा है।

आल्हाबाद में आल्हा, मलवान, ऊदल और साधन चारा के विवाहाय जाने से पूर्व कुएँ यादने का विषय मिलता है। आल्हा की निकागी (बारात निष्क्रमण) के समय उसको मानवत स्नेह करने वाली रानी मल्हना आल्हा की माता से स्वयं कुएँ ब्याहन का अधिकार माँगनी हुई, कुएँ में टोंगे लटकाए व डूब जाती है। आल्हा कुएँ की प्रथम प्रदक्षिणा के आरम्भ में उसकी बाह पकड़ कर यह निवृत्त करता है कि मैं आपने नाम का बाग लगाऊँगा आप कुएँ से पर निराल लीजिए। इसी भाँति अथ वचन देते हुए वह कुएँ की सात परिभ्रमाएँ पूरी करता है और रानी मल्हना का गाद में उठा कर लौट कर देता है। उनके चरण स्पर्श करत हुए आल्हा उससे विवाहाय जान का आशीर्वाद माँगता है जिसके प्रतिदान में उसकी पीठ पर हाथ फेरत हुए, उसका बाज भी बाँटा न होना का आशीर्वाद प्रदान करत हुए रानी मल्हना उस स्वीकृति देती है। मल्लिखान की पालकी कुएँ के समीप पहुँचने पर, उसका भागिनय उस गाँव में उठा कर कुएँ तक लाता है। मल्लिखान की माता कुएँ में पर लटक कर बैठ जाती है। मल्लिखान की पहली भाँवर के पदचिह्न उनके नाम का बाग लगाने तथा दूसरी भाँवर के उपरान्त उनके लिए एक टहलनी बन जाने का निवृत्त करता है। इसी भाँति कुँअनावारो का कुलाचार समाप्त हो जाता है जिससे माता तो रनवास को चली जाती है तथा मल्लिखान पालकी में बैठता है।

ऊदल द्वारा कुएँ ब्याहन के समय उसे भी चद्रावलि का पति, जो बनाफल आताप्रा के सम्पन्न में बहनोंई लगते थे पासकी से उतारकर लात है। इस वार भी रानी मल्हना ही कुएँ में गाँव लटककर बैठती है—जिहू ऊदल नेग में स्व प्राणापण

१ स ६ द० अम० आ०, ११७।३ ६ वही, ११७।७ ८, वही, ११७।७ ९, १२, वही १६३।५ वही १६३।६ ७ वही १६३।८ ९

७ पल में परिभ्रमा कुँअनावारो रानी रंग महल की जाय।

मल्लिखान बड़े तप भलकी में हुकरत धाम घने बहार। —वही, १६३।१० ११

८ जिनहि विधाही है चद्रावलि इत्सन है जिनकी नाम।

गोद उठाए लभो ऊदनि की श्री कुँअटा पर पहुँचे जाय। वही, २५६।३ ४

करने का वचन दकर विवाहाथ जाने की अनुमति प्राप्त कर लेता है।<sup>१</sup>

(भ) अगवानी —

अतिथिया का मांग म जाकर स्वागत करना भारतीय आतिथ्य में एक अभिन्न अंग के रूप में समाहित रहा है जिसका बारात में सदम में भी प्रयोग किया जाता था। इच्छिनी के पिता सु दर वेश में, दिल्ली से आई बारात की अगवानी के लिए जाते हैं।<sup>२</sup> पदमावती समय में समुद्र शिपिर दुग से आई बारात की भी अगवानी की जाती है।<sup>३</sup> इसी भाँति परमालरासो में ब्रह्मा<sup>४</sup> राजविलास में महाराज राजसिंह<sup>५</sup> और आल्हखण्ड में ब्रह्मा की बारात की<sup>६</sup> अगवानी के लिए अथ सखी धयो के साथ क्या न भाई अथवा पिता के जाने का चित्रण किया गया है।

(ज) तोरण एवं कलश वन्दन —

अगवानी के उपरांत घर पश की ओर से सबसे प्रथम सम्पन्न किया जान वाला आचार तोरण एवं कलश वन्दन था जिसमें घर क्या गृह के तोरण द्वार (मड़पाकार या मेहराबदार फाटक)<sup>७</sup> पर जाकर उन आचार का पालन करता था। इसमें घर एवं छड़ी से तारण में लटकी हुई काठ या मिट्टी की कृत्रिम चिड़िया का लक्ष्य वेध सा करता है जो किसी समय क्षत्रियों द्वारा वस्तुतः लक्ष्य वेध परो का मग्नावशय पनीत होता है। क्षत्रिय घरानों में यह प्रथा अत्र तक प्रचलित है तथा जिनियों में भी इसे टेडला या नगाचार के रूप में विद्यमान बताया जाता है।<sup>८</sup> पश्वीराजरासो में

- १ 'गोड डारिके तव कुअटा म मलहना बठि गई हरसाय ।  
सातो भोरी ऊनि फिरि ग श्री परि बहियाँ लग्गी उठाय ।  
प्राण नग मैं तुमकी दीहा माता कानो कुप्रा से पाय ।  
मलहना पावें कुआँ से कानो ऊनि पतकी बठ जाय ।' आ० २५।१८
- २ 'सुनि आवत बहुप्रीन । करि अग्योन मलय वर ।' प० रा० का० ५४६।२२
- ३ अगिवानिय अगिवान । कुअर वनि-वनि ह्य सज्जनि । वही ६३७।८१
- ४ आग ह व चावड लियव रन कुवर अगिवान । पर० रा० १।१३३
- ५ द० रा० वि० ४।८४
- ६ हम अगमानी की आय हैं पठप्रो माहि विथोरा राय । आ० २१७।१८
- ७ तारण का हिन्दी मानक काग म—किसी बड़ी इमारत या नगर का बह वडा और बाहरी फाटक बताया गया है जिसका ऊपरी भाग मड़पाकार हो, और प्राय पताकाआ और मालाआ आदि से मजाया जाता है।  
प० भा० २ पृ० १८५
- ८ डा० अम्बाशरण मुमन ने तारण का अर्थ मिट्टी या काठ की बनावनी चिड़िया न हूण, पादलिप्यगी में लिखा है कि जिनिया के विवाह के समय

इच्छिनी<sup>१</sup> हमावती,<sup>२</sup> और पुंडीर-दाहिनी<sup>३</sup> के विवाह में महाराज पृथ्वीराज, राज विलास में रूपकुवरी<sup>४</sup> और छत्रसाल हाडाकी पुत्री<sup>५</sup> के परिणयावसर पर महाराज राजसिंह तोरण-वदन करते हैं। राजविलास में एक ही लग्न में दो वारातें आने पर, दानों ही वर-पक्ष पहले तोरण-वदन करने के लिए युद्ध तक पर उतारू मिलते हैं जिससे इस आचार की महत्ता समझी जा सकती है। हा, वीरवाच्य में तोरण-वदन की रीति नहीं प्रदर्शित की गई, जा सम्भवतः उपयुक्त विधि द्वारा ही सम्पन्न किया जाता होगा।

कवि मान न तीना प्रमगो में से किसी में भी कलश-वन्दन का उल्लेख नहीं किया है जबकि पृथ्वीराजरासो में तोरण एव कलश-वदन का साथ साथ उल्लेख करते उनका एक ही समय सम्पन्न होना चित्रित किया है।<sup>६</sup> कलश-वदन से अभिप्राय उस आचार से है जिसमें सधवा स्त्रियां शीश पर कलश रखकर वर का स्वागत करती हैं तथा उसकी आरती उतारी जाती है। हम अवसर पर वर-पक्ष की आर सक्लगा में कुछ द्रव्य डाला जाता है। महाराज पृथ्वीराज की आरती उतारी जाती है तथा सधवा स्त्रियां उन पर अन्न और मुक्ता पिप्त करती हैं।<sup>७</sup> दूल्हा-वती राजसिंहजी पर भी स्त्रियां दाम, रूपा (चांदी का रूपा) और मुक्ता योछावर करती हैं।<sup>८</sup> महाराज पृथ्वीराज स्वागताथ लाय गये कलशों में तथा उस थाल में, जिसके माध्यम में उनकी आरती उतारी जा रही थी, मुहुरें डालकर इस आचार को सम्पन्न करते चित्रित किए गये हैं।<sup>९</sup> यह नथ्य भी उल्लेख्य है कि कवि मान की दृष्टि में तोरण-वदन की अधिक महत्ता रही है, जबकि रासोकार ने कलश-वदन को अधिक महत्त्व दिया है। एक ही लग्न में दो वारातें आने पर रासोकार ने पहले कलश-वदन करने का महाराज पृथ्वीराज को अधिकार दिनाया है।<sup>१०</sup>

कवि मान ने आजकल पुष्प एव कागजों से सजाए जाने वाले स्वागत द्वारा का स्वकाल में भी प्रचलन लिखाया है। उसके अनुसार दो रजत स्तम्भों को खड़ा करके उनमें ग्ला के तोरण बांध जाते हैं तथा स्तम्भों के ऊपर स्वण-कलश स्थापित किए

एक टेढ़ला (नेगाचार रस्म) होता है जिस तोरणवीदी कहते हैं। इसमें मांवरों से पहल सध्या के समय लडकी लडकीवाले के द्वार पर आता है और स्त्रियों द्वारा उसका स्वागत होता है। उस समय वह दरवाजे पर लटकी हुई लडकी की बनी एक बिडिया में निगाना लगाता है। यह रस्म 'तोरणवीदी कहलाती है।

—शृ० जी० सं० ब्र० सा०दा०, भा० २ पृ० १५

१ 'तोरण करवद वद तह'। मुत्तिय अचिउत टारि। —पृ० रा०, का० ५४७।२५

२ 'वदन वर आयो नपति। तोरण समरिवार।

श्रीति पुरातन जानिक। कामिनि पूजत मार। —पृ० रा०, का० १०८७।१६६

३ स ५ द० ब्रम० पृ० रा०, ५७५।१४ रा० वि० ७।६५, वही, ३।६६ ६६

४ स १० द० ब्रम० पृ० रा०, का० ५४७।२६, वही, ५८।३१, रा० वि० ७।६५,

५ पृ० रा० का० ५४-।३२, वही, ५७३।३३ १६

जाते हैं।<sup>१</sup> कवि चन्द ने भी तोरणा पर मुक्ताम्रा के वस्त्रधार बाधन की प्रथा दिखाई है।<sup>२</sup>

आन्हुम्बण्ड में बलश वन्दन के स्थान पर बलदा उतारने की प्रथा दिखाई गई है। महाराज पृथ्वीराज अपने फाटक के समीप एक बल्ली पर स्वर्ण कनका टँगवाकर उसकी रक्षा के लिए मणिकुल हाथी छोड़ दत्त हैं। अगवानी वरुण फाटक तक लाई गई बागा को कहा जाता है कि हमारी कुल रीति के अनुसार द्वाराचार से पूव हाथिया को पछानना तथा कनका को उतारना आवश्यक है।<sup>३</sup> चौहानों की इस कुल रीति को मल्लिखान और ऊदल भी कठिनता से ही पूरी कर पाते हैं।<sup>४</sup>

परमानरासो में एक अर्थ अभिनव देशाचार दिखाया गया है। महाराज पृथ्वीराज द्वाराचार के लिए आने से पूव वरपण द्वारा एक लोह स्तम्भ भेदन की शत लया देते हैं<sup>५</sup> जिसकी अभिपूनि बड़ी कठिनता से हो पाती है। हमारा विवेक निवेदन है कि हाथिया को पछानने बलश उतारने, लोह-स्तम्भ भेदन जैसे कुलाचार अशत कल्पनायत तो अवश्य प्रतीत होते हैं किंतु उनकी विद्यमानता में सबथा सदेह नहीं किया जा सकता। हाँ इस आचार के मुख्य अंग—वर द्वारा छोड़ी से तोरण में लटकी हुई बिडिया का लक्ष्य बध करना, उसका बलशाली हुई स्त्रियों द्वारा स्वागत करना और आग्नी उतारा जाना य जिसकी परिमर्माणि वरपण द्वारा बलश और आरती के घाला में मुणार्ण डालने पर हाती थी। आजकल भी यह प्रथा विशेषतः क्षत्रियों में ज्या की त्या जीवित है।

### (ट) वागत को जनवासे में ठहराना —

वारात को ठहराने का स्थान जनवामा कहा जाता था। राजकीय वारातें अत्यंत दीर्घांतर हुआ करती थी। पृथ्वीराजरासो में महाराज जयचन्द का भ्राता पुत्र वीरचन्द एक नाम दम मह्य मतिवा को वारातिया क रूप में लाता है।<sup>६</sup> सबल समर विक्रम के वारातिया की सख्या भी कम नहीं थी—उसमें पाँच सौ बरिह पणित तो मह्य कोविन्, एक सहस्र भागव तथा आठ मह्य अर्थ लोग सम्मिलित लिखाए गए हैं।<sup>७</sup> परमानरासो में ब्रह्मा और लायन व वारातिया की सख्या अग्रश एक रास तथा तीन नाम भी गई है।<sup>८</sup> राजविनाम में कवि मान, महाराज राजमिह की वारात में जाने वाले सनिहा की सख्या को अघार बताना हुआ उम मात्र नाम व मेधा की भीति चतुर्णि उमडती हुई तथा सागर की मूर्ति निगत तत्र प्रसरित पापित करता है।<sup>९</sup> आन्हुम्बण्ड में भी चतल ही नहीं, अपितु उनस मर्वा धन विविध नरेणा की भी सनाए वारातिया व रूप में जाती हैं।<sup>१०</sup>

१-२ रा० वि० ७।६७ १० रा० वा० ६६।३५ ५३

३ स ५ द० भा० पू० २१७ १५ वही २१।३ स २०।२१ १० रा० १।१६

६ स ११ १० वम० १५० रा० वा०, ७६।२६६ वही ६५।६३, पर० रा०

१३।१०५, १०६ वही २४।६६, रा० वि० ३।७८ भा० २०।७।१३,

डा० प्रदीपसिंह ने भारत की प्राचीन सभ्यता पर प्रकाश डालते हुए एक ऐसी बारात का उल्लेख किया है जिसमें ७४०० बोनिया, ३०० भाट, ७००० आंगितवाजी वाले तथा सफ़ेदो मंगालची थे।<sup>१</sup>

ऐसी, बहुसंख्यक बारातियां स युक्त बारातों के निवास की व्यवस्था करना वस्तुतः एक कठिन समस्या रहती होगी। ये बारातें भी आजकल की भांति रात्रि को आकर प्रातः काल प्रयाण पर जान वाली न हाकर पाच म सालह निवस पयन्त ठहरती मिलती हैं। इच्छिनी के पिता बारात को पांच दिन तक स्वनगर में रखते हुए, उसके साथ-साथ नगर के समस्त लोगों को भी भोजन देते हैं।<sup>२</sup> प्रियाकुवरि की बारात बारह दिवस पयन्त दिल्ली रखी जाती है, जिसको बाद न महाराज पृथ्वीराज के सम्बन्धी सामंतों द्वारा भी भोजन देना उल्लेख किया है।<sup>३</sup> परमालरासो में ब्रह्मा की बारात सोलह दिवस तक दिल्ली के निकट रक्ती हुई चित्रित की गई है।<sup>४</sup> इस प्रसंग में यह तथ्य उल्लेख्य है कि बौद्धकाल में तो कुछ बारातें चार मास तक ठहरती थीं।<sup>५</sup> इन बारातों के लिए हम दो प्रकार के जनवास स्थानों का निर्देश पाते हैं। इच्छिनी के पिता महाराज, पृथ्वीराज की बारात के लिए सतखण्डे महल में जनवासा निर्धारित करते हैं। उस महल की साज सज्जा पर प्रकाश डालते हुए रासोकार ने उस जाली और गवाणों से युक्त पंचवर्णीय चित्रकारी से चित्रित रेशमी गिलम और दुलीचा से आपूरित, पुष्पराशि से मंडित द्वादश सेजों और उनके आस-पास गद्दीदार मूढों से सज्जित कुमकुम एवं अथ मुगधित द्रव्यों के छिडकन तथा कपूर और अग्न धूप से सुवासित तथा इत्र-फुल्लों की मशालों के प्रकाश से जगमगाता प्रदर्शित किया है।<sup>६</sup> आल्हकार ने बारात की तम्बुओं में ठहरते दिखाया है।<sup>७</sup>

बारातियां का मधुपक प्रदान करने की सनातन प्रथा को, बीरकापकारा ने सम्भवतः नगण्य तथ्य समझकर अनुलिखित छोड़ दिया है। इच्छिनी के पिता जनवासे में पाना के एक लाम बीड़े अवश्य पहुंचाते हैं।<sup>८</sup> आल्हकार की बारात के लिए मधुपक का जन प्रचलित रूपसार देत भेजने की प्रथा प्रदर्शित की गई है।<sup>९</sup>

१ दे० हिंदुस्तान की पुरानी सभ्यता, पृ० १३४

२ पंच निवस च्यारों बरन। भूजत अन अघार। -

छरम अन छह रितिन सुप। अन्नू व आचार। —प०रा०, का० ५६०।१२०

३ दे० पृ० रा० का० ६६५।१८६

४ दे० प० रा० १५।१८८ ६६

५ दे० हिंदुस्तान की पुरानी सभ्यता —डॉ० वेनीप्रसाद, पृ० ८४

६ दे० प० रा०, का० ५४८।३५ ३८

७ दो जनवासी पथरीगढ़ में श्री तम्बू ठाढ़े देउ कराय। —आ०, १६७।६

८ एक लाप पान बीरा बनाइ। धनसार मद्धियोग लमाइ।' —प०रा० का० ५४६।३८

९ 'शरवत लाय हूं हम तुमकी सो कुमरन की देउ बटाप। —आ० १६७।१३

## (ठ) ऐपनबारी भेजना —

आल्हखण्ड में ऐपनबारी भेजने की रीति का उसमें वर्णित सभी विवाह प्रसंगा में प्रचलन दिखाया गया है। अथ किसी प्रथम में इसका उल्लेख नहीं मिलता, क्योंकि इस लिए यह रीति सावभौमिक नहीं है। अज प्रयोग में यह रीति वरनुष्ठा का नाम से अथ तक प्राप्त यथावत् रूप में ही मिलती है। इस देशाचार का मूलादृश्य वरपथ का द्वाराचाराय अग्नि की सूचना देना होता है। इसका अंतर्गत एक मिट्टी के पात्र में जो या धान<sup>१</sup> भरकर पात्र पर ऐपन से चित्रकारी की जाती है तथा इसके मुह पर डमरुन की एपन<sup>२</sup> की सहायता से चिपकाकर किया गृह भजा जाता है। किया पथ वान उस पात्र में भर जो या चावलो को पलट लेते हैं (जो बाद में भाँवरा या टीके के समय बोन के नाम अग्नि हैं)<sup>३</sup> तथा उसमें धान भरकर लौटाए जाते हैं। वारात के प्रयागमन-काल में इससे चावलो को निकालकर पात्र का अग्निवायत किसी छोकरे के पेड़ पर लटकाया जाता है। वरनुष्ठा को किया गृह लेकर जाने वाले व्यक्ति की स्त्रिया बेलन और डडा से उसी भाँति पिटाई करती हैं जैसे आल्हखण्ड में ऐपनबारी लकर जान वाले रूपना नामक बारी के साथ युद्ध किया जाता है। आल्हखण्ड में इस देशाचार की अधोलिखित प्रथा दिखाई गई है जिससे मुख्य तथ्य पाँचों विवाह प्रसंगा में प्रायः समान हैं—

प्रत्येक बार ऐपनबारी भेजने से पूर्व उमरा मुहने गांधित कराया जाता है।<sup>४</sup> मार काट के मय से पहले तो रूपना बारी उस लकर जाने को प्रस्तुत ही नहीं होता किंतु प्रास्ताविक करने पर वह वर की घोड़ी डाल और तलवार लकर जाता है।<sup>५</sup> ऐपन बारी पहुंचने पर युद्ध होता है किंतु रूपना जस-तसे वरने माले की नोक से ऐपनबारी को उठाकर अपने अधिकार में कर लेता है और वर-पथ में आ मिलता है।<sup>६</sup>

## (ड) बारीठी या द्वाराचार —

बारीठी से अभिप्राय है—किया के पिता की ड्योनी या गृहद्वार पर होनेवाला

- १ अलीगढ़ के आस पास तो वरनुष्ठा नामक पात्र में जो भरकर भेजे जाते हैं जबकि मुजफ्फरनगर की ओर धान भरकर भेजने की प्रथा है—शोधक
- २ गेहूँ का चावल के आटे और हल्दी के मिश्रण से तयार किया गया घोल ऐपन कहलाता है। नाल या बंगाल आदि सागर में चावलो का अग्नि प्रयुक्त दिखाया गया है—दे० प० १७६ जबकि ग्रामा में अधिकतर गहूँ का ही अग्नि प्रयुक्त किया जाता है।
- ३ अलीगढ़ के समीप वरनुष्ठा से निकाल गया जो टीके के समय लडकी के माता पिता और माई भावज आदि द्वारा बोधे जाते हैं जबकि मुजफ्फरनगर की ओर धाना को किया का भाई भाँवरा के अवसर पर बोधा है—शोधक
- ४ 'साइति अबही अति नीकी है ऐपनबारी देउ पठाया। —आ० ३८६।१३, और भी दे० १६४।१२ १२०।८ ६ २११।१२, २६०।६ ७ ३८६।१२ १३
- ५ दे० आ० १६४।१३ १५ १२०।१७ २२, २११।१५ १८, २६०।१६-१६
- ६ दे० आ० १६४।२१ २२

आचार। राज प्रदेश में वरनुष्ठा प्रेषित करने के उपरांत अगला कृत्य यही होता है, जिनमें साधारणतया वर का पाचा ऋत्न स्वर्ण मुद्रिका यज्ञोपवीत, भाण्ड, वाहन तथा द्रव्य प्रदान किये जाते हैं। पृथ्वीराजरासा में इच्छिनी विवाह प्रसंग में रासोकार ने भी इस आचार का वर्णन किया है।<sup>१</sup> ज्योतिष में निष्णात गणका द्वारा गुप्त मुहूर्त शोचन कराकर महाराज सनखाराज वारोठी के अक्षर पर अपने जामानू का पाच मदाकुल हाथी, बीस पवनगति वाले पराकी अश्व एक जरी का यज्ञोपवीत, हाथ के लिए नगजन्त स्वर्ण शृङ्खला एक सात स्वर्ण जटित मुगगात्र प्रदान करते हैं।<sup>२</sup> परमालरासो में राजकुमार ब्रह्मा की दिल्ली बारात आन के अक्षर पर जब व वारोठी के लिए आते हैं तो विप्रा द्वारा चौब पूरा जाता है<sup>३</sup> तथा उन्हें अनेक विविधों पाच सहस्र स्वर्ण मुद्राएँ, रिशान मुत्ताओं बानी मालाएँ तथा अस्थ ऋत्न प्रदान किए जाते हैं।<sup>४</sup> अश्व एक गजा के एकत्र होन से मन्त हुए गार, भाग के विरन्धाठ तथा स्त्रिया के मंगलगानों के मध्य यह आचार सम्पन्न होता है। कणवदासजी ने भी बाराठे के आचार में दूल्हा की पहिरावनी करने की प्रथा दिखाई है।<sup>५</sup>

### (ड) भावर तथा उनस सम्बन्धित मागलिक कृत्य —

विवाह का मुख्य अंग भावरें या फेरें होते हैं, जिनमें अग्नि को सागी करके वर कन्या का कर ग्रहण करता हुआ, उस आजीवन जीवन महचरी के रूप में समाह्वन करने का वचन देता है। वीरकाय में इस भावर हथवा, और फेरा की सजा दी गई है। इस अक्षर पर सम्पन्न होन वाले मङ्ग रचना चढावा चन्ना कन्या शृंगार पट पर बैठना गणेश पूजन अथि वधन वेद मन्त्राचार सहित हानवाला यज्ञ, यज्ञ वदी की सान प्रणिष्ठा आदि कृत्य बहुत कुछ अज्ञात म आजकल के ज्ञा मद्य मिलन हैं—रा इतना अक्षर अवश्य है कि पृथ्वीराजरासो में जहा प्रत्येक भांवर के समय दहेज दिया जाता है, वही आह्वण्ड म कन्या-मन का कोई सम्पन्न वर का शिरच्छेद करने की चेष्टा करते मिलता है। भावरा के समय सम्पन्न हान वाल आचार इस प्रकार है —

### (ढ) (१) मङ्ग रचना -

अपहृत पदमावती और महाराज पृथ्वीराज का दिल्ली में विधिवत विवाह होते समय, हरे बासा का मण्डप बनाया जाता है।<sup>६</sup> कवि मान ने महाराज राजसिंह के रूप

१ स ४ पृ० रा० का० २४७।२४ पर० रा० १५।१४३, वही १५।१४४ वही, १५।१४५

६ वारोठी को चार करि कहि वेशन अनुरूप।

निवज दूलह पहिराइयो पहिराय सब भूप।

—हिंदी शब्द सागर प० २३६५ पर उद्धृत।

७ दे० प० रा०, का० ६४०।६६



कुंवरि से हुए परिणय के समय स्वर्ण-स्तम्भा पर जरवरी पट तानकर मंडप बनाया जाना प्रदर्शित किया है।<sup>१</sup> आल्हखंड में वीरों के स्थान पर चंदन स्तम्भ गाढ़कर तथा उनके ऊपर पान के पत्ता की मडलाकार रचकर मंडप निर्मित किया जाता है। मंडपस्थली को गाय के गोबर से लीपकर उसमें मोतिया से चोंच पूरा जाता है तथा वहाँ पर भगल घट स्थापित करके मंडप रचना को पूणत्व प्रदान किया जाना है।<sup>२</sup> कवि मान न विवाह मंडप को रंग मण्डप की संज्ञा प्रदान की है जिसमें महाराज राजसिंह और सखिया सहित रूप कुंवरि भावरा के लिए पधारत हैं।<sup>३</sup>

## (२) चढावा चढना तथा कन्या शृंगार—

वर पक्ष की ओर से कन्या के लिए वस्त्राभूषण प्रेषित करना, चढावा चढाना कहलाता था। आल्हखंड में इसकी दो प्रथाएँ प्रदर्शित की गई हैं। मुनमा<sup>४</sup> बेला<sup>५</sup> तथा फुलवा<sup>६</sup> के लिए भावरा से पुनः आभूषणादि भेजे जाते हैं जबकि गजमोतिन का चढावा उसकी भावरों पड़ जाने के उपरान्त चढाया जाता है। आजकल भी प्रातः-भेद से ये दोनों प्रथाएँ जीवित हैं—बुदेखंड की ओर प्रथम प्रथा प्रचलित है जबकि अलीगढ़ के आस पास द्वितीय प्रथा का आश्रय ग्रहण करते हुए चढावे का बरीपुरी का नामान्वित ध्यान देते हुए भावरो के पश्चात् बडहार (बारात आने से आगेवाला दिवस) वाले दिन चढाया जाता है।<sup>७</sup>

## (३) पटे पर बैठना —

वर और कन्या का 'पटे पर बैठना', भावरा के समय का प्रथम आचार है। विवाह सस्वार का वास्तविक आरम्भ इसी दृश्य से होता है। पथ्वीराजरासो में इच्छिनी और महाराज पथ्वीराज<sup>८</sup> तथा आल्हखंड में लाल और कुसुमदे<sup>९</sup> को भावरों का आरम्भ उनके पटे पर बठने से ही दिखाया गया है।

## (४) गणेश एवं कलशपूजन —

बिसी भी शुभ काय के आरम्भ में गणेश पूजा की परिपाटी के सदृश कन्या और वर भावरों से पुनः गणेश का पूजन करत हैं। इस अवसर पर कलश की भी पूजा की जाती है, जिसे डा० वासुदेवशरण अग्रवाल न सृष्टि तथा भरे पूरे व्यक्तित्व का प्रतीक<sup>१०</sup> बताया है। महाराज पथ्वीराज और इच्छिनी<sup>११</sup> तथा लालन व कुसुमदे<sup>१२</sup> भावरा से पुनः

१ स ३ रा० वि० ७१८ वही १८७।५ ८ रा० वि० ७।७१

४ मे ६ दे० क्रम० आ० १४६।२१ वही २२२।१८ वही २७४।११ १२ वही

६३।१० १२ 'प० रा० का० ५५५।८२ आ० ४०६।२०

१० 'दे० कला और सस्कृति, पृ० १८३

११-१२ दे० क्रम० पृ० रा० का० १५५।८२ आ० ४०६।२१

सलोदा एव कलम की पूजा करत निम्नाए गए हैं।

### (५) अग्नि-वधन —

भावरा से पूव वर और कन्या के भावी जीवन में परस्पर<sup>१</sup> सम्बद्ध रहने के वास्तु प्रतीक उनके दुपट्टा में गाँठ लगाने की पृथ्वीराजरासो में पट गँठि और 'अचल वधन तथा राजविलास' में 'गँठजोरा' की सजा प्रदान की गई है। कवि मान के शब्दा में—  
"सूय, चद्र तथा अय दवा को साक्षी करके किया जाने वाला यह 'गँठजोरा' दपती-युगल के पारस्परिक सम्बन्ध में दृढ र्थ्य का अभिमूचक होता है।"<sup>३</sup>

### (६) पाणिग्रहण —

आजकल जिम भाति पाणिग्रहण शब्द के उच्चारण मान से विवाह के समस्त आचारों का अभिलोचन हो जाता है—कवि चंद्र ने भी उसी तरह 'पाणि-ग्रहन और 'हथलेवा' शब्दों के प्रयोग द्वारा विवाह की समस्त क्रियाओं की सम्पन्नता प्रदर्शित की है। उसने महाराज अनन्तपाल<sup>४</sup> एवं नाहरराय<sup>५</sup> की पुत्रियाँ के विवाहों का मात्र 'पाणि ग्रहन' शब्द का प्रयोग करके अभिमूचित किया है—किसी अय आचार का उल्लेख नहीं किया। इसी भाति पुंडीर-दाहिनी के विवाह का विस्तृत उचन न करके, उसने मात्र 'हथलेवे' का उल्लेख करके,<sup>६</sup> तथा मयोगिता द्वारा यह प्रतिगा उचरकर कि—  
'हथलेवा करु गी तो महाराज पृथ्वीराज के साथ—अथवा समुद्र में डूब मरु गी,<sup>७</sup> 'हथ लेवा' शब्द का पूण विवाहार्थी प्रयोग किया है।

'राजविलास' में कवि मान ने यद्यपि स्वतंत्र रूप से 'पाणि-ग्रहन' शब्द का प्रयोग किया है, तथापि पाणिग्रहण के अन्वय पर—राव छनसाल हावा की पुत्री के प्रसंग में 'हथलेवा',<sup>८</sup> तथा स्वकुंवरि के सदम में 'वर ग्रहन'<sup>९</sup> अभिधान पशुक्त किए हैं। मान ने हथलेवे के समय प्रचुर धनराशि, हथ-नय सुखपाल, मणि मुक्ता, स्वर्णभरण पहने हुई दामिया, गाँव और रेशमी वस्त्रादि देने की प्रथा प्रदर्शित की है<sup>१०</sup> जबकि साधारण तथा ये वस्तुएँ बारीकी और पलकाचार के समय प्रदान की जाती हैं। पृथ्वीराजरासो में भी प्रियानुं वरि की भावरो के समय बहुत सा दायज दिया जाता है।

### (७) भावर या फेर पहना —

पृथ्वीराजरासो के इच्छिनी विवाह प्रसंग में पात होता है कि भावरा के समय वर और कन्या पक्ष के कुल योथ और प्रवर आदि का उल्लेख करत हुए ग्रहा, ग्रहदेव

<sup>१</sup> से ३ पं० रा०' का० ५५५६० वही ००००२०० 'रा० वि० ७।७३

<sup>४</sup> स ११ ६० प्रम० 'पं० रा०', का० १३५६०३ वही, ३६५१७०६, वही, वही, १३५१२० 'रा० वि०' ३।२६, वही, ३।१०२ वही ७।७४, 'गं० वि०', ३।१००

ताम्रा, अग्नि और ब्राह्मणों की पूजा की जाती थी। चंद्र सूर्य बलि, वरुण बुध एव पवनादि देवा की साक्षी करके, तथा कुलगुरु द्वारा उपदेश करने के पश्चात् कन्या वामाग में आकर परनी बन जाती थी।<sup>१</sup> भाँवरा के समय मन्त्रोच्चार का तो प्राय सभी ग्रंथों में वर्णित विवाहों में उल्लेख किया गया है।<sup>२</sup> परमालरासो में ब्रह्मा की भावरा के अवसर पर—चदेलों के कुलगुरु सिद्धराम महाराज चदेल का<sup>३</sup> तथा गुरु रामपुराहित चौहानों का शाखोच्चार करते हैं।<sup>४</sup> इसके अतिरिक्त चौहानों की वशावली की कवि चंद विरुदावली मुनाता है किन्तु चदेलों की वशावली का भी वर्णन सिद्धराम ही करते हैं।<sup>५</sup> भावरो के विषय में एक नई रीति यह मिलती है कि पथ्वीराजरासा और आल्हखण्ड के विवाहों में भावरो के पश्चात् कन्यादान प्रदर्शित किया गया है। भावरो के पश्चात् किया जाने वाला कन्यादान—वस्तुतः उसके गद्दगत ग्रंथ के विपरीत प्रतीत होता है। उस समय तक तो कन्या कन्या न होकर परिणीता बन चुकी होती है अतः उसे कन्यादान की सजा दी ही कैसे जा सकती है? इस देशाचार में भिन्नता का मूल कारण सम्भवतः आल्हखण्ड में वर्णित वह पद्धति रही है जिसमें भावरों पडने तक तो कन्या पक्ष वाले वर का शिरोच्छेद करने को प्रस्तुत रहते थे,<sup>६</sup> किंतु बलात् भावरों डाल लेने पर विवश होकर कन्यादान कर देते थे।

### (८) कन्या-दान —

जसा कि पीछे उल्लेख किया जा चुका है वीरकाव्य में अधिकतया भावरा के पश्चात् कन्यादान करने की प्रथा मिलती है। पथ्वीराजरासो में इच्छिनी के महाराज पथ्वीराज के वामाग में आ जाने पर, उसके पिता और माता अपने आँवल बांधकर यह निवेदन करते हुए कन्यादान करते हैं कि स्वमुता को मैं आपके दासीपन के लिए सौं रहा हूँ।<sup>७</sup>

१ हुब कुल वारि विचार कर। व्याही बाय नरेस।  
ग्रहन पूजि ग्रह देव पुजि। पूजि अगिन दुज देव।  
सापोचार उचार धुनि। प्रसन भए नुप वेव।  
चद सूर तहा सापि दिय। बह बसन बुध वाह।  
प्रोहित गुर उपदेग करि। वाम अग तव आइ। —प० रा० का० ५५५।८२ ८४

२ दे० वही ६४०।६६ रा० वि० ७।७७

३ से ६ 'रा० वि० १५।१६६, पर० रा० १५।१६५ वही—वही 'आ०' पृ० १८८ ८६

७ (क) अत्रु पति पट गठि त्रिय। विनय जारि कर कीन।

इह कन्या नप सोम सुन। दासपन पन दीन।' पृ० रा०, का० ५५५।८६

(ख) सलखराज क सदमगन कथन में स्त्रियाँ की अधोदंगा तथा विवाह क उद्देश्य में माता हुमा अंतर स्पष्ट भनक रहा है जिसमें कन्या को दासी क रूप में समर्पित करना दिखाया गया है। मनुस्मृति में कन्यादान का उद्देश्य 'साय-साय धर्मावरण करना बताया गया है जबकि जगन्नाथ श्रुत विवाह पद्धति में कन्या

आह्वयण्ड मे मल्लिखान<sup>१</sup> और लायन<sup>२</sup> की परिणीताद्या के पिता भी भावरा के पदचात उनके पद प्रक्षालित करते हुए कयादान करने हैं। ऊदल के विवाह प्रसंग म कयादान करने के पचात भयरे पढने दिखार्द गई हैं।<sup>३</sup>

आह्वयण्ड म भावरा के समय लडकी क माइ द्वारा धान बोन को प्रथा का भी निदगन हुमा है। (मुजपफरतगर जिल म यह प्रथा आजकन भी रसी रूप म मिलती है। जनकि अलीगढ के समीपस्थ प्रदग म यह कृय पलकाचार या टीक क समय किया जाता है।) आह्ला विवाह प्रसंग म सुनमा क भाई भोगामल को ऊल मल्लिखान से यह कहते हुण जीवित बचा लेता है कि, उसक मारे जाने पर धनबवा पहनकर, धान बोन की प्रथा का आचार कस सम्पन होगा।<sup>४</sup> ब्रह्मा विवाह प्रसंग म भावरा क उपरा न दद बाधे हुण मूरजमन स बनाफल बलान धान बुवाकर कयादान कराते हुए चित्रित किए गए हैं।<sup>५</sup>

(त) लहकौरि या कुँवर कलेवा —

स्थल भेद म 'लहकौरि' सम्बधी देशाचर के स्वरूप म भिन्नता है। डा० मन माहन गौतम के अनुसार पूर्वी भारत म—भावरा के पदचात वर और बधू स गृह-देवताआ की पूजा कवाकर, जुमा' खिलवान का कृत्य लहकौरि कहा जाता है। डा० गणेशदत ने भी अपने शोध प्रब ध म एसा ही मत व्यक्त किया है।<sup>६</sup> इसके विपरीत आह्वयण्ड म वर' क कलवा करन जान को 'लहकौरि' नामर आचार दिखाया गया है जा बज प्रदेश म 'कुँवर-कलवा क नाम स इसी रूप म प्रचलित है।<sup>७</sup> आह्वयण्ड के लहकौरि सम्ब धी दो प्रसंगों म न प्रथम म नाइन वर का कलव क लिए अकल ले जाता चाहती है,<sup>८</sup> किंतु ऊल घाने कुन म वर क माथ सहवाला जाने की रीति बताकर ब्रह्मा क माथ कलव कलिये जाता है।<sup>९</sup> लाखन लहकौरि साने जाते समय अपने साथ एक मुकना

दान क समय पिता को इस मत्र का उच्चारण करना चाहिए कि— मैं स्वर्णा भूषणी से अतृप्त यह कया, तुम विष्णु को ब्रह्मालोन जीतने की इच्छा से द गहा हूँ—<sup>१०</sup> हिंदू सस्कार, डा० राज० पाठ पृ०

१ स ५ दे० क्रम० 'आ० १६०।३ ५ वही, ८०८।८ ११ वही २७८।१५-१८ वही, १३५।१३ वही २२७।८६

६ 'गृहदेवता की पूजा कराकर जो बोहवर के नाम से प्रसिद्ध थी, वर को गालियाँ सुनाई जाती थी। वही पर वर और बधू को जुमा लिलाते थ। मह लहकौरि कहलाती थी। यही पर साने का भी नेग होना था।—मध्यमुगीन हिंदी साहित्य म समाज चित्रण, टवित प्रति, पृ० १११

७ 'कुँवर कलेवा या कनऊ म वर क साथ कुछ अय अल्प बयस्फ बच्चे कसेज करने जात हैं। व्युत्पत्ति की दृष्टि से भी लहकौरि शब्द लघु कुँवर का अपभ्रष्ट समास रूप प्रतीत होता है—'गाथक

८ ६ दे० क्रम० 'आ० २२६।५ ६, वही, २२६।८ ६

हार भी नै जाता है जिम यह गृह-द्वार रीतार गनी हुई मन्त्र्य द्वारा नैग मांगने पर, उसे दे देता है' और स्वण-माल म परोसी हुई रीर' गार लौ घाता है।'

### (थ) समधीरा--

बुदेनसण की भाग भागन भी विवाहात म गर और रणु व पिता रण दूसरे के वगस्थना से दही और पान लगातर मन मिला है। (गोषा न बोता की भाग विवाहात में गह वृत्त होते समय दगा है।) भाद्वसण म दने समधीरा कहा गया है तथा गीहाना के गुलागारा को उन्टे यतान हुए महाराज पृथ्वाराज और परमान म भावर। सपूव समधीरा हात लिमाया गया है। पारस्विक प्रीति प्रकटा के माध्यम समधीर की भालोच्यकालीन क्षत्रिय म विभीषिना का अनुमात इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि महाराज परमाल दिल्लीश्वर के विगत वध और क्षीम वल को दृष्टिगत करते हुए, उनसे समधीरा करने म अपनी असमयता यक्त करत हुए लौट जात हैं।' अनन्त बडे माई को पिता-तुल्य मानने की धारणा के अनुसार<sup>४</sup> इस भाचार की सम्पन्नता के लिए माल्टा माता है। दिल्लीपति और माल्टा एक दूसरे के वगस्थना मे दही मन्कर - उसने ऊपर पान चिपटा देते हैं और एन-दूसरे से तत्र तत्र बार-बार गले मिलत हैं जब तक दोना अद्ध मूर्छित नही हो जात।' अतत दिल्लीश्वर मावरें डालने प्रस्तुत हो जात है। यह प्रसंग कुछ प्रतिशयोक्तिपूण हो सकता है किन्तु गले मिलत समय वर और कया पक्ष के क्षत्रिय पिता स्व वल प्रदशन भी करने लग जाते होंगे इसम सन्देह नहीं किया जा सकता।

### (द) दहेज —

पृथ्वीराजरासो और राजविलास मे दहेज मे प्रदान की गई वस्तुओं की वृहत तालिकाएँ मिलती हैं, उनसे स्पष्ट होता है कि दहेज में दास दासी और पंडित आदि व्यवित,<sup>५</sup> गज अश्व रथादि यान<sup>६</sup> हीरे जवाहरात तथा वस्त्राभूषण<sup>६</sup> और अनेक प्रकार

१ २ दे० आ० ४०६।५ ६ वही ४०६।७ १०

३ उलटे नैग होय दिल्ली म उलटे सब होय ब्योहार।

पान लगाय लेउ छाती में तब बेला को करौ बियाहु।

—आ० २२१।१८ १६

४ से ६ दे० 'आ०' २२१।२१ २३, वही, २२२।६ वही, २२२।१० १४

७ दे० क्रम० 'प० रा० का ६६।१।५६ यो० क० छ० २७ पर० रा० १५।१८६ 'रा० वि०', १।१७०

८ दे० क्रम० 'पू० रा० का० १३२।३३८ ६६।२।२३ 'रा० वि० १।१६८ ६६, ३।१०२, ७।८७ ८६

९ दे० क्रम० 'प० रा० का० ५५।१।१६ से ५६०।१२५ १६५०।२४८५ 'रा० वि०', ७।६५ ६७

के मोने चादी, कासे और पीतल के बरतन<sup>१</sup> प्रदान किए जाते थे।

### (घ) वारात के प्रत्यागमन के समय दान देना —

वारात के विदा होते समय गरीबा एन बदीजन आदि को विविध प्रकार का दान दिया जाता था। इच्छिनी की विदा के समय मगते निहाल हा जाते हैं।<sup>२</sup> पुडीर-दाहिनी की विदा देना में जिस किसी वस्तु की माग की जाती है उसे वही प्रदान की जाती है।<sup>३</sup> जबकि इद्रावती की विदा के समय वदिया को अपार दान दिया जाता है।<sup>४</sup> महाराज राजसिंह छत्रसाल हाडा की पुत्री को विदा कराकर लाते समय याचका पर जनघर की भांति कचन-वर्षा करत दिखाए हैं।<sup>५</sup> रूपकुवरि के विदा कराकर लाते समय भी मान ने उनको इसी भांति याचका की इच्छापूर्ति करत चित्रित किया है।<sup>६</sup>

### (न) कया को माता की शिक्षा —

कया के विवाहित जीवन को सुखद रखने की दृष्टि से यद्यपि उसका विवाह से पूर्व भी विनय मगल की गिथा प्रदान करने का प्रचलन था तथापि पुत्री की विदा वेल में भी विद्वल माता उसे ग्राहस्य जीवन के लिए उपयोगी शिक्षाएँ प्रदान करना नहीं भूलती थी। इद्रावती की माता उसको पातिव्रत्य धर्म को ही सबसब मानने का उपदेश देती हुई समझाती है कि स्त्री के सुख-दुख उसके पति के जीवन में ही केन्द्रित रहते हैं। अचल सौभाग्यवती रहने के लिए तुम भेरी इस गिथा को कदापि न भूलना कि पति की इच्छा अनिच्छा से ही पत्नी का जीवन सुखागार अथवा नारकीय बना करता है।<sup>७</sup>

### (प) वर और वधू का स्वागत —

वीरवाक्य में वर्णित सभी वारानें नरेगा की हैं अतः वर-वधू का उनके पुत्र की स्त्रिया द्वारा स्वागत करने के साथ साथ समस्त नगरवासी भी उनके स्वागत में विविध प्रकार के कृत्यों की आयोजना करते मिलते हैं। महाराज पृथ्वीराज द्वारा इच्छिनी का विवाह करके लौटने पर अजमेर की स्त्रिया उन पर मुक्ता प्रशंसा की वर्षा करती हैं तथा

१ दे० पृ० रा० का० ५६०।१०० ०४ पर० रा० १५।१८६

२ से ६ दे० क्रम० पृ० रा० का०, ५६१।१२८, वही ५७५।१६, वही, १०२।७०  
रा० वि० ३।१०४ वही ७।६८

७ 'मात पूति परठिय सुमति । विधि विवेक विनयान ।

पतिवत सवा मुप धरम । इहै तत्त मति ठान ।

पति सुप्प-सुर्ण जनम । पति वच वचाइ ।

इहै सीप हम मन धरौ । ज्या मुहाण समवाइ ।

मंगल गान करते हुए वर और वरणी की वदना करते हुए उनका स्वागत करती हैं<sup>१</sup> पद्मावती प्रसंग में वर वधू की स्त्रियाँ शीशा पर बलश धारण करके स्वर्ण थाल में रखे दीपका सभारती उतारती है। इसी भाँति सयोगिता को लेकर दिल्लीश्वर के दिल्ली पहुँचने पर नाना शृंगार से सज्जिन स्त्रियाँ सिरा पर स्वर्ण कलश रखकर मंगल गान गाती हुई स्वागताथ आती हैं। उन पर चँवर ढाल जाने के साथ साथ वर और वधू भी सभारती उतारी जाती है। यही नहीं कुछ स्त्रियाँ स्वकशा से उनकी चरण धूल को भी साफ करते मिलती हैं।<sup>२</sup>

परमालरासो में ब्रह्मा की वारात्त लौटकर जान की सूचना सुनकर रानी मल्हना मिष्टाना की दो लाख तश्तरियाँ तयार कराती है जिसे धुधाव तो को खिलाकर तृप्त किया जाता है।<sup>३</sup> नगर की सभी वीथिकाओं में जरकसी बस्त्र विचारकर, वारह कोस पथत बाजार में बितान तानते हुए पावडे पिछा दिए जाते हैं तथा माग के उभयत की दीवारा को चदन जल से लीपकर वर वधू को स्वागत की सज्जा की जाती है।<sup>४</sup> महोय क प्रत्येक धाम पर सप्त वर्ण ध्वजाएँ भी फहराई जाती हैं।<sup>५</sup> ब्रह्मा के नगर प्रवेश के समय सौधा पर चढ़ी हुई पुरनारियाँ पुष्प एवं लाजाग्रा की वर्षा करती है।<sup>६</sup> ब्रह्मा के आगे ले जाई जाती हुई बेला की डोली पर लाजा की सभ्या में स्वर्ण सिक्का की वर्षा की जाती है जिन्हें लोग उठाते चलते हैं।<sup>७</sup>

राजविनास में महाराज क रूक्मवति से विवाह करके लौटने के अवसर पर वर वधू के स्वागताथ समस्त नगर का सज्जित किया जाता है। उगुग द्वारा पर हीरा प्रवाल मणि और मुक्ताग्रा के वदनवार बाँधे जाते हैं।<sup>८</sup> तोरण द्वारा पर लटकी हुई पुष्पमालाएँ ज्योत्सना का सुरमित कर देती हैं जबकि उन पर लटकाए हुए मुकुट खड जटित जरवाफ़ी वस्त्रा की काँति सूर्य की किरणों पडने से सहस्रगुणी होकर दृष्टि का ठहरन ही नहीं देती।<sup>९</sup> बाजार को भी रेशमी जरकसी मलमली आदि वस्त्रा द्वारा चिन विचित्र प्रकार से सज्जित किया जाता है।<sup>१०</sup> स्थल-स्थल पर धवना क ऊपर बठी हुई शृंगारवष्टित पीर वधू एवं कुमारिकाएँ मंगल गान गाती हैं।<sup>११</sup> उत्तमागा पर जन्वुभ धारण की हुई गुहासिनिया द्वारा महाराज की वदना की जाती है जो उनके कलगा में स्वर्ण मुद्राएँ डालते हैं।<sup>१२</sup>

### (फ) कुलदेवी की पूजा —

कवि चंद की दृष्टि नव-परिणीता वधू और महाराज पथ्वीराज के समाग वणन की ओर रही है अतः उगने इनमें से किसी भी धाचार का वणन नहीं किया। परमाल रासा में रानी मल्हना ब्रह्मा क विवाहाय जान स पूज तथा त्रिवाहोपरान्त दाना अवसरा पर

१ ७ २० १०० १०० १०० १०० ५६१।१३८ वही १६१।१२८८८ वही १५।२०८

१० वही १५।२१० ०१२ १०० १।१२१५ वही, १५।२१८ वही

१५। १६

८ १० १० १०० १०० ७।१०० १०० ७।१०१, वही, ७।१०२, वही,

७।१०३ वही ७।१०४

कुलदेवी की पूजा करती है।<sup>१</sup> राजविनास में कवि मान १ वर वधू द्वारा कुलदेवी की पूजा करने का उल्लेख किया है।<sup>२</sup>

### विवाह से सम्बद्ध कुछ अथ आचार और तथ्य

(क) स्वगुरालय में ही सुहाग रात्रि मगाना —

यह प्रथा या तो प्रदेश विशेष की रीति रही होगी अथवा इसका बाराते कई दिवस तक डटने के कारण प्रचलन रहा होगा। इच्छिनी विवाह प्रसंग में माँवरा क पश्चान ग्यानार होती है।<sup>३</sup> उमक उपरा त सकुचिन इच्छिनी को उसकी सखिया महाराज पथ्वीराज के शयनागार में पहुँचा जाती है।<sup>४</sup> उनक प्रथम समागम का कवि ने आठ छन्दों में चित्रण किया है।<sup>५</sup> प्रात काल वर और वधू जनवासे में आकर दाग दत है।<sup>६</sup> बारात पाँच दिवस तक आतू में रहन के पश्चात विना हात प्रशित की गई है।<sup>७</sup>

(ख) सोलह दिवस के उपरांत पिता का पुत्री को शिक्षा देने जाना —

इस प्रथा का परमालरासा में उल्लेख मिलता है। बला को विना कराकर ले जाने पर भी बारात सालह दिवस तक दिल्ली के ही समीप डगी रहती है जिसके अंत में दिल्लीश्वर स्व पुत्री को विना देते (यह गार्हस्थ्य धर्म की ही रही होगी) तथा पुन दहेज प्रदान करत चित्रित किए गये हैं।<sup>८</sup>

(ग) वधू को विवाह के समय विदा न करके एक वष के मध्य गौना करना —

इस अशाचार का आल्हखण्ड में उल्लेख किया गया है। ब्रह्मा और साखन की नव परिणीता विवाह के समय विना गही की जाती वरन उह एक वष के मध्य गौना करने की कुस रीति का बयन करत हुए पित गृह में ही रख लिया जाना है।<sup>९</sup> गौन के पश्चात वधू के तीसरी वार आन को आल्हखण्ड में गौना कहा गया है।<sup>१०</sup>

(घ) चौथी या नवविवाहिता का प्रथम वार पितृ-गृह आना —

आल्हखण्ड में विवाहोपरांत लडकी के प्रथम वार पित गृह आने के कृत्य को 'चौथी की सजा दी गई है,'<sup>११</sup> जिससे ध्वनित होता है कि नव विवाहिता चौथे दिवस लौटकर आनी होगी। ब्रज-प्रदेश में इसे 'दसई' कहा जाता है और प्राय नव विवाहिताएँ दसवें

१ २ दे० पर० रा १५।२२१, रा० वि०' ७।१०६

३ से ७ द० क्रम० प० रा०' वा० ५५६।८८ वही १५७।१०० वही ५१।८।१०२ वही, ५१।८।११०, वही, ५६०।१२० २१

८ से ११ दे० क्रम० पर० रा० १५।१८६, आ०' २३।१।२२ २३, वही, १५६।२०, आ०', २७।८।१२



दिये गे ह्ये पितृ गृह सौख्यी है । इम प्रवणर पर मिष्ठा-नामि क 'मन्त्र' तथा कर, उमके माता पिता तथा प्रय सम्प्रिधया क निग धम्नामरण भी भेज जात है जिगरा आह्द सण्ड म भी निदो ग रिषा गया है ।<sup>१</sup>

(ड) त-याआ का विनय मगल अथवा सुखी गृहस्थ जीवन की शिक्षा प्रदान करना —

वय सति प भवस्था को प्राप्त हुई क-याआ को, जिनका विवाह आमन हाता था, उनके भावी गृहस्थ जीवत के साफय के लिए तत्कम्बधी उपयोगी भूनमत्रा से परिचित कराने क लिए ब्राह्मणी आन्ति के द्वारा विनय मगल की शिक्षा सिलाई जाती थी । पश्वीराजरासो म सयोगिता की बारह वय नौ मास की आयु म मन्ना ब्राह्मणी द्वारा सदमगत शिक्षा प्रदान कराई जाती है । सयोगिता क साथ-साथ उसकी एउ सौ पाँच सखिया भी यह शिक्षा प्राप्त करते प्रदर्शित की गई हैं । रामो म विनय मगल का उद्देश्य क-याआ को उस वगीकरण मत्र स अभिज्ञ करना बनाया गया है जिमके माध्यम से मुग्धा और प्रौढा वधुए स्व-पतिमा के चित्त को अपने स्नह पाग म निबद्ध कर लेती हैं ।<sup>२</sup> मदना-ब्राह्मणी द्वारा सयोगिता को दिय गय उपदेश का सार अधोलिखित है —

पत्नी को चाहिए कि वह प्रातः काल जगकर सबप्रथम पति मुख का दान करे और अपने शीश स उसने चरणारविन्दो का स्पर्श करत हुए द प प्रकट करे ।<sup>३</sup> भोजन क साथ पति को प्रेम पूर्वक सुस्वादु भोजन स्वय बनाकर खिलाए ।<sup>४</sup> मनसा वाचा कमणा सदव इस तथ्य की ओर सचेत रहे कि तीनों लोको मे पति सबडा देव कोई भी नहीं है । किसी अय देव की पूजा या जाप स मनोरथ पूण नहीं हा सकते अपितु पत्नी को मनो रथ सिद्धि पति की कृपा दृष्टि पर ही निभर रहती है ।<sup>५</sup> पति को भोजन कराकर वह सुसज्जिपूण वस्त्रादि पहनकर और नाना शृ गार करके पति हृदय म स्व प्रेम की ग्रथि लगाने की चेष्टा करे ।<sup>६</sup>

पति के प्रति पत्नी को सदव विनयशील रहना चाहिए । द्वुतियो या सखियो का कहना मानकर पति से कभी भी मान न करे क्योंकि इससे उसकी कामेच्छा विद्ध होने के कारण उगके हृदय म रोष जाग्रत होता है ।<sup>७</sup> मान करने स स्नेह मे क्षीणता आती है उससे मला कभी नहीं होता अपितु दुख का बीज-वपन होता है । अतः सौभाग्यवती स्त्रिया को इसका मूल के समान परिहार करना चाहिए ।<sup>८</sup> मानिनी को सदव यह स्मरण रखना चाहिए कि उसका यह दुगुण उसकी सुखी जीवन रूपी वाटिका को तुषार की भाँति दग्ध कर दगा ।<sup>९</sup>

मान करने के विपरीत विनयशीलता गुणागार है । उसम दोष तो लशमात्र भी नहीं होते ।<sup>१०</sup> विनय का आचरण ज्यो ज्यो अधिक किया जाता है पति उसी अनुपात म

१ दे० क्रम० आ २८०।१८ २२

२ से ७ द० प० रा० वा० १२६६।५७ वही १२६६।५६ वही १२२६।६०, वही १२६६।६२ ६३, वही १२६७।६४ ६५, वही १२६७।६७ ६८

८ से १० द० प० रा० वा० १२६८।७६ १२६६।७६

पत्नी की ओर अधिकधिक आकर्षित होता जाता है।<sup>१</sup> विनय से रमणी पति का गलहार बन जाती है। बयक्रम के साथ साथ, कयाभ्रा म चापत्य के स्थान पर विनम्रता का प्रादुर्भाव अत्यावश्यक है, क्योंकि यह गुण स्त्री शृंगारो में शीपस्थ स्थान रखता है। वय सधि की अवस्था म विनय अमृत क समान गुणकारी हाता है और इम अवस्था वाली पत्निया क लिए यही एक एसा प्रमाणास्त्र हाता है जिसक माध्यम स व सपत्निया की ईष्या से परित्राण पाती हुई, कत को स्व-वश म कर सकती हैं।<sup>२</sup>

मदना ब्राह्मणी विनय मगल का उपसहार करती हुई उसकी महत्ता पर प्रकाश डालनी हूइ सयोगिता से पुन कहती है कि तुम सुखी गृहस्थ जीवन की आकांक्षा करने पर विनय क पालन म कमी भी असावधानी न करना। स्त्री जीवन मे विनयशीलता का महत्व शरीर के लिए 'जीव की भाँति अपरिहाय होता है। उसके अभाव म पत्नी अथम कही जाती है तथा पति भी उस नाना केश पहुचाता है जबकि उसका अनुपालन करने से पति अनुदिन वश म होता जाता है।<sup>३</sup> समस्त जलचर यलचर और नमचर पशु पक्षिया की मादाएँ भी इसको स्व माथियो को वश म करने के लिए प्रयोग करती पाई जाती है। गित्रया का जीवन तो विनय के अभाव म मरुस्थली की भाँति सवदा गीरस हो हो जाता है।<sup>४</sup> सयोगिता पर इस उपदेश का बडा प्रभाव पडता है, और वह निश्चय कर लेती है कि मैं अपने क्त के समक्ष अधिकारिक विनम्रता का आचरण करूगी।<sup>५</sup>

### (च) बहु विवाह प्रथा —

आलोच्यकालीन नरेशा म हम बहु-पत्नीत्व प्रथा का प्रचलन पात हैं। यया राजा तथा प्रजा की लोकाकित के अनुसार यह सवया स्वामाविक है कि राजेतर वभव सम्पन व्यक्तिया म भी यह प्रथा प्रचलित रही होगी जबकि जन-सामाय प्रपनी अपनी विभि नता अथवा सम्पनता के अनुसार, एक या एकाधिक पत्नियो से विवाह करते होंगे।<sup>६</sup>

महाराज पथ्वीराज के दम पत्निया प्रदक्षिन की गई हैं जबकि शाह गौरी क हरम मे पाच सौ दस वगमें दिखाई गई है।<sup>७</sup> महाराज बीसलदेव के भी रासाकार ने अनेक रानिया प्रदक्षिन की हैं।<sup>८</sup> महाराज परमाल की रानियो की सख्या परमालरासो

१ स ३ दे० अम० प० रा० का० १२६६।८२ से १२६९।८४

४ से ६ दे० 'प० रा० का० १२७०।६० १२७२ १०६

७ महाराज पथ्वीराज क रथमगि इच्छिनी पुडीर-दाहिनी, इद्रावती, हसा-वती, शशिप्रता, पदमावती और सयोगिता आदि दस रानिया दिखाई गई हैं —

— पृ० रा० का०, प० २१०३

८ पच सत्त दस हरम। साह कामी तप भारी। —प० रा० का० ७२५।३१४

९ तव सकल भइय एकत्र नारि। पुष्पावन तिन वध्वी विचार।' वही, ७४।

में एक सौ साठ दी गई हैं।<sup>१</sup> तथा उनके पुत्र ब्रह्मा की पचास पत्नियाँ लिखाई गयी हैं।<sup>२</sup>

अत्येष्टि —

अत्येष्टि सम्बन्धी यन् तत्र मिलने वाला निर्देश तथा महाराज सामेन्द्वर के निधन पर उनके पुत्र पथ्वीराजजी द्वारा अनुपालित आचारों व विवरणों से अत्येष्टि के विषय में अधोलिखित तथ्या पर प्रकाश पड़ता है —

ब्रह्म रथ से शरीर-त्याग करने वालों के विषय में यह धारणा प्रचलित थी कि उन्हें निश्चय ही हरिपुर का अधिवास प्राप्त हुआ होगा। परमालरासो में महाराज चन्द्र ब्रह्म<sup>३</sup> तथा वीरचरित्र में महाराज मधुकर गह<sup>४</sup> द्वारा ब्रह्म रथ से प्राण-त्याग करने पर सदमगत धारणा व्यक्त की गई है।

युद्ध क्षेत्र में वीर गति प्राप्त करने वालों के पारिवारिक जना के शोक मनाने को अनुचित समझा जाता था। महाराज पथ्वीराज को स्व पिता के निधन पर यही कह कर सात्वना दी जाती है कि आपके पिता ने क्षत्रिया के धर्मानुसृत वीरगति प्राप्त की है अतः आपका शोक करना उचित नहीं है।<sup>५</sup> हम्मौररासो में तो वीर पुरुष और सती स्त्री के देहावासन पर मंगलोत्सव मनाने का परामर्श दिया गया है।<sup>६</sup> मृत्यु के विषय में यह धारणा भी प्रचलित थी कि हस में हस अथवा पचनत्व पचतत्व में विलीन हो गए हैं।<sup>७</sup>

पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ अधिक दुःखनातन हुआ करती हैं। वीरकाव्य में हमें उन्हीं के विलाप और छाती पीटने के निर्देश मिलते हैं। मल्लिखान का निधन सुनकर हिंदू स्त्रियाँ उच्च स्वर में विलाप करते प्रदर्शित की गई हैं<sup>८</sup> जबकि केशव ने मुस्लिम स्त्रियों को अश्रुल फजल के निधन पर छाती पीटकर शाकाभिषेक करते प्रदर्शित किया है।<sup>९</sup> भूषण ने भी जंगल में मटकती हुई मुस्लिम स्त्रियाँ छाती पीटकर रोती हुई चित्रित की हैं।<sup>१०</sup>

वीरकाव्य में किसी पुरुष की गव यात्रा का चित्रण नहीं मिलना, अतः उसके

१ एक सौ साठ रानी सहित राजा परमाल चलत भय । — पर० रा० वाच० प० ५४१

२ पचीस दुय नारि गही तुम्हारी मव सु दरी गाह चाहत यागी ।' वही २६।३१

३ रानिन स्थै हरिपुर गयव ब्रह्म रथ तजि प्रात । — पर० रा० २।६६

४ ब्रह्म रथ मग छात्रि सरीर हरिपुर गयो नपति राधीर । — वी० च० २।३६

५ 'करत दुबख चहुआन, वरजि प्रम्मार स्यध तह ।

यादि धम्म छत्रीनि करण सताप समर ग्रह । — प० रा० मो० ३।८८

६ 'सती मूरमा पुरुष को मरत ही भगल होय ।' — ह० रा०, छ० ६६६

७ स १० दे० प्रम० प० रा० वा० ११४७।११८, पर० रा० ११।३४, वी० च०, ६।१५, शि० वा०, छ० ६

नायक। (मुख्यतः क्षत्रिय) की शव-यात्रा सम्बन्धी विवरण के लिए बनल टॉड के विवरण की सहायता अपेक्षित है। इससे ज्ञात होता है कि राजपूत योद्धाओं को दाहकर्म के लिए ले जाते समय उनके प्रत्येक शरीररंग को उनकी जीवितावस्था की भाँति शस्त्र सज्जित किया जाता था। उनकी पीठ पर ढाल बाँधी जाती थी जबकि उनका सामरिक चिह्न उनके हाथ में दे दिया जाता था। उनकी सवारी का अश्व भाँ श्मशान भूमि तक ले जाया जाता था जिसका बलिदान न करके, उग ईश्वरार्पित करत हुए पुरोहित को सौंप देने थे।<sup>१</sup> ब्रजभाषा के वीरवाच्य में हम अन्वेषित की तीन विधियाँ के दशन होते हैं। हिंदू युद्ध में मृत रहे वीरों के शवों का अग्निदाह,<sup>२</sup> अथवा उन्हें नदियों में प्रवाहित करते थे<sup>३</sup> जबकि मुसलमान उनका भू निखात करते हुए उन्हें जमीन में गाड़ते थे। अग्निदाह का परमालरासा में बहि देना कहा गया है<sup>४</sup> जबकि छत्रप्रकाश में दाग दना। छत्रप्रकाश में गोरेलाल न करी के लिए गोर श्मशान प्रयोग किया है।<sup>५</sup>

पिता की मृत्यु पर पुत्रों के लिए भूशयन आदि कृत्या तथा अशौच की शास्त्रकारों ने विभिन्न वर्णों के लिए पथक पथक अवधियाँ निर्धारित की हैं।<sup>६</sup> महाराज पृथ्वीराज स्व पिता के निधन पर बारह दिन तक भूशयन करत हैं।<sup>७</sup> भूशयन के साथ साथ व इन आचारों का भी पालन करते हैं कि—इन दिनों में वे मात्र एक बार भोजन करत हैं, तथा भोग-विलास सम्बन्धी सभी प्रकार के कृत्याँ स विरत रहते हैं।<sup>८</sup> आजकल भी इन आचारों का प्रायः इसी रूप में पालन होता है।

मृतक की आत्मा की परिशान्ति के लिए पिण्डदान किया जाता था। शास्त्रकारों ने अशौच त्विसो में भिन्न भिन्न प्रकार के पिण्डदान करने का विधान किया

1 'A Rajput warrior is carried to his funeral abode armed at all points as when alive his shield on his back and brand in his hand while his steed though not sacrificed is often presented to the diety, and becomes a requisite of the priest

— Annals and antiquities of Rajasthan Vol I p 61

२ स ५ द० त्रम० छ० प्र०, २०।१५ मु० च०' ६।३।८, 'पर० रा०' २५।६७, छ० प्र०' २०।१५

६ डा० राजवली पाण्डेय के अनुसार—“गृह्य सूत्रों में ब्राह्मण और क्षत्रियों के लिए अशौच की अवधि दस दिन वश्यों के लिए पंद्रह तथा गूनों के लिए एक मास बताई गई है, जबकि सम्प्रति वह ब्राह्मणों के लिए दस दिन, क्षत्रियों के लिए बारह दिन, वश्यों के लिए पंद्रह तथा गूनों के लिए एक मास है—दे० हिंदू सस्कार, पृ० ३२५ २६।” महाराज पृथ्वीराज का बारह दिवस तक भूशयन, श्मशान परवर्ती प्रथा का अनुसरण है।

७ ८ दे० 'पृ० रा०', का० ११४८।१२३

है।<sup>१</sup> महाराज सोमदत्त के निषण पर अनुष्णि विधेय प्रकार क पिण्डदान का तो उल्लेख नहीं किया गया है अपितु पाङ्ग दान अर्थात् भूमि, आसा, जल, वस्त्र, अन्न, ताम्बूल, छतरी, मुर्गा घत द्रव्य, पुष्प मालाएँ, फल श्या, पादुका, धनु कचन और रजत का दिया जाना चित्रित करके, उनकी अभिप्रेति करा दी गई है।<sup>२</sup> तिलीश्वर तरहवें दिवस स्नान करके, अपन दिवगत पिता को जलाजलि देत हैं<sup>३</sup> तथा पुन स्वर्ण से क्षुर और सींग मत्री हुई गाया का दान देते हैं।<sup>४</sup> देहवसान क तरहवें दिवस जलाजलि और दान देने का कवि मान और गोरेलाल<sup>५</sup> ने भी प्रचलन दिखाया है।

गया म पिण्डदान अथवा पितृ-पूजन को लोक धारणा म बड़ा महत्व दिया जाता है। इस जन धारणा की आल्हखण्ड में विवृति हुई है। उसम पुत्रो के जोगी हो जाने पर दिवगत पिता की आत्मा इस दुश्चिन्ता म ग्रस्त चित्रित की गई है कि अब मेरी गया कौन करायगा।<sup>६</sup> वश हीनता को प्राप्त हुए नरेश जम्ब भी बनाफलो स यह निवेदन करते हैं कि मेरे वश मे पितरा को पानी देने वाला कोई नहीं है अत आप मेरी खोपडी को गया म सिरा देने की कृपा करना।<sup>६</sup>

- १ डा० राजबली पाण्डेय के अनुसार— मृतक को प्रथम त्रिच चावलो के गोले का पिण्डदान दिया जाना इस धारणा पर आधारित है कि वह प्रेत के शरीर (पिण्ड) के अवयवों का पूरक माना जाता था। उन्होंने आगे स्पष्ट किया है कि पिण्डदान के विधानानुसार—पहले दिन मृतक की क्षुधा और तथा को तृप्त करने तथा उसके भावी शरीर की रक्त नालियों के निर्माण के लिए एक भात पिण्ड पानी का एक घडा तथा अन्न साद्य पदार्थ देने चाहिए दूसरे दिन मृतक के श्वर्ण नेत्र और घ्राण क निमाण के लिए पिण्डदान करना चाहिए। तीसरे दिन गले क घे बाहु और वक्ष स्थल के निर्माण के लिए इसी विधि से नवें दिन तक मृतक के विविध अंग क निर्माण के लिए पिण्डदान करने चाहिए। —दे० हिंदू संस्कार, पृ० ३३५
- २ "भूम्यां जल वस्त्र प्रदीपान तत परम। ताम्बूलच्छत्रम धारुच माल्य पत्रमत परम।

शय्या च पादुका गाव काचन रजत तथा। दानमेतन् पौडशक प्रेतमुद्दिश्य दीयते।"

—केशव प्रथा०, भा० ३ प० ८०४

- ३ 'मुयो राज प्रथिराज। भूमि सिग्जा अयधारिय। तात काज तिन। दान पौडस विस्तारियौ। —प० रा०, का० ११४७।१२३
- ४ से ८ दे० प० ५० रा०, का० १४४७।१२४, वही १२००।५ 'रा० वि०' १।१३६, 'छ० प्र० ६।६, 'आ० ५०।३७
- ५ 'पानी दिवया कोई नाहीं रहो तुम करि डारी बसकी हानि। हमरी खुपडी ऊदनि सके तुम काशी म दीजो सिराय।' वही, १०६।६ १०

सती प्रथा —

पति के शव के साथ जलन की प्रथा हमारे आलोच्यकाल के पहले भी प्रचलित थी किंतु उमका इतना अधिक प्रचलन कभी नहीं रहा, जितना विवेच्यकाल में मिलता है। हमारी काल सीमा के अंतिम वर्षों में उसे भ्रवण घोषित कर दिया गया था, अतः यह मुख्यतः हमारे आलोच्यकाल का ही सीमाव्यय या दुर्भाग्यपूर्ण आचार रहा है।

सती होने के विवरण पृथ्वीराजरासो, परमानरासो, गौरा वादल की कथा तथा आल्हखण्ड में मिलते हैं। हम्मीररासो हम्मीर हठ और मुजान चरित में जौहर प्रथा दिखाई गई है जिसकी मूल भावना सती प्रथा से सादृश्य करते हुए भी उसका इस दृष्टि से पृथक् विवेचन किया गया है कि उसमें पत्नियाँ प्रायः पति से भी पूर्व मृत्यु का वरण करती थीं।

पृथ्वीराजरासो में कामा की पत्नी अपने पाँच-वर्षीय अल्प वयस्क पुत्र की भी चिन्ता न करत हुए सती हो जाती है।<sup>१</sup> उमम प्रियाकुवरि और पाच सहस्र भय राज पून रमणियाँ भी स्व पत्नियाँ के निधन पर सती होते चित्रित की गई हैं।<sup>२</sup>

परमालरासो में महाराज परमाल की पाँच-वर्षीय बाल्यावस्था को देखते हुए प्रजा उनकी माता सामवती का सती होना पसन्द नहीं करती, किंतु वे सती हो जाती

१ (क) 'डा० बनीप्रसाद ने, ऋग्वेद की एक ऋचा के आधार पर — जिसमें विधवा को सती होते ता नहीं दिखाया जाता किंतु वह पति के शव के साथ श्मशान भूमि में लटती है, ऋग्वेद काल में सती प्रथा सिद्ध करने वाला का विरोध किया है। विरोध करते हुए भी वह यह स्वीकार करते हैं कि पति के शव के साथ लेटने का कृत्य, किसी और भी प्राचीन प्रथा का अनुकरण रहा होगा जिसमें स्त्री को कदाचित् सचमुच ही पति के शव के साथ गाँव या जलाया जाता था। उनके मत में सती प्रथा का प्रचलन मौर्य काल में कुछ विदेशी जानियाँ के अनुकरण पर आरम्भ हुआ था।' — दे० 'हिंदुस्तान की पुरानी सभ्यता' पृ० ५४ तथा ३३६

(ग) श्री राहुल साहूत्यापन ने सती प्रथा का प्रचलन गुप्त काल के पश्चात् स्वीकार किया है। — दे० 'मानव समाज', पृ० १६७

(ग) "डा० अजानारायण गमा ने मत व्यक्त किया है कि आठवीं शताब्दी तक सती प्रथा राजकुला तक सीमित थी।"

— दे० सोशल लाइफ इन नान्ड इण्डिया', टर्किट प्रति, पृ० ३०

२ यह (सती प्रथा) मुख्य रूप से राजपूता में प्रचलित थी। १८३५ ई० में लार्ड विलिंगटन बटालन ने अंतिम रूप से इस प्रथा का अन्त कर दिया।'

— हिंदू सत्कार' पृ० ३१६

३ ६ द० अम० 'पृ० रा०', मो० ३।४६।६५, पृ० रा०, का० २३७।१६२२ ,

है।<sup>१</sup> उसमें राजमराय की पैतालीस,<sup>२</sup> ब्रह्मा की पचास,<sup>३</sup> लावन की पन्चीस<sup>४</sup> तथा अग्र्य वीरो की दस सहस्र पत्नियाँ<sup>५</sup> सती होते प्रदर्शित की गई हैं, जबकि भ्रातृहा ऊदन की माता ब्रह्मा-रघु से शरीर त्याग करती है।<sup>६</sup>

गोरा बादल की न्याय म गोरा युद्ध म जाने स पूव ही उसम अपना मरण निश्चित जानकर पत्नी को स्व बूढा म स कुछ वेग काटकर दे जाता है जिसस वह उनके साथ सती हो सके।<sup>७</sup> जटमल ने आगे चलकर गोरा की पत्नी को उसकी पगडी के साथ सती होते प्रदर्शित किया है।<sup>८</sup> परमालरासो म ऊदल और ब्रह्मा की पत्नियों को उनके शत्रुको के साथ सती हाते दिखाया गया है।<sup>९</sup> हम्मीरहठ मे पति के लडग के साथ भी सती होने की प्रथा की अभिव्यजना हुई है।<sup>१०</sup> कहना न होगा कि पति के वस्त्र और पगडी के साथ सती होने की प्रथा का उल्लेख निकोलस विलिंगटन नामक यात्री ने भी किया है। उसके अनुसार गवनर के आदेश की अवहेलना करती हुई एक दस वष के सग भग आयु वाली पत्नी अपने सनिक पति क खेत रहने का समाचार पाकर उसके वस्त्रा और पगडी के साथ सती हुई थी।

राजविलास मे महाराज गहादित्य के निघन के समय उनकी पत्नी धनवती सती होते मिलती है।<sup>११</sup>

आल्हखण्ड मे मल्लिखान पत्नी गजोमतिन<sup>१२</sup> तथा ब्रह्मा की पत्नी बला<sup>१३</sup> सती होते प्रदर्शित की गई है। बला के प्रसंग म यह निवेदन अप्रासंगिक न होगा कि डा० वणीप्रसाद ने बला का सती के पर्यायवाची रूप मे प्रयोग दिखाते हुए कहा है कि— “गुप्तकाल म बला अर्थात् सती की प्रथा का बहुत सम्मान था।”<sup>१४</sup> आल्हखण्ड मे उल्लिखित बला, लोक धारणा मे विद्यमान सती प्रथा का ही तो मूर्तिमान रूप नहीं है क्योंकि महाराज पृथ्वीराज क बला नामक पुत्री का होना म य साक्ष्यो से समर्थित नहीं है।

रासोकार न चित्ररेखा नामक पात्रा की भीर हुसेन के साथ कचर म गडते दिखा कर मुस्लिम म भी विशेष प्रकार की सती प्रथा दिखाई है।<sup>१५</sup> कचर म गडने की यह प्रथा मिस्र मे प्रचलित थी<sup>१६</sup> और विदेशी यात्रिया ने दक्षिणी भारत म भी इससे साम्य रहने

१ से ८ दे० क्रम० 'रा० रा०' ६।४२ वही ३७।५२ वही ३७।६८, वही ३७।६१, वही ३७।७३ वही ३७।८१ गो० क० छ० ८८ वही, छ० ७६०

९ १० दे० क्रम० प० रा० ३७।७५, ह० ह० ग्वाल छ० २२३

११ 'निज उग्रर फारि काढयो गरम पावक पिंड पइठठयो।

सनि धय कहै मुर धनवती पति सम प्राण परठठयो।' — रा० वि० १।१३७

१२ १३ दे० 'भा० ४४।१।११ वही ६०८।१३

१४ 'हिंदु० की पुरानी सम्यता प० ४०२

१५ परयो हुसन सु पात्र सुनि चितिय चित्त इमान।

सयो घोर हुसन सय, करयो प्रवेस अपान। — प० रा०', गो० १।२६६।७१

१६ मिस्र में राजाघ्रा के शव उनकी रानिया, दास, दासी आदि सुख की सामग्रियों के—

वाली प्रथा दिखाई है।<sup>१</sup> डा० सपकेनु विद्यानकार ने भारतीय-मुस्लिम म भी सती प्रथा का आंगिक प्रचलन होने का उल्लेख किया है।<sup>२</sup>

वीरनाथ्य म सती होने के मुख्य प्रयोजन पतियों के साथ सतत मसग, स्वग प्राप्त तथा मानु और पति कुन को यग के उज्ज्वल प्रशंगित किया गया है जबकि सती न होने वाली स्त्रियों को नरक वास मिलने का उल्लेख किया गया है। पृथ्वीराजरासो के महोवा गड म ऊल की पत्नी सती होने की आवश्यकता पर प्रकाश डालती हुई कहती है कि पति की मृत्यु हो जाने पर जीवित रहने वाली स्त्रियां क लिए वेदा म नरक वास मिलने का विधान किया गया है।<sup>३</sup> जीवित रहने क साथ-साथ पुत्रावस्था (पुन विवाह) करन वाली स्त्रियां तो घोर उरत की अधिकांशिता बताई गई है।<sup>४</sup> प्रिया कु बरि आंगि पांच हजार स्त्रिया क सती होकर स्वग म स्व-पतिया स जा मिलने का उल्लेख करते चंद न सतिया को स्वग प्राप्त होने की धारणा का अभिद्योतन किया है।<sup>५</sup>

परमानरासो म सत्यन की पत्नियां सती होने से पूव कही हैं कि "प्राणेश्वर आपस सम्मिलन-हेतु हम गौध ही आपके समीप स्वग मे आ रही हैं।<sup>६</sup> उनके सती होने पर परमानरासोकार ने उरत इदलोत को स्वराजधानी बनात हुए उनका सत्यनो' मे भगन चित्रित किया है।<sup>७</sup> उसने ब्रह्मा की पत्निया का स्वपति के साथ स्वगलोक म साडे तीन करोड वष भयत स्वर्गीय विहार का उपभोग करत प्रदर्शित किया है।<sup>८</sup>

→ साथ विरामिडा म देके दिष्ट जात थे। यूनानिया, रुमिया, स्लाव आंगि कई प्राचीन जातिया म पति के साथ स्त्रिया को गहन और जलाने की प्रथा थी, किन्तु यह प्रथा राजासो, सामता और श्रीमता तक ही सीमित थी।

— हिंदी साहित्य का चरत् इतिहास, प० १६५

१ (क) टैबनियर क अनुसार कोरोमण्डल म सती होने की एक विधि यह भी थी कि आदमकद से एक दो फुट गहरे गडडे म स्त्री पति के शव के साथ खड़ी हो जाती थी। गडड को मिट्टी से भरकर लोग उसके ऊपर नाचते-पूदते थे, जिससे स्त्रा का दम घुट जाता था।

— दे० टैबनियर भाग २ पृ० १६८

(ख) बबेनाट नामक यात्रा न इस विधि मे यह अंतर प्रदर्शित किया है कि जब गडडे म स्त्री की गदन तक मिट्टी भरी जा चुकी होती थी, तो स्त्री की गदन दबाकर उसका दम थोटा दिया जाता था।

— दे० वही, प० १६८ की पा० टि०

२ दे० 'भारतीय सस्कृति और उसका इतिहास प० ४३४

३ ठडुरानी ऊदन की वार्तिय। मुनियहू साम वचन यह कोलिय।  
निहचे वद नरक रहिमाणे। पिय की मरत त्रिया तन राप।"

— प० २०', का० ६५५६।३४१

४ 'पीयाह मरत श्रिया रहे। कर पुन की आस।

वह नारीं निहच कर। घोर नरक म वास।'

वही, २५५६।३००

५ ग ८ दे० ब्रम० 'पृ० २०' का० २३७१।१६२ 'पर० २०' ३७।६१, वही, ३७।६८, वही, ३७।७०



घातगण म दग घहमण क रूप म सती प्रथा के विरोधिया वा यह तर्क प्रस्तुत कराया गया है कि मृता पति क माय जीवित स्त्री वा प्राणाहुति अनाव्यय है, यथाकि इमम पति तो जीवित गदा हा गत्ता, पत्नी को युगा हो म जीवित म हाण धान पद्यत है।<sup>१</sup> दग घहमद क इम प्रदा क उत्तर म मनिगात-पत्नी मममातिन वा प्रयुक्त, इस प्रथा के समया क मम का अभिधयत्र प्रीत हाता है। यह कता है कि 'पति को प्राण प्रिय कहा जाता है जिसको मागतता उसक मरण पर पत्नी द्वारा प्राण-त्याग करते स ही मिद्ध हाती है। इमर साय ही सता हो वाता पत्नी को युगा तम कीति पलने क धनिरिक्ति उसे गार भाव माम भी हात है। उमती स्त्र मनिगया म मयाग अभिवृद्धि होती है म्यग वा धधिवाम प्राप्त हाता है उमर साय घोर मयुर क कुन क मय विस्तार होता है तथा उमर गातयुग की भी कति प्रगारित हाता है।<sup>२</sup> मती हात के वीरनायक म उल्लिखित नाम धम प्रथा म निगाण वा धनीतिक नामा म बहुत कुछ सादश्य रगत है।<sup>३</sup>

### सती होने की विधि —

सती होना का विवरण रिवाहावसर पर होने वाले साचारा म सादश्य रमता है। विधवा को भाँवरों के समय की मति सोरह श्रु गार म सजित किया जाता था। मुन म पान का बोहा तथा हाथा म नारियन चर सता हाते के जिग गात वात्र के माय श्मशान भूमि को प्रयाण करती हुई उसकी मात्रा नम यधु की विरा क समान प्रतीत होती थी। उसी मति वेल् मद्रोच्चारण चिता की परिधमा आदि वृत्य हठात् उन स्मृतियों को बँधा देत हैं जब इही साचारा का पालन करत हुए वर-वधु ने एक-दूसरे का आज्ञम साय देने की प्रतिगाण की थी।

पृथ्वीराजरासो म रावल समर विधम की पत्निया की जत्र उनर निधन का

१ 'अरी मिहरिया ययो तन जार जीवत इस मुने के माय ।

मरे पिया तेरे ना मिलि है नाहव दी है प्राण गमाय । —आ० ४४०।२२ २३

२ दे० आ०, ४४१।१६

३ डॉ० राजवली पाण्डेय ने धमप्रथा के अनुमार सती होने के अलौकिक लाभ पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि पति के मर जान पर जो स्त्री हुताशन (धनि) पर आरोहण करती है वह अरधनी (सतिष्ठ की पत्नी) के समान साचार वाली स्वगलोक म महत्ता को प्राप्त होती है। साडेतीन कराड जो राण मानव शरीर म होते है पति का अनुगमन करने वाली स्त्री उतन बपों तक स्वग म निवास करती है। जिस प्रकार साप का पकडने वाला साप को बिल स निवाल देता है वस ही अधोगति से अपन पति को बचावर उसके माय स्त्री म्वग को जानी है। पति का अनुगमन करने वाली नारी अपने माता पिता तथा भर्ता तीना के लोको को पवित्र करती है।

— हिंदी सा० वा० वृ० इति०, प १५१

समाचार नात होता है तो वे प्रेम पथ का अनुसरण करती हुई सती होने का सक्ल्प करती हैं। तदथ वे अपना समस्त प्रकारीय श्रृ गार करके मुक्ता और मणिषा के हारादि धारण करती हैं तथा सती होने के लिए यमुना तट पर जाने हेतु अश्वारूढ होती है। नगर के नर-नारी इम कारुणिक दृश्य को देखकर हाहावार कर उठत हैं किन्तु वे स्वचित्रो पर म्लानता की रचमान मी छाया नहीं पडन देती, वे मुक्ताशा के अछट क्षिप्त करते हुए मुखा से हरिहर का जाप करती हुई करो म नारियल लेकर बिलवती सखिया को छोडकर सती होने के लिए यमुना-तट की ओर प्रयाण आरम्भ कर देती हैं। अथ सूर सामता की मी पाच सहस्र पत्निया श्रृ गाराभूषण। स सज्जित होकर स्वपतिया से मिलनाकाशा लेकर यमुना-तट पर पहुंचती हैं।<sup>१</sup> उनके लिए चदन-दाह से सामर्ष्या नुसार लघु और लीष मंदिराकृति चिताए बनाई जाती है। मंदिर जैसे आकार वाली चिताशा म प्रवेश माग बने हुए थ, तथा उनको पुष्या और वस्त्रा से भलीभाति सज्जित किया हुआ था। सती होने से पूर्व वे स्त्रिया दान मे रथ हाथी अश्व, मणि मुक्ता तथा घेनु<sup>२</sup> प्रदान करती हैं। विप्र वद मना का उच्चारण करते हैं जबकि जनसमुदाय उन पर चारा और से पुष वपा करता है। उनका स्वग ले जाने के लिए आतुर देवगणो के विमान उनके शीशो पर मँडराने लगते हैं। अन्तत वे स्वशरीरो को हव्य सामग्री की भाति चिताओ की अग्नि म हवन कर देती हैं।<sup>३</sup>

परमालरासो म ऊदल पत्नी के लिए गया-भेन म सर रचना की जाती है। वह वहा गगा नदी म स्नान करके देव दशन करती है तथा स्व शरीर को कु कुम चचित करके वस्त्राभूषण धारण करती है। अपनी सास के चरण स्पश करते हुए ऊदल पत्नी स्वपति का अ गुक लेकर अग्नि प्रवेश करती है, और देखते ही देवते उसे देव विमान स्वग ले जाते हैं।<sup>३</sup> लाखन की पत्निया कौ जब उसके निघा का समाचार नात होता है तो वे उसके अ गुका को शीशा पर धारण किए हुए शीघ्र ही सत्यलोक मे उसके समीप पहुंचन का कथन करती हुई सती होने चल देती हैं। सहस्रा दास चदन की लकडियाँ लेकर गगा-तट पर आते हैं और उनके लिए सरथी बना देते हैं। सती हाने से पूर्व वे नाथा मे बठकर हरिस्मरण करती हुई गगा मे जलबलि करती हैं। तट पर गाकर वे दान देती हैं और वस्त्राभूषणो से अप्सराओ की भाति सज्जित होकर सरा पर बठ

१ 'पु० रा०' ङा० २३७०।१६२० २०

२ चदन मंदिर दार। रचिय वर दिष्प लष्पु दर।

विवह कुमुम वर राहि। सोहि पर वसन मुरह वर।

जिय जब नद दान। रथय ह्य गय स्रगता मनि।

बिष्ण वद उच्चारहि। घेन मुरवर आयामनि।

किय लोक लोक अ जुलि कुमुम सजि विमान मुर सिर फिरहि।

सकु मिय अप्प साहागवनि। मफि गवन हाव्वहि हरहि।' — वही, २३७१।१६२३

३ दे० 'पर० रा०' ३७।६६



## पारिवारिक जीवन

म वह 'सत्त' के आवेश में थी अतः धनवती स्व उदर को विदीपन करके गभस्य शिशु की बाधा को दूर कर देती है और सती हो जाती है।<sup>1</sup> आल्हखड म गजमोतिन महाराज पथ्वीराज से कहती है कि मुझे सती होने के लिए विधाता ने सत्त प्रदान किया है अतः यदि आप मेरे सती होने में विघ्न डालेंगे तो मैं शाप देकर भस्म कर दूंगी।<sup>2</sup> दोख महमद गजमोतिन को सती न होने के लिए कई तक प्रस्तुत करत हैं किन्तु वह अपने निश्चय पर अटल रहती है।<sup>3</sup> गजमोतिन की माति बना भी ऊदल से कहती है कि मुझे ईश्वर ने सती होने के लिए सात दिवस तक सत्त प्रदान किया है। उससे से आज तीन दिन व्यतीत हो चुके हैं, अतः तुम शीघ्र ही मेरे पिता का चदन स्तम्भ टूटकर नाश्रा जिसमें मैं उम सत्त की अवधि में सती हो सकूँ।<sup>4</sup> ऊदल और लाखन बला को निभय होकर महोत्रे का राज्य-संचालन करने का आग्रह करते हैं उनके यहां पारस-पत्थर होने का प्रलोभन देते हैं जिससे वह इच्छानुसार लोहे को स्वर्ण में बदल सकती है तथा यह भी विश्वास दिलाते हैं कि हम प्राणपण से आपका राज्य की रक्षा करने का प्रयत्न करेंगे किंतु बेला अपने पूर्व निश्चय पर ही अटिग रहती है।<sup>5</sup> निदशी यात्रिया न भी सतिया से सती होने के लिए मिलन वाली दृष्टेच्छा तथा अप्रय साहसिकता दिखाई है जा उनकी इस सत्त वाली अवस्था की ही निदान है।<sup>6</sup>

### (२) सती चौराओं की स्थापना —

सतिया के सती होने के स्थान पर 'सती चौरा' नामक एने पवित्र स्थला की रक्षा की जाती थी, जिनकी स्त्रिया भी और गुड से पूजा किया करती थी। आल्हखण्ड

१ स ३ दे० रा० वि० ११३७ आ० ४४०। १ ३ आ०, ४४१। १ ६  
४५ द० 'आ०' १६२। १-३ १६३। ५ ७

६ (क) कुछ पाश्चात्य यात्रिया का यह भ्रम हुआ था कि, विधवाओं को भाग या धतूरा पिलाकर सत्ता भूय कर दिया जाता है किन्तु एक सती होने वाली स्त्री की डाक्टरों-परीक्षा कराने पर यह सदेह निमूल सिद्ध हुआ था।

—दे० टवर्नियर, भा० २ पृ० १६५ की पा० टि०

(ख) इसका साथ साथ टवर्नियर और बर्नियर ने एस कई दृश्या के प्रत्यक्षदर्शी होने के आधार पर विवरण दिए हैं, जिनमें सती होने के लिए दृष्टप्रतिन सत्तारिया न जलती मंगाला में अपने हाथ झूलसाकर दृष्टेच्छा का परिचय दिया था। उ हान यह भी दिखाया है कि मुस्लिम गामवा द्वारा अनेक प्रकार के प्रलोभन दान और भय दिग्माने पर भी स्त्रियाँ सती होने में नहीं रुकती थीं। टवर्नियर ने बलात्कृत वधवा में बदल कर दिए जाने पर त्रिजय नगर के रामराजा की ग्यारह विधवा रानिया द्वारा शरीर-स्वाग कर देन का भी उल्लेख किया है।

—दे० 'वर्नियर', भा० २, पृ० १७० ३२ तथा ट्र वल्म इन मुगल एम्पायर', वर्नियर, प० ३०६ ३०७

से मलिन्यात की पत्नी गजमोतिन रर 'सती चौरा बनाया जाता है,' जिसकी ब्रह्मा पत्नी बला भी धी और गुड से पूजा करते प्रसंगित की गई है।<sup>१</sup>

सतिया में कुछ दबी अथवा विद्यमान होने के कारण जन धारणा का पता ब्राला न्यवानीन विदेशी यात्रिया के विवरणों में मिलता है। उदाहरणार्थ ट्वेनियर के अनुसार यह समझा जाता था कि सती हान वाली स्त्रियों को उनको समर्पित किए गए उपहारों को उपहारदाताओं के स्वयंसेवक सम्बंधियों तक पहुंचाने की क्षमता होती है और उस दृष्टि से उनकी चिताओं में विभिन्न सदशा के साथ विविध उपहार सामग्री डाली जाती थी।<sup>२</sup>

निष्पत्त ब्रजभाषा के वीरगायकों में उल्लिखित सती प्रसंगा से ऐसा रचनात्मक भी आभास नहीं मिलता कि विधवाओं को सती होने के लिए पारिवारिक जनों द्वारा बाध्य किया जाता था। वे स्वच्छा से सती जाती थीं जिसके मूल में इनके स्वयंसेवकी पत्निया से सम्मिलन की आकांक्षा अंतर्निहित रहती थी। उनसे सती होने का कृत्य विवाहावसर पर सम्पन्न होने वाले आचारों से सादृश्य ग्लता था। सतिया को भविष्य कथन और पाप देने की अलौकिक शक्तिया से भी सम्पन्न समझा जाता था।

### जौहर प्रथा

युद्ध में अपनी पराजय को निश्चित मानकर मरणांतक युद्ध करने की लालसा से युद्धाय जाने वाले वीर स्वपरिवार की स्त्रिया की विजेताओं के हाथों से दुर्भाग्य को बचाने के लिए दो विधिया का प्रयोग करते थे - या तो वे उन्हें मरने समर्थ मरवाकर तब युद्धाय प्रयाण करते थे—अथवा उन्हें कुछ ऐसे सज्जत बजा जाते थे जिन्हें देखकर वे शत्रु विजय भाव लेती थीं और विभिन्न विधियों से सामूहिक आत्मघात कर लेती थीं।

चन्द्रोत्तर काल में हमीरहठ में महाराज हमीरदेव स्वमाता और पत्नियों से कह जाते हैं कि, यदि तुम्हें उनसे (शत्रु क) निगान लौटने दिखाई दे तो जौहर कर लेना। युद्ध में महाराज की विजय होती है, किंतु जीन के उसाह से वे मूल स्व निशानों को नीचे बरके लौटते हैं। दुर्ग की तारिया समझती है कि महाराज को वीरगति प्राप्त हुई है और शत्रु दुर्ग की लूट पाट करने आ रहा है। वे महाराज की आज्ञा का पालन करते हुए जौहर करने का निश्चय करती हैं और स्नान करके दान देती हैं। तदुपरान्त उनमें से कुछ छुरी और लज्ज मारकर आत्मघात करती हैं कुछ अपने इतस्तत बालूद रखकर उसमें भाग लगा देती हैं, कुछ बुध्या में बदकर आत्महत्या करती हैं जबकि अन्य अपने

१ जह पचपेडा है मलिषे का सती चौरा दपो बनाय ।' आ० ४४१।१५

२ डोला धरि दौ तब बगिया में बेला उतरि धरनि में जाय ।

सान का भारत बला लीहा धी गुड लीहा तुरत मगाय ।

पूजा की हां का चौरा की तब बला ने कही मुनाय ।' —आ० ५७६।७ ६

३ दे० ट्वेनियर, भा० २, पृ० १६६

सर पटक पटककर प्राणांत करत चित्रित की गई हैं।<sup>१</sup>

कवि ग्वालकृत हम्मीरकूठ में भी महाराज से इसी प्रकार की भूल होने पर उनकी पत्निया और दुग नारिया, करोडा रायें दान न देकर राम राम और कृष्ण-कृष्ण कहती हुई जीहर की अनेक विधिया मनाती हैं। कवि ग्वाल ने इनमें उच्च स्याना से कूदने, तालावा में डूबने पेशक-त्रोमे उदर विदीण करने खडगा के साथ सती होने विपपान करने, हीरे की बनी घाटने, बाहद में प्राण लगाकर उसमें भस्म होने, तथा गम तेल के बडाहा में कूदने की विधिया का चित्रण किया है।<sup>२</sup> इस सामूहिक आत्मोत्सव के कारण कवि ग्वाल के शब्दा में दुग म रानी खवासिनि और वदिया का तो कहना ही क्या परिदा तक जीवित नहीं बचता, जिस देखकर नगर के नगरारी सर पीटते हुए अश्रुपात करत हैं।<sup>३</sup>

सुजानचरित में घासहरा नामक दुग के शासक राव बहादुरसिंह उडगूजर महाराज सूरजमल के हाथा पराजय की सीमा पर पहुँच जात हैं। विजिता-वाहिनी उनके दुग की प्राचीर ध्वस्त करके रनिवास के समीप भार काट आरम्भ कर देती है। बडगूजर अपना अन्तिम समय सन्निवृत्त जानकर, अपने परिवार की स्वया की और स निश्चित होकर मरण का निश्चय करते हैं। इस काय के लिये वे अपने एक विश्वस्त सेवक को आदेश देते हैं कि मेरे परिग्रह की हत्या करके, मेरी लज्जा की रक्षा करा। अश्रुरित नेना से महल में गया हुआ सेवक उनकी महिषी, दुहिता और राजकुमार का जीहर के लिए प्रस्तुत पाता है, तथा खडग से उन तीनों के गीश उत्तार लेता है। उस रक्तरजित खडग का महाराज को दिखाता हुआ वह उनके आदेश के पूरा किए जाने की प्रतीति कराता है।<sup>४</sup>

### त्यौहार —

ब्रजभाषा के वीरकाय में सनीना, नवदुर्गा विजय दशमी, दीवाली, गोवद्धन, वसन्त पंचमी, शिवरात्रि और होली जैसे प्रमुख त्यौहारों के मनाए जाने का ही चित्रण मिलता है। केशवदासजी ने मदन महोत्सव नामक पद्य की भी आयोजना प्रदर्शित की है। इन पर मास क्रम के अनुसार प्रकाश डाला जा रहा है।

### (क) मदन महोत्सव —

यह पद्य बदायिन समाज के उच्च-वर्ग में ही प्रचलित रहा होगा। 'प्रत परिचय नामक ग्रंथ में इसकी तिथि चन्न-शुक्ला त्रयोदशी बताई गई है।<sup>५</sup> कवि केशव न महाराज

१ दे० 'ह० ह०, च० २८८ से ३६५

२ ३ दे० ह० ह०' ग्वाल, छ० १५६ से २२५

४ दे० 'सु० च०' ५। ६। ३६

५ दे०, 'व्रत परिचय', प० हनुमान शर्मा प० ६८



प्रथा का चित्रण किया है<sup>१</sup> जबकि आल्हम्बड म उसी कृत्य को 'भुजरिया या सिराना'<sup>२</sup> अथवा 'भुजरिया की पवनी'<sup>३</sup> बताया गया है। ब्रज प्रदेश म यही कृत्य स्थल भेद म घुघा मिराना कहा जाता है। इन प्रथा म इस पव पर रथा गूत्र बांधन आदि विधि विधानों का चित्रण नहीं मिलता, अपितु राजपूता की उम विभिन्न प्रथा का चित्रण किया गया है जिसम राजू वामाया द्वारा बजरिया या भुजरिया क निविघ्न छूटन या पवनी को लज्जास्पद समझा जाता था। इसक विपरीत गृह पक्ष इस पव क अचमर पर सागर म सिराय जाने या न लौना को, शत्रु द्वारा चूट दिया जाना, स्व मर्णादा के विरुद्ध मानकर उनके निविघ्न परिसमापन का प्रयत्न करता था<sup>४</sup> जिसस यह पव बहुधा भयकर मारकाट की रगस्थत्री बन जाता था। परमालरासो और आल्हम्बड के विवरण स लीने के विषय म अधोलिखित तथ्या पर प्रकाश पड़ता है—

बजरी या भुजरिया के दोन (ये लीने स्वण निर्मित दिखाप गय हैं।<sup>५</sup> उत्तर पूर्वी भारत म इस समय भी दोना म ही जा या गई उगाय जाने हैं जयकि ब्रज प्रदेश मे उ हैं प्राय मिट्टीके बने मशीरा म उगाया जाता है।) कुएँ या सागर पर मिराये जाते थे। इनमे से विशेषत राजपूता म गयू मय सउट्टे कुएँ पर 'मिराना लज्जास्पद समझा जाता था।<sup>६</sup> निवास म्यान से भुजरिया का उठात समय ब्राह्मणादि को दान देकर<sup>७</sup> म्त्रियाँ मंगल गान करती हुई सागर की ओर वृच करती थी<sup>८</sup> तथा प्राय हरे रग के वस्त्र पहनती थी।<sup>९</sup> माताएँ स्व-मुत्रा के नामा का उल्लेख करते हुए दोना का चुटती थी। महागनी मरहना आल्हा, उल्ल आदि का नाम लेत हुए आठ लीन चुटत चित्रित की गई हैं।<sup>१०</sup> बहना द्वारा सागर म सिराय गय दोनों को माई निया कर पुन बहन को सौंप देता था।<sup>११</sup> व इसम स भुजरिया होडकर आताआ क काना म घूरमता थी<sup>१२</sup> और प्रनितान म माई की मामर्थ्यानुसार द्रव्य प्राप्त करनी थी।<sup>१३</sup> अतत मल्हार गाते हुए भूता भूतन के साथ इस पव का समापन होता था।<sup>१४</sup> परमालरासो म भुजरिया के छूटन की समाप्ति पर दान देने की भी प्रथा दिखाई गई है।<sup>१५</sup>

### (ग) नवदुर्गा —

कवि चन्द ने इस पव को 'नवदुर्गे'<sup>१६</sup> तथा मान ने नी दीह<sup>१७</sup> की मना प्रदान की

- १ से ४ द० क्रम० आ० ४१७७, पर० रा०' १०३२४, वही ४४३२५ आ०' ४४८७८
- २ से १२ द० क्रम० आ०, ४४४५, पर० रा०' १०४६३ आ० ४५३२३ २४ पर० रा०' १०४८४, 'पर० रा०' १०४८४, 'मा०' ४५५१५, 'पर० रा०', १०४६४ आ०, ४७११६,
- १३ १६ द० आ० ४७११० वही ४७११६, वही, ४७११६, वही, ४७११०४ २५, वही ४७५११ पर० रा०' १०४६१
- १७ १८ द० क्रम० ५० रा०, मो० ४८६६१४, 'रा० वि०' ११५६,



है। यह त्योहार असोज और चत्र मास के गुल पक्षा के प्रथम नौ दिवसों तक चरम में दो बार मनाया जाता था।<sup>१</sup> विजयादशमी से पूर्व की नवरात्रियाँ की पृथ्वीराजरासो में क्षत्रियों के लिए बड़ी महत्ता प्रदर्शित की गई है।<sup>२</sup> इन दिनों में दुर्गा के दशन करके उसका हवन कराना तथा उस वलि प्रदान करने की प्रथा थी।<sup>३</sup> चौंसठ योगिनियों के लिए भी उतनी मात्रा में तीव्र जलाए जाते थे, तथा उनके लिए कण्ठीला में शृंगार सामग्री लटका दी जाती थी।<sup>४</sup> इस पर्व पर ब्राह्मण के यात्रियों को क्षीर भोज देने का बड़ा माहात्म्य समझा जाता था।<sup>५</sup> अमीष्ट कार्यों में सफलता के लिए देवी की 'जात' (लोक शब्दावली में पीले वस्त्र पहनकर काँगा जवानामुंगी या बेलोन नामक स्थानों की देवियाँ के दशन कराने जाते—देवी की जात करना कहलाना है) बानन की प्रथा थी। रासोकार ने धीरे-धीरे पुण्डरीक से यह मनीषी मागत चित्रित किया है कि यदि तारी कृपा से मैं जतस्तम्भ भेदन की प्रतियोगिता में सफल रहा तो तारे दशन करके ही अनाहार ग्रहण करूँगा।<sup>६</sup>

कवि मान ने चत्र मास के 'नवदीहो' की तृतीया को अनेक सधवाएँ पातिव्रत्य की कामना से तथा कुमारियाँ उत्तम पति प्राप्त करने की आकांक्षा से सुमधुर गीत गाती हुई वन में (हरी द्रव्य और पुष्प लेने) जाते प्रदर्शित की हैं।<sup>७</sup> आजकल यह पर्व गौर-पूजा के रूप में प्रचलित है।

### (घ) विजया दशमी —

विजया दशमी के विषय में वीरकाव्य में अधिक निर्देश नहीं मिलते। पृथ्वीराज रासो में महाराज पृथ्वीराज विजया दशमी को स्वयंमानों के बल परीक्षण निमित्त स्तम्भ भेदन की प्रतियोगिता आयोजित करते हैं।<sup>८</sup> राजविलास में महाराज राजसिंह विजया दशमी के पर्व पर अपनी स्वयं-मुला कराकर स्वयं को दरिद्रों में वितरित करते चित्रित किए गए हैं।<sup>९</sup> इन निर्देशों से स्पष्ट होता है कि इस पर्व पर क्षत्रिय गण सचालन और पौरुष परीक्षण की प्रतियोगिताएँ किया करते थे और उस क्षत्रियों की विजया का दिवस मानकर दान दिया करते थे।

### (ङ) दीपावली —

दीपावली चतुर्विंशक मनाया जाने वाला त्योहार था।<sup>१</sup> पृथ्वीराजरासो में इस त्योहार के प्रचलन के मूल में यह कथा ली गई है कि—सतयुग में किसी काचित्त अमा

१ स० ४ प० रा० मो० मो० ४।८६१।४ वही ४।८६८।१ वही ४।८६१।४ वही ४।८७०।५

५ से ६ द० प्रम० प० रा०, मो० ४।८६१।३ वही का० २०२१।६० रा० वि०' १।१५८६० प० रा० मो० ४।८६८।१ रा० वि०', ८।१५७

१० द० प्रम० प० रा०, का० ६७६।३४

वस्या को मात्र एक ब्राह्मण के ही गृह में दीपमालाएँ जल रही थी। लक्ष्मी को जब इस ब्राह्मण के अतिरिक्त कहीं पर भी प्रकाश किरण न दिखाई दी तो वह उसी के गृह में निवास करने आ गई। बाद में अग्य प्रजाजना ने भी ब्राह्मण की समृद्धि का मूलकारण जानकर वित्त कामना से वार्तिक समावस्या को दीपमालिका जलानी आरम्भ कर दी।<sup>१</sup> दीपावली के विषय में वीरकाव्य में मात्र यह उल्लेख और मिलता है कि उस रात्रि को जुग्रा खेलन की प्रथा थी।<sup>२</sup>

### (च) गोवद्धन पूजा —

यह पर्व दीपावली के अग्रिम दिवस मनाया जाता है। मुजानचरित में वह कथा दी गई है जिसमें श्रीकृष्ण द्वारा इंद्रपूजा को बंद कराकर गो घन और विप्रों की पूजा आरम्भ कराने पर, इंद्र ने कुपित होकर व्रज प्रदेश को डुबो देने की आकांक्षा से सात अहोरात्रि पथत मूसलाधार वर्षा की थी, तथा श्रीकृष्ण ने गोवधन पर्वत को छिगुनी पर उठाकर श्रन्त नर नारियों की रक्षा की थी।<sup>३</sup>

### (छ) वसत-पंचमी —

पृथ्वीराजरासो के अनुसार— ऋतुराज वसत के आरम्भ में वसत पंचमी को श्रीकृष्ण के पाग खेलने का आयोजन किया जाता था।<sup>४</sup> कपूर अग्रह केसर कस्तूरी अनेक प्रकार के पुष्प श्वीर राती और गुलाल आदि पूजा सामग्री और मोग लगाने के लिए मेवा मिष्टानादि उत्सवस्थल पर लाए जाते थे।<sup>५</sup> महाराज के आवास के आगन में तम्बू गाडकर गुलाबजल छिन्की हुई और अरीर घूलि उडती हुई स्वली पर जाजिम बिछाकर उसके ऊपर अमून्य गलीचे बिछाए जाते थे तथा नाना सुगंधित धूपा के घूम्र स वातावरण को सुवासित बनाया जाता था।<sup>६</sup> मध्य में नगजडित स्वण सिंहासन पर श्रीकृष्ण की मूर्ति आसीन की जाती थी।<sup>७</sup> पूजा के आरम्भ होने पर घटे शय्य भानर मृदग, वीणा नपीरी भरी, सहनाई डाल, नगाडा और बशी की मधुर तान बजाई जाती थी।<sup>८</sup> अनेक प्रकार की बशभूषण मसुसज्जित आवालवृद्ध नर नारियाँ तथा महाराज पृथ्वी राज और उनके सामन्ता की उपस्थिति में नृत्य और नाट्य विद्याया में प्रवीण कलाकार श्रीकृष्ण जीवन के विविध प्रमगा का अभिनय प्रस्तुत करते थे।<sup>९</sup> विश्वास किया जाता था कि श्रीकृष्णनीलाभा व प्रेक्षण और श्रवण से प्रेक्षकों के पाप प्रणालित हो जायेंगे।<sup>१०</sup> नाट्य के अन्त के साथ ही उत्सव समाप्त हो जाता था।<sup>११</sup>

### (ज) शिवरात्रि —

यह महात्सव फाल्गुन मास की त्रयोदशी को मनाया जाता है किन्तु पृथ्वीराज

१ से ४ 'प० रा०' का० ६७७।१६ से ६७६।३५, वी० च०, १८।२४, 'सु० च०', ७।१।४२ ७।१।५७, प० रा०', का०, १।६२।७८ ७६

५ से १२ दे० प० रा०' का० १५६२।६६ से १५६४।६६

रासो के अनुसार चतुदशी को गनाया जाता था।<sup>१</sup> कवि चंद्र ने शिवरात्रि के अवसर पर महाराज सोमेश्वर का पंचगव्य से स्नान करके शिव का हवन और जप करते, शिव पिण्डी को सहस्र जलघटा से स्नान कराने तथा एक घृत तीप जलाकर पुष्पापण करते विव्रित किया है। व उपवाम रगत हैं तथा शिवरात्रि के चारायाम जापरण म वित्त कर उपा माल म अपना स्वण तुल व स्वण को तथा वस्त्र और अन्न ब्राह्मणो म वितरित करते हैं। व एक विशाल भोज भी दत्त है जिसम जो चाह उसको पट रम अन्न खिलाए जात हैं।<sup>२</sup> कहना न होगा कि सोमेश्वर अपने राजसी वभव के कारण जहाँ दीया एव जलघटो की सहस्र सह्या का प्रयोग करते और दान म स्वण वस्त्र तथा अन्न का मडार लुटाने हैं, वहा जनसामान्य इनकी सामर्थ्यानुसार मात्रा का प्रयोग करते होंगे।

### (भ) होली —

होली के अवसर पर समस्त सामाजिक वर्ण भेद और उँच नीच की भावनाओं को तिलाजलि देकर परस्पर मिलते जुलते थे।<sup>३</sup> रामोकार ने होली मनाने का मूल कारण, होलिका और प्रह्लाद की बहु प्रचलित कथा के स्थान पर ढकी नामक राक्षसी से परित्राण पाना दिया है।<sup>४</sup> कवि चंद्र ने होली मनाने की जो विधि दिखाई है, उससे ज्ञात है कि इस अवसर पर नर-नारी भ्रामाभ्य और सामाजिक मर्यादाया का ध्यान नहीं रखते थे।<sup>५</sup> वे सिरों पर मूप रखकर गधो पर सवारी करते हुए अन्नगल बकवाद करने लगते थे।<sup>६</sup> स्त्रियाँ भी लोक कानि को ताऊ पर रखकर पुरुषों के साथ नृत्य गान करती और निरवक गीत गाती थी।<sup>७</sup> गृह गृह म जलाई गई होलिका की राख और धूल को एक दूसरे पर फेंकना ही उनकी होती मनाने का प्रमुख अंग था।<sup>८</sup>

रासो के विवरण से स्पष्ट जाना है कि होली मनाने की विधि म कीचड राख और धूल आदि डानने की प्रधानता रहती थी। गदमो की सवारी अश्लील शब्दावली अमशय भक्षण और निलज्जता की सीमा को पहुंचा हुआ स्त्री पुरुषा का नृत्य गान वस्तुतः हाली मनाने की अद्यतन ग्रामीण पद्धति का मूल रूप है।

कवि तानसन न श्रीकृष्ण द्वारा पाग रचाने का जो वर्णन किया है उससे अक्षर बाल म सामान्य-वा म प्रचलित होली के स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है। इससे ज्ञात होता है कि ताल, पगावज, भावभू डोलर, बीना खाव और धुरण आदि वाद्य-यंत्र

१ ग्यारह सौ गुनतीस वरि पागुन चवत्सि सोम ।

शिवरत्री सोमम नप तिसा मडि जप होम ।

प० रा० का० ३०६।१

२ दे० वही ३०६।२ से ३२६।६

३ च्यारि बरन दक्षत भिन । कलह रूप कन्हत ।

पापि प्रपाधि न जानही । ज्या मन नहि मिलत ।

—प० रा० का०, ६७१।३

४ द० पृ० रा० का० ६७।२१

५ स० द० पृ० रा०, का०, ६७३।१७ स ६७३।१८

बजत हुए कुकुम, केसर, चन्दन, अवीर और गुलाल की भोरियाँ उँडेलकर पाग रचाया जाता था।<sup>१</sup> राजमहना में इस अवसर पर स्त्रियाँ भी कोई मृदंग बजाती कोई गाती और अथ तालियाँ बजा बजाकर नृत्य करती थीं। व अवीर बसर और गुलाबजन की एक दूसरे पर पिचकारियाँ छोड़ती तथा गालियाँ गाती थीं। कवि जोधराज और तानसन ने फगुआ<sup>२</sup> माँगने की प्रथा का भी उल्लेख किया है।<sup>३</sup>

कवि बंशव ने महाराज रतनसेन पर पठाना द्वारा चारों ओर से वार किए जाने की उपमा गडल छुड़ाने वान व्यक्ति पर स्त्रियाँ द्वारा चारा और से वार किए जाने से देकर<sup>४</sup> व दनपण्ड में होलिकावसर पर 'गडल छुड़ाने नामक श्रीडात्मक आयोजन पर प्रकाश डाला है। लाला भगवान्‌जी के अनुसार, इस खेल में—एक चित्रना स्तम्भ जमीन में गाड़कर उसके सिर पर गुड़ की एक पारी<sup>५</sup> और रूपया बाँधकर लटका देते हैं। गुड़ और रूपये की रक्षा के लिए खम्बे के चारों ओर स्त्रियाँ खम्बे लम्बे डडे लकर खड़ी हो जाती हैं। पुरुष रूपया और गुड़ उतारने के लिए उस चित्रना खम्बे पर चढ़ने का प्रयास करते हैं, जबकि स्त्रियाँ उनकी डडाँ से पिटाई करके उनके प्रयास को निष्फल करने की चप्टा करती हैं। पुरुष के एक हाथ में अपना बचाव करने के लिए लकड़ी का चौखटा या जेरी भी होती है। यदि कोई पुरुष उस पोटली को उतारने में सफल हो जाता है तो रूपया तो वह स्वयं रख लेता है जबकि गुड़ वहाँ पर एकत्र लोगों में वितरित कर दिया जाता है। यदि उसमें कोई भी पुरुष सफल नहीं होता तो दोनों ही वस्तुएँ स्त्रियाँ को मिलती हैं।<sup>६</sup>

### मुस्लिम त्यौहार —

वीरकाव्य में मुमलमानों के ईद, बकरीद नामक त्यौहार तथा नवरोज नामक उत्सव का उल्लेख मिलता है। कवि मान और श्रीधर ने मुमलमानों द्वारा ईद मनाने का उल्लेख मात्र किया है जबकि कवि सोमनाथ ने आजमगढ़ों, गाजी द्वारा ईद मनाने का वर्णन करते हुए उसका दरबार में सुरपति जिस राग राग का आयोजन प्रदर्शित किया है। मदन वेणु शक्ति यादों की मुमघुरताना पर काम कला जसी वारागनाए नृत्य करती हैं, जिन पर रोझकर गाजीला कंचन वर्षा करते और पुरस्कार रूप में सौ गयद प्रदान करते हैं।<sup>७</sup> तानसन ने सम्राट अकबर को गुग युगान्तर तक ईद मुबारक होने की

१ से ३ दे० अ० द० केहि० क०' ४१३।१।१ वही, ४१३।१।२ 'ह० रा०,'

३१, 'आ० द० केहि० क०, ४१३।१।२

४ 'इक इक घाउ घल्लिय सवन रतनमन राधीर कह।

जुनु भ्वाल बाल होरी हरपि, मडन धोरत और कह।' —वी० च०, ६०

५ ब्रज प्रदेश में पारी का भेलो कहते हैं—शोधक

६ द० 'वेशव प्रथावनी, भा० ३ प० ८६३

कामना प्रकट की है<sup>१</sup> जिससे आज्ञा की भांति उस समय भी ईश्वर अन्तर पर मुवा  
रकवाद देने की प्रथा का अभिधान हुआ है।

श्रीधर ने जगन्नाथ में मन्त्र-तरंग से आपूरित मौजूदगी द्वारा नवरोज का  
उत्सव मनाने का आदेश दिलाया है।<sup>२</sup> नवरोज वस्तुतः एक नये गान और रंगरे  
लियाँ मनाने से ही सम्पन्न उत्सव था।<sup>३</sup> कवि सोमनाथ ने आज्ञामयी द्वारा बकरौद मनाने  
का वर्णन करते हुए, उसे निज-प्रशंसा में कवित्त सुनने दरवार में अन्तर्गत कलाकारों का नृत्य  
कराने तथा 'तुर्दिक' से मुबारकवाद पाने का उल्लेख किया है।<sup>४</sup>

### अभिवादन और आशीवाद की प्रणालियाँ —

माता पितादि गुरुजनों की आज्ञा पालन का सङ्घ ही उनके सम्मुख नतमस्तक  
होकर उनकी सुभेच्छाओं का प्राप्त करना पुत्रादि के लिए अति प्राचीन काल से काम्य  
रहा है। इसमें द्विविध भावनाएँ सन्निहित रहती हैं—गुरुजनों को स्वयं से पारिवारिक  
या सामाजिक महत्ता की दृष्टि से कनिष्ठ व्यक्ति को सम्मान प्रदर्शित करते देखकर  
जहाँ आत्म-परितोष का अनुभव होता है वहीं अभिवादन के अतिरिक्त यह धारणा  
बढ़मूल रहती है कि गुरुजनों के हृदय से निःसृत मंगलेच्छाएँ उनके दुःख-दर्दों का निर-  
सन करती हुई सुख-समृद्धि प्रदान करती हैं। इस विनम्रता प्रदर्शन का परिधि विस्तार  
पारिवारिक जनो के समस्त अर्थ सामाजिक तथा राजकीय मर्यादा में श्रेष्ठ पदा-  
धिकारियों के लिए होता हुआ समस्त समाज-व्यवस्था को आपूरित कर लेता है।  
विभिन्न मयादाओं के अनुकूल अभिवादन और आशीवाद भी भिन्न भिन्न प्रकार के  
होते हैं। वीरवाक्य में इनके जिन रूपों का निदर्शन हुआ है उन पर आगे प्रकाश डाला  
जा रहा है —

### दण्डवत् —

दण्ड के समान सीधे होकर तथा पृथ्वी पर झींके बैठकर किया जाने वाला  
नमस्कार दण्डवत् कहलाता है। कोशग्रंथों में इसे साष्टांग प्रणाम से अभिन्न दिखाया  
गया है, जिसमें सिर हाथ पर, हृदय आग, जाघ, वाचा और मन इन अष्टांगों से अभि-  
वादन किया जाता था।<sup>५</sup> अभिवादन की इस प्रणाली का देवताओं, महापुरुषों तथा  
ब्राह्मणों के लिए प्रयोग किया जाता था। महाराज व वीराज अपनी नृत्यक नियाँ में

१ स ४ अक्वरी दरवार में हिंदी कवि० ४११।१४२ जग० ६६८ ६६ आईए ए  
अक्वरी भा० ३, प० २८६, नवाबोल्लास श्री० हि० सा० स०, प० ४ पर  
उद्धृत।

२ जानुम्या च तथा पदम्या पाणिभ्यामुत्साधिया।

शिरसा वचसा दृष्टया प्रणामाष्टांग ईरित ॥ —संस्कृत हिन्दी कोश, पृ० १६६६

देवा को पात्र दण्डित करते थे।<sup>१</sup> कवि चण्ड प समग्र जय उसके द्वारा सिद्ध किए गए वाचन-वीर प्रसूत होने हैं तो वह उनको दण्डित करके, भ्रजति बाधकर खड़ा हो जाता है।<sup>२</sup> परमालरासा म महाराज अनन्यपाल एक आगतुक्त विषयी दण्डित करते चित्रित किए गए हैं।<sup>३</sup>

चरणों में गिरना तथा चरण स्पर्श करना —

माता पितादि के चरणा में गिरकर अभिवादन करना एक प्रकार से दण्डित प्रणाम का ही छोटा रूप था। इसी से साम्य रगन वाली वह अभिवादन प्रणाली थी, जिसमें चरणों में गिरने के स्थान पर उन्हें मात्र स्पर्श करके विनम्रता प्रकट की जाती थी। चरणा में गिरकर, उन्हें पकड़ लेने की विधि का सर्वाधिक प्रचलन परमानरासो में लिखाया गया है। उमम हेमवती सुरगुरु और चन्द्र आदि देवा के<sup>४</sup> महाराज चण्ड बहू और उनकी रानियाँ, उनकी माता<sup>५</sup> र आल्हा ऊल अपनी माता और मौसी के<sup>६</sup> मल्लिखान आल्हा के<sup>७</sup> तथा मछला और इदल जगनिव के चरणा में गिरते चित्रित किए गए हैं।<sup>८</sup> पृथ्वीराजरासो<sup>९</sup> वीरचरित्र<sup>१०</sup> मुजानचरित्र<sup>११</sup> हम्मौरहठ<sup>१२</sup> और आल्हा खण्ड<sup>१३</sup> में भी ऋषि माता और अग्रजा के लिए इस अभिवादन प्रणाली का प्रयोग लिखाया गया है। क्यामर्वा रामो<sup>१४</sup> और वीरचरित्र<sup>१५</sup> में वादगाहा के चरणों में गिरने की भी प्रथा दिखाई गई है।

पृथ्वीराजरासो में महाराज सारगदेव की रानी अपनी सास के पर-नगते (पर लगना ब्रज प्रवेश में वधुआ की उस त्रिया के लिए रुक हो गया है जिसमें व उनकी पिन्लिया रानी हैं) चित्रित की गई हैं<sup>१६</sup> जो चरण स्पर्श की कोटि में आता है। इसके अनिरिक्त महाराज सारगव<sup>१७</sup> पृथ्वीराज,<sup>१८</sup> सूरजमल<sup>१९</sup> और राजकुमार रतसी<sup>२०</sup> स्व-स्वपिता के हिमालय का पुत्र नन्द स्व माता पिता के<sup>२१</sup> शाह अलाउद्दीन की बगम स्व-पति के,<sup>२२</sup> आल्हा ऊल स्व माता देवा<sup>२३</sup> तथा माता-तुल्य रानी मल्हना के,<sup>२४</sup> तथा इदल स्व चाचा मल्लिखान के<sup>२५</sup> चरण-स्पर्श करते मिलते हैं।

सम्मान्य प्रतिथिया और सम्बन्धियों के आगमन पर, उनके भी चरण-स्पर्श

१ स ३ दे० पृ० २०' का०, १६६।६८ वही, ३०६।५८, पर० रा०, १।३७

४ स १५ दे० प्रम० पर० रा० १।१३०, वही, २।१६, वही १।१।२५ वही १।५।२१ वही, १।१।२०, 'प० रा० का० २००।६।१६५ वी च०' १।५।४ सु० च० २।३।१७ 'ह० ह० च० २७८, 'आ० ४।।३, क्या० रा० २७६, 'वी० च० ४।।२

१६ से २। द० नम० प० रा० का० ७२।३६१, वही ७२।३५६, प० रा०' मा० १।१७।६६, सु० च० ७।२।२८, 'प० रा० का० ७५।०।६८६ वही, ४।१।१६७ ह० ह० च० ६६, 'पर० रा०' १।०।८१०, 'आ० १।५।१६, वही, २७।०।६

करने का प्रचलन था। पृथ्वीराजरासो म त्रपि चतिष्ठ व आगमन पर हिमालय द्वारा सपत्नीर, उनका चरण स्पश करने<sup>१</sup> तथा महाराज पृथ्वीराज द्वारा अपने वहनाई रावत समर विजय व चरण स्पश करने<sup>२</sup> स उन नय्य की पुष्टि होती है।

जनता नरेगा के तथा शरणार्थी पुष्प और मुद्गवती भी चरण प्रदाना और विजेताओं के पादा का स्पश करके अभिवादन और दय प्रदान करत थ। पृथ्वीराज रासो म महाराज सारगदव के राज्याभिषेक के भवमर पर कवि चन्द न अनेक धत्रिय और वश्य प्रजा-जनो का उनके चरण स्पश करत प्रदर्शित किया है।<sup>३</sup> महाराज पृथ्वीराज स भयत्रस्त अनक नरेश उनके चरण स्पश करके विनम्रता का प्रकटन करत हैं। परमाल रासो म बंदी वसुपाल और उसकी रानिया आल्हा के पाद स्पश करत चित्रित किये गये हैं।<sup>४</sup> हम्मीररासो म महिमा शाह महाराज हम्मीरदेव के चरण स्पश करके उमको शरण प्रदान करा की याचना करता है।<sup>५</sup>

मुसलमानो मे भी शेरशाह आदि पूज्य व्यक्तियों के चरण-स्पश करने का प्रचलन था। शाह गौरी के उमराव, दरवार म आने के समय शाह को तो सलाम करत हैं किन्तु शेरशाह चमन के चरण-स्पश करते हैं।<sup>६</sup> स्वयं शाह गौरी का भी हम उनके पाद स्पश करते पाते हैं।<sup>७</sup>

हाथ जोडकर शीश झुकाना —

अभिवादन की एक विधि—हाथ जोडकर शीश झुकाना मात्र भी थी। महाराज हम्मीरदेव स्व माता को<sup>८</sup> उनकी रानी<sup>९</sup> और सुरजन नामक चचेरा भाई महाराज हम्मीरदेव को<sup>१०</sup> महाराज पृथ्वीराज के सामने दरवार म पनापण के समय दिल्ली श्वर को,<sup>११</sup> तथा युद्धाय अश्वारूढ होते समय महाराज सूरजमल<sup>१२</sup> इमी विधि से अभिवादन करते चित्रित किए गए हैं।

प्रणाम —

अभिवादन की इस प्रणाली का कई ग्रथो मे चित्रण मिलता है जिससे इसका पर्याप्त प्रचलन सिद्ध होता है। पृथ्वीराजरासो म महाराज गोला भीम का दूत महाराज सलख पवार को प्रणाम करता है।<sup>१३</sup> परमालरासो म चामु डराय महाराज पृथ्वीराज को<sup>१४</sup> तथा आल्हा महाराज परमाल को प्रणाम करत है<sup>१५</sup> जबकि महाराज जयचन्द आल्हा ऊदल के

१ से २ दे० क्रम० प० रा०, का० ३७।१७६ वही १०६।१५७

३ से १३ दे० क्रम० 'प० रा०' का० ७२।३६१, प० रा० मो० २।६५७।५ ह० रा०, छ० २८४, वही, छ० २६६ प० रा० का० ६०७।४० वही, ६०७।३५ 'ह० ह० ग्वा० १४६ ह० रा० छ० ६६६, वही छ० ६६२, प० रा०, का० ६६७ सु० च०' ७।२।२८

१४ से १६ दे० क्रम० 'पर० रा०' २।१।८६, 'प० रा० का० ४४६।२२, वही, ८।२१

माध्यम से महाराज परमाल को प्रणाम भेजत विप्रित विष्णु गए हैं।<sup>१</sup> इसी मानि कीतिलता म महाराज कीतिंसिंह साह गयामुहोी को, वीरचरित्र म रायराया नामक सरदार गाह भववर को<sup>३</sup> हिम्मत बहादुर विष्णुवती म मरणात्तन माधाता नामक योद्धा महाराज अजु नसिंह को<sup>४</sup> तथा राजविलास म महाराज राजसिंह के सामत, दरवार म आने के समय उन्हें प्रणाम करत मिलते हैं।<sup>५</sup>

### राम-राम —

सोक-जीवन म आजकल के अभिवादन की एक बहू प्रचलित प्रणाली, तथा श्रीरगजव काल १ धँवनाट नामक यात्री द्वारा भी मित्रा व पारस्परिक अभिवादन की एक व्यापक विधि घोषित की गई है।<sup>६</sup> राम राम के विषय मे जात नहीं अधिवास वीरकाव्य प्रणेता क्या मौन रहे हैं। मूदन न महाराज सूरजमन को उनक सनिका<sup>७</sup> तथा राजदूत द्वारा राम राम कराकर,<sup>८</sup> उनके प्रचलन पर अवश्य प्रकाश जाला है।

### जुहार —

परमालरासो म राजकुमार ब्रह्मा की वरान मे आमंत्रित नरेगण महाराज पर माल का 'नइ नइ' का जुहार करत हैं।<sup>९</sup> तथा कवि जान न मुण्डमानाभा के दुगह मार से नत श्रीवा यागिनी की उत्प्रेक्षा गिब को जुहार करने से की है,<sup>१०</sup> जिससे स्पष्ट होता है कि, जुहार करते समय शींग अवश्य भुवाया जाता था। हिंदी शब्द सागर म जुहार को राजपूता मा शत्रिया म प्रचलित एक प्रकार का प्रणाम, अभिवादन मलाम, या बदगी कहा गया है।<sup>११</sup> अभिवादन की इस प्रणाली का पृथ्वीराजरासो परमालरासो, नवामला रासो हम्मीररासो और हम्मीर हठ म प्रचलन दिखाया गया है। परमाल रासो मे देवा को भी जुहार करने की प्रथा दिखाइ गई है।<sup>१२</sup>

पृथ्वीराजरासो मे महाराज पृथ्वीराज के रायामिपेक के अवसर पर अनेक मुमट और प्रजा जन उनको जुहार करने आते ह।<sup>१३</sup> उनके सम्ब ध की दृष्टि से साने

१ से ५ 'पृ० रा० का०, १६।१८ कीति०' पृ० ५८, 'बी० च०', ६।२६, हि० व०, वि०, छ० १३४, 'रा० वि० १०।२६

६ दे० 'इण्डियन ट्र वल्स आफ थवनाट एण्ड करा', प० ६१

७ ८ दे० 'मु० च०', ३।५।१, वही ४।३।८६

८ 'उत्तरि अस्व गजराज त नै न करत जुहार।' —प० रा० १३।६८

१० मु डनि मार गईमुकि नार मनो हर हार जुहार कियो है।'—वया० रा०, छ० ६०४

११ दे० 'हि० ग० सा० प० ११८१

१२ किय मुवानम कल्पी सहर, कलेस्वरहि जुहार। —प० रा० १०।४५३

१३ दे० अम० 'पृ० रा०', का० १६६।७८



लगने वाले जतरान<sup>१</sup> और रामास,<sup>२</sup> महाराज मनमाल का दूत<sup>३</sup> और निडर राय<sup>४</sup> द्वारा उद्वृत्त जुहार करने के अतिरिक्त उक्त चाचा कह चौहान भी जुहार करते निवृत्त किए गए हैं।<sup>५</sup> कह द्वारा भी जुहार बिय जाने का कारण कदाचित् यह होगा कि राजकीय दृष्टि से महाराज पृथ्वीराज की स्थिति उच्च थी। महाराज पृथ्वीराज उनको आशिष दान घाल दुर्गा केन्दर के प्रति जुहार करते हैं।<sup>६</sup>

परमालरासो म आल्हा महाराज परमाल को,<sup>७</sup> आल्हा ऊल महाराज जयचन्द<sup>८</sup> को तथा कवि जल्हन तिल्लिन्दर पृथ्वीराज को जुहार करता है।<sup>९</sup> हम्मीर हठ म महाराज हम्मीरदेव क दरवान परणार्थी और मगोल को पाटुना वतारर मन मिलत और जुहार करते हैं।<sup>१०</sup>

प्रत्यग्दर्शिया से जुहार करने के साथ साथ समवयस्काणि क लिए जुहार कहला भेजने की भी प्रथा थी। रष्ट हाहुलि हम्मीर को मनाने गया, कवि चन्द उसे उसके साथी सामंता द्वारा जुहार कहला भेजने का सदेश देता है।<sup>११</sup> रावल समर विजय भी सयोगिता की दासिया के माध्यम से उस जुहार कहला भेजते हैं।<sup>१२</sup> इसी भाँति परमान रासो म महाराज परमाल द्वारा भेजे गए तुणौर कलगी और कमान को स्वीकार करता हुआ मल्लिकान उह जुहार करता है।<sup>१३</sup>

क्यामखा रासो म जुहार करने का कई अर्थों गया—अधीनता दीनता और युद्ध मे दो दो हाथ दिवान के अभिप्राय म प्रयोग किया गया है। क्यामखा चौहान के पुत्र स्व पता के शत्रु खिजरखा का जुहार करने नहीं जाता यद्यपि वह उन्हें दरवार म बुलाने की बहुत चेष्टाएँ करता है।<sup>१४</sup> फतेहखा चौहान जब फतहपुर नामक नगर बसाकर वहाँ दुग की स्थापना करता है तो आस पास के अनेक भूमिधर उस जुहार करके स्व अधीनता की प्रतीति कराते हैं।<sup>१५</sup> युद्धाय प्रमाण करते हुए शाह बहलोल लोदी से फतहखा का ससय जाकर जुहार करने<sup>१६</sup> और दौलतखा से मयनस्त कुछ भूमिधरो के जुहार आ करने को भी, कवि जान ने सदभगत अर्थ म प्रयोग किया है।

जुहार का युद्ध म दो दो हाथ करने के अर्थ म प्रयोग नाहरखा और जगमाल पवार क सदभ म किया गया है।<sup>१७</sup> नाहरखा आदि द्वारा स्व ग्रामो की सूट सुनकर शोषावित जगमाल स्व-दूत क माध्यम से उनको यह चुनौती भिजवाता है कि मैं युद्धाय आ रहा हूँ—आप लोग पलायन मत कर जाना। नाहरखा प्रत्युत्तर देता है कि जगमाल युद्धाय आने म अधीरता न दिखाकर धीरे धीरे चला आये मैं यहा से तब तक कूच नहीं बहूंगा, जब तक उसस जुहार नहीं कर लेता।<sup>१८</sup>

१ से १३ दे० प०रा० का० २३०५।१२०३ वही, ३१६।१३४ वही ६२२।१३, वही, १२०३।२८ वही ६५५।४५ वही १५२१।७२ पर० रा० ३।११० वही, १०।६२ वही ७।६६ ह० ह० च० ५५ प० रा० का० २२१७।६७४, वही, २११५।७० पर० रा० ५।४२

१४ १८ ८० अम० क्या०रा०' ३११ वही, ३८१, वही ३८७ वही, ७७३, वही, ६०६

मुजरा —

अभिवादन की इस प्रणाली का सर्वाधिक उल्लेख छत्रप्रकाश भूषण कवि गोरेलाल ने किया है। उन्होंने मुजरा के अतिरिक्त अभिवादन की अन्य किसी विधा का उल्लेख किया ही नहीं है। गारेलाल के विवरणों से ज्ञात होता है कि मुजरा करत समय शीश भुजाया जाता था।<sup>१</sup> छत्रप्रकाश भूषण महाराज चम्पतिराय<sup>२</sup> छत्रसाल और दलेलखा<sup>३</sup> साह औरगजेय को तथा महाराज छत्रसाल का आगतुल राजदूत<sup>४</sup> मुजरा करत चित्रित किए गए हैं। पथ्वीराजरासा में विजयी होकर लौट महाराज पथ्वीराज पर उनकी रानिया द्वारा थोछावर करने की सजा दी गई है।<sup>५</sup> इसके अतिरिक्त बीरचरित्र में महाराज बीरसिंहदव का दूत गह सलीम को<sup>६</sup> तथा राजविलास में महाराज राजसिंह को उनके सनिह<sup>७</sup> मुजरा करत दिखाए गए हैं। मानक हिंदी कोश में 'मुजरा अरबी के 'मुज्रा' शब्द का रूपांतर बताया गया है तथा उसका अर्थ किसी बड़ के सामने झुककर किया जान वाला अभिवादन दिया गया है जो कवि गारेलाल प्रदर्शित मुजरा करने की विधि से साम्य रखता है।<sup>८</sup>

बदगी —

अभिवादन की इस रीति का मान गाल्हखण्ड में उल्लेख मिलता है। इस ग्रंथ में वही बह मलाम की पर्यायवाची दियाई गई है<sup>१</sup> और वही सलाम से पृथक् अभिवादन प्रणाली प्रदर्शित की है।<sup>२</sup> मानक हिंदी कोश में बदगी के अर्थ—किमी का आन्तरपूर्वक किया जाने वाला अभिवादन नमस्कार और सलाम लिए गए है।<sup>३</sup> गाल्हखण्ड से ज्ञात होता है कि किसी को बाएँ हाथ में बदगी करना अपमानजनक माना जाता था। सदमगत तथ्य के आधार पर उसका कई प्रसंगों में अभिवाद्य पुरुष अत्यंत क्रुद्ध चित्रित किए गए हैं।<sup>४</sup>

सलाम —

मुसलमानों से अनुष्ठान बढ़ते हुए ससग तथा शाही दरबारों में गद्दशाहा की अनिवाद्यत सलाम करने की प्रथा के कारण, अभिवादन की इस प्रणाली का हिंदुओं में भी प्रचार बढ़ता जा रहा था। पथ्वीराजरासा में मुसलमानों द्वारा मुसलमानों के प्रति<sup>१</sup> हिंदुओं द्वारा मुसलमानों के प्रति<sup>२</sup> तथा मुसलमानों द्वारा हिंदुओं के प्रति सलाम करने<sup>३</sup> के उल्लेखों के अतिरिक्त हिंदू भी परस्पर सलाम करने दिये गए हैं।<sup>४</sup> परमाल

१ 'छ० प्र० ६१६

२ स १३—दे०त्रम० छ० प्र० ६१६, वही, ७१६, वही, २२११, वही १११४, प०रा०, का० ७५०।४८८ ८६, वी० च०, ७१५२ 'रा० वि०, १८१६८, 'आ०' २५०।६७, वही २३२।२ वही ६१४६, वही, ६११६

१४ से १७ दे०त्रम० पृ० रा० का० १३५७।६७, वही, ७२२।२६६, वही, ६५१।४६, वही ७०४।३०८५

रासो<sup>१</sup> मुजान चरित<sup>२</sup> हम्मीररासो<sup>३</sup> और माहसण्ड<sup>४</sup> म भी सलाम द्वारा हिंदुमा के परस्पर अभिवादन की प्रणाली चित्रित की गई है। कवि सूदन ने तो कुमार जवाहरसिंह का प्रथो पितामह महाराज बर्नासिंह से सलाम करते दिखाकर,<sup>५</sup> उसका प्रचलन पारिवारिक जीवन में भी दिखाया है। प्रतीत होता है कि सूदन ने ऐसा निर्देश या तो प्रमाद-वगैरे किया है, अथवा उसने सम्पूर्ण पाठ-भूति का व्यवधान रखा होगा। मुसलमानों में परस्पर, अथवा हिंदू और मुसलमानों द्वारा एक दूसरे को सलाम करने का तो—क्यामथा रासो,<sup>६</sup> रण मल रा<sup>७</sup> जगनामा<sup>८</sup> मुजान चरित<sup>९</sup> हम्मीररासो<sup>१०</sup> हम्मीर हठ<sup>११</sup> गोरा-बादल की कथा<sup>१२</sup> और भूषण प्रयायनी<sup>१३</sup> सभी प्रथो में बहुसंख्यता से प्रचलन दिगाया गया है।

### तोनिंग और तस्नीम —

अभिवादन की ये दोनों प्रणालियाँ मुख्यतः बांग्लाहा व लिय प्रयुक्त की जाती थी और दरवारी मन्थना अभिवाद्य प्रथ थी। तस्नीम का क्यामथा रासो<sup>१४</sup> बीरचरित<sup>१५</sup> और परमालरासो<sup>१६</sup> में उल्लेख किया गया है। पथीराजरासो में भी कवि ने छूटत समय माह गोरी<sup>१७</sup> तथा उनका बहीन<sup>१८</sup> को महाराज पृथ्वीराज से तथा गारा बाग्न की कथा में गोरा और बाग्न का माह भनाउहीन<sup>१९</sup> से तीन बार मन्थना करते प्रदर्शित किया गया है जो तस्नीम से बहुत कुछ सादृश्य रखता है। धार्मिक अन्तरी से प्राप्त होता है कि बाग्न माह म जैत किया गया जागीर धार्मिक प्राण्य करने के अथवा पर तीन बार तस्नीम करने की प्रथा थी।<sup>२०</sup> तस्नीम विधि यह था कि तस्नीम-नाम धरने दाहिने हाथ के पृष्ठ भाग को जमीन पर रखकर तीन-तीन ऊपर उठाया या और भीधा गडा हो जाते पर अर्थात् तस्नीम का निरामाग से लगाया था।<sup>२१</sup>

अभिवादन की कानिग प्रणाली त्रिगता छत्रप्रदाय<sup>२२</sup> और माह मण्ड<sup>२३</sup> में उल्लेख किया गया है तस्नीम मन्थन दृष्टि से मन्थन था कि दक्षिण हाथ के पृष्ठ भाग का भूगण्डाकार ऊपर उठाया जाता था अथवा उठाया या अथवा पर रखकर तीन

१ म १० ६० पा० रा० ३६१ मु० म० ०१०१६ ७० रा० ६१० मा० ११८१

२ १० म० म० ११११० ३३० रा० ३३० १६० १० ६ ३० ० १०

३ ६२० मु० म० १११११ ११३ ६११३ ६ १३२ ६३३०८ ११११६ ३०

४ ४०६ ८१६ ३० ०० १३३ मा० म० १० १२० वि० भू० ३० १६८

५ ००८ वि० मा० १० १६

६ १० १० ६० म० ११०१० १० १६१ १० १० ६ १ ० १० १० १० १० १० १० १० १०

७ १० १० ६ १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ०

८ १० १० ६ १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ०

९ १० १० ६ १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ०

१० १० १० ६ १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ०

११ १० १० ६ १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ० १ ०

भूनाया जाता था।<sup>१</sup>

### आग्नीवाद —

चरणा म गिरना अथवा चरण-स्पर्श अभिवादन की एसी विधियाँ हैं जिनसे अभिवाद्यो के हृदय द्रवित होकर अभिवादाता पर कल्याणावाशाया की वर्षा करने लगत हैं। पिता से भी आग्निवादन जननी हृदय यात्मल्य प्रेम की प्रथम निधि हुआ करता है यही कारण कि है पिता तो हम मात्र सिर सूँघकर आग्नीवाद दत्त मिलत है, जबकि माता पुत्रा की द्युभेच्छा से उन पर पानी उतारकर पीत, उनसे भुज-युग्मा का पूजत पीठ पर हाथ फेरत तथा दीघजीवी हाथ का आग्नीवाद प्रदान करत मिलती है।

माता के आश्रमण से पूर्व बनाएन भाना स्व माता के चरणा म गिरकर उससे ध्यय म श्रुतदृष्ट्य होने का आग्नीवाद प्रदान करने का निवेदन करत हैं<sup>२</sup> जिसके प्रतिदान म वह उनका चुम्बन कर पीठ पर तीन बार हाथ फेरती है और भुजयुग्मा की पूजा करत तथा मस्तक पर मगन तिलक लगाकर विजय रामना करती है।<sup>३</sup> बचपन से मनाकर लाए गए आल्ट्रा ऊल का रानी मल्लना बठ से लगती हैं और उनसे गीण की उल्लासेती हुई मुखे पूजती हैं।<sup>४</sup> मतिमान की माता चरणा म गिरे आल्ट्रा ऊल को उठाकर उनका मुखा का चुम्बन करती हैं तथा सिर सूँघत हुए बहुधा आग्नीवाद प्रदान करती हैं।<sup>५</sup> आल्ट्रा केपटा की पहिरावनी करता है जिसके प्रतिदान म केबट स्थियाँ उह कोटि-वप जीवी होने का आश्रय देती हैं।<sup>६</sup> बचपन म जगति के जब मछना और इदल चरण स्पग करत हैं, तथा दवा उससे गल मिनकर रुन करती हैं तो वह उह काटि कोटि वर्षों तक जीवित रहने का आशीर्वाद प्रदान करता है।<sup>७</sup> युद्धाय विनाइ नेने आए महाराज हम्मीरदन को उनकी माता आरम्भ म ता दीघजीवी हाथ का आश्रय प्रदान करती हैं<sup>८</sup> किन्तु जब महाराज उनसे यह निवेदन करत हुए चरणा म गिर जात हैं कि भुके ग्राह अलाउद्दीन को परास्त करने अथवा सत्समान वीरगति प्राप्त करने का आशीर्वाद दीजिए<sup>९</sup> ताव उनसे गीण पर हाथ रखकर जो आशीर्वाद देती है<sup>१०</sup> — वह वीर क्षणाणिमा की परम्परा के अनुकूल तो है ही, आज की भी सभी वीर जननिया के लिए अनुकरणीय है। वे कहती है — हे मेरे पुत्र ! मैं तुके आशीर्वाद देती हूँ कि तू मुजाफ्रा, मुख

1 His majesty has commanded the palm of the right hand to be placed upon the forehead and the head to be bent down wards this mode of salutation in the language of present age is called kornish'

—मार्शल ए अक्वरी मा० ३ प० १६६

२ स० दे० प्रम० मा० ८०१८ वहा ८०१५ १८ पर० रा०, १०१७८६, वही

१५ १२५ वही, १८२८, वही ११२१ ह० ह० च० २७८

६ १० दे० प्रम० ह० ७०, च०, २७६ ७७, वही २७८

और वक्षस्थल पर शत्रु के तीर सेन, और लडगायाना को (नृणापात व समान) सहन करता हुआ युद्ध में अग्रसर होता रह और तरा पतक तक न झपके। तरी काया व अगा पाम चाँ तिल तिल करक क्या न कट जाय किन्तु नू मुद्धस्थल में पीठ न खिंचाए। तरा विजयी होकर लौटना अथवा विजय वीरगति प्राप्त करना—दोना ही स्वितियाँ मुझे काम्य हैं अतः मैं तुझे मगत गाना के माय मुद्धाय विदा करती हूँ।<sup>१</sup>

पीछे प्रसंगित जमगान की मानि सिर सू घतर आशीवाद प्रदान करने की प्रथा रामायण कालीन समाज में भी प्रचलित थी।<sup>२</sup> इसका उदाहरण और सूदन न भी प्रचलन दिखाया है। महाराज वीरसिंहदव जब स्व भाना व चरणा में गिरकर अभिवादन करते हैं तो व उनका सिर सूँधकर मन मिलाते हैं।<sup>३</sup> महाराज गुरजमल द्वारा स्व पिता व पग भवन पर व पुत्र को अतः न भरकर उनका सिर सू घते चिथित किए गए हैं।<sup>४</sup>

चरणा में गिरकर अभिवादन करने वाला का उदाहरण गल गगा वन की प्रथा का कवि जानक और आहारा<sup>५</sup> न भी प्रचलन दिखाया है।

बादगाह और नवात्र आः द गलाम और मुजरा आदि की स्वीकृति, मात्र प्रफुलित नत्रा में सूचित करते हैं। कवि सूदन न नवाव सलावतिया का महाराज गुरजमल व बकीर की सनाम नत्रा ही नेत्रा में लेते प्रदर्शित किया है।<sup>६</sup> गोरलान न औरगजव व मुजरा करने वाले महाराज चरतिराय की प्रसन्नता का उम दगा में उल्लेख किया है जब व गाह व नया में प्रसन्नता की भन्न दगत है।<sup>६</sup>

### स्वागत-सत्कार

भारतीय परिवार अपने अतिथि सत्कार के लिए विख्यात रहते हैं। उनमें सदब "अतिथिबो भन की धारणा विद्यमान रही है। अतिथि सत्कार में अपना सर्वस्व बलिदान कर देने वाले शृंगार्य के उदाहरणों की दृष्टि से पुरातन भारतीय सभ्यता का इतिहास बड़ा समृद्ध है। भारत में अमणाय आण हुए विष्णु यहाँ से बड़ी मयुर स्मृतियाँ लेकर लौटे हैं तथा भारतीयों के आतिथ्य की उदाहरण भूरि भूरि प्रशंसा की है। अज

१ द० प्रम० ६० ६० व० २७६ ८२

२ द० रामायणकालीन सभ्यता का गीतगुप्तार नानूराम व्यास पृ० १३

३ अग सगायोल सिर वाम। निपट मिथ्यो वुन को उपहाम —वी०च० १६१०

४ पग भेरे बन्ना व गुरज मन कब का।

तव उगाद सिर सू पि क, सानो धर नगाद। —गु०च० २१३।१७

५ सिर गानु पान परयो धर भरवा चवान। —वग० रा० २७६

६ 'चरण सागि व तव मनिभ र दान माय नग नगाय।

भाषा के बीर-वाच्य में भी अतिथि मत्कार सम्बन्धी इन गिष्टाचारा का मनोरम अभि व्यजन हुआ है। अतिथियां के सत्कार में पलक पावडें छिछा देना उनके स्वागताय उस माग में ही जा मिलना, ममल कलग लिए हुए म्त्रिया का उनकी आरती उतारना गृहा गत अतिथिया को दग्धकर प्रगाढालिगन करना उ हं अयात्ति देना सामय्यानुसार भेंटा वा आदान प्रदान करना तथा अतिथि रूप में आए शत्रु के परिवार की मगन कामना करना, आलोच्यकारीन अतिथि सत्कार की मुख्य विशेषताएँ मिलती हैं।

### (क) अतिथिया को उपहार प्रदान करना —

पथ्वीराजरासो परमानरासो सुजान चरित और आल्हखण्ण में अतिथिया के स्वागताय उपहार प्रदान करने की प्रथा निर्याइ गई है। कवि चंद द्वारिका रत्न के लिए जाना हुआ महाराज पृथ्वीराज के वहनाई रावल समर विजय की राजधानी से गुजरता है। महाराज की वहन प्रियावुवरि उनके स्वागताय 'स्वणयाला में सावर सुंदर वस्त्र मुक्तामालाएँ एक सहस्र सीतारामिया (सीतारामो एक प्रकार का ग्रीवा आभूषण हाता है) यजन, पाना के बीड़ और रजत पालकी भेजती हैं। इन उपहारों के साथ एक स्वण-पुत्तलिका भी थी जो स्व रर में पत्वा भ्रुवने के साथ साथ मुग्ग से मधुर गान भी गाती थी।<sup>१</sup> द्वारिका में प्रत्यागमन के समय कवि चंद महाराज भालाभीम की राजधानी से गुजरता है जो उसके समीप एक हाथी और सौ अश्व प्रेषित करके सत्कृत करते हैं।<sup>२</sup> इसी भाँति कवि चंद के कनौज गमन पर सयोगिता की माता, उनके लिए विविध प्रकार के भोज्य पन्थाय एक सहस्र स्वण सिक्के दो सहस्र पीताम्बर, मुस्ता जटित वस्त्र मणिमालाएँ और एक माता मन्वत एक माणिक्य जटित स्वण हम उपहार-स्वरूप प्रेषित करती हैं।<sup>३</sup>

परमालरासो में महाराज चंद ब्रह्म के जनपौन के ध्वस्त हो जान के कारण के किसी अश्वनी द्वीप में पहुंच जाते हैं। द्वीप निवासिया में से कोई पत्र पुष्प फल और जल लेकर आता है जबकि अ वलाय मना पत्रवान मुर्गा घिया और आतन लेकर आते हैं, तथा महाराज से मिष्ट सम्भाषण करते हुए उपहार स्वीकार करने का निवदन करते हैं। द्वीप नारिया भी उनके सत्कार में पीछे नहीं रहती। वे उनकी अचना करती हैं तथा वृहदानार गीगा से उनकी शिरच्छाया करके उनमें उनकी मुख छवि दिखाती हैं।<sup>४</sup> स्वागत के समय जीगा दिवाने की यह अभिनव प्रथा कदाचित् उस द्वीप

१ से ३ दे०भ्रम० 'प०रा०' मो० ३।२२।५ प०रा० का० ११७४।६२, वही १६६।१।७५।७६५

४ इक दल पल जल मुमन ल, इक मवा पववान ।

आतपत्र गजनाह लिय बुरलत मिष्ट जुवान ।

अ रमान आदस ल बाला पहुंचिय आय ।

सीरप पर छाया करिय, नृप कह दियव दियाय ।

विद्वान् की परिपाटी रही होगी। मुजान चोरों में वजीर मनमूर का स्वागत करने हुए महाराज मूरजमल उसीसे बहुत सख्त तथा गंभीर याद भेंट करे।<sup>१</sup> आल्हाड में चंद का कनौज आगमन मुजान महाराज जयनंद, कवि चंद्र का भक्त मदन व निप गाल-दुगाले माहामाता, तीर रत्नगी, रंगाल मुत्तामाता<sup>२</sup> हीरा रत्न जवाहर, लान तथा अश्व और गान गान गिमाण मण ह।<sup>३</sup>

भेंट प्रदान करने की प्रथा का समापन करते हुए हम इस तथ्य को प्रकाश में लाने का लोभ मवरण नहीं कर सकते कि भारतीय आतिथ्य की यह झूठी प्रथा इससे अनभिन्न पारचात्य यात्रियों से यथा-यथा विज्ञान का कारण बन जाया करती थी। फाम के राजदूत एस्० डी० ला० बोना और चंद्र जय भारत व प्ररामपुर नामक नगर में पहुँचे तो वहाँ के निवासी लगभग तीस सख्त तथा कुछ पत्र और मिष्टानादि लेकर उनका स्वागत करने गए। उन राजदूतों को समझा कि यह सामग्री हमारे अति निधन जानकर मित्रों के रूप में प्रदान की जा रही है अतः वह सब कुछ हटाए और उनको तभी गान किया जा सके। तब उन्हें अनिधि गिष्ठाचार की भारतीय रीति में भेंट प्रदान करने की अनिवार्यता समझाई गई।<sup>४</sup>

### (ख) माग में पावडे विछाना—

परमाल रासो में आल्हा और ऊल जय अपने मौसरे भाई मलिरान की जागीर सिरसागढ़ में जाते हैं तो उनके माग में पावडे विछाकर स्वागत किया जाता है।<sup>५</sup> उमम रानी मलहना के स्वागताथ देवा द्वारा भी वीथिकाघा में बस्त्र विछवा देन का विवर्ण किया गया है।<sup>६</sup> छत्रप्रकाश में महाराज चपनिराय से भेंट करने की कामना से आने वाले नप पहाडसिंह के माग में पावडे विछाय जाते हैं।<sup>७</sup> आल्हाड में ऊल जय चंद्रावली को विदा करने के लिए बीरीगढ़ जाता है तो नगर की गलियों में क्षत्रजी विछा दी जाती है।<sup>८</sup>

### (ग) मित्रियों का मंगल कलश लेकर आना तथा आरती उतारना—

सत्वार की इस विधि का प्रयोग सिरसागढ़ गए हुए आल्हा ऊल<sup>९</sup> तथा महोवा आए हुए लासन<sup>६</sup> के स्वागताथ किया जाता है। कनौज से मनाकर लाए गए आल्हा

गधिय सबल सुगध ल पुर पुरजन की भौर।

उपहार लिज्ज नृपत कहै बन ये कीर। —प० रा० २०।७७७८

१—२ दे० अम० मु० च० ४।२।३३ आ०' १०। १२१५

३ दे० 'दी इण्डियन ट्रे वल्स आफ थवनाट एण्ड करी प० ६६ १००

४—६ दे० अम० पर० रा०' १५।१२३ वही १५।३६ 'छ० प्र०' ५।८ 'आ०'

२८।१८ पर० रा०' १५।१२३

ऊदन<sup>१</sup> तथा दिल्ली आने वाले रावलसमर विक्रम का भी<sup>२</sup> आरती उतारकर और मानी-पौछावर करके सत्कार किया जाता है।

(घ) अर्घ्य-प्रदक्षिणा और चरण प्रक्षालन —

ऋषि और ब्राह्मणा के आगमन पर उह अर्घ्य दिया जाना था तथा उनकी आरती उतारकर, चरण-पखारकर एवं प्रदक्षिणा लगाकर सत्कार किया जाता था। पथ्वीराज रासो में सलप पवार आगतुक ब्राह्मण मंत्री को अर्घ्य देने चित्रित किए गए हैं।<sup>३</sup> गुरुराम पुरोहित के आगमन पर कवि चंद्र उनकी धूप-तीप साखा से अर्पण करता है।<sup>४</sup> महा पुण्या के स्वागत में भी कविचन्द्र ने उनकी पूजा करने और आरती उतारने की विधि का प्रयोग दिखाया है।<sup>५</sup> स्व पिता के आगमन पर भुम त ऋषि द्वारा उसकी प्रदक्षिणा लगाकर स्वागत किया जाता है। रासाकार ने सयागिभा भी महाराज पथ्वीराज की प्रदक्षिणा लगाकर स्वागत करते चित्रित की है।<sup>६</sup> वीरचरित्र में महाराज वीरसह दव राजदरवार में आने वाले ब्राह्मणा को मिहाभना पर बिठाकर उनके चरण पगारत हैं।<sup>७</sup> रतन वावनी में भी ब्राह्मणा के चरणोदक को सुयवदन का मूल बताकर<sup>८</sup> विप्रा के चरणोदक को अर्घ्य वर्णों द्वारा शरीर पर टिङ्गन की प्रथा दिखाई गई है।

(ङ) स्वागताथ खड़े होना तथा आग वढकर गने मिलना —

छत्रप्रकाश में महाराज गिवाजी छत्रमान जी को दखकर उठ खड होने का सीन निभाने चित्रित किए गए हैं।<sup>१</sup> हम्मीर रासो में महाराज हम्मीर देव द्वारा महिमा गाह का स्वागत मडे होकर किया जाता है।<sup>२</sup> इसी भांति हम्मीर हठ में देवल कुंवर भी अपने पिता को आन दखकर उनका स्वागताथ सडी हात प्रदक्षित की गई हैं।<sup>३</sup>

समन्वयस्क तथा समान प्रतिष्ठावान व्यक्तिवास गले मिलकर स्वागत किया जाता था। मुजान चरित में महाराज मूरजमल फतहखनी<sup>४</sup> और वजीर मनमूर<sup>५</sup> का, तथा मनमूर महाराज मूरजमल का<sup>६</sup> इसी रीति से स्वागत वर्त है। क्यामला रामा में म गाह बहलाल लोदी क्यामला चाटान का<sup>७</sup> तथा छत्रप्रकाश में भी महाराज मुजान सिंह<sup>८</sup> और रतनसाह छत्रसाल जी का इसी रीति से सत्कार करत निम्नाण गये हैं।

१२ पर० रा०' १६३० 'प० रा० का० २११२।६५

३ स ६ दे० नम० प० रा०' का० ४५२।२८ वही, २१३५।१६१ वही, ३०६।५८, प० रा० मो० ३।२६।७८, प० रा०' का० २२०७।६१५, वी० च० २८।१०, '२० बा०' १४

१० 'सह सिवाराम सीन प्रति बाडे । दखन भय दूर त ठाने ।'—छ० प्र० ११।५

११ सभा समत राव दल्लि सेख की सु उठिठय ।'—ह० रा०, २६५

१२ नरयो कुंवर तात घर आयो । सहमा उठी समुचि सिर नायो ।—ह० ह० च० २।०

१३ से ७ ६० नम० गु० च०', १।२।१८ वही ४।२।३८, वही, ६।२।२६, क्या० रा० ३८८, 'छ० प्र० ११।१५, वही, १२।६





उह सभी प्रकार की पीडाग्रा से बढकर क्लेशकर था ।

आलोच्यशालीन परिवारा म यदि विषटन का काई ततु था, तो व थी सपत्निया । व सपत्नियो को पितघातक से भी बढकर रिपु एव निन्दाघ की तप्त लूग्रा की भाति निशिदिन हृत्य दाह करने वाली कहकर ही अपनी अतन्वया अभियन्त करव नही रह जाती थी अपितु यदा कदा एम पडयत्रा की भी रचना करता थी जिनक चक्र म सपत्नी का ता कहना ही क्या पति क भी हिताहित को तिजाजलि दे दी जाती थी ।

पितरा के निस्तारण के लिए परिवार म पुत्र जन्म आवश्यक समभा जाता था । निष्पुत्रा क अऊन-यानि प्राप्त करने की वारणा प्रचलित थी । इसके साथ साथ वग के विस्तार कुल-कीर्ति क प्रसार पित ऋण क विमोचन तथा पित वर के शोधन की दष्टि से भी पुत्र जन्म का अत्यविर महत्व था । पुत्रिया विगपन क्षत्रिय राजवशा म आपत्ति का ही निमित्त बनती थी । धर्मशास्त्रनारा द्वारा क्षत्रिया के विवाह क लिए प्रगस्त घोपिन की गई राक्षस और गात्रव पद्धतियो से पुत्रिया के अपहरण अथवा स्वेच्छानुमार पति चयन को ता किसी सीमा तक सहन भी किया जा सकता था किन्तु विधर्मी शासक की लोलुप दष्टि भी उन पर लगी रहती थी । फलत युवा पुत्रिया वाल राज परिवारा की कुल मयाना सदब सकट प्रस्त रहती थी । कदाचित यही कारण है कि वीरनाय्य मे किसी भी पुत्री के जन्मावसर पर आन दात्मव की याजना नही दिखाइ गई है ।

धायें मात हीन शिशुग्रा को तो दुग्धपान भी करानी थी जबकि उनका मुख्य काय शिशुग्रा की सेवा शूथूपा करना ही होता था । इनमे से प्रथम प्रकार की धाया के, आचार विचार का उनके द्वारा पालित शिशुग्रा पर बडा प्रभाव पडता था — जो नमगिक ही था । द्वितीय श्रेणी की दक्षमाल मात्र के लिए रखी गई धाया का भी, अतुन्ति के समग के कारण, उनकी देग रेख म पले वच्चा पर पर्याप्त प्रभाव रहता था जिसमे उह एक प्रकार स परिवार की सन्स्था मानना ही सगत है । धाय माता के समवयस्क पुत्र और पुत्रिया का भी प्राय सहोदर भाई बहनो की भाति समादर किया जाता था ।

पति पत्नी के पिता आपस म समधी कहलात थे । माता के पिता के लिए 'मात पित्र' 'मातुल पित और नाना सनाएँ प्रमुक्त की जाती थी जबकि पुत्री पुत्र को दोहित कहा जाता था । बहनोई को पाहुना म शिरोमणि मानत हुए उसकी मयाना का सम्भक निवाह आवश्यक समभा जाता था । अन्य सम्बधिया म मातुल और नागिनेय या मामा और भातृ, श्वशुर और जामात फुकू मौनी और बहनौतिन का उत्कल मिलता है ।

परम्परागत सस्वार म से गुडिन्म नानी आद्ध और जातकम मस्वारो के सम्बध म अन्य निर्देग मिलते हैं । हां पुत्र जन्म परिवार के लिए असीम हर्षोल्लास का अवसर होता था । और नामकरण क अवसर पर मित्र और कुल-वाग्त्रवो को प्रीति नोज देने की प्रथा थी ।

उपनायन वेदारम्म केसात और समापवतन एमे मस्वार हैं जा क्वाचिन आहृणा म तो प्रचलित रहे हगि, किन्तु क्षत्रियो म अप्रचलित हो गये थे । इनमे से

उपनयन यज्ञोपवीत के रूप में, और वशा त नहलुर के रूप में विवाह व समय सम्पन्न किए जाते थे। वस्तुतः आलोच्यकाल का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पारिवारिक उत्सव विवाह संस्कार से सम्बन्धित था। क्षत्रियों में विवाह की कई प्रणालियाँ प्रचलित थीं। विवेक प्रतिष्ठित राजसुल स्व पुत्रियाँ व परिणयन के लिए आलोच्यकाल में भी परम्परागत स्वयंवर प्रथा का आश्रय लेते थे, जबकि कुछ विवाह सम्बंध गांधव रीति पर भी आपत होते थे। खडग विवाह ऐसी रीति थी, जिनमें प्रायः अपने से कुछ हीन वशों की कन्याओं से विवाहाथ स्वयं न जाकर अपना खडग देकर एक प्रतिनिधि भेज दिया जाता था। विवाह के अग्रे आचारों को तो वह प्रतिनिधि सम्पन्न करता था जबकि भावों उस खडग व साथ डाली जाती थी। सम्बंधियों को क्षत विभक्त करते हुए बताते कन्यापहरण की विधि—जिस घमशास्त्रकारों ने विवाह की राशम पद्धति का अग्रिम ध्यान देते हुए भी क्षत्रियों के लिए प्रस्तावित बताया है—आलोच्यकालीन क्षत्रियों में भी प्रचलित थी। उमम वतना अंतर अवश्य था कि इन अपहरणों में कन्याओं की पूर्व स्वीकृति मात्र ही नहीं होती थी अपितु य प्रायः संदेश भेजकर अपना भावी पति को उसके पौरुष और क्षत्रियत्व की आन देकर अपहरण कर ले जाने के लिए उत्तजित भी करती थी। हमारी दृष्टि में इन्हें पूर्वरागागतयुद्धकालक विवाहों की सना देना अधिक उपयुक्त है। शास्त्रोक्त आसुर पद्धति से सादृश्य रखने वाले विवाहों का भी प्रचलन था जिनमें मुगल शासन द्वारा नाना प्रलोभन देकर हिन्दू नरेशों से उनकी लक्ष्मणियों को डोले प्राप्त करने की चेष्टा की जाती थी। दोगे ही परिवारों व मुस्लिम होने की दशा में ऐसे विवाह सम्बंध भी किए जाते व जिनमें स्व-परिवार की भगिनी या पुत्री का दूसरे परिवार में विवाह करके, दूसरे परिवार की भगिनी या पुत्री का अपने परिवार में विवाह कर लिया जाता था।

द्वय विधि से सम्पन्न होने वाले विवाहों का समारम्भ वाग्दान अथवा सगाई नामक आचार से होता था किन्तु कुछ विवाहों में आचार का पालन न करत हुए, उनका आरम्भ टीका अथवा लग्न भेजने से किया जाता था। क्षत्रिय कन्याओं व वर निर्धारण में कुन पुराहित का प्रमुख हाथ रहता था। टीके और लग्न में वस्त्राभरण दान संस्नास्त्र और द्रव्य सभी प्रकार की सामग्री अर्पित की जाती थी। नहलुर तल चयन और बाधने तथा कुष्मा-व्याहन व आचार सम्पन्न किए जाते थे। कन्या पत्र वाला द्वारा वरात की अगवानी करके लज्जा पर रक्षण एवं तारण वाचन नामक आचार सम्पन्न होता था और वरात जनवास में पहुँचा ली जाती थी। राजस्थान की और कर्नाटक तारण वाचन व समय ही गौरीटी नामक आचार किया जाता था जिस व्रजप्रदेश में वरनुष्ठा या अणनवारी भजन व पश्चान सम्पन्न किया जाता था। अणनवारी भजने की प्रथा पश्चोराजसाम और राजविनास में नहीं कियाई गई है किन्तु आलोच्यकाल में इस प्रकार उन्नत मिनने हैं।

मायरा या फेरो व किए स्थान भूमि में कई प्रकार के मण्डपों की रचना की जाती थी। कवि चन्दन दिल्ली में हरे वासा का मण्डप बनाए जाने का चित्रण किया है, जबकि

मान न बूदो में स्वर्ण स्तम्भा पर जरकसी-पट तानकर भण्डप बनाने की प्रथा दिखाई है। झाल्हकार ने एक अथ ही विधि का चित्रण किया है जिसमें चादन स्तम्भ के चारों ओर पान के पत्ता से मण्डप बनाया जाता था। भोवरा के समय के प्राय सभी आचार आजकल के आचारों से सादृश्य रखते थे। उनमें यह अंतर अत्यन्त मिलता है कि, झाल्हखण्ड के युद्धाश्रित विवाह प्रसंगा में ही नहीं बरन पध्वीराज रासो के दव-विधि में होने वाले इच्छिनी के विवाह में भी भाँवरें पडकर क या क वामाग में आ जान के पश्चात् कयादान करन का प्रयत्न दिखाया गया है। पध्वीराज रागा में दिखाई गई, शत्रुपालय में ही मुहागराशि मनान तथा प्रात का न वधू का जनवाम में लाकर दान दन की प्रथाएँ भी ब्रज प्रदेश में प्रचलित नहीं है। बरात के विष्ण होने से पूर्व किए जान वाले आचारों में से पलकाचार और कुवर-कतवा या लहकौरि नामक शेषाचार प्रचलित थे।

दहेज में दी जान वाली सामग्री का स्थूलतः चार विभाग किए जा सकते हैं। प्रथम वर्ग में पुराहित, पंडित, कवि, वध और साहूकारों की दहेज में दना आता है। कया की सखियाँ और दासिया भी इसी काटि में आती हैं। दासिया का विषय में यह तथ्य उल्लेख्य है कि उनके व्यय भाग को प्राय क या पण ही वहन करता था। द्वितीय श्रेणी में गज, अश्व और मुत्तपाल आदि सवारिया का देना आता है जो अत्युत्तम और बहुमूल्य होते थे। नाना प्रकार के वस्त्राभरण और जवाहिरात तृतीय श्रेणी में तथा अनक प्रकार के स्वर्ण एवं रजत भाण्डों को दायज की चतुर्थ कोटि में परिगणित किया जा सकता है। यह दहेज सामग्री निश्चय ही समाज के उच्चतम वर्ग के प्रतिनिधि नरेशा द्वारा ही दी जाती होगी जबकि जन सामान्य स्व सामर्थ्यानुसार दायज देते होंगे।

समधिया का एक-दूसरे के वक्ष स्थल से दही मलकर और पान चिपकाकर गल मिटना समधोरा कहलाता था। बरात की विदा का समापन क या क पिता द्वारा, वर पण की मर्यादा के अनुकूल दहेज न दे सकने और बरात का भली प्रकार आतिथ्य न कर पान के लिए धमायाचना करने का शिष्टाचार से होता था।

वर वधू के स्वागताथ वर माता भय आयोजन किये रहती थी। नगर-बीधिकाओं का ता सज्जन किया ही जाता था, यदा-कदा बरात का प्रत्यागमन भाग के ऊपर कई कासा तक विमान तान दिए जाते और भाग में पाँवड़े बिछा दिए जाते थे। नगर के प्रवेश द्वारा पर तोरणा की रचना करना तथा गहू द्वारा पर बदन वार बाँवना भी इस सज्जा के अंग थे। सिंह पीर पर आये वर वधू का सधवा स्त्रियाँ शीशा पर मंगल कलश रखकर स्वागत करती थी, तथा माता द्वारा उनकी आरती उतारी जाती थी। वर और वधू पर लाजा पुष्प, मणि मुक्ता और मुद्राओं की वर्षा करते हुए हर्षाभिव्यक्त किया जाता था। कवि चन्द ने दासियों द्वारा वर वधू की चरण धूलि को स्व केशों से भाडने का भी प्रचलन दिखाया है। वर वधू को कुदृष्टि का दुःप्रभाव से मुक्त रखने के लिए, तिनका ताडने और उन पर राई एवं नील मारने

के टोने टोटके प्रयुक्त किए जाते थे। परछन के उपरान्त कुन स्त्री की पूजा कराने, वरणा सोचने और मूँह स्मिराई प्रदान करने के आचार सम्पन्न किए जाते थे, जिनके विषय में वीर काव्य प्रणेताओं ने अत्यल्प विवेक किया है।

कन्याओं के वय संधि की अवस्था का प्राप्त ज्ञान पर, उनके भागी गृहस्थ जीवन का भगलमय चरान की दृष्टि से उन्हें विगी ब्राह्मणी शिक्षिका से विनय मगन नामक शिक्षा दिलाई जाती थी। इस शिक्षा के अंतगत अनेक प्रकार के तंत्र तिनके तथा दृष्टान्त देकर अकुरित यौवनाओं के मानम-पटन पर यह तथ्य प्रतिबल कर दिया जाता था कि सुखी गृहस्थ जीवन का मूल मंत्र विनयशील आचरण होता है। साथ ही पति सेवा का भवमागर सतरण का मूलाधार बताने हुए उन्हें मनमा-वाचा-कमला पति सेवा में दत्तचित्त रहने का उपदेश दिया जाता था।

वर निर्धारण के समय उसकी कुलीनता आरोग्य, उच्चकुला में विवाह सम्पन्न तथा गूर वीरता के गुणों को महत्ता प्रदान की जाती थी। अभीष्ट अथवा उत्तम वर वधू की प्राप्ति के लिए विशेषण शिव और शिवा का पूजापासना करने का प्रचलन था। वीरकाव्य से राज कन्याओं के विवाह की अवस्था तर्ह से सोलह वय पयत सिद्ध होती है। बहु विवाह प्रथा का व्यापक प्रचलन था जिसमें हिंदू नरेशों की पत्नियों की संख्या तादात्म्य लकर सी तक ही मिलती है जबकि मुगल बादशाहों के हरेमा में पाँच से लेकर दो सहस्र तक वेगम दिघाई गई हैं।

राज्याभिषेक संस्कार का भी बड़े समारोहपूर्वक आयोजन किया जाता था। राज्यारोहण के पश्चात् यदा कदा शाभा यात्रा भी निकाली जाती थी जिससे नागरिक नवाभिषिक्त नरेश के दर्शन कर सकें। मुस्लिम बादशाहों के तस्लासीन होने के समय उनके नाम सहित कुतुबा पठा जाता था। उनके ऊपर बैशरो के साथ साथ मोरछल डालने का भी प्रचलन था।

अत्येष्टि संस्कार के समय आजकल जस ही आचारों का प्रचलन था। मत्क के लिए पिण्ड दान में पाठश प्रकारीय उपादान प्रदान किए जाते थे। दिवगत व्यक्त का पुत्र बारह दिवस तक भूशयन करत हुए समस्त प्रकार के भोगविलासों से दूर रहता था तथा तर्हमें दिवस जलाजलि प्रदान की जाती थी। अशौचकाल में यनादिक कार्यों का सम्पन्न करना वज्य समझा जाता था। अत्येष्टि के विषय में यह तथ्य उल्लेख्य है कि विशेषतः क्षत्रिय परिवारों में मत्क-व्यक्ति की पत्नियों पति के शव के साथ सती हा जाती थी। राजपरिवारों के अतिरिक्त सामान्य क्षत्रिय परिवारों में भी सती प्रथा का प्रचलन था। सती होने वाली नारियों द्वारा स्व पिता और पति कुल के यश में चार चाद लगने की धारणा प्रचलित थी। यह भी विश्वास किया जाता था कि वे शरीर के रोमकूपों की सत्या के बराबर वर्षों तक पति साहचर्य में स्वर्ग विहार का उपभाग करती हैं।

सत्नारिया के सती हान के समय की साज सज्जा और विविध आचार, हठात विवाहात्सव जसा दृश्य उपस्थित कर देते थे। उनका विवाहावसर की भाँति पूण

शृंगार किया जाता तथा मुप म ताम्बूल एव हाथा म नारियल लेकर पति मम्मिलन क लिए उनका श्मशान भूमि की धार गाजे बाजे के साथ कूच करना—उनके विवाह की विदा-वेला का ही प्रतिरूप होता था । यन्वेदी के स्थानापन्न मदिराकृति की बनाई गई 'श्री अथवा 'सर हान थे जिनकी वे उसी भाँति प्रदक्षिणा लगती थी, मानो उनकी पुन भावरें पड़ रही है । अतत हरिश्मरण करती हुई सत्तारियाँ पति के शव खड्ग अगुक अथवा जूडे को गाद मे रखकर, मृत्यु का सहप आलिगन कर लती था । इस विषय म यह तथ्य उल्लेखनीय है कि सतिया का अपने निश्चय से विरत करन क भी प्रयास किए जात थे, किन्तु वे प्राय निष्फल ही रहत थे । सती होने स पूव उन सत्तारिया म सत्त का प्रादुर्भाव होत, अभिशाप देन और भविष्य कथन की अलौकिक शक्तियाँ आ जाने का भी विश्वास किया जाता था । सतिया की स्मति को चिरम्प्यायी रखने के लिए सती चौराओ की स्थापना की जाती थी जिनकी पूजा करन का भा प्रचलन था ।

वीरकाव्य म कुछ क्षत्रिय पत्नियाँ सती होत नही भी दिखाई गई है, जिससे यह प्रथा अनिवाय नही सिद्ध हाती । वश्य और ब्राह्मण विधवाओ सम्बन्धी मात्र एक ही उपाहरण मिलने के कारण, निश्चयपूर्वक तो कुछ नही कहा जा सकता, किन्तु सम्भवतया उनम सती होने के स्थान पर ब्रह्मचय व्रत के पालन का ही अधिक प्रचलन था ।

जोहर प्रथा भी, सती प्रथा का ही एक रूप थी । इस प्रथा के मूल म यह धारणा कायरत रहती थी कि विजेता विधमियों के हाथो अष्ट होने का अपेक्षा मृत्यु का आलिगन कर लेना वरण्य है । यदा कदा एसी दुषटनाए भी घटित हो जाती थी, जिनम भ्रम वश विजेता नरेशो के दुग की नारियाँ भी जोहर कर लती थी । जोहर से पूव भी विप्रादिक को दान प्रदान किया जाता था ।

आलाच्यकाल के पर्वोत्सवा पर दष्टिपात करने से नात होता है कि, चन्द्र शुक्रता नयाशो को प्रतिष्ठित घरानो मे मदन महोत्सव की आयोजना की जाती थी । प्राचीन काल की भाति इसम कामदेव और रति की प्रतिमाओ के पूजन के स्थान पर पत्नियाँ कामवेश धारी पति की पूजा करती थी । श्रावण गुक्ला पूर्णिमा का 'सतीना' नामक त्योहार मनाया जाता था । वीरकाव्य मे इस पव पर भुजरियाँ अथवा कजरियाँ सिरान की प्रथा, और उम अवसर पर होन वाले युद्धो का अधिक चित्रण किया गया है । इससे अग्रिम पव नव दुर्गा थे, जिनम देवी का जाप और हाम कराय जाते थे तथा विप्र क यात्रा का भाज दन का विशेष माहात्म्य समभा जाता था । विजय दशमी क अवसर पर बल परीक्षण की प्रतियागिताएँ आयोजित की जाती थी । दीपावली का पव लोक प्रचलित था । वसत पचमी के दिवस श्रीकृष्ण के वसत खेलन के नाटक की आयोजना करन का प्रचलन था । विश्वास किया जाता था कि श्रीकृष्ण की लीलाओ के प्रेक्षण और श्रवण से प्रेक्षक और श्राताओ के पाप प्रशालिन हो जायेंगे । शिवरात्रि क पव पर उपवास रखने, रात्रि को जागरण करने तथा दान देने

का विशेष माहात्म्य था। हामी प्रायः अग्रणी साम्य रूप में मान्य जाती थी। माग गथा पर सवारी करके छोटे भद्रवामन्य विचार का विनाशित रूप था। गांधी भी पीछे नहीं रहती थीं, और इन सब पर वे भी माग-जानि सादर रूप से माग नृत्य-गाय करती थीं। हामी मनने में रंग-रंगी छोटे अक्षर प्राप्ति के स्थान पर प्रायः राग, धूल और कीमद् का प्रयोग किया जाता था। हामी का रंग चाम्य उच्चिष्ठ म माना का मूत्र कारण यह समझा जाता था कि मानव जाति का भोग करने का पर प्राप्ति करनी वाली इन्हीं नामक गंगागी में मानव इन अमानवीय पापपूर्ण के कारण ही परिव्राण का मग ध। तबसे म हामी माना का गुणमूत्र रूप भी प्रचलित था।

विवेच्यमान में अभिवृद्धि की विनिष्ट प्रणालियाँ थीं। मागु प्राप्ति प्राप्ति पूरक व्यक्तियों का अष्टवक्त्र या साष्टांग प्रणाम करने अभिवृद्धि किया जाता था। माना पिता और अग्रजों के घरणा में गिरकर अष्टांग-प्रणाम करने तथा हाथ जादकर अभिवृद्धि करने का प्रचलन था। प्रणाम राम राम मन्थार छोटे जुहार हिन्दुओं के अभिवृद्धि की प्रायः हिन्दू प्रणालियाँ थीं। इसमें से जुहार का महाभक्ति प्रचलन था। जदकि मन्थार का सवम कम। मुजरा अष्टांगी मन्थार, जानिक छोटे मन्थार मुम्बिन मन्थार से अग्रजों गई अभिवृद्धि रीतियाँ थीं। जिनमें म प्राप्ति म दा शाही अष्टांगों से ही गीमित थी। अष्टांगों-द्वय ममय अभिवृद्धि का गिर चूमन की प्रथा थी।

अतिथि-भारदार की भी भव्य प्रणालियाँ का प्रचलन था। प्राप्ति अतिथि के आगमन का पूर्वभाग ही जाता था, ता उससे माग में ही जा मिनन की रक्षा की जाती थी, तथा उपहार प्राप्ति विण जान ध। माग में पौरुष विद्याना उसकी धारनी उतारना, स्वागताथ सहा हाता आग बढ़कर गले मिलना अथ्य प्रदान करना कुशल प्रश्न पूछना तथा ताम्बूल प्राप्ति करना—अतिथि शिष्टाचार के प्रायः अंग ध।

समग्र पारिवारिक-व्यवस्था के विषय में सक्षय में कहा जा सकता है कि उममें भारतीय साम्प्रदायिक परम्परा का अक्षुण्ण रूप अष्टिगत हुआ है। इस समय उमरी सयुक्त कुटुम्ब प्रणाली अगत विश्रुतलित हो चुकी है। विवाह सम्बन्धों में सौभाग्यवत अग्रहरण विलीन हो चुके हैं। सती प्रथा अग्रचलित हो गई है, अभिवृद्धि करने समय साष्टांग प्रणाम जसी अति आदरसूचक विधियाँ ता उठती ही जा रही हैं। जुहार करने का भी आलाच्यकास की भाँति व्यापक प्रचलन नहीं है, तथा अतिथि स्त्वार में भी उस काल जसी आत्मीयता के दर्शन नहीं होते, फिर भी हमारा पारिवारिक जीवन आमूल चूल परिवर्तित नहीं हुआ है और हम आजकल भी उसके विविध अंगों का यथाविधि रूप में ही अनुसरण करते हैं।



## धार्मिक स्थिति

आलाच्यकाल की धार्मिक स्थिति सम्बन्धी निर्देशों के आधार पर उम स्थूलत तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—

- (क) विभिन्न धर्मों और सम्प्रदायों के अनुयायियों का अग्र्याप के प्रति दृष्टिकोण ।
- (ख) परलोक सुधारण की कामना से किए जाने वाले धार्मिक कृत्य ।
- (ग) विविध प्रकार के धार्मिक विश्वास और मान्यताएँ ।

### (क-१) विष्णु, शिव और शक्ति के उपासक

वीरकाव्य में हिन्दू धर्म के विभिन्न मतावलम्बियों का पारस्परिक दृष्टिकोण पर प्रकाश डालने वाले निर्देशों से विष्णु, शिव और शक्ति का आराधना में पारस्परिक सौहार्द तथा बहुपूजापासना की प्रवृत्ति पर प्रकाश पड़ता है । उदाहरणार्थ कवि चन्दन महाराज पद्मीराज के युद्ध गमन से पूर्व इष्टदेव का रूप में आहुष्ण का स्मरण करत चित्रित किए हैं ।<sup>१</sup> उनकी नृत्यिक क्रिया का वर्णन करत हुए वह उनके द्वारा रघुनाथ चरित श्रवण करने का चित्रण करता है।<sup>२</sup> अथ प्रसंगात् दिव्यशिवः शिव की पूजापासना करके अभीष्ट सिद्धि का वरदान प्राप्त करत प्रदर्शित किए गए हैं ।<sup>३</sup> जबकि अथर्व व शक्ति को भी आराधना करत उमे तुष्ट करत मिलत हैं ।<sup>४</sup> कवि चन्दन ने महाराज की दैनिक चर्या का वर्णन करत हुए रातमहान में प्रातः काल कहीं हरि को, कहीं हर या शिव की और कहीं दुर्गा की पूजा होते दिखाकर भी, इस तथ्य में सन्देह नहीं रहने दिया है कि विष्णु शिव और शक्ति की बिना किसी भेद भाव के पूजापासना की जाती थी ।<sup>५</sup> परमान रामो में महाराज राहिन ब्रह्म भगवान राम और शिव के भक्त प्रदर्शित किए गए हैं ।<sup>६</sup> महाराज परमाल की भी शिव और राम में एक-जसी आस्था दिखाई

१ से ६—दे० 'पृ० २१०, का० २२०-२।५७८, वही, १६६५।७१, वही १५७४।६८, वही, ७५३।४६८ ६६, वही, १६८८।१० १२, पर० २१०, २।८७



गई है और यह दावा भी पूजा करते मिला है।<sup>१</sup> इस दुष्टा का कर्माचार पर क्या जा सकता है कि जो सामाज्य का भी विभिन दया क विषय मयही दुष्टिकाग र्णा हागा । कर्माचित विभिन सम्प्रदाया क धार्मिक गुणमा म अपन प्रागण्य र्था का दूसरा क प्राराध्य दया से बढ़कर यथा की प्रवृत्ति परमप रिचमाता थी जितर विषय म कति कर्मा का विगना पटा है कि शिव और विष्णु यम्नुन अभिन्त है, फन जा उनर पायकय का प्रतिपात्त करत है उरु विषय ही तरक याग का दण भागता पन्ता है।<sup>२</sup> हमारा विमन्न निवन्त है कि कति कर्मा का सम्भगन विन्त जन-सामाज्य क दृष्टिकाण का मुगरित रूप है और उन धार्मिक गुणमा क प्रति प्रजा की अद्वन्तारमक धारणाभा का प्रकटन करता है जो शिव और विष्णु म किमी प्रकार का विन्त सम्भन का उपदेश दते थ । कति मान' ने भी उदयपुर म भगवान राम श्रीरूपा दुर्गा महेश्वर और गणेश की निर्विरोध पूजायागना प्रशिन की है।<sup>३</sup> इगम इमी तप्य का अभिधानन होना है कि जन-सामाज्य की दृष्टि म इन देवो र्णनामा की पूजायागना के विषय म किमी प्रकार का विभेद नहीं था । पालोच्यकान की धार्मिक र्मिन्त पर प्रकाश डालने वाल बहिस्तादयो से भी वीरकाव्य म चित्रिन धारणाभा की पुष्टि हाती है।<sup>४</sup>

### (क-२) वैदिक तथा बौद्ध मतावलम्बी

पथ्वीराज रासा के एक सदभ म जनो के धम प्रायो क गणश बौद्ध धम के प्राया के पठन से भी पोष्य क्षीण हाने का तव देकर उह न पठन का परामश अवश्य

१ पर० रा०, ३०।१६

२ करिय भक्ति कवि चद हर । हरि जपिय इह भाइ ।

ईस स्याम जू जू कहै । नरक परतह जाइ ।

— प० रा०', का० २२।७६

३ 'कहै रघुवीर कहैक रमेस, कहै हरसिद्धि कहैक महेश ।

कहै इक दत गजानन प्राप, पुल तिन देखत पाप सताप ॥'

—रा० वि० २।१०४

४ 'डा० गोरीशंकर हीराचंद शोभा ने सन ६०० स १२०० ई० तक की धार्मिक र्मिन्त का विवेचन करत हुए कहा है कि अत म हिंदुमा के पाँच—सूय विष्णु देवी, रुद्र और शिव—मुख्य उपास्य देवता रह गये जि हैं सामाज्य रूप से पचायतन कहते हैं । + + + विभिन देवो के उपासको म वमनस्म न होकर अत म समन्वय हो गया था । क नौज के प्रतिहार राजाओ म यदि एक वण्यव था तो दूसरा परम शिव और तीसरा भगवती का उपासक था तो चौथा परम आन्तिय भवन । धम इतने समीप आ गये थे कि उनकी दतकथाओ मे विभेद करना भी कठिन हो गया ।' — मध्यकालीन भारतीय सस्कृति', प० ३० ३१

रिया गया है<sup>१</sup> कि तुम य कोइ भी ऐसा प्रसंग नहीं मिलता जिसमें उनके पारस्परिक सम्बन्ध में कटुता चित्रित की गई हो। यही नहीं प्रत्युत वीरकाव्य में विष्णु के दम अथवा चौथीम अवतारों की जा तालिकाएँ दी गई हैं उनमें भगवान् बुद्ध का भी त्रिष्णु के अवतारों में परिगणित किया गया है। इससे ध्वनित होना है कि हिन्दू और बौद्ध मतावलम्बियों में कटुता तिराहित है। चुकी थी और बुद्ध का विष्णु का अवतार मान कर दोनों मता में विवाद का मूल कारण का ही अन्त कर दिया गया था।

पथ्वीराज रासो में उपलब्ध विवरण से पता होता है कि हमारा आलोच्यकाल के आरम्भ में बौद्ध और जन मतावलम्बियों का एक-दूसरे के प्रति कुट्ट असहिष्णु दृष्टिकोण था। बुद्ध नरेश ऐसे थे जो मत विशेष के सरलक बनकर दूसरे मत की पूज्य वस्तुओं का विनष्ट करना अनुचित नहीं समझते थे। दानो मतों के अनुयायी एक दूसरे की साधना पद्धति का उपहास भी किया करते थे। रासो में गुजरात नरेश भोलाभीम जन मतावलम्बी प्रदर्शित किए गए हैं। कवि चन्द के शब्दों में वे 'वेद धर्म के भजक थे, तथा मात्र जन मत को ही प्रमाण मानते थे।' उन्होंने कुत्सित लुचिता (वेश नुचवान् वानो) का पथ अपनाते हुए महावीर का अपना परमागध्य बना रखा था, तथा यज्ञ धर्म या सुधर्म का उत्थापन करके अधर्म का प्रतिष्ठापन करने का बीड़ा उठा रखा था।<sup>२</sup> रासोकार ने वे शिवपुरी में आग लगवाकर उसे विनष्ट करत भी चित्रित किए हैं।<sup>३</sup> उपयुक्त विवरण में जन मतावलम्बी शरेशो द्वारा यज्ञात्मिक बौद्ध धर्म और शिव आदि देवों के मन्दिरों को भूसात करा देने के तथ्य के साथ साथ कवि चन्द ने महाराज भोलाभीम के लिए जो विशेषण प्रयुक्त किए हैं उनमें वैदिक मतावलम्बियों की, जना के प्रति विग्रहणा के भी दर्शन किए जा सकते हैं।

कवि चन्द ने द्वारिका-क्षीय की यात्रा से नौजान हुए तथा अयत्र भी जनियों की साधना पद्धति का जो खण्डन किया है उसमें स्पष्ट होना है कि बौद्ध मतावलम्बी जन मतावलम्बियों की साधना पद्धति का उपहास ही शब्दों में करते थे— जिनका बश अभद्र हाता है, जो गामती आदि नदियों में स्नान नहीं करते, अपने केशों का लुचन कराते हैं वस्त्रों के धोने का तो कहना ही क्या, जो मुख तक प्रक्षलित नहीं

१ "परमोध तज्जी बाधक पुरान । रामाइन सुन भारत निदान ।"

—'प० रा०', का० ७१।३।२

२ 'ठानिज्जे मानिज्जे मत हानिज्जे गुर जान ।

वद धम जिन मजण, जन ध्रम परिमान ।'

—'प० रा०' मो० २।४३।२।२५

३ "महावीर वीर चित्त जाप लीनो । जिने कुच्छित्त लुचित पथ कीनो ।

जिन जग्य ध्रम चर नति भज । सुधर्म उथाप अध्रम सुरज ।"

—'प० रा०', का० ४६।१।२८८

४ "भोराराइ भीमग, सोर सिवपुरो प्रजारिय ।" —'प० रा०', का० ४४।७।१

करते आँसो से अश्रुपात हो जाने की दशा में (केशव की नुचवाते समय—आँसुआ का आना वज्य था) जो अनक उपवास करत है, जिनका देवताआ के दशन तथा गंगा-स्नान और श्राद्ध कम आदि हिंदू परम्पराआ में विश्वास नहीं है—एस जनी लाग न जान किस भ्रमजाल में ग्रस्त रहते हैं और भगवान ही जान कि इह सद्गति कस प्राप्त होगी ?<sup>१</sup>

महाराज बीसलदेव के पुत्र सारगदेव के हृदय में अपनी धानबहिन गौरी के वचन्य में दुखिन हाकर बराग्य जाग्रत हा जाता है और वे अहत की सेवा करत हुए, अहिंसावृत्ति का पालन करने का निश्चय कर लते है।<sup>२</sup> महाराज बीसलदेव को जब यह बात होता है तो वे उह ममभात हुए कहत हैं कि तुम्हें इस पान नष्ट करने वाल धम की बातें तो कानो तक में नहीं पडन देनी चाहिए। इससे पुरुषार्थ क्षीण होता है तथा अपयश लगता है। राजपुत्रा के लिए तो रामायण और महाभारत जस प्रथा का पठन और श्रवण करना आवश्यक होता है न कि बुद्धि भ्रष्ट करने वाल जन और बौद्ध पुराणा का सुनना।<sup>३</sup>

रासो में महाराज भोलाभीम से अपनी बहिन इच्छिनी के विवाह प्रस्ताव का प्रतिरोध करते हुए उसके भाई जतिसह द्वारा भी यही तक प्रस्तुत किया जाता है कि वे तत्त्व पान (वदिक मर्यादाओं) के ममय न होकर पाखण्ड और तन्त्र में प्रमदक्षता के कारण गर्वाधी हैं।<sup>४</sup> जन मतावलम्बी अपनी तांत्रिक साधनाआ को उपनिधि को वदिक पन्था की अवमानना और उनकी उक्तिओ के खण्डन के लिए भी अपनाते थ। पद्मीराज रासा में वणन है कि महाराज भोलाभीम के दरबारी अमर सेवरा ने अपनी सिद्धि के बल से अमावास्या को चन्द्र दशन कराकर विप्रो को शीश मुन्वाकर निकलवा दिया था।<sup>५</sup> रासोकार ने अमर सेवरा द्वारा अमावास्या को बारह कोस पयत तक चन्द्र का प्रकाश दिवाकर विप्रो के सिर मुडवाने तथा उनके धन का अपहरण कर लेने का अयत्न भी उल्लेख किया है। कदाचित इस तिथि निर्णायक विवाह के मूल में भी वदिक और जन मतावलम्बियों के मध्य धार्मिक विद्वेष ही कायरत था जिसमें उनके पचाग आदि को सारहीन सिद्ध करने के लिए जन मतावलम्बी अमर सेवरा ने

१ भद्र भेष नइ हुए। जाइ गामति न हाव।

तज न धर्म सेवरा। हाइ करि केस लुचाव।

मुप पावन हन कर। वस्त्र धाव न विवक।

आँसू अष परत। करत उपवास अनेक।

दरसन सेव मान नहीं। गंगा ग्यान श्राद्ध त्रम।

कवि चन्ह कहत इन कहा गति। किहि मारग लग्य सुधर्म।<sup>१</sup>

— १० रा० का० ११७२।४६

२ न ७—६० १० रा० का० ७१।३४६ वही, ७१।३५१ ५२, वही, ४५४।४०

वही ४४६।६ ४८२।२४ ४६१।२७८

तत्र मन्त्रा का आश्रय लिया होगा।

भारत की भावी दशा का निधारण में राज्य-स्तर पर चलने वाले इस धार्मिक विद्वेष का दुर्भाग्यपूर्ण ही कहा जायगा। यदि महाराज पृथ्वीराज और भालाभीम न आपसी युद्ध में शक्ति क्षय करने के स्थान पर शाह गौरी का सगठित हाकर सामना किया जाता तो कदाचित् भारत की दासता की श्रृंखलाएँ नहीं पहननी पड़ती। यह तथ्य ध्यातव्य है कि डा० लक्ष्मण शर्मा न भी सन् १२०० के लगभग, जन धर्म के प्रचार में राजकीय सहयोगता लेने और तदर्थ यदा-कदा रक्तपात की भी घटनाएँ घटित होने का उल्लेख किया है<sup>१</sup> जिससे रासो में दिखाया गया विरोध तथ्याधृत सिद्ध होता है। यह विरोध शन शन उपशमिन् अवश्य होता जा रहा था और जसा कि राज विलासकार मान न चित्रण किया है एक ही नगर में जिनराज और राम श्रीकृष्ण तथा शिव आदि देवों के मन्दिर हान थे और वदिक तथा जन मतावलम्बी बिना किसी वमनस्य के स्व आराध्यों की पूजापासना करने लग थे।<sup>२</sup>

### (ग १) हिन्दू और मुस्लिम धर्मावलम्बी

हिन्दू और मुस्लिम धर्मावलम्बियों के पारस्परिक दृष्टिकोण के सम्बन्ध में दो तरह की धारणाएँ प्रचलित मिलती हैं। दोनों धर्मों के उदार चेतावग की दृष्टि में इश्वर और अल्लाह एक थे, अतएव हिन्दू और मुसलमानों में किसी भी प्रकार का वमनस्य व्यवध और निन्द था। दूसरा वग उन लोगों का था, जिनकी दृष्टि में एक दूसरे के धर्म की बातों का श्रवण ही नहीं अपितु उनका कणगोचर मात्र होना भी उन्हें सुनने वाला का नरक अवस्था दाजख वास दिलाने के लिए पर्याप्त था। पहले दोनों धर्मावलम्बियों के असहिष्णु दृष्टिकोण पर प्रकाश डाला जा रहा है—

हिन्दू और मुसलमानों के पारस्परिक दृष्टिकोण को विपाकत करने के मूल में राजनीतिक स्वार्थों की प्रधानता मिलती है। उदाहरणार्थ भारत पर आक्रमण करने का औचित्य सिद्ध करने के लिए शाह गौरी अपने सैनिकों को विगत घटनाओं पर आघत जा काल्पनिक आख्यान सुनाते हैं, उन पर दृष्टिपात करने से इस तथ्य में सन्देह नहीं रहता कि उनका मूल अभिप्रत ता अपने राज्य का विस्तार करना होता था, किन्तु उस के धार्मिकता के आवरण में प्रच्छन्न करके, सैनिकों में धर्म-युद्ध की भावना जाग्रत करने का प्रयास करते थे।

शाह के वजीर आदि राज्य मंत्रियों का भी दृष्टिकोण ऐसा ही था। कवि चण्ड के गजनी पहुँचने पर उनका वजीर कहता है कि 'इम अदीन काफिर का आप नाम तक जाना में मत पडने दीजिए और इसे शीघ्रातिशीघ्र स्व राज्य से निष्कासित कर दीजिए।'<sup>३</sup> शाह गौरी द्वारा महाराज पृथ्वीराज का आक्रमण का कारण बताया है

१ स २—दे०, 'मर्ली चौहान हाइनेस्टीज', प० २२३, 'रा० वि०', २१०२ १०४  
३ प० रा०', का० २६७६।३०८

हिंदू धर्म को मिटाने की कामना से उनके मंदिरों का नष्ट कराते<sup>१</sup> तथा उन पर 'दूने तीथकर और जजिया लगाकर,<sup>२</sup> उन्हें हिंदू धर्म का परित्याग करने के लिए विवश करना उल्लिखित किया है। उन्होंने यह धारणा भी व्यक्त की है कि हिंदू और मुसलमानों की शत्रुता दब और दानव तथा बेहरी और करि की शत्रुता की भाँति परिष्कृत रूप में चलती ही रहती है।<sup>३</sup> जायराज ने महाराज हुम्मीर देव अपने राज्य में मसजिदें नष्ट कराकर मंदिर बनवाते चिंतित किए हैं।<sup>४</sup>

हिंदू और मुस्लिम धर्मावलम्बियों सम्बन्धी उपयुक्त विवरण पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि उसका मूलकारण मुगल बादशाहों का निहित स्वार्थ अधिपत्य है। स्वधर्म को श्रेष्ठ मानने के विषय में तो विधर्मियों को आपत्ति ही क्या हो सकती है, किन्तु ऐसा धर्मोन्माद जो बल प्रयोग द्वारा विधर्मियों को अपने अनुयायी बनाने पर आधर हो, अक्षम्य ही कहा जायगा। इस प्रसंग में यह निवेदन भी अप्रासंगिक होगा कि हिंदू नरेशों द्वारा मसजिदों को नष्ट कराकर उनके स्थान पर मंदिर बनवाने का जो उल्लेख किया गया है उसमें आश्रयदाताओं की प्रशस्ति का अंश अधिक है क्योंकि मुगलों की दुरत बाहिनी के कारण औरगजेबकाल तक ऐसे हिंदू नरेश प्रत्यल्प ही हुए हैं जो उनकी मसजिदों को विनष्ट कराने का साहस कर सकें होंगे। इतिहास का उल्लेख ऐतिहासिक साक्ष्यों के निष्पत्ति पर खरा नहीं उतरता।<sup>५</sup> इसके विपरीत शाह औरगजेब प्रायः जिनको लेकर ही दानों धर्मों के अनुयायियों में विरोध का तीव्र स्वर अधिक व्यक्त किया गया है अपनी धार्मिक कट्टरता और मंदिरों को नष्ट कराने के लिए इतिहास प्रसिद्ध हैं।<sup>६</sup> टर्नियर आदि पाश्चात्य यात्रियों ने

१ स ४—६०, 'छ० प्र०' ६।३ ११।१० वही ११।३ ह० रा० ३६

२ स्वयं महाराज राजसिंह के राज्य में ही औरगजेब की सेना द्वारा डा० गौरीशंकर हीरा० आभा के अनुसार २३६ मंदिर तोड़े गये थे जबकि एम० सी० सरकार ने उनकी संख्या ३०२ दी है—'हिंदी वीरकाव्य' प० २४८ पर उद्धृत।

३ डा० आशीर्वादीवाल श्रीवास्तव के अनुसार मंदिरों को ध्वस्त कराने की कुप्रथा मग्राट अकबर और जहाँगीर के शासनकाल में बंद रही। शाहजहाँ नये मंदिरों का निर्माण तथा पुरानों की मरम्मत बंद कराने के साथ साथ खुद मंदिर गिरवाये भी थे। औरगजेब के राज्यकाल में यह वृत्त्य पराकाष्ठा को पहुँचा जिसने बनारस के विश्वनाथ और गोपीनाथ तथा मथुरा के केशवराय के प्रसिद्ध मंदिरों को ध्वस्त कराने के साथ साथ अपने सूबदारों को यह आदेश भेज दिया था कि वे काफिरों के समस्त मंदिर और स्कुतों को भूसात कर दें। यही नहीं मंदिरों के ध्वंसोत्सव के काय में किसी प्रदेश में ढीलता नहीं की जा रही है इसकी दखलेंदगी के लिए और इस काय का गति प्रदान करने के लिए उसने एक दरोगा भी नियुक्त कर दिया था।' — द० मुगल एम्पायर', प० ५३५

उनकी उस प्रच्छन्न राजनीतिक स्वाधपरता की ओर स्पष्ट संकेत किया है, जिसको अस्त्र बनाकर उहोंने अपने भाई द्वारा की भी उनका काफिर करार देकर, निमम हत्या कराई थी।<sup>१</sup> गारेलाल ने शाह औरगजेब द्वारा हिन्दुओं पर जो मँहगे तीथकर और जजिया लगान का उल्लेख किया है, वह ऐतिहासिक साध्या से समर्थित है।<sup>२</sup> डॉ० ईश्वरी प्रसाद के अनुसार शाहजहाकाल में भी प्रयाग जान बाल यात्रियों में सदा छ रुपये बमूल किये जाते थे तथा मत "यकिनदा का गंगा में अस्थि प्रवाह करन के लिए भी कर देना पड़ता था।"<sup>३</sup> बनियर ने उल्लेख किया है कि शाह औरगजेब सूय ग्रहण के अवसर पर तीथ स्थलों पर मेला के आयोजन की तभी अनुत्ता प्रदान करत थे जब ब्राह्मण लाग उह एक लाख रुपये की भेंट प्रदान कर देने थे।<sup>४</sup> बनियर का उल्लेख उस काल का है जब रुपये की त्रय क्षमता आज से कम म कम पचास गुनी तो अवश्य थी—आईन ए अकबरी में अकबर काल में गेहूँ और चना का भाव क्रमशः १२ और ८ दाम प्रदर्शित किया गया है जो एक रुपये में चात्तीस हाते थे—अतः अनुमान किया जा सकता है कि औरगजेबकाल में हिन्दुओं को तीथ-यात्रा आदि करन जाना कितना दुष्कर रहता होगा। पञ्चवीराज रासो में राग का शब्द सुनने तथा छत्रप्रकाश में शब्द का शब्द सुनने से जो नरक और दोजख का वास मिलने का उल्लेख किया गया है वह सामान्य नागरिका के अत्याय के प्रति अष्टिकोण का परिचायक नहीं अपितु शोना धर्मों के प्रति कट्टर आचार्यों के मस्तिष्क की उपज प्रतीत होना है।

### सहिष्णु दृष्टिकोण —

हमारी आधार सामग्री के प्राचीनतम ग्रन्थ पञ्चवीराज रासो में मुसलमान जालधरी देवी की पूजा करत दिखाए गए हैं।<sup>५</sup> उमम शाह गोरी का माता भी दाना

१ (क) टोबल्स इन मुगल इण्डिया भाग २, पृ० १०६

(ग) टोबल्स इन मुगल एम्पायर' बनियर, पृ० १०६

२ 'आमेर के महाराज जयसिंह और जाधपुर के महाराज जसवर्तसिंह के निधन के पश्चात् औरगजेब ने तीथकर और जजिया बसूल करना पुनः चालू कर लिया था, जिसे वह उनके विरोध के कारण उनके जीवनकाल में बन्द करने के लिए विवश हो गया था।' — द मुगल एम्पायर, पृ० ५३८

३ 'मुगलकालीन भारत का संक्षिप्त इतिहास' पृ० ४१४

४ 'टोबल्स इन मुगल एम्पायर', पृ० ३०३

५ 'आईन ए अकबरी', भा० ३, पृ० ६५

६ सह हिंदू वर मुसलमान। सत्य विप्र सुधावहि।

जवनिक कुल छत्री। कुलाल पोड्स मिलिधावहि।"



आज क्याम त्वा-राता म ईश्वर और अल्लाह अथवा करतार की जिस एतता का प्रतिपादन किया गया है, वह उन उदारचेता मामाजिका के चिंतन का प्रतिनिधित्व करता है जि होने धार्मिक समन्वय की दृष्टि से अल्लाहपनिपद की रचना करके, अल्लाह का विष्णु के अवतारों में परिगणित करने का प्रयत्न किया था। जोधराज द्वारा शाह अलाउद्दीन को शिवापामक दिखाना काल्पनिक हो सकता है किंतु हिंदू और मुस्लिमों द्वारा एक दूसरे के देवी देवताओं और पीर पगम्बरो की पूजा करने लगने का तथ्य वहिस्ताक्ष्या से भी समर्थित है।<sup>१</sup> कश्मिरशाही का शाहजहा का गोविन्द रक्षक घोषित करना तथा भूषण का शाह अकबर आदि की उदार धार्मिक नीति की प्रशंसा करना भी तथ्याघत है क्योंकि ऐसे उल्लेख मिलते हैं कि सम्राट अकबर ने अपने भाजनालय में गोमास का पकाया जाना निषिद्ध घोषित कर दिया था<sup>२</sup> तथा देवी देवताओं के प्रति उनका दृष्टिकोण इतना उदार था कि उनकी हिंदू पत्नियां न महल में मरिदर बनवा रखे थे और उन्हें अपने देवी देवताओं की मूर्तियों के पूजन की सम्राट की आरसे पूर्ण स्वतंत्रता थी।<sup>३</sup> उन्होंने हिंदुओं से तीर्थ कर और जजिया वसूल करने की प्रथा भी स्थगित कर दी थी।<sup>४</sup> शाह जहांगीर की भी मान जनों को छोड़कर अन्य हिंदू धर्मावलम्बियों के प्रति, अपने पिता शाह अकबर की ही भांति उदार मना चर्चा बताई जाती है।<sup>५</sup>

हिंदू और मुस्लिम धर्मावलम्बियों की अन्त्याय के प्रति सहिष्णु और असहिष्णु धारणाओं पर युगपत् रूप में दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि उनके सम्बन्ध में विक्रमता का प्रादुर्भाव करने में धार्मिक धारणाओं के स्थान पर राजनीतिक स्वार्थों का अधिक हाथ था। जब दोनों धर्मावलम्बी साथ साथ निवास करने लगते तो सामान्य में एक दूसरे की धार्मिक आस्थाओं का पूणतया खण्डन करने के स्थान पर एक दूसरे के धर्म की कुछ बातों का अपना लन की भी प्रवृत्ति बढ़ती गई। औरंगजेब आदि कुछ नरेशों ने राजनीतिक स्वार्थों से उनके विभेद की खाई का और भी चौड़ा करने की काशिश की थी, जिसका धार विरोध हुआ और अंततः उमका दुष्परिणाम यह निकला कि हिंदू और मुसलमान दोनों ही धर्मावलम्बी अग्रजों की दासता के बंधनों में जकड़ गए।

### (ख १) तीर्थारटन और देवी देवताओं की पूजापासना

वीरकाय धारा के विविध ग्रंथों में चित्रित घटनाओं से स्पष्ट होता है कि प्रयाग या काशा, मथुरा द्वारा मती (द्वारिकापुरी) जगन्नाथपुरी, बद्रीनाथ उज्जैन,

१ भारतीय सभृति और उमका इतिहास डा० सत्यनन्दु विद्यालकाय प० ४१४

२ वही प० ४१५

३ द मुगल एम्पायर टी० आशीवादीलाल श्रवास्तव, प० ५३२

४ स ६—७ वही, प० ५३३, वही, प० ५३३, वही, प० ५३३





म स्त्री लक्षण प्रस्पृष्टित होने लगे, ता माता के आदेश से उसन शिवाराधना की, और स्त्री से पुरुष हा जान का वरदान प्राप्त किया ।<sup>१</sup> परमाल रासो म अत्ताताई का पुत्र क रूप म पालन ही नहीं किया जाता, अपितु उसका विवाह भी कर दिया जाता है ।<sup>२</sup> इस विकट परिस्थिति स परित्राण के लिए वह शिव को अपना शोशापण करके पुनरुज्जीवित किये जान के साथ साथ पुस्तक और युद्ध म एक बार का दवा का भी पगभूत करने के वरदान प्राप्त करता है ।<sup>३</sup> आल्हा ऊल के पूव पुरुष चितामनि शिव को शोशापण करके<sup>४</sup> पुनरुज्जीवित किए जान के साथ साथ<sup>५</sup> उनके अत्यंत पराक्रमी बशजो का वरदान प्राप्त करत हैं ।<sup>६</sup> परमाल रासो म महाराज पृथ्वीराज बटश्वर के मन्त्र म शिवपूजा करके, प्रायश्च करत हैं, कि यदि युद्ध मे मरी विजय हुई, तो आपके दशा करने पुन भी आरुणा ।<sup>७</sup> शिव उन पर प्रसन्न होकर विजय का वरदान दन चित्रित किए गए हैं ।<sup>८</sup> उसम लाखन और कदल भी युद्ध मे विजय प्राप्ति का वरदान प्राप्त करने के लिए शिवोपामना करके कृतकृत्य होत है ।<sup>९</sup>

राजविलास म महाराज गहादित्य पुन प्राप्ति हतु शिवाराधना करत है, जो उह शीघ्र ही उनकी इच्छा पूण हान का स्वप्न दत है ।<sup>१</sup> हम्मीर रासा और हम्मीर-हठ म शिवभक्त महााज हम्मीरन्व का उनसे यह वरदान मिलत चित्रित किया गया है कि तुम चौदह वष पयगा तक शाह अनाउदीन स निभय हाकर युद्ध कर सकन हा । इस अवधि म तुम्हारा वाल भी बाका न हागा ।<sup>२</sup>

शिव के रूद्र रूप का कवि भूषण ने—ब्रह्मा का जगत का स्रष्टा, विष्णु का पालक और शंकर का सहारक बताकर अभिषेक किया है ।<sup>१</sup> शिव के रूद्र और भूतनाथ रूप वस्तुतः बहुत माम्य रखत हैं । युद्धावसरो पर उनके भूतनाथ विशपण का साथक मिद्ध करने वान रूप का प्रायः सभी ग्रन्थो म चित्रण मिलता है । इसम व अपनी पत्नी चंडी तथा भूत प्रेत खबीस और यागिनी डाकिनी आदि क साथ युद्ध-स्थाना म नश्य करते तथा अष्टनम वीरा क मुण्डा का अपनी मुण्डमाला म पिरोत प्रदर्शित

१ से २—दे० प० रा० का० १८७१, १६७४ से १८७७, १६४ पर० रा०, ३४, ३१

३ महादेव गिर जोरिया मत्र जग माया चिबु ।

बनिता सहित प्रमान है किय पुत्री त पुत्र ।

जाहि धाम चौरगि सुत, हम दिनव वरदान ।

इक बार समता कर, नर मुर् कह घमसा । — प० रा०, ३४, ३८, ३६

४ से १०—द० प० रा० २, १७३, वही, २, २७४, वही, २, १७८, वही, ४, १३१, वही, ४, १३२ वही, १, ४५४, 'रा० वि० १, १२६,

११ से १२—दे०, ह० रा०, ४२८ शि० भू०' २२८

विण गये हैं।<sup>१</sup> युद्ध स्थान में योग द्वारा हर दूर का उन्पाय प्राप्त हुए शत्रु जन पर टूट पड़ने सम्बन्धी उल्लेख भी चारःत्माओं और शिव के अटूट सम्बन्ध का अभिव्यक्ति करते हैं।<sup>२</sup>

शक्ति —

शक्ति अपने विविध रूपों में आनाच्यमान की एक बहुजन प्राणियाँ दबी सिद्ध होती है। बीरवाक्य प्रणताओं में उम दुर्गा बानी चामटा राधा पात्रा महामाया तथा सरस्वती आदि त्रिभिन्न रूप धारण करके जगत के नाना त्रिधि कार्यों का सम्पन्न करते चित्रित किया है। शक्ति का मृष्टि का उन्भव और विनाश करने स्मभक्ता की इच्छापूर्ति करने तथा त्रिच्छिन शीत को जाडकर प्राणधरा का पुनरुज्जीवित करने में सक्षम दिग्गने स स्पष्ट हाता है कि वह वस्तुतः विश्व-त्रयी ममभी जानी थी।

पथीराज रामो में चौहाना के आदि पुष्प धनन चाहमान शक्ति की ही सहायता पाकर दुष्ट-दनन में समथ होत हैं तथा उगक प्राणापूर्णा रूप का कुनदवी निश्चित करते हैं।<sup>३</sup> धीर पुण्नीर शक्ति का भाग योग और मुक्ति की प्रणता, जड चनन पदार्थों की प्राधार नर और सुरा का विजयी बनान बानी तथा मुग्धा का मूल कहते हुए उसके जालधरी देवी रूप की आराधना करता है।<sup>४</sup> कमात और चामुडराय शक्ति की पूजा करके अपराजेयत्व की सिद्धि प्राप्त करने हैं।<sup>५</sup> धन पुत्र का स्वप्न में योगिनी द्वारा राज्याभिषेक करने का समाचार सुनकर महाराज पथीराज की माता शक्ति के तुष्टयध होम कराती है।<sup>६</sup> अटूवन का धन निवालन से पूर्व महाराज पथीराज भा हाम कराने है।<sup>७</sup> स्वयं कति चंद्र भी शक्ति के आराधक थे और देवी

१ पत्र भरें जुगिन रुहिर त्रिच्छिद्य मस डकारि ।

नच्यो ईत उमया सहित रण्डमात गल धारि ।

— प० रा० मा० १।४।१०।३३

और भी द० — प० रा० ५।१५७।१६१ क्या० रा० ६०५, शि० भू० ४

सु० च० २।३।८ प्र० वि० ६४

२ (क) 'जय हर जपे राज चल्पी यप्परि हय रुध । प० रा० मा० १।२५७।४५

(ख) 'तो सहस्र जोगी सु सग हर हर शब्द बपान । पर० रा०', १०।५६८

(ग) 'तत्र हमीर हर ध्यान करि हर हर हर उच्चारि ।

गज निज सनमुख पेलि कै जुरे साह सौ राति । — ह० रा० १७८

(घ) 'तह हरपि हर हर हरपि हर हर हरपि हर हर करि पिल्यो ।

वह कहनि हर हर हरी सु धुनि मुनि जिगर सत्रुन को हिल्यो ।

— हि० व० वि०', १२०

३ स ७—दे० 'प० रा० का० ५२।२६४ स ५३।२६८ वही २०।६।१२,

प० रा०, मो० १।३५०।१०, 'प० रा० का०, २६५।४६, वही, ७।८।४४१

को अनक स्थला पर आराधना करत मिलत हैं ।<sup>१</sup> छत्रप्रकाश म बुदेला के पूव पुरुष पचम विध्यश्वरी देवी के<sup>२</sup> तथा राजविलास म गान्जलदास वकेश्वरी देवी क भक्त चित्रित क्रिय गये हैं ।<sup>३</sup> कवि चन्द ने राजमहलो मे पात काल दुर्गा सप्तशती का पाठ क्रिय जाने के तथ्य पर भी प्रकाश डाला है ।<sup>४</sup>

कवि चन्द गारेलाल और मान ने जगत-कल्याण की कामना मे शक्ति विविध रूप धारण करत चित्रित की है । कवि चन्द न शक्ति द्वारा—कल्याणी, कमना, कनारूपिणी कराली ककाली, गंगा, गोमती, गान्जवरी, चामुडा, जया जगमाता ज्वालामुखी डाकिनी, दुर्गा नरसिद्धि नवदा, पावती, भद्रकाली मगना महालक्ष्मी, महामाई यम यमुना, यागिनी, राधिका, वाराही, विष्णु मोहिनी शिवा, शकरी, सगम्पनी और शाकिनी आदि के रूप धारण करने का उल्लेख किया है तथा धारणाएँ व्यक्त की हैं कि वह करोड़ों मूय और चद्रो को प्रकाशित करती है एव समुद्रा का गाभीय, पवन का पराक्रम विश्व-वर्ता विश्व-वर्ता जड जगम का प्रवत्तन करन वाली तथा पापा का विनाश करने वाली शक्ति ही है ।<sup>५</sup>

गोरिलाल न 'छत्रप्रकाश म शक्ति को विध्यश्वरी देवी के रूप म प्रतिष्ठित लिखात हुए कहा है कि वह अपने आनन्दमय स्वरूप म ब्रह्मा की पत्नी बनती है, तथा विद्या, बुद्धि और अविद्या क बत से वह विश्व का बधन युक्त और वधन मुक्त करती है । योगनिद्रा म शयन करन बाने नारायण पर आत्ममण के लिए प्रस्तुत मधु और कटभ नामक दत्या का वध करके नागायण का उमी न सुरक्षित रखा था । देवा क पञ्चिनाण के लिए महिपासुर, घूम्रायन चड मुड, रक्तबीज, गुम्भ और निगुम्भ आदि दत्या का सहार करन बानी, तथा यागनिद्रा क रूप म नद के गह म जम लेकर, कम को उसक आसन विनाश की सूचना देन वाली भी शक्ति या विध्यश्वरी देवी ही था ।<sup>६</sup> कवि मान न इस धारणा का प्रकटन किया है कि शक्ति अपन सौम्य रूप म मरस्वती आदि का रूप धारण करके मंगलकारिणी, सकटो स उवारन वाली तथा नगनारिणी है जबकि रूद्र के शत्रुओ क विनाश के लिए वह सकरी और गेहिणी रूपा हाकर उनका सहार करती है ।<sup>७</sup>

शिव की भाँति शक्ति म भी स्व भक्तों का अमर करन तथा नाना प्रकार क वरदान प्रदान करने का विश्वास किया जाता था । कवि चन्द का वह काय-वीशल और तत्र मन्त्रात्मक कार्यों म अपराजेयत्व का वरदान<sup>८</sup> अप्रत्यक्ष म घटित पड्यत्रा का स्वप्न दकर उनकी सूचना<sup>९</sup> तथा यात्राकाल म हताश हुए चन्द को दिव्य पट प्रदान करके,

१ म ६—दे० प० रा०, का० ४६०।२७३, छ० प्र० १।१२, रा० वि०, १६।२, 'प० रा०, का० १६८८।१२ वही ४८२।२८० २३६०।२३ २४, २४०३।१२० १३५, छ० प्र० १।३, वही १।११ १२ 'रा० वि०' १।१२, प० रा०' का० १५२८।११३, वही, १४८१।१०८-१०६

उसकी सहायता करत चित्रित की गई है।<sup>१</sup> धीर पुण्डरी जालपादवी के पूजन से जत स्तम्भ के भेदन का वर प्राप्त करता है।<sup>२</sup> छत्रप्रकाश म महाराज छत्रसाल के पूर्वपुत्र्य पंचम के शीशापण हेतु प्रस्तुत होने पर विध्यवासिनी देवी, उहे राज्य वापस मिलत और वंशजो के परामर्शी होने का वरदान देती है।<sup>३</sup> परमाल रासो म आल्हा और ऊदल के भयकर युद्ध से घबरा कर, महाराज पृथ्वीराज चडो को शीशापण करन प्रस्तुत होजाते हैं,<sup>४</sup> ता प्रसन्न हाकर देवी उहे आल्हा और ऊदल में किसी एक वीर के खेत रहन, तथा उनकी विजय होने का वरदान देती हैं।<sup>५</sup> आल्हाखण्ड म देवी का भक्त आल्हा उनको स्व शीश काटकर अर्पित कर देता है। उसकी भक्ति से तुष्ट हुई देवी उस पुनरुज्जीवित ही नहीं करती, वरन अमर होने का वरदान भी प्रदान करती है।<sup>६</sup> उसम इदल भी जब देवी को शीशापण के लिए उद्यत हो जाता है तो उससे प्रसन्न होकर वह उसकी आपत्ति का कारण पूछती है और इद्रलोक से अमृत लाकर बनाफलो की जादू द्वारा मारी गई सेना को जीवित कर देती है।<sup>७</sup> राजविलास म कवि मान न भी सरस्वती के प्रकट होन, तथा उसे ग्रथ रचना म सहायता प्रदान करन का वरदान दन का उल्लेख किया है।<sup>८</sup>

शक्ति के चडो रूप का जगत के विनाश और नर सहार से अधिक सम्बद्ध समझा जाता था। इस धारणा का पृथ्वीराज रासो में प्रकटन हुआ है। चडो देवराज इद्र से कहती है कि रामायण और महाभारत के युद्धो म भी मेरी तपा पूणत शान नहीं हा पाइ थी। म तभी से यह आशा कर रही हूँ कि तुम मेरी क्षया शांत करान का प्रयत्न कराग।<sup>९</sup> देवी चडो की इच्छा पूर्ति के निमित्त इद्र एक गधव का भूतल पर प्रपित करत है और आदेश देत है, कि वह तिल्ली और कनोज के मध्य किसी प्रकार से कन्ह का बीज वपन करे।<sup>१०</sup> इद्र प्रपित गधव सयागिता और दिल्लीशरर म प्रेम का जागरण और विवधन करके अन्तत महाभारत के ही सदश जन सहार वाला युद्ध करान म सफल रहता है। इसके साथ साथ वीरकाव्य प्रणताग्रा न युद्ध क्षत्र म छद्र के ताडव नृत्य का चित्रण करत हुए उनकी मृचरी चामुडा और कानी आदि देविया भी रक्त से अपने खप्पर भरत चित्रित की हैं जिसके मूल म सम्भगन धारणा हा कायरत है। शक्ति का पूजा म बलि की प्रधानता मिलना भी इसी तथ्य का निष्पन्न करता है।

उपरिलिखित विवरण से स्पष्ट हाना है कि विविध देविया के रूप म शक्ति विश्व की प्रधानतया एक कल्याण करत्री शक्ति ही स्वीकार की जाती थी और जनमानस म यह विश्वास व्याप्त था कि उस तुष्ट करके अनेक प्रकार के मनारथ सिद्ध

१ स १०—२० प० रा० का० २४०२।१२३ वही २०२।२४, 'छ० प्र०', १।१६, प० रा० ४।१४ वही ४।१६ मा०' ५६५।६७, वही १७०।१६ १८ रा० वि० १।३४ ३५ 'प० रा० का० १२२६।१, वही, १२३४।५१

किय जा सकत हैं। उसका एक रूप विनाश से भी सम्बद्ध था और वह दुष्टकर्मा दत्य और दानवों के सहार के लिए तो प्रसिद्ध थी ही, यह धारणा भी प्रचलित थी कि वह नर सहार से भी तुष्ट होती है।

श्रीकृष्ण —

वीरवाच्य म कृष्ण के लाक रक्षक रूप से सम्बद्ध उद्धरणों की प्रचुरता है, जिनमें उनको दुष्टों के विनाशक और जनरक्षक सम्भन की धारणाएँ प्रकाशित होती हैं। पथ्वीराज रासा म जन मतावलम्बी भोला भीम के आनमण का समाचार पाकर जन परमात्मा कहता है कि कोई डर नहीं जिस गोकुलेश्वर ने (अश्वत्थामा से) गभस्थ परीक्षण की रक्षा की थी दुष्टकर्मा कस का वध, वालीनाग का मदन और गोवधन पवत का उठाकर ब्रजजना का परित्राण किया था वही श्रीकृष्ण हमारी रक्षा करेंगे।<sup>१</sup> उसमें महाराज पथ्वीराज युद्ध म जान से पूर्व श्रीकृष्ण का स्मरण करत<sup>२</sup> तथा विप्रगण आकृष्ण के नाम की माला जपत<sup>३</sup> विव्रित किये गए हैं। कवि चन्द न यह धारणा भी व्यक्त की है कि वसुदेव के पुत्र श्रीकृष्ण का नाम स्मरण करने से पाप पत्र कपूर की तरह विलीन हो जाते हैं।<sup>४</sup> कवि केशव ने श्रीकृष्ण की चतुर्भुज के रूप म पूजा किय जाने का प्रचलन दिखाया है।<sup>५</sup> कवि मान ने भी श्रीकृष्ण की चतुर्भुज मूर्ति की पूजा किय जान का प्रचलन दिखाया है और महाराज गजसिंह उनके दशन क लिए रूप नारायण क मंदिर की यात्रा करते विव्रित किये हैं।<sup>६</sup> कवि मान क अनुमार उम मंदिर म चतुर्भुज के दशन और पूजा करवे, अपनी मनावाछाम्रा की पूर्ति करान की कामना से दव मुनि और मानव आत रहत थ<sup>७</sup> तथा श्रीकृष्ण के प्रभाव से उस तीथ स्थला म देव और दानव मग और घेर तथा अहि और मयूर सप्रेम निवाम करत थ।<sup>८</sup> मान ने श्रीकृष्ण के नामों की जो बहुत तालिका दी है उममें उनके लक्षेश्वर और जनरक्षक रूप का प्रकट करन वाल विशेषणों का ही प्राधान्य है। उसने उनके लिए जगन्नाथ जगत रक्षक जग जीवन, जग हितकर जग जनक दस्य निवदन केशव गापान, गदाधर, श्रीपति मदनमोहन, मधुसूदन, माधव मुरारि गिरिधर मुकुद गाविन्द शम्भर, चक्र पाणि चतुर्भुज, वासुदेव, विष्णु बावन (वामनावतार), वशीधर, विश्वम्भर वनमात्री, वसुपाल, वाराहवतार पुष्पोत्तम, पुराण पुरुष, परमेश्वर, पद्मनाभ अति शयन, राधावल्लभ और अच्युत आदि सनामों का प्रयोग किया है।<sup>९</sup>

मुजान चरित म समस्त ब्रज मण्डल की रक्षा का भार श्रीकृष्ण क अर्पित बतान हुए धारणा व्यक्त की गई है कि चौरासी कास म फले ब्रज मण्डल क किलेदार स्वयं

१ स ६—दे० 'प० रा०', का०, ४५५।४४ वही ४०५।११०, वही १६६५।६६, वही २२३।३३६ वी० च०, १६।२३ 'रा० वि०', ८।१ ४, वही ८।२ वही ८।३, ८।५३ ५६

वागुच्य गुण ही हैं। उगम महाराज मूर्जमन के इष्ट व श्रीकृष्ण प्रसिद्ध विद्वान् हैं तथा युद्ध में विजय मिताभा उत्ती को कृपा पर धारणा बनाया गया है।<sup>१</sup> छत्रप्रकाश में भी गामात्रिका गिषाजी छत्रमानजी का परममन है कि प्रायः श्रीकृष्ण का हृदयस्वकारणें शाहू धीरमजय व विद्वद्गम्य ग्रहण कीजिए व धारण ही धारणी मनुष्यता करेग।<sup>२</sup>

वीर वाच्य में श्रीकृष्ण के साधनरजक रूप का भी ध्येय-व्यक्ति अभिव्यक्ति मिली है। पद्मवीराज रागा में दशावतार का वर्णन करते हुए कृष्णावतार का भी वर्णन किया गया है जिसका आधार भागवत बनाया गया है।<sup>३</sup> इस वर्णन में उनकी स्थिति मागत चारी धीर धीर हरण आदि सीलामा की प्रधानता है।<sup>४</sup> गुत्रात् 'रति' में इस सीलामा का तो विवरण नहीं दिया गया किन्तु महाराज मूर्जमन के पुरोहित ब्रज प्रसाद पर ध्यात्रमण के लिए सान्द्र धारणा मन्त्रार को ब्रज मानस्य गुणात् हुए कहते हैं, कि श्याम की ज्योति स्वरूपा राधा की ज मरुत्सी बरसान की धीयिकाभा का इस समय भी ईश धीर पुराण बुद्धारा करते हैं। राधा धीर कृष्ण की सीलामा के मान-म्यत मान धीर तथा सवत-स्थली का दगकर एता कीत है जा धान-विभाग हाकर प्रेमाशु बहाना धारम्भ न कर देता है।<sup>५</sup> सम्भगत उद्धरण में धारणा मन्त्रार का तमी पवित्र स्थली पर ध्यात्रमण करने से विरत करने की चपटा ता मूत्र कारण है ही, इसमें ब्रज मण्डल में लोगो की कृष्ण भक्ति मन्त्राधी धारणाभा पर भी प्रकाश पड़ता है। छत्रप्रकाश में कवि गारेलाल ने बाल गाविन्द की पूजा चित्रित की है।<sup>६</sup> तथा धपन भवन छत्रसालजी के प्रेम के वर्णन भूत होकर उनकी मूर्ति नृत्य करते प्रदर्शित की है जिस नृत्य लीन दलकर पद-मुजारी विस्मय में पड़ जाते हैं।<sup>७</sup>

श्रीकृष्ण के मन्दिरों के विषय में इस तथ्य का उल्लेख करना आवश्यक है कि कवि केशव<sup>८</sup> धीर मानस में उनमें स्त्रिया के नृत्य गान करने का चित्रण किया है। यह नृत्य गान मन्दिरों में होने वाली रास सीलामा का अंग नहीं प्रतीत होते, क्योंकि इन कवियों ने रास का उल्लेख ही नहीं किया है तथा उसमें प्रायः लडके ही स्त्री-व्यंग

१ स ७—द०, 'सु० च० ७।२।६ छ० प्र०, १।१।६, प० रा० वा०, २।२।५६१, वही, २।१।३०२ से २।२।५६४ 'सु० च०, ७।१।५६ छ० प्र०' ४।५ वही ४।८ ६

८ देखि जाय चतुर्भुज देव । जिनकी करते जगत सब सब ।  
चदन चर्चित एक प्रवीन । साभत तहाँ बजावत वीन ।  
गाय बजावत नाचत एक । जनु किरर गधव अनेक ।

— वी० च०' १६।२२ २६

६ दीप धूप फल फूल श्रिय, परसति सुरति समीर ।

गीत नृत्य वादिन धुनि, गरजत गगन गभीर ॥ — रा० वि०', ८।४८

म रास किया करते हैं। केशव<sup>१</sup> और मान<sup>२</sup> न नृत्य के लिए वाताघ्रा के सज घजकर धान का स्पष्ट निर्देश किया है तथा मान न महाराज राजमिह को अथ मरदारा के साथ मंदिर प्रागण म नय प्रेक्षण करने चित्रित किया है।<sup>३</sup> अतः य नृत्य करने वाली स्त्रियों बदाचिन वारागनाएँ रही हागी। वारहवी मदी म भारत आए शम्भूनी न उल्लेख किया है कि यद्यपि ब्राह्मण पुजारिया की इच्छा नहीं है कि मंदिरा म देव दामियाँ (जा उमकी दष्टि म उच्चकाटि की वारागनाएँ थीं), रखी जाए तथापि नरसगण उह मंदिरा म इम दष्टि स नियुक्त रखत है जिसस उनके रूप-नोभी दशक अधिक् सत्या म आएँ और राज्य को अधिक् भाय हा।<sup>४</sup> औरगजेन्द्र-काल म भारत आने वान बनिधर नामक यात्री न भी उस समय मंदिरा म वारागनाघ्रा से नृत्य करने की प्रथा का उल्लेख किया है।<sup>५</sup>

संक्षेप म श्रीकृष्ण, महाराज परमार पथ्वीराज मूरजमल और छत्रमाल आदि राज्य-नायका क इष्टदेव थ और व घाश्वस्त रहते थे कि हम कसारि की कृपा म युद्ध म अथथ ही निजय प्राप्त हागी। उनकी प्राय विष्णु की चतुर्भुज मूर्ति के रूप मे पूजा की जाती थी। उनकी प्रतिमा का गगाजल आदि से अभिषेक किया जाता था और पूजन म मेवा और मिष्ठाना का भाग लगाने का माहात्म्य समझा जाता था। शिव के सत्स के नाना प्रकार क वरदान देने के लिए ता विख्यात नहीं थ, तथापि भक्तो क प्रेम के वशीभूत हाकर व नृत्य किया सक्त हैं ऐसी लोकधारणा व्याप्त थी। श्रीकृष्ण मंदिरा म नृत्य-गान की भी आयाजना हुआ करती थी। यह एक एमी विशेषता है जिसका वीरकाव्य म शिव शक्ति या भगवान राम के मंदिरा म प्रचलन नहीं दिखामा गया।

### श्रीराम —

पथ्वीराज रामा म महाराज पथ्वीराज दशानन के भजक रघुनाथ की गथा सुनत तथा अथथ युद्ध म राम का नाम जपत ता चित्रित किए गए है किन्तु उसम उनकी पूजा का चित्रण नहीं मिलता।<sup>६</sup> भगवान राम की पूजा किए जान पर प्रयाश करने वान निर्देश परमान रामा वीरचरित और छत्रप्रकाश म मिलत हैं। परमान रामा म महाराज चंद्रब्रह्म, चित्रकोट (चित्रकूट) म राम क मंदिर की प्रदक्षिणा लगाकर उनकी मूर्ति के चरणारवि दा म गिरकर प्रार्थना करने हैं, जिसस प्रसन्न हाकर रघुपति उह दशन दकर वृत्ताथ कर्त हैं।<sup>७</sup> उमम महाराज राहिलब्रह्म भी राम क

१ निर्दिष्ट अग्रन अग्रना अपार, भूपन पट पूरन सियार। — वी० च०' १६।२७

२ "सजि सिगाग बहु सुदरी नव-नव नृत्य नचत।" — रा० वि० ८।६४

३ म ६—दे० 'ग० वि०, ८।६२ ६५, 'अलवरलीज इडिया, भाग २ प० १५७

'ट्रवल्स इन मुगल एम्पायर, पृ० ३०६, 'प० रा०' का०, १६६५।७१

७ 'ता गढ घानी राख नूप। चित्रकोट कह जाय।' — पर० रा०, २।२ ३



नया शिवाय गए हैं<sup>१</sup> तथा गजगुरु (गजुगण) के मंत्र में भी राम नाम की घोर मीताजी की महाराज परमार द्वारा पूजा किए जाने का विवरण दिया गया है<sup>२</sup>। बीरबल्लभ म कश्यप, क्षत्रिया की दरशांग कृषिा द्वारा राम का स्मरण किए जान<sup>३</sup> तथा उनका कीर्तन करा का प्रवचन शिवाया है<sup>४</sup>। उन्नीस महागात्र भुवनाय तब का भी मीतायाय के करणा म उद्ध घास्या प्रशंसित की है। व कथा है कि मीतायाय की शृणा रहत भरा रामाय भी अभिष्ण नगी ता मरणा कनाकि य प्रवच क्षण घोर प्रत्यत शिवा म मरी स्थाय तत्पर रहा है<sup>५</sup>। द्वाप्रकाश म मर्या के मंत्र म भगवात राम मीता घोर सद्मण की लगी गुरु मूर्तियां प्रतिष्ठापित विविय का गइ है जिह दगजर प्रतीत हाता था कि य बात घोर दार कर गी है<sup>६</sup>। रामान न घायात उद्ध नर-नारी उनके दशन करन प्रशंसित किय है<sup>७</sup> तथा मराराज द्वाप्रकाश के पिता चपतिराय भी राम के भक्त दिगाय है<sup>८</sup>। पदा घोर द्वाप्रकाशजी के वाला साप से उद्धान इम घारणा का भी अभिघातन किया है कि भगवान राम त्रिभुवन-पति समझे जात थे<sup>९</sup>।

भगवान राम सम्बन्धी उपयुक्त विवरण पर दृष्टिगत करन से स्पष्ट हाता है कि उनकी पूजा का प्रवचन सस्या म घल्ल तथा घणगाहन घराचीन प्रथा म शिवाया गया है। इमने घापार पर कहा जा मरणा है कि राम की पूजा का शिव शक्ति घयरा कृष्ण की पूजा की भांति व्यापार प्रवचन नही था। बहिष्सा या स भी जान हाता है कि उनकी पूजा शिव घोर शक्ति या ता कहना ही क्या कृष्ण पूजा से भी बाद म घारम्भ हुई है<sup>१०</sup>।

हनुमान —

पथ्वीराज रासो म त्रिनीश्वर के कुछ सनिना के इष्ट देव हनुमान प्रशंसित किय गय है<sup>११</sup>। रासाकार के बड ही विवराल रूप वाल तथा भूत प्रतादि के मायी चित्रित किय है<sup>१२</sup>। कदाचित रासाकार के अनस म कथा म प्रशंसित वट घारणा कायन

१ से १०—द० पर० रा०' २।८७ वही ३०।२५ २६ वी० च० १८।५ वही १८।२ वही १३।२२ छ० प्र० ४।४ ५ छ० प्र० ४।५ वही ८।५ वही ४।६ प० रा० का० १३०६।१८४

११ एक साटठचव रचित एक पचास उभय रत ।

एक हनु हिय ध्यान एक भरव घोरत मह । — प० रा० मो० ४।६००।७६

१२ चलि अग चहुआत एव जाजन ता अगिय ।

घटा रूप घन सज्जि निजरि ता ताहि न लगिय ।

जीह वीज विवराल धजा घन बहुल रगिय ।

हृथ गदा सोभत भूत प्रतह ता सगिय ।

सामत राज पिकिवय सलख, हनुमान कहिय ॥” — वही ४।६२०।१३५

रही है, जिसके अनुसार रुद्र के पुत्र महन वडे भयकर और मनवान समझे जाते थे।<sup>१</sup> अन स्व पिता के अनुरूप हनुमान का भी विरगल आकार हान की धारणा प्रचलित रही होगी उनका मूर्ति बनाकर पूजा किए जान का प्रचलन परमाल रामो और छत्रप्रकाश म दियाया गया है। परमाल रामा म व अपन भवन महाराज चन्द्रब्रह्म<sup>२</sup> का दशन दर्शन उनकी चत्रमास म पूजा करन का आदेश प्त हैं। चन्द्रब्रह्म उनकी प्रतिमा प्रतिष्ठित करान है, जिसकी अनक प्रजाजन पूजा करते हैं और अभीष्ट सिद्धि का वरदान प्राप्त करत हैं।<sup>३</sup> उमम मलियान व भी इष्टदेव हनुमान प्रदर्शित किय गय ह।<sup>४</sup> छत्रप्रकाश मे महाराज छत्रमाल हनुदूक के म्दिर म हनुमानजी क दशन करत चित्रित किए गए हैं।<sup>५</sup> हनुमानजी की पूजा-सम्बन्धी निर्देशा की अल्पता सिद्ध करती है कि उनकी पूजा का अर्थिक प्रचन नही था।<sup>६</sup>

### मनिया देवता —

मनिया देवता महोद्वे के चदन और वनाफल वशा के कुल देवता चित्रित किय गय हैं। परमाल रामो म कवि जगनिक उनसे आराधना करत हैं कि आप आल्हा उरुग को कनौज मे महोद्वे प्रत्यागमन के लिए प्रेरित कीजिए।<sup>७</sup> मानिया देव उह वजन दन हैं और कहत हैं कि तुम्हारे कनौज जाने पर व तुरत महादे आ जायेंगे।<sup>८</sup> भुजरिया का खुटन करवाने म सहायता प्ने के लिए महारानी मल्हना मनिया देव क चरणा म गिरकर प्रार्थना करती है कि वे आल्हा का, मह,वा लौटने का स्वप्न दें।<sup>९</sup> मनिया देव उह कृताथ करत चित्रित किए गए है।<sup>१०</sup> विवाह क उपरात स्वपुत्र और पुत्रवधू द्वारा रानी मल्हना उनकी पूजा करवात भी चित्रित की गई हैं।<sup>११</sup> आल्हखण्ड म ऊरुग<sup>१२</sup> और मनिलान<sup>१३</sup> युद्धस्थल म मनिया का स्मरण करते प्रदर्शित किए गए है। मनिया देवता के विषय म यह उल्लेख अप्रामाणिक न होगा कि आल्हखण्ड के उल्लेख म ऐमा प्रतिभासित हाता है, माना मनिया देवता न होकर वनाफल और चदला की कुलदेवी का नाम था। भुजरिया के खुटन क लिए परमाल रासा म मनिया-देवता द्वारा स्वप्न दिए जान के स्थान पर आल्हखण्ड म देवी स्वप्न देव प्रदर्शित की गई है।<sup>१४</sup> श्री चित्तामणि विनायक वद्य न भी मनियागड म मनिया के म्दिर का उल्लेख करते हुए उसके लिए देवी और देवता दाना शब्दा का प्रयोग किया है।<sup>१५</sup>

१ २० 'हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता', डा० वीप्रसाद, प० ६३

२ न १४—३० 'पर० ग० २।१०, वही २।१२ वही, २।१३ १४, छ० प्र०, १२।८, वही १२।८, वही ७।७८, वही, ७।७९, वही १०।४०० ४०१ वही, १०।४०३, वही, १२।२२५ आ० ७९।१७ वही, ९०।१३, 'आ०, ४४३।१६ १८

३२ 'हिन्दू भारत का उत्कप', प० २०६

गणना की पूजा के विषय म गीष्वाक्य म अभिप्रेत उक्तम तथा मित । गगा म य बुद्ध भक्तिका के इच्छित स्थिति म है । जवकि कति मात के उक्तम म इच्छित होता है कि उक्तपुत्र म उनका पूजा भी का जाता था । गणना का की पूजा के विषय म कम उक्तम मितत का मूला कारण बताया यह है कि उक्तम मूला मित म ही प्रतिष्ठित रहती हागा जगा कि साजजन प्रानता है ।

### (म २) पवित्र नदिया मे स्नान

गीष्वाक्य म उक्तम मित्तेशा म इच्छित हाता है कि साक्षात्कृत म गगा यमुना नद्यता बनवा और गामती पवित्र-नाद्यनी दक्षिणा के रूप म गमात्त था । उनक जल के साचमन तथा उनम स्नान करने म पापा के प्रभावत तथा मुक्त गमति के अभिवद्ध हान की धारणाएं प्रचलित था । शक्ति के विविध रूप पर प्रताग इतना हुए पीछे भी दिग्गया जा चुका है कि य नदिया शक्ति के ही विविध रूप गमनी जाता थी ।

गगा —

गगा नदा के लिए सुरगरे भागीरथी और जाह्नवी गणादा का प्रमाण दिया जाता था । उनका उदगम ब्रह्मा के कमठन<sup>१</sup> और हरि के उरणा<sup>२</sup> म मानन हुए विरराग दिया जाता था कि वे शिव की जटादा म विहार करती है ।<sup>३</sup> उक्त विषयगामिनी— स्वगलाक मत्पुत्राक और पाताननाक म प्रवाहित समभन हुए य कारण प्रचलित थी कि वे तीना लावा के वासिया का उद्धार करती है ।<sup>४</sup> उनक जल के साचमन तथा उससे स्नान करने का ता कर्तना ही क्या विश्वास दिया जाता था कि उनक नाम स्मरण और दशन मात्र से ही माक्ष प्राप्त हा जाती है ।<sup>५</sup> गगा-तट पर पहुँचकर नरणा<sup>६</sup> के लिए भी उसक किनार भूषयन करना धार्मिक दष्टि से आवश्यक समभा जाता था ।<sup>७</sup> कशवदासजी ने स्नानाथ गगा म प्रवेश करन से पूव महाराज वीरमिह दव कूप के जल से अपने पर पधारते चित्रित किया है ।<sup>८</sup> इस साचरण के मूत म कथाचित यही भावना रहती होगी कि गद परा से गगाजल को दूषित करता अच्छा नहीं है

१ स ७—दे०, प० रा० मो० ४।६००।७६ रा० वि०' २।१०४ प० रा० का० १६२५।३१५, वही, १६२६।३१६, वही १६२७।३२६ प० रा० का०, ३६।१६२ १६२६।३२८ छ० प्र० ३।४ पर० रा० ६।१५५ प० रा० का० १६२५।३१४ वही १६२८।३३४ वही ३७।१६६ पर० रा० ६।१६६

८ (क) भूम सेज सुप्त मयन गग मडल वर धारय ।

—'प० रा०' मो० ४।६२६।१४८

(ख) ऊन वस्त्र नप अलह ल, भूनल दयी विद्याय । --पर० रा०', ६।१५८ ६ वी० च०', ५।२६ ३०

तथा उमम स्नान करने से पूर्व उसके सम्मानार्थ गंगा जल का पान करना आवश्यक है। कवि केशव न गगानदी की नागियन और स्वर्ण आदिक पदार्थों की भेंट दत्त पूजा करने की भी प्रथा दिखाई है।<sup>१</sup> उनमें प्रार्थना की जाती थी कि माता मरी पाप-पक म लिप्त काया को अन्तिम समय में तरो ही गाद में स्थान मिल।<sup>२</sup> आत्महत्या करने वाला के लिए (जिन्हें धार्मिक दृष्टि से अतीव जघन्य-कामा बलाकर सन्तति न मिलन का विश्वास किया जाता था) भी माक्ष प्राप्त करने की दृष्टि से गंगा एक अनन्य शरणस्थली के रूप में समादत्त थी।<sup>३</sup> कदाचित् वसी धारणा के वशीभूत होकर महाराज जयचन्द सपरिवार गंगा में समाते चित्रित किये गये हैं।<sup>४</sup> रात्रिकाल में हुए सम्भावित पापों के प्रक्षालन के लिए, प्रातःकाल गंगाजल से प्रायश्चित्त करने का भी प्रचलन दिखाया गया है।<sup>५</sup> प्रातःकाल गंगाजल का आचमन करना भी पुण्यकर समझा जाता था।<sup>६</sup>

दशहरा आदि विशेष पर्वों पर गंगा स्नान का माहात्म्य अधिक होता था, अतः तदर्थ विशाल जनसमुदाय स्नानार्थ उमड़ पड़ता था।<sup>७</sup> ऐसे अवसरों पर विश्वास किया जाता था कि स्नानार्थी के तदर्थ जान में बाधा डालने वाले का पाप लगता है।<sup>८</sup> वीरकाव्य में उल्लिखित नरशा में, अथ नदियों के समीपस्थ नगरों में रहते हुए भी गंगाजल से ही नित्य स्नान करने की प्रवृत्ति मिलती है।<sup>९</sup> इसका मूल कारण गंगाजल में स्नान की धार्मिक दृष्टि से अत्यन्त महत्ता समझना ही हो सकता है। विदग्ध यात्रियों के विवरण तथा आईन ए अकबरी से ज्ञात होता है कि मुस्लिम बादशाह भी गंगाजल के प्रयोग की दृष्टि से हिन्दुओं से पीछे नहीं थे और उनके स्नान और पीने के लिए गंगाजल का प्रयोग किया जाता था।<sup>१०</sup> देवो के पूजन में भी गंगाजल का ही सर्वोपरि महत्त्व था। राजविलास में महाराज राजमिठ गंगा से अग्नि दूरवर्ती उदयपुर के समीप स्थित रूप नारायण के मन्दिर में चतुर्भुज की मूर्ति का गंगाजल के एक सौ आठ कलशा से अभिषेक करते चित्रित किए गए हैं।<sup>११</sup> पृथ्वीराज रासा में यह धारणा भी व्यक्त की गई है कि गंगा माता की रज शरीर पर लगान से पापों का विनष्ट होत ही है, मत्स्य-दूत भी उस व्यक्ति का उस समय तक जान भी बाका नष्ट कर सकते, जब तक उनकी रज शरीर से नहीं रहती है।<sup>१२</sup>

१ स ७—दे० 'वी० च०' ५।३० ३१ पर० रा०, ६।१५६, ५० रा० का० ३६।१५६ वही ५७।१६७ वी० च० २२।६, ५० रा० का० ३०।१७६ पर० रा०, ५।८, 'आ०' २३।१५

२ 'गंगा हनुवै की का ररजे का बुडकी का लय अमराप।' —'आ०' २।१०

३ ५० रा०, का० ३१६।१२६ २२।२६ आ०, ६८।१७

४ इब्निन टेबतन प्राफ़ धवनाट एण्ड करी, ५० ८६ ट्र वल्म इन मुगल एम्पायर, बर्नियर—५० ३८६, आदन ए अकबरी भा० ३ ५०, ५७

५ स १२—दे० ५० रा०, का०, ३६।१६८, रा०, वि०, ८।४४

## यमुना —

यमुना यम की स्वर्गा<sup>१</sup> अथवा रवि का तनया<sup>२</sup> गमभी जाती थी। गंगा का विष्णु की तथा सरस्वती का ब्रह्मा की मूर्ति स्वीकार करने की भाँति यमुना ईश की मूर्ति समझी जाती थी।<sup>३</sup> विश्राम किया जाता था कि अश्रमेष मगीया यम करने यात्र रक्षितया का तो पुनजम का वष्ट भागना पटा है जबकि यमुना माता का नाम स्मरण करने यात्र जम मरण के व यम म मुक्त हा जाने है।<sup>४</sup> वह अथरूप गी विश्र की शीषक ज्याति और श्रिक भोक्ति एव आधिररिा वापा की विनागरात्री क रूप म गमाप्त था<sup>५</sup> तथा लागा की आस्था थी कि वह अवन भन्ना का जषयनम पापा क परिश्राण दिनाकर उनका उद्धार कर गरती है।<sup>६</sup> गगाजन की भाँति यमुना जन म भी पापा क प्रक्षालन की क्षमता माती जाती थी।<sup>७</sup> परमान रामा म दवा की यह स्तुति मुनय<sup>८</sup> सि माना हम महाय के दशन पुन करने का गोभाग्य प्रदान कीजिए यमुना दवी क रूप म प्रकट हाकर इच्छापूर्ति का वरदान दन चित्रित की ग<sup>९</sup> है।<sup>१०</sup>

## नवदा —

वीरचरित्र म केशवदाम द्वारा किए वणन स स्पष्ट हाता है कि नवदा शिव की पुत्री समझी जाती थी।<sup>११</sup> इमम पतिता का उद्धार करो की क्षमता मानन हुए विश्राम किया जाता था कि उसके दशन मात्र स ही समस्त दुख विनष्ट हा जान है।<sup>१२</sup> उसक विषय म ये धारणाए भी प्रचलित थी कि उसक तटा पर 'हरि निवाम करन है'<sup>१३</sup> तथा दीन जनो का तो वह मानवत उपकार करती ही है गुर और अमुर भी उसकी वरना किया करत है।<sup>१४</sup>

## गामती —

कवि चन्द न गोमती को शक्ति का रूप बताकर उसके दिग्पत्य पर प्रकाश

१ स २— पर० रा० १७।५३ प० रा०' का० ११२५।३८

३ गंगा मूर्ति विसन ब्रह्म मूर्ति सरससिय।

जमुना मूर्ति ईस। दिव्य दवन पुनि यषिय।

— प० रा०, का० ११२६।४६

४ कियो अश्रमेष पुनजम आव। नही जम मातग ता ध्यान पाव।

—वही ११२६।४४

५ य ८—द० प० रा० का० ११२५।३८, वही ११२६।४० वही ६०३।५

पर० रा० ६।१५१ ५२

६ द० वी० च०' १।१०

१० जषपि निपट कुटलगति आप। देति सुद्ध गति हनि अति पाप। —वही, १।६

११ जषपि सुरामुग्-वदित पाइ। तषपि दीनजन कसी माइ। —वही १।८

१२ पदपद हरिवासा जगमग। स्वच्छ पक्ष—पक्षी सी लग। —वही, १।७

डाला है ।<sup>१</sup> उसी गंगा के समान गोमती में भी स्नान करने की अप्रूप्य समझन वाल जनिया की निन्दा की है, जिससे उसकी दृष्टि में गामती का गंगा के समान ही महत्त्व, अभिद्योतित होता है ।<sup>२</sup> सुजान चरित में भी गोमती का सृष्टि, वृष्ण के आदेश पर विश्वकर्मा द्वारा प्रदर्शित करने, उसके दिव्यत्व का प्रकटन किया गया है ।<sup>३</sup>

वेतवा —

वेतवा की केशवदासजी ने कलियुग में गंगा का अवतार समझने की धारणा प्रदर्शित की है ।<sup>४</sup> उन्होंने वेतवा का पूज्य दिखाते हुए, वह पाखंड और पापा की विनष्टक तथा सदगति प्रदाता दिखाई है ।<sup>५</sup> उन्होंने इस धारणा का भी प्रकाशन किया है कि, उसमें स्नान करने से ब्रह्महत्या और मुरापान जैसे पातको का भी कल्मष धुल जाता है और स्नान करने वाल स्वर्ग जात है ।<sup>६</sup>

पवित्र नदिया के सम्बंध में दिए गए उपयुक्त विवरण पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि आलाच्यकाल में वे देवियों का रूप में समावृत्त थी । उनके जन्म का आचमन, उसमें स्नान करने के मद्दुश ही उनका दर्शन और नाम-स्मरण भी पापा का प्रक्षान्त करने सदगति प्रदाता समझा जाता था । उनकी रज का भी शरीर से उगान तथा उनके तट पर मत्स्य होने का बड़ा माहात्म्य माना जाता था । वे देविया का रूप में प्रकट हाकर वरदान दे सकती है इस प्रकार की लोक धारणा भी व्याप्त थी ।

### (ख ३)—दान देना

आलाच्यकाल में तीथाटन की भाँति दान देना भी माय प्राप्त का माधन समझा जाता था । महाराज सामश्वर के मत में—सतयुग, त्रेता और द्वापर में उपति-गण यन्त्र के सदगति प्राप्ति करत थे, किन्तु कलियुग का कठिन काल में यन्त्र न हो सकत का कारण उनके म्यान पर पांडश दान के माध्यम से आत्म उद्धार किया जा सकता है ।<sup>७</sup> रासा में अथर्व कहा गया है कि सतयुग में भद्रा त्रता में सत्याचरण तथा द्वापर में पूजा की प्रधानता रहती था जबकि कलियुग में दान देना प्रधान धर्म है ।<sup>८</sup> केशवदासजी ने भी इसी से मिलता जुलता मत व्यक्त किया है कि कृतयुग त्रता और द्वापर के मुख्य धर्म प्रमश तप, ध्यान और यन्त्र करना थे जबकि कलियुग का प्रधान धर्म दान देना निहित है ।<sup>९</sup> उन्होंने दान देने से रोगों के परिशमन, संपत्ति

१ स ६—दे०, प० रा०, का० २३६०।२५, वही ११७२।४६, 'सु० च०'

७।२।७० वही, १५।२३ वही १५।२४ २५, वही १५।२६

७ प० रा० मो०, ३।११।२५ २६

८ जुग सु आदि ह्यत्र मत्र गुर त्रेता जुग ह्यत्र सत्तु ।

द्वापर जुग पूजा प्रसिध कलि जुग बीर दत्त ।

— प० रा०' का० ७४२।४१४

९ 'वी० च०', २८।३२

की अभिवृद्धि तथा सुयश के प्रसंगि हात जाने का मुफ्त लिया है<sup>१</sup> तथा दान का प्रभाव म जप और तप का व्यय बताकर,<sup>२</sup> दान की महिमा सर्वोपरि ज्ञान का तप्य का प्रतिपादन किया है। भूषण न भी महाराज शिवाजी का उत्कृष्ट का मूल मत्र दान का बताकर<sup>३</sup> दान की अप्रतिम महत्ता पर प्रकाश डाला है।

दान के प्रकार —

पद्मीराज रासा तथा श्रीरचरित्र म दान का उत्तम मध्यम और अधम—तीन प्रकार बनाए गए हैं।<sup>४</sup> ब्राह्मणा के घर जाकर दान देना उत्तम उक्त अपन यहाँ युवाकर दान देना मध्यम और उनके मंगिन पर दान देना अधम समझा जाता था, जबकि किसी सेवा के प्रतिदानस्वरूप लिए गए दान का निष्फल माना जाता था।<sup>५</sup> परमाल रासा म महादान का ग्रहण करता भारस्वप्न बताया गया है और अभिमत व्यक्त किया है कि महादान का ग्रहण कता बद् ज मा तक उमकं भार स मुक्त नहीं हो पाना। महाराज परमाल अपने पुराहित का पारसमणि दान कर दत हैं।<sup>६</sup> उसके पूजने पर<sup>७</sup> जब वे उसको पारसमणि की जाह का स्वर्ण म परिवर्तित कर देन की विशेषता बतात हैं<sup>८</sup> ता पुरोहित पूर्वोक्त भाव यक्त करत हुए मणि का लौटा देना है।<sup>९</sup>

नित्यक किया तथा पव विशेषा पर भी दान म अनर प्रकार की सामग्री प्रदान करन का प्रचलन था। महाराज पद्मीराज अपन दैनिक वरय म भाजन करने म पूत्र ब्राह्मणा को सौ ऐमी गायें दान देन थे जिनके मीग स्वर्ण त तथा खुर रजत स मने रहन थे। वे नौ विप्र कयाद्या की पहिरावनी और सहस्र विप्रो का भोज भी लिया करत थे।<sup>१०</sup> महाराज हम्मीरदव की धार स भी प्रतिनिध अनेक विप्रा का भोज प्रदान किया जाना था।<sup>११</sup> महाराज वीरमिह दव न नित्यप्रति सहस्र स्वर्ण शृंग मढी गायें तथा सहस्र कास की दाहनिया सनाढय ब्राह्मणो को दान करक भाजन करन का अन ल रखा था।<sup>१२</sup> अयत्र गगा स्नान का उपरांत व धनु अश्व भूषण वतन, भाग्य मामग्री गजराज पुष्पित कलित वाय तथा ग्राम दान म दत चित्रित किए गथ हं।<sup>१३</sup> कवि च द न भी रावल समर विजय मकर सक्रांत के अवसर पर गुरराम पुरोहित का लाखा की आय वाला गाँव दान करत दिखाय है।<sup>१४</sup>

ग्रहण आदि पवों पर दिए जाने वाल दान का माहात्म्य साधारण दशा म दिय गए दान की अपक्षा सहस्र गुणे पुण्य और लाभ का निमित्त समझा जाता था।<sup>१५</sup>

१ स १५—३० 'वी० च०, ११५६ वही, ११४६, वही ११५२, 'शि० भू०', छ० २३१, प० रा०, मा० ३१२१२७ 'वी० च० २८१२६ पर० रा०', २१९५ वही २१९६ वही २१९७ २१९८ पू० रा०, का० १६६५, ह० रा० ७० वी० च० २२१५, वी० च०', ५१३२, ३३, ४२, 'प० रा०, का० २११६१६३ प० रा० मा० ३१११२८

महागज सामश्वर घट्ट ग्रहण के अवसर पर पांडश प्रकार का दान देने हैं जिसमें उनका लिए मोक्ष का द्वार खुल जान का मत व्यक्त किया गया है।<sup>१</sup> रासो म अग्र निमित्त अठारह वस्तुएँ महादान में परिगणित की गई हैं—१ कनक तुला २ हिम-गभ (हम गभ अर्थात् ब्रह्मा की स्वर्ण निर्मित मूर्ति), ३ स्वर्ण-ब्रह्मांड ४ स्वर्ण-कल्पतरु ५ गा महस्र, ६ स्वर्ण कामधेनु ७ अश्व ८ कनक अश्वरथ, ९ स्वर्ण-गज १० स्वर्ण हल, ११ मरुसहित कनक घरा १२ स्वर्ण विश्वचक्र १३ हिङ्गय सता १४ सर (मृत्तमागर), १५ रत्न धनु और १६ महाभूत घट।<sup>२</sup> अग्निपुराण<sup>३</sup> और आईन ए अकबरी<sup>४</sup> में भी पौडश महादानों की यही नामावली दी गई है। उनसे हम तथ्य पर और प्रकाश पड़ता है कि गा महस्र, रत्नधेनु और कनक तुलादान के अनिर्विकृत दान के अर्थ सभी उपादान स्वर्ण से निर्मित होते थे और उनका वजन प्रायः साठ ताल में लेकर छ हजार छ सौ छ ताले आठ मास तक हाता था। हम हिमिङ्गय में स्वर्ण के चार गज जुते रहते थे, जबकि महाभूत घटदान में गणेश की आकृति प्रदान की जाती थी। कनक-तुला के लिए दानकर्ता के भार के बराबर स्वर्ण की आवश्यकता पड़ती थी तो गामहस्र दान में भी उनके सींग और खुर सोने या रजत से मढ़कर दिए जाते थे। इन गाया के साथ एक मांड भी प्रदान किया जाता था। रत्नधेनु दान में गाय और बछड़े की आकृतियाँ रत्नों की बनावट दी जाती थी।<sup>५</sup>

परमाल रासो में वापी कूप और तडागा के निर्माण तथा सबजन हिताय लगाय गय बागा का भी धार्मिक दृष्टि से बड़ा माहात्म्य समझने के तथ्य का निदर्शन किया गया है।<sup>६</sup> महागज बालब्रह्माइमी दृष्टिकोण से पाँच सौ कूप पाँच सौ वापिया तथा सौ तालागा का निर्माण एक सात सहस्र बाग लगवाते चित्रित किए गये हैं। बहुत्वाराशर स्मृति में भी इन कार्यों का दान की श्रेणी में परिगणित किया गया है और सबजन हिताय एस निमाण साथ कराने वाले अनन्तकाल तक स्वर्ग विहार के उपभाग के अधिकारी बताय गये हैं।<sup>७</sup>

दान सम्बन्धी उपयुक्त तथ्या से स्पष्ट हाता है कि आलाच्यकालीन सामाजिकता की दृष्टि में दान देना मान्य प्राप्ति का सुकर माध्यम समझा जाता था। पांडश प्रकार के महादान प्रदान करने से तो मुक्ति का द्वार निश्चय ही खुल जान में विश्वास किया जाना था। दान भावना से प्रेरित होकर धानडय व्यक्ति सावजनित मुविधा के बाग लगवाकर अथवा वापी कूप एव तडागा का निर्माण करके परलोक सुधारण की चप्टा करत थे।

१ स ६—२०, पृ० २०, भा० ३।१६।३४ वही, ३।१६।३१ अग्निपुराणम्, २।०।१४ पृ० ३६७ आईन ए अकबरी, भा० १ प० ३०६ ३०७, पर० २।०, २०।१७५, वृ० पा० स्म०, १०।३७१, १०।३८२



## (ख ४)—तपस्या

तपस्या करने से अनेक सफलता की प्राप्ति का विश्वास किया जाता था। पृथ्वीराज रासा में कहा गया है कि तपस्या किए बिना राज्य तथा सुत-दारा आदि की प्राप्ति नहीं हो सकती।<sup>१</sup> तपस्या से परलोक सुधारने में विश्वास करते हुए महाराज अन्नगपाल, बद्रीनाथ में जाकर तप करते हैं।<sup>२</sup> महाराज सोमेश्वर के यहाँ पृथ्वीराज जी जैसे पराक्रमी पुत्र के जन्म को उनकी तपस्या का फल कहा गया है।<sup>३</sup> दुहा नामक राक्षस तप के प्रभाव से अपनी राक्षस योनि से मुक्ति प्राप्त करता है।<sup>४</sup> दुही नामक राक्षसी भी अपनी कठिन तपश्चर्या के बल पर उमा से वर प्राप्त करत प्रदर्शित की गई है।<sup>५</sup> छत्रप्रकाश मन्द और वसुदेव की तपस्या से तुष्ट होकर विष्णु उनका यहाँ पुत्र रूप में अवतरित होने का वरदान देते चित्रित किये गए हैं।<sup>६</sup> बिघवाएँ—जिनके बधय को उनके पूव पापों का दुष्परिणाम समझा जाता था कठिन तपश्चर्या के माध्यम से ही, अपने पापों को प्रक्षान्त करत मिलती हैं।<sup>७</sup>

ऋषि मुनियों का जीवन तपःप्रधान होता था। उनकी तपश्चर्या से दश द्रु को इस दुश्चिन्ता में ग्रस्त दिग्याया गया कि वे मुझे अपदस्थ करके स्वर्गताक के अधिपति बन बैठें। पृथ्वीराज रासा में अठसठ तीर्थों की यात्रा करने के उपरांत बद्रीनाथ में तप करता हुआ सुमन्त ऋषि अपना जठराग्नि का शांति करके क्षुधा एवं निद्रा पर समय पा सता है और मात्र धूम्रपान पर निर्वाह करता हुआ सो बध तक शीतमानस्थ (हाथों के अंगुष्ठा पर शरीर का भार डालता हुआ) होकर हरिस्मरण करता है। ग्राम ऋतु में वह पचाग्नि तप करता है। हन्त में बर्फ में सड़ा होकर तथा वर्षा ऋतु में प्लुन स्थान में रहकर वर्षापात का महन करता है। उसकी इस कठिन तपस्या से इंद्र भयभीत हो जात है कि कहाँ सुमन्त मुझे अपदस्थ करके सुरलावाधिपति बन बैठें। अतः वे अपनी रम्भात्मिक अप्पराधा का भोजक उसका तप खतिन करा दत हैं।<sup>८</sup> हम्मीर रामा में सुमन्त ऋषि का समान ही पञ्चऋषि की तपश्चर्या का उल्लेख किया गया है। जाधराज न ऋषि का नाममात्र बल किया है शय घटनाक्रम पृथ्वीराज रामा जमा चरता है।<sup>९</sup> तपश्चर्या में शाप और वर्णान् प्रदान करने की शक्ति तथा अनौकिक सिद्धियाँ प्राप्त हो जान में भी विश्वास किया जाता था। सुमन्त ऋषि का तप भंग करने वाली रम्भा का उनका ऋषि पिता द्वारा मानुषी यात्रि भागन का गण किया जाता है।<sup>१०</sup> महाराज पृथ्वीराज बाघाभर आकर गुप्त में तप करत ऋषि का मित्र ममभकर गुप्त में घुसा करतने हैं। जिसमें ऋषि का तप का उल्लेख

१ म १०-२० '५० रा० का० ५६४।०८ वही ५८६।२ वही, १४५।६८६, वही ११०।५६७ '५० रा०' का० ६७२।६ ए० प्र० २४।३ वही ६८।६७ '५० रा०', का० १२०।६७ ३१ ह० ग० ६६ '५० रा०', का० १२४।१५८

पीटा ज्ञानी है और वे क्रुद्ध होते हुए बाहर निकल आते हैं। रामाकार न उनमें समस्त सृष्टि का ही अपन शाप में भस्म कर देना की शक्ति प्रदर्शित की है किन्तु अनुनय-विनय पर वे निरपराध सृष्टि को तो भस्म नहीं करते। मात्र महाराज पृथ्वीराज को, उनका नर निकाल जान का शाप देने हैं।<sup>१</sup> राजविलास में वाष्पा गवन का एक मित्र पुरुष से राज्य प्राप्ति का वरदान मिलता है।<sup>२</sup> गारा वादल की कथा में योगी का मनवन से मगदाला को आकाश में उड़ान तथा उस पर सवारी करने की क्षमता युक्त दिवाया गया है।<sup>३</sup> ऋषि और यागिया के दशन को अहाभाग्य बताना<sup>४</sup> उनके गहागमन में गह का पवित्र हो जाना,<sup>५</sup> उनके दशन मात्र से पापों का विनष्ट हो जाना स्वीकार करने में भी<sup>६</sup> आलाच्यवानीन सामाजिकों की ऋषि मुनियों के विषय में उच्च ग्राह्या अनिव्यक्त हो रही है।

सक्षय में तपस्या के प्रभाव से असम्भव घटनाएँ भी सम्भव बन जान में विश्वास किया जाता था। उनके माध्यम से उत्तम सतति की प्राप्ति स्वर्ग लोक तथा धरा का सुन प्राप्त करना भगवान का भी वश में करके उनसे अभिषिक्त इच्छा की पूर्ति करा लना पापों का प्रक्षालित हो जाना तथा शाप और वरदान देने की दिव्य शक्तियाँ आ जान में विश्वास किया जाता था। ऋषि और यागियों का दशन शुभ सम्भन हुए, उनसे दशकों के पाप-नष्ट हो जान की धारणा प्रचलित थी।

### (ख ५)—धर्म ग्रन्थों का पठन और श्रवण

धार्मिक ग्रन्थों का पठन एवं श्रवण से पुण्य लाभ हान के सदेश पृथ्वीराज रामा और परमाल रामा के पढ़ने से भी मोक्ष प्राप्ति तथा अत्याय लाभ का विधान किया गया है। पृथ्वीराज रामा के अन्त में कहा गया है कि इस ग्रन्थ के सुनने से धर्म अथ काम और मोक्ष की प्राप्ति होती है तथा आनाया के मनोरथ सिद्ध हो जाते हैं।<sup>१</sup> इसमें श्रवण में अश्वमेध यज्ञ और तुलादान करने तथा वद्रीनाथ जगन्नाथ, रामेश्वरम काशी मथुरा, उज्जैन द्वारिका और अयाध्या में तीर्थारदन करने के मंगल पुण्य लाभ हाना है। इसी भाँति हरसिद्धि, काँगडा, हिमालय और ज्वालामुखी देवियों एवं प्रतिपदा की चन्द्र और सुरभि के दशन होने वाले पुण्याजनों का रामा का पाठक सृष्टि ही अधिकारी बन जाता है।<sup>२</sup> रामो श्रवण के माहात्म्य का और भी बड़ा चडा-

१ म ६—६०, पं १०, का० २००७।१५७ १६१ रा० नि०' १।१५६ गो० का०', १८, 'पं १०' का० ३०२।२३, गा० क० २४ 'रा० वि०', १।४६

७ पावहि मुक्षरथ धर्म धम्म काम। निरमान मोप पावहि मुधाम।

आवरत च्चारि जी मुनहि राज। पावहि मुचिन बद्धहि सुकान।

—'पं १०', का० २५०४।२३२

८ वही, २५०४।२३३ ३६

कर प्रदर्शित करते हुए कहा गया है कि दवेन्द्र भी इसका श्रवण करते हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर इमे सुनकर प्रमुदित हान हैं । इसका पढ़न सुनन स मन्त्रमिषा का ज्ञान शत्रु दमन की क्षमता, सम्पूर्ण रसा का आस्वाद, समस्त विधाया का परिचय तथा मन्त्र तंत्र का ज्ञान प्राप्त हो जाता है । रामायण, महाभारत और पुराणों का श्रवण की भाँति रामा का श्रवण भी ऋद्धि सिद्धि प्रदान करता है । प्राग कहा गया है कि शङ्ख तीर्थों म स्नान गाविद का गुणगान तथा नित्यप्रति गंगा-स्नान करन वाले पुरुषों की भाँति रामों लिगने और पढ़ने वाल पुण्याधिकारी बनत हैं । उनके राग शोक विनष्ट हो जात हैं तथा डाकिनी, भूत और बनाल उन पर काई भी दुष्प्रभाव नहीं डालने पाते ।<sup>१</sup>

परमाल रामा म विविध समया को सुनने के पथक पथक लाभ प्रदर्शित किए गए हैं । चन्द्र ब्रह्म की उत्पत्ति और उनका वश-वर्णन सुनन वाला को भगवान म आसक्ति प्रदान किए जाने उनकी काया क निराग रहन, युद्ध म विजयी हान तथा मन्त्रतंत्रसतति सुपापभोग करते हुए अपार द्रव्य मिलन का प्रलाभन दिया गया है ।<sup>२</sup> ब्रह्मा परिणयन समय के श्रोताया का पाँच यज्ञा क फल का अधिकारी घोषित किया गया है ।<sup>३</sup> ग्रन्थ की समाप्ति—क्षत्रिया क धर्म स परिचय नवरसा के आस्वात् तथा पुण्य पुज के अभिलाषियों का परमाल रामा क पठन का परामश देकर की गई है ।<sup>४</sup>

पथ्वीराज रामा और परमाल रामा क पठन और श्रवण स मुक्ति मिल शक्यवा नहीं, कि तु उपयुक्त विवरण स इस तथ्य पर अवश्य प्रकाश पड़ता है कि ग्रन्थ-विशेषा के पठन और श्रवण का भी धार्मिक दृष्टि स पुण्यकर और मुक्ति प्रदाना समझा जाता था । रामायण तथा हनुमान चालीसा आदि म पाठना का ऋद्धि सिद्धि प्राप्त होने के जा प्रलोभन दिए गए है उपयुक्त निर्देश भी उसी गरम्परा की कटी ह । इनका मुख्य उद्देश्य इन ग्रन्थों के अधिकधिक सरया म पठक प्रस्तुत करना रहा है ।

### (ग १) स्रष्टा और सृष्टि-सम्बन्धी विश्वास

कवि चन्द्र ने ईश्वर को आदिकर्ता अभिहित करते हुए उसे रूप रस और गुणरहित तथा गुणात्मक भी कहा है ।<sup>५</sup> उम आदिकर्ता न स्वग, भू पाताल, यम, इन्द्र और लोकपालादि की स्रष्टि की है । पवन आग्न जलधर सरित, समुद्र, तीर्थ और पवता म उसका अंश विद्यमान है ।<sup>६</sup> चौरासी लाख प्रकार के जड जगम जीव और मूय वृद्धादि मभी उसकी इच्छानुसार सुख दुखों का सहन और उसकी आजा का पातन करते हैं ।<sup>७</sup> उसकी आजा स मूय नित्य प्रति प्राण काल उदित हाना है

१ स ७—२०, प० रा०, का० २५०५।२४१ ४२, पर० रा० २।१६३, वही, १५।२३, वही ३७।१६७ प० रा०, का० १५।१८ २०





इन्द्रजित्त के मन के समान बताते हुए ईश्वर को तब से उपमाित किया है। यह विभिन्न मान में कुछ का कुछ कर दिया जाता है तथा गवत्र विद्यमान हात हुए भी गिनाई नहीं देता।<sup>१</sup> कान्दामजी त समस्त प्राणियों का ईश्वर का रूप बताते हुए कहा है कि प्रपञ्चमय जगत में न कोई किमी का कुछ होता है और न सता है।<sup>२</sup> इसी भाँति स्वयं या नरक भी काई नहीं जाता। ईश्वर की मयक घट घट में विराजमान है श्री-सम्पूर्ण जगत में इतका ही रूप समित हाता है।

### (ग २)—अवतार

परमान गमो<sup>३</sup> और छत्रप्रवाण<sup>४</sup> में इस पारपरिक धारणा में आस्था प्रकट की गई है कि धम का क्षय और अधम की अभिवृद्धि हान पर धरा धेनु क रूप में विष्णु में उसका भार उतारने का निवेदा करती है और विष्णु अवतार लेकर उस वृत्ताथ करत है। पथ्वीराज रासा<sup>५</sup> और शिवराज नूपण<sup>६</sup> में विष्णु क—१ कच्छप २ मत्स्य ३ वागाह ४ नसिह ५ वामन ६ परशुराम ७ राम ८ हलध- (धनराम), ९ बुद्ध और कलक या कल्कि क रूप में अवतरित होकर भू भार हरण करत विप्रित किय गय है। इन सूचिया में कृष्ण का परिगणन नहीं किया और उनक स्थान पर बलराम अवतार माने गय हैं। रासा के पतालीसवें समय में दशावतार की सूची पुन दी गई है किंतु उसमें भी श्रीकृष्ण का नाम नहीं है।<sup>७</sup>

दशावतार में श्रीकृष्ण का नामालग्न न करन के लिए हम रामाकार और भूयण का दाप नहीं द सकत। डॉ० वासुदेव उपाध्याय न विविध ग्रंथो क प्रमाण कर मिद्ध किया है कि श्रीकृष्ण क नाम का दसवी शताब्दी क पश्चात क ग्रंथो में उल्लेख नहा मिलता जबकि बुद्ध का इगा की नवी शताब्दी से पूर्व की सूचिया में उल्लेख नहीं मिलता है।<sup>८</sup>

कवि सूक्त न दस क स्थान पर चौबीस अवतारो का नामावली दी है। तम उहनि अग्रनिमित्त अवतार परिगणित किए हैं—१ मत्स्य, २ कच्छप, ३ वागाह ४ नसिह, ५ कपिल ६ हरि ७ मवतर (मनु) ८ वामन, ९ द्विजराम, १० राम ११ बलराम १२ धवतरि, १३ माकादिक १४ ऋषभदेव, १५ हन, १६ माहिनी १७ ध्रुव १८ व्यास, १९ यन, २० दत्तात्रय २१ बुद्ध २२ नाद

१ स ७—द० 'ह० ह० च० छ० ३८४ 'त्री० च० २।१६२०, पर० १० १।६५, ६८ छ० प्र०' २४।२, 'प० रा०', वा० १८१।२ 'शि० भू० ७ १४२ 'प० रा' वा० १२४७।१४६

८ दे० 'सोशल लाईफ इन नादन इण्डिया', प० २१८



क लिए उहान जसे ही पीछे की ओर दृष्टिपात किया कि वह रजनपण्ड पिघलकर लवणमय सर म परिवर्तित हो गया ।<sup>१</sup>

परमाल रासो म गुरु गारुडनाथ आल्हा भी सेवा से प्रमत्त होकर उत माह्न और सायन नामक दि-यास्त्र प्रदान करत है तथा भ्रमर रहन का भी वरदान न्न हैं ।<sup>२</sup> छत्रप्रकाश म स्वामी प्राणनाथ महाराज छत्रमाल को युद्ध म सदव विजयी हाने और अश्वडिग राज-परम्परा चलने का वरदान दते है ।<sup>३</sup>

कवि मान ने बाप्पा रावल हारीत नामक सिद्ध-पुरुष से नप हाने का वरदान प्राप्त करत चिप्रित किय है । उनकी मवा स प्रसन्न हुए हागीत, गण्ठा रावतजी को दूधर प्रात काल वरदान तन के लिए कहते हैं ।<sup>४</sup> निर्वाणित समय पर बाप्पा रावल जत्र उनके समीप पहुँचन हैं तो हागीत याग किया म आकाश की ओर ऊँध्व गमन आरम्भ करते हैं ।<sup>५</sup> आकाश म से यह राजलजी को स्व मुख गालन का आदेश दत हैं और उनके वगा करने पर उनके मुख म अपने मुख स निकाला दृष्टा ताम्बूल गिराने की चेष्टा करत हैं ।<sup>६</sup> बाप्पा रावल उम पान का काचित भूठा समझकर थुक देन हैं <sup>७</sup> जिस देखकर दु खित हुए सिद्ध पुरुष कहत हैं कि यदि तुम इस ताम्बूल का खालने ता भ्रमर हो जाने और तुम्हारे वग का राग्य भी भ्रवल हो जाता । अर तुम भ्रमर तो नहीं हो सकते, किन्तु मैं तुम्हें भूपति हान का वरदान प्रदान करता है ।<sup>८</sup>

कवि मूदन ने उस पारम्परिक विश्वास को अभियन्ति प्रदान की है जिसम देवा की सहायता करत वाले भूप मुचरद को उनसे यह दो वरदान मिल थ कि उसकी देव चरणा म सदव अनुरक्ति रहगा और उसकी नीद म -पाघात डालत पर कम हो उसकी दष्टि पड़ेगी वह भस्म हो जायगा ।<sup>९</sup>

शाप —

तुष्ट देव और सिद्ध पुरपा स जहाँ अनक प्रकार के वरदान मिलन का विश्वास किया जाता था, वही उनका रष्ट हाना अनिष्टकर शापा का कारण माना जाता था । शाप देने की शक्ति सती-नारियों तथा भ्रात प्रजाजना म भी स्वीकार की जाती थी ।

पथीराज रासो म चित्ररखा नामक अप्सरा को इन्द्रकाप के कारण<sup>१</sup> तथा मजुषापा का ऋषि शाप के कारण,<sup>२</sup> अमल शशिद्रता और सयोगिता क रूप म मानव योनि भोगनी पडती है । मजुषापा को सयोगिता के रूप म पित और पतिकुल

१ स ११—३०, 'पू० रा०', का० १४६२।२१३ 'पर० रा०', ३१।१८६ छ० प्र० २५।२, 'रा० वि०', १।५२ वही, १।१५३, वही १।१५४ ५५, वही १।१५५, वही, १।१५५ ५६, 'सु० च०' ७।२।५५, 'प० रा०', का० ७७।१।७२, वही १२४६।१६२



के विनाश तथा प्रति विद्याह व द्रुपद भागन का भी शाप मिलता है। धामनाथ गण महाराज पृथ्वीराज का चापाधारधारी ऋषि का मित्र गमभर उम मुनि म निवाहन व विण पुष्पा करा दत्त है। मुनि स पाणि हाकर ऋषि बाहर विगत भान ह तथा भक्ति म जन शीर मुन लकर शाप न है वि विगत मरा घागा का कष्ट पृथुवाया है उम दा धप व भनगा भानी दाना घागिं निवात विण जान का कष्ट भागना पडगा।<sup>१</sup> महाराज पृथ्वीराज व पून-गुरूप बीगलरजी का तपनाया म रन विधवा वणिन पुत्री गोरी का मतीर भग वरन व भगराध म उसम रागम हा नाम का शाप मिलता है।<sup>२</sup> पृथ्वीराज राता म ऋषि-नीडक धानना नामक नृपति का भी ऋषिय का शाप स राक्षम यानि हा जाती है।<sup>३</sup> रवातट समय म गगनविगरी गज-राजा का एक मुनि के शाप स भूतल पर अवतरित हाकर मानवा की मजारी व काय म भान का दण्ड भागना पडता है।<sup>४</sup> चन्द न द्रु गी प्रजा की घाहा म भी दवा एव सिद्ध पुष्पा की भांति शाप दन की क्षमता प्रदर्शित की है। वीरवाह नामक राजा व अत्याचारा म पितती हुई प्रजा शाप दती है - तू निवश मरगा जिगम वगा-मूरत के साथ साथ तुझे सुगति भी नहीं मिल सकेगी।<sup>५</sup> यह निर्देश वरना आवश्यक है कि उपयुक्त सभी शाप फलित हात चित्रित किय गए हैं।

रतनबावनी म मन्तराज रतनमेन को भगवान राम का पाप विनाया गया है, जो नारद मुनि का उपहास करने के दण्ड म उनका शाप स भूतन पर पतित हाने चित्रित किय गए हैं।<sup>६</sup> भूषण न मुगलो के उन प्रासादा का जहाँ कभी कलावता की मधुर स्वर लहरी स वातावरण निनादित रहता था भूत प्रता का डेरा बन जान के मूल म शाप का प्रभाव बनाकर शापो म आस्था प्रकट की है।<sup>७</sup>

आल्हालण्ड म वरागिया क शाप से राज्य पाट भग हो जान म विश्वास प्रदर्शित करत हुए उह रुट करने से बचने का परामश दिया गया है।<sup>८</sup> आल्हालण्ड म सतियो म शाप और वरदान देने सम्बन्धी जनविश्वास का गजमोतिन और बास के माध्यम स प्रकटन किया गया है। दोना ही रातिया सती होते समय दिल्ली और महाराज का विनाश हाने का शाप देते चित्रित की गई है।<sup>९</sup>

वरदान और शापो सम्बन्धी उपयुक्त विवेचन के अंत म हम इतना निवेदन अवश्य करेंगे कि आजकल ऐसी बाता म विश्वास करना अधविश्वास की श्रेणी म रखा जाता है। वीरकाव्य म वर्णित घटनाओ पर भी दृष्टिपात करन स एसा प्रतीत होता है, मानो कदिया ने जिनकी आँवा के समक्ष सम्पूर्ण घटना चक्र था—अपन आश्रयदाताओ क मुख दुःख के मूल म वरदान और शाप की मांगना करके, उनका

१ से ६ -द० प० रा०, का० २००दा१६२ वही ६७।४६१ वही ७४३।४१७,  
 'प० रा० का० ८८४।५ वही ६८३।१० ११, २० बा० छ० २६, शि०  
 भू०' छ० २४३ वही, ४६।११ १४, 'आ० ५५७।१४ ४३दा२०-२५

नियमन को किसी पराजय के विना प्रदर्शित करने की चपटा बा ६। जा २। इत्यादि निश्चित है कि आलाच्यकानीन जन-जीवन में एमें निश्चित आजकल में धर्म पर किए हुए थे।

### (ग-४) — ज्योतिष

ब्राह्मणों का विवेचन करते हुए ज्योतिषी और गणना द्वारा यात्रारम्भ करने, यथा धन निकालने किल की नीव जमान चून्टियाँ मिराने तथा नाना सम्बन्धों का सम्बन्ध करने समय उत्तरी शुभ-लग्न पूछने का पीछे उल्लेख किया जा चुका है। इस बात का तात्पर्य है कि आलाच्यकानीन जीवन के छाट-बटे तथा कार्यों के समय ज्योतिषियों की शरण लाना आवश्यक समझा जाता था। पारिवारिक जीवन की भाँति राजनीतिक जीवन भी ज्योतिष से आक्रांत था। युद्ध अभियानों से पूर्व तदर्थ शुभ मुहूर्त का शासन कराया जाता था। महाराज पृथ्वीराज महोदय पर आक्रमण का मुहूर्त पूछते हैं और एक वर्ष तक उसका शुभ मुहूर्त न होने का बयान सुनकर एक वर्ष पर्यन्त आक्रमण का स्थगित कर देते हैं।<sup>१</sup> वीरकाव्य में अथ नरेश भी शुभ मुहूर्त में ही युद्ध प्रयाण करते मिलते हैं।<sup>२</sup> मुसलमान बादशाह भी अपने काजी से शुभ माहर्त पूछकर, आक्रमण करते मिलते हैं।<sup>३</sup> औरंगजेब कान में भारत आने वाल बनियर नामक फ्रेंच यात्री ने भी भारतीयों की ज्योतिष में प्रगाढ़ आस्था पर प्रकाश डालते हुए वीरकान्त में चित्रित धारणाओं का अनुमोदन किया है। उसके अनुसार युद्धरथों में शत्रु सेनाओं के एकत्र होकर, सामरिक दृष्टि से पूणतया म नष्ट हो जाने पर भी, तापो का तब तक बन्ती नहीं दिखाई जाती, जब तक काजी या ज्योतिषी द्वारा बताई हुई शुभ साधन नहीं आ जाती। कभी कभी यह साधन आने की प्रतीक्षा भयानक विपत्ति का निमित्त बन जाती है क्योंकि उस समय तक शत्रु इस असावधानी का लाभ उठा चुका होता है।<sup>४</sup> बनियर ने पाखण्डी ज्योतिषियों की हास्यास्पद घटनाओं का उल्लेख करते हुए—एक एक पुनर्गामी ठग के समीप बहुत भीड़ रहने का उल्लेख किया है जो अक्षर तान से भी शून्य था और जलमग्न के सूचक नक्षत्रों को अपनी ज्योतिष की पुस्तक बताकर, भारतीयों को ठगा करता था।<sup>५</sup>

भविष्य-वचन के लाभ चाहे या कुछ रहे हों, एक प्रसन्न हानि यह सिद्ध करती है कि युद्ध में जाने से पूर्व ही ज्योतिषियों द्वारा पराजित हानि का भविष्य-वचन सन्तिका को हतात्महित करने निष्प्राण कर देता था और पराजय अन्वय-भाषी बन जाती थी। पृथ्वीराज रासा में ज्योतिषियों का जिम भाँति निरुद्ध होकर महागज

१ से ३—द० 'पर० रा०', ४।५-६ सु० च० २।१।६, 'प० रा०', का० ८०७।४  
 रा० वि०, ६।१६८-६९, 'शि० भू०', २६३, 'सु० च०', १।२।२५  
 ४ से ५—द० ट्रेवल्स इन मुगल एम्पायर, प० १६१, २४४

अनंगपाल के बहीनाथ<sup>१</sup> जाने क समय तथा प्रियाकुवरि की विदा के अवसर<sup>२</sup> पर ही भारत  
 - - - - - आश्रित्य की भविष्यदाणी करत प्रदर्शित किया गया है यदि वह वस्तुतः  
 सत्याधन है तो इन भविष्यदाणियों के विशाक्त प्रभाव की सहज कल्पना की जा सकती  
 है। रामा में महाराज पथ्वीराज और उनके सैनिक शाह गारी से होने वाले अंतिम  
 युद्ध में बड़े हीन मनोबल से युद्धाथ जाते दिखाए भी गए हैं<sup>३</sup> क्योंकि उन्हें ज्योतिषियों  
 से न बार पराजित होने की सूचना मिल चुकी थी।<sup>४</sup> तात्पर्य यह कि ज्योतिष में  
 आलोच्यकालीन जनसमुदाय की प्रगाढ़ आस्था थी और जन जीवन के प्रत्येक क्षण में  
 ज्योतिषियों के भविष्य कथन को बड़ा महत्त्व प्रदान किया जाता था।

### (ग ५) — शकुन अपशकुन

आलोच्यकाल में शकुन और अपशकुनो के विषय में भी जन विश्वास बहुत  
 बढ़ा चढ़ा था। गुप्त शकुन विजयश्री के अधिकरण कार्यों में साफल्य तथा रिद्धि सिद्धि  
 की प्राप्ति में सहायक मान जाते थे<sup>५</sup> जबकि अपशकुनो के कारण पराजय होने आभाष्ट  
 कार्यों में व्याघात पड़ने तथा मृत्यु तक हो जाने का विश्वास किया जाता था।<sup>६</sup> अप  
 शकुनो का प्रतिकार करने के लिए कुछ क्षण तक ठहर जाने<sup>७</sup> अथवा अपशकुन करने  
 वाले पशु पक्षी को मार डालने का प्रचलन था<sup>८</sup> जबकि शकुन के समय अचल में गाठ  
 लगाने की प्रथा थी।<sup>९</sup> इस प्रथा के मूल में कदाचित् यही धारणा रही होगी कि  
 अचल में गाठ लगाकर उस शुभ शकुन के सभी सफलताओं को अपने वश में कर लिया  
 गया है। इन शकुन अथवा अपशकुनो के निर्धारण में विभिन्न प्रकार के पशु पक्षियों  
 विचित्र प्रकार की प्राकृतिक घटनाओं विशेष प्रकार के वेश पहने हुए मानवा तथा  
 अपने शरीररोगों की विकृतियों का स्थान दिया जाता था।

### पशु-पक्षियों से सम्बद्ध शकुन —

पक्षियां में दवा या श्यामा<sup>१</sup> नामक चिड़िया की बहुत महिमा समझी जाती थी।  
 कवि चंद्र के अनुसार—ममत्तल स्थान पर दाहिनी या बाई किसी भी श्वर बठी हुई  
 दवा गुप्त हाती है।<sup>२</sup> उसके दशन से यात्रा का मनोरथ सहज ही सिद्ध हो जाता है

१ म ८—	द०	प०	रा०	मो०	१।८६।२२	वही	१।३६२।४६	४७	वही
	०१।५७	५०	रा०	वा०	२२०।१।५६७	५७४	वही	१६०।१।१६०	मृ०
	च	१२।१७	५०	रा०	मो०	४।६१०।१०६	वही,	४।५६४।६६	प०
		रा०	४।६८						

१०. दवा एक चिड़िया का नाम है। आजकल इस चिड़िया का श्यामा या श्यामा कहते हैं। यह मर पर में शिकुन कानी हानी है। उसकी पूछ लम्बी और चांच कानी हानी है। शिकारी और डाकू नाग अब भी इस चिड़िया की बाली से बड़े मननव निकालते हैं। प० रा० वा० रामाकार, प० २५७ पर पाद टिप्पणी।  
 ११. प० रा० वा० १६००।१६०

श्रीर उमे रिद्धि मिद्धि की प्राप्ति होती है ।<sup>१</sup> यदि वह मटल बांधकर उड़ती है श्रीर गन्ना काटकर बाइ श्रीर न दाहिनी श्रीर का गाय ता शुभ होती है । इस समय वह जितनी बार बान, कायमिद्धि न उमी के अनुस्वप अधिक सफनता मिनती है ।<sup>२</sup> सप क पग पर नत्य करती हुई श्यामा दम शकुन की परिचायक समझी जाती थी कि दग्गन बान का शीघ्र ही सम्पत्ति श्रीर सुख प्राप्त हान वाते हैं ।<sup>३</sup> रासो के सम्पादका के अनुमार मानकत भी डाकू श्रीर शिकागी लाग इस चिडिया की बोली स बहुत से भनत्व निवाण्ते हैं । चद के अनुमार अधोलिखित पगु-पक्षिया का मिलना श्रीर वातन। भी शुभ समझा जाता था ।

तीतर, खर नाहर जवुक सारस चील चातक, भारद्वाज पक्षी, उलूक तोता बन्तर वकरा श्रीर नवला का वाण्ण आर मिनना ।<sup>४</sup> दाहिनी श्रीर दहाडते हुए सिंह का शुभ शकुन माना जाता था किन्तु सफनता म भय की आशका रहती थी ।<sup>५</sup> यदि तीन पाख या सात मगी मग के साथ चरती मिलें तो व शुभ होती थी ।<sup>६</sup> शृगाली का बाइ श्रीर रुने करना नगर प्रवेश के समय शुभ माना जाता था ।<sup>७</sup> नरहरि ने भी कुन्ना चीत शृगाल उलूक श्यामा, तीतर, मरुरी मुर्गा श्रीर मयूर का माग म बाइ आण पडना शुभ समझने की धारणा व्यक्त की है ।<sup>८</sup>

कवि चद क अनुमार अधोलिखित बातें भी शुभ शकुन की परिचायक समझी जाती थी । कवि चद न इन शकुना म आक्रमण करने वाल नारेन नामक सामत को काँगडा दुम पर विजय प्राप्त करत दिखाया है—मग का माग के दाहिनी श्रीर पडना, सामन म मप का आना मिह का बाइ श्रीर दहाडना किन्तु नगर प्रवेश के समय दाहिनी आर पडना तथा उल्लू का बाइ श्रीर से शद करना,<sup>९</sup> परमाल रासो म मोर का कूकना, उत्तर की आर बाराह दम्पनी का मिलना साड का बाइ आर दहाडना वगुन का दाहिनी टांग उठाकर बठा मिनना श्रीर चरवा-युगल का दिखाई देना शुभ समझन का विश्वास प्रकट किया है ।<sup>१०</sup> केशवदासजी ने घोडे के ऊपर पावर डालत समय उसका ऊचा मुख करके हिनहिनाना तथा टापो से भू का खोदना विजय का प्रतीक बताया है ।<sup>११</sup>

अपानकुन —

श्यामा चिडिया का दाहिनी श्रीर तीन बार बालना इस तथ्य का अभिसूचक समझा जाता था कि यह यात्रा स्थगित करने का संकेत कर रही है ।<sup>१२</sup> उसका दाहिनी

१ न ११—दे० 'प० रा०', का० १६०१।१६० वही, १६०१।१६१ ६२, प० रा० मो० १।२०२।२३ २५ 'प० रा०' का० १६०२।१६७ ६८ वही १६०२।१६८ ७० वही, १६०२।१७० १६०२।१७०१ 'अक० हि०दी', ३०६।८८ 'प० रा० का० १०५१।२६ २६ प० रा०', ४।६६ ६८ बी० च०', १७।७२, प० रा० का० १६००।१६०

आर स बाइ धोर का माग काटना भी अणगुत माग जाता था तदा त्रिशम किया जाता था कि एमी दशा म उगना दा बाग श्च कर्ना गनुक क कटा हात का मूचक है, जवनि तीन बार बाचना उमर गीयन क ही सारट प्रमन हात का परिचय द रहा है।<sup>१</sup> श्यामा का किमी बटोल या गुनक वग पर अगाग भम्म अगना उपला पर बटा मिलता तथा एक बाग च्चहाना भी बहूत अणुभ गमभा जाता था।<sup>२</sup>

सूर्यास्त क समय वृष्ण मग का मिलना मागान यमराज का स्वप्न माना जाता था।<sup>३</sup> वन बिलाव उल्लू परना धोर पदुकी का त्रिण की आर बाचना भी अणुभ समभा जाता था।<sup>४</sup> पणु-पक्षिया समय थी अणगकुत म अधीनितिन तथ्य भी परिगणित किय तात थ—

१ शृगान का रदन, २ सारस युग्म क स्थान पर एक ही मारम का मित्रता ३ दिवस म भी चक्का चक्की का विद्याह ४ हाथी धोर अशवा की गनिभग हाना तथा उनकी आखा स अश्रुपात हाना ५ शाना का रुदन ६ सामन म वाराह का आना, ७ कौवा का सामने या बाइ आर काँव काँव करना ८ गतव्य दिशा की आर उल्लू का उडकर जाना ९ सना की ध्वजाभा पर उल्लूक या गूडा का बटना १० सामने की आर स गड्ढो का बालना, ११ लडत बिलावा का सामन पडना, १२ कुत्त का वान पटकारना, १३ सिर क ऊपर मडरातो चीला का चीत्कार करना, १४ खर का दाहिनी आर मिलना १५ बिलनी का बाइ आर स दाहिनी आर को माग काटना, १६ उल्लुओ का दिन म बोलना १७ साँप का माा काटना १८ बिना दाँत बाल हाथी का मिलना।<sup>५</sup>

### प्राकृतिक घटनाओ स सम्बद्ध शकुन

कार्यारम्भ के समय आकाश का स्वच्छ हाना तथा सूर्य का उदित हाना शीतल मद सुगध पवन का चलना, सामन के किसी गाँव म आग लगी मिट्टना गुन समझे जाते थ।<sup>६</sup>

अपशकुन —

१ सूर्य का तेजहीन दिपाई दना १(क)—सूर्य म कमल चिह्न दिवाई दन २ उल्कापात ३ देव प्रतिमाआ का हसना। ४ आकाश म अधिर वर्षा ५ दावाग्नि लगना ६ तारे टूटना, ७ चद्र का निष्कन्ध टिखाइ दना ८ वशा स पुष्पा क स्थान पर अग्नि वषा होना ८(क)—वक्ष की शागाआ का टूटना। ९ आकाश का

१ स ६—दे० प० रा०' का० १६०१ स १७६ ५ ६ पर० रा० १६।२६ ३१  
सु० च०' ३।३।७ प० रा० का० २०५।१।१६१ २२१।२।६५५ वी० च०  
१७।१२ जगनाभा प० ७४५ ५३ पर० रा० ४।८६ वी० च०' ११।२१  
अव० द० हिन्दी क०' ३२८।६०, प० रा०', का० ७२२।२६६

मूलाच्छन्न होना । १० वस्त्रों का नश्य करना, ११ आकाश में माथानी आकृतिया  
का उपासना करना । १२ माता के निशान और नरेश के छत्र का स्वन हो खडित  
हा जाना, १३ महावन के हाथ से अशुभ का गिरना । १४ दिशाएँ दग्ध दिखाई  
दना । १५ बिना ऋतु के ही वक्षों का पुष्पित होना । १६ प्रासाद की दीवारा का  
धँसना । १६ दक्ष प्रतीमाएँ चलता हुई प्रतीत होना । १७ घोड़े पर जीन बसत  
हुए नारी का टूटना ।<sup>१</sup>

### मानव व्यापारों से सम्बद्ध ऋतु

छत्रधारी पुत्र्य अथवा नरेश अथवा दूतों का द्वाहण गोद में पुनः लिए युवती  
धुन बन्ध लकर आने वाला रजक, शृंगार की हुई बश्या, फल अच्छत दधि, पुष्प  
अथवा पूज घट लेकर आने वाल मनुष्यों का सामन पटना, बाधे हुए पशु प्रज्वलित  
अग्नि स्वर्ण अथवा मणि का देन की आकाशा करन वाले व्यक्तियों का मिलना शुभ  
समझा जाता था । इसी भाँति, बश्या मद्य पान लिए हुए कुलार अथवा पूज कलश  
के साथ श्वेत परिधान वाल स्त्री-पुंस्य दीपक निधूम अग्नि, पल्लव और पुष्प लकर  
आने वाली मालिन का आन पडना भी शुभ अनुमान में परिगणित किया जाता था ।<sup>२</sup>

### अपराध —

बिना धुल वस्त्र लिए रजक अथवा दो गध और मिर पर बाँध लिए कुलाल  
का सामन या वाइ दिशा से आना लटाई करान का निमित्त समझा जाता था । इसी  
भाँति जटा खोल हुए विभूतिहीन यागी श्यामवर्ण के अथवा तिलक हीन ब्राह्मण,  
रुत करती हुई विधवा तथा श्वेत घट पर काला घडा रखकर लान वाली स्त्री का  
सामन पडना आपत्तिया का मूल माना जाता था ।<sup>३</sup>

### मानव शरीरों से सम्बद्ध ऋतु

स्त्रियों के वाम तथा पुंसों के दाहिने अंग का फडकना शुभ समझा

१ म २—दे० पर० रा०', ११।७६ ८३, 'जग० व०' ७४४ ८६, 'प० रा०' का०  
२१६१।५५ ६०, वही २२१२।६५।, 'अ० हि० व०', ३२८।८६ ६०

३ रामभ उभय कुलान करि मिर बधन नित मारि ।  
वाम त्रिना समुप मितइ, अवगि हाइ प्रभु रारि ।  
अतिनक बभन स्याम अमु जोगी हीन त्रिभुत ।  
सम्मुह राज परमिष्य, गमन वरज्ज नित ।

— प० रा०, मा० ८।६०६।६।

घोर भी दे०, 'सु० १०, ७।२।४६ प० रा०', का० २२१२।६५।

४ हमराज की मुता वह मगुन भय अधिकाय ।  
यायी त्ग फरकन अति, आः गय निगिराय । — पर० रा०', १।१२६

५ फरकयी चपति राइ की दक्षित भुज अनुकूल ।  
वनी फीग उमडो मुनी भई जुड की फूल । — द० प्र०, ६।३

जाता था ।

अपशकुन —

कठ गदगद होना, छाया म अवारण ही अशुभान हाने जगना, मुगबानि का म्लान हाना, पुम्पो क वाम नेत्र फडकना शरीर म कम्प का प्रादुर्भाव होना अशुभ समझे जाते थे ।<sup>१</sup> कायों क आरम्भ म किमी का छोक् जना भी उन कायों म विघ्न समुपस्थित करने का कारण माना जाता था ।<sup>२</sup>

शकुन अपशकुन सम्बन्धी विश्वास के विषय म यह निवेदन करना आवश्यक है कि इसके मूल मे सामाजिकी की सहस्राब्दियां तक अनुभूत चारणाए प्रतीत हाती है । विविध पशु पक्षियों, प्राकृति घटनाया तथा शरीरामा क स्फुरण के समय आरम्भ किए गए कायों के शुभ अशुभ परिणाम निकलने के आधार पर य नियम बनाए गए हागे । आजकल का शिक्षित समुदाय ऐसे विश्वासों का अध विश्वास म परिगणित करता है, तथापि पात नही प्रवृत्ति क किम विधान म अशुभ शकुन म उल्लिखित नय्या का प्राय अशुभ परिणाम ही निकलता है । भारत के प्राचीन माहित्य म रामायण य महाभारत आदि ग्रथो म तो इनका विवरण मिलता ही है शकुन विचार क नाम म पुराण आदि ग्रथा म भी इनका विवचन किया गया है । कुछ भी हा हमार आलाच्य काल म शकुन अपशकुन क सम्बन्ध म जन मानस म दृढ आस्था थी ।

### (ग ६)—स्वप्न फल

वीरका य मे स्वप्ना के अ तगत अनागत सुख दुःखात्मक घटनाया का पूर्वाभाम मिलने क साथ साथ घटित घटनाया की भी दूरस्थ व्यक्तियों को सूचना मिलती चित्रित की गई है । इसी भांति अशरीरी पाप भी विविध वेशा म दिखाई देकर स्व मनो-यथा अथवा ह्य का प्रकटन करते मिलत हैं जबकि उनकी धारया के लिए पुराहित व्यास और भाटा के बुलाय जाने का भी निर्देश किया गया ह ।<sup>३</sup> इन तय्या म स्पष्ट हाता है कि आलाच्यकालीन जन समुदाय की स्वप्न म देखी हुई घटनाएँ घटित होने तथा उनके सद अमद फल मानने के सम्बन्ध म पर्याप्त आस्था थी ।

वीरकाय्य म अधरात्रि क पश्चात देखे हुए स्वप्न पूणत सत्य निरानन चित्रित किए गए है<sup>४</sup> जिनसे प्रतीत होता है कि अधरात्रि क पश्चात देखे गए स्वप्न मत्य समझे जाते थ । दुस्स्वप्नो के देखने पर जगते हुए हरि स्मरण करन और पानी पीन की प्रथा थी ।<sup>५</sup> उनके अनिष्ट फला के निवारण क लिए वलि प्रदान करने का भी प्रचलन था ।<sup>६</sup>

१ स ६—३० मु० च० ७।२।४६ आ०', ४६६।१३ १४, वही ४२७।१३,  
'पर० रा० १०।२८ 'प० रा०' का० २५ १११ वही, ५६२।१६, वही  
०१४५।२५४

पथ्वीराज रासो मे महाराज पथ्वीराज को बाल्यावस्था म ही अपन दिल्लीपति हान का पूर्वाभास मिल जाता है जब वे स्वप्न म एक यागिनो का उनका राज्यतिलक करके वहाँ का नरेश बनाने का स्वप्न देखत हैं ।<sup>१</sup> महाराज भनगपाल अपन कुटुम्बिया को दक्षिण प्रदेश की ओर जाते देखने<sup>२</sup> तथा यमुना पार स इम आर आण हुए एक सिंह को दूमरे सिंह के साथ प्रेमपूर्वक मिलने के स्वप्न देखत हैं,<sup>३</sup> जिसकी व्याख्या उनके व्यास द्वारा इम रूप म की जाती है कि शीघ्र ही पथ्वीराज दिल्ली के अधिपति बनन वाले है ।<sup>४</sup> धीर पुण्डरीर कद हाकर गजनी ले आय जान से पूव ही यह स्वप्न दख चुका था कि उस पन्डन के लिए शाह गारी न आठ सहस्र गुण्चरा का गुप्त वश म भेजा है ।<sup>५</sup>

बालुकाराय की पत्नी अपन पति की आसन मत्यु क विषय म दुश्चिन्ताग्रस्त हो जानी है क्योंकि वह एक एसा स्वप्न देखती है जिसम उसकी कटि जघाघा की भांति स्थून्, तथा जघाए कटि की भांति क्षीण हा जानी हैं । उनके नरा म अनायाम ही अश्रुपात हाने लगता है तथा केश पाश म सष नोटन लगत है ।<sup>६</sup> महाराज पथ्वीराज भी गोरी स पराजित होन स पूव एक दु स्वप्न म अपनी रानिया का कलह करत तथा एक दानव द्वारा अपहृत होत दखत है । प्रयत्न करन पर भी व उनकी उम राक्षस म रक्षा नहीं कर पात ।<sup>७</sup> उनकी कीर्ति या राज्य श्री ने भी उनके वभव के दिना म स्त्रीवश म आकर उनस अटूट प्रेम सम्बन्ध हान का स्वप्न दिया था,<sup>८</sup> उनके पराभूत हान स कुछ काल पूव उन्हें विलास छाडकर सचत हा जान का स्वप्न देती ह और कहती है कि माणिकराय चौहान के वशजो द्वारा रक्षा की हुई पथ्वी का तू भूल गया है उनकी रक्षा क लिए स नद्व हा जा ।<sup>९</sup> वह उनके बहनाइ रावन समर विजय का भी स्वप्न न दिखाई देकर चतय करती है कि अत्र शीघ्र ही शाह गारी भर शरीर का स्पश करन वाला है ।<sup>१०</sup>

पथ्वीराज रासा के स्वप्न सम्बन्धी अय वृत्तान्तो म महाराज पथ्वीराज का खटटूवन म अपार द्रव्य गडा होन का समाचार पथ्वी द्वारा दिए गए स्वप्न स नात होता है ।<sup>११</sup> उन्हें हासा म अपन सामन्ता की पराजय का पता भी—हासा द्रग द्वारा उज्ज्वल तन पर घवल वस्त्र धारण करके दिए हुए इम स्वप्न स नात हाता ह कि देवराय लीची का वध करके तुकों न मुक्त पर आधिपत्य कर लिया ह ।<sup>१२</sup> कवि चन्द का भालाभीम द्वारा कमास का स्त्री-प्राण म आवद्ध करके युद्ध विमुख कर दन<sup>१३</sup> तथा महाराज पथ्वीराज द्वारा उसका वध करन का रश्म्य भी<sup>१४</sup> स्वप्न म ही नात हान

१ स १४—६० '५० रा०', का० २५ ।३, वही, ५६२।१५, वही ५६२।१७, वही, ५६३।१६ वही २०२६।१७४ '५० रा०' का० १३२७।२५४, वही, २१४४।२५२ वही, १००७।८३, ८८, वही २१२०।१००, वही, २१०५।२, वही ५८७।७७, '५० रा०', मी० ३।३३८।२७ '५० रा०' का० ४६०।७७२, वही १४८१।१०८ ०६





माग्वहान की माता को उनके द्वारा स्वप्न म यह आश्वामन दिलवाया है कि, मैं शोध ही तुम्हारी कुक्षा से पुन जन्म लूंगा। माता पिता को इस स्वप्न से ढाँढम बघता है और शीघ्र ही उनके यहाँ पुत्र-जन्म होना भी है।<sup>१</sup>

आलोक्यकालीन में रानी मल्हना की प्रायना पर देवी कानोज गए हुए ऊदल को स्वप्न म यह सूचित करती है कि महाबे पर दिल्लीपति ने आश्रमण कर रखा है, जिसके कारण चन्द्रावली की भुजरियों का सागर पर सिराने के लिए ले जाने का किमी म माहम नही है।<sup>२</sup>

स्वप्ना मन्त्र धी उन्मुक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि आलोक्यकालीन मामाजिका का उनम प्रगाढ विश्वास था। उनके विविध प्रकार के अनागत सुख दुःखो का पूवाभाम हो जाने के साथ साथ घटित घटनाओं का दूरस्थ व्यक्तियों को पता चल जाने का भी विश्वास किया जाता था। आजकल स्वप्ना म ऐसी घटनाओं का परिचय मिल जाने म चाह, विश्वास न किया जाय, किन्तु मनाविश्लेषण मे इन स्वप्नों का महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। जहाँ तक प्राचीनकाल का सम्बन्ध है—रामायण आदि ग्रथा म ता स्वप्न म घटनाओं का पूर्वाभास मिलने के विवरण मिलते ही हैं, मिल क सम्मान ने तो एमे लख खुदवा रखे हैं कि, हमने बहुत से काय स्वप्नों म प्रेरणा पाकर सम्मान किए हैं।<sup>३</sup>

### (ग-७)—जन्म मन्त्र

आलोक्यकालीन जन समुदाय की जन्म मंत्रों द्वारा विविध प्रकार के कृत्य कर दिखाने के सम्बन्ध म प्रभूत आस्था परिलक्षित होती है। विश्वास किया जाता था कि मन्त्राल से अस्तम्भव कृत्य सम्पन्न किये जा सकते हैं। मनुष्य की काया को अभिमन्त्रित करके अस्त्राघातो से सुरक्षित बनाया जा सकता है तथा दियान्तो के प्रयोग से विपक्षी विमूढ और हतात्माहित किय जा सकते हैं। पृथ्वीराज रासो म कवि दुर्गा केदार और चन्द बरदाई महाराज पृथ्वीराज और उनके सामंतों की उपस्थिति म जन्म मन्त्र के वन से अधालिखित आश्चर्यजनक कारनामे दिखते हैं—

दुर्गा केदार के मन्त्राल से एक शत छिद्र वान घट क प्रत्येक छिद्र म से अग्नि स्फूर्तिलग तथा वना के पडगो के मन्त्र नि सूत होन लगत हैं।<sup>४</sup> इसके प्रत्युत्तर म चन्द झाग अभिमन्त्रित घटे म म महाराज पृथ्वीराज के प्रशस्तिपरक छंद, चौदह त्रिघात्रा स मन्त्रा धन मन्त्रा की ध्वनि तथा उसके छिद्रा म से अग्नि ज्वालाओं के साथ साथ पाना की बोझारों भी निकलन लगती है।<sup>५</sup> दुर्गा केदार स्वयं म छ माह के वचने द्वारा वानवीन करा दन की सामर्थ्य बनाता है, जबकि चन्द कहता है कि मैं एक दिवस के

१ म २—३० 'छ० प्र०', ३।११, आ०', ४३।२१ २३

३ दे० मध्य० हि० गा० का लोका० मध्य०', डा० मत्स्येन्द्र, पृ० २४

४ स ५—३० प० रा०, का० १५२४।८२ ८८, वही, १५२४।८८ ८६

बच्चे से ही पट भापायें बुलवा सकता है।<sup>१</sup> दुर्गा केदार मंत्र पढ़कर एक भ्रश्व पर अच्छत फेंकता है, जो अपनी आगिक चेष्टाओं द्वारा महाराज पृथ्वीराज को आग्नीर्वाद प्रदान करता है।<sup>२</sup> इसके प्रत्युत्तर में चंद्र उस भ्रश्व के शीश पर एक अभिमंत्रित पुष्प रख देता है, जिसके प्रभाव से वह भ्रश्व बोलन लगता है और एक गाथा पढ़कर भगवान् श्रीकृष्ण से महाराज पृथ्वीराज की रक्षा करने की प्रार्थना करता है।<sup>३</sup> दुर्गा केदार के मंत्र बल से एक शिलाखण्ड गतिशील होकर संचरण करने लगता है। चंद्र अपने मंत्रों से उस शिलाखण्ड में अपनी अगूठी प्रविष्ट कर देता है। मंत्रबल से वह अगूठी को निकालन की भी चेष्टा करता है, किंतु दुर्गा केदार द्वारा उसका मंत्र ही काट कर देने में इस कृत्य में असफल रहता है। खीभा हुआ कवि चंद्र अपने मंत्रों के प्रभाव से उस शिलाखण्ड को गलाकर पानी में परिवर्तित कर देता है।<sup>४</sup>

दुर्गा केदार चंद्र से भी बड़कर अदभुत काय कर दिखाता है। वह एक लडके का शीश काट देता है। लडके का कटा हुआ शीश तो छत्र पाठ करने लगता है, जबकि उसका घड इतस्ततः दौड़ने लगता है। इसे देखकर महाराज पृथ्वीराज के ममन्त-सभासद विस्मय विमुग्ध हो उठते हैं।<sup>५</sup> चंद्र भी हतप्रभ होकर देवी की आराधना करने लगता है जो उस आश्वस्त करती हुई उसका पूरा साथ देने का वचन देती है।<sup>६</sup>

इसके पश्चात् दुर्गा केदार मंत्र बल से वर्षा कर दिखाने का कौशल प्रदर्शित करता है। उसके मंत्र पढ़ने ही प्रबल वात्याचक्र के साथ बादल गरजने लगते हैं। दलित ही देखते चारों ओर अघकार छा जाता है। बिजली चमकने लगती है तथा तडित गजन से आपूरित वातावरण में मयूर कुहकन लगते हैं। जब रिमरिम बूदें भी पड़ने लगती हैं तो महाराज पृथ्वीराज और उनके मामतो के आश्चय का ठिकाना नहीं रहता। चंद्र अपनी बारी आने पर इस मायाजाल का अनावरण करके, वर्षाऋतु के स्थान पर वसंत ऋतु की उदभावना कर देता है। उसके मंत्रों के बल से उठी हुई आधी बादलों को उड़ाकर आकाश को निरभ्र कर देती है। आश्वक्षी पर मौर आ जाता है तथा पलाशादि वक्ष भां पुष्पित हो उठते हैं। पक्षियों के कलरव भ्रमरो के गुजार तथा कांयला की कूक से दिशाएँ निर्नादित होने लगनी हैं और चारों ओर वसंतऋतु छा जाती है।<sup>७</sup>

कवि चंद्र द्वारा दुर्गा केदार की बहुत सी विद्याओं की काट कर दी जानी है। दुर्गा केदार भी चंद्र की विद्याओं की काट करने की चेष्टा करता है किंतु सफल नहीं हो पाता। कवि चंद्र स्व मंत्र बल से एक पापाण शिला को गलाकर पारे की भाँति द्रवोभूत करके उसमें अपनी अगूठी प्रविष्ट कर देता है और दुर्गा केदार से उस वापस लौटाने के लिए कहता है। दुर्गा केदार लाप प्रयत्न करने पर

मी इमम कृनकृत्य नही होता जबकि चन्द इस अदभुत काय का कर दिखाता है । अतः अपनी पराजय स्वीकार करता हुआ दुर्गा केदार चन्द के चरणों में गिर जाता है और कहता है 'कि आपके समान मन्त्रविद्वान् त्रिभुवन में नहीं है ।'

जनमतावलम्बी अमर सवरा और पंडितों में इस विषय पर विवाद उठ खड़ा होता है कि आज अमावस्या है अथवा द्वितीया ? अमर सवरा उस दिन द्वितीया बताता है जबकि पण्डितगण अमावस्या । निदान उनमें यह शत निश्चित हो जानी है कि जिसका मत असत्य निकलगा उसका पिर मुखा दिया जायगा । अमर सवरा अपनी सिद्धि के बल पर द्वादश कोश पयन भूतलण्ड में चन्द्रदशन करा देता है जिससे पण्डिता का अपन शीश मुडाने पड़त है ।<sup>१</sup>

अमर सेवरा उज्जैन पर आक्रमणार्थ गए हुए कमास को मायाजाल में फसा कर कस्तूरव्यच्युत कर देता है । कवि चन्द जब उस सचत करन जाता है ता दानो में तत्र मन्त्र का युद्ध हाता है । इस में त्र युद्ध में दुर्गा केदार और कवि चन्द के मध्य हान वाल कृत्यों की ही पुनरावृत्ति प्रदर्शित की गई है<sup>२</sup> अतः विष्टपण स वचन के लिए उसका इंगितमान पर्याप्त है ।

मारा वादल की कथा में राघव चैनन का अदृष्ट-क्षण की सिद्धि प्राप्त दिव्यार्ई गई है । वह महाराज रतनसन की प्रतिमा के निर्वाह के लिए जिसमें उन्होंने अपनी रानी पदमावती का मुख दक्षकर ही जलपान ग्रहण करन का सकल्प कर रखा था ।<sup>३</sup> जगल में महारानी पदमावती की मिटटी की अनुकृति बनाता है । उसकी अदृश्य तथ्या का भी जान लन की सिद्धि अभिशाप बन जानी है जब वह उस मिटटी की मूर्ति की जघा पर तिल भी बना देता है तब महाराज रतनसन का भ्रम हो जाता है कि उसका पचावती से अवध सम्बन्ध है अतः उस स्वदश स निष्कामित कर देने हैं ।<sup>४</sup>

आल्हलण्ड में जादू के बल से मनुष्य का ताता य मढा बना दना इच्छा हान पर उसे पुन मनुष्य बना लना तथा किसान की जिह्वा बन्द करके उसे बोलन और नजर बन्द करके दग्धन में अक्षम कर दना चित्रित किया गया है । किसी पर माहित हुई नारिया द्वारा जादू की इन विधियों से अभीष्ट प्रेमी बलात् प्राप्त कर लिए जाते थे ।<sup>५</sup> जादू का छिपा रखन का स्थान जादूगरनियों की चाटिया समझी जाती थी, जिह्वा काट लन पर उनका अभिचारिक कृत्या के सबथा निष्फल हो जान का विश्वास किया जाता था ।<sup>६</sup>

मारावादल की कथा में प्रदर्शित मगछाला और उडन खटाली पर बटवर

१ म ७—द० प० ग०, का० १५३११३८ ५३ 'प० रा०' मा० २।४६१।७८  
 'प० रा० का० ४८१।२७६ स ४६७।३०५ गा० क०, छ० २६, वही, छ०  
 ३१, मा०', ३११।१-५, ३५५।४-५, वही, २७२।७

आकाश माग से यात्रा करना तथा परमान रासो में वर्णित उड़ने वाल अश्व भी इसी प्रकार के विश्वास के निरूपाय हैं। प्रथम अश्व में सिद्ध और महाशय रतनसन मगधाला पर बैठकर सिद्ध के मंत्र प्रभाव से गिहल द्वीप जाते हैं तथा वहीं से परिणीता महारानी पद्मावती और दहज में मिल राघव चतन के साथ उड़ने लटानी पर बैठकर चितौड़ लौटते हैं।<sup>१</sup>

परमाल रासो में महाशय परमाल ऊपर से उगना अश्व मागकर उस पर आड़ी दर तक सवारी करना चाहते हैं। भूल में वह अश्व के दा वार चातुक मार देते हैं जिससे क्रुद्ध होकर, वह उन्हें मृत्युका की आर लकर उड़ना आरम्भ कर देता है। वह अन्न याजन ऊंचा उड़ जाता है, तो भयग्रस्त महाराज परमान अपने नन बंद कर लेते हैं तथा राम नाम रटते हुए अपने मरण की प्रतीक्षा करते हुए उमनी चीन से चिपट जाते हैं।<sup>२</sup> अश्व का आकाश की ओर उड़ना देखकर सना में हाहाकार मच जाता है, तथा उनकी रक्षा के लिए आल्हा दूसरा अश्व उड़ाकर उनका समीप पहुँचना है।<sup>३</sup> अश्व से क्रुद्ध होना का कारण पूछने पर, वह प्रत्युत्तर देता है कि प्रथम तो मुझ पर मनुष्य सवार ही क्या हुआ था? और यदि सवार ही भी गया था तो उमने मुझे चातुक क्यों मारे थे।<sup>४</sup> उस अश्व का अतत आल्हा की यह धमकी भू पर उतारने के लिए विवश करती है कि मरे प्राय से तुम किसी भी नाम में न बच पाओगे।<sup>५</sup> वनाफला के इन अश्वों के नाम पक्षिराज मगराज पवनवेग और मनवेग थे।<sup>६</sup> जा कदाचित्त उनकी द्रुतगति के कारण ही रखे गए हों।

पश्वीराज रासो और छत्रप्रकाश में मन्त्रा के बल से सप को दशीभूत करने का उल्लेख मिलता है। विपथर को मन्त्रा से निश्चेष्ट कर देना आजकल साप कीलना कहलाता है। पश्वीराज रासो में मन्त्रा से मन्त्रा हुआ धन के कालत समय उम पर एक विपथर बठा मिलता है। उसे देखकर सम्पूर्ण खनिक आदि व्यक्ति दूर पनायन कर जाते हैं तथा कवि चंद द्वारा उसे मन्त्रा में बाँध देने पर ही धन निकाल पाते हैं।<sup>७</sup> छत्रप्रकाश में राजकुमार अगद को स्व पिता चपतिराय जी की मृत्यु की सूचना मिलने पर गारेनाल में उनका मन्त्रा से बाँधे हुए सप की भाति विवश दिखाया है—स यवन की कमा के कारण न तो वह शत्रु से प्रतिशोध लेने में ममथ थे जबकि शत्रुओं से पित वर जोधन न करना उन्हें क्षत्रिय मयादा के विरुद्ध प्रनीत होता था। सप विप उतारने के लिए ग्रामीण समाज में जा निया प्रचलित है, उसे थाली बजाना अथवा सप खिलाने की मन्त्रा दी जाती है। इसके विपथर में दो वानें बही जानी हैं—इससे सप आकर वाट हुए स्थान पर अपना मुँह लगाकर विपथर का चूम लेता है और रोगी स्वस्थ हो जाता है। द्वितीय विवदन्ती के अनुसार दशित

१ से ६—द० गा० व०' छ० १८ वही छ० २७ पर० रा० १७।११२ १६, वही १७।११८ २१ वही १७।१२५, वही १७।१२६, वही १८।१०, वही, ७३६।१८८ छ० प्र०' ६।७

व्यक्ति के शरीर में सप प्रविष्ट होकर, उस कारण का बताता है जिसमें गूट हाव-उमन उस व्यक्ति का काटा था। सप की (जा प्रायः उस वंश का ही कोई अज्ञ अर्थात् निष्पुत्र अथवा अविवाहित व्यक्ति होता है) माँगें पूरी करने का वचन दान पं काट हुए व्यक्ति के मुँह से पं नारा के माध्यम से विप उतारा जाता है। पथ्वीराज रासा में शस्त्राघाता से पूणतया जजरित काय किंतु फिर भी रणा माद में भूमन वीरा की पतन मंत्र के प्रभाव से भूमते व्यक्तियों से उपमित करके<sup>१</sup> कदाचित् थानी वज्रान की प्रथा का प्रचलन दिखाया गया है। रासा में विप उतारने के मंत्र को पतनमंत्र के माथ-माथ गाऊँ मंत्र भी कहा गया है।<sup>२</sup>

उपयुक्त श्रेणी में ही मंत्रों के बल से श्मि का वृद्धि भ्रष्ट कर देने<sup>३</sup> आकषण और माहून मंत्रों के प्रभाव से अभीष्ट व्यक्ति को अपने अधीन करने<sup>४</sup> तथा पुरुष का नपुंसक बना देने<sup>५</sup> और ढाँक आदि वाद्य यंत्रों एवं गाने वाले का स्वर वाहर उनकी ध्वनि का क्षीण कर देने<sup>६</sup> सम्बन्धी धारणाएँ गयीं जा सकती हैं। मंत्रों की निष्ठा के लिए पथ्वीराज रासा में उद्भूत काल का अधिक उपयुक्त अक्सर प्रदर्शित किया है।<sup>७</sup>

वीरकाय में वर्णित इन मंत्र कवचा गुटका तावीजा, दिव्याम्बो और जादू के घाडे आदि के विषय में हमारा मत है कि तावीजा का प्रयोग तो आजकल भी अनिष्ट निवारण के लिए किया जाता है। दुर्गा भागवत और गीता के गुटक पहनने का कवि पद्माकर ने जो उल्लेख किया है वह अलवर के अजायवधर में रच हुए, इन ग्रन्थों के गुटकों से अनुमोदन हा जाता है। दिव्याम्बो के प्रयाग के सम्बन्ध में प्रयागकर्त्ताओं का महाभारत के याद्यों के अवतार बताते हुए उनमें कलयुग में भी त्रिपुरा देवी भगवान शिव और गारखनाथ की कथा से उनका प्रयाग की क्षमता लिखाई गई है। आजकल के वैज्ञानिक ज्ञान के आलोक में लागू रामायण और महाभारत आदि ग्रन्थों में उल्लिखित इन दिव्याम्बो का कवियों की कपाल कल्पित सृष्टि समझते हैं। किन्तु जिस प्रकार रामायण और महाभारतकाल में इनका प्रचुर

१ स ४—द० प० रा० का ११४३।६४ वही १२७२।१०६ वी ४८३।२ ०  
१३ वी ४५४।३८

५ मगाय अग्नि तत्र किया हाम । धर स्वान माम प्रति वास धाम ।

उच्चारया मंत्र आराधि इष्टः । तनकाय नया काम त नष्टः । वही ८६

६ 'जा स्वर वाधे मणि ढाँक का, वाधे नान मनीरन धार ।

कठ गवया का जो बाँध, तावी गाय कालिका माय ।' आ० ६।२।३

७ 'मंत्र मंत्र हर राज, नाहि अद्धन एकतह ।

जह न जीव नर हाय अपु त्रिभय मेकनह ।

ससि वीर राह द्याया भर्त् खलक स्नान त्रिभयकरण ।'

प्रयोग मिलता है, उसी प्रकार हमारा आलाच्यकाल म भी इनक परपरित प्रयाग को स्वीकार किया जा सकता है। मत्रा व वचन चाह वस्तुतः शम्भ्राधाना स रभा रग म गसमध रहते हा। त्रिनु उतरी मनानशानिक उपपागिता म सन्ह नही किया जा सकता।

### (ग ८)—भूत प्रेनादि

इनका निवास निजन स्थानो म माना जाता था। भूषण न महाराज त्रिवाजी के शशुभ्रो के भयप्रस्त होकर भाग जाने स उनके जनाकृत स्थाना का उनक भय स भूता का वाम स्थान वनत चित्रित किया है।<sup>१</sup> वरगत् प्रादि क पडा तथा बुद्ध महलो म भी भूत प्रत और चुडला का निवास स्वीकार किया जाता था। आल्हृषण्ड म वरगद के नीच गढे कोल्हू<sup>२</sup> और जम्ब नरग के महल म भूत प्रार चुडला का वाम त्रिगाया गया है।<sup>३</sup> विश्वाम किया जाता था कि भूता की मार स भूत प्रस्त व्यक्ति दुबन और पीला पड जाता है। ऊदन स्वय का भूत प्रस्त प्रदशित करन के लिए शरीर पर हल्दी मलकर पीला पडने का ढाग रचकर इस तथ्य का अभिधोतन करता है।<sup>४</sup> भूत और चुडलो के दुष्प्रभाव को दूर करन के लिए आल्हृषण्ड म नीन बुलाए जात हैं।<sup>५</sup> इम समय भी लोक म उस प्रकार के व्यक्तिया को सयाना कहा जाना है जो विविध प्रकार के भाड फूफ करन रहत हैं।

भूत प्रस्त व्यक्ति का विषयक उल्लेख मात्र आल्हृषण्ड म ही मिलत है। वीरकाय धारा के अय य यो म भूत प्रत सखिनी डाकिनी योगिनी पिशाच वनाल खवीस भरव और काली को रुद्र के दल के रूप म चित्रित किया गया है जो युद्धावसरो पर मदो मत्त होकर मुण्डमालाएँ धारण करके नृत्य करत हुए रक्त पान करत हैं।

वहण-दूत—एनका काय रात्रिकाल म वरणदेव का स्मरण किय बिना तागात्र बावडी और नदियो म स्नान करने वाल पुरुषा को दण्डित करना हाता था। एस व्यक्ति का घम का क्षय होने तथा उनके कार्यो म याघात पडने की धारणा नी प्रचरित थी।<sup>१</sup> पथ्वीराज रासो म महाराज सामेश्वर और उनके साम त च द्र ग्रहण के अवसर पर दो प्रहर रात्रि यतीत होने क समय कालिंदी म स्नान के निमित्त प्रवश करत है जिनसे रष्ट होकर जल दूत उन पर आत्रमण कर देत हैं। कवि चन्दन उह— उत्तुग काय वज्रतुल्य दढ करा वाल यमतुल्य शक्तिशानी भीम-काय रक्तवर्णा नयन और नखा वात तथा ऊचे उठ हुए दाँता और बेशो वाल नमभन की धारणा यकन की है। उनकी डरावनी किलकार धीकनी के समान एन गिरत नयना स इन जलदूता की आट्टित इतनी भयप्रद थी कि चन्द के शब्दो

म उनसे साक्षात् भय भी भयभीत रहता था ।<sup>१</sup> वे विविध मायावी कृत्या की क्षमता-युक्त होत थे । महाराज सोमेश्वर के सामना पर वे कभी कृत्रिम अग्नि वर्षा करत थे जसके कभी चारों ओर घुघ फना दते थे । इसी भाँति कभी वे कृत्रिम जन वर्षा करत लगत थे जसके दूसरे ही क्षण पत्थरा की बौछारें गिरने लगता थी ।<sup>२</sup> अपनी शक्ति के विषय में वरुण दूत कहते हैं कि हम दीघकार पवता को कनिष्ठका पर उठा सकत है, माना समुद्रा के जल को हाथा में निकाल कर पथ्वी पर प्रवाहित कर सकत है, तथा त्रिश्व के अय भी अष्ट और अभूतपूर्व कृत्या के करन की क्षमता रखत ह ।<sup>३</sup>

यह विश्वास प्रचलित था कि इन वरुण-दूता का उन लोग पर कम प्रभाव पडता है, जिनके दृष्ट में उनकी महायता करत है तथा जिनके नप अथवा माता-पिता के धार्मिक कृत्या का पुण्य उनकी रक्षा करत है । एसा ही अभिमत व्यक्त करत हुए महाराज सोमेश्वर के वीरा पर जल-दूता का कम प्रभाव दिखाया है ।<sup>४</sup> यह ध्यान में है कि महाराज सोमेश्वर और उनके सामान वरुण दूता का दीघकाल तक सामना नगी कर पान और मूर्च्छित हो जात है ।<sup>५</sup> प्रात काल होने पर वरुण दूत अ नर्पान हो जात हैं और वहाँ आए महाराज पथ्वीराज का शशुघ्रा के दष्टिगोचर न होत हुए भी स्व पिता और उनके सामान को मूर्च्छित देखकर बड़ा विस्मय होता है ।<sup>६</sup> स्तुतिस्थिति जान होने पर वे यमुना की स्तुति करतें हैं जिनसे वरुण दूता का दुष्प्रभाव नष्ट होकर वे सब सधत हो जात हैं ।<sup>७</sup>

### वीर

बावन वीर—पथ्वीराज रासा के 'आपेटक वीर वरदान' नामक समय में कवि चन्द स्व साथिया से बिछुडकर एक सिद्ध के समीप जा पहुँचता है, जो उसकी सेवा में प्रमत्त होकर एक ऐसा दृष्ट मंत्र प्रदान करत है जिसकी महायता से बावन वीरा का वश में किया जा सकता था ।<sup>८</sup> मध्यकालीन जन जीवन में उनके विषय में क्या धारणाएँ प्रचलित थी, इस तथ्य की इस प्रमग में सुन्दर अभिव्यजना हुई है ।

इन वीरों के नायक भरव स्वीकार किये जात थे । चन्दन भरव को उन वीरा का आदेश देन प्रदर्शित किया है ।<sup>९</sup> कवि चन्द को आपदकाल में साथ देने का वचन भी भरव ही देत ह ।<sup>१०</sup> उनके लिए महापुरुष<sup>११</sup> और देव<sup>१२</sup> सनाएँ प्रयुक्त की जाती थी तथा उन्हें असुरों के शत्रु और देवों के सहायक माना जाता था ।<sup>१३</sup> उनका सिद्ध करने के लिए हठयोग आदिक साधनाया तथा श्मशान भूमि में रात्रि वास आदि अभिचारात्मक क्रियाओं का आशय लिया जाता था ।<sup>१४</sup> इन वीरों को अचौकिक



क्षमताओं से युक्त माना जाता था तथा विश्वास किया जाता था कि उह वंश में  
रखन वाला व्यक्ति उनसे अपने अनिष्टों का निराकरण कराकर, अभीष्ट सफलता  
को प्राप्त कर सकता है।<sup>१</sup> दब और दानव वीरों से शक्ति तथा किन्नर, यक्ष और  
गंधर्व उनके भय से कांपते समझे जाते थे।<sup>२</sup>

इन वीरों की रूपाकृति भयानक और सौम्य दाना प्रकार की मानी जाती  
थी। उनमें से कुछ सतोगुण प्रधान होते थे, जबकि अन्य रजोगुण अथवा तमोगुण  
प्रधान। वे अपने हाथों में शस्त्रों व प्रतिकूल पुण्य और फल तथा नाना प्रकार की  
दिव्य वस्तुएँ लिए रहते थे। उनके शरीर में दाम्बल हाथी, सिंह तथा विषधरा, जस  
भयानक भी होते थे, जिनमें से अग्नि स्फूर्लिंग तथा रुधिर मासादि की वर्षा होती थी  
तथा वे तपस्वी और नरेशों की नाति सौम्याकार भी होते थे।<sup>३</sup>

इन वीरों को बिना किसी पुष्ट कारण के स्मरण करना अनिष्टकर समझा  
जाता था।<sup>४</sup> महाराज पथ्वीराज के सामंत कवि चंद्र की वीरों की सिद्धि विषयक  
वार्ता को 'भट्ट भणत कहकर उपहास करते हैं जिनकी प्रतीति के लिए चंद्र उनका  
पुनः आराधना करता है। महाराज पथ्वीराज और उनके मामता की उपस्थिति में  
बावन-वीर पुनः प्रकट होते जाते हैं। उह बुलाने का कवि चंद्र अथवा महाराज  
पथ्वीराज के पास कोई पुष्ट कारण था था नहीं अतः सभी उनका कोप के भय से  
चिन्ताग्रस्त हो जाते हैं।<sup>५</sup> चंद्र के परामर्श पर महाराज पथ्वीराज उह बावन बकरों  
की बलि एवं बावन घट वारुणी प्रदान करके तथा सिद्ध और तेल से उनकी अर्चना  
करके मुष्ट करने की युक्ति निकाल लेते हैं।<sup>६</sup> अतः वे चंद्र की यह आश्वासन देकर  
कि जब कभी सकलकाल में तुम हम याद करोगे तभी हम तुम्हारी सहायता के लिए  
उपस्थित हो जायेंगे अतर्धान हो जाते हैं।<sup>७</sup>

भूत प्रेत बलदूत और वीरों का सत्ता स्वीकार करने विषयक धारणाओं का  
समापन करने से पूर्व यह उल्लेख करना आवश्यक है कि हम्मीर रासो में शाह  
अलाउद्दीन स्वयं का मक्के का पीर तथा अपने वंश में चार वीर और चौरासी वीरों  
को बताने हुए कहते हैं कि इनके बल पर मैं हिंदू और तुक सभी से इच्छानुरूप काय  
करा सकता हूँ।<sup>८</sup> जनदूत, बावन वीर और भूत प्रेतादि में विश्वास के सम्यक् में  
चित्रित घटनाएँ पूणतः सत्याघत नहीं प्रतीत होती। वीर काय प्रणताओं में कदाचित्  
महाभारत आदि ग्रंथों में वर्णित तदवत प्रसंगा और लोक प्रचलित कथाओं का आश्रय  
लत हुए उनका ऐसा वर्णन किया है मानो वे वस्तुतः घटित हुई थीं। फिर भी  
मध्यकालीन युग आस्था और विश्वासों का युग था तथा उस समय इस प्रकार का

१ सं ८—द० प० रा० मो० १।११५।<sup>२</sup>६, वही १।१११।<sup>३</sup>७ वही १।११२।  
२६-३४ 'प० रा० वा० ३२३।१५३ वही, ३२३।१५०, वही, ३२६।६८ ६६,  
वही ३२७।१७३, ह० रा०', छ० ४०८

धारणाओं में धार्मिकता में अग्रिम विश्वास किया जाता था, इसमें सन्देह नहीं किया जा सकता। वैज्ञानिक ज्ञान के गिराव पर पड़ने, इंग्लैण्ड के शेनमपियर आदि मध्य युगीन कवियों ने भी ऐसी धारणाओं में विश्वास प्रकट किया है। यह तथ्य रहस्यमय ही है कि यदि जत्र मंत्र और भूत प्रेतानि सम्बन्धी धारणाएँ अंधविश्वास मान हैं तो इनका सावदेशिक प्रचार कम हो गया है।

नित्य—वदिक मतावलम्बियों में शिव, शक्ति और विष्णु व प्रति ममान श्रद्धा भावना थी। वे प्रायः तीनों के ही विविध रूपों की बिना किसी भेद भाव के अचना-बाना करत थे। भगवान बुद्ध का विष्णु का अवतार मान लेने से बौद्ध और बौद्धिक मत के अनुयायियों के बीच की दूरी समाप्त होनी जा रही थी। इसके विपरीत हमारे आराध्यदेवों के आरम्भ में बौद्ध और जन मत के अनुयायियों के पारस्परिक सम्बन्ध में सौजन्य नहीं था। जन मत के अनुयायी बौद्धिक मतावलम्बियों के पूज्य स्थलों में आण लया दन थे और उनके वेद पत्तन यज्ञ करने तथा पवित्र नदियों में स्नान करने आदिक साधना-पद्धतियों की निंदा करत थे। जनी सिद्ध अपनी तांत्रिक सिद्धियों के माध्यम से भी बौद्धिक मतावलम्बियों के धर्म स्तम्भ ब्राह्मणों के कथनों का असत्य सिद्ध करके, स्व मत की श्रेष्ठ सिद्ध करने का प्रयास करत थे। बौद्धिक मतावलम्बियों भी जनता की साधना पद्धति और धार्मिक ग्रंथों की निंदा करने में पीछे नहीं थे। वे उह पाखण्डी अभद्र बेशी, मुह तक न घान वाले मूर्त्तित नुचिता के पथ के अनुयायी तथा सुधम के स्थान पर अमजाल में प्रसन्न बनाकर उपहान करत थे। उनके धर्म ग्रंथों की यह कहकर निंदा की जाती थी कि उनमें बुद्धि और पीरूप क्षीण होत हैं तथा अज्ञान बढ़ता जाता है। कालांतर में यह विरोध उपशमित अवश्य हो गया था और एक ही नगर में वे अपने आराध्य देवों की अचना करते हुए शांतिपूर्वक रूप निवास करने लग गे।

हिंदू और मुस्लिम धर्मावलम्बियों में एक दूसरे के धर्म के प्रति असहिष्णु एवं सहिष्णु दोनों प्रकार की धारणाएँ थी। उनके पारस्परिक सम्बन्धों का विपाकन करने में राजनीतिक स्वार्थों की प्रधानता रहती थी, जिसमें उह विविध प्रकार के कात्पनिक दृष्टांत सुनाकर उनकी अपने धर्म के प्रचार के लिए शहीद हान की भावनाएँ उत्पन्न की जाती थी। शत्रु को ध्वनि अथवा दाग का शब्द सुनने में दोजब अथवा नरक-गमन का भय दिखाकर उन्हें एक दूसरे के मन्दिर और मस्जिदों गिराने का आत्माहन दिया जाता था। पारस्परिक मनामात्रिय का यह उदार और गजबजाल में मबाधक तीव्र था। शाहू और गजब न मन्दिरों के दश-व्यापी भूमातीकरण का फरमान निकाल कर असम्य मन्दिर गिरवा दिम ये हिंदुओं पर महँग तीर्थ कर और जनिया लाकर उन्हें पराश्रम रूप से हिंदू धर्म छोड़ने के लिए विवश किया था तथा बहुत से हिंदू धनान मुस्लिम बना लिये थे। इसकी प्रतिनिया में कुछ हिंदू नरशा न भी मन्दिद नष्ट करत तथा काजी और कुरान की भ्रष्ट करने का बीडा उठा रखा था।

हिंदू और मुस्लिम धर्मावलम्बियों के दूसरे वर्ग का अत्याय के प्रति दृष्टि काण वटा ही महिष्णु था। उनकी दृष्टि में ईश्वर या अल्लाह एक ही था और उसकी दृष्टि में हिंदू और मुसलमान समान थे। जब स्वयं करतार न ही हिंदू और मुसलमानों की रचना करत समय उनके मास और रक्त में किसी भी प्रकार विभेद न रखा था तो मात्र माघना पद्धति भिन्न होने में ही उनका एक दूसरे से लड़ना भिडना इस वर्ग को दृष्टि में अनीव गृहित था। इस वर्ग की यह भी धारणा थी कि जब दोनों ही धर्मों का चरामाभिप्रत समान है, तब व्यथ ही एक दूसरे के धर्म को अधम या सदगति न प्रदान करन वाला कहकर निंदा क्यों की जाती है? परिणामतः हिंदू और मुस्लिम एक दूसरे के धार्मिक तत्त्वा का समादर करने लगे थे और एक दूसरे के दवी देवता या पीर पगम्बरा में भी उनकी श्रद्धा बढने लगी थी। यह सहिष्णु दृष्टिकोण समाट अकरर और जहाँगीर के शासनकाल में पराकाष्ठा का पहुचा हुआ था जो मींदरो का नष्ट करान अथवा सत गो विप्रादि को कष्ट न की तो कीत नहे, उनका सरक्षक थ। नातर यह कि हिंदू और मुस्लिम धर्मावलम्बियों का अत्याय के प्रति दृष्टिकाण अधिकांश महिष्णु ही था उसे राजनीतिक स्वार्थों से यदा कदा विपाकत करन में प्रयास अश्य किय जाते थे।

हिन्दुओं के पूज्य देवी देवताओं में शिव और शक्ति मूढ य स्थान पर समागीन ८। शिव पूजन से मनोवाञ्छित वर प्राप्त करन की धारणा इतनी बनवती थी कि अभीष्ट वर वधुओं की प्राप्ति युद्ध में विजय लिंग का परिवर्तन कराना आदि सभी प्रकार के मनारथों की सिद्धि शिव पूजन से सम्भव मानी जाती थी। वर प्राप्त करने की दृष्टि में शक्ति का भी एसा ही माहात्म्य समझा जाता था। विश्वास रिया जाता था कि विश्व कल्याण की कामना से शक्ति ही सरस्वती पावती चडी चामुडा और दुर्गा प्राप्ति के रूप धारण करके अशिव-तत्त्वा का विनाश करती है। उसकी परिचाप्ति गंगा गान्धरी आदि नदियां तक मानत हुए मूढ चर आदि विश्व के नियामक तत्त्वा का परिचानन शक्ति द्वारा ही किय जान की धारणा प्रचलित थी। शिव के पूजन में वय पत्र पुष्पा का प्राधाय रत्ना था जबकि शक्ति की पूजा में बलि प्रदान करना प्राथमिक ममभा जाता था।

पूजा की व्यापकता की दृष्टि में श्रीकृष्ण का तीमरा स्थान प्राप्त था जिनकी अनुमत्त मूर्ति की पूजा की जाती थी। उनका स्मरण प्रायः भू भार उतारन तथा अनुमत्त मत्त में किया जाता था। शिव की भांति व भी कई क्षत्रिय नरणा के इष्ट त्व थे और उनका विश्वास रत्ना था कि युद्धम्यत्र में आपत्ति घान पर श्रीकृष्ण अवश्य नरणा करेग। शिवन एग भी प्रमग है जिनमें श्रीकृष्ण की यान मूर्ति का पूजा रियाइ रत्ना है। आर्याण के मत्तरा में नरय-मान की भी याजना हाना एक एगी रियाता था जे मात्र श्रीकृष्ण के मत्तरा तक ही परिगीमित रियाई गई है।

मन्दान राम का पूजा का प्रचलन श्रीकृष्ण की पूजा से भी कम था। उनकी

प्रतिमा के साथ साथ मीता और लक्षण की प्रतिमाएँ भी प्रतिष्ठापित रहती थी, और तीनों ही प्रतिमाओं की अचना करने की प्रथा थी। हनुमान की भी पूजोपासना की जाती थी किन्तु इसका भी व्यापक प्रचलन नहीं था।

अभीष्ट मनोरथा की निम्न तथा परलोक सुधारने की दृष्टि से जिन अथ धार्मिक साधना का आश्रय लिया जाता था उनमें गंगा यमुना और गोदावरी आदि नदियाँ में स्नान करने का बड़ा माहात्म्य समझा जाता था। उनमें स्नान करने में ही नदी अपितु उनका नाम स्मरण करने अथवा स्नान कर लेने मात्र से ही पाप विनष्ट होकर मोक्ष प्राप्त हो जाने की धारणा प्रचलित थी। लोक में व्यापकता की दृष्टि से दूसरा स्थान पान देन का था जिसके द्वारा 'मोक्ष-प्राप्ति' का द्वार सहज ही अनावत हो जाने में विश्वास किया जाता था। पाँच प्रकार के महादानों की तो अपरिमीम महत्ता समझी जाती थी। साधजनिक कल्याण के लिए बाग लगवाने अथवा कप-तडाग और वापिया का निर्माण कराने में भी स्वर्ग के विहारों का उपभोग प्राप्त होने की धारणा प्रचलित थी। परलोक सुधारने के अथ माध्यम तपस्या पवित्र ग्रन्थों का श्रवण और यज्ञ करना स्वीकार किए जाते थे। तप के प्रताप से अनौकिक सिद्धियाँ प्राप्त होने का विश्वास किया जाता था, जबकि धार्मिक ग्रन्थों के पढ़ने और श्रवण की महत्ता देवी शैलान्ना के पूजन तथा पवित्र नदियों में स्नान के समकक्ष पतित पावनी और उद्धारक समझी जाती थी। कलिकाल में महत्यप करने परलोक सुधारना दुष्कर समझने की धारणा व्याप्त थी और यज्ञ के स्थान पर प्रायः षोडश प्रकार के महादान प्रदान करने का ही आश्रय लिया जाता था।

पौराणिक आर्यानों में प्रभावित एवं लोक धारणा में परम्परा से प्रचलित अनेक प्रकार के विश्वास और लोक मान्यताओं में भी आनुच्यकालीन जन समुदाय की एक आस्था थी। उनका विश्वास था कि सृष्टि की उत्पत्ति का मूल स्रोत अक्षर अथना आदि ब्रह्म है जिन्होंने अपनी महत्त्व माया या ईश्वर नामक शक्ति से पंच तन्त्रों का आविर्भाव कराया है तथा अपनी नाभि में उत्पन्न ब्रह्मा को जड़ जगम सृष्टि की रचना करने की प्रेरणा देकर सृष्ट्युत्पत्ति कराई है। समस्त विश्व चक्र उनके नियमों में रहकर सब स्वकार्यों में प्रवृत्त रहता है तथा उसके दृष्टि निक्षेप मात्र से अनेक ब्रह्माण्डों का उत्पन्न और विनाश हो जाता है। यह धारणा भी व्याप्त थी कि धर्म पर अधर्म की अभिवृद्धि होने पर धर्म की पुनर्स्थापना के लिए विष्णु ने समय-समय पर दम या चौवात अवतार धारण किये हैं और कलियुग में पातक भाग बढ़ जाने पर उनका कल्कि नामक अवतार पुनः धरती में अधर्म की विनष्ट करेगा।

वरदान और शाप से विविध कार्यों में साफल्य या अनिष्ट की धारणाएँ जन मानस में इतनी गहरी पड़ी हुई थी, कि देवी देवताओं के साथ साथ सिद्ध पुण्य ऋषि तथा मनी होने वाली नारियाँ में भी वरदान और शाप देने की शक्ति समझी जाती थी। यही नहीं प्राप्त प्रजा की प्राप्ति में भी दुराचारी नरेशों को अपने शाप से विनष्ट

र देने की क्षमता का विश्वास किया जाता था। अपने वचन की प्रतीति कराने के लिए हिंदुओं में ईश्वर का साक्षी बनने, ईश्वर, गंगा तथा गडग आदि की शपथ का प्रचलन था। मुसलमान गुना और कुगन की कसम गाकर अपने वचन की शपथ का विश्वास दिलाते थे। किसी काय को बनाते बगाने के लिए इन्होंने समाज को खिलाने के साथ साथ हिंदुओं का गोमांस भक्षण तथा मुस्लिमों का मद्य-पान भक्षण करने की आज्ञा दी जाती थी। राजनीतिक छद्म प्रपंच में इन शपथों का विशेषतः धूर्तता के ही रूप में प्रयोग किया जाता था।

आलोच्यकालीन जनसमुदाय की ज्योतिष स्वप्न फल और शकुन अपशकुन के सम्बन्ध में भी गहन आस्था थी। जीवन के छाँटे बड़े सभी प्रकार के कार्यों का आरम्भ शुभ मुहूर्त का शासन कराकर ही किया जाता था। ज्योतिष में अगाध विश्वास होने के कारण ही ज्योतिषियों की समाज में बड़ी पूछ थी और वनरशा तक की मूढमति कहने और उनकी आज्ञा न पराजय का समाचार देने में सकार नहीं करते। यही दशा स्वप्न फल के सम्बन्ध में थी। स्वप्नों की व्याख्या के लिए भी प्रायः ज्योतिषी ही बुलाये जाते थे जो स्वप्न में देखी हुई प्रतीकात्मक घटनाओं का आधार के उनका फल सुनाते थे। स्वप्नों में स्वप्न द्रष्टा को अपने भावी सुख दुःख का विश्वास हो जाने के साथ साथ दूरस्थ प्रदेश में घटित घटनाओं की सूचना मिल जाने में भी विश्वास किया जाता था। यात्रारम्भ करते हुए विविध पशु-पक्षियों, विभिन्न शक्ति और वेश वाले पुरुषों के सामने से आने वाले मार्ग को नाटा पक्षियों के सिर के परों से आगे या पीछे की ओर उड़कर जान आदि तन्त्रों के भिन्न भिन्न अर्थ ग्रहण किये जाते थे और वे शभीष्ट काय में सिद्धि या व्याघात के प्रतीक माने जाने लगे। कृतिक तर्कों में अकस्मात् आए हुए परिवर्तन अन्तपूर्व घटनाओं के घटित हानि वीरों के स्फुरण करने तथा छीक आदि तन्त्रों से भी त्रिविध अर्थ ग्रहण करते हुए शकुन अथवा अपशकुन के निमित्त समझे जाते थे।

जन्म मंत्र और भूत प्रेतादि सम्बन्धी विश्वासों में भी जन जीवन आक्रांत था। विश्वास किया जाता था कि रात्रि के समय नदी कापी वृष और तटारों की सुरक्षा के लिए उन पर वरुण दूत नियुक्त रहने हैं। जो लोग वरुण देव का स्मरण किया जाता जल में प्रवेश करते थे उन्हें इन वरुण दूतों द्वारा अनन्त प्रकार की यातनाएँ दी जाती थीं। वरुण दूतों की भाँति वाहन और भी बहुत प्रसिद्ध थे। वीरों के जन्म करने समझे जाते थे और उनमें अन्तर्गत एवं अन्तपूर्व काय कर दिखाने की क्षमता दी जाती थी। विश्वास किया जाता था कि मंत्र वन से वीरों का सिद्ध शक्ति वन में इच्छित काय सम्पन्न किये जा सकते हैं। तृण पीतारा पर जन्म मंत्र की रचना करने उन्हें अभेद्य बनाने की धारणा प्रचलित थी। मंत्र लिखे गुटके और तावीज धरने तथा मंत्रों के कल्पित वस्त्र पहनने पर विश्वास किया जाता था कि शरीर पर अज्ञान का व्याघात लगना ही नहीं और यदि लगना भी तो शत्रुओं की मार तथा

की मार की तरह निष्प्रभ होगी। मंत्रों के बल से चट्टान को पानी कर देने, मद्य जात शिंशु से पट भापाएँ बुलवा देने घट के छिद्रों में से अग्नि स्फूर्तिग और जल की कुहाड़ों निकलवा देने मूय को कील देने मानव की बुद्धि भ्रष्ट कर देने तथा उसे ताना या मटा बना देने आदि का भी विश्वास किया जाता था।

इससे स्पष्ट होता है कि आधुनिक वचानिक युग की अपेक्षा मध्यकालीन युग विश्वासों और आस्थाओं का युग था। विज्ञान के प्रसार से पूर्व भारत में अंध विश्वासों का जो कुहरा मानव चान के ऊपर छाया हुआ था उसका वीर काय में विशद और स्पष्ट चित्रण मिलता है। भल ही इनमें मृत्यु का अंश बहुत कम है किन्तु इसमें उस काल विश्वास के जन समुदाय की मनोवृत्ति के समझने में निर्विवाद रूप से सहायता मिलती है। भारतीय ग्रामों में इस समय भी इन विश्वासों और आस्थाओं के अवशेष किसी न किसी रूप में देखे जा सकते हैं।

## आर्थिक स्थिति

आलोच्यकाल में सामाजिक प्रतिष्ठा का मानदण्ड यद्यपि जातिगत श्रेष्ठता मानी जाती थी तथापि वित्त का भी महत्त्व पर्याप्त था। केशवदास जी ने तत्कालीन उस लोक प्रवृत्ति पर प्रकाश डाला है जिसमें मूल्य हाने पर भी धनवान् पुरुषों को लोग पण्डितों की सजा दान लगते थे धनहीन उच्च श्रेणी के व्यक्ति भी निम्न श्रेणी में परिगणित किए जाने लगते थे।<sup>१</sup>

कवि चंद्र<sup>२</sup> विद्यापति<sup>३</sup> केशव<sup>४</sup> मान<sup>५</sup> और जाधराज<sup>६</sup> ने विविध राज्या के प्रजाजनो की आर्थिक अवस्था की ओर संकेत करते हुए लिखा है कि लाग घन धाय स पूण है तथा सुख समृद्धि के उपभोक्ता है। इससे स्पष्ट होता है कि आर्थिक दृष्टि में विवेच्ययुगीन सामाजिकी की दशा पर्याप्त समृद्ध थी। केशवदास जी ने विज्ञान के प्रमुख साधना का भी उल्लेख किया है जिनमें ज्ञान होता है कि कृषि लन दन व्यापार और मणि मुक्तादि की खाना के ठक लना वित्ताजन के प्रमुख सान ममभे जान थे<sup>७</sup> जबकि विविध नगरो सजावति और भिक्षाटन आदि स भी उत्तर पूति के माध्यम जुटाने का प्रयाम किया जाता था।<sup>८</sup> कहना न होगा कि इन माध्यमों की उपबन्धिया पर दृष्टिपात करने से ही किसी समाज की आर्थिक दृष्टि से सम्पन्नता या विपन्नता पर प्रकाश पड़ता है। राजकीय अथ व्यवस्था का भी समाज की आर्थिक अवस्था के स्वरूप निर्माण में प्रमुख योगदान होता है अतः राजकीय आय के प्रमुख स्रोतों पर भी हमने इसी अध्याय में प्रकाश टांकना उचित समझा है।

<sup>१</sup> मान<sup>६</sup> पण्डित साईं साधु। जाके घर में वित्त अभाव।

उच्च नाच मय जानें हाइ। ऊचति नीच बंगाल नद।

— वी० च०<sup>१</sup> १।६१ ४२

— न ८—२० प० ग० वा० ५६१।१४ वा० प० २८ वी० च० १६।२१  
रा० वि० २।८७ ट० रा०<sup>१</sup>, १० 'वी० च० १।४८ वही, ११।८

## (क) कृषि

कृषि उत्पादन का मूलाधार समय पर वर्षा हो जाना होता था, जिसके अभाव में प्रायः दुर्भिक्ष पड़ जाते थे।<sup>१</sup> वर्षा के अतिरिक्त सिंचाई के साधना में पथ्वीराज रासो में रहूँट और पुर या पैर चलाने<sup>२</sup> का तथा परमाल रासो में रहूँट चरसा और डेंकली के प्रयोग सम्बन्धी<sup>३</sup> निर्देश मिलते हैं। वीरकाव्य प्रणेताओं में से कवि मान ने उदयपुर के समीपस्थ प्रन्श की मुख्य उपजें धान, गहूँ, चना, जौ और ज्वार दिखाई हैं<sup>४</sup> जबकि सूदन ने उक्त फसलों के साथ मटर और मक्की का भी उल्लेख किया है।<sup>५</sup> कवि जायराज ने रणथम्भीर दुर्ग में दस लाख करोड़ मन अनाज का भण्डार सुरक्षित दिखाया है,<sup>६</sup> जिससे अनाज की बहुत पैदावार का अनुमान किया जा सकता है।

दालें—दाला में कवि मान ने मोठ, मसूर, माप (उडद) और मुदग (मूग) की दालों की उपज दिखाई<sup>७</sup> है, जबकि सूदन ने उडद, मूग, माठ, तुवर (अरहर) चौरा (लोबिया) और कुलकी (उडद के आकार का एक अन्न जिसे बहुधा पशुओं को खिलाते हैं, किंतु गरीब लोग इसकी दाल भी बनाकर खाते हैं) की दालों का उत्पादन दिखाया है।<sup>८</sup>

तिलहन—तिलहन में कवि मान ने सप्पिस या सरसा की उपज पर प्रकाश डाला है।<sup>९</sup> सूदन ने सरसों के साथ साथ तिला का भी नामांकेन किया है।<sup>१०</sup> जायराज ने रणथम्भीर दुर्ग में तेल का अपार भण्डार सुरक्षित दिखाकर तिलहन की अपनी उपज होने का अभिघातन किया है।<sup>११</sup>

ईख—कवि मान ने सलडी या ईख की पैदावार दिखाते हुए<sup>१२</sup> उसके पेलन का भी उल्लेख किया है।<sup>१३</sup> कवि चन्द ने शक्कर और खांड<sup>१४</sup> का तथा सूदन ने गुड का उल्लेख करके<sup>१५</sup> ईख के रस से गुड, शक्कर और खांड बनाने के उद्योग पर प्रकाश डाला है। ईख की खेती भारत में प्राचीन काल से ही प्रचलित रही है। डॉ० वामुदेव-शरण अग्रवाल ने प्राचीनकाल में ईख की फसल उगाने के साथ साथ उसके वन होने का भी उल्लेख किया है।<sup>१६</sup>

## (ख) व्यापार

व्यापार के केन्द्र मुख्यतः नगर होते हैं। वीरकाव्य प्रणेताओं में से कवि

१ स १६—२० रा० वि०, ८।११४ 'पू० ग०' वा० १६६४।५८३, पर० रा०, १६।१०२ 'रा० वि०' १।६७, मु० च० ६।२।४७ ह० रा०, ३४० रा० वि० १।६८ मु० च०, ६।२।४६ 'रा० वि०, १।६७, मु० च०, ६।२।४६ ह० रा०, ३४५ 'रा० वि०', १।६७ वही, १८।२०, 'प० रा०' वा० १६६६।१६, 'मु० च०', ६।२।४६ 'पाणिनिवादीन भाग्न', प० २०८



चंद ने काजीर और सिन्धी विद्यापति १ जोनपुर, मगर न घाट्या तथा रवि मान १ उदयपुर १ धाराणा गीटाकुन बाजाग तथा उनम वधी जाने याना वस्तुप्रा के विन सिंग हैं । पृथ्वीराज रागा म यह धारणा भ्रान्त की गई है कि उनयुग म काशी दुग सर्वाधिक प्रस्थान था, प्रतापुग म सदाध्या नगरा मयग प्राधक प्रसिद्ध थी, टापर म इम्तिापुर का सर्वाधिक महत्त्व स्वीकार किया जाता था, जबकि नवियुग म भारत का सर्वोत्कृष्ट नगर काजीर है ।<sup>१</sup> कवि चंद न काजीर का चित्र भी प्रति भक्ष्य प्रस्तुत किया है । उसक अनुसार काजीर क साधकाग धाराग सतराण्ड क जिन पर ध्वजाग पहराता था ।<sup>२</sup> नगर क चतुर्भुज घनक प्रकार क पत्र फूला क बाग बगीच लग हुए थ । उनक दक्षिणी भाग का धार म प्रवेश करने पर धारम्भ म घूत गह बन हुए थ,<sup>३</sup> जिनक समाप ही नगर नायकाप्रा क धाराग थ ।<sup>४</sup> वहाँ की हाटा म इतनी भीड़ रहती थी, कि निकलना कठिन हो जाता था । इसक प्राग तम्बालियो की दुकानें थी, जिनसे प्राग मालिनें घनक प्रकार क पुष्प गजर बनाकर बचा करती थी । वहाँ पर बयाकार लागा का बयाग मुनाया करने थ । प्राग बदन पर बजाजा की दुकानें मिलती थी जिन पर एक महान रगमी वस्त्रा का विनय हाता था कि उनक तारा का हून पर ही जान हा पाना था ।<sup>५</sup> इसी क्रम से उमम वहा जडिया की दुकानें थी, वहा स्नयकार स्नय क तार मीचन थ<sup>६</sup> और वहा पर मणि मुक्ता और हीरा प्रवकनासि का श्रय विनय करने वाला की दुकानें थी ।<sup>७</sup>

कवि चंद ने दिल्ली म महाराज पृथ्वीराज के महल का सात मजिला का दियाथा है<sup>८</sup> जबकि नगर सठो क आवासो का उसने धवल ध्वजाप्रा वान तथा उच्च भोमा की सजा देकर उनके स्वयं रग तथा कई मजिला क हान पर प्रकाश डाला है ।<sup>९</sup> दिल्ली भी चारों ओर से बागा से घिरी हुई थी । दिल्ली की हाटा म भी बडा भीडाधिक्य रहता था और मुख्यत मणि लाल और रत्ना का श्रय विनय चलता था ।<sup>१०</sup> कवि चंद ने दिल्ली क बहुत से नगर सठा की बाजार म लाख काटि तक की पूजा लगी प्रदर्शित की है ।

विद्यापति के अनुसार जोनपुर नगर देसन म बडा सुन्दर प्रतीत हाता था, और सम्पत्ति का निचय था । उसके मवान और फल पत्थरा के बने हुए थ तथा

१ से ५—दे०, प० रा० का०, १२३५।५२ वही, १६३०।३५४ वही, १६४०।४२४ वही १६४०।४३२ वही १६४१।४३५।४३८

६ 'विवेक बजाज सु बेचहि सार । छुप्रत बवासर सूझहि तार ।'

—प० रा०' का० १६४१।४३८

७ म ११—दे० प० रा० का १६४१।४४१ वही १६४२।४४४ वही, १५५५।२६, वही, २१२६।१६१ वही, १५५६।३०, वही, २१२६।१५६

नगर के पानी को बाहर निकालने के लिए ढँके हुए मार्ग (नालिया) बने हुए थे।  
उमने इनस्तत भाति भाति क वाग बगीचे थे।<sup>१</sup> नगर गृहा पर स्वर्ण कलश एव  
ध्वजाए सुशोभित रहती था।<sup>२</sup> उसके बाजारा म मुख्यत कपूर, केसर, गन्ध, चामर  
और काजल आदि वस्तुएँ बेची जाती थी, जिनके केनामा म मुमलमानो की अधिकता  
रहनी थी।<sup>३</sup> मध्याह्न क समय ता बाजार मे लागा की एमी भीड़-भाड़ हा जाती  
थी कि, निरलने का माग ही नहा मिल पाता था औरता की चूड़िया टूट जाती थी  
और भी-म फने यागो वेश्याप्रा स तथा ग्राह्यम चाण्डालो स छू जान के लिए  
विवश हा जात थे।<sup>४</sup> घाडे और हाथिया की चपट म आकर बहुत म व्यक्ति तो पिय  
ही जान थे। वहा बनजार सामान बेचने आते और क्षण मात्र म अपनी वस्तुए घब  
कर लोट जान थे।<sup>५</sup> बहुत सी बननिया भी वहा पसरटटा फनाए रहती थी, जिनका  
लोम अपनी वस्तुए घबन और खरीद करत थे।<sup>६</sup>

इम हाट (बाजार) स मट हुए ही वेश्याप्रा क अत्यंत सुंदर आवास थे।<sup>७</sup>  
उनके आग की बाजारी (विद्यापति ने वजारी शब्द ही प्रयुक्त किया ह) म लाख  
घाटे और हजारो हाथी थे।<sup>८</sup> कही कूज और तबेला का फनाव था और कहा पर  
तीर बमान की दुकानें थी।<sup>९</sup> कही माग के उभयन सगफे की दुकानें थी तथा  
करी पर प्याज तहसुन आदि बेचे जा रह थे।<sup>१०</sup> कहा पर नटिनी और तुरकिनिया  
क नृत्य हा रह थ।<sup>११</sup> विद्यापति के अनुसार जौनपुर का प्रत्येक हाट एसा कौतुक मय  
था कि उनके कौतूहल का दक्षने के लिए आग तुक एक हाट से दूसर हाट म भ्रमण  
करने के लिए सातायित रहन थ।<sup>१२</sup>

कवि केशव ने बनवा नदी क तट पर स्थित आडछा नगर के भवना पर  
आकाशचुम्बी पताकाएँ फहराती दिवाइ हैं।<sup>१३</sup> जिसस उसम कई मजिला के मकाना  
की स्थिति अभि-यतित हानी है। उसके चारा आर काट प्राचीर बनी हुइ था, जिसम  
आठ उन्ग दरवाजे थ।<sup>१४</sup> आठा दिशाप्रा क निद्रागी स्व म्ब और की दिशाप्रा के  
दरवाजा स नगर म प्रवेश करत थे जिसस उन द्वार विशेषो पर प्रत्येक निशा के  
मानवा के नील गुण भाषा और वेशभूषा के दशन किए जा सकत थ।<sup>१५</sup> नगर प्रवेश-  
द्वार पर आठ मनाप्रा की टुरडियाँ प्रत्येक समय पहरा भी लगाती रहती थी।<sup>१६</sup>  
नगर के बाजारा म घातु उन रई रेशम चमडे, फर और सन के बने उपकरण बेचे  
जान होगे, क्याकि केशव न उते इही वस्तुप्रा की निधि प्रदर्शित किया है।<sup>१७</sup>

कवि मान न उदयपुर का चारा और से पवत शृंगललाप्रा का आकार स

१ से १६—२०, ५० रा०', का० २१२६।१५६, 'कीर्ति०', ५०, २६ २७, वही,  
५० २८, ३०, ३० ३०, ३२, ३८, ३८, ४२, ४६, 'वी० ब०', १६।३,  
१६।८, १६।१० १६।१३, १६।१८

१७ घातु घयमम मन कर्पाम। रोम चममय पाट विनाम।

निधिमय ननुकुरर की धरा। विनामनि बनी कररा। —पृ०, १७।३

सुरक्षित बताते हुए सुदरता में इन्द्रपुरी जसा चित्रित किया है। उससे आशामा को प्रबल ऊँचे दिखाते हुए, उनमें गवाक्ष और जालियाँ दिखाई हैं तथा उन पर स्थापित कलशों की गगनचुम्बी बताकर उनसे कई मजिजा के होने का प्रकाशन किया है।<sup>१</sup> उसमें अनेक बाजार तथा धान मंडी, तोहा मंडी, रई मंडी आदि मंडियाँ दिखाते हुए,<sup>२</sup> वहाँ के बाजारों को बड़ा भीडाकुल चित्रित किया है।<sup>३</sup>

इन नगरों के आस पास छोटे छोटे पुरवों बसे रहते थे। कवि सूदन में दिल्ली के समीप कई पुर' बसे होने का उल्लेख किया है।<sup>४</sup> आल्हाखण्ड में महाराज परमाल महोदय से आध कोस की दूरी पर बनाफना के लिए दस पुरवा बसात चित्रित किया है।<sup>५</sup> बला का दिल्ली से गौना कराव लात समय महोदय के समीप ऊँचे ऊँच महल दिखाई देते हैं जिसे देखकर वह पूछती है कि—क्या यही महोदय है? आल्हा उस बताता है कि यह तो बरइनि (बारिया) का पुरवा है।<sup>६</sup> इसी भाँति आगे एक और पुरवा' दिखाई देता है जिसे आल्हा मालिना का पुरवा बताता है।<sup>७</sup> इसमें स्पष्ट हाता है कि नगरों के समीप किसी जानि विशेष के छोटे छोटे ग्राम बस रहते थे। ऐतिहासिक साक्ष्य से भी दिल्ली और आगरा के समीप छोटे छोटे कई पुरवों बस हान का उल्लेख मिलता है।<sup>८</sup> कुम्हार या बढई आदि कमकर जातियाँ व भी पथन-पथन ग्राम बसे होने की भी प्रथा मिलती है।<sup>९</sup> जसी कि आल्हाखण्ड में बारिया और मानियों के पुरवे दिखाए गए हैं।

### व्यापार में प्रयुक्त सिक्के

हुन या हुन—सोने के इस सिक्के का पथ्वीराज रासो राजविलास और शिवराज भूषण में उल्लेख मिलता है। रासा में शाह 'गौरी की बगम मक्का यात्रा को जात हुए अपने साथ आठ लाख हुनों ल जाते हुए दिखाई गई हैं।<sup>१०</sup> जिन्हें महाराज पथ्वीराज के चामुडराय आदि साम ल लूट लते हैं। राजविलास में शाह औरगजब द्वारा प्रतिवप एक लाख हुनों बसूल करने के कृत्य को प्रेत याधि से उपमित किया है।<sup>११</sup> भूषण में हुनों का रंग पीला दिखाकर, उनके स्वर्ण निमित्त होने का प्रकाशन किया है।<sup>१२</sup>

दीनार—कवि मान ने महाराज राजसिंह के राज्य में मुत्पतया दीनार' नामक स्वर्ण सिक्के का ही प्रचलन दिखाया है। उहे कमघज्जो की आर से दस हजार दीनारें भेंट की जाती हैं।<sup>१३</sup> राज सर का निर्माण कराने हुए वे प्रतिदिन सहस्र दीनारें

१ सं १४—दे० रा० वि० २।६२ स २।६६, २।१४४, वही, २।१४३, 'सु० च० ६।२।३ आ० २८।६ १०, वही, ५७।१।४, वही, ५७।१।५ वही, ५७।१।६ द० मुगल एम्पायर' डॉ० आशीर्वात्तीलाल श्रीवास्तव प० ५१७, भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास, प० १८२ प० रा० का० १३५।१।२६ 'शि० भू०, १७५ रा० वि० ६।१६, वही, ६।२०३, वही, ८।१४२

व्यय करते चित्रित किए गये हैं।<sup>१</sup> उदयपुर की सर्राफो की दूकाना पर भी मान न दीनार और रुपये की ढेरिया लगी दिखाई हैं<sup>२</sup> जबकि उसन शाह औरगजेव को भी यह मनस्ताप प्रकट करते चित्रित किया है कि, महाराज राजसिंह द्वारा तीथकर का विरोध करके उमेदकर रादन के कारण मुक्त प्रतिवर्ष दो सहस्र दीनारों की क्षति उठानी पड़ रही है।<sup>३</sup> डा० राधाकुमुद मुक्जी के अनुसार—'स्वण दीनार सबसे प्रथम राम म २०७ ई० पूव बनाए गये थे। रोम देशीय टिनरियश सिक्के के बराबर तोल की मुद्राए भारत में सबसे प्रथम कुषाण राजाओं ने बनवाई थी। दीनार को साधारणतया स्वण भी कहा जाता था।'<sup>४</sup> पृथ्वीराज रामा<sup>५</sup> और परमाल रासो<sup>६</sup> क मुद्रा सम्बन्धी प्रसंगों में 'हैम' शब्द का प्रयोग मिलता है<sup>७</sup> जो कदाचित इस दीनार का पर्याय है। आइन ए अकबरी में दीनार का स्वण सिक्का दिखाते हुए उसका वजन एक मिस्कल अथवा १ ३/७ दहम बताया गया है तथा उसे और भी स्पष्ट करते हुए, दीनार का वजन दियानवे जो क दानो के बराबर बताया गया है।<sup>८</sup> श्री दुर्गाप्रसाद न दीनार की तोल आठ माशे हाने का मत व्यक्त किया है।<sup>९</sup>

मोहर—इस स्वण सिक्के का परमान रासा<sup>१</sup> 'हम्भीर हठ'<sup>२</sup> और आल्हखण्ड<sup>३</sup> में उल्लेख मिलता है। आइन ए अकबरी में गोल तथा चौकार दो प्रकार की माहरो का उल्लेख किया गया है। आपताबी न मक गोल माहर का वजन एक ताला दो माशा पौन पाच सुख होता था और उसकी कीमत बारह रुपये होती थी। इलाही नामक गाल मोहर तथा जलाली नामक बगाकार मोहर बारह माशे पौन दो सुख वजन की हाती थी तथा उनकी कीमत दस रुपये हाती थी। ये माहरें जस जस घिसती जाती थी, उनकी कीमत भी घटती जाती थी। बाजार में गाल मोहर का प्रचलन अधिक था, जिसमें चार सौ दाम होते थे। जब वह छ स लेकर नौ चावला के भार के बराबर घिस जाती थी तो उसका मूल्य तीस सौ पचास दाम ही रह जाता था। इसमें और अधिक घिस जाने पर वह सिक्के के स्थान पर स्वण मात्र समझी जाती थी।<sup>४</sup>

१ स ७—दे०, 'रा० वि०', २।१०६, वही, १०।१६ 'हि नू सम्यता', पृ० १७४, 'प० रा०' का० ५६०।१२५ पर० रा०', २४।८७

२ दे० आइन ए अकबरी', भा० १, पृ० ३७

३ "सतवा चित्र महाराज चद्रगुप्त के साग की मुद्रा है। X X X यह सुवणमुद्रा भी दीनार कहलाती थी। गुप्त राजाओं ने कुषाणों को जब परास्त किया तो उनके प्रचलित साने के दीनार की तोल का अपना सिक्का भी बनाकर चलाया। तभी में मस्कून में यह आठ माशे का सिक्का दीनार कहनाम लगा।"

—'ना० प्रचा० पत्रिका, स० १६६७ वि० पृ० ६

४ स १३—दे० 'पर० रा०', १८।२६, ह० ह०, ग्वा, ४२ आ०', २३।१६, आइन ए अकबरी, भा० १, प० ३० ३४

टका—कवि विद्यापति ने लोदी काल में साने के टका का प्रयोग दिया है।<sup>१</sup> जबकि ब्रजभाषा मूरखोण में टका चादी का सिक्का बताया गया है।<sup>२</sup> 'एन एडवास्ड हिस्ट्री ऑफ इण्डिया' में टका की त्रय क्षमता अंग्रेजी राज्यकाल के रूप में बारह गुनी बताई गई है।<sup>३</sup>

रपया—चादी के रूपया का राजविलास<sup>४</sup> सुजानचरित<sup>५</sup> शिवराज भूषण,<sup>६</sup> हुम्मीर हठ<sup>७</sup> और आल्हलण्ड<sup>८</sup> में प्रचलन दिखाया गया है। अकबर काल में माहुरा की भाँति चाँदी के रूपय भी गोल तथा चौकोर दो प्रकार के होते थे। चौकार रूपय में जिसे जलाल कहते थे—चालीस दाम हात थे, जबकि गाल रूपया उनतालीस दाम का होता था।<sup>९</sup>

दाम—दाम का पञ्जीराज रामो,<sup>१</sup> सुजान चरित<sup>११</sup> और राजविलाम<sup>१२</sup> में उल्लेख मिलता है। यह ताँबे का सिक्का था तथा अकबरकाल से पूरा इमक निग पैसा और बुझोली मनाण प्रचलित थी। इसकी बाजार में तो त्रय क्षमता घटती बढ़ती रहती थी, किंतु राजकीय व्यवहार में एक रूपय में चालीस सख्या निश्चित थी।<sup>१३</sup>

कौड़ी—पञ्जीराज रामो कीतिलता और क्यामरौं रासा में कौटिया से भी विनिमय का प्रचलन दिखाया गया है। महाराज बीमलदत्त के राज्यकाल में एमी अयबस्या फतवी है कि कोई कौड़ी के मूल्य तक हाथी खरीदन को प्रस्तुत नहीं होता।<sup>१४</sup> विद्यापति ने मनिक् शिविंगे में बहुत सी कौड़ियाँ देने पर थोड़ा सा गेहूँ मिलन का चित्रण किया है।<sup>१५</sup> कवि जान ने भी कौड़ी की त्रय क्षमता दिखाई है।<sup>१६</sup>

यातायात के साधन—भारत में के लिए पशुधन में से हाथी, ऊट गधर गगा, बल और महिषा का प्रयोग किया जाता था। कवि चन्द ने शिखर में मार गय पशु हाथी और ऊट पर लादकर लाय जान दिया है।<sup>१७</sup> विद्यापति ने सय नामघोष कहने में खच्चर, गदह बल और महिषा के प्रयोग<sup>१८</sup> करने का प्रचलन दिया है। उड़ाने गाटिया का प्रयोग नहीं दिया है जिसका कारण कदाचित ऊबड़ खावट और नदिया से मुक्त प्रदेश की यात्रा रही है। कवि मान ने राजममुद्र के विमाण-वाय में

- १ पान का लए सानाक टका चान्न क मून इअन विगा। 'कीर्ति० प० ६८  
 २ ब्रजभाषा मूरकाश, भा० ४ प० ६७२  
 ३ 'सन १६५१ में प्रकाशित एन एडवास्ड हिस्ट्री ऑफ इण्डिया' में टका की त्रय-क्षमता रूपय से बारह गुनी प्रदर्शित की गई है—६० भा० २ प० ३६८  
 ४ न १२—६० रा० वि०, २१०६ म० च० १३।३६ शि० भू० १८५,  
 ६० ह० खा० ४२ या० ७८।११, 'प० रा का० २०६१।२१२  
 'मू० रत्ना०', प० ११०, रा० वि० १४।३  
 १३ स १८—६०, आदन ए अकबरी भा० १, प० ३२ 'प० रा', का० ७८।२६४  
 कीर्ति० प० ६८ 'क्या० रा०', छ० ४६५ 'प० रा', का० ३१।१।०५  
 कीर्ति०, प० ६४

सामान्य ढान के लिए वपन, महिष और करम (हाथी या ऊट का बच्चा) प्रयोग करन का चित्रण किया है।<sup>१</sup> बोभा ढो के लिए गाडिया या शकट भी प्रयुक्त किए जाते थे, कवि चन्द न गाडी और मान न शकट का उल्लेख किया है। यह तथ्य उल्लेखनीय है कि न य सामग्री के बहन के लिए जिन याना (गाडिया) का प्रयोग किया जाना था, उनमें कवि मान न अश्व और वपभा क अतिरिक्त सांभर और राक (नीलगाय) जोतन का भी प्रचलन दिखाया है।<sup>२</sup> प्रतीत होता है कि इन्हें बना स पकडकर दम काय के उपयुक्त क्षिप्त कर लिया जाता होगा। जोधराज न भार-बहन के लिए ऊटा का प्रयोग दिखाया है।<sup>३</sup> कवि चन्द न बहारा द्वारा कावरा म भी बाभा ढाने का प्रचलन दिखाया है।<sup>४</sup>

### आयात-निर्यात

वी-काय म उपलब्ध निर्देशों के आधार पर आयात क मुख्य उपादान अश्व और शम्भान्न सिद्ध हात हैं। विभिन्न नरेशों की सनाया म अरबी तुर्की तासारी, विनायनी, कच्छी और सिन्धी आदि जातियों के अश्वों क उल्लेख म अशवा का आयात परिचित हाता है। पृथ्वीराज रासा क्यामखा रासा और ब्रान्हखण्ड म उनके आयात के स्पष्ट बचन भी मिलते हैं। रासा म अजमेर-पति अरज स आय सौदागरों के सवा लाख दामा क मूल्य क अश्व क्रय करत दिखाए गए हैं।<sup>५</sup> उसमें धीर पुण्डीर ईराक से आय सौदागर स पांच सौ एराकी अश्व पंद्रह लाख दामा म खरीदत चित्रित किया गया है।<sup>६</sup> रासोकार १ अयन भी धीर पुण्डीर का सौदागरा से दानसदृश अश्व क्रय करत दिखाया है।<sup>७</sup>

क्यामखा रासा मे शाह बहलोल लोदी ईराक से अश्व मगवाते चित्रित किये गए हैं।<sup>८</sup> ब्रान्हखण्ड मे अशवा के क्रय हेतु विदेशा म जाने की प्रथा लिखाई गई है। उसमें महाराज परमाल काबुल से अश्व क्रय करत के लिए चौदह खच्चरो पर मोहरों सादकर उल्ल को भेजते हैं।<sup>९</sup> अशवा के आयात के सदम मे यह तथ्य भी उल्लेख्य है कि क्यामखा रासा म महाराज पृथ्वीराज काबुल स दूब का भी आयात करते चित्रित किये गए हैं।<sup>१०</sup> अशवा की भांति तलवारों के क्रय हेतु विदेश मे जान अशवा विदेशी व्यापारियों को उनके विक्रय हेतु भारत आने का तो चित्रण नहीं मिलता, किंतु बीर-

१ से ४—दे० रा० वि०, ८१४२, 'रा० वि०', १०४५, 'ह० रा०', ३७६,

'प० रा०' का० ३१४।१०५

५ 'कावरी क बहारा, कितिक स्वाननि मुक्क सुटिप १' प० रा', का० ३१४।१०५

६ "मुह मगि दाम करे कौल बोन । जिहे पत्र स हैवर हरि माल ।

जमा जारि मड सवा लप्य दाम । लिये काणद कायय अक ताम ।"

'प० रा०' का० ००५३।७५

७ से ११—दे० प० रा०, का० २०६१।०१२ वनी, ००६६।४१६, 'क्या०

रा०' ०१८, 'भा०' २३५।१५ १६, 'क्या० रा०', ६५

कायम विलायती छुरा का प्रयोग दिखाया है।<sup>१</sup> इससे प्रतीत होता है कि इनका भी आयात होना रहा होगा। वीरकाव्य में चेंणी या चीणी नामक जिम कपड का उल्लेख मिलता है,<sup>२</sup> वह चीन से आयातित रेशमी कपडा होता था।<sup>३</sup> इससे रेशमी वस्त्रों के आयात पर प्रकाश पड़ता है।

निर्यात के विषय में, वीरकाव्य में अधिक निर्देश नहीं मिलते। कवि मान न वस्त्रों के समुद्री व्यापार अर्थात् निर्यात पर मुसलमान सौदागरों का आधिपत्य अग्रिम्य प्रदर्शित किया है।<sup>४</sup> अनुमानतः निर्यात में ऐसे वस्त्रों की प्रधानता रहती होगी जिनके सम्बन्ध में कवि चन्द ने दिवा प्रकाश में भी तारन दिखाइ देन का उल्लेख किया है।<sup>५</sup> एतिहासिक साक्ष्यों से पता होता है कि शुंग सातवाहन काल में भी इस वस्त्रों की राम में बड़ी भाग थी। वहाँ के एक लेखक ने उल्लेख किया है कि रोमन मंत्रियों हवा की जाली की भाँति बारीक बुनी हुई भारतीय मलमल को पहन कर अपना सौ अर्थ प्रदर्शित करती हैं।<sup>६</sup>

वस्तुओं के मूल्य—वीरकाव्यद्वारा के किसी अर्थ में सामान्य स्थिति में तो वस्तुओं के भावों का उल्लेख नहीं मिलता किन्तु युद्धावसरो पर वस्तुएँ किस सीमा तक महँगी मिलने लगती थी इस विषय में निर्देश मिलते हैं। कवि विद्यापति के अनुसार शाह इब्राहीम लोदी के सैनिकों को पान खरीदने के लिए स्वण टका दना

१ (क) जमघर छुरा सु विलायती जिनको बिलोकन जम वसै।

— हि० व० वि० ११६

(ख) 'चल जुनब्वी ओ गुजराती उना चन विलायत क्यार। आ०, १६।१२

२ (क) 'तनामुख सूफ पटोर दरयाइ खीरोदक पितावर चेनी पितावर लहाइ।

— रा० वि० २।११२

(ख) 'मदुतूल मसघर विविध रंग। मिस्र दुमास चीनी सु चग। वही, १५।१७

३ (क) डॉ० भरतप्रसाद मजूमदार ने बारहवीं शताब्दी में चीनाशुका का प्रयाग प्रदर्शित करते हुए उस चीनी रेशम का बताया है, दे० 'द सोशियल इगनामिक हिस्ट्री आफ नाथ इण्डिया ५० १६४

(ख) 'एन एडवांस्ट हिस्ट्री आफ इण्डिया में मुगलकाल के अन्तगत चीन से चीनी मिट्टी के बरतन तथा कच्ची रेशम आयात करने का प्रचलन दिखाया गया है (दे० भा० २ पृ० ५७५)। अतः या तो चीन से रेशमी कपडा वही आयात किया जाता होगा अथवा चीनी रेशम से भारत में बुन गये कपडे का चेंणी या चीनी कहने का प्रचलन रहा होगा। —शापक

४ 'कित तहँ बोटर भागुर वल, कर बट्ट वस्त्र व्यापार समुद।' रा० वि०, २।१२०

५ 'विषक बजाज सु बचहि सार। छुप्रन नवागर मूमहि तार।

— प० रा०, भा० १६४।१४२०

६ भार० म० और उसका इति०', प० २७६ पर उल्लेख।

पड़ता था ।<sup>१</sup> इस स्वण टके की कीमत मन १९५१ म रुपये से बारह गुनी स्वीकार की जाती थी ।<sup>२</sup> विद्यापति न अय वस्तुआ के मूल्य पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि बहुत सी कौडियां दन पर थोड़े से गहूँ मिल पाते हैं । धी के लिए घाटा बचना पड़ता है जबकि शरीर म लगाने के लिए कच्चे तेल के लिए बादी या दास स हाथ धान पड़न हैं ।<sup>३</sup> मून के अनुमान रम न आ पान की दशा म दाना और घास बहुत महंगे हो जाते थे तथा आटा रुपये सेर मिनन लगता था ।<sup>४</sup> आल्हकार ने भी युद्धस्थल म एक एक मुहर के प्रतिदान म एक बटारा पानी मिल पान का उल्लेख किया है ।<sup>५</sup>

वस्तुआ के उपयुक्त मूल्य युद्धवस्थाआ की अति साधारण दशाआ के ह । विद्यापति द्वारा प्रदर्शित क्रेता भी ऐसे मुगल घगड थे, जिनका व्यवसाय उहाने लूट-पाट करना तथा शत्रु रमणिया का बाजारा म बच दना दिखाया है ।<sup>६</sup> अतः इस व्यक्ति वस्तुआ की अत्यधिक उंची कीमतें चुकाने म न हिचकत हा तो क्या आश्चर्य ! वैसे ऐतिहासिक मादयो स पात हाता है कि दुर्भिक्ष आदि के समय तो वस्तुआ के मूल्य अत्यधिक बढ़ जाते थ, कि तु साधारणतया व बहुत सस्ती रहती थी ।<sup>७</sup>

अय वस्तुआ म स उत्तम काटि क घोड़े अत्यधिक मूल्यवान हाते थ । पञ्जीराज रासा म पाँच सौ ऐराकी अश्वो का मूल्य पंद्रह लाख दाम प्रदर्शित किया गया है ।<sup>८</sup> जिसस एक अश्व का मूल्य तीन हजार दाम मिद्ध होना है । रासा म प्रदर्शित मूल्य आईन ए अकबरी म उल्लिखित मूल्य के निष्कर्ष पर खरा उतरता है । उसम शाही अस्तबल क घोडा का मूल्य दस और बीस माहरा स अधिक दिखाया गया है ।<sup>९</sup>

१ 'पान क लए सानाक टका चादन का मूल इधन विका ।' —कीर्ति० प० ६८

२ मन १९५१ ई० मे प्रकाशित एन एडवास्ड हिस्ट्री ऑफ इण्डिया भा० २ प० ३६८ पर टका की अय क्षमता रुपये स बारह गुनी प्रदर्शित की गई है ।

३ 'बहुल कौडि कनिक थाड, घोवक बेचा दीअ घोड ।

करुआ क तेल आग लाअ बादा बड लसओ छपाइअ । —'कीर्ति', प० ६८

४ 'अस तुम कहत फौज की आवन सा आवन नहि पाव ।

दाना घास घोष आटा जब रुपये सेर बिकाव ।' —सु० च०' १।३।१६

५ 'मुहर कटोरा पानी हुदगो डूडें जल मिलिब का नाहि ।' —'आ०' १२७।१७

६ 'अध घागड कटकहि लटक वड जे दिस घाडें जायि ।

त दिस करी राए घर तरणी हठट विकायि ।' —कीर्ति० प० ६०

७ दे० एन एडवास्ड हिस्ट्री ऑफ इण्डिया' भा० २ प० ३६८ ६६

८ ऐराक तुरिय स पक्ष ल । सोलगर इसप कहै ।

दिय दाम दम लप्प । पच लप्पह रहि बाकिय ।'

—'पृ० रा०', का २०६।१।२।२

९ दे० आईन ए अकबरी भाग १, प० १४२ । इसे इस प्रकार भी समझा जा सकता है कि घोडा का मूल्य लगभग तीन सौ से लकर सात सौ मन गेहूँओ के मूल्य क बराबर होता था । —शोधक



(एक मोहर में तीन सौ पचास से लेकर चार सौ तक दाम होते थे) जो चार हजार दाम से लेकर आठ हजार दाम से भी अधिक सिद्ध होता है। अक्षरकाल से पूर्व कदाचित्त वस्तुएँ और भी सस्ती रही होगी। अथ वीरकाव्य प्रणेताओं में से कवि विद्यापति ने एक लाख अश्वत्था का मूल्य सुमेरु पर्वत के भार के बराबर स्तव्य बताया है।<sup>१</sup> कवि मान ने भी अश्वत्था का मूल्य उसके भार के बराबर स्तव्य प्रदर्शित किया है।<sup>२</sup> इन उल्लेखों का अभिप्राय यही है कि अश्वत्था का मूल्य अत्यधिक होता था। इस तथ्य का निवेदन भी अप्रासंगिक न होगा कि बौद्धकाल में भी एक घाड़े की कीमत एक हजार से लेकर छह हजार कार्पाण तक होती थी जबकि बटुन से दास और दासियों का मूल्य सौ कार्पाण मात्र ही होता था।<sup>३</sup>

यदि कवि मान ने मजदूरों की मजदूरी और उनकी सरथा निर्दिष्ट करने में औचित्य का निर्वाह किया है, तो उस समय एक सहस्र दीनार से प्रतिदिन एक लाख शिल्पकारों का लाभ बेलदार और चार लाख मजदूरों का वतन दिया जा सकता था।<sup>४</sup> कवि मान का उल्लेख अक्षरकाल पीड़ित लोगों को राज्य की श्राव से काय प्रदान करने से सम्बद्ध है अतः यह भी सम्भव है कि सात लाख मनुष्यों तथा उनके साथ काम पर लगे हाथी और महिष आदि पशुओं का भरण पोषण पर महाराज एक सहस्र दीनार व्यय करते थे। आठ भागों की एक दीनार की त्रय क्षमता लगभग दो सौ साठ दाम के बराबर रही होगी यदि वह उतने ही विशुद्ध स्वर्ण की होती थी जितनी की की मोहर होती थी।<sup>५</sup> आल्लखण्ड में सैनिकों का वेतन दस रुपये बताया गया है।<sup>६</sup> जिसके आधार पर कहा जा सकता है कि हमारे आलाच्यकाल के अतिम भाग में दस रुपये में एक साधारण गृहस्थ का भरण पोषण हा जाता होगा। इस सन्दर्भ में यह निवेदन अप्रासंगिक न होगा कि अक्षरकाल में एक रुपये के लगभग साढ़े तीन मन गेहूँ खरीदे जा सकते थे।<sup>७</sup>

### (क) मणि-मुक्ताओं की खानें

आलोच्यकाल में खानों के ठेके लेने का व्यवसाय भी अति महत्त्वपूर्ण रहा होगा। ऐतिहासिक विवरणों से ज्ञात होता है कि राज्यों द्वारा खानें बहुधा ठेकों पर उठा दी

१ स २—द० कीर्ति०, प० ८४, 'रा० वि०', ७।६० ६१

३ द० 'भारतीय सभ्यता और उसका इतिहास' प० १८७ ८८

४ 'रा० वि०' १।१४१ ४२

५ आई० ए० अक्षरकाल में बारह मास पीने का सुख वजन की मोहर की कीमत चार सौ दाम दी गई है—द० भा० १ प० ३३

६ दम दम रुपिया का नौकर है नाहिक टरिही मड बताया। — घा०, ७८।११

७ आई० ए० अक्षरकाल में गहूँ का मूल्य लगभग बारह दाम प्रतिमन हान का उल्लेख किया गया है जबकि रुपये में चाणोम दाम हान थे—द० भा०, १, प० ६५

जाती थीं।<sup>१</sup> इन खानों के ठेकों में मणि मुक्तादि की खानों के ठेकों का विशेष महत्त्व रहा होगा। वीरकाव्य में मणि मुक्ताग्रा का उल्लेख उपभोग चित्रित करते हुए, राजकीय परिवारों में कहीं दरवाजा पर मुक्ताग्रा की झालरें दिखाई गई हैं और कहीं मणि-जटित सरोवर मापान।<sup>२</sup> महानों में जटित नीलमणियों की आभा से दिवस में भी रात्रि की भन्क और खाला की आभा से रात्रय-घण्टार के भी निम्न में परिणति हो जान, हीराग्रा की किरणों से आकाश में श्वेत चितान जस तन दिखाई देने तथा अग्नि में प्रवाल जाल जलिन हान के विवरणों से भी मणि मुक्ताग्रा के उल्लेख प्रयाग पर प्रयाग पडता है। इसके साथ ही कवि चन्दन कानाज और दिल्ली में तथा मान न उदयपुर में जोहरी मणिग्रा मुक्ता लाल प्रयाग, पना, पुनराग, नग और हीरा की डेरिया बेचत प्रदर्शित किए हैं। भूपण न ता अकन मूरत नगर से ही महाराज शिवाजी हीरा मणि मणिग्रा की लाख पाटलिया खूटन चित्रित किए हैं।<sup>३</sup> भूपण का यह उल्लेख निरा काल्पनिक नहीं है। कारण यह है कि आलाच्यकाल में पाश्चात्य यात्री प्रायः मणि मुक्ताग्रा का ही त्रय चित्रित करत भारत आते थे। उनमें से बनियर और टवनियर न भारतीयों की इस दुष्टप्रवृत्ति का उल्लेख किया है कि वे इस अविश्वास से मणि मुक्ताग्रा को जमीन में गाड़ दिया करत हैं कि वे हमें पुनः नम में काम देंगे।<sup>४</sup> बनियर ने मत व्यक्त किया है कि बहु-मूल्य जवाहरातों का जमीन में गाड़ने की प्रथा के कारण ही भारतीय बाजारों में उनका एक काल्पनिक अभाव दिखाई देता है, जबकि वस्तुतः उनकी कमी नहीं है।<sup>५</sup> टवनियर न उक्त अविश्वास से प्रेरित होकर भारतीयों द्वारा (विशेषतः असम प्रदेश के निवासियों द्वारा) अपाग स्वण, रजत और मणि मुक्ताग्रा को जमीन में गाड़ने की पद्धति का उपहास करते हुए कहा है कि, वस्तुतः वे भारतीय निधन ही

१ सब खानों राजकीय संपत्ति समझी जाती थी। कुछ ता सरकार स्वयं खुदवाती थी, और कुछ ठेके पर दे दी जाती थी। — 'प्रा० भा०, भा० प्र०', प० २०४ २ से १०—३० 'वी० च० २०१६, शि० भू०', १६, वही ३३६, वही, १७, वही, २० 'प० रा०', का० १६४२।४४४, वही १५५६।३०, 'रा० वि०', २।१०७, भू० प्र०' स्फु० ५५

११ "artisans and merchants whether Mahometans or Gentils but especially among the latter who possess almost exclusively the trade and wealth of the country and believe that the money concealed during life will prove beneficial to them after death"

— Travels in Mughal Empire Bervier pp 225 26

१२ 'I have no doubt that the habit of secretly burying the precious metals and thus withdrawing them from circulation is the principal cause of their apparent scarcity in Hindoos ..'

समझे जाते हैं। उनका अर्थ्य जमीन मानी गया था।<sup>१</sup> टर्नियर ने साम्राज्य विराजी द्वारा बीजापुर राज्य के कनिष्ठा वंशनी नामक शहर में भूमि मालिकी का प्रसार सम्पत्ति सूटका का भाव उत्पन्न किया है।<sup>२</sup> घातक शक्ति भाग्य का शत्रु शक्ति की शक्ति के विरुद्ध तथा साम्राज्यवादी प्रमुख आधार पर<sup>३</sup> मूल्य नगर में महाराज शिवाजी का साम्राज्य विरुद्ध खड़ा जाता गया था।<sup>४</sup> कर्ण का तात्पर्य यह है कि साम्राज्यवादी के घातक शक्ति साम्राज्यवादी के घातक शक्ति का व्यवसाय शक्ति समुदाय था, तथा दश में उठाया गया भण्डार था।

### (ख) स्वर्ण की खानें

मान की खुदाई और साफ कराने शक्ति का व्यवसाय भी साम्राज्यवादी म शक्ति समुदाय था। परमान रासो<sup>५</sup> और शालग्राम<sup>६</sup> में तो महाराज के त राजाओं के पास 'पारसमणि' हान का उत्पन्न किया गया है और उनका महा-यता से वे शायद के डेर के डेरों को स्वर्ण में परिवर्तित करके चित्रित किया गया है। परमान रासो में मणि आकाश में उड़कर जाते दिखाई गई है।<sup>७</sup> जबकि गनी मन्त्रों पारसमणि को अतल सागर में गिराने प्रदर्शित की गई है।<sup>८</sup> इस चित्रण का शक्ति-शयोक्तिपूर्ण मानन पर भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि चन्द्र के पास शायद परिमाण में स्वर्ण विद्यमान हान की दशा में ही उनके पास पारसमणि हान की विबदती प्रचलित हुई होगी। महाराज पद्मीराज के पास स्वर्ण की भारी मात्रा हान का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि वे कर्नाटी नामक देश को प्रशिक्षित करने वाले व्यक्ति को ही बीम से स्वर्ण प्रदान करते चित्रित किए गए हैं<sup>९</sup> सलखराज स्वपुत्री के दायज में पच्चीस मन वजन के शुद्ध स्वर्ण के भाण्ड देने दिखाए गए हैं।<sup>१०</sup> आज रक्षा कोष के लिए स्वर्ण सग्रह करते हुए किसी प्रांत के समस्त सठ साठकारा और नागरिका द्वारा किसी नती की स्वर्ण तुला का कठिनता से प्रबंध हो पाता है, जबकि महाराज सोमेश्वर का एक बार<sup>११</sup> महाराज जगतसिंह<sup>१२</sup> तथा महाराज राजसिंह का हम कई बार<sup>१३</sup> अपनी स्वर्ण तुला करके उस स्वर्ण को दीनो में विनिरित करते पाते हैं। इन उद्धरणों से स्वीकार करना पड़ेगा कि अग्रजो

१ 'This is the reason why so much gold and silver and so many precious stones are buried in India and an idolater must be poor indeed if he has no money buried in the earth'

— Travels in India, by J B Tavernier p 159

२ See, Ibid P 160

३ See An Advanced History of India, Vol II p 575

४ मे १२—दे० पर० रा०' २१६४ आ० ८०१२०, पर० रा० २१७०  
 'आ० ६२३१२१२, 'प० रा० ८० ६६६१५६, वही ५६०१२२, २४  
 वही ३२६१५ 'रा० वि०, २१५३ वही ८१६० २१५७

के शासन चक्र से पूर्व देश में स्वर्ण का अनुत्पन्न भण्डार था। मुगलकाल में आए विदेशी यात्रियों ने भी इन विषय में ईर्ष्यामिथिल भाव व्यक्त किए हैं कि विश्व का समस्त देशों का स्वर्ण भारत की आरम्भिका जमा आता है, जबकि उसके निष्पन्न का कोई भाग नहीं है।<sup>१</sup>

स्वर्ण का आभूषणों में प्रयोग करने के लिए तो भारत विश्व में विख्यात या कुख्यात है ही आलाचक्रकाल में उसके सर्वाधिक उपयोग साधने के तार्किक चिन्तन में किया जाता था, जिन्हें जरबाफी वस्त्रों और पगड़ी के पल्ला आदि में बुनने का प्रचलन था। कवि चन्द्र और माने ने स्वर्णकारों के काय में आभूषण बनाने के स्थान पर, उनके तार खींचने के कृत्य को प्रमुखता दी है। बर्नियर ने भी जर्मन भाग्य के स्वर्ण भण्डार को मुक्त कठ से प्रशंसा की है। इस दृष्टि में दुःख प्रकट किया है कि स्वर्ण का एक बड़ा भाग उसके पगड़िया और वस्त्रादि में प्रयुक्त बगैरे, व्यर्थ कर दिया जाता है।<sup>२</sup> इस सन्दर्भ में यह तथ्य विशेष उल्लेखनीय है कि मणि मुक्तादि और स्वर्णतारा से निर्मित वस्त्र तथा आभूषणों का चाह हिंदू नरेशों में अत्यधिक प्रचलन रहा हो, अथवा मुगल सम्राटों ने उनका प्रयोग और संचय किया हो भारत की अर्थ-व्यवस्था का यह एक शुभ लक्षण ही था कि देश की ये बहुमूल्य निर्धिया भारत में ही रही अंग्रेजों के शासनकाल में सन्तान उनका प्रवाह विदेशों की ओर उभर नहीं हुआ।

मणि मुक्तादि और स्वर्ण की खानों के सदृश, कदाचित् नमक के बनाने का भी ठेका दिया जाता था। पञ्चीराज रासा में साँभरि भील के पानी के प्रयोग पर कर लाने का उल्लेख किया गया है<sup>३</sup> जो तभी सम्भव हो सकता है जबकि उनके पानी से नमक बनाने का किसी एक अथवा बहुत से व्यक्तियों का ठेका दिया गया हो। बर्नियर ने भी साँभरि भील से निकाले गये नमक का सम्पूर्ण भारत में प्रयाग दिखलाया है।<sup>४</sup> ऐतिहासिक साक्ष्यों से नमक बनाने पर कर लिए जाने की प्रथा का पता चलता है।<sup>५</sup>

### (ग) उद्योग धंधे और व्यवसाय

आलोच्यकाल में यत्र चालित कल-कारखाना का विकास नहीं हो पाया था,

१ द०, ट्रेवल्स इन मुगल एम्पायर, बर्नियर, प० २०४

२ कमिन्स हम सु काइन तार। उगत कि हमहू फ्रन प्रवार।

—'प० रा०', व० १६४१।४४१

३ कित तह बुदन रूप सुनार, सु गारत यत्रनि वदत तार।

—'रा० वि०', २।/१०

४ द०, ट्रेवल्स इन मुगल इण्डिया बर्नियर, प० २२४

५ से ६—द०, 'प० रा०' वा ६६२।१५६, क्याम० रा०', ५०

७ द० प्राचीन भारतीय शासन-पद्धति, प० २०१६

जिसमें यह प्रथम गुटीर उद्योग का ही बहू प्रचलन था। इन उद्योगों की भी भारत में प्रथम दशा की तुलना में यह विशेषता रही है, कि इन उद्योगों पर जाति विशेषता का प्रभुत्व रहा है और प्रायः वे ही उनके उत्पादन और विश्रय दोनों कामों को संभालती रहीं हैं। जिसमें वे उद्योगों के स्थान पर जातिगत व्यवसाय प्रतीत होने लगते हैं। भारत की रंग शूटी परम्परा के क्या हानि लाभ रहे हैं इस विवाद में न पड़ते हुए भी हम यह निवेदन करना चाहते हैं कि वीर गायन में उपलब्ध निर्देशों से मुख्यतया हाथों से बनाए गए वस्तुओं का उत्पादन मशीनों से भी उच्च कोटि के सिद्ध होते हैं। आलोच्यकालीन उद्योगों में सर्वाधिक समुन्नत वस्त्र उद्योग गिराया गया है जिसमें भिन्न भिन्न प्रकार के उत्तमात्मक वस्त्रों की लगभग अस्सी विस्मा का उल्लेख मिलता है। शस्त्रास्त्र और अस्त्रास्त्रों के निर्माण का उद्योग भी पर्याप्त उन्नत रहा होगा क्योंकि उनकी बहुत लम्बी नामावली मिलती है। अस्त्ररूप बना का विवरण बहुसंख्यक शस्त्रास्त्रों को घनिष्ठ करता ही है। इसी प्रकार हाथी दाँत की वस्तुएँ बनाने, इत्र और सुगंधित तेल बनाने आभूषण बनाने, स्वर्ण के तार खींचने काच की चूड़ियाँ और हार बनाने से सम्बद्ध उद्योग और व्यवसाय भी सामाजिकता के बग विज्ञानों के वित्तोपायन के साधन थे।

वस्त्र वचन—आलोच्यकाल में वस्त्र व्यवसाय बहुत समुन्नत था। पृथ्वीराज रासो में कवि चन्द ने इच्छिनी ऐसे वस्त्रों का प्रयोग करते<sup>१</sup> तथा कन्नौज के बाजार में ऐसे वस्त्रों का विश्रय प्रदर्शित किया है,<sup>२</sup> जिनके तारों की प्रतीति दिवा प्रकाश में भी छूने पर ही होती थी। कवि मान ने उदयपुर<sup>३</sup> गुजरात के ईडर, दुर्ग<sup>४</sup> तथा मालवा के नगरो

१ पाटवर अमर बसन । दिवस न सुझहि तार ।

—'प० रा०', का० ५५०।४६

२ विवेक बजाज सु वेचहि तार । छुप्रत नवासर सुझहि तार ।

—वही, १६४।४३८

३ कित बहु मौलिक वस्त्र बजाज मह जरबाक मुखमल साज ।  
मसज्जर नारिय कुजर मिश्रु सुभ सिकतात दुमास सहस्र ।  
मनोसुख सूप पटोर त्रमाइ, खीरोदक चैनी पितावर त्हाइ ।  
मनोसुख पामरी साहिवी पाट, हीरागर सेनिय हीर सगाइ ।  
भरच्छिय भैरव माइ सभार सुमी महमुदी सु सिदलि सार ।  
मुना टुक्री थी माथ अटान सला पचतारिय तास सुजान ।  
मलमन साहि चौतार दुतार उप दक्तर सु घोन अषार ।  
सु सारिय चौरस रंग रमील दिखारहि अघ दलाल अमीत ।

— रा० वि०, २।१११ १४

वही १५।१७-२०

६ म<sup>३</sup> बजाज अनेक प्रकार के वस्त्र बचते प्रदर्शित किये हैं। तीना सूचियों में कवि मान न प्रायः एक जैसे ही वस्त्रों की निम्नलिखित नामावली दी है—जरबाफ, मलमल ममज्जर, नागिय या नारी, कुजर मिस्रू (आल्हकार ने मिस्रू का पाजामा बनाने का उल्लेख किया है) <sup>२</sup> सिकलात, दुमास, तनोमुख, मूफ पटार, दरयाइ, खीरोदक (यह जायसी का 'समुद लहर' नामक वस्त्र का <sup>३</sup> अपर नाम प्रतीत होता है) चेंनी या चीणी, पितावर, रूहाइ, मनोमुख, पामरी, सहिबी पाट, हीरागर सेंनिय, हीर पाट या 'हीर मगाड', भरच्छिय, भरव, मारू, महमूरी, मिर्दास, सार, भुना टुक्की श्री साप, अटान, सना, पंचतोडिया, सामा मलमल, चानार, हुतार, इक्वार, खानिया, चौरसे या साडियाँ, अतलस बुलबुन, बसमा पाट, सालू, साही दुमाना (आल्हकार ने दुमाने का जामा बनाने का उल्लेख किया है), दुलाचा चद्र पट उत्तर पट और भीन पान ।

कवि मान के सरश सूत्र न भी दिल्ली की सूट का वर्णन करते हुए, वस्त्रों के त्रिविध रूपों पर प्रकाश डाला—रुमाल, दुशाता, पटटू चूनी (यह कवि मान का चेंनी या चीणी का अपर नाम प्रतीत होता है) जाली, मगमल बनात सिकलान छोटे पटवर, पशमीना के कबरा, जरदाजी, मुक्केनी दाना कानी, मसरू (यह कवि मान के मिस्रू या मिश्रू का अपर नाम प्रतीत होता है) वादना दरयाइ नौरग साही जरकम, ताफता, कलदर, बाफत-बदर, मुसज्जर श्री सकर (यह मान का सीमाप का अपर नाम प्रतीत होता है) विलदी, मानिक-चना, चौखान, कीमखाव, सालू और खादी ।<sup>४</sup>

वस्त्रों के उपयोग के विवरण ने आलाच्यपाल में वस्त्र उद्योग की अतीव उन्नत दशा का बोध होता है । बहिस्साध्या में खनात नामक यात्री ने बगाल में ऐसी महीन

१ 'रा० वि० १७।३८३५

२ पश्चिमि पाजामा मिस्रू वारा जामा पैधि दुजामी क्यार । — आ० ८६।११

३ तीवइ कबल मुगय सरीम, समुद लहरि साहै तन चीर ।

— पञ्चात, सपा० डा० मनमाहन गौतम, पृ० ११७

४ रुमाल दुशाता पटटू आना चूनी जाला मोभ बनी ।  
मलमल व नाते अरु सफलाते भानिनु भाते छोटे घनी ।  
वस्त्र पटवर पशमी कबर धवल सुधवर कौन गन ।  
जरदोज मुक्केसी दाना केसी मसरू बसी लत बन ।  
शांला दरयाइ नौरग साइ जरकस काइ भिन्नमिल है ।  
ताफता कलदर बाफत बदर मुसज्जर सुदर गिलमिल है ।  
श्रीसकर विलदी झरि घरदी मानिक चदी चौखान ।  
किमखाव सुसालू खादी सालू चाल चालू जगजान ।

मलमल धुन जाने का उल्लेख किया है कि उसके लगभग चालीस गज के धान का भार पार घोंस मात्र ही होता था ।<sup>१</sup> आईन ए अकबरी में भी तत्कालीन विभिन्न प्रकार के वस्त्रों की नामावली दी गई है । उसका उद्धृत करना तो अनपेक्षित है किंतु उससे यह तथ्य अत्यंत प्रकाश में आता है कि चोरा, दुपट्टा, कीमत्ताव, तापता दाराइ लाह (लहाइ) मिमरी (मिखू) और सार, सुनही तथा रेशमी कपड़े होते थे, जबकि सासा, चोतार, मलमल, तनमुख, सिरीसाफ, भुना, अटान, महभूरी, पचतोलिया, सालू, डारिया सला, दुपट्टा और छोट सूती कपड़े होते थे ।<sup>२</sup>

सुधोपकरणों का निर्माण—वीरकाव्य में शस्त्रास्त्रा और अग्नयंत्रों के जितने भेदोपभेद दिखाए गए हैं तथा सेनाओं की जिम रूप में बहते सैन्यायें प्रदर्शित की गई हैं उनसे इसमें सन्देह नहीं रहता कि इनके निर्माण द्वारा सामाजिकों का एक बहत बड़ा जीविकाजन करता होगा । इनका निर्माण कदाचित् राज्य प्रथम में कराया जाता था, यही कारण है कि विभिन्न राजाओं का वर्णन करते हुए वीरकाव्य प्रणेताओं ने शस्त्रास्त्र और अग्नयंत्रों का विनय करने वाली दुकानें नहीं प्रदर्शित की हैं । हाँ कवि विद्यापति ने जौनपुर में तोर कमान विनयनामा की दुकान प्रदर्शित की है ।<sup>३</sup> आल्टरलण्ड में डाला का निर्माण और विनयनामा का 'डबगरो' की सजा दी गई है, तथा इस तथ्य पर प्रकाश डालता है कि जयपुर की डालें विशेष प्रसिद्ध थीं ।<sup>४</sup> तलवार और छुरी आदि पर ध्यान रखने तथा सफाई करने वाले सिकलीगर कहलाते थे, जिनकी कविमान ने उदयपुर में अनेक दुकानें प्रदर्शित की हैं ।<sup>५</sup> कविमान ने सुधोपा की दुकानें भी दिखाई हैं<sup>६</sup> जो तलवार विनयनामा की दुकान रही होगी ।

सुगंधित तल और इत्र बनाना शृंगार प्रसाधनों पर प्रकाश डालते हुए सुगंधित द्रव्यों का बड़ा प्रचलन का पीछे उल्लेख किया जा चुका है । कविमान ने उदयपुर में

and the rich have them (turban) of so fine a cloth that five and twenty or thirty elles of it which are put into a turban, will not weight four ounces These lovely clothes are made about Bengala — Indian travells of Thevenot and Careti p 527

१ आईन ए अकबरी भा० ३ प० ६८ १०१

२ तही तथ्य बूजा तवन्ता पसारा कही तीर कमान दोबकाण दारा ।

—कीर्ति० प० ३८

३ बनुचा डारिनय डालन के और डबगर का भेप बनाय ।

× × ×  
हमें न मरिघो हमें न मरिघा हम उबगर हैं जपुर बघार ।

—घा०' ५६४।१६ २२ और भी २०—१०१।१५-१६

४ मुनी भरभूज कमार टठार घरें सिकलीगर सस्त्र सुघारि ।

—'रा० वि०', २।१३५

५ जिन सब नीच मनीगर सब सुधोप कलीति करानि पच । —वही २।६६

जूही, करनी, मुगरल, चपा, केतकी, केवडा, बूदरू, गुलाब और मालती के तेल और इना का विनय प्रदर्शित किया है<sup>१</sup> जिससे स्पष्ट होता है कि इत्र उद्योग निश्चय ही समुन्नत रहा होगा।

हाथी दाँत की वस्तुएँ बनाना—हाथी दाँत की प्राचीनकाल में रत्नों में परिगणना की जाती थी,<sup>२</sup> तथा उससे आकृति प्रकाश की वस्तुएँ निर्मित की जाती थी। कवि मान ने उदयपुर में हाथी दाँतों को खराद पर चढ़ाकर भाति भाति के सुंदर उपकरण करने का उद्योग प्रचलित दिखाया है।<sup>३</sup> मान ने हाथी दाँत की बिंदुलियाँ बनाने पर भी प्रकाश डाला है।<sup>४</sup>

काच की चूड़ियाँ आदि बनाना—कवि मान ने उदयपुर के बाजार में ऐसी दुकान प्रदर्शित की है, जिन पर काच के बगन, मुदगियाँ और हारों का विनय होता था।<sup>५</sup> इससे स्पष्ट होता है कि काच की विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ बनाने का उद्योग भी समुन्नत था।

मूर्तियाँ बनाना—विवेच्यकाल में प्रस्तर प्रतिमाएँ बनाने की कला भी बड़ी समुन्नत थी। गोलाल ने महेश्वर की मूर्ति में सीता और राम की ऐसी प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित दिखाई हैं, जो देखने पर ऐसी प्रतीत होती थी माना आपस में बातें कर रही हैं।<sup>६</sup> श्रीकृष्ण की प्रतिमा भी सचमुच ही मकलन खाती प्रतीत होती थी।<sup>७</sup> जेशवदासजी ने महाराज वीरसिंह देव के दरबार द्वार पर ऐसी सिंह आकृतियाँ गड़ी दिखाई हैं, जिन्हें देखकर हाथियों को वहाँ जीवित मिट्टी खड़े होने का भ्रम हो जाता था और वे चिंघाड़त हुए पलायन कर जाते थे।<sup>८</sup>

वाद्य यंत्रों का बनाना—प्राचीनकाल में वाद्य यंत्रों के बनाने वाले तालाप चारा कहलाते थे।<sup>९</sup> वीरकाय में उनके लिए किसी सजा विशेष का ता प्रयोग नहीं मिलता किंतु विभिन्न जीवनावसरो पर अनेक प्रकार के वाद्य यंत्रों का प्रयोग दिग्मान के साथ साथ बाजारों में उनकी विनय करने वाली दुकानें प्रदर्शित की हैं। कवि सूदन ने दिल्ली की इसी प्रकार की दुकानों का—दुधुभि, पटह मदन, डोलक डफला, टामक, मँदरा तमल सुमेरु खजरी, तबला धामक, जलतरंग कानून, अमत गुडली वीणा सारंगी रबाब सितार, महुअरि शहनाई, भेरी तुरही दरक, बशी, गामुख, वाकिया धलगोजा, ताल, कठताल, भालर, भाभ मदन भेरी, धूमुर घटा और मुहुचग नामक छत्तीस वाद्यों की सूची प्रदर्शित की है।<sup>१०</sup> निश्चय ही इनका निर्माण समाज के एक अंग के वित्ताजन का माध्यम रहता होगा। अथ व्यवसायों में स आभूषण बनाने (सुनार) उनमें जग जडन (मणिगर), आभूषण मूथन (पटवा), वस्त्र रगन (रगरेज) शराब बनाने (कुलाल) बतन डालने (कँसेरे और भरा), चिनाई करने (चेजगर) पत्थरों को तराशने (सिलावट या सगतराश), लंग और

१ स १०—२० रा० वि०, २१३०, रा० वि०, २१३१, वही, २१३७, वही, २१३७, 'छ० प्र०', ४१४५, वही, ४१५ वी० च०, १७१५, 'भा० स० अ० उ० इ०', डा० स० वि०, प० २४८, सु० च०' ६१२३३-३४



बिना लगे पान बेचने (बीटन और तमोली), मिष्टान बनाकर बेचने (कादविक) चमड़े की वस्तुएँ बनाकर बेचने (मोची चमार) आदि के उल्लेख मिलते हैं।

(घ) नैन-देन

इस सम्बन्ध में वीरकाव्य में अधिक्त निर्देश नहीं मिलते। पथ्वीराज रामो में कहा गया है कि पहले 'भूच' ले लीजिए ब्याज की बाद में देनी जावगी<sup>१</sup> इससे स्पष्ट होता है कि ब्याज पर धन उठाने का प्रचलन अशक्य था। मुजान चरित में माल गिरगी रणकर ऋण लेने की प्रथा पर सखेन मिलता है। धामहर दुग क अधीनक में जगत्त नाम रणय की माँग की जाती है ता यह प्रचलन बताता है कि मेरे पाग दतना धन नहीं और यहाँ वार्डे ऋण लेने को भी प्रस्तुत नया होता। हाँ मैं दिल्ली में धरना सामान गिरगी रणकर उमक बदल में आपना जग नाम की रणगी लिखा मतना है।<sup>२</sup> इसमें स्पष्ट है कि उम काल में सूत पर रणय लिखाने से और सामान गिरगी रणकर भी द्रव्य लिखाने की प्रथा प्रचलित थी।

(च) वनाज्रा के माध्यम से जीविकाजन

(क) काव्य कथा—पाना-पाना में काव्य कथा वस्तुतः उत्तम जीविकाजन का ही माध्यम थी। बिना गुणगान माध्यमता की गाज में कवि गण दर दर नरना करन ध विगना पना करन क व नौजगमत पर महाराज जयन क द्वारा धरन विगना विगारा स गतना है।<sup>३</sup> घनाजरा की इच्छा में पथ्वीराज रामो में रणा रणर का ना गतने से लिखा धान विदित लिखा गया है।<sup>४</sup> वग मनागज पथ्वीराज और उतर सामना में धना गति पुम्मार में प्राप्त करन लीरता है।<sup>५</sup> रणा में करिया का धनुत माना में पुम्मार प्रगत करन की एक प्रकार की प्रतिष्ठा लाना-गाना धान भित क काग्य करियन की लीरता है। करि चर की पयागज रामो में ता धाधुच धारिय स्थिति चित्रित की गई है उम उच्छताटि क करिया की स्थिति का मातक माना जा सकता है। धान लाना है कि इन करिया क भा ध्यतिन एक गदक या गसग हुआ कता थ।<sup>६</sup> उतर तीथ यात्रा धारि का गत समय उता माय गरन और बाहता धारि का गगा विगत रण गम्मितन रणा धा विनक टारन क लिप गगाण रण तर धाध काग लक की स्थिति में पत्र जान।<sup>७</sup> उतर द्वारा राम में लिप रण हाया पान धोर धारा द्रव्य का गस्या भी धार माट नरणा क ममाता हाता था।<sup>८</sup>

करि भुगतन भी दल-रणाकर क गुनी मागा का महाराज गियात्री क दरवार

१—दयन भूत लिखिय। ब्याज धार क नाथ। —पृ० रा०, का० १३३६।६

२ ग ८—पृ० गु० प०, २।३।७७ २८ पृ० रा०, का० १६५।१६८६, यही १२७।६३ वही १२३।१२३ वही १७७।३।१५ १६, 'पृ० रा०, मा० १८६।१४ १० का १८२ १३

प्रायिक स्थिति

मे याचना के लिए माना चित्रित किया है।<sup>१</sup> उनको मन्मथराज शिवाजी मे पुग्म्वार-  
म म धारा वित्त और राहना मित्रता, तथा महाराज म्प्रसाल द्वारा उनकी पानकी  
को कथा देने का तथ्य तो मिथुन है ही, कवि पद्यावर के राजमी वैभव को सूचित  
करने वाला भी एक पद उपलब्ध है। एक बार जब वे जयपुर मे बाँदा जा रहे थे तो  
उनके सावन्तप्रकर को देतकर बूँदी वालो ने समझा कि बिनी धात्रामक नरेश का  
मुनाना पडा कि और उनके विघ्नम को दूर करने के लिए पद्यावर को यह कवित्त  
महाराज प्रतापसिंह का कविगज मात्र है।<sup>२</sup>

भाट चरण और दमोधी प्रादि जातियाँ जिन्होंने प्रशस्ति गान को जाति घम  
के रूप मे ग्रहण कर लिया था इसी कोटि मे रमी जा सकती हैं।  
(ख) नृत्य गान—नतकी-नतक और नट नृत्य और गान स जीविकोपार्जन  
करते थे। वारवधुमा की प्रायिक स्थिति के सम्बन्ध मे यह निर्देश पर्याप्त होगा कि  
कवि चन्द ने उनके आवास धृति उत्तुंग और साज-मज्जायुक्त चित्रित किए हैं तथा  
उनकी प्राय प्रतिदिन साखा मे बसाई है।<sup>३</sup> विद्यापति ने भी उनके आवास विश्वकर्मा  
रचित प्रदर्शित करके, उनकी समृद्धि का अभिद्योतन किया है।<sup>४</sup> नट प्रादि बनारसो  
की स्थिति कदाचित्त अधिक समृद्ध नहीं थी।

(ग) सेवा वृत्ति—इस कोटि मे यद्यपि सामत और उमरावो तक को रखा जा  
सकता है, क्योंकि व भी केन्द्रीय शासक की एक प्रकार से सेवा करते थे तथापि उसक  
सङ्कुचित ग्रथ मे दास दागिया का परिगणन ही समीचीन है। ग्रामीण जीवन मे नाई,  
बर्दई, लुहार घोषो भगी और कुम्हार प्रादि जातियाँ भी अपनी सेवा या टहल के  
प्रतिदान मे निश्चिन परिमाण मे प्रनि छमाही अनज, तथा पारिवारिक सस्कारो के  
भवसर पर नेग प्राप्त करती हैं, निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि श्रालोच्यकाल  
मे इन सवावृत्ति वाली जातिया या नेगियो की क्या व्यवस्था थी। कवि मान न उदयपुर  
की भाँति ही धन के बदले मे सेवाकाय करत हामे। इसी तरह श्रालोच्यकाल मे दास  
और दासियो वचने का प्रचलन तो अवश्य था, किन्तु वीरकाव्य प्रणेतामान न जिन अनक  
दासी और वाँदियो को दहज मे दन का प्रचलन दियाया है व कस उपल-य की जाती  
थी, इस विषय मे कोई निर्देश नहीं मिलता। सम्भावना यही है, कि प्राचीनकाल से  
ही चली आन वाली दास प्रथा प्राशिक रूप मे इस समय भी प्रचलित थी और दास-  
दासिया की सतानें राजमहत्तो मे श्रानुवशिक रूप मे सवा-काय वारती थी।

भिक्षाटन

भिक्षाटन द्वारा जीविकाजन करना सामाजिको के एक वग की विपन्नता और

१ से ५—दे०, 'सि० भू०', २५, 'पया० प्र०', प्रकी० ३, 'प० रा०', का०  
१६४०।४३२, 'की० वि०', प० ३२ 'रा० वि०', २।६४।६५

परिभ्रमण में यथा की मर्यादाओं का प्रकटन करता है। ऐसे स्थितियों की सामान्य  
 भाव में भी कभी नहीं थी। कवि ने ये मर्यादाएँ स्थापित की मर्यादा स्थापित  
 स्थिति किये हैं जिसमें भावन धार्मिक प्राप्त करे या कि मर्यादा ही मर्यादा की प्रकटन  
 रहती होगी।<sup>१</sup> कवि आधुनिक स्थापित करता है। मर्यादा के साथ एक साथ दुष्कार  
 का विचार किया है जो उसकी विशेषता है। प्राप्त की जाये और साथ में भावन  
 प्राप्त करे।<sup>२</sup> इस भी भिक्षु के साथ कवि की स्थिति और दुष्कार, स्वीकार  
 किया जा सकता है। विष्णु की विष्णु के साथ में ही ही प्राप्त करे। का भी  
 परिष्कार करता है। उसी भावन में प्राप्त मर्यादा ही ही प्राप्त प्रकट की है।<sup>३</sup>  
 टी० मर्यादा विधानकार। भा. सुगताराधन, सुगताराधन की विधि प्राप्त और विधान-  
 स्थिति का यह, कारण दिया है कि उम समय मर्यादा-मर्यादा पर मर्यादाएँ न  
 ही किम्वदु मर्यादा धार्मिक द्वारा जाति-जाति त करके सुगत न जाये का  
 निर्धार जीवित प्राप्त के धर्मगत ही जाये। महागुरु-धर्मगत द्वारा सुगत  
 मर्यादा प्राप्त ही ही किम्वदु धर्म सुगत और धर्म प्राप्त प्राप्त करे।<sup>४</sup>  
 निम्नांकित द्वारा उत्तर पूर्ण का प्रकटन का विधान-धर्म और सुगत न ही उन्मुख किया है।

(घ) दुर्भिक्ष—जमा पीड़कता जा चुका है भारतीय श्रमि-श्रमि-श्रमि की कम-  
 जागी यह था कि मिथ्या का ही धर्म पर निर्भर रहता पता था। इनमें भी मरीच  
 की पगव के लिए वर्षों प्रत्यावस्था रहती थी जिसके प्रभाव में भयंकर दुर्भिक्ष पड  
 जान था। कवि मात्र तद्गो प्रसार के शक्ति मर्यादा ही सत्तरु में पर दुर्भिक्ष का  
 मर्यादा के विवरण दिया है— आषाढ़ मास में श्रमि की निम्नांकित आकाश की धार  
 रही श्रमि पर बूंद तक न गिरी। जे श्रमि और नात्र मास भी इसी प्रकार  
 विना वर्षा के श्रमि मर्यादा ही प्रजा में सतवती मर्यादा ही।<sup>५</sup> धर्म की कमों के कारण  
 ध्यातुन नाग श्रमि मर्यादा करने लग। पति पत्नी को और पत्निया स्व पत्निया का  
 साथ त्यागन लगी तथा धर्म की कमों से माता पिता निष्ठुर हाकर अपनी सतानों  
 तक को बचने लग।<sup>६</sup> जिस दिशा में दशा उधर नर-बवाल ही दिखाई देन था।<sup>७</sup>  
 जे और श्रमि के श्रमि मर्यादा में पशु पक्षी भी बस जीवित रहने श्रमि के भी धर्म उधर  
 पतायन कर गया।<sup>८</sup> ज्यो ज्यो इस दुष्काल की श्रमि बढ़ती रही उसी के श्रमि रूप प्रजा  
 जो का भी कष्ट बढ़ता गया और श्रमि तत धनवान लोग भी अपना धर्म ला बठ।<sup>९</sup>

१ स २—३० 'रा० वि०, १८१०३ ह० रा० ३७८

३ It is estimated that there are in India 800 000 Muslim Fakirs and 1 200 000 among the idolaters, which is an enormous number — Travels in India by J B Tavernier, Vol II, p 139

४ स ६—६० 'ह० रा०, ३४७ ४८, कीर्ति०', प० ७०, 'शि० भू०', छ० २७

७ स १३—३० रा वि० ८११३ स ८१२१

अनाज या तो किसी भी भाव पर न मिलता था और यदि मिलता भी था, तो खान के नमान मूल्य पर।<sup>१</sup> प्रजा से आचार विचार और गुचि, सत्य, सताप आदि मानव गुण तिराहित हो गये।<sup>२</sup> नर नारी किसी का भूठा आस तक प्राप्त करने के लिए लालायित रहने थे और चाह जिसको माई-बाप कहकर उससे भाजन की याचना करत फिरन लग।<sup>३</sup> पेड पीघा के पत्ते और फन फून का ता कहना ही क्या लागान उनकी छानें और जडा तक को नही छोडा।<sup>४</sup> दशा यहा तक बिगडी कि यदि बच्चा का काई खरीदने वाला नही मिलना था, तो निट्टुर मा-बाप उह खन करत छोड जान थ।<sup>५</sup> चारा दिशाअ। म मत 'यक्तियो के शवो की बदबू से साम लेना कठिन हो गया,<sup>६</sup> और कुछ दशाओं म ला मानव स्वजाति के मानवो का ही भक्षण कर्त हुए औरव नरक का दश्य उपस्थित करने लगे।<sup>७</sup> अतत प्रजा रक्षण की कामना से महाराज राजमिह न राजसर नामक बहदाकार तालाब का निर्माण काय आरम्भ कराया, जिनसे प्रजा जना का जीविकाजन का माध्यम मिल सका।

दुर्भिक्ष का कवि मान प्रदत्त विवरण रचमान भी अतिशयोक्ति पूण नही है। प्रत्यक्षांशी यात्रिया का विवरण से इसका चित्र कुछ कम ही भयावह है। अब्दुल हामिद नाहौरी न सन १६३०-३२ ई० मे गुजरात म पडे दुर्भिक्ष के विषय म लिखा है कि—नाग डूमरे मनुष्यो का ही नही, अपनी सतान तक का मास खान लगे थ।<sup>८</sup> सन १५५६-५७ म आगरा क समीपरय प्रदेश म पडे दुर्भिक्ष का बन्धुनी न भी ऐसा हा चित्रण किया है।<sup>९</sup>

### राजकीय आय के प्रमुख स्रोत

ब्रजभाषा म वीरका य से राजकीय आय के छ प्रकार के स्रोत का अग्रवाधन हाता है—

- (क) कर नरेशा से भेंट या पेशकश मिलना।
- (ख) संधिबार्ता के समय दण्ड रूप म लिया गया द्रय।
- (ग) शत्रु नगरा और सनिक शिविरा की लूट पाट से अधिगत दृआ द्रय।
- (घ) शत्रु देशो से चौय वसूल करना।
- (ङ) भूमिकर और जगाति (चुगी) आदि।

१ स ७—दे० रा० वि०' ८।१२० से ८।१२१, 'ए० वि०', ८।१२५ स ८।१३१

८ Destitution at length reached such a pitch that men began to devour each other and the flesh of a son was preferred to his love — An Advanced History of India, Vol II p 472

९ X X X and Badauni with his own eyes witnessed the fact that men ate their own kind and the appearance of the famished sufferers was so hideous that one could scarcely look upon them — Ibid, p 571

(च) विधिमियों पर राज्य की ओर से लगाये गए विशेष कर ।

(क) करद नरेशों से मिली भेंट या पेशकश—प्रस्तुत माध्यम शक्तिशाली राज्यों की आय का साधन था जिन्हें उनके अधीनस्थ नरेश भेंट या पेशकश चुकाने थे। इसके चुकाने में आनाकानी करने वाले नरेशों से यह राशि बलात् वसूल कर ली जाती थी। यदा कदा दिग्विजयाय या किसी सैनिक अभियान पर निकले नरेशों को भेंट या पेशकश भी वसूल करते जाते थे।<sup>१</sup> पृथ्वीराज रासो में महाराज विजयपाल अपनी दिग्विजय-यात्रा के समय बहुत से नरेशों से भेंट प्राप्त करते चित्रित किए गए हैं।<sup>२</sup> इसी भाँति महाराज वीसलदेव की भी दिग्विजय यात्रा के समय उन्हें अनेक नरेशों से भेंट अथवा पेशकश प्रदान करते हैं।<sup>३</sup> क्यामखी रासो में कवि जान ने अनेक भूमियों (जमींदारों) को पेशकश चुकाकर अपनी जमींदारियों की रक्षा करते प्रदर्शित किया है।<sup>४</sup> उसने ताजखी चौहान द्वारा कछवाहे निरवान तोमर और पवार शासकों से पेशकश लेने के तथ्य को भी लोक विश्रुत बताया है।<sup>५</sup> कवि सूदन ने अहमदशाह को बहरी महाराज सूरजमल से दो करोड़ की राशि माँगत दिखाया है<sup>६</sup> जो वापिक कर ही रहा होगा। कवि मान ने महाराज राजसिंह को उनके अधीनस्थ अनेक छोटे शासकों से भेंट मिलने का चित्रण किया है।<sup>७</sup> कवि मान और चन्द्रशेखर ने भेंट या पेशकश के ही अर्थ में दण्ड शब्द का प्रयोग किया है। मान ने शाह और गजेब को अनेक नरेशों दण्ड भरते प्रदर्शित किए हैं<sup>८</sup> जबकि चन्द्रशेखर के अनुसार, शाह अलाउद्दीन द्वारा लाख प्रयत्न करने पर भी, महाराज हुम्मीर देव उसे दण्ड देने प्रस्तुत नहीं हुए थे।<sup>९</sup> आल्हूतण्ड में अधीनस्थ नरेशों द्वारा प्रदान की जाने वाली भेंट को महाराज जयचन्द कुछ नरेशों से बलात् वसूल करते चित्रित किए गए हैं,<sup>१०</sup> जबकि माडो नरेश उद्द वापिक भेंट न चुकाने के कारण उनसे भय डस्त प्रदर्शित किया गया है।<sup>११</sup>

(ख) सन्धिवार्ता के समय लिया गया द्रव्य—युद्ध में बंदी बनाए गए नरेशों को मुक्त करते समय, अथवा सन्धिबल क्षीण नरेशों पर आक्रमण करके, उनसे दण्ड के रूप में अपार द्रव्य और युद्धोपकरणों की माँग रखकर भी राज्यकाय अभिवृद्ध किया जाता था।

पृथ्वीराज रासो में दिल्लीश्वर, शाह गौरी को बंधनमुक्त करते समय उनसे कांठि हममुद्राएँ, सात हजार अथवा और साठ हाथी दण्ड के रूप में प्राप्त करते हैं।<sup>१२</sup> उसका अर्थ प्रसंगात् भी शाह गौरी से लगभग इसी परिमाण में दण्ड वसूल किया

१ स १२—२०, प्राचीन भारतीय शासन पद्धति' प० २२५, प० २०', का० १२५७।२११ १२५७।२१३, ८७।४२२, ८७।४२३, क्या० २०, २२२, क्या० २०', ५७० मु० च०, ३।१।७, २० वि०, ८।३६, वही १०।२७, 'ह० ह०', च० ५१, 'मा०' ४१७।२०, वही २४।४५, प० २० का० १११।८।१३५

जाता है।<sup>१</sup> परमाल रासो म महाराज पथ्वीराज महीचे पर आक्रमण के समय महा० परमात् से 'पचास करोड' की माँग प्रस्तुत करते चित्रित किए गये हैं।<sup>२</sup>

मुजानचरित म भरतपुर राज्य पर आक्रमणाय आए आपामल्हार द्वारा, 'दो करोड' रुपये की माँग प्रस्तुत की जाती है।<sup>३</sup> उसम माग के अनेक शासक मल्हार राव को 'दाम' चुका कर अपन राज्या की रक्षा करत प्रदर्शित किए गए हैं।<sup>४</sup> महाराज सूरजमल भी पराजय की सीमा को पहुँचे घासहरे दुग के अधीक्षक को दण्ड के रूप में दस लाख रुपये तथा तोप और रहवला आदि युद्ध सामग्री देने क लिए विवश करते हैं।<sup>५</sup>

(ग) शत्रु नगरों और मनिक शिविरों की लूटपाट से अधिगत हुआ द्रव्य—शत्रु नगरों की लूट कराकर वहाँ से अनेक प्रकार के धन धान्य और सम्पत्ति उपलब्ध कर ली जाती थी। इसके साथ ही पराजित शत्रु के शिविरो की लूट में भी खजाना, हाथी घोड़े और शस्त्रास्त्र प्राप्त हा जाते थे। इससे राज्यकाय में ता अभिवृद्धि हाती ही थी, सना के लिए शस्त्रास्त्र और हाथी घोड़े आदि की समस्या भी सुलभ जाती होगी। उसका कुछ अंश सनिवों म वितरित करके, उनम और भी अधिक स्वामिभक्ति का विकास करने की भी चेष्टा की जाती थी।

महाराज पथ्वीराज क चामुडराय आदि सामन्त शाह भोरी की बेगमा के साथ जा रहे खजान का लूट लते हैं।<sup>६</sup> महाराज का इसम अवश्य ही कुछ अंश प्रदान किया गया हागा।<sup>७</sup> पराजित शाह गारी के सामान की लूट तो कई प्रसंग म प्रदर्शित की गई है।<sup>८</sup>

राजविलास म शत्रु नगरा की लूट क लिए, सेना के साथ कुछ ऐसे विशेषण भी ल जाने की प्रथा दिखाई गइ जो भूमि को सूँघकर दस रहस्य का उदघाटन कर दन थे कि, जमीन म धन कहाँ पर गडा हुआ है।<sup>९</sup> एस ही व्यक्तिया की सहायता से महाराज राजसिंह की सेना ईडर दुग से अपार मात्रा म सोना, चादी और तिक्वे

१ स ५—द०, 'प० रा०', का० ६१२।१५०, ६३६।१४४, १५५।१२६६ १६७।६४६  
'प० रा०' २३।४६, 'सूदन रत्नावली', प० १११ 'सु० च०', ७।२।६,  
वही, ५।३।१६

६ गहि बेगम मव सत्य, लुट्टि लिय खास खजीना।

—पृ० रा०', मी० ३।३०।४।१३

७ मुगल शासक युद्धो की लूट का १।५ भाग लिया करत थे, जिसे खम्म की सजा दी जाती थी। — डे० एन एडवास्ट हिस्ट्री आफ इण्डिया, भाग २, प० २०३, ऐसी ही कुछ प्रथा हिन्दू नरेशो म व्याप्त रही होगी। औरकाय मे व युद्ध म लूटी सामग्री म से उपयुगी उपकरणो का चयन करने दिखाए गए हैं।

—शोधक

८ से ६—दे०, प० रा०' का० १६७।६४५, १५५।०।६५, 'रा० वि०', १५।२५,

सूटकर साते है।<sup>१</sup> राजस्वनाम के कई प्रसंग म मुळ गिरिगो म गजाग कम्पान्य तथा गज घण्ट, ऊँघ घोर गण्डर घाँि की भी सूट गिराई गई है।<sup>२</sup> उगम दम तथ्य पर भी प्रकाश डाला गया है कि, सूट की गामपी सैनिका गज महाराज के सम्मुख प्रस्तुत की जाती थी<sup>३</sup> त्रिगम म वे उत्तम गज घोर घण्ट घाँि का घण्टा लिए घण्ट कर साते थ। गज गामपी सैनिका म गिराई कर साते थ।

भूषण म महाराज गिरात्री भूषण गण्ट मे हीरा गणि घोर गामिका की साता पाठनियम सूटकर म जान प्रगणित किए हैं। त्रिक मूष्य का घनुमान गिया जा गकता है। उहा म महाराज द्वारा गरेगा म दह मी का भी उगाय गिया है।<sup>४</sup> त्रिगका दगित कर्तागि घीय सते की घाँ है। कवि भूषण म गिरात्री की सूट का घनि विस्मय घण्ट गिया है त्रिगम घण्ट प्रकार क उगायन सूटकर म जान जाते है।<sup>५</sup> थोपर म भी परगमिघर की गना का मुळ की सूट म हापी, घाँ उ म ग्य घण्टी गुगपाम ताँ गगाँ रहकन घुगुर-नाम घोर ग्याग घाँि गामिकाँ मिसन का गिनण किया है।<sup>६</sup> दाम म हापी घाँ ताँ घोर गगाँ का ताँ य घण्टे लिए ग्य सन है जबकि गज गामपी सैनिका म गिराई कर साते है।<sup>७</sup>

(घ) घाँ देगों से घीय घमूल करना —कवि भूषण म महाराज गिरात्री का मुगला म घीय सत<sup>८</sup> तथा घनु प्रगों म हागिल उगाहा चिगित गिया है।<sup>९</sup> घीय म घनु प्रग की भूमिघर की घाय का घनुपीग प्राप्त गिया जाता था।<sup>१०</sup> हागिल उगाहा म भूषण का गगित कर्ताचित् सगणमुगी नामक कर घमूल करती घोर रहा है। महाराज गिवाजी महाराष्ट्र क कुछ एते प्रदना म जो मुगला क घधीन थ य कर प्राप्त गिया करत। थ इनम घीय क घनिरिघन भूमिघर का दग प्रगिन घण घोर प्राप्त गिया जाता था।<sup>११</sup>

छत्रप्रकाश म महाराज छत्रसाल के य कथन कि जो उमराय ह्म घीय नही देंगे, उनकी जागीरा म छप्पर तक नही पहन गिया जायगा त्रिसक ऊँघ देगा म उमराय घमल (भूमिघर) कत वसूल करेग<sup>१२</sup> प्रगणित करत है कि घीय सेरा राज्य घीय घभिवद्ध करन की एष ऐसी गिया थी—त्रिमम हाँवम घनु म उगवे भूमि घर का घनुपीग प्राप्त करके उमकी प्रजा की लूट-पाट गही की जाती थी। महाराज छत्रसाल की काय प्रणाली भी ऐसी ही प्रदशित की गई हैं—घीय न दन याँ उमराव प्रदेशो पर वे घाँमण करके लूट पाट करते है घोर उनम घाँ गगा दन

- १ से ५—'र० वि०' १५।२७, वही, १८।६६ वही ११।१५ वही १८।६६  
 भू० प्र० स्फु०' छ० ५५ 'गि० भू० ५४ ५५  
 ६ से ११—द०, सु० व० ६।२।३५।४२, जग०' प० ६३६ ४०, वही प०  
 ६४५ ४६ भू० प्र०' स्फु० ७, गि० भू० ३४  
 १२ एन एडवाइड हिस्ट्री आफ इण्डिया, भा० २ प० ५१६  
 १३ छ० प्र०, १८।४

हैं।<sup>१</sup> नीलतला द्वारा स्वयं को, महाराज छत्रसाल के पिता का मित्र बताने पर भी, वे उसकी जागीर के लूटे हुए सामान को तभी लौटाते हैं, जब चौध चुवाने का वचन ल लेते हैं।<sup>२</sup> छत्रप्रकाश में शाह और गजब को इस दृष्टि से बड़ा दुश्चिन्ता प्रस्तुत दिखाया है कि महाराज चपतिराय का सामना न करके, उनके उमराव उनको चौध चुवाने की दुष्प्रवृत्ति का आश्रय लेते हैं।<sup>३</sup>

(ड) भूमिकर और जगाति (चुगी) आदि तथा निवश व्यक्तियों की सम्पत्ति— भूमिकर और चुगी आदि भी राजकीय आय के प्रमुख स्रोतों में से एक थे। पथ्वीराज रासो में भूमिकर की मात्रा तो निर्दिष्ट नहीं की गई है, किंतु यह भाव व्यक्त किया गया है कि जैसे माली वक्ष की ढाल को न काटकर, उसके पुष्प और फलों का संचयन करता है उसी ढीले नरेशा का स्वप्रजा से कृपि कर लेना चाहिए।<sup>४</sup> इससे स्पष्ट होना है कि महाराज पथ्वीराज आदि नरेश स्वप्रजा में अल्प मात्रा में ही कर वसूल करते होंगे। वह कदाचित् स्मृतियों के इस निर्देश के अनुकूल रहा होगा कि भूमिकर उत्पादन का छठा भाग होना चाहिए।<sup>५</sup> विद्यापति ने अस्तान नामक शासक को तिरहुत में भूमिकर उगाहत चित्रित किया है।<sup>६</sup> गारनाल में भी उजड़ी हुई प्रजा से अमल वसूल न हो पाने का उल्लेख किया है।<sup>७</sup>

केशवदास जी ने टोडरमल के निघन पर एार जग के सुखी होना का उल्लेख करके<sup>८</sup> प्रकाशान्तर में अकबर काल में भूमिकर की मात्रा अधिक होने का तथ्य पर प्रकाश डाला है। ऐतिहासिक साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि अकबर-काल में भूमिकर उत्पादन की मात्रा का एक तिहाई भाग था<sup>९</sup> और भूमिकर की व्यवस्था में टोडरमल का प्रधान हाथ था।<sup>१०</sup> अर्थात् अथक में से पथ्वीराज रासो में साभिरि-भील के

१ से ४—दे० अम छ० प्र०' १७।४ ६ वही, २२।६, वही ५।४, प० रा०', का०, २०६६।६६५

५ से ७—दे० 'प्राचीन भारतीय शासन पद्धति', प० १६६, कीर्ति० प० ५८, छ० प्र० १८।४ १२।७

८ टोडरमल तुव मित्त मरे मवही सुख सायो। — वी० च०' १।६४

९ 'The demand of the State was fixed at one third of the actual produce which the ryots could pay either in cash or in kind'

— An Advanced History of India Vol II, p 561

१० टोडरमल की भूमि व्यवस्था की यद्यपि प्रशंसा की जाती है किंतु शाह अकबर ने एक 'बारी नामक योजना चालू की थी जिससे किसानों को बड़ा नुक़्त हुआ था—But the kroris soon grew corrupt and their tyranny reduced the peasants to great misery — वही, प० ५६१

अतः केशव का निर्देश इस दृष्टि से उचित प्रतीत होता है कि जनता ने शाह अकबर के म्यान पर टोडरमल को ही अपना दुखों का मूल कारण समझा होगा। —शावक



पानी के प्रयोग पर लिये जाने वाले कर, तथा गुजरात के बन्दरगाहों पर लगाय गये कर से पर्याप्त ग्रामदानी होने का उल्लेख किया गया है। प्रथम कर व वसूल करने का अधिकार दिल्लीशहर द्वारा रावल समर विभ्रम का सौंपा जाता है।<sup>१</sup> महाराज भोलाभीम बंदरगाह से प्राप्त किए जाने वाले कर का अधिकार यमान को प्रदान करने का प्रलोभन देकर उसे स्वपक्ष में मिलान की चेष्टा करते हैं।<sup>२</sup> राजविलाम म नगर-प्रवेश के समय ली जाने वाली जगाति की उदयपुर में बड़ी सतक व्यवस्था दिखाई गई है। जगाती रात्रि दिवस चौकान रहते थे और छिपकर जाने की चेष्टा करने वाला को "कड़कर उनसे बलात दान या जगाति लेकर ही छोड़ते थे।"<sup>३</sup> डॉ० अशीर्वादीलाल श्रीवास्तव ने ग्रान और नमक पर लगाई जाने वाली बुगों का नागरिकों से वसूल किये जाने वाले करों में प्रमुख स्थान हान का मत व्यक्त किया है।<sup>४</sup>

निवेश व्यक्तियों की सम्पत्ति पर भी राज्य का अधिकार माना जाता था। इस तथ्य पर कवि केशव ने प्रकाश डाला है।<sup>५</sup> महाराज पद्मवीराज द्वारा खटटूवन से किसी पूर्वकालीन नरेश का निकलवाया गया धन भी इसी श्रेणी में आता है। इसमें निकल द्रव्य के मूल्य का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि उस ग्यारह हाथियों पर लादकर लाया जाता है।<sup>६</sup> कवि चंद ने कन्नौज में जिन छूत-ग्रह और वेश्यालयों की तथा विद्यापति ने जौनपुर में वेश्यालयों की स्थिति दिखाई है, उनसे भी राज्य का कर प्राप्त होता होगा।<sup>७</sup>

(घ) जजिया और तीर्थ-कर—राजकीय आय के सादभ में जजिया और तीर्थ कर का भी उल्लेख है, जो मुस्लिम शासक हिन्दुओं के प्रति अनुदार नीति पर आघत थे। उदारचेता समाट अकबर और जहाँगीर ने तो हिन्दुओं को इनसे मुक्त

१ 'प्रतय फिरत भावरी। दयौ सभरि उदक्कर। — प० रा०, का० ६६२।१५६

२ 'मध्य पहर जमट्टि, द्रव्य आव बहु बंदर।

सो अपफ चालुक्क, कर कयमास इद्रधर ॥

— प० रा०, मा० २।४६३।८४

३ प० ५—दे० रा० वि०' २।१३४ द मुगल एम्पायर, प० ५१७, वी० च०' १।६३

४ प० रा०, का० ७५६।४८३

७ (क) प्रोफेसर अलतकर ने प्राचीनकाल में जुआरिया और वेश्याओं को दिए गए अनुमति पत्रों से राज्य की अच्यौ आय होने का उल्लेख किया है।

— प्रा० भा० श० प० ५० २१०

(ख) डा० सत्यकेतु विद्यालंकार के अनुसार वेश्या एक दिन की ग्रामदानी का दुगुना तथा जुआरी जीत घन का पाँच प्रतिशत राज्य का कर के रूप में प्रदान करते थे। — प्रा०, भा० स० और उसका इति०, प० २२७

कर दिया था, किंतु कुछ काल के लिए शाहजहाँ तथा बाद में शाह औरंगजेब ने उह पुन लागू कर दिया था।<sup>१</sup> गारनाल ने शाह औरंगजेब द्वारा हिंदुओं पर ऊँची दर का जजिया और तीर्थ कर लगाकर, उह व्यथित करने का चित्रण किया है।<sup>२</sup> राज रिलार में शाह औरंगजेब का, महाराज राजसिंह के प्रति इस दृष्टि से छुट्ट दिखाया गया है, कि उन्होंने 'दबल-कर' बंद करवाकर, उमे प्रतिवर्ष दो सहस्र दीनार का घाटा पहुँचाया है।<sup>३</sup> डा० ईश्वरीप्रसाद ने प्रयाग आदि तीर्थों में जाने वाले हिंदुओं से औरंगजेब काल में छुट्ट छपय वसूल करने की प्रथा का उल्लेख किया है।<sup>४</sup> फरब यात्री घनियर ने मूस प्रहण आदि अथसरा पर मला के आयोजन की शाह औरंगजेब द्वारा सभी अनुज्ञा प्रदान करने का उल्लेख किया है, जब उहें एक लाख छपया (घनियर ने य छपय पचास हजार आउंस के बराबर बताया है) की थली भेंट करनी जाती थी। इसमें अनुमान किया जा सकता है कि धर्म प्रवण भारतीयों में तीर्थ-कर और जजिया के रूप में मुगल शासकों का निश्चय ही पर्याप्त घाय होती होगी।

### निष्कर्ष

सामाजिक प्रतिष्ठा के निर्धारण में विसत भी एक महत्वपूर्ण कारण स्वीकार किया जाता था। धर्मोपाजन के स्रोत कृषि उद्योग धंध और व्यवसाय, व्यापार, खाना के ठेक लेना, सूत पर धन देना कलाओं के माध्यम से सामाजिकों का मनोरंजन करना तथा भिक्षाटन थे। आलोच्यकाल में धर्मोपाजन कृषि-व्याय सबसे प्रमुख साधन था। वृषि की दशा समुन्नत थी। फलादि के लिए नाना प्रकार के फलों के बसो वाले बाग लगाने का बहु प्रचलन था। उद्यानों में स वस्त्र बसन, शस्त्रास्त्र का निर्माण, इत्र-व्यवसाय विशेष समुन्नत थे। मणि मुक्तादि की खाना के ठेक लेना तथा स्वण का शुद्ध करने का व्यवसाय भी पर्याप्त उन्नत था और दश एक प्रकार से नवनिधियों का आकार था। कला के माध्यम से जीविकाजन करने वाला में से वैश्याओं और कविगणों की स्थिति समृद्ध थी। लगरा से भाजन प्राप्त करने अथवा भिक्षाटन से निर्वाह करने वालों की भी बहुसंख्या थी।

व्यापार की दृष्टि से उस समय के नगरों की दशा क्षतापप्रद मिलती है। बाजारों में क्रेता और विक्रेताओं की बड़ी भीड़ भाड़ रहती थी। वस्तु विनिमय के

१ ६०, 'मुगल एम्पायर', डा० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, प० ५३३ ३८

२ महंग कर तीर्थगणों नगाय। बंद दबलि निहदर दहाय।

घर घर बाधि जजिया नीन। अपन मन भाय नब कीन।

— छ० प्र० ११३

३ दड दैत देवल्या, नालि वधन सु निरतर।

दाइ महम दीनार, एन सल्ल उर अतर।

— 'रा० वि०', १०।१६

४ ६० 'मुगलवालीन भारत का सक्षिप्त इति०' प० ४१४

हेतु हून, दीनार, मोहर या घण्टी, चापा, दाम और बीड़ी व अतिरिक्त गान्-  
दासियों के बदले भी वस्तुएँ त्रय करने का प्रचलन था। धारण की प्रमुख सामग्री  
अश्व तथा अस्त्रास्त्र होत थे जबकि निर्यात म वस्त्रों की बहुलता रहती थी। युद्धा-  
के समय तो वस्तुएँ काफी महँगी हा जाती था, जबकि साधारणता व सम्पत्ती रहती  
थी। समय पर वर्षा न होने की दशा म एम भयकर दुर्भिक्ष पट जाते थ कि गन्त  
बचना तथा बधा की छाल आदि ही नहीं अपितु मानव मौन म तब तक की स्थिति  
पदा हा जाती थी।

राजकीय धाय व साधन स्थूलत पाँच प्रकार के थ। राष्ट्रीय सामग्री का  
वरद तेशा स वार्षिक रूप म भेंट या पेशकश मिलती थी। काय-वृद्धि की कामना  
से शत्रु-नगरो की लूट करा ली जाती थी तथा सनिक शिखिरा की लूट द्वारा भा घन  
प्रकार के अस्त्रास्त्र और अन्य सामग्री प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता था।  
पराजित शत्रु से दण्ड रूप म धयरा आक्रमण का भय त्रिगार भी घनर सर्पित  
और युद्धापयोगी उपकरण उपलब्ध किय जात थे। भूमि-कर वस्तुओं पर लगाइ गइ  
जगानि और निवश मन व्यक्तिता की सम्पत्ति स भी राजधो का पर्यन्त सामन्ना ग  
जानी थी। मुगल शासक हिन्दुधो पर जजिया और तीथ कर उगाएर भी धन गचय  
किया करते थे।

साराण यह है कि आलाच्यकाल म राजा और प्रजा दोना ही आर्थिक दष्टि  
से सम्प न थ। आकस्मिक दुर्भिक्ष का छोडकर साधारणतया जन जीवन सुख ममद्धि  
से परिपूर्ण था। कृषि और उद्योग घ धो से इतना उत्पादन हाता था कि युद्धकाल म  
भी जन जीवन म किसी प्रकार की विभ्रूलता नहीं देखी जाती। युद्धकाल म सना  
क समक्ष कभी-कभी एमी विपन्नता तो आ जाती थी कि उन्हें मोहरें देकर सामान्य  
वस्तुएँ त्रय करनी पडती थी कि तु जन सामान्य म युद्धा का कोई कुपरिणाम दष्टि-  
गत नहीं होता। काइ भी नरेश आर्थिक विपन्नता की स्थिति म नहीं दिखाया गया  
है। शत्रु क आक्रमण या युद्धो की विपन्न-परिस्थितियो म राज कोष रिक्त हाता ना  
उसका कोई उल्लेख आलाच्य साहित्य म अवश्य मिलता कि तु एस सकेत कही नहीं  
मिलत। इससे प्रतीत हाता है कि आलोच्यकाल म राजा और प्रजा दोना ही आर्थिक  
विपन्नताधो से परे थे। समग्र समाज धन धाय के बभव से भरपूर था।

## राजनीतिक स्थिति

ब्रजभाषा के वीरकाव्य में समाज के राजनीतिक पक्ष से सम्बद्ध निर्देश प्रचुर परिमाण में मिलते हैं। विवेचन सौत्रय की दृष्टि से ये चार उपवर्गों में रखे जा सकते हैं—(क) शासक और शासित का अन्वय के प्रति दृष्टिकोण, (ख) शासन संचालन में महायुक्त मंत्री और अधिकारी गण, (ग) संयम व्यवस्था, (घ) युद्ध के कारण तथा दंड-व्यवस्था आदि अन्य उल्लेख्य तथ्य।

(क) शासक और शासित का अन्वय के प्रति दृष्टिकोण—आलाच्यकान का अधिकांश शासकों का अपनी प्रजा के प्रति पिता के समान हितकर दृष्टिकोण था। वे उसके सुख दुखों के प्रति प्रायः पूर्ण जागरूक रहते थे और आततायियों से स्वप्रजा की रक्षा करना अपना धर्म समझते थे। प्रजाजन शासकों में ईश्वर का अग्र विद्यमान समझते थे तथा उनके मुखदशन और नामस्मरण का पुण्यकर समझते थे। राजनीतिक उथल-पुथल और अत्याचारी नरेशों के प्रति प्रजा का दृष्टिकोण उदासीनता का नहीं था।

(१) नरेशों द्वारा प्रजा की हितचिन्ता—पद्मीराज रासो में महाराज वीमलदेव बालुकाराई के ग्राम और नगरों का लूट लेते हैं तथा प्रजाजनों को बन्दी बना लते हैं<sup>१</sup> जिनकी भरमना करते हुए बालुकाराय उनके इस क्रूर कार्य का हिन्दू नरेशों की मयादा के विरुद्ध बताते हैं और उन पर प्रत्याश्रमण कर देते हैं।<sup>२</sup> भानाभीम द्वारा स्वप्रजा के उत्पीड़न का वृत्तांत पाकर जतराव अपने पिता से कहते हैं कि हमारी प्रजा के इस भक्तिदर पर भटकने से हमारा बड़ा अपयश फलेगा अतः हम क्षुधा तथा अन्य दुखों की चिन्ता करते हुए उसकी रक्षा करनी चाहिए।<sup>३</sup> इन्द्रावती के पिता भीमदेव से युद्ध के इच्छुक महाराज पद्मीराज के सामने उनके ग्रामों में आग लगाना और लूटपाट करना आरम्भ कर देते हैं जिनकी रक्षा के लिए वे तुरन्त ही युद्धारम्भ कर देते हैं।<sup>४</sup> महाराज पद्मीराज और परमदिदव के मध्य वनस्य का कारण भी एक आन-

मालिन की पुतार थी। त्रिनीपति व मनिव महाय के माली का मार डालन है। मालिन जब इगकी परिवाद महाराज परमान व पाग से जाती है तो उनके आंग्रेग से व सब मनिव मार गिराय जात हैं।<sup>१</sup> दन सनिता व साथ महाराज पश्वीराज की गुनमजरी नामक दासी भी मारी जानी है। त्रिनीश्वर सनिता के साथ निरपराध गुनमजरी की भी हत्या किए जान का बत्तात पाकर त्रिनीश्वर के शोध का पारावार नहीं रहता और वे प्रतिशाध के लिए महाराज पर आश्रमण काग्न हैं।<sup>२</sup> युद्धाय आना कानी करने वाले महाराज परमाल भी जब स्व प्रजा पर चामुडराय द्वारा अत्याचार करने का समाचार सुनते हैं तो तुरंत ही आत्म ऊन को उगवा सामना करन भेज देते हैं।<sup>३</sup>

क्यामला रासा म जगमाल पवार और नाहरला के मध्य होन वाला युद्ध प्रजा के सपोडन पर आघत दिखाया गया है।<sup>४</sup> हम्मीर रासो में महाराज हम्मीरराय को सर्वाधिक चिन्ता इसा तथ्य की लग्याई गई है कि शाह अलाउद्दीन के हाथा मेरी प्रजा का किसी प्रकार का कष्ट न पहुँचने पाय।<sup>५</sup> छत्रप्रकाश में महाराज चपतिराय सुजान मिह से बुदेलखण्ड की दीन हीन प्रजा को शाहजहाँ के अत्याचारो से बचान के लिए मत्रणा करते प्रदर्शित किए गये हैं।<sup>६</sup> सुजानचरित में महा० सूरजमल नवाब सलावतला के पाम निवेदन पहुँचाते हैं कि आप मुभस चाहे जसी सेवा लीजिए किंतु मरी प्रजा को मत सताइय।<sup>७</sup> आल्हखण्ड में ऊल द्वारा अपमानित बाँदी जब माहिल से यह परिवाद करती है कि आपके राज्य में प्रजा की इज्जत भी सुरक्षित नहीं है तो वे वनापनो के प्राण-पण से बिद्वेषी बन जात हैं और उनके विनाश के लिए अनेक प्रकार के षडयंत्र रचते हैं।<sup>८</sup> आल्हखण्ड में अयत्र भी इस तथ्य पर प्रकाश डाला गया है कि राजा या रानी द्वारा प्रजा को किसी भी प्रकार का कष्ट पहुँचाने पर उनका जगत में उपहास होता है।<sup>९</sup>

राजविलास में सवत सत्तरह सौ सत्तरह न पडे भयकर दुभिक्ष का चित्रण मिलता है। इसमें प्रजा की दशा इतनी बिगड जाती है कि पति पत्नी एक दूसरे का तथा माता पिता सन्तति का साथ छोड देते हैं। बक्षो की छाल आदि भी खाने को श्रेय न बचने पर चारो दिशाओ में नर ककाला का जाल बिछ जाता है। महाराज राजसिंह से स्व प्रजा का कष्ट सहन नहीं होता। वे राजकोप से प्रतिदिन एक सहस्र दीनार व्यय करते हुए सात लाख व्यक्तियों को रोजगार प्रदान कर उनके भरण पोषण का प्रयत्न करते हैं। कृत्न प्रजाजना द्वारा उनके चिरजीवी होन की कामना की जाती है।<sup>१०</sup> प्रजा का सम्यक सरक्षण और प्रतिपालन आदश नरेशो के आवश्यक चारित्रिक गुणा के रूप में समादत थे। इन गुणो से युक्त नरेशो को धय कहकर वीरकाय प्रणेताआ

१ स १०—दे० प०रा० का० २५०६।१४ वही, २४४५।२६५, वही २५५३।१६०,  
क्या० रा० ६०३ ६०४ ह० रा० छ० ६६०, छ० प्र०' ५।१ सु०  
च०', ३।१।५, 'आ०' ३४।१६ वही, ५७।१।१८ १६ 'रा० वि०' ८।१३७

न जन धारणा को ही मुग्धरित किया है ।<sup>१</sup>

(२) प्रजा द्वारा शासकों में दबो अथ मानने की धारणा—पृथ्वीराज रामा म वेदा का माध्य दत्त हुए तथा म ईश्वर का अथ स्वीकार किया गया है<sup>२</sup> तथा मया राज पृथ्वीराज वारतार के अवनतार बताये गये हैं ।<sup>३</sup> रतनदावनी म महाराज रतनस्तन भगवान राम के पापद<sup>४</sup> तथा वीरचरित्र म महाराज वीरसिंह देव वाणीश्वर<sup>५</sup> और ईश अशावतार को मनाया म अभिहित किया गण है ।<sup>६</sup> राजविलास म महाराज जगन-सिंह एकलिंग क अवनतार बताए गण हैं,<sup>७</sup> जबकि राजसिंहजी को वही एकलिंग क अवनतार<sup>८</sup> और वही राम, शंकर, ब्रह्मा, कृष्ण और घमराज आदि के विशेषणो म विभूषित किया गया है ।<sup>९</sup> भूषण ने महाराज शिवाजी राम,<sup>१०</sup> श्री कृष्ण<sup>११</sup> के अवनतार बनाए हैं और कहा है कि कि वे धराधाम से म्लच्छो का उ मूलन करन क लिए अवनतार हुए हैं ।<sup>१२</sup>

हिन्दू नरेश की भाँति मुस्लिम बादशाहो म भी ईश्वर या खुदा का अथ विद्यमान समझने की धारणा पर प्रकाश डालने वाले उल्लेख मिलते हैं । कवि जान न दोलतखानों में अगत-अष्टा की ज्योति अतनिहित बताई है ।<sup>१३</sup> हम्मीर रासा म शाह पलाउद्दीन को दुनिया का दूसरा खुदा बताते हुए<sup>१४</sup> वे इसी दृष्टि स अवध्य घोषित किया गये हैं ।<sup>१५</sup>

नरेश और बादशाहो को ईश्वर का अवनतार मानने के साथ-साथ उनके मुख-दशन और नाम स्मरण को भी अतीव कल्याण प्रद समझा जाता था अथ प्रात काल नृप मुख दशन करने और उनका नाम जप करने की परिपाटी प्रचलित थी । पृथ्वीराज रासो म महाराज सोमेश्वर उपा काल म स्वप्रजा को भरोसे स दशन दत्त चित्रित किया गये हैं ।<sup>१६</sup> वीरचरित्र म महाराज वीरसिंह देव के मुख दशन के लिए उनके सुत, सोदर, पत्निया, मंत्री, रावत और सामंत व्यग्र दिव्याय गये हैं ।<sup>१७</sup> राजविलास म महाराज जगनसिंह के मुख्यदशन से नव निधियो के प्राप्त होने,<sup>१८</sup> तथा महाराज राजसिंह के नाम-जप स दारिद्र्य और दु खों का विनाश होकर सुख समृद्धि की प्राप्ति हान म विश्वास प्रकट किया गया है ।<sup>१९</sup> मान न अथय उनक मुख-दशन स विविध देवी देवताया क दशन तथा तीर्थाटन स मनावाँछाया की अभिपूति होने क सदण सदफल प्राप्ति की धारणा व्यक्त की है ।<sup>२०</sup>

१ से २०—२०, रा० वि०, ८।१३८, 'प्र० वि', ११६-१७, सु० च०, १।२।१२, 'आ०' २४४।१२, पृ० रा०, का० २०६४।४०७, वही १३३।६७, 'वी० च०', २।१३१, वी० च०, १।३, 'रा० वि०' २।३८, वही, १।६०, वही, २।१७३, वही, ५।२३-२५, 'शि० भू०', १६६, वही, ७५, वही, ३४८, 'क्या० रा०, छ० ४६८, 'ह० रा०', छ० ६४२, 'ह० रा०', वाचनीक, प० १८२, 'प० रा०', मी० ३।१०।२१, वी० च०, २।१३२, ३३, 'रा० वि०', २।३८, वही, १।६१, वही, ५।२१

कवि गगन शाह अकबर के विषय में कथन है, कि भाज में आपका नाम सतर गूढ़ से निकला था जिसे मरी सभी इच्छाएँ पूरा हो गई हैं।<sup>१</sup> कवि तानसन काल में शाह अकबर अनाथों के नाथ और कल्पवृक्ष हैं जिन्हें नाम-जाप से अल्पनिद्रि और नवनिधिया की प्राप्ति होती है।<sup>२</sup> तानसन ने प्रायः काल उनका मुगल दशन करने से अलौकिक आनन्द की प्राप्ति,<sup>३</sup> इच्छामा की प्राप्ति पापा के विनाश तथा जीवन के सफल हो जाने में विश्वास प्रकट किया है।<sup>४</sup>

कवि तान ने आलिफ़ सौ दीवान की दरगाह के दशन करने से मनावाशामा की प्रति दुःखा के विनाश वित्त सन्नि और बुद्धि वृत्ति आदि सफलता के मिलन का उन्नयन किया है।<sup>५</sup> तथा उनके नाम जाप से अमाध्य व्याधियाँ के साध्य हान तथा दुःखनाश और पापा का प्रक्षालन हो जाने में विश्वास प्रकट किया है।<sup>६</sup>

वीरकाव्य प्रणामा के उपयुक्त विवरण का आश्रयता सवीतन के अनि-रजित चित्रण नहीं कहा जा सकता। नरेशा का ईश्वरावतार या उनमें ईश्वर का अश-मान की धारणा अति प्राचीनकाल से और प्रायः विश्व व्यापक रही है। डा० गधाकुमु मुलर्जी ने कृष्ण अनुभूति में राजा के दवी अधिकार की कल्पना न होत हुए भी उमर मन्ना द्वारा दवी गुणा का अपारण करने का प्रचलन दिखाया है।<sup>७</sup> मिन के करारोहा तथा कबीलानिया और राम के सम्राटों की तो मंदिरों में मूर्तियाँ प्रतिष्ठापित करके पूजा किया जाने का उल्लेख उपलब्ध है।<sup>८</sup> डा० अजनायण शमा ने १०वाँ शताब्दी से पूर्व की उत्तरभारतीय सामाजिक दशा पर प्रकाश डालने हुए गगनमृ प्रथम और द्वितीय को विष्णु के अवतार तथा भोज प्रथम को आदिवाराह का अवतार मानने की धारणा का उल्लेख किया है।<sup>९</sup> अबुल फजल ने आईन ए अकबरी में अष्ट अकबर के मुख रशन का पवित्र मानकर दशनाथ आने वाली भीड़ का उन्नयन किया है जबकि डा० सत्यकेतु विद्यालकार ने तो अकबर काल में एक ऐसे दाना सम्प्रदाय की विद्यमानता प्रदर्शित की है जिसमें दीनित व्यक्ति शाह अकबर का मुन रशन न कर लने तक अन्न जल ही ग्रहण नहीं करते थे।<sup>१०</sup>

नरेशा के सम्बन्ध में व्याप्त उपयुक्त दवी भावना के विषय में यह तथ्य उक्त है कि उनके दवी अधिकारों की मायता तभी तक थी जब तक उनका चरित्र उदात्त होता था और वे स्व प्रजा के कल्याण कार्यों में प्रवृत्त रहते थे।

इन गुणा से रहित तथा प्रजा सपीडक नरेशों का भी ईश्वरावतार मानकर

- १ स ८—२० ग० क० २६६ अ० द० हि० क० ४१०।१३४, वही, ४१०।१३६ वही ४१२।१४५, क्या० रा०, ६२४ ६३६, वही ६३७, हिंदू संस्कृति, प० १०३ 'प्राचीन भारतीय शासन पद्धति, पृ० ६० ६१
- ६ मागल लाइफ इन नादन इण्डिया, टंकित प्रति, पृ० ४
- १० भार० स० और उसका इति०, पृ० ४६०

उनके द्वारा दिए जान वाले कष्टों का चुपचाप सहन करने का वीरकाव्य में चित्रण नहीं मिलता। प्रजा पर सकट का आना उस सताकर (अधिक कर लेकर) राजा द्वारा अपने राजकाप की अभिवृद्धि करना, चरित्र के अधःपतन के कारण प्रजा वग की नारियाँ के साथ दुराचरण करना—एक तथ्य थे जिनके लिए प्रजा विभिन्न माध्यमों में अपना राप व्यक्त करती थी। पृथ्वीराज रासा में अयाम से धन सचय करने वाले नरेशा का प्रजा का निवश<sup>१</sup> मरने का शाप देना तथा चरित्र भ्रष्ट नरेश की राजधानी का छोड़कर अयन चल जान की धमकी देना<sup>२</sup> प्रदर्शित करते हैं कि नरेशा के दत्त्व के पीछे उनके दुःख राग का भी दही मानकर सहन करने की धारणा व्याप्त नहीं थी। इन विषय में टी० अनन्कर का यह बयान उपयुक्त प्रतीत होता है कि 'यदि के स्थान पर राजा के पद को दही ममभा जाता था।'<sup>३</sup>

(३) प्रजा की राज्य कार्यों के प्रति चेतना—पृथ्वीराज द्वारा राज्य के वीर और बुद्धिमान मंत्री कमास का बंध किए जान का समाचार पात होता है, ता वे नार की दुकाना का तीन दिवस तक बंद रखकर अपना रापाभिष्यक्त करते हैं।<sup>४</sup> इसके विपरीत जब उन्हें मन्ना० पृथ्वीराज द्वारा प्रमुख वीर चामुंडराय की बडिया उतारने का पना चतता है, ता वे उनके इस काय का अनुमादन गृह गृह में भगन मनाकर और उनके धय वाय कहकर प्रशसा करके करते हैं।<sup>५</sup> सयास लेकर बढीनाथ गए हुए महाराज अनंगपाल को उनके प्रजाजन नवाभिषिक्त पृथ्वीराजजी के अत्याचारों का कहानी सुनाने हुए दिल्ली का राज्य पुन हस्तगत करने के लिए विवश कर दत हैं।<sup>६</sup> महाराज वीसलदेव की चरित्र भ्रष्टता का उनके प्रजा जन निष्क्रिय रहकर सहन नहीं करते अपितु राज्य के प्रधान के माध्यम में उन्हें सूचित करते हैं कि यदि यही दशा रही ता हम यह राज्य छोड़कर अयन चल जायेंगे।<sup>७</sup> शाह गारी के अंतिम आक्रमण के समय विलासमन महाराज पृथ्वीराज का युद्धाथ सन्द्ध करने का काय उनके प्रजा जो का जागरूकता के कारण ही सम्पन्न होता है। वे एकत्र होकर राजगुरु के घर पहुँच जाते हैं और आशाश गभिन निवेदन करते हैं कि या तो आप हमारी रक्षा के लिए महाराज को प्रबुद्ध करिए अथवा मगधाला और कमडल लेकर बढीनाथ का रास्ता

१ ममार सकल तिन दुष्य पाइ । सब थाप दीन इह अगति आइ ।

बिन बस हम इह तज देह । इय प्रजा सकल कहि अण्य ग्रह ।

— प० रा०', का० ६८३।१० ११

२ वीरध जन मिलि नयर के गए द्वार परधान ।

बडि अवन नर नारि सब, नहीं रहै रजधान ।

—ब०, ८४।४१४

३ इस प्रकार हिंदू अयकारा न राजपद को स्वी वताया है न कि किसी राजव्यक्ति को ।

—'प्रा० भा० शा० प०, प० ५६

४ स ८—१०, प० रा०', का० १४६६।२५५ 'प० ग०', मा० ४।६६४।१७६, वही, २।८०६।२७, प० रा०, का० ८४।४१४, वही २१३।१७४



लोजिए।<sup>१</sup> शाह गोरी की पराजया के अवसर पर नागरिकों द्वारा विविध प्रकार से खुशियाँ मनायीं और महाराज पथीराज की पराजय के पश्चात् उदात्त मीन विपन्न वस्था में अश्रुपूरित नन्न और भर कटा से इतस्तत् भटकना और प्रश्न करने पर भी मुह से कोई बात न निकालना भी<sup>२</sup> सिद्ध करत है कि, महाराज पथीराज के प्रजाजनो की अपने शासन के उत्थान-पतन में पर्याप्त अभिरुचि थी।

मुजान चरित में महाराज सूरजमल द्वारा घासहर का दुग घेर लेने पर वहाँ की प्रजा दुग के अधिपति राव बहादुरसिंह के समीप जाती है और अपने कष्टों का तक दकर उन्हें संधि करने के लिए विवश कर देती है।<sup>३</sup> इससे आग संधि का भग कर देने वाले राव बहादुरसिंह का साथ छोड़ते हुए उनकी प्रजा अपने शासक की निन्दा करती है और आक्रान्ता महाराज सूरजमल की दुहाई देकर, उनसे स्व रक्षा की प्राथना करती है।<sup>४</sup> अथवा दिल्ली के नागरिक अपने शासक अहमदशाह को जो उनकी रक्षा न कर पाया था, धिक्कारते मिलते हैं।<sup>५</sup> छत्रप्रकाश में महाराज चम्पतिराय की विजय के अवसर पर उनके प्रजा जन उन्हें बधाई देते हैं तथा आह्लाद मनाते हैं।<sup>६</sup> राजविलास में विजेता बाप्पा रावल के स्वागत में उनकी प्रजा तोरणोत्सव मनाते दिखाई गई है।<sup>७</sup> इसके विपरीत महाराज परमाल द्वारा आह्ला ऊल की महोत्से से निष्कासित करने पर महोत्से की प्रजा अपनी भावी विपत्ति को दृष्टिगत करती हुई अश्रुपात करती है।<sup>८</sup>

शासक और शासित सम्बन्धी उपयुक्त विवरण पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि शासक स्व प्रजा की रक्षा करना अपना एक आवश्यक कर्तव्य समझते थे। उन्हें अन्त प्रजा की रक्षा न करने पर लोक में उपहास होने का भय रहता था, अन्त बहुत से प्रसंगों में किसी साधारण प्रजा जन के ही अपमान का बदला चुकाने की घटनाएँ राज्यों के मध्य एक पारम्परिक शत्रुता में परिणत हो जाती थीं। प्रजा का शासकों के प्रति दृष्टिकोण मुख्यतया उन्हें ईश्वर के अवतार समझने का होता था। उनके मुख का दर्शन करने को पुण्यकर समझने की धारणा बहु प्रचार प्राप्त थी, जबकि कुछ सामाजिक उनके नाम स्मरण को भी भगवत् स्मरण की तरह शुभफल प्रदाता समझते थे। हाँ शासकों के प्रति इतनी पूज्य धारणाएँ तभी तक व्याप्त रहती थीं, जब तक उनका चरित्र उदात्त होता था और वे विभिन्न प्रकार की सामाजिक मायताओं के संरक्षक हाथ थे। इनके अभाव में प्रजा जन अनेक माध्यमों से अपना रोष व्यक्त करत थे। प्रजा राजनीतिक घटनाओं के प्रति उदासीन नहीं थी और विशेषतः चौहान नरेशों के शासन काल में तो पर्याप्त जागरूकता मिलती है।

१ स ६ - दे० प० रा०, का० २१३३।१८३ वही, ६३०।१७६, वही २३६।१५,  
 'मु० च० ५।३।१२-१३, ५।५।१६, ६।२।३१, 'छ० प्र०', ५।८, 'रा०  
 वि०', १।२३३, 'आ०' ३७५

(ख) शासन-संचालन में सहायक मंत्री और अधिकारी गण

ब्रजभाषा में वीरकाव्य में उपलब्ध निर्देशों से शासन संचालन में निम्नलिखित मंत्री और अधिकारियों के योगदान पर प्रकाश पड़ता है—

(क) रानियाँ—प्राचीनकाल की शासन व्यवस्था में रानियाँ की गणना मन्त्रि-परिषद् के रानियों में की जाती थी।<sup>१</sup> वीरकाव्य में किसी रानी के लिए 'रानी' शब्द का प्रयोग तो नहीं मिलता। किन्तु शासन संचालन में उनका पर्याप्त योगदान दिखाया गया है, जिनमें प्रतीत होता है कि राजमहिषी एक प्रकार से मंत्री ही हुआ करती थी। महाराज पथ्वीराज द्वारा महाने पर आक्रमण करने के समय, महारानी मल्हना स्वपति को उनमें दा मां नर युद्ध स्थिति रखने का प्रस्ताव भेजने का परामर्श देती है<sup>२</sup> जो काम रूप में परिणत किया जाता है।<sup>३</sup> रुठे हुए आल्हा ऊँच को कनौज से वापस बुलाने का भार भी वह स्वयं वहन करने चित्रित की गई है।<sup>४</sup> सयागिता विवाह के उपरान्त दिल्ली राज्य की संचालिका महारानी सयोगिता ही बन जाती है। महाराज पथ्वीराज छ माह तक दरबार नहीं करते हैं<sup>५</sup> और वह अपनी दासियों का ऐसा कड़ा पहरा बठा देती हैं कि दिल्लीघर का स्वराज्य की किसी भी प्रकार की हलचल का समाचार नहीं मिल पाता।<sup>६</sup> उह यह भी चात नहीं हो पाता कि शाह गौरी के आक्रमण का समाचार पाकर सहायता करने की कामना से उनके बहनोई रावल समर विक्रम बीस दिवस से दिल्ली के निकट आकर ठहर हुए हैं<sup>७</sup> क्योंकि सयागिता ने अपना प्रधान भेजकर उनका निगमबोध पर ही पडाव डलवा दिया था।<sup>८</sup> अपनी रक्षा की प्रार्थना लेकर राज द्वार पर एकत्र हुए प्रजाजनों का भी उनकी दासियाँ छडियाँ की मांग की वर्षा करके भगा देती हैं,<sup>९</sup> महाराजि इच्छिनी की कुशल दासी के माध्यम से ही महाराज को गुरुराम पुरोहित और कवि चंद का यह पत्र मिल जाता है कि आप गौरी में अनुरक्त हैं, जबकि आपकी धराम अनुरक्त शाह 'गौरी' आपकी राज्य सीमा में आ पहुँचा है।<sup>१०</sup> रासाकार का यह विवरण कदाचित् अमरश सत्य न हो, फिर भी इससे इतना तो अत्यन्त प्रतिभासित होता है कि शासन-व्यवस्था में सयोगिता सक्रिय भाग लेने लगी थी।

१ 'इसमें यह लक्षित होता है कि बदिक्काल में रानी की हैसियत केवल राजा की पत्नी ही की नहीं थी बरन शासन व्यवस्था में भी उसका एक स्थान था।'

—'प्रा० भा० शा० प०, प० ११०

२ स ५—दे० पर० रा०, ७।५६, वही, ७।८४ और ४८१।३ १२, 'पू० रा०', का० २१३।१७० ७१

३ से ६—दे०, प० रा० का० २१३।१६२ वही, २१२।४५ ४६, वही, २१४।२७४, वही २१४।२२५ २६

१० "कगर अण्ह राज कर। मुप जपह इह बत। गौरी रान तुम धरनि। तू गौरी रम रत। —वही, २१४।२।३७

छत्रप्रकाश में महाराज क्षपतिराय की रानी अपने आपदग्रस्त पति की रक्षा के लिए पड़े पुजारियों को धन देकर महाराज को शत्रु सैनिकों से छिपाने का प्रयत्न करती हैं।<sup>१</sup> महाराज छत्रसाल को शाह औरंगजेब से मनसब प्राप्त कराने का परामर्श उनकी माता द्वारा दिया जाता है।<sup>२</sup> 'हम्मीर रासो' में महाराज हम्मीरदेव अपनी पत्नी से युद्ध के विषय में मन्त्रणा करते हैं जो उन्हें युद्धाय प्रोत्साहित करते हुई कहती हैं कि किसी भी मूल्य तक शरण में आना महिमा शाह को शाह अलाउद्दीन को सौंपना उचित नहीं है।<sup>३</sup> गारा बादल की कथा में महाराज रतनसेन के मन्त्री महारानी पद्मावती को शाह अलाउद्दीन को सौंपकर, महाराज को धन मुक्त कराने का निणय कर लेते हैं।<sup>४</sup> महारानी पद्मावती अपनी अप्रभूत सुभ ब्रूम का परिचय देती हुई गौरा और बादल की सहायता से अपने सतीत्व की ही रक्षा नहीं करती, वरन् महाराज रतनसेन को भी बंधन मुक्त करा लेती हैं।<sup>५</sup> 'वीरचरित्र' में महाराज रामसाहि की रानियाँ उनके राज्याभियेक में सहयोग नहीं देती,<sup>६</sup> तथा अपने पति की इच्छा का उल्लंघन करती हुई रानी कल्याण दे उनकी महाराज वीरसिंह देव से हुई संधि वार्ता को भंग कर देती हैं।<sup>७</sup> राजबाला रूपकुवरी का दृष्टांत भी इसी कोटि में आता है, जिसने शाह औरंगजेब के प्रलोभन में फँसकर उसका विवाह औरंगजेब से कर देने का निश्चय करने वाले भाई का विरोध करते हुए<sup>८</sup> अपना माग स्वयं प्रशस्त किया था और महाराज राजसिंह को विवाहाथ पत्र भेजकर<sup>९</sup> अपना इष्ट साधन किया था।

सक्षेप में आलोच्यकालीन रानियों में से कुछ पति के स्थान पर स्वयं शासन-संचालिका थीं, कुछ उसमें महत्त्वपूर्ण योगदान करती थीं, जबकि अन्य अपने पतियों की उचित अनुचित आशाओं को शिरोघायन करके अपने कर्तव्य पथ का स्वयं चुनाव करती थीं। ऐतिहासिक साक्ष्यों में भी इन तथ्यों की पुष्टि होती है। श्री चित्तमणि विनायक वर्य और<sup>१०</sup> डॉ० दशरथ शर्मा<sup>११</sup> ने चौहान कुल की रानी सोमला देवी द्वारा तो अपने नाम के सिक्के चलवाने का उल्लेख किया है।

(ख) राज पुरोहित—पद्मीराज रासो, वीरचरित्र, मुजानचरित और राजविलास में राज-पुरोहिता का राज्य कार्यों में पर्याप्त योगदान प्रदर्शित किया गया है। इन प्रर्थों में उपायबध से स्पष्ट हाता है कि नरेश उह दौत्यकम के लिए प्रेरित करते थे, युद्ध प्रतिया के विषय में वे उनसे परामर्श लेते और प्रायः तन्नुकूल ही आचरण करत थे। प्रजा राज पुरोहिता को अपने दुःख दद नरेशा तक पहुँचाने का अप्रतिम माध्यम समझत थे। वे अभिचार नियामा द्वारा नरेशों की काया को अभिमन्त्रित, करने के

१२—६० 'छ० प्र०' ८।१० वही, १।१३

३ स ११—६० 'ह० रा०' ६७२, 'गा० क०', ६२, वही, छ० ६२ १३८, 'वी० च०' १०।३८, वही, १०।६८ 'रा० वि०', ७।२४, वही, ७।३५, 'हिंदू भारत का घन', पृ० २२४, 'मर्ली चौहान डाइनेस्टीज', पृ० १६६

साथ साथ युद्ध स्थान में शत्रु मना पर भी मंत्रा का प्रयोग करके उस हतोत्साहित करने का प्रयास करते थे, जिससे नरेशों की दृष्टि में उनका महत्त्व और भी अधिक रहता था। हाँ, वीरकाव्य में किसी पुरोहित के लिए मन्त्री सत्ता का प्रयोग अवश्य नहीं किया गया है।

महाराज पृथ्वीराज बालुकाराज के आक्रमण किये जान पर उनसे युद्ध करने किसे भेजा जाय—इस विषय में अपने पुराहित गुरुराम से परामश लेते हैं।<sup>१</sup> महाराज परमाल भी अपने पुरोहित से मन्त्रणा करते विभ्रित किए गये हैं।<sup>२</sup> शाह गौरी के अन्तिम आक्रमण से पूर्व विनास मग्न त्रिनीश्वर को चैनत करने के लिए प्रजा को मात्र गुरुराम ही आशाकिरण दिखाई देने हैं।<sup>३</sup> प्रजा-जन चाटुकार सामन्ता और कवि चन्द आदि की वित्त बोलुप बढ़कर निंदा करो हैं और उह ही राज्य के सच्चे और निर्लिप्त हितपी बताकर, महाराज का युद्धाय प्रबुद्ध कराने का उत्तर दायित्व सौंपते हैं।<sup>४</sup> पुरोहित द्वारा यजमान काया का अभिमन्त्रित करने से सम्बन्धित विश्वास का भी पृथ्वीराज रासो में ही अभियजन हुआ है। शाह गौरी से होने वाले प्रथम युद्ध से पूर्व गुरुराम, महाराज पृथ्वीराज का स्तोत्र पढ़कर विष्णु पजर प्रदान करते हैं। इस अभिचार त्रिया में उनका विविध शरीरागा की रक्षा का भार, विभिन्न देवों को सौंपा जाता है।<sup>५</sup> शाह गौरी से होने वाले अन्तिम युद्ध से पूर्व भी व महाराज को बालपा मन्त्र, पढ़कर उनकी काया अभिघनात चित्रित किए गये हैं।<sup>६</sup> रासो में विश्वास प्रकट किया गया है कि इन मन्त्र कवचा के कारण शस्त्र घात ही न लग पायगा।<sup>७</sup> रासोकार ने गुरुराम पुराहित का अभिमन्त्रित विभूति क्षिप्त करके, शाह गौरी की सेना को निश्चेष्ट करते भी प्रशंसित किया है।

सुजानचरित में महाराज सूरजमल के कुल-पुराहित, आक्रमणाय आए महारारव से सन्धि करने का प्रस्ताव लेकर जाते हैं। स्व-यजमान की हिताकांक्षा से वे अपनी चार लाव की राशि भी महारारव को देने के लिए प्रस्तुत हा जाते हैं।<sup>८</sup> वीरचरित में महाराज रामसाह स्वभ्राता वीरसिंह देव से सन्धि करने हेतु अपने कुल पुरोहित केशव मिश्र को भेजते हैं, जो ऊँच-नीच की बहुत सी बातें समझाकर, दोनों भाइयों में सन्धि करा देते हैं।<sup>९</sup> राजविलास में महाराज राजसिंह शाह औरगजेव के आक्रमण का सामना करने के लिए अपने पुराहित के परामश के अनुकूल ही पहाडियों की शरण लेकर युद्ध करने की याचना बताते हैं।<sup>१०</sup>

पृथ्वीराज रामा में वर्णित राज-पुराहित के कृत्य, उनके प्राचीनकाल में

१ से ४—दे 'पृ० रा०', मो० ३।७०।२, 'प० रा०', का० २५०५।१३७, वही, २१३३ १८५, 'प० रा०', मो० ४।६५।११६ १८  
 ५ से १०—दे०, प० रा०', मो० २।६६५।२०१, वही ४।११२३।२४३, वही, २।६६५।२२५, सू० रत्ना०', प० ११० ११, वी० च०, १०।३३ ५६, रा० वि०' १०।७१ ७६

स्वीकृत वस्तुओं में साम्य रहने के लिए प्रजापति प्रमुखा— पुत्रादि का यत्न काल के रत्नियों में प्रमुखा रथा था और कई शास्त्रियों तथा उग्रता रथा मंत्र परिष्कार कायम रहा। वह राजा का मुख था। उग्रता का मन्त्र का प्रतिष्कार प्रमुखानों का प्रतिष्कार करता और अथशास्त्र में यत्न पुत्रादि मंत्र द्वारा राष्ट्र का अन्वेषण करना था। वह राजा का हाथ और पादादि में अग्रत करता था और अदि का मंत्र राजा का मन्त्र युद्ध क्षमता में अग्रत मंत्र का और स्तुतियों द्वारा देवताओं को प्रगत करके अग्रत प्रार्थना करता था प्रगत करता था।<sup>१</sup>

(ग) प्रधान—प्रधान अथवा परधान का उल्लेख हमारे आताम्यवाक्य में अग्रत काल में रचित ग्रन्थों में मिलता है जिनमें उक्त में श्रीमत् और 'मंत्रिय प्रधान'<sup>२</sup> अर्थात् प्रधान मन्त्री कहा गया है। टी० अग्रत मंत्र भी प्राचीन भारतीय शासन व्यवस्था पर प्रकाश डालने हुए प्रधान शब्द का प्रधान मन्त्री का वाचन बताया है।<sup>३</sup> प्रधान मन्त्री का सर्वाधिक उल्लेख पञ्चमीराज रामा में हुआ है, जिसमें महाराज वीरसदव,<sup>४</sup> सारगदव,<sup>५</sup> भीमदेव<sup>६</sup> जयचन्द<sup>७</sup> पञ्चीराज,<sup>८</sup> भानाभीम<sup>९</sup> तथा कागडा नरेण<sup>१०</sup> के राज्या में प्रधानों का विविध प्रकार का कार्य सम्पादन करना चित्रित किया गया है। प्रधान पद की महत्ता का कारण ब्रह्मचर्य न उसके निर्धारण में अग्रत की अतीव सावधानी रखते हुए किसी ब्राह्मण का यह पद सौंपन का परामर्श लिया है। उसके मत में 'क्षत्रिय को प्रधान बनाने पर यह आशंका रहती है कि वह राज्य द्रव्य को खायेगा और रोके जाने पर राजा को अर्पणें दिलायगा। वश्य राज्यकाय को शन शन अपने घर में भर लेगा और लाभवश राजा को भी शत्रु का हाथ बच सकता है। यही समस्या कायस्थ को प्रधान पद सौंपन पर समुपस्थित हाती है क्योंकि वह निश्चिन्त राज्य कोप का स्वाध चिन्तन में अग्रत करता रहता है।'<sup>११</sup> इस सदभ म

१ दे० 'प्राचीन भारतीय शासन व्यवस्था', पृ० ११६-१७

२ (क) राजकाज दाहिम्न। रहै दरवार अल्प वर। चापेटक दिल्ली नरेस पेल कमध डर। दस भार म त्रीस राव उडर मुधार। न को सीम चपव। हृद तप्य मु करार।" — पृ० रा०, का० १४७-१४८

(ख) पण वचन मन्त्रीस डर मन भिटटयो न प्रमान। पृ० रा०, का० १२६७-१२७

३ 'तव सुम मंत्र मंत्रिय प्रधान। उच्चरिय राजवर।' — वही, १४२-१४४

४ दे०, प्राचीन भारतीय शासन व्यवस्था' पृ० ११८

५ 'मुल्लाय सए मन्त्रीप्रधान। सर रची इहाँ पुहवर समान।"

—'पृ० रा०', का० ७३-७४

६ से ११—दे० 'पृ० रा०' का० ७१-७३, वही १०१-१०२, वही, १२६-१२७, वही, १४३-१४४, वही ४५-४६, वही १०४-१०५

१२ "पत्रि होय परधान काय पडो दिखताव। साह होय परधान भर घर राज समाव। कायथ होय परधान अहो निस रहै पियतो। यभन होय प्रधान सत्ता रप्यव अचित्यो।" —'पृ० रा०', का० २४६-२४७

यह निवृत्त अफगान न हागा कि व्यवहार में ही नियम का पालन प्रचलन नहीं मिलता। यद्यपि कुछ प्रयोगों की जाति के दिपय में निर्देश नहीं मिलता, तथापि महाराज पृथ्वीराज का प्रधान कर्मा, उनका सारा और जाति का सन्निध था। इसी भाँति महाराज सारंगदेव का प्रधान किरपाल नामक कायस्थ<sup>१</sup> तथा वीमनदेव का पाँचलुवर नामक तामर<sup>२</sup> प्रशिक्षित किया गया है। रासा में महाराज भालाभीम<sup>३</sup> तथा वीरचरित्र में महाराज वीरमिह दत्त<sup>४</sup> के प्रधान अवश्य ब्राह्मण थे। क्यामरा रासा में नरगा को प्रधान से सन्तक रहने का परामर्श देते हुए मत यत्न किया गया है कि नरगा और उसके प्रधान के समतुल्य बनाए जाय पर जा पहले राजनीति काट करता है उसी की जीत होती है। यदि नरगा इसमें अगाधधानी कर दे तो बाद में कुछ नहीं हो सकता।<sup>५</sup>

वीरकाय में प्रधानों के अधिकार में विभिन्न प्रकार के राजकीय विभाग स्थापित गये हैं। उन्हें हम कोषाध्यक्ष सचिव विग्रह के नियामक गुप्तचर, भेजकर शत्रु-राज्यों की दण्ड का ध्यान प्राप्त करने का राजदूत के रूप में शत्रु-दरबार में जाकर साम-दास्य, दण्ड और भ्रष्ट नीति के प्रयोग से उन्हें कम में करने वाले तथा नरेश की अनुपस्थिति में राज्य काय का संचालनकर्ता पाते हैं।

पृथ्वीराज रासा में महाराज वीमनदेव किरपाल नामक प्रधान का राज्य-कीय लेखक वीमल सरावर पर पन्नाव डालने का आदेश देते हैं।<sup>६</sup> क्यामरा रासा में प्रधान को कोषाध्यक्ष नियुक्त किया है<sup>७</sup> जबकि वीरचरित्र में उसके अधीन वित्त और शस्त्रास्त्रों के विभाग चित्रित किए गए हैं।<sup>८</sup> हम्मीर हठ में साह अलाउद्दीन को अपने प्रधान से महाराज हम्मीरदेव के दुग की दीवार का उठाने का रहस्य पृच्छन दिखाया गया है,<sup>९</sup> जिसमें प्रतीत होता है कि उन्हें उनका सनाध्यक्ष रहा होगा।

महाराज वीमनदेव और बालुकराज के मध्य हुई संधिधर्मा में उनके प्रधान मंत्रियों का प्रमुख हाथ मिलता है। रक्तपात का बचाने के लिए महाराज बालुकराज के मंत्री उनके महाराज वीमलदेव की आर से सन्ध्यय एव जाती पत्र दिखाकर राजधानी भेज देते हैं<sup>१०</sup> और भाईचारे का आग्रह करने हुए महाराज वीमलदेव के प्रधान का सचिव के निग विवश करने हैं।<sup>११</sup> महाराज वीमनदेव भी सचिव की सभी बातों को अपने प्रधान पर छोड़ने हुए मात्र इतना कहते हैं कि यहाँ पर मेरे लिए एव महल अवश्य बनना देना।<sup>१२</sup> हमी भाँति महाराज पृथ्वीराज से युद्धाभ्राने वाले शाहगोरी<sup>१३</sup> तथा महाराज पृथ्वीराज को महाराज अमरपाल द्वारा दिल्ली राज्य सीपने

१ स ५—दे०, 'प० रा०', का० ७१।३५३, वही, ६२।६६४, वही, ४५२।२८, 'वी० च०', २२।१२ क्या० रा०', २६६

६ स १३—दे०, 'प० रा०', का० ८६।४१९ 'क्या० रा०', छ० १६४, 'वी० च०' २२।१२, 'ह० ह०', च०, छ० २३३ ३४, 'प० रा०' का०, ६२।४६२ ६३, वही, ६२।४६४, वही, ६३।४६६ ६७, वही, ११०।४६२

के लिए लिखा गया पत्र उन्हे प्रधानमंत्री कमाग का दिया जाता है।<sup>१</sup> महाराज जयचंद का उन्हा प्रधान सुमत मुद्र-परामश देता है कि राजसूय यन्तसम्पन्न करने से पूव रावल समर विभ्रम का अगती और मिलाता उचित रहेगा।<sup>२</sup> इस दुष्काय के साथनाथ महाराज जयचंद अपने प्रधान को ही रावल समर विभ्रम क समीप भेजने चित्रित किए गए हैं।<sup>३</sup>

प्रजा के दुःगणों का भी प्रधान राजा तक पहुँचता था। महाराज बीसलदेव की प्रजा महाराज के दुःगचरण स मुक्ति पान का निवेदन लेकर उनका प्रधान क समीप जाती है,<sup>४</sup> जो प्रजा के पचजना के साथ महाराज को प्रजा के आश्राश स अवगत करता है और उन्हे परामश देता है कि आप विद्राही भूमिधरो के दमन के लिए अजमेर से बाहर चलिए।<sup>५</sup> शाह गोरी क अतिम आश्रमण क समय (इस समय तक कमास का वध हो चुका था) दिल्लीवासी तटरालीन प्रधान मपुशाह को अपशब्द कहते मिलते हैं कि यह राजदरबार म ही टिगाई गही देता,<sup>६</sup> जिसस यह महाराज को हमारे कण्टा को सुना सके।

महाराज पृथ्वीराज के प्रधान कमास को हम उनकी अनुपस्थिति म राज्य-काय का सचालन करते पाते हैं।<sup>७</sup> राज्य-काय की देखरेख के साथ-साथ वह आश्रामकों को महाराज की अनुपस्थिति म मुहताड उत्तर भी देता है।<sup>८</sup> इसके अतिरिक्त कमास को शाह गोरी की गति विधियो स अवगत हाने के लिए, कुछ गुप्तचरो को भेजत चित्रित किया गया है<sup>९</sup> जिसस प्रधानम श्री का अधिवार-क्षेत्र प्राय सभी प्रकार के राज्य-कार्यों की देखरेख करना प्रतिध्वनित हाता है।

रासो म गण्यमाय अतिथियो का स्वागत करना और राज दरबारी म राजदूत क रूप म जाना प्रधानो के अय क्त य दिखाए गए हैं। महाराज जयचंद द्वारा अपने प्रधान का रावल समर विभ्रम के पास स अय भेजने का उल्लेख किया जा चुका है। वे महाराज पृथ्वीराज का दिल्ली राज्य का अधभाग बांट देने और दरवान के रूप म, राजसूय यज्ञ म आने के लिए तयार करने का भार भी अपने प्रधान की ही बुद्धि पर छोड़ते हैं।<sup>१०</sup> महाराज भालाभीम इच्छिनी के पिता महाराज सलख जेतराव के समीप अपने प्रधान क माध्यम से विवाह का स देश भेजते मिलते हैं,<sup>११</sup> जबकि रावल समर विभ्रम अपने प्रधान को महाराज पृथ्वीराज के पास मोलाभीम के आक्रमण का समाचार देने भेजते हैं।<sup>१२</sup> दिल्ली आने वाले रावल समर विभ्रम का स्वागत महाराज पृथ्वीराज की और स उनके प्रधान द्वारा किया जाता है।<sup>१३</sup>

१ से ८—६०, पृ० रा०, का० ५८८।१, वही, १४२१।२४, वही, १४२२।२६, वही, ८४।४१४, 'प० रा०', का० ८५।४१५, वही, २१३०।१६७, वही, १४३६।१२३, वही १४३७।१२५ से १४४७।१६५

९ से १३—६० प० रा० का० ११८५।४६५०, वही, १४३१।८७, वही, ४५०।१७, वही, १०००।४०, वही, २१४८।२७४

विविध राज मंत्रणाओं में प्रधान से अनिवाद्यत परामश लिया जाता था।<sup>१</sup> हाँ उसे स्वीकार अथवा अस्वीकार करना नरेशों की इच्छा पर निर्भर रहता था। कामास के जीवित रहने तक, महाराज पृथ्वीराज अपनी सभी प्रकार की योजनाओं में उसकी मंत्रणा लेते<sup>२</sup> और प्रायः तदनुकूल ही आचरण करते मिलते हैं।<sup>३</sup> महाराज जयचन्द अपना प्रधान से बार-बार परामश करते मिलते हैं। उसकी इस मंत्रणा को स्वीकार नहीं करते कि 'राजसुय यज्ञ' करना अनुपयुक्त है<sup>४</sup> और इस प्रकार का परामश देने के लिए इसकी भत्सना करते हैं।<sup>५</sup> काँगडा-नरेश अपने प्रधान से महाराज पृथ्वीराज के आक्रमण का प्रतिकार करने का उपाय सूझते दिखाने गए हैं।<sup>६</sup> महाराज भीमदेव अपने प्रधान से महाराज पृथ्वीराज के खड्ग के साथ स्वपुत्री की भाँवरों डालने अथवा न डालने के विषय में मंत्रणा तो करते हैं,<sup>७</sup> किन्तु जब वह विवाह के पक्ष में मत देता है तो उसके मत की अवहेलना करते हुए युद्ध मांग अपाते हैं।<sup>८</sup>

निष्कपट प्रधान की सहायता में सर्वोच्च स्थिति थी। नरेश की अनुपस्थिति में राज्यकार का भार प्रायः उसीको सौंपा जाता था। राज्यकार्य और मायुध विभाग प्रधान के ही अधिकार में रहते थे। संधि विग्रह विषयक वातात्मा तथा अथ राजकीय मंत्रणाओं में प्रधान से परामश तो अवश्य लिया जाता था, किन्तु उसके मत का स्वीकार अथवा अस्वीकार करना, नरेशों की इच्छा पर निर्भर रहता था। प्रमुख राजनीतिक योजनाओं के कार्यान्वयन के लिए प्रायः साधारण राजदूत के स्थान पर, प्रधान को ही भेजा जाता था। उससे प्रजा की दुःशा अथवा विशास में नरेशों का अवगत बनने की अपेक्षा की जाती थी। यह तथ्य भी ध्यातय है कि उसका मनोनीत अथवा अपदस्थ करना, राजा की इच्छा अनिच्छा पर निर्भर रहता था, अतः उसे अपने पद की सुरक्षा हेतु नरेशों की असंगत वातात्मा भी शिरोधार्य कराया पड़ता था। नरेशों को भी अपने प्रधान से सतत रहना पड़ता था, क्योंकि कभी-कभी वे उनके विरुद्ध पडयंत्र रचकर या तो स्वयं राज्य पद प्राप्त कर लेते थे, अथवा किसी अन्य व्यक्ति को नरेश बना देते थे।

प्रधान के अधिकारों के विषय में उपयुक्त तथ्या की पुष्टि ऐतिहासिक साक्ष्यों से भी हो जाती है। डॉ० अलनेकर ने प्रधान को सर्वदर्शी—सम्पूर्ण राज्य कार्य पर नजर रखने वाला बताया है।<sup>९</sup> डा० राजबली पाण्डेय ने अश्व, गज, रथ और पदाति सेना की व्यवस्था भी प्रधान के ही अधिकार में दिखाई है।<sup>१०</sup> डा० दशरथ शर्मा ने प्रधानाचार्य को राजकीय सीलो और राज्यकार्य विभाग का अध्यक्ष प्रदर्शित किया

१—हे०, 'प० रा०', का० ७१६।२७३, वही, १३७।६२ ६४

२ से ७—द० 'प० रा०', का० १२६७।३० ३२, २६७।३२ ३३, वही, १०४।१३, वही, १०१।१८, वही, १०१।१९

८—द०, 'प्राचीन भारतीय शासन-व्यवस्था', पृ० ११८, हि० सा० का वृ० ३०', भाग १, पृ० ५६



है।<sup>१</sup> प्रधान को सचिव विग्रह का नियमन तथा राजदूत के रूप में काम करना दिया गया है। परराष्ट्र मंत्री और राजदूत के कार्यों की सम्पन्ना का भी प्रधान के माध्यम से चित्रित करने का कारण बताचित् यह रहा है कि परराष्ट्र मंत्री का तात्कालिक वीरकाव्य में उल्लेख ही नहीं मिलता। दूत का उल्लेख अवश्य मिलता है, किन्तु इष्ट काम की सुरक्षा के अनुसार साधारण दूत की प्रथा नीचे चतुष्टय में दस प्रधान को भेजना ही अधिक प्रचलित रहा होगा। हिन्दू शासकों के प्रधानों का युद्ध में भी भाग लेना एक अत्यन्त उल्लेख्य विशेषता है, क्योंकि डॉ० आशीर्वादीनाल श्रीवास्तव के अनुसार मुगलकाल में प्रशासनिक कर्मचारियों के अजीब-गरीब नेतृत्व शायद ही कभी सौंपा जाता था।<sup>२</sup> कबल के युद्ध का पीछे उल्लेख किया जा चुका है। महाराज जयचन्द का प्रधान सुमत महाराज पृथ्वीराज को बचाने की प्रतिज्ञा तथा युद्ध करते मिलता है।<sup>३</sup> काँगडा-नरेश का प्रधान भी उन्हें आश्वासन देता है कि जब तक मैं जीवित हूँ आपको महाराज पृथ्वीराज के आश्रय से प्रसन्न होने की कोई आवश्यकता नहीं है। मैं अभी युद्ध में उनका मानमदन किए देता हूँ।<sup>४</sup>

प्रधान शब्द के प्रयोग के विषय में यह निवेदन करना आवश्यक है कि वीरकाव्य में कुछ ऐसे राज्याधिकारियों के लिए भी प्रधान शब्द प्रयुक्त किया गया है जो वस्तुतः प्रधान मंत्री नहीं थे। पृथ्वीराज रासा में महाराज्ञी सयोगिता के प्रधान को भोज के उपरांत मं भोजका के ऊपर पसा भनत हुए यह निवेदन करते प्रदर्शित किया गया है कि - भोजन तयार करने में जो धुटियाँ रह गई हैं उनके लिए क्षमा करें।<sup>५</sup> महारानी सयोगिता का यह प्रधान निश्चय ही उनका प्रधान रसोइया प्रतीत होता है। इसी भाँति क्यामला रासा में सुल्तान नसीरुल्लाह अपने गुनाह मल्लूखों को प्रधान-पद पर नियुक्त करते हैं<sup>६</sup> जो बादशाही के लोभ में उनकी हत्या का पड्यन रचता है। सुल्तान के निधन पर उनके कोई पुत्र न हान के कारण मल्लूखों स्वयं सुल्तान बनना चाहता है किन्तु दुःख की चारियाँ किसी समय प्रधान के पास दिखाई गई हैं जो उन्हें क्यामला को सौंपने हुए छत्र धारण करने का निवेदन करता है।<sup>७</sup> क्यामला द्वारा बादशाह बनने की अनिच्छा प्रकट करने पर प्रधान (यहाँ कवि जानने प्रधान का बहुवचन में प्रयोग किया है) मल्लूखों की बाँह पकड़कर उस तरफ पर बिठाते चित्रित किए गए हैं।<sup>८</sup> कहना न होगा कि कवि जानने प्रधान का मल्लूखों के सदा में प्रधानमंत्री के अर्थ में प्रयोग करने के साथ साथ सामान्य मंत्रियों

१ दे०, अली चौहान डाइनस्टीज प० १६६

२ 'He was primarily a civil officer and was very seldom given the command of an army' — The Mughal Empire, p 512

३ से ५—दे०, प० रा० का० १७१५।६२८ वही, १७२२।६८६, वही, १०४।१४

६ से ६—दे० प० रा० का० २०००।१०८, क्या० रा०, १८५, वही, १६४ ६५, वही, २०४

के अर्थ भी प्रयोग किया है। उसने अथवा भी प्रधान शब्द का बहुवचन में प्रयोग करने हुए उसका राजदूता के लिए प्रयोग किया है।<sup>१</sup> महाराज शिवाजी की इतिहास प्रसिद्ध शासन-अवस्था जिस अष्ट प्रधान बहा जाता है, प्रधान का मंत्रियों के ही अर्थ में ग्रहण किया गया है, प्रधानमन्त्री के अर्थ में नहीं।

(घ) वजीर—मुस्लिम बादशाहों के दरबारों में प्रधानमन्त्री का वजीर कहते थे। वजीर का पृथ्वीराज रासो, हम्मीर रासो, हम्मीर हठ, सुजान चरित, वीरचरित और गा-वचित्रों में उल्लेख मिलता है। वजीर के भी वीरवाच्य में विविध प्रकार के वास्तव्य चित्रित किए गए हैं। पृथ्वीराज रासो में शाह गोरी का वजीर तत्तारण्डा उर्हैं यह परामर्श देता है कि राजदूत के वध से आपकी अपयश मिलेगा, क्योंकि हिन्दू और मुस्लिम दोनों ही राजनीतिशास्त्र में उसे अव्यय माना जाता है।<sup>२</sup> युद्ध-मन्त्रियों के समय भी हम शाह गोरी का तत्तारण्डा से परामर्श करने पाते हैं।<sup>३</sup> शाह गोरी को महाराज पृथ्वीराज की कद से मुकन कराने का प्रस्ताव भी उनके वजीर द्वारा ही भिजवाया जाता है।<sup>४</sup> कीर्तिलता में शाह इब्राहीम लाधी का वजीर उनसे दरबार लगाने का निवेदन करते प्रदर्शित किया गया है।<sup>५</sup>

हम्मीर रासो में शाह अलाउद्दीन अपने वजीर का महाराज हम्मीरराव के लिए यह फरमान भेजने का आदेश देते हैं, कि वे मर अपराधी मीर महिमा को शरण प्रदान न करें।<sup>६</sup> महाराज हम्मीरराव से नवारात्मक उत्तर आने पर शाह का वजीर काचित शाह को शांत करने का प्रयत्न करता है।<sup>७</sup> वह शाह को कलावत्तु का एक नवली महिमाशाह बनाकर और उसे कद करके अपना बाप शांत करने का परामर्श भी देता है।<sup>८</sup> किंतु शाह अलाउद्दीन उसकी अभिमन्युता को स्वीकार नहीं करते। यह युद्धस्थल में भी युद्ध-नीति की मन्त्रणा देने दिखाया गया है।<sup>९</sup> हम्मीर हठ में वजीर (वजीर) का महाराज हम्मीरराव से महिमाशाह का लौटाने के साथ-साथ दंड रूप में उसकी पुत्री का डोना भी लाने के लिए महाराज के दरबार में भेजा जाना चित्रित किया गया है।<sup>१०</sup> मुजावरित में अहमदशाह का वजीर मनसूर दिखाया गया है।<sup>११</sup> अहमदशाह उसे अपने मीर बरशी की बातों में आकर, दिल्ली से निष्काशित कर देते हैं,<sup>१२</sup> जिसके प्रतिरोध में वह कामबख्श के पात अरबख को दिल्ली महल का उत्तराधिकारी निश्चिन करता हुआ,<sup>१३</sup> उनके विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर देता है।<sup>१४</sup>

१ परधाननि को धके द, बाढे काही मार।

बहो बनीठ त भारिय, नातर डारत मार। —'क्या० रा०', पृ० ५०६  
२ से ७—६०, पृ० रा०', का० ४६९।३४, वही, ३६५।६३, वही, ७२।२६२,  
'कीनि०', पृ० १६, 'ह० रा०', छ० ३१६, वही, द्र० ३२३  
८ से १४—६०, 'ह० रा०', छ० ३६७ ७०, वही, ५३२ ३६, ह० ह०', छ० ८५,  
६५, 'गु० च०', ६।१।१५, वही, ६।१।१७, वही, ६।२।१२, वही, ६।१।२०

अतः अमेरपति माधोशाह वजीर मनसूर और अहमदशाह के मध्य संधि करा देते हैं।

वजीरों के सम्बन्ध में उपयुक्त विवेचन से उनका अधिष्ठाता क्षेत्र प्रधान मंत्रियों के समकक्ष सिद्ध होता है। राजकीय मंत्रणाग्राहक वजीर से परामर्श लेना, शाह की अनुपस्थिति में राज्यकाय की देखरेख, संधि वार्ता में योग्य बलवत्त शत्रु को वश में करने के लिए उनके राज्य में दूत भेजना तथा नियत बादशाहों को पट्टाच्युत कर देने की क्षमता, ये सभी कार्य वजीरों की उच्चस्थिति के निदर्शक हैं। प्रधानों की भांति वे युद्धों में भी भाग लेते मिलते हैं। तत्कारणों को पृथ्वीराज रासो में वर्णित शाह गौरी के प्रायः सभी युद्धों में भाग लेते चित्रित किया गया है।<sup>१</sup> वजीर मनसूर तो अहमद शाह को नाको चने चवा ही देता है, शाह अलाउद्दीन के वजीर को भी युद्ध करते दिखाया गया है।<sup>२</sup>

अतः यह उल्लेख करना आवश्यक है कि वीरकाव्य में 'प्रधान' शब्द की भांति 'वजीर' का भी प्रमुख मंत्री से भिन्न अर्थ में प्रयोग मिलता है। कवि गग ने टोडरमल को सम्राट अकबर का वजीर बताया है,<sup>३</sup> जबकि वे उनके दीवान या अधिसचिव थे।<sup>४</sup> इसी भांति केशव ने वजीर को एक साधारण मंत्री के अर्थ में प्रयुक्त किया है। उन्होंने महाराज वीरसिंहदेव के राज्य-कार्यों का वर्णन करते हुए उनके दरबार में गणक चिकित्सक, प्रधान और सेनापति के पश्चात् वजीरों का स्थान चित्रित किया है।<sup>५</sup> पृथ्वीराज रासो<sup>६</sup> और क्यामखाना रासो<sup>७</sup> में वजीर शब्द का बहुवचन में प्रयोग किया जाना भी उसके मंत्री अर्थक प्रयोग का निदर्शक है। कवि गग और केशव के ये प्रयोग ऐतिहासिक साक्ष्यों की कसौटी पर खरे उतरते हैं। डॉ० सरकार ने अभिमत व्यक्त किया है कि 'वजीर एक आन्तरास्पद उपाधि मात्र भी थी, जिससे किसी विभाग विशेष के अध्यक्ष का बोध न होकर उच्च मंत्रित मात्र ध्वनित होता था।'<sup>८</sup> यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि डॉ० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव ने कवि गग और केशव के समसामयिक सम्राट अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ के राज्यकालों में प्रधान-मंत्री के अर्थ में तो वजीर शब्द का प्रयोग किया जाना प्रदर्शित किया है।<sup>९</sup> अतः कवि गग द्वारा भी टोडरमल को शाह अकबर का वजीर बताने का अभिप्राय, उन्हें शाह अकबर का प्रधानमंत्री दिखाने से नहीं है।

१ से ७--दे०, 'प० रा० का० १२०-२११८ १६, 'ह० रा०' ४६४, 'ग० क०', छ० २६५ भा० सं० और उ० इति० प० ४७६, 'वी० च०', १२१४२, 'प० रा०', का० ४७०।१३७, 'क्या० रा०', ५८२

८ "As a rule Wazir in later times was simply a title of the high officials — 'Mughal Administration', FN on P 20

९ 'Under Akbar Jahangir and Shah Jahan the Prime Minister bore the title of Vakil or Vakil i Mutlagi. Some times he was called Wazir or Wazir i Ala — 'The Mughal Empire', P 512

दीवान—दीवान का काय राजकीय भ्राम को प्राप्त करना व उसका हिसाब रखना होता था ।<sup>१</sup> दीवान सम्बन्धी उल्लेख परमाल रासा, जगनामा सुजानचरित वीरचरित, क्यामला रासा, प्रताप रासो और राजविलास म मिलत हैं । परमाल रासो<sup>२</sup> और जगनामा<sup>३</sup> म दीवान के पद पर कायस्थो की नियुक्ति दिखाई गई है जिससे ध्वनित होता है कि वे वित्त क मामले से ही सम्बद्ध रहे हान, क्याकि वित्त विभाग म कायस्था का नियुक्त करने का विशेष प्रचलन था । प्रताप रासो म दीवान को राजकोष का अध्यक्ष दिखाया गया है ।<sup>४</sup> सुजानचरित म महाराज सूरजमल अपन दुग-दीवान से गाला बारूद के विषय मे पूछताछ करते मितत हैं ।<sup>५</sup> जिससे स्पष्ट हाना है कि कुछ दीवान राजकीय बारूदखाने के भी अध्यक्ष होते थे । यह भी सम्भव है कि इस सन्दभ मे सूदन का दीवान स अभिप्राय म नी मात्र से रहा हो और उमन मुगल शासनकाल के 'दरोगा ए तोषखाना' क लिए 'दुग-दीवान' शब्द का प्रयोग किया है । कवि ग्वाल और चन्द्रशेखर न दीवान के पद को प्रघानमत्री की कोटि का दिखाया है । ग्वाल न महिमाशाह के महाराज हुम्मीरदेव की शरण म जाने पर महाराज अपन दीवान स ही मन्त्रणा करते चित्रित किए गये हैं ।<sup>६</sup> चन्द्रशेखर न दीवान को महाराज के सामन्तो की बठक बुलाते दिखाया है,<sup>७</sup> महाराज का प्रघानमत्री भी रहा होगा । डा० जदुनाथ सरकार न अभिमत व्यक्त किया है, कि प्रघानमत्री ही दीवान के रूप म प्राय राजस्व विभाग भी सभालता था, किंतु सभी दीवान वजीर नहीं हात थे ।<sup>८</sup> तात्पर्य यह कि दीवान राजस्व विभाग का अध्यक्ष होता था । विविध राज्या म कभी तो पृथक् दीवान नियुक्त रहता था, जबकि प्राय स्वय प्रघानमत्री या वजीर ही दीवान का काय भी सभालता था ।

शेष ग्रन्थो म दीवान का आदरसूचक विशेषण के रूप म प्रयोग किया गया है । महाराज वीरसिंहदेव अपने अग्रज राजा रामशाह को दीवान कहत है ।<sup>९</sup> कवि जान न अपने पूबज क्यामला क लिए दीवान शब्द प्रयुक्त किया<sup>१०</sup> है, जो मान आदर सूचित करने क लिए ही है, क्याकि ग्रंथ म उह दिल्ली का फौजदार बनाये जाने का तो उल्लेख मिलता है, किंतु कहीं भी उन्हें दीवान पद सौपन का चित्रण नहीं किया गया । इसी भांति कवि मान न महाराज राजसिंह को दीवान कहकर सम्वाधित किया है ।<sup>११</sup>

१ स ३—द०, 'भारतीय सस्कृति और उसका इतिहास', प० ४८६, पर० रा०', २।१६, जग०', प० ७०४

४ से ७—द०, पृ० रा०, ३६, 'सु० च०, ७।२।३०, ह० ह०', ग्वा०, ५८ ५६, 'ह० ह० च०, छ० १५१

८ दे०, मुगल एडमिनिस्ट्रेशन', प० २०

९ 'हमको दीज सीख दिमान सीख तुम्हारी सदा प्रमान । —'वी० च०' ४।१० १०-११—दे०, 'क्या० रा०', छ०, १६४, 'रा० वि०', ८।१०७

भण्डारी या भांडागारिक तथा मोदी—परमात रागा म भण्डारी का स्वग  
 ण्णार गोपा का उल्लंग किया गया है<sup>१</sup> जिसम स्पष्ट जाता है कि बापाघ्यदा को  
 भांडारी कहा जाता था। डॉ० स्यामराज म अथवा दिया है कि गिनानगा पर  
 जरातीण सगा म भांडागारिक काप घोर भांडार क अधिचारी का कहा गया  
 है। + + + साल भर म राजभांडार म जाता घाया घोर गया घोर घन म गया  
 वचा, दगका पा रागा दगका नाम था।<sup>२</sup> डॉ० श्याम घर्मा म भांडागारिक की  
 तुलना काटल्य द्वारा लिखित सात्पाता स की है तथा महाराज हुम्मीरदन क  
 भांडागारिक क अधिचारी म राजराय तथा (घन घाति का) भांडार दोना विभाग  
 दियाय है।<sup>३</sup> परमाल रामा म उल्लिखित शीवाय क अधिचारी म घन घादि का  
 भांडार दियाया ता नही गया है कि तु क्वाचित यह उताता भी अध्यक्ष रहा होगा।  
 सुजान चरित्र म घन घादि राय-नामघी के प्रथ घवर्ता क लिए 'मांी' सगा प्रमाण  
 की गई है। महाराज वदारासिह मांी स प्रथ वरत है कि दुग म घन, घत, नमक  
 और तेल आदि कितनी मात्रा म सुरक्षित है।<sup>४</sup> मोदी प्रत्युत्तर देता है कि घाप दो  
 वप तक निश्चित लडते रहिए मैं चार लाख मनुष्या क भोजन का दो वप तक प्रवच  
 करता रहूंगा।<sup>५</sup> इसस प्रतीत होता है कि भण्डारी के अधिचारी म क्वाचित राजकोष  
 मात्र ही होता था, जबकि राधान सामघी का प्रवच करने वाल अधिचारी को मोदी  
 कहा जाता था। सूदन ने दुग दीवान को गोला वास्द को अधीक्षक लिखाया है।<sup>६</sup>  
 अर्थात् दीवान के अधिचारी म राजस्व विभाग नही दियाया जिससे यह भी सम्भव  
 है कि मोदी घन के भण्डार के साथ साथ राजकोष का भी अध्यक्ष रहा हो।

बरशी—बरशी नामक शस्त्राधिकारी का सुजान चरित राजविलास और  
 हुम्मीर रासो म उल्लेख मिलता है। इसका काय सनिक 'यय का हिसाब रखना तथा  
 शाही सेवा मे नियुक्त मासबदारो को धेतन प्रदान करना होता था।'<sup>७</sup> विलियम  
 इरविन के अनुसार विविध राज्याधिकारियो का ऊचा अथवा नीचा मनसब निर्धारित  
 किए जाने मे भी बरशी का प्रमुख हाथ रहता था क्वाकि प्राय बरशी की सस्तुति के  
 अनुसार ही बादशाह मनसब निश्चित किया करत थे।<sup>८</sup> वस्तुत मत्रयो म बरशी  
 की स्थिति मात्र प्रधानम नी या वजीर से नीची होती थी और वजीर का स्वान रिक्त  
 होने पर प्राय बरशी को वजीर बनाने म प्राथमिकता प्रदान की जाती थी। सुजान  
 चरित म अहमदशाह का बरशी गजदीखान शाह को वजीर मनसूर के विरुद्ध

१ से ३—दे०, 'पर० रा० २।२० 'प्राचीन भारतीय शासन पद्धति', प० १२१,  
 मर्ली चौहान डाइनेस्टीज', प० २००

४ 'सु० घ०, ७।२।२६

५ ६—दे० सु० घ० ७।२।२६ वही ७।२।३०

७ दे० एन एडवार्ड हिस्ट्री आफ इण्डिया', प० ५५७

८ दे०, २ घर्मा आफ लिण्डियन मुगलस, —विलियम इरविन, प० ३७

भड़का कर<sup>१</sup> स्वयं बजीर का स्थान प्राप्त करने चिन्तित भी किया गया है।<sup>२</sup> उसमें महाराज मूरजमन युद्धाभियान से पूर्व अपने बरशी को सय 'यय के लिए नवादी लेकर सनिक पड़ाव पर पहुँचने का आदेश देने है।<sup>३</sup> हम्मीर रासो में शाह अलाउद्दीन का बरशी युद्ध में भाग लेता है।<sup>४</sup> इस सन्दर्भ में यह उल्लेख करना आवश्यक है कि सेना को वेतन प्रदान करने, तथा विविध स्तर के सनिक अधिकारियों की नियुक्ति के समय उनका वादशाहों से साक्षात्कार कराने के कारण उसका सेनाधिपतिया से निकट सम्बन्ध और उन पर पर्याप्त प्रभाव अग्रवश रहता था, तथापि उसे सेनाध्यक्ष नहीं कहा जा सकता। प्रमुख सेनापति स्वयं बादशाह हुआ करते थे, जिनकी अनुपस्थिति में यह पद बजीर के अधिकार क्षेत्र में आता था।<sup>५</sup>

सेनापति तथा अथ सय अधिकारी—आलोच्यकाल में आजकल के कमांडर-इन-चीफ जस किसी अधिकारी को नियुक्त करने का प्रचलन नहीं मिलता, अपितु उरेश या बादशाह स्वयं ही प्रधान सेनापति होते थे। महाराज पथ्वीराज आदि हिंदू नरेश विविध युद्धों के लिए पान का बीड़ा डालकर युद्ध विषयों के नायकत्व के लिए किसी मामलत का तदय भार सौंपने की प्रथा का आश्रय लेते अग्रवश मिलते हैं। राजविलास में महाराज राजसिंह के दलपति गणपति, गजपति ह्यपति, रथपति, पयदलपति नामक सय अधिकारियों का उल्लेख मिलता है।<sup>६</sup> कवि सूदन ने भी सेना नायक के लिए दलपति शब्द का प्रयोग किया है।<sup>७</sup> आल्हखण्ड में तापखाने, हाथियों तथा घाडा के दरगा का उल्लेख मिलता है।<sup>८</sup> परमाल रासो में महाराज परमाल के बलाध्यक्ष का उल्लेख मिलता है,<sup>९</sup> जो डा० दशरथ शर्मा द्वारा उदिलिखित बलाधिप नामक सेनाधिकारी से नाम साम्य रखता है। बलाधिप को उहाने सेना के नगरो तथा बहिर्वर्ती यानो के सनिक पड़ावा का नायक बताया है।<sup>१०</sup> सुजानचरित में बहीर-कुतवाल का युद्धाभियान के लिए सय सामग्री लदवाते दिखाया गया है।<sup>११</sup>

बूत या बकील—विविध राजकीय सदेश लेकर जाने वाले राज्यकर्मचारिया

१ दे०, 'सु० च०' ६।१।१६ १७

२ से ४—दे०, 'सु० च०', ६।२।१०, वही १।३।२, 'ह० रा०', ५७५

५ "But the true Commander in Chief was the emperor himself replaced in his absence by the Wakil or the Wazir"

— The Army of the Indian Mughals, P 37

६ दलपति गणपति दंडपति गजपति ह्यपति गार ।

रथपति पयदलपति प्रगट है जिह अति अधिकार ॥ —'रा० वि०', २।७०

७ हुकुम पाइ के श्रीसुजान को दलपति निज सिर नायो ।

बोलि नवीब वही सरदारन तुरन कूच करायो ॥ —'सु० च०', १।३।३

८ से ११—दे० आ०', ५३७।१४ १५, ४०।२३ २४, ४१।१२ १३, 'पर० रा०', २७।१०, अर्थाँ चौहान डाइनस्टीज', प० १६०, 'सु० च०' ४।१।२५

के लिए वीरकाव्य में दूत, वकील, बसीठ चर, एलची और अहनी अभिधान प्रयुक्त हुए हैं। इनका रथान पर कभी कभी महत्त्वपूर्ण राज्य-कार्यों के संपादनाय प्रधान अथवा वीर का भी भेजने की प्रणाली थी जिस पर पीछे प्रकाश डाला जा चुका है। पृथ्वीराज रासो में शाह गौरी को बंधन मुक्त कराने का संधि प्रस्ताव लेकर तो शाह का वकील आते प्रदर्शित किया गया है,<sup>१</sup> किन्तु महाराज पृथ्वीराज एक अभिनव प्रणाली का आश्रय लेते मिलते हैं। वे दूत, वकील या प्रधान के स्थान पर अपने प्रतिष्ठित साम तो को प्रेषित करके अभीष्ट सिद्धि करते दिखाये गये हैं। रावल समर विजय को सहायताय बुलाने के लिए वे एक बार अण। काका कह चोहान को प्रेषित करते हैं<sup>२</sup> जबकि दूसरी बार इसी उद्देश्य से धदपुडीर को भेजा जाता है।<sup>३</sup> यत्न-कदा दूतकम भाटा को भी सोचा जाता था। 'कनकज समय में महाराज जयचंद के द्वारपाल द्वारा यह प्रश्न किए जाने पर कि तुम दिल्लीश्वर के दूत रूप में तो कनीज नहीं आये हो,<sup>४</sup> जयचंद ने नकारात्मक उत्तर देने हुए यद्यपि यह कहा है कि भाट दूत कम नहीं किया करते,<sup>५</sup> तथापि महाराज भोलाभीम के दरबार में वह उन्हें दिल्लीपति का आधिपत्य स्वीकृत कराने के लिए दूत रूप में जाता है। आडंबर प्रियता को जयचंद ने भाटों की प्रमुख चारित्रिक विशेषता कहा है<sup>६</sup> और उसकी यह उक्ति उसके राजदूत के विचित्र वेप पर सटीक उतरती है। वह अपनी शीवा में एक जाल और नसेनी तथा हाथ में चोली त्रिशूल अकुश दीपक और कुदाल लेकर, महाराज भोलाभीम के दरबार में पदापण करता है और इस विचित्र वेश के विषय में प्रश्न करने पर प्रत्युत्तर देता है— महाराज पृथ्वीराज का सदेश है कि या तो आप इस चोली को पहन कर उनकी अधीनता स्वीकार कर लीजिए अन्यथा वे आपको आकाश पाताल या पवत नदरा कहीं पर भी जीवित नहीं छोड़ेंगे। यदि आप आकाश में छिपोगे तो नसेनी का प्रयोग करके सागर में छिपने पर जाल द्वारा तथा पवत गुहाओं में छिपने पर दीपक के प्रकाश से पकड़ लेंगे और इस अकुश से वश में करके त्रिशूल से प्राणांत कर देंगे।'<sup>७</sup>

गौरा वादल की कथा में शाह अलाउद्दीन<sup>८</sup> और महाराज रतनसेन<sup>९</sup> दोनों ही पक्षों से वकील संधि प्रस्ताव लेकर जाते हैं। सुजान चरित में राजकीय सन्धियों के आदान प्रदान में प्रयुक्त कमचारियों को दूत<sup>१०</sup> और वकील<sup>११</sup> दोनों अभिधानों से पुकारा गया है। हम्मीर रासो में उनके लिए दूत<sup>१२</sup> और एलची<sup>१३</sup> सजाएँ प्रयोग की गई हैं। हम्मीर हठ में शाह अलाउद्दीन महाराज रतनसेन के यहाँ वकील भेजकर महिमा शाह को शरण में न रगाने का सदेश भेजते हैं।<sup>१४</sup> छत्रप्रकाश में महाराज छत्रपाल शाह और गजब में मनसब प्राप्त करने के लिए एक विज्ञ वकील प्रेषित करते हैं।<sup>१५</sup>

१ स ६—८० पं. रा०, का० ७२३।३०३ पं. रा०' का० १०५६।२१,  
६८५।१६, वही १६४७।४७२, वही, १६४८।४७३, वही, १५२०।६३  
७ स १५—२०, पं. रा०, का० १२१३।१०३, वही, छं० १००, 'सु०  
चं० ४।३।३२ वही ४।४।७ वही ३।५।१, 'हं० रा०', छं०, ३१७,  
वही उ० ३२०, 'हं० हं०, ग्वाल, छं०, ८६, 'छं० प्र०', ११।६

क्यामर्खा रासा<sup>१</sup> और वीरचरित्र<sup>२</sup> म स घ्यथ जाने वालो के लिए बसीठ अभियान का प्रयोग किया गया है। वीरचरित्र म सम्राट अकबर की ओर से महाराज वीरसिंह देव के पास अहदियों के माध्यम से दरवार म उपस्थित होने का फरमान भेजा जाता है।<sup>३</sup>

इन दूत या बकीलो को कटुभापी होने पर भी अवध्य समझा जाता था। उनके अवध्य समझे जाने की धारणा को पथ्वीराज<sup>४</sup> रामो, क्यामर्खा रासा<sup>५</sup> तथा चन्द्रशेखर<sup>६</sup> और ग्वाल वृत्त हम्मीर हठी<sup>७</sup> म अभियन्त मिली है।

अहदी—अहदी नामक अधिकारियों का वीरचरित्र म उल्लेख मिलता है जो महाराज वीरसिंह देव के पास शाह अकबर का फरमान लेकर आते हैं।<sup>८</sup> अहदियों की मुख्य विशेषता यह थी कि वे सम्राट के अतिरिक्त अन्य किसी भी अधिकारी के अधीन नहीं होते थे। वतन की दृष्टि से इनका पद महत्त्वपूर्ण न होकर सामान्य सैनिकों से कुछ ही अछड़ा होता था।<sup>९</sup>

वाकिन -वाकिन या वाकिया नबीस छत्रप्रकाश मे शाह औरंगजेब को उसके प्राता म घटिन घटनाओं से सूचित करत चित्रित किए गए हैं। वाकिनो द्वारा विजय की सूचना देने पर सूबेदारों का मनसब बढ़कर आत लिखाया गया है,<sup>१०</sup> जबकि पराजय की सूचना देने पर उनकी तागीरी<sup>११</sup> होते या नालिश आते दिखाई गई है।<sup>१२</sup> सूबेदार गुप्त रीति से महाराज छत्रसाल का चौय न चुकाने का कारण भी यही देते लिखाय गये हैं कि जब इस तथ्य की वाकिन के द्रीय शासक को सूचना गे तो हमारी बडी निंदा होगी।<sup>१३</sup> अत स्पष्ट होता है कि वाकिनो का काय सूबो की घटनाओं से के द्रीय शासक को अवगत कराता होता था। डॉ० जदुनाथ सरकार न भी ऐसा ही अभिमत व्यक्त किया है।<sup>१४</sup> बनिबर ने उल्लेख किया है कि वाकिया नबीसो के प्रातीय शासको

१ स ७ -द० 'क्या० रा०', छ० २६०, ७०७, बी० च०', ३५०, वही, ४१६, 'पू० रा०', का० ४६६।३४, 'क्या० रा०' छ० ५०६, 'बी० च', ३१२१, ह० ह०', च० १०२

८ जब ही राजा कियो पयान। आइ गयो तब ही फरमान।

वीरसिंह आग है लए। अति आदर अहदनि को दए। — बी० च०', ४१८ ६

९ दे०, 'द आर्मी आफ़ लि इण्डियन मुगलम', वि० इरविन प० ४३

१० से १३—दे०, 'छ० प्र०', १०११०, वही २३१७, वही, १६११, वही, १८१८

१४ डा० सरकार ने मुगलकाल मे प्रातो की गुप्त गतिविधियों की सूचना प्राप्त करने के लिए वाकिया नबीस, 'सवानिह निगार' और खुफिया नबीसो की नियुक्ति दिखाते हुए मत व्यक्त किया है कि यहन से वाकिया नबीसो की प्रातीय अधिकारियों से मिल कर, वहाँ की सच्ची सूचनाएँ न देने की सभावना रहती थी, अत अतिम दो प्रकार के भी खुफिया विभाग के अधिकारी नियुक्त किये जाने लग थे। अतत हरकारा के माध्यम से भी इष्ट साधन किया जाने लगा था। —दे० मुगल एडमिनिस्ट्रेशन', पू० ६१



से मिल जाने के कारण प्रजा पर उनके द्वारा किए जाने वाले अत्याचारों की दिल्ली के शासकों को सूचना नहीं मिल पाती ।<sup>१</sup>

सूनेदार या नाजिम—छत्रप्रकाश,<sup>२</sup> शिवराज भूषण<sup>३</sup> श्री भगवतराय खीची<sup>४</sup> के जगनामा सूनेदार या 'नाजिम' नामक प्रांतीय शासकों का उल्लेख मिलता है । डा० जदुनाथ सरकार के अनुसार वे के द्वीय शासकों की भाँति ही प्रांतीय शासन के उत्तरदायी होते थे तथा अरब अमीन दीवान और फौजदार आदि सहायक अधिकारियों रखते थे ।<sup>५</sup>

कोतवाल—कोतवाल का कार्य नगर में शांति व्यवस्था रखना होता था । राजविलास में कोतवाल को उदयपुर में ऊँचे चबूतरे पर बैठकर नगर के समाचार सुनते तथा रात में चिन्तित किया गया है ।<sup>६</sup> आजकल की कोतवालों के स्थान पर सम्भवतः कोतवाल ऊँचे चबूतरे पर ही बैठ कर रात में चिन्तित करते थे, क्योंकि कोतवाल के चबूतरे का डा० जदुनाथ सरकार ने भी उल्लेख किया है ।<sup>७</sup>

फौजदार—क्यामला रामा में दिल्ली में लाहौर<sup>८</sup> और अजमेर<sup>९</sup> के फौजदारों का उल्लेख मिलता है । कवि जान ने फौजदारों के पास पर्याप्त मात्रा में सेना दिखाई है<sup>१०</sup> तथा दिल्ली में फौजदार क्यामला को तो बादशाह की अनुपस्थिति में दिल्ली पर आक्रमण करने वाले मुगलों का पराजित करते भी चित्रित किया है । वीरचरित्र में महाराज वीरसिंह के राज्य में भी फौजदार नियुक्त दिखाया गया है ।<sup>११</sup> भगवतराय खीची के जगनामा में उनके कोडा नामक जिले के फौजदार नियुक्त होने पर उनके नाम की परगना में दुहाई फिरते चित्रित की गई है । डा० श्रीवास्तव के अनुसार फौजदार सूनेदार के अधीन जिले का अधिकारी होता था जिसकी कार्यावली आजकल के कलेक्टर से साम्य रखती थी । वह जिले की मालगुजारी वसूल करने के साथ साथ शांति और रात में व्यवस्था भी बनाये रखता था । समीप के करद नरेश और भूमिधरों से मालगुजारी का वसूल करना भी उसके कार्यों में सम्मिलित थे ।<sup>१२</sup>

१ दे०, ट्रेवल्स इन मुगल एम्पायर', पृ० २३१

२ से ४—दे० छ० प्र० ७२, १८२ शि० भू०' १६७ ३२, श्री भग० खीची का जग छ० ४, १२

५ दे० मुगल एडमिनिस्ट्रेशन पृ० ६२

६ लसे कात्यालि सु चौतरे ऊँचे, बड़े कोतवाल करें खलखल ।  
निवेरहि सत्य अमत्य सु याउ, वह कर वरनि सेवत पाउ ॥

—'रा० वि०', २१३३

७ दे० मुगल एडमिनिस्ट्रेशन पृ० ६२

८ रा० १०—दे० क्या० रा०, छ० १६३ २४६ ६१४

९ १२—दे० क्या० रा०, छ० १६५ ७५ 'वी० च०' १४६३

१३ दे० द मुगल एम्पायर', पृ० ५१६

फौजदार के विषय में यह निवेदन अप्रासंगिक न रहेगा कि आईन ए अक्बरी में उसे एक भिन्न प्रकार का अधिकार दिखाते हुए उसका कार्य हाथिया को प्रशिक्षित करना बताया गया है।<sup>१</sup>

**शिकदार**—शिकदार फौजदार के अधीन परगन का अधिकारी होता था। उसके पास भी सन्निट टुकड़ी होती थी, जिनकी सहायता से वह परगन में शांति व्यवस्था बनाये रखता था और परगन में मालगुजारी वसूल करता था।<sup>२</sup> क्यामखा रासा में हासी का शिकदार युद्ध करते चित्रित किया गया है।<sup>३</sup> वीरचरित्र में महाराज वीरसिंहदेव के राज्य में फौजदार के साथ साथ शिकदार की भी नियुक्ति प्रदर्शित की गई है।<sup>४</sup> डॉ० यू० एन० डे ने तुक्कान में हासी को शिक या परगना कहने के आधार पर अभिमत व्यक्त किया है कि तुक्कान में शिक का अर्थ उपप्रात होता था, जबकि मुगलकाल में शिक का अभिप्राय जिल का उपविभाग या परगना गृहीत किया जाता था।<sup>५</sup> ऐसी दशा में तुक्क और मुगलकाल के शिकदारों के अधिकारों में अंतर होना नसंगिक है। हाँ यह तथ्य अवश्य उल्लेखनीय है कि कब्रि जान ने अलिफखौ की पृष्ठी में शिकदार के साथ साथ फौजदार का भी उल्लेख परगने के ही मद्दे में किया है।<sup>६</sup>

अथ कमचारिया में स गारलान ने महाराज छत्रसाह द्वारा 'करोरी' से दंड लेने का उल्लेख किया है<sup>७</sup> जो आजकल के तहसील की तरह का अधिकारी होता था।<sup>८</sup> सुदन ने पौनदार की सरभक्ता में गिम्बी रखने के लिए सामग्री का प्रेषित किया जाना चित्रित किया है।<sup>९</sup> पातदार परगन का खजाची होता था।<sup>१०</sup> ग्रामिण भूमिकर का निर्धारण करने वाला अधिकारी होता था।<sup>११</sup>

राज दरबारों से सम्बद्ध कमचारी तथा सभासद—राज-दरबारा की प्रतिष्ठा के लिए, उनमें मंत्री मित्र और साम तो के अतिरिक्त जो राजकमचारी तथा अथ सभासद उपस्थित रहते थे, उनकी कवि मान न अपोलिखित नामावली दी है—

(क) गणिकाए गल्हनर, मौष्टिक, वादिक, पायक नट, विट और गल्हनर जिनकी उपस्थिति मनोरजनाथ आवश्यक समझी जाती होगी।

१ २—दे०, आईन ए अक्बरी भा० १, प० १३, 'द मुगल एम्पायर', प० ५१६

३ ४—दे० 'क्या० रा०', ५३६, 'वी० च०', १२।४३

५ द०, 'एडमिनिस्ट्रटिव सिस्टम आफ दिल्ली सल्तनत', प० ८२

६ ७—दे०, 'ग्रामि० प०' ८, 'छ० प्र०', १७।२

८ "करोरी वांशाही में एक राज कमचारी के पद का नाम था, जो वर्तमान काल में तहसीलदार के समान होता था।" —'छत्रप्रकाश', प० ११५ की पा० टि०

९ स ११—दे० सु० च० ५।३।२८ 'द मुगल एम्पायर', प० ५१६ 'भू० प्र०',

- (ग) मधुग, मुधुगिक, पाशक घोर मी त—ग १२० की स्थापना गया से सम्बद्ध कमगारी प्रतीत होत हैं ।
- (ग) हुकमगार, मल्लिकार तथा तुगगि—द्वय कमगारिका द्वारा राजगमाम भाग तुका वा नियमन करत हुए उन्हें उचित स्यात पर विगते तथा उन तर राजकीय घाशन पहुँचाने का काय सम्पन्न किया जाता हागा ।
- (घ) गणक घोर वज गगना का प्रभगमत्रा की स्थिति यता तथा ताडी गरीका क लिए गजग्वार म स्यात वा हाग ।
- (ङ) श्रीवति सठ गायवति घोर गौगगर—राजकीय गता क भरण-वागता से सम्बद्ध साहारा के भी राजग्वार म स्यात गिता हागा ।<sup>१</sup>

अय बविया ने राजग्वार म सम्बद्ध घघातिगित कमगारिका का उगम बिया है—

हेजम—पृथ्वीराज रासो म हेजम का प्रतिहारो का मुगिया प्रगित करने हुए, उसका काय नयागतुकों की नरेश का गूगता देता तथा उाकी भागा मितन पर उहे नरेशा के पाग ल जाना चित्रित किया गया है ।<sup>२</sup> उगम महाराज जयचंद के साथ साथ शाह गोरी के भी हेजम का उल्लेख मितना है ।<sup>३</sup> रणमन छंद म हेजम के लिए ऐयार शब्द का भी प्रयोग किया गया है तथा यट दूत क रण म परमात ल जाते दिताया गया है ।<sup>४</sup>

प्रतिहार—पृथ्वीराज रासो म प्रतिहार बडी हृष्ट-गुष्ट घोर उत्तुग काया वाले तथा अपने हाथा म स्वण-मण्डित छडियाँ लिए प्रदगित किए गए हैं ।<sup>५</sup> य कदाचित हेजम के अवीन रहनर राजदरवार म भान वालो का नियमन करत थे ।

नकीव—पृथ्वीराज रासो<sup>६</sup> परमाल रासा<sup>७</sup> घोर गुजानवरित<sup>८</sup> म नकीव महाराज के आदेशा को सगिको के नियात स्थानो पर पहुँचाते चित्रित किए गए हैं । पृथ्वीराज रासो मे बहुत् सस्करण के सम्पादरो के नकीवो की स्थापति का जो विवरण दिया है, उससे नकीव भी प्रतिहारो की तरह हाथ म स्वण मण्डित छडियाँ रखने वाले तथा राजदरवार म आगतुका को यथास्थान बठाने वाले सिद्ध हाते हैं ।<sup>९</sup>

१ 'रा० वि २।६७७४

२ से ६—दे० पू० रा०' वा० १६४८।४७६, वही १६६०।५६०, वही, २४०८। १७५, 'रण० छ०' २६ २७, 'प० रा०', वा० १६४६।४६२, वही, १२०६। ५२, पर० रा०, २३।८, 'सु० च०', ४।३।२६, ३।२।१६

१० "जमीन से लेकर काय पयत ऊँची एक नकडी होती है जो कि चादी या सोने से मडी होती है—यह छडी राजाओ के द्वारपाला का चिह्न अथवा राजाओ का दड स्वरूप समभी जाती है । इस समय इस छनी को धारण करने वाते नकीव नहे जाते हैं । यही लोग दरवार के समय सब दरवारियो को यथास्थान बठालने घोर सरदारो के अलख आदि धतापने का काय सम्पादन करते हैं ।"

— प० रा०, वा० रासोसार, प० १७७७ पर पा० टि०

नकीवा का काय वीरो को कडखे आदि सुनाना भी होता था। पूर्वोक्त ग्रंथों में तो नकीवों के इस काय को अभिव्यक्ति नहीं मिली है किन्तु कवि पद्माकर ने नकीव युद्धस्थल में श्रोजात्मक गीत सुनाते भी चित्रित किए हैं।<sup>१</sup> प्रतिहार और नकीवा में हम मुख्य अंतर यही दिखाई देता है कि प्रतिहार कदाचित् न तो कडखे सुनाते थे और न आदेशों का सामंत या सैनिकों के निवास महा नक पहुँचाते थे अपितु राज दरबार में आने वाले यक्षियों का नियमन ही उनका मुख्य काय होता था।

**दसौंधी**—पद्मीराज रासो में महाराज जयचंद के दरबार में दसौंधी दिखाया गया है जिससे महाराज कवि-परीक्षा कराते चित्रित किए गए हैं।<sup>२</sup> आलोच्यकात् में कवियों के राजदरबारों में वित्ताथ धूमने फिरने के कारण ही कदाचित् ऐसे विन दसौंधी रते जाते थे जा कविया को नरशा में मितन देने से पूर्व उनकी स्वयं परीक्षा करते थे और उनके काय गुणों की परीक्षा करके नरेशों को यह सूचना देते थे कि, आगतुक कवि दरबार में आने के योग्य है अथवा नहीं। कवि चंद को महाराज जयचंद से माक्षाकार की तभी आता मिलती है जब उनका दसौंधी उसकी परीक्षा करके उसे काय गुण सम्पन्न बनाता है।<sup>३</sup> कदाच न भी महाराज वीरसिंहदेव के दरबार में दसौंधिया की उपस्थिति प्रदर्शित की है।<sup>४</sup>

**गुजवरदार**—कवि भूपण ने भुगल दरबार में कई सहस्र गुजवरदार दिखाए हैं।<sup>५</sup> हिंदू दरबारों के प्रतिहार ही कदाचित् भुगल दरबारों में गुजवरदार कहलाते थे। कवि चंद ने प्रतिहारों की रूपाकृति का जो विवरण दिया है, वह बर्नियर द्वारा दिए गए गुजवरदारों की रूपाकृति के विवरण से पूर्ण साम्य रखता है।<sup>६</sup> प्रतिहार और गुजवरदारों में यह अंतर अवश्य था कि प्रतिहारों के पास स्वयं या रजत से मण्डित छड़ी या ताठियाँ रहनी थीं जबकि गुजवरदारों के पास गदाकार उपकरण रहते थे। मनुची नय गदाए रजत की बताई हैं<sup>७</sup> जो कदाचित् रजत से निर्मित होने के स्थान पर रजत से मण्डित होनी हाथी। इनका काय शाही आनाम्ना का इच्छित यक्षितया तक पहुँचाना तथा दरबार में व्यवस्था रखना होता था।

१ दिमि निमन दादुर से अग्नि सु नकीव दूदि मचावही। — 'हि० व० नि', ८१  
२ ४—दे०, 'प० रा०', का० १६२०।४८८ ८६, वही, १६५६।५५७, 'वी० च०', ३३।२३

५ कवक हजार जहा गुज वटा गढ करिक हृस्पार नीति पकरि समाज की।  
शि० बा०' १४

६ "Among the Kours and the Mansabdars are mixed many Gourje berdars or mace bearers chosen for their tall and handsome persons and whose business it is to preserve order in assemblies and the carry the kings orders and execute his commands with utmost speed"  
— 'Travels in M. Empire' p 267

७ दे०, 'मोगल इष्टिया', भा० १ पृ० ८६

खवास—यह प्रतिष्ठित पुरपो का यवितगत सेवक और उनकी जीवन चर्या का अभिन सहचर होता था। पथ्वीराज रासो में महाराज पथ्वीराज कवि च ७ के पान घारी खवास के रूप में महाराज जयच द के दरबार में जाते हैं।<sup>१</sup> गाह गारी के घोर पुण्डरी के ब दीगह में पड़े होने पर उसका खवास में न जत का परित्याग कर देता है।<sup>२</sup> अयय शाह गौरी को आपदग्रस्त छोड़कर पलायन करने वाल खवास का उसकी पत्नी धिक्कारती चित्रित की गई है।<sup>३</sup> इन निर्देशों से यही सिद्ध होता है कि स्वामी और खवास प्रायः एक प्राण दो शरीर की उन्नत की चरिताय करत थे।

अय राज-कमचारियों में छडीदार, तग बरदार, पलाबरदार, पान पीकदार और खोजाघो का उल्लेख मिलता है।<sup>४</sup>

छडीदार कदाचित् हिंदू दरबारों के प्रतिहार और यन्त्रिधरा के ही स्थानापन्न थे और दरबारियों तक शाही आज्ञाओं को पहुंचाते थे। पान पीकदार की स्थिति शाह औरगजेब के दरबार में दिग्गई गई है जो प्राचीन हिंदू नरेशों की ताम्बूलकरक वाहिनी जसा कमचारी माना जा सकता है। पलाबरदार से भूषण का अभिप्राय कदाचित् मोरछल डालने वाले कमचारी से रहा है। यह नश्य ध्यात य है कि हिंदू नरेशों पर चकर डाले जाने के स्थान पर मुगल बादशाहों पर चेंबर के साथ साथ मोरछल डालन का प्रचलन था।

राजमहलो में ऐसी दासियाँ नियुक्त की जाती थी जो पुरुष ससंग से अछूती और रति-रहस्य से सबया अनभिज्ञ बताई गई हैं।<sup>५</sup> महाराज पथ्वीराज की रानियों की पानीपत की यात्रा के समय उनके इतस्तत हाथों में लाठियाँ लिए खोजा जाते दिखाए गए हैं।<sup>६</sup> मुगल हरमों में प्रायः हिजडे ही अधिक नियुक्त किए जाते थे।<sup>७</sup> ये सभी खोजा प्रकृत हिजडे नहीं होते थे अपितु ईथोपिया आदि देशों से मुदर लडका को भी श्रय करके नपुंसक कर दिया जाता था। बनियर न मुगल बादशाहों की इस प्रवृत्ति का उल्लेख किया है।<sup>८</sup> डॉ० गो० ही० आभा न भी यह उल्लेख करके

१ 'प० रा०', वा० १६८२।४८८

२ ३—दे० प० रा०', वा० २०३२।८८, घटी २०८३।३५०

४ 'तेग बरदार स्याह पला बरदार स्याह निखिल नकीय स्याह बोलत विराह को। पान पीकदानी स्याह सेनापति मुख स्याह, जहाँ तहाँ ठाढे गिनें भूषण सिपाह को।' —'भू० प्र० स्फु०' २ 'शि० भू०', ३८, रा० वि०', ६।१६६, हैह०', च०, ३६

५ दे०, 'प० रा०', मो० ४।६८२।७८, 'प० रा०', वा० १६६१।२७६

६ 'ह० रा०', २१२, 'ह० ह०' ४८

७ 'Besides these the Ethiopian king sent to the great Mogol twenty five choice slaves nine or ten of whom were of a tender age and in a state to be made EUNUCHS'

कि 'महाभारत का नम क्रूरता के साथ पुण्यो का पुरुषत्व नष्ट कर अत पुर की रक्षा निमित्त उनका नपुंसक बनाने की पद्धति नहीं थी', परवर्तीकाल में इस प्रथा में प्रचलन पर प्रकाश डाला है।

### (ग) सैन्य-व्यवस्था

(१) राजकीय सेना में सामंत और उमरावों की सेना टुकड़ियों की बहुलता—वीरकाव्य में विविध प्रसंगों में सामंत और उमरावों का बहुश उल्लेख करते हुए प्राचीनकालीन सैन्य-व्यवस्था में उनका अग्रिम महत्त्व प्रदर्शित किया गया है। नरेश और बादशाहों की निजी सेना तो अल्प होती थी, जबकि उसमें इन सामंत और उमराव कह जाने वाले, छोटे शासकों की सैन्य टुकड़ियों का बाहुल्य होता था। यद्यपि इनकी नियुक्ति स्वयं नरेश और बादशाहों द्वारा ही की जाती थी, तथापि शर्त शर्त बल संचय करते हुए ये सामंत और उमराव केंद्रीय शासकों के विरुद्ध हो जाते थे, अथवा शत्रु से मिल जाते थे, तो शासन की बड़ी अनिष्टकर परिणाम भोगने पड़ते थे। विभिन्न आक्रमण-योजनाओं के क्रिया-बल का भार भी उनके ही कंधों पर होने के कारण, राजकीय में प्रणामों में उनसे प्रायः अवश्य ही परामर्श लिया जाता और उनके मत का पर्याप्त ध्यान रखना पड़ता था। वीरकाव्य प्रणेताओं द्वारा विविध नरेश और बादशाहों की सनाओं को अस्तीनाय तक प्रदर्शित करने का संवदा कपोल कल्पित समझने की धारणा का भी इस तथ्य का प्रकाश में अशत परिष्कार हो जाता है, कि इतनी सख्या में मात्र उनकी निजी सख्यायें नहीं होती थी, अपितु इनमें उनके भवीनस्थ सामंत राजाओं तथा उमरावों की सनाओं का भी परिगणन कर दिया जाता था।

पृथ्वीराज रासो में महाराज पृथ्वीराज के अधीनस्थ सौ सामंत राजा प्रदर्शित करते हुए एक एक सामंत का सहस्र वीरों के समान बताया गया है।<sup>१</sup> महाराज पृथ्वीराज अपने राज्य को स्व सामंतों के भुज बल पर ही आधृत बताते हैं।<sup>२</sup> तथा अपनी लज्जा को भी उन्हीं के हाथों में बतकर प्रशंसा करते हैं।<sup>३</sup> किसी भी प्रकार की राजकीय में प्रणायें हों, उनमें व अपने इन सामंतों का परामर्श अवश्य लेते दिखाए हैं।<sup>४</sup> उनके विविध युद्ध प्रसंगों में इन सामंतों की सनाएँ ही सम्मिलित रहती थीं।<sup>५</sup> पृथ्वीराज रासो में अत्र भी सामन्तों की आवश्यक प्राणहति की निंदा करते हुए कहा गया है कि, सामंतों के अभाव में राज्य सुरक्षित नहीं रह सकता, अतः समस्त-बुद्धकर ही कोई कर्म उठाना चाहिए। कर्म, उपातिपी और श्रेष्ठी आदि तो नृप रूपी गज पर मडराने वाले भ्रमरा की भाँति होते हैं, जबकि उसकी वास्तविक शक्ति

१ ६०, 'राजपूताना का इतिहास', जिल्द ३, भा० १, पृ० ७७

२ से ६—दे० 'प० रा०', का० १५६४।१०७, वही, १०६२।२२०, १६०८।२०३, वही, ६२४।४२, ११०५।५०, १४०२।८, वही, १२०७।११३, वही, १२०४।३७

मने सामन्ता म ही सतिहिता रहती है।<sup>१</sup> महाराज पृथ्वीराज क सामन्त यद्यपि स्वयं स्वामि भवन कह गये हैं। महाराज ने ये पत्ता के मनुष्य विहित बनाए हैं,<sup>२</sup> तथापि इन सामन्ता म स्वामि भवन स भी बहुरंग स्व युग की प्रतिष्ठा सिंगान की सरणा व्याप्त मिलती है। अपने युग की प्रतिष्ठा बनाए तथा अन्य युग का गिराने के लिए वे विविध प्रकार के पडयत्र रचकर एक दूसरे को पीता सिंगान की क्षण करते तथा महाराज को उनको अपनेमान करी के लिए प्रेरित करने मिलते हैं जिससे अन्तत महाराज को पराजय का मुह दगता पटना है।

शाह गारी की सेना म उतार मीर और खाना की साथ-सुकडियों की बहुलता दिखाई गई है जिन्हें व आप्रमण स पून फरमाए भेजकर एकत्र करते और भारत पर आप्रमण की उनसे याजना बनाते चित्रित किए गये हैं।<sup>३</sup> इसी तरह राजविलास,<sup>४</sup> सुजान चरित<sup>५</sup> और हम्मीर रासा<sup>६</sup> आदि ग्रंथा म भी तरह और बादशाह अपने सामन्त और उमरावो को युद्धाय बुलाते उनसे म प्रणा करते तथा सैनिक अभियाना पर भेजते चित्रित किए गए हैं। यद्यपि मान न ता उमराव और सामन्त शत्रु का समागमन प्रयाग किया है महाराज राजसिंह क सामन्ता का कभी व सामन्त अभिहित करते हैं और कभी उमराव। इन सामन्त और उमरावो को स्वतंत्र का व्यय भार वहन करने के लिए जागिरें प्रदान करा गये वहु प्रचलन था जिस पर अत्यन्त प्रशान डाला गया है।

(२) सेना के प्रमुख अंग—पृथ्वीराज रासो \* कीतिलता<sup>७</sup> परमाल रासा<sup>८</sup> वीरचरित्र<sup>९</sup> सुजान चरित,<sup>१०</sup> छत्रप्रकाश,<sup>११</sup> शिवराज भूषण<sup>१२</sup> और राणा भगवन्तसिंह<sup>१३</sup> म सेना के लिए चतुरगिणी विशेषण प्रयुक्त किया गया है। आलोच्य सेनामा के परम्परागत चार अंगो के निदर्शक होने के स्थान पर ये उल्लस इस दृष्टि से सगत प्रतीत होते हैं कि, यद्यपि आलाच्यकातीन युद्धा म रथा म बठकर युद्ध करने का प्रचलन उठ चुका था किन्तु उसके स्थान पर तोपखाना उसका चतुर्थ अंग बन गया था। कदाचित् इसी कारण से रतन बावनी<sup>१४</sup> गोरा बादल की कथा,<sup>१५</sup> हम्मीर हठ,<sup>१६</sup> सुजान चरित,<sup>१७</sup> राजविलास<sup>१८</sup> और रासा भगवन्तसिंह<sup>१९</sup> म रथो का उल्लस करते हुए

१ से ६—दे० पू० रा०, मो० २।७६४।१६, प० रा०, का० ६७३।४८, पू० रा०, का० ५२४।३८ ६४७।८, ११०२।२५, रा० वि०, १०।६६, 'सु० च०', ७।२।१७, 'ह० रा० ३६५

७ १४—दे० प० रा० मो० ३।१५०।६, ३।१५५।१८ ३।१५६।१६, ३।६६०।२६, 'कीर्ति० प० ८२ पर० रा० ५।१५२, वी० च०, ३।१७ ८।१०, १२।१४, १३।२१, 'सु० च०' ३।३।६, छ० प्र०' १५।१, शि० भू०, १२५, 'रा० भग० १३

१५ से २०—दे० 'र० वा० ३८ गो० क०, ७२ ह० ह०', च०, २।३, 'सु० च०, ५।१।१२ 'रा० वि०' ६।८६, रा० भग०, १६

भी, उसमे बठकर युद्ध करन का किमी भी बधि ने चित्रण नहीं किया है। कवि मान न, जिहोन रघुपति नामक अधिकारी का भी उल्लेख किया है,<sup>१</sup> अपने विविध सदस्यों म रथों का प्रयोग युद्ध मामग्री का और विशेषत तोषो को लादकर ल जाने वाली गाडिया के अथ म किया है<sup>२</sup> जिसस स्पष्ट हो जाता है कि, वीर काव्य-प्रणेताग्रा का रथा का प्राय युद्ध मामग्री क चहन के लिए प्रयुक्त की जान वाली गाडिया के ही अथ म किया है। इस प्रकार आलोच्य सनाग्रा क—गजसना, अश्वाराही दल, पदाति-द्वन और तोपगना य चार अग सिद्ध हान है। 'वेशव' न महाराज वीरसिंह देव की चतुरगिणी सेना के उक्त चार अग का ही चित्रण किया भी है।<sup>३</sup>

गज सेना—प्रागोच्यकालीन युद्ध म हाथियों का प्राचीनकालीन युद्धो की भांति अप्रतिम स्थान तो न था<sup>४</sup> किंतु युद्ध म उनकी कई दष्टि म उपयोगिता होने के कारण नरेश गण पर्याप्त मात्रा म हाथी रखन थे। पृथ्वीराज रासा म महाराज पृथ्वीराज<sup>५</sup> और शाह गारी<sup>६</sup> हाथिया पर स युद्ध करते तथा हाथिया की सेना के अग्रिम भाग म रखकर रक्षा पक्ति बनात दिखाए गए हैं।<sup>७</sup> कदी शाह गारी से लिए जाने वाले दण्ड म हाथिया का भी लिया जाना दिखाकार,<sup>८</sup> रासाकार न इस तथ्य पर प्रकाश डालता है कि सेना म गजो का सख्या अभिवर्द्धि करन का प्रयास किया जाता था। नरेश-गण जगला से भी हाथी पकड़कर लाते थे। पृथ्वीराज रासा के रवा-तट समय म महाराज पृथ्वीराज अरण्य म हाथी पकड़कर लाने की योजना बनाने दिखाए गए हैं। कवामतां रामा<sup>९</sup> अलिफखा की पडी<sup>१०</sup> गारा बादल की कथा,<sup>११</sup> राजविलास,<sup>१२</sup> शिवराज भूषण<sup>१३</sup> आलहखण्ड<sup>१४</sup> और हिम्मत बहादुर विरदावली<sup>१५</sup> म

१ रघुपति पददलपति प्रगट हैं जि ह अनि अधिकार। — रा० वि०, २।७०

२ (क) सुभर रथ बहू सप्त, क्वच बगतर कल हक्ति।

खच्चर भरित खजा, सहस इक डारि सु सोभत।

—'रा० वि०', ६।६०

(ख) रथ भरित क घन कनक र वहि ध्रुय जिन जो ए धुरा।

गुरनारि गरिन सारे गोरिय तीर तरक्स तोमरा। —वही, १८।४३

३ दे०, 'वी० व०', १२।१२ १४

४ आघाय चाणक्य ने हस्ति सेना की महता इन शब्दा म प्रकट की है—

"हस्तिप्रधानो हि विजयो राताम। परानीक ब्यूह दुग स्व-धावार प्रमदना ह्यति प्रमाण शरीरा प्रागाहरण कर्माणा हस्तिन इति।" —'कौट० अथ०', १४।८२

५ से १५—दे०, 'प० रा०', वा० १३६३।१५६, वही, १११७।१३०, वही, १३७०। १३, वही, १११८।१३४, 'क्या० रा०', छ० ६०१, 'आलि०', प० ७२, 'गो० व०', छ० ७०, 'रा० वि०', ८।७, 'शि० भू०', २६३, 'आ०', ५२०। २१-२२, 'हि० व० वि०', ११३



भी हाथियों पर से युद्ध करने अथवा हाथियों के परस्पर भिड़ने का चित्रण मिलता है। इन गजों के मस्तक पर तल और सिद्धर लगा रहता था।<sup>१</sup> कवि मान ने महाराज राजसिंह के दरबार में गजपति<sup>२</sup> और शाह और गजेब के यहाँ दरोगा ए हाथी<sup>३</sup> नामक अधिकारियों की तथा आल्हकार ने हाथी ए दरोगा<sup>४</sup> नियुक्ति भी दिखाई है।

गजों की युद्ध में उपयोगिता सम्बन्धी कुछ अन्य उल्लेख्य तथ्य यह हैं कि नरेश प्रायः गजाह्वर होकर ही युद्ध करते थे जिससे वे स्वयंसेना का भलीभाँति संचालन कर सकें तथा उनके सैनिकों को उनकी उपस्थिति का पता चल सके। वीरकाव्य नरेशों के दिखाई न देने की दशा में विजयावस्था के समीप पहुँची हुई सेनाएँ भी पलायन करते चित्रित की गई हैं अतः इस दृष्टि से नरेशों के लिए हाथी अत्यधिक उपयोगी थे। इसके अतिरिक्त हाथियों की सूँड़ों में लौह शृंखला बाँध दी जाती थी। वे इन शृंखलाओं से शत्रु-तल का सहार करते हुए उसमें खलबली मचा देते थे।<sup>५</sup> मस्त हाथियों का और भी अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए उन्हें भाग पिलाने की भी प्रथा थी।<sup>६</sup> उनका उपयोग राजनीय पताका और शिष्टान्तों को युद्धस्थल में ले जाने के साथ साथ गजनात नामक तोपों को भी युद्धस्थल में ले जाने के लिए किया जाता था।<sup>७</sup> तात्पर्य यह कि हमारे आलोच्यकाल में भी सैनिक-दृष्टि से हाथियों का महत्त्व पर्याप्त था और उनका विविध प्रयोजनों के लिए उपयोग किया जाता था। हाथियों को युद्धाय प्रशिक्षित कराने के लिए एक पथक अधिकारी नियुक्त रहता था। शत्रुओं से दण्ड रूप में हाथी लेकर तथा जंगल से गवीन हाथी पकड़ कर उनकी सख्या बढ़ाने का प्रयास किया जाता था।

**अश्वारोही सेना**—आलोच्यकालीन सेना में सर्वाधिक सख्या अश्वारोही सैनिकों की ही होती थी।<sup>८</sup> पृथ्वीराज रासो की इस उक्ति में कि घरा का आधिपत्य अश्वों की टापों पर स्थित रहता है<sup>९</sup> अश्वों की युद्ध की दृष्टि से महत्ता अभिव्यक्त हो रही है। पृथ्वीराज रासो और क्यामत्स्य रासो में विशेषी सौदागरो का भारत में नरेशों का स्व अश्व विषय हेतु आना प्रदर्शित किया गया है तथा आल्हलण्ड में तदर्थ कायुध आदि दशा में नरेशों द्वारा स्व प्रतिनिधि भेजन की प्रथा दिखाई गई है। इन निर्देशों से स्पष्ट होना है कि, अच्छी जाति के घोड़े विदेशों से आयात किए जाते थे। कविजटमल,<sup>१०</sup> मान<sup>११</sup> सूदन<sup>१२</sup> आल्हकार<sup>१३</sup> और पद्माकर<sup>१४</sup> ने युद्ध में—अरबी, ऐराकी, कावाजा, बच्छी बोजणी, काबिली लघारी लुरासानी तुरानी, विलायती,

१ स ६—२०, पृ० रा० का० २२२६।७०८ रा० वि० २।५०, वही, १४।२७  
२६ मा० ४।१।२२ वही ८४।१७ १८, वही ५२०।१३ १५, ३७६।  
१५ १६

७ म १४—२० हि० व० वि० ४४ 'गु० व० ४।३।५, प० रा०', का० ४६७।  
१२४, मा० व० ७२ रा० वि०, ६।८ स ६।१२, गु० व०, १।२।४,  
'मा०', ४०। १ ग ४।१।२१, प्र० वि०, ३२ ४१

रुमी, सि धी और मिराजी जातिया के अश्वों का उपयोग प्रशिक्षित किया है। इन निर्देशों से भी अश्वों की युद्धों में अत्यधिक उपयोगशीलता की दृष्टि से उनका अनक प्रदेशों से आयान किये जाने के तथ्य पर प्रकाश पड़ता है। छत्रप्रकाश में मूर्च्छित हुए महाराज छत्रमाल की उनका अश्व रात्रि भर रमनाली करता है, तथा किसी मामाहारी पशु या तो कहना ही क्या अपरिचित व्यक्ति को भी महाराज के पास नहीं फटवने देता।<sup>१</sup> प्रातः काल उसकी स्वामिभक्ति के पुरस्कार स्वरूप बाइजा करके कोतल भ्रमस्या में लाया जाता है, तथा मभी सनिव भुक्त-बठ से उसकी स्वामि भक्ति की सराहना करते हैं।<sup>२</sup> अश्वों के इन स्वामिभक्तिपरक गुणों के कारण भी कदाचित् युद्धों में अश्वों के प्रयोग को प्राथमिकता दी जाती होगी। आल्हखण्ड में सेना के अश्वों को दगवाने की प्रथा का उल्लेख किया गया है।<sup>३</sup> इसमें वेद्रीय शासक कचिल्ल के साथ साथ साम न या उमराव का भी चिल्ल विशेष घोड़े की जघा पर दाग दिया जाता था। बनिबर ने इस प्रथा का मूल कारण यह प्रदर्शित किया है कि अश्वों के दमे होने के कारण सामन्त और उमरावों को ही शाही निरीक्षण के समय एक-दूसरे से अश्व उधार लेने की सभावना नहीं रहती।<sup>४</sup> इस प्रथा से पूर्व बहुत से उमराव अश्वों के रखने का कल्पित हिसाब किताब दिखाकर वेद्रीय शासक से उनके भरण पोषण के लिए धनराशि प्राप्त कर लेने की धृत्ता करते थे जिससे शाही घोड़ों की किताबों में चढी सख्या उनकी वास्तविक सख्या से बहुत अधिक होती थी। युद्ध के समय इसका भयकर परिणाम की कल्पना की जा सकती है।

पदाति सेना—कुछ ग्रंथों में पदाति-सेना में भी अश्वों के सैनिक होने का उल्लेख अश्वशय किया गया है।<sup>५</sup> तथापि युद्ध में हार-जित की दृष्टि से सेना के इस अंग का विशेष महत्त्व नहीं प्रतीत होता क्योंकि किसी भी अंग में उसके विषय में अधिक निर्देश नहीं मिलते।

१ “कर तुरी ताकी रखवारी, डिग न जान पाव मसहारी।

पूछ उठाइ चौर से डार, जो डिग आव ताहि बिडार।” —‘छत्र प्र०’, १०।८

२ घोड़े को लगाम चढाकर उसका दूसरा छार अश्व की पूछ की जड़ में बाधना बाइजा करना कहलाता है। उमका कोतल चलना उस दशा की कहते हैं, जिसमें अश्व पर जीन तो कमी हो कि तु कोई सवार न हा और उसे धीरे धीरे चलाया जा रहा हो। — छत्रप्रकाश, पृ० टि० पृ० ७६

३ ४—दे० ‘छत्रप्रकाश’, १०।६ १०, ‘प्रा०’, ५४८।१६

५ ‘ they are branded on the thing with the kings mark and with the mark of the Omrah under whom the horseman is enlisted this is well contrived to prevent the loan of the same horses for different review days ’

— Travels in Mughal Empire, p 243

६ दे०, सु० च०, ४।३।५, ‘प्रा०’, २६७।१०

## तोपखाना

जसा कि हम पीछे उल्लेख कर चुके हैं, वीरकाव्य में किसी भी नरक को रथ में बठार युद्ध करते चित्रित नहीं किया गया है। आलोच्यकाल में उनका स्थान तोपखाने में ले लिया था। ब्रजभाषा की वीरकाव्यधारा में पृथ्वीराज रासो, परमाल रासो, हुम्मीर रासो आदि ग्रंथों में भी यत्र तत्र तोपों का प्रयोग दिखाया गया है। कुछ विद्वान् भारत में तोपों का सबसे प्रथम प्रयोग शाह बाबर द्वारा किया जाना मानते हैं। इस विषय में इतिहासकारों के मतों पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि उनका एक बहुत बड़ा भारत में बाबर से पूर्व ही तोप-जस यंत्रों तथा बारूद का प्रयोग सिद्ध करता है।

डा० राधाकृष्ण मुखर्जी ने लिच्छिवियों द्वारा महाराज अजातशत्रु के विरुद्ध 'महाशिला कण्टक' नामक यंत्र का प्रयोग करने का उल्लेख किया है। इस यंत्र से पत्थर के बड़े बड़े ढोक शत्रु सेना पर फेंके जाते थे।<sup>१</sup> डा० वेणी प्रसाद ने मुहम्मद बिनकासिम की सातवीं शताब्दी में देवलनगर के मंदिर के भण्डे को यंत्रों से पत्थर बरसाकर भूसात करते प्रदर्शित किया है।<sup>२</sup> इन पत्थरों को फेंकने वाला यंत्र तोप का ही पूर्व रूप था, क्योंकि आरम्भ में तोपों से प्रायः पत्थर के ही गोले चलाये जाते थे।<sup>३</sup> पत्थर के गोले छोड़ने का वीरकाव्यधारा के श्रीधरवृत्त जगन्नाथ में उल्लेख मिलता है।<sup>४</sup> डा० आर० सी० मजूमदार एच० सी० राम चौधरी और डॉ० कालिकर के अभिमत में अग्निबाण (राकेट्स), ज्वलनशील पदार्थ भरे गोले तथा बारूद से लोहे के गोले फेंकने वाली मशीन का—बाबर के आगमन से बहुत पूर्व (इल्लुशमिश के काल में) ही प्रयोग होने लगा था।<sup>५</sup> इस प्रकार स्पष्ट होता है कि शाह बाबर के आक्रमण से पूर्व ही बारूद के अस्त्रों का किसी न किसी रूप में प्रयोग होने लगा था। युद्धस्थल में तोपखाने के पहले हाथियों द्वारा बनाई जाने वाली रक्षा पंक्ति का स्थान ग्रहण कर लिया था और प्रायः तोपों ही सेना के अग्रिम भाग में रखी जाती थी।<sup>६</sup>

१ २—दे०, 'हिन्दू सम्पत्ता', पृ० १८६, 'हि० पु० सं०', पृ० ५०२

३ "कित्नु सम्भवन उस समय तक (बाबर काल) तोप से पत्थर के गोले दागे जाते थे। घातु के गोले का उस समय तक प्रयोग प्रारम्भ नहीं हुआ था।"

—'तुगलककालीन भारत', पृ० ४३

४ "तह गोला पत्थर कित्तरिय सो अरि पत्थर थत्तरि घुरेउ।" जग०, छ० १५६८

५ दे०, एन एडवाल्ड हिस्ट्री ऑफ इण्डिया भाग २ पृ० ३६४

६ 'सु आगे अथनारि अपार सजू। निन देपत बाइर दूरि भजू।'

—पृ० रा०, का० ६४८।१६

(क) सब तोपखाना अगु कर जिहि को दिगतन ली असर।—'हि० व० वि०', ४३

(ख) आगे सब अरावों कियो। तिहि पाछे पदल दल कियो।

—वी० च०, १२।१२

(ग) 'दारू गानी व' घटे तीरन माची मार।

छूछे नय तुनीर सब, परयो फौज को भार।' —छ० प्र०, ७।१३

दुर्गों के बुर्जा पर भी तापें स्थापित रहती थी, जिसे प्रयाग स शत्रु शल के दुर्ग म प्रवेश करने के प्रयत्न का अमफल कर दिया जाता था ।<sup>१</sup> दुर्गदीवार के बगुरों के रक्षा पर भी सक्ति नियुक्त कर दिए जात थे जा उन रक्षा म स गालिया दागफर रिपुदल का सहार करत थे ।<sup>२</sup> सक्षम म अनक प्रकार की ताप और बद्रूँ, चद्द तथा बान<sup>३</sup> धादि अग्यस्त्र परवर्तीकालीन युद्धा म विनाय व मुख्य मन्त्रल बन गए थे ।

### सेनाओं की पताकाएँ

वीरवाच्य म सना की पताकाया के लिए निसान,<sup>४</sup> ध्वजा,<sup>५</sup> पताका,<sup>६</sup> बरख<sup>७</sup> और ऋषि<sup>८</sup> शब्द व्यवहृत हुए ह, निनम से निशान शब्द का सर्वाधिक प्रयाग किया गया है । मुगल सना की पताकाएँ आलमताग कही गई है ।<sup>९</sup> निशान सना के एक आवश्यक अंग हात थे । युद्धस्थल म सनिको का अपना जय परजय का तान ऊच उठे हुए या झुके हुए निसाना न देखकर हो जाता था । विजता का सवप्रथम काय शत्रु के नगाडे और निशाना पर अधिकार करके निशानो को झुका देना होता था ।<sup>१०</sup> हम्मीर रामा और हम्मीर हठ म शत्रु के निशाना को असावधानी स ऊचे करक लाना दुर्ग-नारिया के जीहृ का कारण बन जाना है । घटनाक्रम के अनुसार महाराज हम्मीर देव स्व रानियों को आदेश दे गय थ कि यदि तुम्ह दुर्ग को आर शाह के निशान आत दिताई दें ता हमारी पराजय समझ लेना और शत्रु चगुल से बचने के लिए जीहर कर लना ।<sup>११</sup> व युद्ध म विजयी तो हात हैं किन्तु असावधानी स हम्मीर रासो म शाह अलाउद्दीन के निशाना का ऊंचे उठाय हुए तथा हम्मीर हठ मे अपन निशाना को झुकाए हुए दुर्ग की ओर प्रत्यागमन करत हैं, जिसे उनकी पराजय की कल्पना करके दुर्ग नारिया आत्मदाह कर लती हैं । इस घटना म चाहे महाराज हम्मीर देव की पराजय को छिपान के लिए ही, शाह के निशानो को असावधानी स ऊंचा उठाये हुए लकर आना प्रशिक्षित किया गया हो, तथापि निशाना स जय या पराजय

- १ ' बुज पुजों धरो ताप मोटी, एक मोटी तहाँ दाद छाटी ।  
जान जज्जाल के कोट द्वारों, धानवार रुपए हजारों ।' सु० च०, ७।२।३७
- २ "कागुरों कागुरों मार मण्डी । रध रधा उन्डी भुसही ।  
घट की उद्ध की मार बडो । दाहिन बाहिन चोट चडी ।" वही
- ३ ' गुरदा चद्द गज-गुवारे । लिए लगाई तीर कस मार ।  
ताप दह फेरि अति भारी । मन्दरमरु दहावन बारी ।  
तिरु सुपक जरजाल जमूर । ल भरि नार वान बल पूर ।'

— ह०ह०, च०, १५८ ५६

- ४ 'सु० च०, २।१।१०, प्रता० रा०, छ० ८५ 'हि० व० वि०, छ०, ४८, ८२
- ५ दे०, 'प०रा०', का०, २३०३।१।८२, 'पर०रा०', १७।४२, सु०च०, १।३।३२
- ६ मे ११—दे०, 'सु० च०, ६।५।४, शि० भू०, ८१, 'छ० प्र०, १।४।६, 'वी० च०, ५।८२, 'रा० वि०', १।८।६६, 'ह० रा०, ६८५

का ज्ञान प्राप्त करता थाकर अभिव्यक्ति पाता है। वीरकाव्य में वरत घोर नगरा  
दिया जा पर धनुष वक्रण दुर्गिताय शक्त बना है कि, बिना उर मातम तिम में  
शाह धक्कर क ममम म म जा मक्ता है।<sup>१</sup>

वीरकाव्य में दूगर रम तथ्य पर प्रकाश पड़ता है कि विभिन्न राजाओं तथा  
जातिया की रण प्रजाप्रा का पुणन पुपन रण ह्यो म। पुरीराज रागा म पचीराज  
घोर ताहूर राय की सताप्रा का ती रगा का पताप्राणिगार्द गर्द है<sup>२</sup> तथा मुगरमाना  
की सता के निशाता का रण रता बजाया है।<sup>३</sup> सुजात मग्नि म महागत्र मूत्रम  
का मनु की सता की टुबटिया का परिपय ती हृण उता गुल्तर बगाता है कि  
जही श्याम पताप्रा उर रता है, यह पताप्रा का रण है, तीनी घोर रते प्रजाप्रा  
याले रहेन है, भगव रण क निशातो वापी सता दित्त भारत की है तथा रता घोर  
स्वत वण की प्रजाप्रा वापी टुबट्टी बकगी की है।<sup>४</sup> परमात रागा म मतिगात की  
सता म रता, श्याम, पीत, रते घोर हरित यनी की प्रजाप्रा वापी मय टुबट्टिया  
सम्मिलित दिगार्द गर्द है।<sup>५</sup> सुदा न एव ही वण का पताप्रा की सता की चारों  
दिशाप्रा म पहरात चित्रत करक, इस तथ्य का भी अभिद्योत किया है कि निशानों  
स इस बात का ज्ञान हाता रहता था कि बीतनी स प-टुबट्टी वही तब फनी हई है।<sup>६</sup>  
युद्ध पताप्रा के वण क आधार पर, विभिन्न तरगा के सिका की युद्धस्थल म  
अपन दल म सम्मिलित रह कर युद्ध करने म भी निश्चय हा बडी सहायता मिलनी  
होगी।

सेनाओं के प्रयाण के समय बजने वाले युद्ध वाद्य—रण-वाद्य का मूलोद्देश्य  
वीरो म रणा-माद का सचरण करना हाता था। इसके साथ ही वीरो की युद्धाय  
सज्जित होने, युद्धारम्भ करने तथा विजय प्रादिक तथ्यो की सूचना देने के प्रयोजनो  
म भी इनका प्रयोग किया जाता था। राजकीय यात्राप्रा के समय भी नगाडे प्रादि  
वजाते चलता उनकी मर्यादा का अभिद्योतक होता था।

आलोच्यवालीन रण-वाद्य म निशान का सर्वाधिक उल्लेख मिलता है। निशान  
शब्द के विषय मे यह उल्लेख करना प्रावश्यक है। पारसी म निशान शब्द के अर्थ—“सना  
का भण्डा तथा बादशाह का मातापत्र होते हैं।” इन अर्थों म से निशान शब्द का  
सेना के भण्डे के अर्थ म प्रयोग पीछे दिया जा चुका है हाँ वीरकाव्य म उसकी अपेक्षा  
निशान का डके या घोसा के अर्थ म अधिक प्रयोग किया गया है। डॉ० श्यामसुन्दर  
दास ने निशान के भण्डे के अधिक प्रयोग का सम्बन्ध सस्कृत के विपण्ण शब्द से जोडा

१ स ५—दे०, वी० च०, ५।८२, 'प० रा०', मो० १।१६०।५१, पु० रा०,

का० २३०२।११८२, सु० च०, ६।५।४, पर० रा०, १५।११२

६ “चार्या निशान चारयो दिसान। फहरावति भावति घरि धवान।’

—‘सु० च०’, १।३।३२

७ ‘सुजात चरित्र की भूमिका’, पृ० ६

हे ।<sup>१</sup> पद्मीराज रासो,<sup>२</sup> क्यामखौ-रासा,<sup>३</sup> परमाल रासो,<sup>४</sup> वीरचरित्र<sup>५</sup> छत्रप्रकाश,<sup>६</sup> सुजान चरित्र,<sup>७</sup> राजविलास,<sup>८</sup> गगकविस,<sup>९</sup> प्रताप विरुदावली,<sup>१०</sup> हम्मीर रासो<sup>११</sup> और हम्मीर हठ<sup>१२</sup> म निसान वजाकर सनिको का युद्धाय सज्जित हान, शत्रु को स्व आगमन की सूचना देने, युद्धारम्भ करन तथा विजय की सूचना देने का चित्रण किया गया है । निम्न से ही मिलते जुलते रण वाद्या म उल्लेखा की दृष्टि स दुदुभि द्वितीय स्थान प्राप्त करती है जिसका वीरचरित गोरा वादन की कथा सुजान चरित, हिम्मत बहादुर विरुदावली प्रतापसह विरुदावली, रासाभगवन्तसिंह और प्रताप रासा म उल्लेख मिलता है ।<sup>१३</sup> इसके अतिरिक्त अब<sup>१४</sup> नगाडा,<sup>१५</sup> मारु,<sup>१६</sup> घौना,<sup>१७</sup> जगो डोल और दमामा<sup>१८</sup> और तबला<sup>१९</sup> भी निसान और दुदुभी की भांति युद्ध मञ्जादि के समय बजते प्रशंसित किय गय हैं ।

कवि मान और ब्राह्मकार न निसान बजने पर वीरों क युद्धाय सज्जित होने का शब्द चित्र प्रस्तुत किया है । राजविलास मे निसान के प्रथम बार बजने पर सनिक भगवान् पहन कर शस्त्रा से सज्जित हा जाते हैं द्वितीय निर्घोष पर अपने अपने अश्व और गजा पर सवार होकर एकत्र हा जाते हैं तथा तीसरी ध्वनि पर कुमार जयसिंह भी भस्त्रारूढ होकर युद्ध के लिए प्रयाण आरम्भ कर देत हैं । ब्राह्मकार के शब्दो म "नगाडे की प्रथम चोट सुनकर वीरो न जानें कस ली, दूमरी पर वे सवार

१ से ३—दे०, 'प० रा०', का० २८३।१३, ६३३।७६, २२०८।२५, वही, २२०८।६२५ 'क्या० रा०', छ०, १६६ १६८, १७१, ४२७, ५३२, ५४४, ५८४, ६००, ६४४, ६४७, ७५५, ७७८

४ से १२—दे०, पर० रा०', ७।२६, १०।१३८, १६।७६, २१।६७, १० २४४, १०।२८२, १०।३५८, १०।४८१, १०।६५०, १६।४८, 'वी० च०', १२।३६, छ० प्र०', १४।६, १७।१, 'सु० च०', ६।१।२१ २।२।१४, २।३।६ १।३।७, ४।१।१०, ५।२।३, ५।४।१३, 'रा० वि०', ८।६, १८।६२, ग० क०' छ० ३०५, 'प्रता० वि०', छ०, ६८, ह० रा०', छ०, ३८१, ३८२, ३८८, ४१७, ४६८, 'ह० ह०', च० छ०, १२०

१३ 'सु० च०', ५।१।१४ 'प्रता० वि०', छ०, १०, हि० ब० वि०' छ०, २५, 'वी० च०', १६।३, 'प्रता० रा०', छ०, ११६

१४ 'पर० रा०', ४।७६, 'ह० ह०', च० छ०, २६१, छ० प्र०', २१।३

१५ 'भा०', ४३।३१, 'छ० प्र०', १३।६, वही, १५।२

१६ 'वी० च०' ६।५१, 'छ० प्र०', १७।१०, 'भा०', १०।३।२३, 'ह० ह०', च० छ०, ३०४

१७ 'छ० प्र०', १४।६, 'प्रता० रा०', छ० ८६, 'ह० ह०', च० छ० १२१

१८ हमके भहगी ढाल, सहैणाई बाजे सरस,

पुं दमामा धार सीपूठी टाठी श्रव । गारा० क०', छ० १२८

१९ 'क्या० रा०', ७७८, 'छ० प्र०', १८।१०, 'रा० वि०', १८।२८

हो गये तथा तीगरे विषों पर गमग्न भाव मुद्राएँ तब आरम्भ कर लिया।<sup>११</sup> छत्रप्रशासक में भागनी हुई सता का तपसा प्रशासक रोसने चित्रित किया गया है।<sup>१२</sup>

अन्य रण वाद्यों पर प्रशासक खाती से पूव विमान पर विषय में कुछ अन्य तथ्यों का उल्लेख करता आवश्यक है। यदि जानें कि विमान का सम्पूर्ण ज्ञान स वृत्तान्त पर बताया है।<sup>१३</sup> वीरगायक से जानें होता है कि किसी तरह की सीमा में स विमान या गमाया प्रजाते हुए निरन्तर उम तरण की आभासना या प्रतीक माना जाता था।<sup>१४</sup> इसी भाँति पराजित शत्रु के विमानों का अनिश्चित तूट विमान गाना था। वीरवरिच में अत्रुन कजरा के तपाडे और ध्वजाया का महाराज वीरगिट दस तूट तेते हैं जिसे पर ये बटते कि अत्र में शाह का मुह रम विगाऊण।<sup>१५</sup> क्यामगाँ रासा में तो निसाना के लूट की घटना तातायी और महमदगाँ चौहान आताओ तथा शाह फीरोजगाँ के मध्य वमनस्य का कारण बन जाती है। शाह फीरोजगाँ के नेजे और निसाना को राणा मोकतसी छीन ल गय थे।<sup>१६</sup> ताजगाँ और मुहम्मदगाँ न जब राणा को परास्त करने लूटे हुए नेगे और निसाना शाह फीरोजगाँ का वापस किए।<sup>१७</sup> तो वह अपने अश्विनस्य बीगे के उस पराक्रम से बड़ा तजिन हुआ।<sup>१८</sup> तथा उपकार मानने के स्थान पर उनसे प्राणों का आह्वान बन गया।<sup>१९</sup>

अन्य वाद्ययंत्रों में पृथ्वीराज रासा में—रणभेरी, भञ्जर (भाभ) गी नफेरी से भुजाऊ राग बजाने का उल्लेख किया गया है।<sup>२०</sup> उसमें पाढा सहस्रो गव भी बजाते लिखाए गय हैं।<sup>२१</sup> कीर्तिलता में रणभेरी बाहल डाल तपला और रणतूय के वाद्य से सजिकी में मुझी माद जागृत किया जाता है।<sup>२२</sup> परमाल रासी में जगी डोल मदग बामुरी शय शहनाई रणतूय दूधु धुमार करनाल तारतूमा चौतार, रवाक बीन मुह चण, भाँक और मजीर बजान से पाताल के नाम और दिग्गज भी बधिर हाने चित्रित किए गए हैं।<sup>२३</sup> कवि मान न मुद्ध क्षेत्र में जगी डोल मदग शय, बीन नफेरी, शहनाई भेरी भटारी दुखवरी सारगी कसाल और मूय का बजाया जाना प्रशंसित किया है।<sup>२४</sup> सूदन ने ढाल, डमार, डफला, तबल शहनाई तुरही बकिया और रणभेरी नामक रण वाद्यों का उल्लेख किया है।<sup>२५</sup> इसी भाँति जटमान ने शहनाई और तुरही<sup>२६</sup> जाधराज तूय और भेरी<sup>२७</sup> का आह्वान करने रण महमद नुरही और कडाल का<sup>२८</sup> 'खुसाल' न शहनाई

१ स ५—६० 'आ० ६७।७ ८, 'छ० प्र०' १८।१० क्या० रा०', छ० ६३७,

'आह्वान' ५० ३०८ बी० च० ५।८२ ८३

६ स १२—३० क्या० रा० छ० ३४५ ३४६ ३४३ ३४६, ५० रा०', का० २२०८।६२६ ५० रा० मो० ३।४५।१।२६ नीति० ५० १००

१३ स १८—६० पर० रा०' १०।२७६ ७७, १०।४८८, 'रा० वि० १८।३२, मु० च०, ५।१।१४ मारा० क०, छ० १२८, 'ह० रा०, छ० ५१६, 'आ०, २४।७, ७६।६

करनाल, तुरही और भाभो का<sup>१</sup> तथा सदानन्द न युद्धस्थल में शत्रु<sup>२</sup> वजान का चित्रण किया है।

मदभगत रणवाद्यो से कुछ प्रसिद्ध ओजात्मक ध्वनिया या राग बजाए जाते थे। वीरकाव्य में तीन युद्ध रागों का उल्लेख मिलता है। कवि चंद्र<sup>३</sup> जटमल<sup>४</sup> पद्माकर<sup>५</sup> चंद्रशेखर<sup>६</sup> और जान<sup>७</sup> न 'मारु राग' का उल्लेख किया है। वीर रस का दूसरा राग सिंधु राग कहलाता था, जिसका कवि चंद्र<sup>८</sup>, जटमल<sup>९</sup> जान<sup>१०</sup> और मान<sup>११</sup> ने उल्लेख किया है। पृथ्वीराज रासो में अधिकांशतया इसी राग का उल्लेख मिलता है।<sup>१२</sup> कवि मान ने 'गौरी' नामक एक अन्य युद्ध राग का भी उल्लेख किया है।<sup>१३</sup>

रण वाद्यो में इन रागों की रागिनियाँ वजान के साथ साथ बजा, जागरे और ढाडिया द्वारा 'मारु' और 'सिंधु राग' के ओजात्मक कडवे भी गाये जाने थे। जटमल ने ढाडियों का सिंधु राग का आलाप करते प्रदर्शित किया है।<sup>१४</sup> पद्माकर के वचन से तो युद्धस्थल का स्वरूप ही मूर्तिमत्त हा उठता है—'जुभाऊ बाज वजन लगे जिससे वीरो के हृदय चौपुन उत्साह से उमत्त हो गय। जगा और जागरा के मारु राग को सुनकर वायरो के अंगो में ता कपन हो गया, जबकि वीरो के भुजदड, युद्धोमाद से फडक उठे। मजीरो की भ्रकार रकावा की मद्र गम्भीर ध्वनि, जागरे और ढाडिया के ओजात्मक कडवे तथा नकीवो (चारण भाट) के वीररसात्मक छंदा क मिश्रित

१ २—दे०, 'प्रता० ग०', छ० ६० ६१, 'रा० भग०' छ० ७०

३ "वज राग सिंधू सु मारु अवगो।

गजे मूर मूर असूर सु भग्ने।"

—'प० रा०', का० ६, ४। ११७

४ 'रण वज रणतूर मारु गाव भग्ना।

उमगे तह चित मूर, कायर का चित खलभल्या।" —'गो० व०', छ० १२७

५ "जगे जागरे राग मारु अलाप।

सुने कातारा के तहा भग वापें।"

—हि० व० वि०', १८

६ पढ़ विरद बदी बरजौर। मडयी राग मारु सब ठौर।

—ह० ह०', च० २६६

७ करनायो घर रावदी चौपनातन वज सहनाद।

मारु सिंधू सुमट सुनि ना भग सभाद। —अलि० की प०' छ० ३८

८ से ११—दे० 'प० रा०' मो० २। २६। ६२, 'गो० वा० व०', छ० १२८, 'अलि०

की प०', छ० ३८ 'रा० वि०', १८। ३२

१२ दे०, 'प० रा०' का० १३। ६६७, २७। २६ ३। ८। ६४ ४६७। ७७, ५३।

१३८ ६२६। २४ ६३। ११५, ११४। ६५ आदि।

१३ सिंधू गौरी वज्रत सुर, मूग्न वज्रत सुद्योह।

विन ज्यों तन धन तिन तज मानिनि माया माह। —'रा० वि०', १८। ५५

१४ ठमके भग्नी ढाल, सहपाई बाज सुरग।

धुर दमामा धोर, सीधूडो टापी श्रव।

—'गो० वा० व०', छ० ३८



स्तर ने योरा के गुणों का रणामत्त कर लिया।" चन्द्रगिर ने जुभाऊ बाजा त साथ शक्ति के मान राग का गुण का, वीर और गायत्री पर पद्यांतर की भक्ति भिन्न भिन्न प्रभाव दिगाया है।" कवि मान क शब्दा म—' गिनु और गीरी राग के श्राण म गति श्राने तत, पत और गृहिणी श्राति क माया माहा की तण-मुष्य शिद्धि त कर वो ये तथा उतम एत प्रपूत श्णोत्साह तत सचरण दा जाता था।"

सैनिकों ने श्रम प्राण

योद्धाया तथा श्रम और गता के विभिन्न शरीरगत की रणा के लिए दस्तात की कडिया श्रयता चहरो स निर्मित शोक प्रवार क उपकरण का प्रयाग किया जाना था। शोषार्थी का भि न भि न पुरातत्व सग्रहालयों के अधिनारियों त एक ही उपकरण के भि त भिन्न नाम बताए थे, जिससे प्रतीत होता है कि स्यन भू स इन उपकरणों के नामों में प्रादेशिकता का पुट रहता था।

(क) टोप कुडी, कुलह और सोल—शीश की रक्षा के लिए पहने जाने वाले लोह उपकरणों में टोप कुडी, कुलह और सोला का प्रयोग किया जाता था। ये शिरस्त्राण रूपाकार में बहुत भिन्न न होने हुए भी बदाचित्त स्थल भेद के कारण ही पथक पथक नामों के अधिहित किए जाते थे। इहे पगडियों के ऊपर पहना जाता था।<sup>१</sup>—जो स्वयं भी टोप और कुडी आदि के टूट जाने पर कुछ मोमा तक शीश को प्रहारों से सुरक्षित रखती होगी। टोप का प्रयोग—पध्वीराज<sup>२</sup> रासो, राजविलास,<sup>३</sup> मुजानचरित,<sup>४</sup> हम्मीर<sup>५</sup> रासो हम्मीर हठ<sup>६</sup> प्रतापविरुदावली<sup>७</sup> और आल्हमण्ड<sup>८</sup> में प्रदर्शित किया गया है। रासा भगवतसिंह<sup>९</sup> और जगनामा<sup>१०</sup> में कुडी का प्रयोग दिखाया गया है जबकि चन्द्रशेखररुत हम्मीरहठ और आल्हमण्ड में कुलह का प्रयोग चित्रित किया गया है। कवि जान ने इनके स्थान पर सोल का प्रयोग दिखाया है।<sup>११</sup>

१ से ३—दे० प्रता० वि०' छ० १८२०, ह० ह०, च० छ० १८२०,  
'रा० वि० १८।२५

४ 'सुरख पगडी है माये पर लोहे कुडी लई औघाय।'—'आ० ४२।१७

५ 'सुर टोप दूक सुउडडत दीसैं। मना चद तारा नव हृष्यरीस।'

—प० रा०', का०, ५३१।८५

६ 'सिर टोप मज्जि तनुप्राण सच। प्रकटे सुबधि हृथियार पच।'

—'रा० वि०, ६।१२

७ + + + भिलम टोप जजौर जिह लुटिन्य मस्तानें। — सु० च०', ६।२।३२

८ से १३—दे० ह० रा छ०, ७५० ह० ह० च० ३२८, प्र० वि०' छ० ५६,

'मा० २३७।११ रा० भ०, छ० ६४ 'जग०, प०, ७६०

१४ राग जिह तन सज्जि के। साल सिर पर दित्ता।'

—'आलि० की ५०', छ० २८

भिलम—लोहे की कड़ियों से बुनी हुई भालर भिन्नम कहलाती थी, जिसका तीन रूपों में प्रयोग चित्रित किया गया है। पृथ्वीराज रासो में धीर अपनी पगडियो पर भिलम डालते हैं।<sup>१</sup> कवि पद्माकर<sup>२</sup> और ग्वाल<sup>३</sup> ने भिलिम से धीरो के शरीरों की मूर्ति प्रदर्शित करते हुए, उगगा जिरह के अर्थ में प्रयोग किया है क्योंकि अर्थ कविया ने उस अर्थ में जिरह शब्द प्रयुक्त किया है। यह तथ्य भी उल्लेख्य है कि पद्माकर ने भिलम शब्द का तो कई बार प्रयोग किया है जबकि जिरह शब्द का मात्र एक बार प्रयोग किया है।<sup>४</sup> भिलिम का तीसरा प्रयोग टाप के साथ सम्बद्ध है। कवि चन्दनेटोप भिलम<sup>५</sup> सूदन न भिलिम-टाप<sup>६</sup> चन्द्रशेखर ने भिलिम घटाटोप<sup>७</sup> जोधराज ने जिरह-टोप<sup>८</sup> तथा भाल्हाकार ने 'भलरिहा टोप,<sup>९</sup> शब्दों का प्रयोग किया है जिससे प्रतीत होता है कि इन टोपों में भिलम या जिरह जुड़ी हुई थी। भरतपुर के पुरातत्व संग्रहालय में शोधार्थी को बताया गया था कि जिम टाप में गदन की रक्षा के लिए जजीर जुड़ी रहती थी, वह भिन्नम टोप कहलाता था। विलियम इरविन ने मुहू से भिलम हटाने सम्बन्धी निर्देश के आधार पर कहा है कि वह मुख की रक्षा के लिए भी प्रयुक्त की जाती थी।<sup>१०</sup> कवि पद्माकर के भी एक उल्लेख से ऐसा ध्वनित हाता है कि भिलम मुख के चांग और भ्रमभ्रमा रही थी।<sup>११</sup> अनुमानतः जब टोप के पार्श्वभाग की भाँति उसमें आगे की ओर भी जजीरें जुड़ी रहती थीं और यह भिलम मुख की रक्षा करती थी। आईन ए अजरगी<sup>१२</sup> में शस्त्रास्त्र और अग जाणों का विवरण देते हुए श्रम-संस्था चौग्रन पर 'जिरह-कुलह' का उल्लेख किया गया है तथा विलियम इरविन के अनुसार चित्रा की सूची में प्लेट नं० १३ की सं० ४५ पर उसका चित्र दिया गया है।<sup>१३</sup> हमारे मत में जिरह कुलह का ही हिन्दी में 'भिलम टोप' कहा जाता था, जिसमें जिरह भिलम का और कुलह टोप का द्योतन करती है। श्रीधर ने जगनामा

१ "इत सूरमा पाग प भिन्नम डारे । उतै भुडर रभ भागै सवारै ।"

— प० रा०, का० २५६४।२६४

२ "जानत रन इनमें पहिर भिन्नमें हिलमिल दिरम उमग भर ।"

—वही, छ० ८६ और भी दे० प्र० वि०, छ०, ५६, १८६, १६५ २०१

३ "हय्यारो पर सबक जिलह चढ रह्यो है, सभट्टा के तन यो भिन्नम मढ रह्यो है ।"

—'ह० ह०' ग्वाल० छ० ६७

४ से ६—दे०, 'हि० व० वि०' छ०, ७८, प० रा०, का०, २५६२।६४०,

'सु० च०', ६।२।३२, 'ह० ह०', च० ११५ 'ह० रा०', ४६१, 'आ०', ५३७।११

१० 'द आर्मी आफ दि इण्डियन मुगल्स', प० ६६

११ "भिलमि भूमि भार भौंर की भलाभली

मनों उमचि चोउ सो चमकि चबला चली ।" —'प्र० वि०', छ० ७३

१२ 'द आर्मी आफ दि इण्डियन मुगल्स', प० ६८

में इसे मिलिम बूड़ी कहा है।<sup>१</sup>

घूष तथा डिमाक या नाक चून—यह तो टोपा में भी नाक की रक्षा के लिए लोह नाक जुड़ी रहती थी, किन्तु मस्तक और नाक की रक्षा के लिए घघ नामक एक अणु बबब का भी प्रयोग किया जाता था। विलियम इरविन ने आईन ए प्रकवरी में खोपी नामक बबब के विविध पाठांतरा—घोरवी, घुधी और घूधी की बल्पना करत हुए उस सिर पर कई तर्हे करब बांधे जान गता बपडा बताया है।<sup>२</sup> इसी विषयगत कवि गोरेलाल ने मस्तक पर लाहे की घूष बंधी जाने तथा उमम साह की नाक लगी होने का स्पष्ट उल्लेख करते हुए, उसे एक ऐसा मस्तक भाण लियाया है जिगम लाहे की नाक भी जुडी रहनी थी।<sup>३</sup> अनुमानत घूष का प्रयोग तभी किया जाता होगा जब शीश पर मात्र भिन्नम डाल रमी हो अथवा एनी कुन्नी पटन रखी हो जिगम नाक न जुडी होती होगी। कवि पचाकर न नाक चून या डिमाक चून नामक बबब का प्रयोग दिखाते हुए कहा है कि उसमें स तथा गार नासिका की भी शाभा की हर लेती थी।<sup>४</sup> इससे प्रतीत होता है कि यह अणु प्राण भी कवि गोरेलाल द्वारा उल्लिखित 'घूष' से मिलता जुनता रहा होगा। विलियम इरविन ने नाक चून या डिमाक चून नामक किसी बबब का उल्लेख तो नहीं किया है, किन्तु उन्होंने विविध अणु प्राणों का सूचक फारसी का जो शेर उदघत किया है, उसमें 'चू शट' भी मिलता है। अतः यह निर्देश भी अप्रासंगिक न होगा कि आईन ए प्रकवरी की भूमिका में उसके चित्रों का स्पष्टीकरण करते हुए घूष का नाम साम्य रखने वाले घूषवा नामक बबब को लोहे की कड़ियों से बुना हुआ ऐसा कोट बनाया गया है जो अवेला ही सिर, बाजुओं और वक्ष स्थल आदि शरीरांगों की रक्षा करता था।<sup>५</sup> अथात इसकी बनावट की विशेषता यह थी कि इसमें शीश बाहु और वक्ष स्थल आदि के रक्षक भाग परस्पर मलमल रहते। यदि 'घूष' घूषवा का ही सक्षिप्त रूप था, तो समझ में नहीं आता कि, गोरेलाल ने घूष का मस्तक पर बाधने का उल्लेख कैसे किया है? सम्भवना यही

१ 'भिरि मिलिम कुडी कुरी कुरी किरि गई बखतर की किरि।'

—'जग०', प० ७६०

२ 'द आर्मी आफ दि इण्डियन मुगल्स', पृ० ६५

३ 'अहन रम आनन छवि लीन। माथ घूष लोह की दीन।

घूषहि नाक गह की लागी। छाती छटा छूट छवि जायो।'

—'छ० प्र०', २२१८

४ (क) "घर नाक चून न जे होत ऊन। सहे जे न दून भए फूलि दून।"

—प्र० वि०', छ० ५८

(ख) "अलोप टोप के अटोप चाइ चोप सा घर,

डिमाक नाक चून के नि नाक नाक सा हर।'

—वही छ० ७४

५ 'आईन ए-प्रकवरी', भा० ३, भूमिका, पृ० २४

है कि घूष और घूषवा भिन्न भिन्न कवच रहे हाने ।

जिरह और बस्तर—जिरह और बस्तर बनावट को दृष्टि से पक्क पक्क प्रकार के भ्रग प्राण थे । इन दोनों के मध्य मुख्य व्यावृत्त लक्षण यह था कि जिरह ता लौह-कडियो से बुना कुर्ता जसा भ्रगप्राण होता था, जबकि बस्तर जिरह जसा कुर्ता होने पर भी उसम चार आइने जुडे रहते थे ।<sup>१</sup> चार आइनों से अभिप्राय घातु की चार चद्दरो से है जो दोनों बाजुओ और वक्ष स्थल की सुरक्षा के लिए जिरह म जुडी रहती थीं । इन चद्दरा के नीचे आडी सगारों भी लगी रहती थी जिससे किसी शस्त्र या भ्रम्र का घाव नभी आ सकता था, जब वह उस चद्दर, सलाखो तथा लोहे की कडियो का विदीण करने की क्षमता रखता हो ।<sup>२</sup>

परमाल रासो,<sup>३</sup> वीरचरित<sup>४</sup> और राजविनास<sup>५</sup> मे जिरह अथवा बस्तर का स्पष्ट निर्देश करने के स्थान पर योद्धागण सिलह सनाह, कवच या तनत्राणा का प्रयोग करते चित्रित किए गये हैं जिससे स्पष्ट होता है कि उन्होंने जिरह अथवा बस्तर धारण कर रखे हाने । पृथ्वीगज रासो<sup>६</sup> छत्रप्रकाश<sup>७</sup> और प्रतापसिंह विरहावली<sup>८</sup> म बस्तरों के प्रयोग पर प्रकाश डाला है । सुजान चरित<sup>९</sup> और प्रताप रासो<sup>१०</sup> म जिरह और बस्तर का साथ साथ उल्लेख किया गया है, जबकि आल्हवार ने बस्तर के नीचे दो जिरहों पहनने की प्रथा दिखाई है ।<sup>११</sup> आल्हखण्ड म अयन यह भी निर्दिष्ट किया गया है कि अष्टघातु के मिश्रण स तयार की गई कडियो से निर्मित जिरहा पर बन्दूक की गालियो का भी दुष्प्रभाव नही पडता ।<sup>१२</sup> जगनामा म जिरहों के फाडने तथा बस्तरों के छाडने का चित्रण किया गया है<sup>१३</sup> तथा अयन सनिक वग्नर पीश बटाए गये हैं ।<sup>१४</sup> कवि पद्माकर<sup>१५</sup> और मदानन्द<sup>१६</sup> ने कुछ सनिक जिरह-मात्र ही पहने चित्रित किये हैं जो वदाचित बस्तरों का मुख्य अधिक होने के कारण, जिरहो का ही उपयोग करते हाने । जिरह और बस्तर के सदम म यह निवेदन अप्रासंगिक न हाना कि घतत शीश से लेकर परो तक के शरीरागा की रक्षा करने की दृष्टि से, लौह-कडियो के स्थान पर इस्पात को चद्दरो के गोताखारो की पोशाक

१ "वह यारे खुन्द मिषफार ओ जोशनम ।

चून बारी ना करद अस्तर रोशाम ।"

—'द आर्मो आफ दि इण्डियन मुगल्स', प० ६६ पर उद्धृत ।

२ शाघार्यों को भरतपुर और काठवर के पुरातत्व सभ्रहालयो म जिरह और बस्तर के मध्य यही अंतर बताया गया था ।

३ से ११—दे०, पर० रा०, २१।६०, 'वी० च०', १२।१४, 'रा० वि०', ८।१६, 'प० रा०' का० ८६।४४१, 'छ० प्र०' ७।२ 'प्र० वि०', ८६, 'सु० च०', ३।१।६, 'प्र० रा०', छ० ८४, आ०, ४२।१४

१२ से १६—दे०, 'आ०', ६०८।१८, 'जग०', ६५ ६६, वही, प० ६८४, 'हि० ब० वि०', ७८, 'रा० म०', ६५

जैसे भगवानों का भी निर्माण किया जाने लगा था। अनवर भ्यूजियम में महाराज होल्कर राव का एक ऐसा ही कवच रखा है, जिसके सभी हिस्स परस्पर सलग्न हैं और उसे पहन लेने पर शरीर का कोई सा भी अंग असुरक्षित नहीं रह जाता।

**चिलता**—हिम्मत बहादुर विष्णवली में कवि पद्माकर ने चिलता नामक भगवानों को अति प्रहार से काट देने वाल मोढ़ाभा की सराहना होने का उल्लेख किया है<sup>१</sup> जिससे उसका किसी ऐसी वस्तु से निमित्त होना घृणित होता है, जिस पर तलवार का कुछ की प्रभाव नहीं पड़ता था। पद्माकर ने प्रतापसिंह विरदावली में सनिको के शरीर चिलताभा से जकड़े हुए चित्रित किए हैं<sup>२</sup> जिससे स्पष्ट होता है कि वह शरीर से चिपटा रहने वाला भगवानों हाता था। कवि मूनन ने दिल्ली की सूट में चिलताभा की भी लूट दिखाकर, उनके प्रयोग पर प्रकाश डाला है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने चिलता को किमवाब के वस्त्र में रुई भरकर बनाए जाने वाला ऐसा अग्रखा बताया है जिस पर लोहे के परत जुड़े रहते थे तथा रुई में मगर की पसलियाँ भी भरी रहती थी।<sup>३</sup> विलियम इरविन ने चिलता में चालीस पतों होने का अनुमान किया है तथा अभिमत व्यक्त किया है कि उसे भय भगवानों के ऊपर पहना जाता था।<sup>४</sup>

**दगल्ला**—दगल्लाधारी सनिको का कवि पद्माकर ने उल्लेख किया है।<sup>५</sup> विलियम इरविन के अनुसार— दगल्ला जिरह बस्तर भगवानों के नीचे पहना जाता था तथा इसमें रुई भरी रहती थी। मुगल सेना में गल्ला का बटुप्रचलित नाम 'जामा ए फताही था जिसमें नामानुरूप गुण का विकास करने के लिए उस पर कुरान की आयतें लिखवा ली जाती थी।<sup>६</sup>

**कोठा**—कवि पद्माकर ने कोठे बाँधे हुए तथा अपने स्वयं या परतलवारों रखकर युद्धस्थल में घमासान मचाने वाले सनिको का कई बार उल्लेख किया है।<sup>७</sup> पद्माकर ने कोठे को कोठों पर बाँधना<sup>८</sup> तथा तन में कसना<sup>९</sup> चित्रित किया है जिससे स्पष्ट होता है कि वह कड़ियों के स्थान पर चहरो से निर्मित लघुकाय भगवानों होता था और उसके नामकरण के अनुरूप उसकी मुख्य उपयोगिता वक्ष स्थल और उसके उपरि भाग की रक्षा करने में होती थी। कवि मान ने भी वीरो की पीठ पर कोठी

१-२—दे०, 'हि० ब० वि०', छ० १८६, 'प्रता० वि०', छ० ८६

३ से ७—दे० 'कला और सस्टुति', प० २६६ 'द आर्मी ऑफ दि इण्डियन मुगल्स, प० ६६, 'प्रता० वि०', छ० ५८, 'द आर्मी ऑफ दि इण्डियन मुगल्स', प० ६६, 'सु० वि०', छ० ५७ ७३, २७

८ सु काठ कोठ बंध काठ बधि मोठ चव्वही।" —'प्र० वि०', ७३

९ "कोठ तन कसि-कसि घोर सु घँसि घमि हकत हसि हँसि हेरत है।"

—'प्र० वि०', ८७

सुधाभिन हाने का उल्लेख किया है।<sup>१</sup> विलियम इरविन का यह मत हम उपयुक्त नहीं प्रतीत होता कि कोठा जिरह की भाँति एक लम्बा काट हाता था, जिसे वक्ष स्थल पर बाँधी जान वाली प्लेटों के नीचे पहना जाता था।<sup>२</sup>

जोशन—कवि गगन जाशन का उल्लेख करते हुए तलवार की प्रमथ जोशन, जिरह और नीमजामा (अग्रप्राणा के नीचे पहना जान वाला जामा) काटते प्रदर्शित किया है,<sup>३</sup> जिससे स्पष्ट होता है कि जोशन जिरह के ऊपर पहना जाता होगा। केशवदास जी ने वीरा को बहुर और जोशना से सज्जित दिखाया है।<sup>४</sup> विलियम इरविन ने इसे छानी पर बाँधा जाने वाली प्लेट बताया है।<sup>५</sup> कदाचित् यह कोठे का का ही उद्भव था।

कठ गोभा—कठ शोभा नामक कवच गदन की रक्षा के लिए बाँधा जाता था। पृथ्वीराज रामो म वीरा के टोपो के साथ साथ उनकी ग्रीवाओं में अष्टमी के चन्द्राकार बाल 'कठ शोभा' नामक ग्रीवा त्राणा का चित्रण किया गया है।<sup>६</sup>

सहस्रमेखी दस्ताने—कुहनी से लेकर जेङलिया तक के बाहु भाग की रक्षा के लिए दस्ताना का प्रयोग किया जाता था जिनके निर्माण में चहर और कड़ी दोनों का प्रयोग होता था। पृथ्वीराज रामो म दस्तानों के साथ साथ हाथ<sup>७</sup> शब्द का भी प्रयोग मिलता है। हम्मीर रामो<sup>८</sup> और प्रतापसिंह विरुणावनी<sup>९</sup> म तो मात्र 'दस्ताने' शब्द का उल्लेख मिलता है, जबकि मूदन ने दस्ताना के साथ 'सहस्रमेखी' विशेषण का भी प्रयोग किया है।<sup>१०</sup> कदाचित् इन दस्तानों में सहस्र कड़ियाँ जुड़ी रहती होगी, जिससे उनका अभिधान भी सहस्रमेखी पड़ गया था।

राग—राग नामक कवच टाँगो की रक्षा के लिए प्रयोग किया जाता था।

- १ 'बिन विट्टि साहे डलकति डलते ।  
बिनलाह कोठी हठे मग हल्ले ।" —'रा० वि०', १०।२८
- २ 'द धार्मी ध्राफ दि इण्डियन मुगल्स', पृ० ६६
- ३ "सुड काटि मुड काटि जोशन जिरह काटि,  
नीम जामा जीन काटि जिमि भानि ठहकी ।" —'ग० व०', छंद ३०१
- ४ "बलत भई चरचौध बाँधि बहुर वर जोशन ।" —'र० व०', छंद ३८
- ५ दे०, 'द धार्मी ध्राफ दि इण्डियन मुगल्स', पृ० ६८
- ६ 'सुय कठ गोभा तर टोप सोभा ।  
ससी अष्टमी अद्वय गान लोभा ।" —'प० रा०', का० ५०।१।३१६
- ७ "तिन हाथ स हाथ सज्ज उपाई ।  
तिन की मगूय रवि होउ लाई ।" —'प० रा०' का० ५०।१।३१६
- ८ "धरि वीर वर दस्तान । अचरिय महरी पान ।" —'ह० रा०', छंद ७५३
- ९ 'पहिर दस्ताने गाहन तागे भट बिरभाने चाइ चड ।" —'प्रता० वि०', छंद ८७
- १० 'सिपर सिरी सनाह सहस्रमेखी दस्ताने ।" —'सु० व०', ६।२।३२

पुष्पीराज रागा में धीमा का जंजीरो से निर्मित 'राग बांधो निद्रित करने के' साथ साथ, साहू शांगी द्वारा भीर-गुग्गीर का 'निर गय गा' का बाग, राग घोर पावर से सज्जित सिगाया गया है।<sup>१</sup> इसमें स्पष्ट हुआ है कि राग यादा तथा घबरा दोनो की टांगा की रगा के लिए प्रयुक्त किया जाता था। परमाण रागा में गूरा को अपनी टांगा में रागा त तग बांधा सिगाया गया है।<sup>२</sup> यदि जान त भी यादाया की रागा का प्रयोग करते सिगाया है।<sup>३</sup> गूरा त रागा की लूट प्रशिक्ष की है, किन्तु उनके साथ भिन्नम टाग मिगी तिरहू घोर पावर एम घंगगागा का उत्तम किया है जिम से कुछ मात्रा घोर कुछ घबरा के लिए प्रयुक्त लिए जा थ,<sup>४</sup> मन यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि गूरा राग को घबरा घोर गुप्या में से बिगने लिए प्रयुक्त सिगाना चाहते थ। आईन-ए अकबरी में इमरा राग घोर राग दा पाठ मिलते हैं।<sup>५</sup> इनामन ने उनका प्रयोग घबरा की टांगा के लिए बताया था जिसका प्रतिपाद करते हुए नियम इरविन त उहे मात्रा द्वारा प्रयोग करना सिद्ध किया है।<sup>६</sup> वीरवाध्य की दृष्टि से दागा विद्वाना के मत उपयुक्त प्रतीत होते हैं।

पालर घोर सिरौ वीरवाध्य में हाथी घोर घोडा का लाह की बडियों की पालरा से युक्त घबरा पररत कहा गया है जिगत उत पर लाहे की बडिया की पावर पडी होने का पता चाना है।<sup>७</sup> पालरा के अतिरिक्त हाथिया के मस्तक पर 'सिरौ तामक' भालर डाने का प्रचलन दिखाया गया है।<sup>८</sup> डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने लोहे की महीन बडिया से बनी रदारमक भूल का चार हिस्सो में बचना प्रदर्शित करते हुए अभिमत व्यक्त किया है कि मूह की ढकने वाला भाग 'सिरौ', दोनो बगलिया में लटकने वाला भाग 'पालर' घोर दुम की घोर पुट्टा की बचान वाला भाग पिछाडी कहलाता था।<sup>९</sup>

१ 'मोजह हलह घरि, राग तब परि, सज्जि बग तरि कर डार।'

— प० रा०, का० ४०५।११०

२ "जो सुरतानह पाट। तुरिय सोई पल तायी।

राग बाग पण्यर समेत। तही तुरत निवाज्यो।' — वही, २०४६।१५१

३ "इत सूर राग बधे ताइ तग।

उत अगसरा चरनिय पहिरजग।' — प० रा०, २१।६७

४ "राग जिरह तन सज्जिक। खोल सिरपर दिता।

— 'अलि० की ५०', छ० २८

५ "+++भिलम टोप जजीर जिरह चुट्टिय मस्ताने।

पकखर गकखर लकख राग बागे व निपगा।" — सु० च०, ६।२।३२

६ दे०, 'आईन ए अकबरी' भा० ३, पृ० १८८

७ द आर्मी आफ दि इण्डियन मुगल्स, प० ७१

८ ६—दे०, 'पू० रा०, का० ५०।१।३१६, 'ह० ह०, प० ११४

९ 'बला घोर सस्कृति, पृ० २६८

सेना को व्यूहों की आकृति में खड़ा करना

युद्धस्थल में सेना के प्रायः तीन विभाग होते थे। अग्रिम भाग में स्थित दल हरावल कहा जाता था। पाश्चिम भाग में स्थित सेना चदोल या पुठावरि कहलाती थी जबकि दाना की मध्यवर्ती सेना का गोल वीं सजा स अभिहित किया जाता था। वरामर्षां रासा में सेना व गाल, हिरोल, चदान, जरमाल और वरमाल नामक पांच भागा का उन्नयन किया गया है।<sup>१</sup> इनमें से हरावल में सम्मिलित सनिका का उद्देश्य सनू-दन पर वातावेग से आक्रमण करके, उसकी व्यवस्था का छिन भिन कर डानना होना था। हरावल में कदाचित् चुन हुए वीर योद्धा ही सम्मिलित रहते थे, अतः उनमें स्थान प्राप्त करना गौरव का विषय समझा जाता था। यही कारण है कि परमाल रासा में आल्हा, ऊदन और लावन तीनों ही हरावल में रहकर युद्ध करने के तथ्य का लेकर परस्पर विवाद करते चित्रित किये गये हैं।<sup>२</sup> सुजान चरित में महाराज सूरजमल द्वारा सलावन खां से अपने पुत्रा की हरावल में स्थान प्रदान करने का निवेदन करा से नी,<sup>३</sup> हरावल में स्थान प्राप्त करने की महत्ता अभिद्योतित होती है।

सेना को हरावल, गोल और चदोल व रूप में विभक्त करने के स्थान पर पथ्वीराज रासा और परमाल रासा के कुछ युद्धों में उसे व्यूहाकार खड़ा करने की पद्धति दिखाई गई है।

इन व्यूहों की रचना किन्हीं तत्र मना पर आवृत नहीं थी, अपितु सेना की रीति विशेष में खड़ा करना ही व्यूह रचना कहलाता था। उदाहरणार्थ सेना की यदि किसी पक्षी की प्राकृति के अनुसार व्यूह बद्ध किया जाता था तो उसकी चांच, पल और नय आदि के स्थाना पर प्रसिद्ध चीरा को उनकी सेनाभा के सहित खड़ा किया जाता था। इसी भाँति शकट-व्यूह की रचना करते समय, शकट के विविध अंगा के स्थान पर प्रसिद्ध योद्धा लड़े किए जाते थे। पथ्वीराज रासा और परमाल रासा में अधालिखित व्यूहों का चित्रण मिलता है जिन्हें महाभारत से प्रभावित मानते हुए भी यह नहीं कहा जा सकता कि कथ्य-भुगीन युद्धों में इस प्रकार की व्यूह रचना दिखाता सवथा निराधार है।

शकट व्यूह—जमा कि इसके नाम से प्रकट है, इस व्यूह में सेना को शकटा-वृत्ति में खड़ा किया जाता था। 'माथो भट्ट कथा समय में चामुण्डराय शकट-व्यूह की रचना करता है और वह स्वयं उसका जुल के स्थान पर खड़ा होता है, वमास शकट के ढांचे के स्थान को प्रदूग करता है, मारु महासी उसका घुरा बाता है तथा

१ 'गाल चदान भय जव काउ जरमान वरगोत्र ।

भनिजगोतु दीवात हव सपुन भया हिरोल ॥'

—'कथा० रा०', ७११

२ ३—द०, 'पर० रा०', २३।६७-७३, 'सु० व०', ३।४।४



मालदेव घदन और भाइया रामक वीर उगते पहिया व स्याम का संभानत है ।<sup>१</sup>

**घनव्यूह**—वालुनाराइ से होने वाले युद्ध में महाराज बीमलदेव इस व्यूह की रचना करते हैं, जिससे प्रतिष्ठा के लिए वालुनाराइ गण व्यूह का प्रयोग करते हैं ।<sup>२</sup> सप की भाँति प्रवण करने वाली महाराज वालुनाराइ की सेना के मुनाप्रभाग में स्थित परमार वीरों का महाराज सामेश्वर व महंगीर यादव सामना उही करते, जिससे घनव्यूह टूटित हो जाता है ।<sup>३</sup> रासो में रावन समर विजय भी इस व्यूह की रचना करते हैं । वे सत्य सेना को पुण्डताकार गढ़ी करते हैं । कुण्ड की घाटित में सड़ी की गई सेना की बाहरी पक्ति में हाथी थे, उनका पीछे सेन और बढ़ना वाले थोड़ा सटे थे, उनके पीछे प्रशारोही थे जबकि मध्य भाग में पत्तित सेना सड़ी हुई थी ।<sup>४</sup> रासो में इसी प्रकार गण व्यूह<sup>५</sup> मयूर व्यूह<sup>६</sup> और पात व्यूह<sup>७</sup> प्राँति का वर्णन मिलता है ।

### सेना द्वारा प्रयुक्त शस्त्रास्त्र

वीरकाव्य धारा के अधिकांश ग्रंथों में प्रायः एक जैसे ही शस्त्रास्त्रों का प्रयोग किया गया है । पद्मवीराज रासो में वर्णित युद्धों में अधिकतर बन्दी, कुत, गुर्ज, गुप्ती, जम्बूरा, तलवार, तुपक, धनुष बाण, हथियारि, नागमुखी या नागदमन, यमदाड शक्ति और सेल और साँग का प्रयोग चित्रित किया गया है ।<sup>८</sup> परमाल रासो में वर्णित युद्धों में असि, असिपुत्र, अग्यसस्त्र, आमल, बेहरि नल खजर, गदा, गुज, जजाल, तोप, तोमर, नावक के तीर पेशकज, परिघ, धनुष बाण, फरसा बगुदा, बाँक, भिडमाल, विधु बाण, सिधिन और सल प्रयुक्त किए जाते हैं ।<sup>९</sup> कवि

१ से ३—दे०, 'प० रा०' मो० १।२३०।३१, प० रा०, का० ६०।४४६, वही, ६१।४४४ ४५

४ से ७—दे०, 'प० रा०' मो० ३।१६६।४१, 'प० रा०', का० ६४६ २३, वही, ६८६।१५६, वही, ६४७।१३

८ दे०, प० रा० का० १०११।१०४, वही ११४४।६८, वही, ६४८।१६, 'प० रा०' मो० ३।१३३।३४, वही, २।५१३।३८ आदि ।

९ "चलिय बान जजाल ताप तोमर असि घल्लहि ।  
जाय परस्पर लरहि मार कट्टारिन पिल्लहि ।  
सिधिन अरु गुरजान परिघ विधुवानि पट्टि चलि ।  
भिण्डपाल असिपुत्र बाँक बगुदानहि आमल ।  
गहि पेशकबज फरसा सुलिय पजर मारन आइयव ।  
अग्यसस्त्र रजक चलिय जोगी या वन चालियव । "

—'प० रा०', १०।२६४ और भी देखिए—वही, २७।१४४, वही, ३।४६,

जान न करवाल, जमघर, तोप और बन्दूको का ।<sup>१</sup> बेशव न सनिक राग, घनुवा, तलवार, तुपक, धनुष बाण, बरछी, बरछा और साँगा के प्रयोग करते चित्रित किए हैं ।<sup>२</sup> कवि सुदन ने अथ कविया की अपेक्षा अधिक शस्त्रास्त्रा की नामावली दी है । उनका अनुसार युद्धो म सतिव—बुहुक-बाण, वसुवा, जजाल, जजीरा, ततवार, तमचा, तुयल, तुफंग, तुपक ताप, तामर, दुधारा, पट्टा, बल्लम, वगुदा, बरछी, बरछा, बाँक, मिछुआ, साँग, सुतरनाल, सल, हपताल और हयनाला का प्रयोग करते थे ।<sup>३</sup> भूषण ने मुख्यत वक्ता, पजा, बीछू और धनुष बाणा का उल्लेख किया है ।<sup>४</sup> जोधराज ने कटार, बमाल राग, चद्दर, जव्वर, तबल तुपक, ताडा बरछी, बधनखा, सली और हथनारि का प्रयोग दिखाया है,<sup>५</sup> जबकि गोरेलाल ने वक्ता बुहुक-बाण, धनुष-बाण, सुतरनाल, सल और हथनारिका ।<sup>६</sup> इसी तरह कलि मग<sup>७</sup> ने बुहुक बाण और चद्रमाण के, चन्द्रोपर<sup>८</sup> ने अथ अथ उद्र बाण, खडिा, गुरदा, चद्दर, छुरी जरजाल, जम्म तमचा, तुपक, तोडा, दुधारा, दुनानी और बद्रुका, का, श्रीधर<sup>९</sup> ने गरबी, तोप, मगरबी, बद्रुक, रहकला और हथनाला के, कवि मान<sup>१०</sup> ने कटार, कृपाण, बुहुक-बाण, कुत, तोप, धनुष बाण, नारि, नेजा, बद्रुक और मुट्टी के, तथा आन्हवार<sup>११</sup> ने कटार, गुज, छुरी, जुनबी, सगा, ताप, विस्तीन, धनुष बाण, नागनीन के भाले, मठि (मूठ) शेरबच्चा, मिराही और सिधिनियो के प्रयोग पर प्रकाश डाला है । रासा भगवत्सिंह म वणित युद्ध म जजाल, जुगब्बी, धनुष-बाण, रामचणी, साग, गिरोही, सुतरनाल और हथनाला का प्रयोग किया जाता है ।<sup>१२</sup> पद्याकर ने महाराज हिम्मत बहादुर अनुनसिंह के सनिक मलमानी, घबन्वरी, अशरी, उवाका, ऊता, बौबनि, खुसिानी गुरदा, जिहजी, जुनबी, जुनेद-खानी, तब डवरी, तारु-तगा, दल निधानी, दुवाही, नादोर, दुताबा परखसाही, बरदमानी, बगुरदा, बाँक, मगरबी, मानासाही, मिसरी, नीलम, लहरदार, मिराही, सैहती और हलब्बी आदि नामक तलवारों का<sup>१३</sup> तथा बडाबीन, गनाल, चद्दर, जजाल, तमची, तमचा, तोप, भसुडी, मूंगरा, राम चगा और शेरबच्चा नामक अथस्त्रा का प्रयोग करते चित्रित किए हैं ।<sup>१४</sup>

घायुषो के सम्बन्ध म यह तथ्य भी उल्लेख्य है कि किसी वीर योद्धा की युद्धाय पूणसज्जा के लिए, धत्तीस घायुषा स सज्जित होना रुढ़ना को प्राप्त था ।

१ से ३—दे०, 'वया० रा०', छन्द ३४१, ३४२, ४२६, 'वी० च०', ५१६१, ५१६५, ८१२६, ८१४५, १३१३३, 'सु० च०', ४१४१४, ५१४१४

४ से ११—दे०, 'गि० भू०', ६३, ६६, 'ह० रा०', प० १८०, 'छ० प्र०', १६१०, 'ग० क०', ३०६, ह० ह०, च० ११६, जग०, ७० ७१, 'रा०वि०', ३१८४, 'मा०', ३१८४ १६१११-१४, वही, १८१३, २१११७ आदि ।

१२ से १४—दे० 'रा० भग०', छन्द ६८ ७३, 'हि०ब०वि०', छन्द १६२ से २०१, वही, ६५ ७१,

पृथ्वीराज रासा,<sup>१</sup> कयामरां रासा,<sup>२</sup> राजविलास<sup>३</sup> और हम्मीर रासा<sup>४</sup> में सनिको के छत्तीस आयुधा से सज्जित हान का उल्लेख करते उनके तथ्य का अभिव्यक्ति प्रदान की गई है। पृथ्वीराज रासो में उनकी नामावली भी दी गई है, जो इस प्रकार है—

१—अस, २—शूल, ३—पाश, ४—परगु ५—अस नी, ६—गक्ति, ७—सून, ८—तोमर, ९—भल्ली, १०—कृपाण, ११—तालीज (ननिवा), १२—नाराच, १३—शर, १४—घक्र, १५—सारंग, १६—वज्र, १७—गदा, १८—दड, १९—मुग्दर, २०—पिंडिमाल, २१—हल २२—मूसल २३—सत २४—गावल्न, २५—खडग, २६—छुरिका २७—पत्ती, २८—कन, २९—वगी, ३०—कुत, ३१—फलक, ३२—कनीवा, ३३—भुसुडी ३४—हुस्फोट, ३५—राक और ३६—परिध।<sup>५</sup> कवि सूदन ने दिल्ली की लूट के समय आयुधा की जो नामावली दी है, वह इससे बहुत कुछ साम्य रखती है अतः प्रतीत होता है कि सूदन के मानस में छत्तीस आयुधों का ही परिगणन करना रहा है। सूदन ने अधोलिखित शस्त्रास्त्रों का उल्लेख किया है—

१—तुपक, २—तीर, ३—तलवार, ४—तमचा, ५—तगा ६—तोमर, ७—तुबल ८—तुफंग ९—दाव १०—पट्टा, ११—परगु, १२—पासि (पाश ?), १३—बिछुआ, १४—बाक १५—यल्लम, १६—बरछा, १७—बरछी १८—घनुप, १९—बुगदा, २०—गुप्ती, २१—गुज, २२—दाद, २३—यमकील, २४—बतारी २५—शूल, २६—अकुश २७—छुरी और २८—कुठार।<sup>६</sup>

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने भी चौदहवीं शताब्दी में रचित 'पृथ्वीचंद चरित' और 'वणरत्नाकर' नामक ग्रंथों में छत्तीस दंडायुधों का उल्लेख मिलने का निर्देश किया है। डॉ० अग्रवाल ने पृथ्वीचंद चरित के आधार पर उनकी जो नामावली दी है—उसके मशिक प्ररल, शविष्ट, कण्य कपन, प्रलय, काल और दस का पूर्वोक्त सूचियों में उल्लेख नहीं मिलता।<sup>७</sup> यह अंतर सम्भवतः काल और देश के भेद पर आधृत है।

वीरकाव्यधारा के समस्त ग्रंथों में उल्लिखित शस्त्रास्त्रों की हम अधोलिखित नामावली प्राप्त होती है—

अलेमानी अगरेजी अस्ति, असिपुत्र, अहिगर्बी, अकबरी, अस नी, आमल, उचाका, ऊना, ऊटनाल कमान कत्ता, कटारी, कडाधीन, कन कनीवा, कुत, कुठार, कृपाण कुहुक-त्राण, केहरि कोचनि, नख, खजुवा, खखुवा, खरी खग खाडा, सुरसानी, गदा, गनाला गरबी, गुप्ती, गुज गुरदा चक्र, चदर, चडवाण, छुरी, जरजाल,

१ से ४—दे० 'पू० रा० का० ६१७।२४, कया० रा०', छंद २६४, 'रा० वि०', १८।४३, ह० रा०' वाच० प० १८०

५ से ७—दे०, प० रा०', का० ६१७।२४, गु० च०', ६।२।३२, 'कला और संस्कृति', पू० ३०१

जमकातर, जजीरा, जजान, जमघर, जमूरा, जुनबी, तक्ब्यरी, तमाचा, तथल, तलवार, तमबा, तुपक, तुफण, तून, तगा, तोडा, ताप, तारन-तगा, तोमर, दड, दाव, दाड, दुनानी, दुवाही, दुष्पाड, धनुष, नारि, तावन के तीर, नादीर, नालीक, ताराच नागदमन, नेना, परिष, परसु पाश, पट्टा, पट्टी, पजा, पेशकब्ज, फर्खसाही फरसा, फनकक, घल्लम, बतारी, बदमानी, बरछी, बरछा, ब'दूक, बगुदा, बघनखा, बाक, विद्यु वाण, बिछुआ, भसुडी, भली भाला पिदमान, मुट्टी, मूगरी, मुगदर, मूसल, यमदाड, यमघर, यमकील, रहकना, रामचगी, हमी, लहरदार, लीलम, विलायती छुरा, वच्च, वशी, शमशेर, शक्ति, गुत, शेरवच्चा, सब, सारम, सावल्ल साग, सिधिन, सिराही, गुतरनाल, सुरती, सेल, सली, सहसी, हल, हयनाल, हयनाल, हयनारि, हलब्यी और प्रस ।

उपयुक्त शास्त्रास्था म से जिनके विषय म शोधक का भरतपुर, अलवर और दिल्ली के पुरातत्व संग्रहालयो से तथा एतिहासिक ग्रन्थो से जानकारी प्राप्त हुई है उनके रूपनार और उपयोगिना विषय पर आगे प्रकाश डाला जा रहा है । इस सदन म यह निवेदन अनुपयुक्त न हागा कि एक ही शस्त्र को विविध राज्या म वहाँ के शासक अथवा राज्य प्रदेश के नाम के आधार पर भिन्न भिन्न सजाभा स अभिहित करन का प्रचलन था । यह प्रवृत्ति तलवारा के नामकरण के सम्बन्ध म सर्वाधिक बढ़ी चढ़ी थी और कवि पद्याकर ने अक्बरी, तक्ब्यरी, सुरसागी, दुताबी, दरियाई, हमी लीलम और सुरती आदि जिन तलवारा का नामालेख लिया है, उसम इसी प्रवृत्ति का प्रतिफलन है । इसक साथ ही तलवारा की लम्बाई के कम या अधिक होने, उसम शानी जान वाली लाइनो या खाचा की संख्या कम या अधिक होने, उन लाइना के तलवारा के फल म पूर या अधूरे भाग तक जान उनके फलो का भुकाव कम या अधिक हान तथा उनम से निकलन वाल 'जोहर' के आधार पर उनका भिन्न-भिन्न नाम रखे जात थे । तात्पर्य यह कि विभिन्न नामो वाली तलवारा म इतना सूक्ष्म अन्तर होता था, कि उह प्रत्यक्षत देखे बिना उनका अन्तर नहीं समझा जा सकता । डा० दासुदेवशरण अग्रवाल म तलुगू भाषाम लिखित 'सग-लक्षण शिरोमणि' नामक कृति मे तलवारा की लगभग एक सौ तीस किस्मे दी होने का उल्लेख किया है ।<sup>१</sup>

१ जोहर—तलवार के फल के तयार हो जाने पर सिकलीगर उस पर मसाला रगड़ते हैं, जिसस उसम चपक आ जाय । रगड़ने के समय फल पर विभिन्न प्रकार के निशान निकल आत हैं जा जोहर कहलाने हैं । जोहरा का अधिक हाना, तलवार के लाहे की उत्तमता का सूचक होता है ।

## (क) बटूक और तोपें

(क) रामचंगी—भरतपुर म्यूजियम के भूतपूर्व क्यूरेटर श्री चतुभुजदास चतुर्वेदी के अनुसार लगभग चार गज लम्बी इस बटूक को पड़ोस पर बाँधकर प्रयुक्त किया जाता था।

(ख) जजला, जजाल, सुतरनाल या ऊँट नाल—ऊँटों पर स चलाई जान वाली बटूकें जजला, जजाल, सुतरनाल या ऊँट नाल कही जाती थी। विलियम इरविन के अनुसार तोपें चताने से पहले ऊँटों को बिठाकर उनकी टाँगें बाँध दी जाती थी जिससे वे तोप छूटने के समय उठ न सकें।<sup>१</sup> शोधार्थी को जजाल या जजला ऊँट नाल का ही अपर नाम बताया गया था, किंतु वीरकाव्य में सुतरनाल के साथ साथ जजाल का पृथक् उल्लेख किया गया है<sup>२</sup> जिससे वह भिन्न प्रकार की तोप सिद्ध होती है। कदाचित् हम्मीर हठ की पादटिप्पणी में यक्त किया गया यह मत ही उपयुक्त है कि जजाल नामक तोप से लाहे के तारों में बंधे छुरी आदि के फल छोड़े जाते थे।<sup>३</sup> यह सम्भव है कि जजालों को भी ऊँट पर लादकर ल जाया जाता हो जिससे उन्हें ऊँट नाल भी कहा जाता हो।

(ग) हयनाल या गजनाल—छत्रप्रकाश की पाद टिप्पणी में ऐसी तोप जिसकी चरख का हाथी खींचें, हयनारि बताया गई है।<sup>४</sup> विलियम इरविन ने हाथी की पीठ पर लादकर ल जाई जान के कारण इन तोपों का नाम हयनाल पडन का मत व्यक्त किया है।<sup>५</sup> ये तोपें कदाचित् हाथियों पर ल चलाई भी जाती थी। हयनाल घोड़ों पर ल जाई जान वाली तोपों को कहते थे, जबकि ऐसी तोपें जिन्हें मनुष्य लादकर ले जा सकते थे, नरनाल कहलाती थी।

(घ) शेर बच्चा—चौध मुह वाली ऐसी बटूक बताया गई थी, जिसमें चाकू, छुरी शेर पंजा आदि भरकर छोड़े जाते थे।

१ 'द थर्मो ग्राफ दि इण्डियन मुगल्स', पृ० १३६

२, (क) 'छुरी एक बाल विमाल जजालें। जरी जामगी, रया चल ऊँटनाल।'

—'हि० य० वि०' ६६

(ख) "बली हायनाल धो सुतरनाल चनी जजाल दानि लिया।

—'ग० भग०', ६८

३ शोधार्थी को जजाल या जजला ऊँट-नाल का ही नाम बताया गया था, जबकि हम्मीर हठ की पाद टिप्पणी में इमना अथ 'लाहे के तारों में बंधे छुरी आदि के फल छोड़े जाने से जाना जाता है।

४ 'हम्मीर हठ' पृ० ५० ३०। कदाचित् इन प्रकार की तोपें विशेषतः ऊँटों पर ल चलाई जाना होती थी।

(इ) फाजाबोन—यह छोटी सी बंदूक होती थी, जिसे निशाना लेकर नहीं मारित किया जाता था।

(घ) घड़र—घनघर म इसे मशीन-गन जसा अस्य बताया गया था, जिसमें से एक साथ ही दम डारह गोनियां दागी जाती थी।

(छ) तुफन—इंग्लिश के अनुसार—तुफन बंदूक का ही अपर नाम था।

(ज) तमचा—तमचा आजकल के बच्चों के खिलौने जसा न हाकर, छोटी बंदूक या पिस्तौल की भांति मार करता था।

(झ) जम्बूरा—ताड़ाना बंदूक जम्बूरा कहलाती थी।

(ञ) कुट्टक या बान—कवि मूढ ने कुट्टक या बान के चलान के समय कुट्टक या बान होने के साथ साथ निशानों में चकाचौंध फैल जाना चित्रित किया है<sup>१</sup> तथा कवि जान ने उमस हाथी की पालर में घायल होने का उल्लेख किया है<sup>२</sup> जिससे स्पष्ट होता है कि कुट्टक या बान एक प्रकार का अस्त्र होता था। हमें छत्रप्रकाश में दी गई यह टिप्पणी उपयुक्त प्रतीत होती है कि बान एक प्रकार का मिटटी का नल होता था जिसकी लम्बाई बीस इंच के लगभग और व्यास लगभग तीन इंच होता था। इसमें बारूद भरकर मिटटी की डाट लगा दी जाती थी और बारूद से पलीता लगा रहता था। इसके साथ एक ठोस बाँस की सात आठ फुट लम्बी छड़ भी लगी रहती थी जो बान चलान समय फाड़ दी जाती थी। पलीते के द्वारा भाग पहुँचते ही यह बाण शत्रु सेना में गिरकर चक्कर बाँस लगाता था। बाँस की फटी हुई छड़ भी उसी के वेग से घूमती थी जिसकी मार बड़ी घातक होती थी। इन बाणों के उड़ते समय उनमें कुट्ट-कुट्ट शब्द निकलता था।<sup>३</sup> मिलियम इरविन ने भी कुट्टक-बान को राकेट बताने हुए मत व्यक्त किया है कि उनसे सहार तो अधिक नहीं होता था किन्तु शत्रु सेना में बड़ी अव्यवस्था फैल जाती थी, क्योंकि उनके हाथी घोड़े भटक उठते थे।<sup>४</sup>

(ट) घक्र—गालाकार चक्र के किनारे बड़ी तेज धारके होते थे और उसे उसके बीच में उगनी या डग डालकर शत्रु की शीवा को लक्ष्य करके चलाया जाता था। डा० फौजसिंह ने १७वीं १८वीं शताब्दी में भी सिखों द्वारा चक्र का प्रयोग किये जाने का उल्लेख करते हुए उसकी मार १०० से लेकर २०० गज तक बताई गई है।<sup>५</sup> साग, साँगी, बरछा और बरछी पूणत लोहे के बने भान होते थे। बल्लम और भाले बाँस की लाठी में लोहे का फल जोड़कर बनाये जाते थे। 'नेजा' का डों वासुदेवशरण

१ 'द थार्मा आफ दि इण्डियन मुगल्स' पृ० ७३

२ 'कुट्टकत बान कुट्टककुट्ट कहुँ हात सह घरा घरा।

दिसि, घुधरी चक्कपरी भूस मुधरी मु बमु धरा।' —'सु० च०', ४।४।५

३ दे०, 'अलि० प०', ५७

४ से ६—दे० 'छ० प्र०', पृ० १३१ पर पा० टि०, 'द थार्मा आफ दि इण्डियन मुगल्स', पृ० १५६, 'मिलिट्री सिस्टम आफ सिक्ख', पृ० २३४



तलवारें

(५) षगुदा —तलवार से कुछ अधिक चौड़ा और विलकुल सीधा शस्त्र षगुदा कहता था ।

(रा) गुप्ती—रोंत के आकार का शस्त्र जिसकी मूठ म पेश होते थे । गुप्ती की बन्द दशा म दशात यही समझना था, कि यह बँत है ।

(ग) सिरौही—यम मन (भुनाव) वाली तलवार गिरोठी कहलाती थी । यह षगुदा से मिलती जुन्ती हाती थी, किंतु इसकी चौड़ाई कम होती थी ।

(घ) नागदीनि पी तलवार— नाग की आवृत्ति जसी यह तलवार नाम की ओर अधिक चौड़ी हाती थी, तथा इसका सिरा चिरा हुआ दो धारो वाला होता था । इसका निरा दा।दार भी होता था ।

(ङ) पट्टा—विनियम इरनिन के अनुसार विशेषतया मुहम्म के अवसर पर चलाई जाने वाली कम चौड़ी और सीधी तलवार पट्टा कहलाती थी ।<sup>१</sup> पट्टा और सिराही म क्वाचित अधिक अंतर नही हाता था । अलवर म बनाया गया था कि इसम हाथ की रक्षा के लिए गुहरी तक लोहे की चद्दर का थ्योन भी लगा रहता था ।

(च) सांडा—आईन ए अकबरी मे सीधी और चौड़ी तलवार सांडा बताई गई है ।

(छ) तोडा—जिस तलवार के पूरे फन म खाचा न होकर माधी लम्बाई तक होता था, वह तोडा कहलाती थी ।

(ज) ऊना—कम लम्बाई की तवार ऊना कहलाती थी ।

(झ) जुनम्बी—तीन गीकें या खाचा वाली तलवार जुनम्बी कही जाती थी ।

(ट) तेगा—सम वाली तथा चौड़ी तलवार तेगा कहलाती थी ।

खजर या भाके जाने वाले शस्त्र

(क) कटार—दो सीधी पत्तियो के बीच मे दो आड़ी डडी लगी रहनी हैं । पत्तियो का ऊपरी सिरा तुला हुआ और नीचे का एक कमाचे से जुडा रहता है । इसी कमाचे म फन लगा रहता है ।<sup>१</sup> कटार अधिकतर शेर के शिकार मे प्रयोग की जाती थी ।

(ख) जमघर या यमदाढ़—चौड़े पाते का दुधारा खजर यमघर कहलाता था । आईन ए अकबरी म इसके फल की कटार जसी मूठ म सनग्न दिखाया गया है ।

(ग) बाक—क्वाचित बनावट म बाँकपन के आधार पर ही इसका नाम बाँक पडा है । आईन ए अकबरी म दिए चित्र मे इसके फल म खाचे भी दिखाये गये हैं ।

(घ) पेगलान—यह मुख्यतया हाथियो पर से युद्ध करने वाल सनिको द्वारा एक दूसरे के भाका जाता था ।



(ड) बाघ पंजा या बघनया—घनावट का आधार पर इस बाघ के पंज जसी शक्ति का बताया जाता था। किसी में तीन नुकीली कील हाती थी, जबकि किसी में पाँच। इसे पंजे में कमाकर प्रयाग करते थे।

(घ) जम लांक या जमकील—यमदाड का फल सीधा और चौड़ा हाता था, जबकि जमकील कम चौड़ी और टेढ़े फल वाली होती थी।

गुज—विलियम इरविन के गदाकार शस्त्रों में गुज, शशयूर पियाजी, धार, गुज, राड फासी और सेंट नामक शस्त्रों का उल्लेख किया है<sup>१</sup> जिनमें से वीरकाव्य में मात्र गुज का उल्लेख मिलता है। गुज का प्रायः सभी कवियों ने उल्लेख करके, उसके चतुर्प्रचलन पर प्रकाश डाला है। इसे गदा का प्रतिरूप कहा जा सकता है। यह पूरा तोहे का हाता था तथा भुज्यतया सर पर प्रहार करने के काम आता था। भरतपुर और अलवर के अजायबघरों में शोधार्थी द्वारा देखे गए गुज से छत्रप्रकाश में दिया गया चित्र नहीं मिलता। उन गुजों में फल वाला मोटा भाग चिरी हुई आठ कलियां वाला था किंतु छत्रप्रकाश में गुज के फल में दस लटटू भी जुड़ हुए हैं जिससे घुमाकर मारने के समय एक साथ ही कई प्रकार हो जाते होंगे। गुरु गोविन्दसिंह के शस्त्रों में जिस गुज का चित्र दिया गया है वह अन्य ही प्रकार का है और उसके सिर पर तीन लटटू जैसे जुड़े हुए हैं। इससे स्पष्ट होता है कि स्पष्ट भेद से कई प्रकार के गुज बनाए जाते थे।

युद्धस्थल में नरेशों की उपस्थिति की अत्यधिक महत्ता

आलोच्यकालीन सैनिकों में स्वामिभक्ति की धारणा बड़ी प्रचलित होती थी और वे आपदप्रस्त स्वामी का साथ छोड़ना जारज पुत्रा नमक हरामा और नरक-गामियों का काय समझा करते थे।<sup>२</sup> उनकी स्वामी का नमक खाकर उससे ऋण होने में भी दंड आस्था होती थी<sup>३</sup> तथापि उनकी यह स्वामिभक्ति नमक और हलाली की धारणाएँ युद्धस्थल में स्वामी के दिखाई दत्त रहने तक परिसीमित रहती थी। अपने सेनानायक—जो वीरकाव्य में प्रायः बादशाह ही दिखाए गए हैं—के भूषित होने या बंदी होते ही, विजय की सीमा तक पहुँची हुई सेनाएँ युद्धस्थल छोड़कर भाग लड़ी होती थी। पृथ्वीराज रासा के 'जतराव युद्ध समय' में शाह गौरी के हाथी से मिरते ही उनकी सेना उनका साथ छोड़कर भाग लड़ी होती है।<sup>४</sup> इसी

१ 'द आर्मी ऑफ़ द इण्डियन मुगल्स' पृ० ११२

२ सरहि स्वामि जो मुभट पराइय । वप सहस तन नक पराइय ।

— पर० रा०' ४।१६४ और भी दे०, ५।१३६, ५।१४०, ५।१५० ५१

३ दे० पर० रा०' १०।५१५ २४।५६, ३१।४८, ५।१५२, ५।१७३, 'ह० ह०', पं० २७१, 'र० वा० ४७, आ०', ४२।१३, ४३।१।०

४ 'पू० रा०' वा० १०४२।६८ ६६

भौति पहाडराय समय म तोवरगज शाह के हाथो का मार गिराने हैं, जिससे उन्हें षोडे पर गजार हाना पडना है। शाह गोरी के दिमाई न देने के कारण उनकी सेना पलायन कर जाती है।<sup>१</sup> रागो में महाराज बालुगाराय के सैनिक भी महाराज द्वारा वीरगति प्राप्त करने ही भाग जाते हैं।<sup>२</sup>

परमात रागो में दिल्लीशर के माय सी घायल सैनिको के सामने से महाराज परमात की सेना पलायन कर गाली है, क्योंकि उनका सेनानायक ऊदन मूर्च्छित हो गया था।<sup>३</sup> उमम महाराज परमात जब युद्धस्थल से पलायन करने गये हैं तो तहसन सी उनके अभ्राय म युद्ध करने वाली सना को निवस के चन्द्र की भौति निस्तेज बनाता हुआ घास्टा को परामना देना है कि तुम महाराज का कत् करक बलात् हाथो की सम्मारी म विटा दा।<sup>४</sup> महाराज परमात की अनुपस्थिति म युद्ध करने वाले घांन्हा ऊदन की घाय घाय बहकर प्रणमा किए जान म भी, युद्धस्थल म नरेशा की उपस्थिति अत्याययक समभन का तथ्य भन्न रहा है।<sup>५</sup> इसी तरह क्यामता गसा म स्वामी के अभाव म भी युद्ध जीतने वाले वीरो की बडी प्रणमा की गई है,<sup>६</sup> तथा मौजूदीन के मोर रहने ही उसकी सता इस प्रकार पलायन करते दिलाई है जिस तरह बरात।<sup>७</sup>

मुजान चरित म रन्नमर्गा पठान वजोर मनमूर की सेना का परास्त कर देना है, जिससे वजोर की सेना भाग जाती है। तमी स्तमर्गा महाराज सूरजमल के हाथो वीरगति प्राप्त करता है और रन्नमर्गा की विजयिनी-वाहिनी अपने सेना नायक की अनुपस्थिति म भाग लडी होती है।<sup>८</sup>

राजविलाग मे दिवगत महाराज जसरातमिह के सनिक महाराज राजसिंह के नायकत्व म युद्ध करने के औचित्य पर प्रवाण दासते हुए कहते हैं, कि 'स्वामी के अभाव मे सना व्यय है, क्याकि मोदामा म स्व स्वामी के नियत्रण म रहकर ही पराधम प्रशंसित करन का भाव जायत होता है। सेनानायक के अभाव म यह निस्तेज और निष्पभ हो जाती है। अनाथ सनिकों के समक्ष यह समस्या भी पदा हो जाती है कि ये युद्धस्थल म किमका आश पाकर युद्ध करें ?<sup>९</sup> घात्हखण्ड म भी सेनानायक के गिरने ही सेना का छि न भिन हो जाना प्रशंसित किया गया है।<sup>१०</sup>

वीरकाव्य मे प्रदर्शित उपमूकन तथ्यो की ऐतिहासिक विवरणों से भी पुष्टि होती है। श्री चिन्तामणि विनायक वध न स्वामी के अभाव म सनिको का भाग खडा

१ से ८—दे०, 'पु० रा०' का० १११७।१३०-३१, वही, १३२३।२२८, 'पर० रा०', २।६६, 'पर० रा०', २३।५५ ५६, वही, प० ३७७, 'क्या० रा०', ४१६, वही, २६६, 'सु० च०', ४।६।३

९ 'सधामहि अममत्य समभि विग लहु तम साई।

साई विनु कत् सेन, तज साई ही ताई।" — रा० वि०, ६।१८१

१० 'आ०', २७६।२२

होना मध्यकालीन सत्तियों की एक विशेष कमजोरी बसाई है।<sup>१</sup> बनियरों के दारानिकोह और घोरगवेय के मध्य स्थिति मत्ताप का निष्पत्ती का जो गुट मत्ताप की इस छोट-भी भूमि का ही उगरी पराजय का मूल कारण प्रमाण किया है कि दारा घरो हाथी की छोड़कर घरन पर मत्ताप था गया था। घरन पर मत्ताप होने के कारण यह सत्तियों को सिगाई नहीं भेगा था। सत्तियों ने उगल घाटा या घनी हाथी की बलता करने साहस छोड़ दिया और उगरी रिजय भीमा पर पहुँची हुई मत्ता विभ्रमप्रस्त होकर भाग गड़ी हुई थी।<sup>२</sup>

### दण्ड-व्यवस्था

घमराधियों तथा पराजित शत्रुओं का भिन्न भिन्न प्रकार का दण्ड देने जाने थे। केशवनासत्रो ने वीरचरित्र में धूत, डीठ परदारानुराग, हत्यार, घोर, घसतयभाषी ठग और बटमार आदि को घनिघायत दण्डित करने का विधान किया है<sup>३</sup> जिससे राज्य-शास्य भली प्रकार चल सके। यथापराध दण्ड देने में उहाते महाराज वीरसिंह देव की कुमांगगामी कुटुम्बी लोणा तक के साथ किसी प्रकार की डील न करने का परामर्श दिया है।<sup>४</sup> उन्होंने यह तो स्पष्ट नहीं किया कि किस अपराध का दण्ड था, किन्तु दस प्रकार के दण्डों का विधान किया है—(१) समझा-बुझाकर छोड़ देना, (२) धिक्कारना, (३) राजदरबार में आना रोक देना, (४) अधिवार छीन लेना, (५) देश से निष्कासित कर देना, (६) रोक रताना (७) नजर-बन्द रखना, (८) (९) घगच्छे का दण्ड देना और (१०) प्राणदण्ड देना।<sup>५</sup> वीरकाव्य में युद्धविदियों के अतिरिक्त साधारण अपराधियों को दण्ड देने से सम्बद्ध कोई उल्लेख नहीं मिलता। हम्मीर हठ के घटनाचक्र से यह अवश्य ध्वनि होता है कि व्यभिचारियों को या तो मृत्यु दण्ड दिया जाता था अथवा वे देश से निष्कासित कर दिए जाते थे।<sup>६</sup> शत्रुओं को दण्डित करने की विधा दो वर्गों में विभाजित की जा सकती है—अमानुषिकता पर आघत दण्ड विधान तथा शत्रु को लज्जित करने के लिए अपनाई जाने वाली

१ स ३—दे०, हिंदू भारत का उत्कल्प, भाग २, पृ० ३७५, 'द्रुवत्स इन मुगल एम्पायर', बनियर, पृ० ५५, ७७, 'वी० च०', ३१।४७

४ "राजा सबको दडहि कर। जो जन पाय कुपडे घर।  
नातो गोतो कछु नहि गन। प्रीतम सगो न छोडत बल।"

—'वी० च०', ३१।५१

५ धिक्कड बचनदड सबेध। राजलोक आगमनि निषेध।  
चौये काठि लेय अधिकार। पांचे दीज देस निवार।  
छटे रोकि राख भवलोकि। सातो घेरि देय नहि मोकि।  
आठो ताड नवम तनुभग। दसें जीव को कर घनग ॥

६ दे०, 'ह० ह०', च० २६

विधियाँ। प्रथम प्रकार के दण्ड की बीरकाव्य में अधोलिखित विधियाँ प्रदर्शित की गई हैं—

(क) कोहू में पिलवा देना—इस अमानुषिक प्रथा का पृथ्वीराज रासो और आल्हदण्ड में विवरण मिलता है। रासो से यह तथ्य स्पष्ट नहीं हो पाता कि, चन्द का अभिप्राय अपराधी की तिल आदि पत्तियों की भाँति पिलवाने से रहा है, अथवा “डड भरइ चक्रवर्त पिसुन परे कोलू वर” से उसका अभिप्रेत शत्रु को बल की भाँति कोहू में जोतकर, कोहू चतवाने में रहा है? आल्हदण्ड ने तो शत्रु को वास्तव में ही कोहू में पेलने की प्रथा दिखाई है।<sup>१</sup>

(ख) गालों को कानों तक चीर देना—दण्ड देने की इस विधि का पृथ्वीराज रासो में उल्लेख किया गया है।<sup>२</sup> दण्ड की यह प्रणाली जातना के रचनाकाल में भी प्रचलित थी।<sup>३</sup>

(ग) मृत्यु दण्ड—जैशजदासजी १ दस प्रकार के दण्ड विधानों में मृत्यु-दण्ड का उल्लेख करते आलोच्यकाल में इससे प्रचलन पर प्रकाश डाला है।<sup>४</sup> पृथ्वीराज रासो में तत्कारण और धीर पुण्डीर की मृत्यु-दण्ड की घमकी देता है।<sup>५</sup> आल्हदण्ड में अपराधी को मृत्यु दण्ड देकर उसकी आँखें और कलेजा निकाल माने की प्रथा दिखाई गई है।<sup>६</sup> धवेनाट नामक यात्री ने दण्डद्रोहियों को प्राण-दण्ड देने की इस अभिनव प्रथा का उल्लेख किया है कि उन्हें प्राण-दण्ड देने वाले दिवस पर्यन्त मात्रा में दुग्ध-पान कराकर किले के ऊपर से गिराया जाता था, जो पहाड़ियों की नुकीली चोटियों से टकराते हुए, जमीन पर गिरने से पूर्व ही मर जाते थे।<sup>७</sup>

(घ) नितम्बों पर दाग लगाना—दण्ड देने की यह विधि आजकल बहावत के रूप में ही शेष रही है, किन्तु क्यामर्खा रासो में जलालखा चौहान पराजित चौहान को पकड़कर, उसके नितम्बों पर मचमुच ही दाग लगाकर मुक्त करता है।<sup>८</sup>

(ङ) वस्तु निकलवा लेना—रासो में शाहू गोरी महाराज पृथ्वीराज की आँखें निकलवाते प्रदर्शित किए गये हैं।<sup>९</sup> आल्हदण्ड में आल्हा बट्टी महाराज पृथ्वीराज की आँखें निकालने तो नहीं लिखाया गया, किन्तु वह उनकी आँखों में लील फिरा देता है। इस प्रथा को आल्हदकार ने शत्रु की अपना आभारी बनाकर छोड़ने के अर्थ में प्रचलित दिखाया है।<sup>१०</sup>

१ 'प० रा०', पृ० ४१०-२१५४

२ “भवे जाव की देवा ने तव कोहू में दमो दवाय।

ठाढा पिराय दमो कोहू में पाछे मूढ लमो कटवाय।” —‘आ०’, १०५।२४-२५

३ एही गल्ह मुनत। गाल फारो जगि कना। —‘पू० रा०’, पृ० २०४५।१३६

४ से ११—दे०, ‘जानकालीन भार० स०’, पृ० ६५, ‘वी० प०’, ३१।५६, ‘पू०

रा०’, पृ० २०४५।१३६, ‘इण्डियन ट्रेवल्स आब धवेनाट दण्ड करी’, पृ० ६८,

‘आ०’, ३१७।६, ‘क्या० रा०’, ४५६, ‘पू० रा०’, पृ० २३७३।१६३१,

वही, ६२१।२२-२३

(घ) कंबी को बहक में गिराकर नमक का पानी भरवा देना—भ्राह्मण्ड म कदियो के कटो को बड़ा के लिए जा दहवा (भूगम स्थित कदीघरा) म नमक का पानी भरवा देने की प्रथा दिखाई गई है, जिनम के ब नी बनाकर रखे जाते थे।<sup>१</sup>

(छ) हरे बाँसों से पिटाई कराना—भ्राह्मण्ड म भ्राह्म, काल की,<sup>२</sup> और गजराजा मल्लान की,<sup>३</sup> उनको सम्भा से बाँधकर हरे बाँस स पिटाई कराते दिखाए गये हैं।

सज्जित करने के लिए अपनाई जाने वाली दण्ड-व्यवस्था

शत्रु को चूड़ियाँ पहनाकर या पूण स्त्री वेग में मुक्त करना—हम्मीर रासो म जोधराज ने चौहान वंश के वीर वृत्त्या का वणन करते हुए कहा है कि महाराज पृथ्वीराज ने मुहम्मद गोरी को सात बार क किया था और उससे दण्ड वसूल न करके मात्र चूड़ियाँ पहनाकर बंधन मुक्त कर दिया था।<sup>४</sup> भ्राह्मण्ड म महाराज पृथ्वीराज के सामंत चौडा को उसके महोबे पर आक्रमण करने आने के समय बंद कर लिया जाता है। मल्लान उसे चूड़ी, बीछिया लहंगा, लुगुरा तथा चूनरी आदि पहनाकर पूणतया स्त्री वेश धारण करा देता है तथा उसके दण्ड बाँधकर पालकी में बिठा देता है। पालकी को ले जाने वाले हरकारो को आदेश दिया जाता है कि वे महाराज पृथ्वीराज के समक्ष डोला रखते हुए यह स देश दें कि चौडा ने महोबे को लूट लिया है और यह उनकी पुत्री चद्रावलि का डोला है।<sup>५</sup> पराजित यादवा की अवमानना के लिए यह विधि प्राचीनकाल म भी प्रचलित थी। हुएनत्सांग के साक्ष्य पर डॉ० गौ० ही० ओभा ने लिखा है कि सोलकी नरेश अपने पराजित सेनापति को दण्ड नहीं देते थे, अपितु स्त्री की पोशाक भेंट करते थे, जिससे सज्जित होकर उसे आत्म घात करना पड़ता था।<sup>६</sup>

पुत्री का डोला अथवा सेवा के लिए पुत्र की माँग रखना—वीरकाव्य में ऐसे प्रसंगो को प्रचुरता है, जिसम शत्रु-नरेशा की पुत्रियो के डोले या तो बलात् लूट लिए जाते थे<sup>७</sup> अथवा उनस उनकी माँग रखी जाती थी।<sup>८</sup> बहुत में क्षीण वन नरेश अपनी धोर से भी पुत्री का डाला दकर आशाता के प्रीति भाजन बनने की चेष्टा करते

१ श ५—दे० 'मा०' ३६१।७ ६, वही, ३१४।४ ६, वही, १६६।१५ १६, 'ह० र०', छंद ४१२, मा०', ४२६।१ ६

६ दे०, 'राजपूताना का इतिहास', जिल्द ३, भाग १, पृ० ८४

७ 'सर बहुत ही मोमिया मरे होइ धन पाइ।

बंधकर भानी तिन सुता डारे घूर मिलाइ।' —'क्या० रा०', ७६६

८ 'महिमा मागोल दीज निवारि। पुनि सहित दह देवल कुमारि।

दीज तुरत दिल्ली पठाइ। मत वर भाप हाथि बढाइ।'

—'ह० ह०', व० ८२, और भी दे०, ह० रा०', ६६३, 'पर० रा०', २३।४६

थे ।<sup>१</sup> विशेषतः क्यामला रासा म कवि जान ने अनेक हिंदू नरेश इसी भावना से मुगल शासकों को स्व पुत्रिया के डाले सोपते चित्रित किए हैं ।<sup>२</sup> कहना न होगा कि इस रूप म डोले की माँग करना अथवा शत्रु भय से डोना प्रदान करना विवाह के पवित्र बंधन की श्रणी म नहीं रखा जा सकता । संधि के रूप म शत्रु की प्रसिद्ध नतकियों को प्राप्त करना भी इसी कोटि म आता है ।<sup>३</sup> शत्रु-पुत्री अथवा उसकी नतकी की उपस्थिति विजेता के अह को परितुष्ट करती होगी जबकि पराजित नरेशा के मानस म इससे सद्व हीनता का संचार होना रहता होगा ।

पृथ्वीराज रासो म अन्तिम युद्ध से पूर्व शाह गौरी महाराज पृथ्वीराज से आधा पत्राव और सबक के रूप मे राजकुमार रत्नी की माँग रखकर संधि करने का प्रस्ताव भेजने हैं ।<sup>४</sup> इसी भाँति कवि खाल ने शाह अलाउद्दीन का, महाराज हम्मीरदेव को उनके पुत्र का घास खोदने के लिए माँगने का निर्देश किया है ।<sup>५</sup> मुगलकाल मे शत्रु के पुत्र को जमानत के रूप म स्व-दरवार म रखने की प्रथा व्याप्त थी । बर्नियर के इस उल्लेख से शत्रु क पुत्र और पुत्री को ही नहीं, अपितु पत्निया को भी जमानत के रूप म रखन की प्रथा का पता चलता है कि यदि अपने पिता जहाँगीर के समझाने बुझाने को दारा ने स्वीकार न कर लिया होता तो वह औरगजेब के सहायक मीर जुमिला द्वारा जमानत के रूप म सँपे गये पुत्रो का वध कर देना तथा उसकी पुत्री और पत्नियों से वेश्या वृत्ति कराने लगता ।<sup>६</sup>

- १ 'चिति बापा बीर चित, नूप इन दे निज धीय ।  
बधन बधे पमकं, कीन अनुग स्वकीय ।' —'रा० वि०' १।१६६
- २ "नरहर नाहर दल सजे लरि ना मके निदान ।  
नाहरखाँ की धी सुना, गहै धरन चहुवान ।"  
—'क्या० रा०' ७८४, ४७६, ५८२, ६३६, ७१५ १६
- ३ महाराज पृथ्वीराज द्वारा 'करमाटी' और शाह गौरी द्वारा चिबरेखा नामक वेश्याओं को लेकर संधि करने का पीछे उल्लेख किया जा चुका है । शाह अलाउद्दीन द्वारा महाराज हम्मीरदेव से 'चद्रकला' नामक वेश्या की माँग रखी जाती है । आल्हखण्ड म माडो नरेश दरसराज और बच्छराज की 'लाखा पानुर' को लूटकर ले जाते, प्रदर्शित किया गया है—  
"लाखा पानुर दम्भराज की सो ल गया बघेलो राय ।" — आ० , ३७।६
- ४ प० रा०', का० २२४३।७८७ ८८, वही, २२४४।७६७
- ५ माँगा सहजादा आपका है घास खोदन को,  
येटी आपकी सोच है ब्याह किय आपना ।"  
—'ह० ह०', खाल, छन्द ११०
- ६ दे०, 'द्ववत्स इन मुगल एम्पायर', पृ० ४२

## उमराव और सामंतों को जागीर प्रदान करना

संय-व्यवस्था पर प्रकाश डालते हुए के द्रोण शासक की सलाह में उमराव और सामंतों को स-सुकाइया को बढ़लता हान का पीठे उलख किया जा चुका है। इन उमराव और सामंतों का व द्राय शासक को और स संय-संगठन क लिए जागीरें प्रदान करने का प्रया थी।

महाराज पृथ्वीराज के अधीनस्थ सा सामंता म स छ स्वयं भी विविध प्रदशों क राजा तथा मय माडालक और सामंत बताए गए है।<sup>१</sup> राजा, माडलिक और सामंत आद एसो उपाधया था, जा सुकनाति के अनुसार राज्य का वार्षिक आय के आधार पर नाश्चत का जाता था।<sup>२</sup> महाराज पृथ्वीराज अपन कुछ वीरों का जागीरें प्रदान करके सामंत नियुक्त करत भी चिन्तित किए गए है। बताय हाय ऊद गवाध स कूदकर महाराज क हाथ म स गिरे चित्र का बोध म हो लपक लन बाल लोहाना का व, आजागु बाहु का उपाधि, खालवर रणयम्भीर और माइछा क मौजो क पाँच हजार ग्रामा का पट्टा, भठारह हाथा, पाच सा अश्व तथा पाच सो ऊट, पाँच सो दासया प्रदान करत हुए अपना सामंत नियुक्त करत है।<sup>३</sup> जत स्तभ क भेदन म सफल हान बाल एव मात्र वार च द पुण्डार का भी महाराज पृथ्वीराज पाँच हजार ग्रामा का पाना (जागीर) तथा हाथा क चिह्न बाला ध्वजा क प्रयाग की अनुमति प्रदान करत हुए अपना सामंत नियुक्त करत है।<sup>४</sup> इसी तरह कनक परमार को वे दस हजार ग्रामा का पट्टा सीपत है,<sup>५</sup> तथा महाराज भालाभोम से रुष्ट हाकर अपने बाल उनक भाइयो का कुछ ग्रामा का पट्टा करत चिन्तित किए गए है,<sup>६</sup> जिसके मूल म उ ह अपना सामंत बनाना ही रहा हागा।

पृथ्वीराज रासा म सामंता का जागीरें प्राय वषामुक्रमण के सामंता के वशजा

१ "सत मे पट राजत सम राज। तिनके जुव नाम कहोति प्रम।"

—'पृ० रा०, का० ६७४।६२, वही, ४१७।१८६, वही, १७१८।६५६, वही, १७१६।६६१, वही, १७१६।६६३, वही, १७१६।६६७

२ "हो० राजवली पाण्डय क अनुसार—जिस राजा के राज्य मे प्रजा को पीड़ित किए बिना प्रतिवय एक लाख (कप) सचित होता था, उसे सामंत कहते थे। इसी रीति स तीन लाख से दस लाख की आय तक माडलिक, बीस लाख की आय तक राजा और पचास लाख कप प्रतिवय आय वाले शासक को महाराज कहा जाता था। इसके भाग एक करोड़ की आय तक स्वराट, दस करोड़ तक सम्राट, बीस करोड़ तक विराट, तथा पचास करोड़ कप की आय वाले शासक क भाधिपत्य म सप्तद्वीपा पृथ्वी मानी जाती थी।"

— हिंदी साहित्य का बृहत् इति०', भाग १, प० ७५

३ से ६—२०, 'पृ० रा०', का० २७७।८-११, वही, २०२४।४०-४१, वही, १७१६।६६३; वही, २८५।३०

को मिलने की पद्धति दिखाई गई है। कन्नौज के युद्ध में महाराज पृथ्वीराज के जो सामंत खेत रहते हैं, वे उनके पुत्रों को उनकी परम्परागत जागीर में कुछ भूमि वृद्धि करके सामंत नियुक्त करते हैं।<sup>१</sup> उसमें उद्द भयवा विश्वासघात करने वाले सामंता की जागीरें अग्रहृत करने की भी प्रथा दिखाई गई है। शाह ग़ोरी को क्रुद करने वाले धीरपुण्डरीक विषय में उद्दे बताया जाता है कि वह अनक प्रकार की दपोंक्तियाँ करता है। महाराज उससे जागीर छीन लेते हैं, तथा उसे अपने राज्य से निष्कासित कर देते हैं।<sup>२</sup> जागीर छीनने से सम्बन्ध रखने वाला भय उदाहरण उनके प्रमुख सामंत कमास से सम्बद्ध है। अपनी करनाटी नामक वेष्या से कमास क भवध-सम्बन्ध होने क कारण वे उसका वध तो कर ही देते है, उसके पुत्र के नाम जागीर भी तमी करते दिखाए गए है जकि कवि चन्द उ ह कमास की अपूव स्वामिभक्ति का स्मरण दिताता है।<sup>३</sup> रासो में उल्लिखित सामंता के सम्बन्ध में य तथ्य भी उल्लेख्य है।<sup>४</sup> दिल्लीशवर द्वारा स्वराज्य से निष्कासित धीरपुण्डरीक का शाह ग़ोरी आठ हजार ग्रामों की जागीर सौजन्य का प्रलाभन दवर स्वपक्ष में मिलान की चेष्टा करते है, कि तु अपने उद्देश्य में कृतकृत्य नहीं हात।<sup>५</sup> इसके विपरीत महाराज पृथ्वीराज द्वारा भर दरवार में छड़ी मारकर अपमानित किया गया<sup>६</sup> हाडूलि हम्मीर शाह ग़ोरी से मिल जाता है और अंतिम युद्ध में शाह ग़ोरी की आर स ही युद्ध करते चित्रित किया गया है।

मुगल राज्या के उमराव हि दु सामंतों के ही प्रतिरूप थे। उमरावों को मिलने वाली जागीरों से सम्बन्धित तथ्या पर प्रकाश डालने में पूव मनसब के विषय में दो शब्द अपेक्षित हैं, क्योंकि ऊँच या नाच मासब के आघार पर हा अधिकारी उमराव कहलाते थे। डॉ० जदुनाथ सरकार ने 'मनसब को पद या भोहदा बताया है।<sup>७</sup> विनियम हरविन के अनुसार 'मुगल शासन में पत्रवाहकादि और साधारण सनिकों जैसे महत्त्वहीन राज्य-कर्मचारियों के अतिरिक्त भय समस्त अधिकारियों के मनसब निश्चित रहते थे, चाहु वे कमचारी सनिक सेवा से सम्बन्ध रखते हों भयवा नागरिक शासन-व्यवस्था से।'<sup>८</sup> इन मनसबों के आघार पर ही उद्दे सख्या विशेष में अश्वारोही

१ से ४—द०, 'पू० रा०', का० १६५३।२४६६ २५०२, वही, २०६२।३६६, वही, १५०६।३२१, वही, २०६४।४१०

५ 'दरद्वार मटी अदब्ब बडाई। छरी छरी सीम हम्मीर राई।'

—'पू० रा०', का० २३७४।१६३५

६ 'The Arabians say Mansab, in Persia and India, the word is pronounced mansab. It means a post, an office hence mansabdar an officer, but the word is generally restricted to high officials. — Ain-i-Akbari, Vol II, P 247, Footnote by Dr J N Sarkar

७ दे०, 'द आर्मी आफ दि इण्डियन मुगल्स', पू० ३



दल रखना पड़ता था और उन्हें अधिक या कम वेतन दिया जाता था। इन मनसबदारों की तीन श्रेणियाँ थी—दो सौ से लेकर चार सौ घुड़सवारों तक का मनसब पाने वाले अधिकारी मनसबदार मात्र ही कहलाते थे। पाँच सौ से लेकर पच्चीस सौ तक का मनसब पाने वाले अमीर या बहुवचन में उमराव कहलाते थे। इसी प्रकार तीन हजार से लेकर सात हजार तक का मनसब पाने वाले अधिकारी अमीर ए आज़म, बहुवचन में उज्जाम, उमराव ए किवार या शासन के स्तम्भ कह जाते थे।<sup>१</sup> इन मनसबदारों में से ऐसे मनसबदार या अमीरों को जो सौ से अधिक से सम्बद्ध होते थे उन्हें अपने मनसब के अनुसार निश्चित मात्रा में अशवारोही सत्ता रखनी पड़ती थी<sup>२</sup> और उन सैनिकों का व्यय भार वहन करने के लिए राज्य की ओर से अधिकतर जागीरें प्रदान करने की प्रथा थी। अपनी जागीरों के वे एक प्रकार से केन्द्रीय शासन की भाँति ही शासक होते थे। इरविन ने जागीरों को राज्यों के अलग-अलग उपराज्यों की सत्ता प्रदान की है,<sup>३</sup> तथा अभिमत व्यक्त किया है कि छोटी के स्थान पर बड़ी जागीरें प्राप्त करने के लिए उत्काच भी प्रदान की जाती थी।<sup>४</sup> वीरकाव्य में मनसब प्रदान करने, उसमें बढ़ोत्तरी करने आदि तथ्यों के आधार पर अमीरों से अनेक प्रकार के राज्य-कार्यों के कराने का चित्रित किया गया है।

पृथ्वीराज रासो में मनसबदार शब्द का प्रयोग तो नहीं मिलता किन्तु उसमें शाह ग़ोरी के यहाँ अनेक मीर और उमराव दिखाए गए हैं।<sup>५</sup> शाह ग़ोरी द्वारा धीर पुण्डरीर को आठ हजार ग्राम का पट्टा करके अपने पक्ष में मिलने के प्रयास का पीछे उल्लेख किया जा चुका है, जिससे अनुमान किया जा सकता है कि उन्होंने अपने मीर और खानों को भी इसी प्रकार जागीरें सौंप रखी होंगी।<sup>६</sup> क्यामला रासो में मोटेराव से उसके पुत्र को मुसलमान बनाने के लिए मंगिते समय, शाह फ़ीरोजशाह द्वारा यह प्रलोभन दिया जाता है कि इस में पाँच हज़ारों मनसब प्रदान करूँगा।<sup>७</sup> उसमें मीरा नामक उमराव का शाह से यह निवेदन करते चित्रित किया गया है कि आप मेरी मृत्यु के उपरान्त क्यामला का ही मनसब और मेरी सम्पत्ति प्रदान करना, क्योंकि भरे

१ 'द आर्मी ऑफ दि इण्डियन मुगल्स', पृ० ६

२ "दॉ० गो० ही० आम्हा के अनुसार पाँच हज़ारों मनसबदारों को ३३७ घोड़े, १०० हाथी, ८० ऊँट, २० सत्तार और १६० गाड़ियाँ रखनी पड़ती थी और उसका मासिक वेतन ३०,००० रुपये होता था।"

—द०, 'राज० का इतिहास', जि० ३, भा० १, पृ० २०५

३ ४—३०, 'द आर्मी ऑफ दि इण्डियन मुगल्स' पृ०, १५ १६

५. (क) "उमराव मीर सब मिल आय। दिखनहूँ धीर पजहूँ पराह।"

—'पृ० रा०', का० २०३२।८५

(ख) "सब उमराव मुनाई दिग। मतो मढि मुविहान।" —वही, २२४दा८२०

६—३०—३०, क्या० रा०, १४०, वही, १५६

सभी पुत्र अयोग्य हैं।<sup>१</sup> युद्धो मे विजयी हाकर आने वाले क्यामखा<sup>२</sup> और दोलतगं<sup>३</sup> की मनसबो मे बढोत्तरी की जाती है। अलिफखा<sup>४</sup> और दौनतसा<sup>५</sup> क मनसब मे उनकी स्वीकृति लेकर कुछ ऐसे स्थानो की भी जागीरें सम्मिलित की जाती है, जहा के भूमिया (भूमिधर या जमीदार) उपद्रव करत रहते थे।

वीरचारात्र मे समाट अकबर महाराज वीरसिंह देव के अग्रज राजा राम का यह प्ररोभन देने हैं कि यदि तुम अपने भाई इद्रजीत और वीरसिंह देव के उपद्रवो को शांत कर दागे ता मैं तुम्हें पांच हजारी मनसब प्रदान करूंगा।<sup>६</sup>

छत्रप्रकाश मे शाह औरगजेव दाराशिकोह के विरुद्ध उनको सहायता करन वाले महाराज चपतिराय का बारह हजारी मनसब प्रदान करत हैं।<sup>७</sup> कदाचित्त बारह हजारी मनसब प्रदान करना, सत्य नहीं है, क्योंकि विलियम इरविन के अनुसार शाही वश के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति को ऊंचे से ऊंचा सात हजारी मनसब प्रदान करने की ही प्रथा थी। तथा ऐसे उदाहरण बहुत कम मिलते हैं, जिनमे किसी को आठ या नौ हजारी मनसब प्रदान किया गया हो।<sup>८</sup> शाह औरगजेव की इस आशा के प्रतिरोध मे किया गया आदेश कि सूरजमल पर आनमण करो अथवा तुम्हारा मनसब घटा दिया जायेगा,<sup>९</sup> महाराज चपतिराय उनके मनसब का त्याग कर विद्रोह करत हुए आगरे पर आक्रमण करत दिखाये गये हैं।<sup>१०</sup> बाद मे पुन एक चतुरवकील भेजकर उस खोये हुए मनसब को महाराज छत्रसाल प्राप्त करतें हैं<sup>११</sup> और राज्य स्थापित करने की कामना होने पर उसे पुन त्याग दते हैं।<sup>१२</sup>

कवि भूपण ने मनसबदार, अमीर और उमराव आदि का बहुत उल्लेख किया है<sup>१३</sup> तथा शाह औरगजेव के दरबार मे महाराज शिवाजी के क्रुद्ध होने को इस तथ्य पर आधत दिखाया है कि उनके गौरव के अनुकूल शाह के दरबार मे उहे उच्च मनसबदारो मे खडा करने के स्थान पर पांच हजारी मनसबदारो के साथ खडा किया गया था।<sup>१४</sup> भूपण ने शाह औरगजेव के सनिक और अमीर इस दुश्चिन्ता मे भी प्रस्त चित्रित किये है कि शाह का यह आदेश है कि वे हम महाराज शिवाजी को पराजित करके लौटने पर मनसब प्रदान करोंे दुराशामात्र ही है, क्योंकि वहाँ से हम जीवित लौटने की ही आशा नहीं है।<sup>१५</sup>

१ से ५—दे०, 'क्या० रा०', १७८, वही, १५५, वही, ७५२, वही, ७४७, वही, ७६० ६१

६ से १३—दे०, 'जी० च०', ४१२८, छ० प्र०', १०१३, वही, ६११३, वही, ६११३, वही, १११६, वही, ७१८, शि० बा०', २७, और भी दे० शि० भू०, १८६, २७२, २७६, ३२४, ७७, ६७, १५०, २६२ ३०५, ३८, ६२ आदि।

१४ 'पचहजारिन बीच खडा किया मैं उसका कुछ भेद न पाया।

भूपण यो कहि औरगजेव उजीरन सो बहिसाव रिताया।" — शि० भू०', २०६

१५ 'वरि मुहीम आये कहत हजरत मनसब देन।

सिवा सरजा सो जग जरि एहें बचिब हैन।"

—'शि० भू०', ३२४

राजविलास म कवि मान ने सामंत और उमराव शब्दा का समानापन प्रयोग किया है। महाराज राजसिंह के अधीनस्थ सामन्ता का कवि मान न कभी सामन्त कहा है और कभी उमराव तथा इन दाता शब्द म स भी उमराव शब्द का अधिष्ठान प्रयोग किया है।<sup>१</sup> मान ने इस तथ्य का भी प्रकाशन किया है कि मुगल बादशाहों क अमीरों की जागीरों वशानुक्रमण से सत्रमित हानि दन क स्थान पर प्रायः जन्त कर ली जाती थी। शाह औरंगजब महाराज जसवतसिंह क मल्पवयस्क पुत्रा को उनक राज्य और सम्पत्ति का अधिपतारी बनाने क स्थान पर अपन अधिपकार म करना चाहत है।<sup>२</sup> महाराज जसवतसिंह के सामन्ता द्वारा जब इसका आमुरी रीति बहकर प्रतिरोध किया जाता है<sup>३</sup> तो उह समझाया जाता है कि मृत उमराव की सम्पत्ति जन्त करना तो दिल्ली क शासको की अमित रीति है।<sup>४</sup> यदि तुम अच्छी सेवा करोग तो उसक अनुकूल अथ कोई छाटी जागीर प्रदान कर दी जावगे।<sup>५</sup> राजविलास म महाराज राजसिंह भी युद्ध जीतकर अपने वाले सामन्ता का आम प्रदान करते विप्रित किए गए है।<sup>६</sup> बतियर न मृत उमरावा की जागीरें और सम्पत्ति जन्त करन की प्रथा की आलाचना करत हुए कहा है कि इससे मृत उमराव की विधवाआ की बड़ी दुर्गति होती है तथा उनक पुत्रो का किसी मनसबदार के अधीन एक साधारण सनिक क रूप म काम करने का विवश होना पडता है।<sup>७</sup>

राजनीतिक दृष्टि से सामन्त और उमरावो को प्रदान की गई जागीरो तथा उनकी सेनाओ को मिलाकर युद्धाय जाने के हानि और लाभ दोनो ही थ। मुख्य लाभ यह था कि इससे केन्द्रीय सत्ता बृहत् सेना की व्यवस्था करन के ऋभट स बच जाती था तथा राजधानी स दूरवर्ती एस उपद्रवी प्रदेश जो उसक लिए सरदद बन रहते थे, तथा जहाँ से मालगुजारी वसूल करना दुष्कर रहता था—मनसबदारो को जागीर क रूप म प्रदान कर दिए जाने पर उनके द्वारा यन-कन प्रकारेण वश म कर लिए जात थे। क्यामत्ता रासा मे उपद्रवी भूमियाओ के दमनाथ इस पद्धति का कई बार प्रयोग किया जाता है।<sup>८</sup> महाराज पृथ्वीराज द्वारा लोहाना आजानबाहू को सीपी गई उडच्छा (ओडछा) की जागीर को प्राप्त करने के लिए उसे युद्ध करना पडता है।<sup>९</sup> इस प्रथा की मुख्य हानि यह थी कि केन्द्रीय शासक अपनी सभ शक्ति के लिए एक प्रकार से अपने सामन्त और उमरावा क मुखापेक्षी रहते थे। उनके शत्रु से मिल जाने की भी सम्भवता रहती थी जिसका परिणाम बड़ा अनिष्टकर निकलता था। इतिहासकारो ने एक अथ हानि यह भी प्रदर्शित की है कि उमराव अपने मनसबो

१ ' तोरि पतावा तुरक क नोबति लइ नितान ।

आव ती उमराव तुम्ह प्रभु हम बचन प्रमान ।'

—'रा० वि०', १८।६५

२ से ६—दे० रा० वि०', ६।६८, वही, ६।७७, वही, ६।७३, ६।७५ वही ६।७४, वही, १२।२३, वही, १४।४१, वही, १८।१००, 'द्वैवल्स इन मुगल्स एम्पायर', पृ० १६४, क्या० रा०', छ० ७६० ६१, 'पृ० रा०', का० २७८।२०

के अनुसार निश्चिन्ना मात्रा में सेना न रखकर, प्रायः एक-दूसरे के सन्निधि और घोड़े मोंगकर तथा भाड़े का टटटू और भावारागद भादमिया को भी सिपाहियों के वस्त्र पहनाकर शाही निरीक्षण के समय सन्निधा की सख्या पूरी कर देते थे, जिससे शाही घाँवड़ा में प्रदर्शित स य शक्ति और उसकी वास्तविक सख्या में बहुत अन्तर हाता पा ।<sup>१</sup>

सामन्तों का पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेष—वीरवाय में क्षत्रिया के पतन के मूल कारण में उनके पारस्परिक ईर्ष्या और द्वेष का प्रमुख हाय मिलता है । विविध क्षत्रिया व चित्तन का आधार राष्ट्रीय अथवा राजकीय हिताहित की अपेक्षा अपने कुल विशेष की महत्ता का विभूषण करना हाता था, चाहे इस ध्यय की प्राप्ति के लिए उन्हें अथम माध्यमा का भी आश्रय यथा न लना पडे । इस ईर्ष्या व वीरवाय्य में बड़े अनिष्टकर प्रभाव प्रदर्शित किए गए हैं ।

पृथ्वीराज रासा में लाहाना भाजानुबाहु बत्तीस हाय ऊँचे गवाक्ष से कूदकर महाराज पृथ्वीराज क हाय से गिर चित्र का सपकता है । महाराज उसक इस असीम साहसपूर्ण वृत्त्य से बड़े प्रभावित होते हैं और उस पाँच हजार गाँवों की जागीर प्रदान करत है । लाहाना का सम्मानित हाते देखकर चामुण्डराय, जामराय यादव आदि सामन्ता की ईर्ष्या का पारावार नहीं रहता और वे कह उठत है, कि अब तो (सन्धे वीरा के स्थान पर) खरगोश और लंगूरो की भाँति उखल-भूद में दक्ष पुरुषों क सम्मानित हात का समय आ गया है ।<sup>२</sup>

रासा में लाहाना भाजानुबाहु ता चामुण्डराय आदि के मात्र अमपयुवत वचनों का ही शिकार बनता है, जबकि धार-गुण्डार को उनकी ईर्ष्या के कारण देश निष्कासन का दण्ड सहन करना पडता है । घटनाक्रम क अनुसार सामन्ता क बल-परीक्षणाय महाराज पृथ्वीराज द्वारा आवागत जत-स्तम्भ वेधन का प्रातयोगिता में, धीर-गुण्डीर सकल हाता है, जिससे प्रस त हाँकर महाराज उस जागीर प्रदान करते हैं । चामुण्डराय आदि का इससे बड़े ईर्ष्या हाता है ।<sup>३</sup> तथा जब धीर गुण्डीर शाह गौरी का ब धन अस्त करन को प्रातज्ञा करता है ता उनको ईर्ष्या पराकाष्ठा का पहुँच जाती है और जतराय जालपादवी क पूजनाथक गए धार-गुण्डीर का, शाह गौरी को सूचना देकर कद करा दत है ।<sup>४</sup> अज्ञानों से लौट हुए गुण्डीर को व, महाराज पृथ्वीराज के परोक्ष में बड़ी कट्टु उक्तियाँ कहत और विषमप ताने देत है ।<sup>५</sup> शाह गौरी के आक्रमण के समय उनको यह परधासाप करत दिखाकर कि यह हमारी ही करतूत है, रासोकार ने इस आक्रमण में उन सामन्ता का हाथ प्रदर्शित किया है ।<sup>६</sup> युद्ध में धीर-गुण्डीर शाह को कद करक शाह का कद करता है, जिससे उनकी ईर्ष्या और भी अभिवृद्ध हो जाती

१ 'द आर्मी आफ दि इण्डियन मुगल्स', प० ४५

२ से ६—दे०, 'पू० रा०', का० २७८।१३-१४, वही, २०२७।५६, वही, २०२८।६८, पू० रा०', मा० ४।६०६।६१, वही, २०६४।२२६

है और वे महाराज के यह वान भरकर कि शाह को बंद करके धीर-पुण्डरीर आपकी कानि न करते हुए ऐसी गर्वोक्तियाँ बहता है जस शकट की छाया में चलने वाला श्वान, उसके भार को बहन करन की दर्पोक्ति करे—उस राज्य निष्वासन का दंड दिला देते हैं।<sup>१</sup>

स्वयं चामुण्डराय को भी चण्डुण्डरीर और हाहुल से हम्मीरराज आदि की ईर्ष्या लाह की शृंखलाएँ परो म डालनी पड़ी थी। महाराज पृथ्वीराज के इन साम तो की यह सह्य नहीं था कि चामुण्डराय क राजकुमार रतसी स (ये दोनों मामा भानजे थे) घनिष्ठ मन्त्र ध स्थापित हो। चण्ड पुण्डरीर, इसको कलियुग का प्रताप बहकर निंदा करता है तथा महाराज पृथ्वीराज को इस सम्बन्ध में सचेत करता है।<sup>२</sup> बाद में आवश्यक् परिस्थिति वश चामुण्डराय महाराज के शृंगारहार नामक एक हाथी का वध कर देता है जिसको पञ्जूनराव और हाहुल हम्मीर विप वपन का माध्यम बनाकर दिल्लीश्वर से कहते हैं कि राजनीति में अपराधी को क्षमा करना दोष है, क्योंकि ऐसा उद्द्व व्यक्ति जिसने भ्राज हाथी मारा है कल आपके विरुद्ध शस्त्र उठायागा।<sup>३</sup> परिणाम यह निकलता है कि महाराज चामुण्डराय के परो म बेडी डलवा देत हैं।<sup>४</sup> ये बेडियाँ शाह गोरी स अंतिम युद्ध के समय उतारी जाती हैं।<sup>५</sup> पहले तो चामुण्डराय बेडियाँ उतरवाने को प्रस्तुत ही नहीं होता<sup>६</sup> और कवि चण्ड एक रावल समर विश्रम के द्वारा प्रशसा करने पर जब उन्हें उतरवा भी लेता है, तब भी चामुण्डराय का विषुद्ध हृदय कितनी त मयता से युद्ध कर सका होगा इसकी कल्पना की जा सकती है।

हाहुल हम्मीर जो महाराज पृथ्वीराज से छुट होकर शाह गोरी से मिल गया था शाह की आर से युद्ध करने का कारण यह बताता है कि महाराज पृथ्वीराज के दरबार में उनकी रानी इच्छी की भाई सलत पेंवार की अधिक चलती है।<sup>७</sup>

महाराज पृथ्वीराज के साम तो के इन ईर्ष्याजनित घात प्रतिघातात्मक दावों के अतिरिक्त तात्कालिक नरेश समठित होकर विदेशी शत्रु का सामना करने के स्थान पर, उसे युद्धाथ निमंत्रित करत मिलते है। महाराज भोलाभीम को उनके मंत्री यह परामश देते हैं कि आप महाराज पृथ्वीराज से मिलकर शाह गोरी को पराजित कीजिए,<sup>८</sup> कि तु वे इस प्रस्ताव के सवथा विपरीत शाह गोरी की सहायता से दिल्लीश्वर को परास्त करने के लिए गजनी दूत भेजते हैं।<sup>९</sup> महाराज अनन्तपाल भी दिल्ली राज्य वापस प्राप्त करन के लिए, शाह गोरी की सहायता लेकर महाराज पृथ्वीराज पर आक्रमण करते हैं।<sup>१०</sup> अत म महाराज जयचण्ड का उल्लख करना आवश्यक्, जिनके दरबार में शाह गोरी के भाई की उपस्थिति दिखाई गई है।<sup>११</sup> उनका भाई बालुकाराइ

१ स १२—दे०, प० रा०, मा० २०६२।३६५, वही, २०६२।३६६, वही, १४६५।१२, प० रा०, का० १४६६।२७, वही १४६६।२६, वही २१६५।३७४ वही २१६७।३८३, वही २१२३।६६६, वही ४००।२०, वही, ४६६।११७, प० रा०, मो० २।८२०।४६, 'प० रा०', १६६२।५७५

'पञ्जून चालक' नामक प्रस्ताव म शाह गोरी की ओर से महाराज पृथ्वीराज से युद्ध करते दिनाया गया है ।<sup>१</sup>

हम्मीर रासा और हम्मीर हठ म महाराज हम्मीरदेव से पतक शत्रुता रखन वाले उनके सुरजन या रनमथ नामक थापव मंत्री को महाराज की पराजय का कारण चित्रित किया गया है—जा दिल्ली लौटकर जाते हुए शाह अलाउद्दीन स मिनवर, उन्हें हुग के रहस्यो से अनगन करता है<sup>२</sup> तथा रसद समोप्त हान की मिथ्या सूचना देकर हम्मीरदेवजी को र्गि प के लिए विरग्न करन की चेष्टा करता है ।<sup>३</sup>

कवि भूपण ने स्पष्ट कहा है कि हिन्दुमा के पतन का मूलकारण उनकी पारस्परिक फूट है ।<sup>४</sup> राजविलास म शाह औरगज़ब को भयग्रस्त दिताया गया है कि कहीं सगपन सम्बन्ध को दुष्प्रिगत करते हुए भारवाह के राठौर, उन्चपुर क सीसादिया और बूदी के हाडा सगठित हाकर मुझे अपदस्थ न कर दें— 'किन्तु उन राजवशा म इतनी सुबुद्धि और दूरदशिता कहीं थी, कि सगठित होकर आक्रमण करत ?

बनियर न हिन्दू नरेशो को आपस मे ही लडते रहने को मुगल शासका की राजनीति का प्रमुख शस्त्र बतात हुए कहा है कि वे तदर्थ विविध माध्यम अपनाते हैं और हिन्दू नरेशो क सगठित होने का अत्रपर ही नही आने दत ।<sup>५</sup>

वीरवाय म मुसलमाना के ईरानी और तूरानी वर्गों म वगनस्थ प्रशित किया गया है ।<sup>६</sup> इनम से ईरानियों को महागज सुरजमल हिन्दुमा के सन्ध या पक्षपाती अभिहित करते हैं ।<sup>७</sup> शाह का तूरानी बरगी भी वजीर मनसूर के विरुड यही अभियाग लगाता है कि वह हिन्दुघो का पक्षपाती है ।<sup>८</sup> ईरानी और तूरानियों के पारस्परिक ईर्ष्या के कारण की गई बखशी की शिकायत पर अहमदशाह वजीर मनसूर को दिल्ली राज्य से निकाल देना है ।<sup>९</sup> वजीर मनसूर महाराज सुरजमल से जाकर मिलता है और कहता है कि तूरानियों न मेरी इज्जत लूटकर अपनी टेक रख ली है ।<sup>१०</sup> जिनके प्रतिहार के लिए आप मेरी दिल्ली पर आक्रमण करन म सहायता कीजिय । अनत ईरानी और तूरानियों का पारस्परिक ईर्ष्या द्वेव भयकर युद्धो का कारण बन जाता है, तथा महाराज सुरजमल द्वारा भी दिल्ली की खून लूट-पाट की जाती है ।<sup>११</sup> डा० जदुनाथ सरकार ने अभिमत व्यक्त किया है कि ईरानी और तूरानी अमीरा म परस्पर वगनस्थ तो रहता ही था किन्तु वह पाद्रहवी शताब्दी के यहमनी सुल्तानो तथा अठारहवी शताब्दी म मुगल दरबारा मे बहुत बढ़ गया था जिसके बडे बुरे परिणाम निकले थे ।<sup>१२</sup>

निष्पत नरेशो के अधीनस्थ सामन्त राजा जिन पर राज्य की सुरक्षा का भार

१ से १३—दे०, 'प० रा०', का० ११७५१२, 'ह० रा०', ६४७ वही, ६५० ५१, 'भू० प्र०' स्फु० १६, रा० वि०', ६१५६५८, सु० च०' ६१११६६, वही, ६१११६६, वही, ६१११७, वही, ६१११७, वही, ६११२०, वही ६१२१४ स ६१२१५३, दे०, 'मुक्ल एडमिनिस्ट्रेशन', पृ० १५२

भावत रहता था। पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेष से जड़ीभूत मिलते हैं। उनके चित्तन का दृष्टिकोण राष्ट्रीय का तो कहना ही क्या, राजकीय स्तर का भी न होकर व्यक्तिगत मानापवाद पर केंद्रित था। विविध नरेशों में भी अनेक कारणों से परस्पर मनोमालिन्य रहता था और वे विदेशी शत्रु के आक्रमण के समय, सगठित होकर सामना करने के स्थान पर उसके पक्ष में मिल जाने की भूल करते मिलते हैं। हिन्दुओं की भाँति मुसलमान उमरावों में भी जब ईरानी और तूरानी होने के आधार पर विघटन के बीज, अधिक बढ़ गए तो इतिहास साक्षी है कि मुगल बादशाहों को भी इसका बड़ा अनिष्ट प्रभाव सहन करना पड़ा था।

(क) सेनानायक के चयनाय पान के बीड़े का प्रयोग—किसी काय का 'बीड़ा उठाना'<sup>१</sup> आजकल मुहावरे के रूप में प्रयुक्त होता है जो आलोच्यकाल की एक प्रथा विशेष का स्मारक है। वीरकाव्य में पान के बीड़े सम्बन्धी दो प्रथाओं का चित्रण मिलता है। प्रथम के अनुसार वीरों के मध्य में कलश पर पाँच पानों का बीड़ा रख दिया जाता था और प्रस्तावित काय को करने में स्वयं को समर्थ समझने वाला पुरुष उसे शिरोधार्य करके, उस काय के सम्पादन का भार वहन करने की इच्छा का प्रकटन कर देता था। द्वितीय विधि में पान का बीड़ा सभा के मध्य में रखकर अभिप्रेत व्यक्ति को दे दिया जाता था और उसे वह काय निर्दिष्ट कर दिया जाता था, जिस हेतु उसे वह बीड़ा प्रदान किया गया है।

प्रथम प्रथा का परमाल रासो और आल्हखण्ड में चित्रण मिलता है। परमाल रासो में शाह गुरी के आक्रमण का समाचार सुनकर, उसके विरुद्ध सय सचालन करने वाले वीर के सचयन के लिए, महाराज परमाल अपने वीरों के मध्य पचास पान के बीड़े रखते हैं,<sup>२</sup> जिसे आल्हा स्वीकार करता है।<sup>३</sup> आल्हखण्ड में यह प्रथा कई बार दिखाई गई है। काबुल से अश्व त्रय बरके लाने वाले वीर के चुनाव के लिए महाराज कदेल स्वर्ण कलश पर पाँच पान का बीड़ा रखवा देते हैं।<sup>४</sup> माग की दुर्गमता और लूट पाट के भय से उससे बहुत से योद्धा तो किसी-न किसी बहाने से चले जाते हैं, और अन्ध निगाहें झुका लेते हैं। अतत उसे ऊदल उठाता है।<sup>५</sup> इसी भाँति खेतवा तदी के तट पर होने वाले<sup>६</sup> तथा गाजर में होने वाले युद्धों के सेनापतित्व के लिए पाँच पान के बीड़े रखे जाते हैं, जिन्हें अमश लाखन<sup>७</sup> और ऊदल<sup>८</sup> उठाते चित्रित किए गये हैं।

पथ्वीराज रासो में बालुकाराज का सामना करने के लिए बड़ रूजर, दाहिमा, बालुक्य, और परमार आदि कुलियों का कोई भी वीर बीड़ा उठाने का साहस नहीं करता।<sup>९</sup> अतत महाराज पथ्वीराज पञ्जुराव कछवाहे के पास बीड़ा भेजते हुए

१ से ८—दे०, 'पर० रा०', ८।१८, वही, ८।२०, 'मा०', २३५।१२, १३, वही, २३५।१४-१५, वही २३५।१-२, दे०, 'मा०', ९११।४ वही, ४१०।५ १२, 'प० रा०', मो० ३।७२।५

सदेश कहला भेजते हैं कि वह बालुकाराड को परास्त करने का भार वहन करे ।<sup>१</sup> इसी भाँति शाह गोरी धीर पुण्डीर को कद करके लाने के लिए पान का बीड़ा प्रदान करते हैं ।<sup>२</sup> परमाल रासो म हारेदास को महाराज परमाल द्वारा बीड़ा प्रदान करके, महाराज पृथ्वीराज के सनिको को मार भगाने के लिए भेजा जाता है ।<sup>३</sup> गोरा बादल की बथा म महारानी पद्मावती गोरा और बादल के पास बीड़े लेकर जाती हैं और अपनी रक्षा की याचना करती हैं । गोरा और बादल बीड़े ग्रहण करके उन्हें निश्चित बठने का आश्वासन देते हैं ।<sup>४</sup> जगनामा म श्रीधर ने पराजित ऐजुद्दीन के विषय में यह कहकर कि—“वह भ्राया तो पान का बीड़ा लाकर था, किंतु अपना पानिप भी गँवा बठा,<sup>५</sup> इस प्रथा पर प्रकाश डाला है । राजविलास में युद्धाय भ्राजा माँगने वाले सामन्तो को महाराज राजसिंह, स्व कर से पान के बीड़े प्रदान करके सम्मानित करत हैं ।<sup>६</sup> इसी भाँति छत्र प्रकाश,<sup>७</sup> रासा भगवतसिंह<sup>८</sup> और अलिफर्वा की पडी<sup>९</sup> में भी युद्धाय जाने वाले सेनानायको को पान का बीड़ा प्रदान करने की प्रथा दिखाई गई है, जो पान का बीड़ा उठाने की प्रथा का ही अवशेष प्रतीत हाती है ।”

(ख) धीरों के सम्मान की कुछ विशिष्ट रीतियाँ—वीरो को जागीरें और सिरापान देकर के सम्मानित करके के अतिरिक्त कुछ अन्य विधियाँ भी प्रचलित थीं । इनमें विजेता का शेर द्वारा उसके मार्ग में जाकर स्वागत करना उससे गले मिलाता, उसके माता पिता को धय कहना अपनी तलवार देना अन्य वीरों की अपेक्षा शस्त्र बाँधने की किसी नई रीति की स्वीकृति देना, मुक्ता मालाएँ आदि प्रदान करना तथा नगाडे और ध्वजा के प्रयोग की अनुमति देना, परिगणित किए जा सकते हैं । इन सभी प्रथाओं का पृथ्वीराज रासा में चित्रण हुआ है तथा दो एक रीतियाँ सुजान चरित में दिखाई गई हैं जिससे प्रतीत हाता है कि ये विधियाँ हमारे आलोच्यकाल के पूर्वाध के मुख्यत हिंदू नरेशो द्वारा अपनाई जाती थी ।

महाराज पृथ्वीराज बालुकाराड को पराजित करके आने वाले कूरभराम क स्वागतार्थ दिल्ली से छ कास जाकर उसकी भगवानी करते हैं और उसके स्वस्थ होने पर दान देत हैं ।<sup>१</sup> उनकी शेर से द्वन्द्व युद्ध में शेर को पछाड देने वाले लगरीराय को वे, आधा राज्य, आधा ताम्बूल और सिंहासन के अर्धभाग पर बिठाने का वचन देते प्रदर्शित किए गए हैं ।<sup>२</sup> यही सम्मान वे सजयराय के पुत्र को (जो कदाचित लगरीराय ही था) उसके द्वारा उनकी मूर्च्छाग्रस्त दशा में, एक आँखें निकालने के लिए आतुर गिद्ध से रक्षा करने की कृतज्ञता स्वरूप देते हैं । चामुण्डराय की बेडियाँ उतारने

१ से ११—दे०, 'प० रा०', मो० ३७२।४, 'पू० रा०', का० २०३०।७६, 'पर० रा०', ३।४०, 'गो० क०', छ० ६२ ६३, 'जग०', प० ६३७ ३८, 'रा० वि०', १८।२६ २७, छ० प्र०, १८।६, 'रा० भग०', छ० २२, 'अलिफर्वा की प०', ६, 'पू० रा०', मो० ३।७६।७४, वही, १।२००।१८



समय वे उसे तुष्ट करने के लिए अपना सडग प्रदान करते हैं।<sup>1</sup> राजमाताओं द्वारा आन्ती उतारने का सम्मान गोरा बादल<sup>2</sup> की कथा तथा आल्हाखण्ड में आल्हा उदल<sup>3</sup> को मिलते प्रदर्शित किया गया है। हम्भीर रासो में शाह अलाउद्दीन तो अपने सैनिकों को युद्ध से पलायन करने वालों का वध करा दिए जाने की धमकी देते हैं।<sup>4</sup> जबकि आल्हाखण्ड में उसके विपरीत सैनिकों को नौकर के स्थान पर भाई कहकर उत्तेजित करने की विधा का उपयोग किया गया है।<sup>5</sup> पथ्वीराज रासो में चामुण्डराय की माता की तथा परमाल रासो में मलिवान के माता पिता को घाय्य कहा गया है, जि होने ऐसे पराक्रमी पुत्र रत्नों को ज म दिया था।<sup>6</sup> सुजान चरित में महाराज मूरजमत को अपने विजयी सैनिकों से गले भेंट कर उनके श्रम को हरते दिखाया गया<sup>7</sup> है। पितर पर शोधन के निमित्त भोनाभीम से हाने वाले युद्ध में महाराज पथ्वीराज निन्ददुर राय को एक लाख के मूल्य वाली माला<sup>8</sup> तथा कन्हू को पवग (पर में पहनने का कडा जो कदाचित् स्वर्ण का रहा होगा) पहनाते<sup>9</sup> है। जगनामा में सैनिकों को दो माह का पेशगी वेतन देकर युद्धाय प्रोत्साहित करते दिखाया गया है।<sup>10</sup> युद्ध की लूट सामग्री तथा कदिया से मिले दण्ड को भी वीरों में वितरित कर देना इसी श्रेणी में रसा जा सकता है।<sup>11</sup>

नगाड और निशान के प्रयोग का भी विशेष वीर और सामंतों को ही अधिकार दिया जाता था। पथ्वीराज रासो में महाराज पथ्वीराज चन्दपुण्डरी के नाम जागीर का पट्टा लिखने के साथ साथ उस निशान और ध्वजा के भी प्रयोग की स्वीकृति देते हैं।<sup>12</sup> निशान और ध्वजा के प्रयोग का अधिकार बादशाहों द्वारा विशेष उमरावों को ही प्रदान किए जाने की रीति थी।<sup>13</sup> कदाचित् यही प्रथा हिंदू नरेशों में भी प्रचलित रही होगी।

### सिरोपाव प्रदान करना

सिरोपाव का प्रदान करना भी एक प्रकार का राजकीय पुरस्कार ही था। यद्यपि यह जागीरें प्रदाय करने के समय भी दिया जाता था, तथापि विशेष शौर्यपूर्ण कृत्य करने वाले पुरुषों का मात्र सिरोपाव देकर ही सम्मानित करने की भी प्रथा थी। मिरापाव का विषय में यह तथ्य उल्लेख्य है कि उस पथ्वीराज रासो और परमाल रामा आदि ग्रंथों में जिस प्रकार विशिष्ट व्यक्तियों का ही प्रदान करने की प्रथा दिखाई गई है, वह विशिष्टता मुगल शासकों से सम्बंधित प्रसंगों में नहीं मिलती। त्रिनिवम इरविन ने उल्लेख किया है कि मुगल शासक पिलमत के रूप में

१ म १३—दे० पू० रा०' का० २६१५।२८, वही, २१७०।४०१, 'गो० क०', १३८ मा०, १०६।१६१८, 'ह० रा०', ४५८, 'आ०', ७७।१८, 'पर० रा० ५।१०६ 'मु० च० १।४।११, प० रा०', का० १२१६।११७, वही, १२६।११६, 'जग०' प० ७३४ ३५, हि० व० वि', १८ 'प० रा०', का० २०२४।४- 'द घामों माफ दि इन्जियन मुगलत', पृ० ३०

वर्ष में दो बार तो समस्त यशसवदारो को सिरोपाव प्रदान करते थे तथा अपने जन्म के अवसर पर विशिष्ट मनसबदारो को पुन खिलघत प्रदान करते थे—उनका जन्म भी वष की सुय और चाँद के अनुसार गणना करने के कारण वष में दो बार मनाया जाता था।<sup>१</sup> तात्पर्य यह कि मुगलकाल में मनसबदारो को सिरोपाव मिलना एक रुढ़ परिपाटी बन गई थी और उनमें से सम्मान का वह भाव तिरोहिन हो चुका था, जो व्यक्ति विशेष को अवसर विशेष पर सिरोपाव मिलने से अनुभव होना होगा। यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि सिरोपाव में उसके शब्दगत अर्थ के अनुसार परा के लिए कुछ जून प्रादि नहीं प्रदान किए जाते थे, अपितु वस्त्र ही दिए जाते थे और तीन वस्त्र, पाँच वस्त्र, छ वस्त्र, सात वस्त्र तथा शासक के निजी वस्त्रों के दिए जाने के आधार पर उसके पाँच विभेद होते थे।<sup>२</sup> विनय शीघ्र दिखाने वाला को हमारे आलोच्यकाल से पूर्व भी राजपट्ट या श्रीपट्ट के रूप में राजकीय पुरस्कार प्रदान करने की प्रथा व्याप्त थी।<sup>३</sup>

पृथ्वीराज रागो में महाराज पृथ्वीराज महाराज भालाभीम के भाइयो को जागीर के साथ साथ सिरोपाव प्रदान करने सम्मानित करते हैं।<sup>४</sup> उनका आदेश

१ दे०, 'द आर्मी ऑफ दि इण्डियन मुगल्स', प० २६

२ रिजिस्टरम इरविन न पाँचा प्रकार के सिरोपावों में अघोशितित वस्त्रों का उल्लेख किया है—

(क) तीन वस्त्रों का—पगड़ी, जामा (उम्बा काट) तथा कटि में बाँधने का दुपट्टा।

(ख) पाँच वस्त्रों का— इसमें पूर्वोक्त वस्त्रों के अतिरिक्त सिरपेच (कलगी) और तुरा भी दिए जाते थे।

(ग) छ वस्त्रों का—पाँच वस्त्रों वाले सिरोपाव के अतिरिक्त छोटी बाहो वाली जाकिट प्रदान की जाती थी।

(घ) सात वस्त्रों का—एक टोपी, एक लम्बा चागा, सुस्त कोट, दो पाजामे, दो रमीजें, दो कमर में बाँधने के दुपट्टे तथा एक सिर या गले में बाँधने का दुपट्टा दिया जाता था।

(ङ) शाह के निजी वस्त्रों का—यह सर्वाधिक सम्मानप्रद सिरोपाव था तथा अत्यधिक कृपापात्रों को ही इसे प्राप्त करने का मौभाग्य मिल पाता था। —वही, प० २६

३ 'Sometimes Kshatryas got royal tiara or medals (Rajpatta or Sripatta) instead of land grants for some heroic actions as we have Mahabir Chakra etc in Military deptt of Govt of India'

— The socio religious condition of North India', P 67

४ 'प० रा०', का० २८५३१

मातृपर भागों पर पट्टी बंधवा सन बाल बह चोहान को भी<sup>१</sup>। बत्तीस हाथ ऊंचे गयाध से बूढ़ने वाले सोहाना भाजापुवाहु<sup>२</sup> का भी व गिरोपाव प्रदान करत चित्रित किए गए हैं।

परमाल रासो में आल्हा उसस पराजित हा जान बाल मनजूमनि की बदाचित्त योरसा पर मुग्ध होकर, सिरोपाव देता है।<sup>३</sup> काजीर स महोया माने के लिए प्रस्तुत ऊल को महाराज जयराज<sup>४</sup> तथा महाराज परमाल उनकी सहायताय भाए हुए नरना गो<sup>५</sup> सिरोपाव प्रदान करत चित्रित किए गए हैं।

वधामर्या रासो में शाह जलालुद्दीन, अलिफ्मा चोहान का मनसब प्रदान करते हुए अशर और सिरोपाव दत्त हैं।<sup>६</sup> बाद में मवात के उपद्रवियों के दमनाथ विदा करते भी उसे गिरोपाव मिलता है।<sup>७</sup> माटेराव द्वारा अगन पुत्र को मुसलमान बना लिए जाने की स्वीकृति देने पर, शाह फीरोजशाह की भार से सिरोपाव दिया जाता है।<sup>८</sup>

जगनामा में शाह मौजुद्दीन अपने उमरावों को<sup>९</sup> तथा वीरचरित्र में शाह अकबर, महाराज रामशाह को युद्ध में जाने से पूव घोड़<sup>१०</sup> और सिरोपाव प्रदान करके युद्धाय उत्साहित करते हैं।

सुजान चरित में अहमदशाह वजीर मनसूर को सिरोपाव देकर उपद्रवियों के दमनाथ भेजते हैं।<sup>११</sup> वजीर मनसूर महाराज सूरजमल को हाथी, घोड़ा शमशेर और सिरोपाव प्रदान करता हुआ शाह की इच्छापूर्ति के लिए घासहरे पर आक्रमण का सदेश देता है।<sup>१२</sup> अ यत्र भी अपनी सहायता के लिए माने वाले महाराज सूरजमल को उसके द्वारा यही वस्तुएँ देते दिखाई गई हैं।<sup>१३</sup> हम्मीर हठ में महाराज हम्मीरदेव के दुग का रहस्य बताने वाले रत्नमल को शाह अलाउद्दीन, सिरोपाव देकर सम्मानित करता है।<sup>१४</sup> हम्मीर रासो में महाराज हम्मीरदेव अपनी शरण में भाए हुए भीर महिमा को पाँच लाख की जागीर और सिरोपाव प्रदान करते हैं।<sup>१५</sup>

राजविलास में महाराज जसवंतसिंह से प्रत्यक्षत विरोध का साहस न कर पाने वाले शाह औरगजेव उनस छुटकारा पाने के लिए विषयुक्त सिरोपाव भेजते हैं।<sup>१६</sup> कूटनीतिज्ञ महाराज जसवंतसिंह को शाह के इस पडयत्र का आभास हो जाता है, अत वे उम सिरोपाव को किसी अत्र्य व्यक्ति को पहनाकर उसकी परीक्षा करते हैं जिसकी मृत्यु हो जाती है।<sup>१७</sup> उसमें अत्र्य महाराज राजसिंह द्वारा युद्ध में जीत

१ स १७—२०, 'प० रा०' का० २६६।१००, वही, २७८।१२, 'पर० रा०', १०।२७५, वही १०।४२८ वही २१।५५, क्या० रा०', ६७३, वही ७२५, ८३८ वही छ० १४२, जग०', प० १२५ २६, ६५८ ५६, 'वी० च०', ४।२६ सु० च०', ४।१।६७ वही, ४।२।१०, ह० ह०', च०, छ० २२५, 'ह० रा०' छ० ३०४ ग० वि०', ६।४७, वही, ६।५०, वही, १२।२३, १४।४१ और १८।१००

पाकर लौटने वाले कुंवर उदयभान कुंवर शन्तावत तथा अग्र्य सामंत तिरोपाव देकर सम्मानित किए जाते हैं ।

### सैनिक-पडावों पर हरम का ले जाना

पथ्वीराज रामो म शाह शोरी तो अपनी बगमों के साथ आक्रमणाय आते नहीं मिलते, किंतु राजविलास सुजानचरित और जगनामा म शाहजादे और उमराव युद्धाभियानों के समय प्रेषयार्थ ही नहीं अपितु अपनी बगम भी साथ ले जाते चित्रित किए गए हैं । युद्ध क्षेत्र के समीप हरम की उपस्थिति वस्तुतः चित्रित प्रतीत होती है और पराजय के समय उसको साथ लेकर पलायन करने में बड़ी अव्यवस्था फलती होगी । इस प्रथा को मात्र इस दृष्टि से क्षम्य कहा जा सकता है कि अधिकांश युद्ध-अभियान दीर्घकाल तक चला करते थे तथा वे भी अत्यंत दूरवर्ती स्थानों पर—अतः ऐसी दशा में अपने हरम को साथ ले जाना ही अधिक उपयुक्त समझा जाता होगा ।

राजविलास में शाहजादा अकबर चित्तौड़ के पडाव स्थल पर अपने साथ, वेश्यायें और हरम को ले जाता है और नित्यप्रति वेश्या-नृत्य प्रेक्षण और भोग विलास में मग्न रहता है ।<sup>१</sup> अतः कुंवर जयसिंह उस पर रात्रि में आक्रमण करते हैं, जिससे उनकी बगमा की बड़ी दुःशा होती है ।<sup>२</sup> सुजानचरित में अहमदखां पठान और उसके साथी अपनी पत्नियाँ और सतत के साथ युद्धाय बूच करते प्रदर्शित किए गए हैं ।<sup>३</sup> जगनामा म कहा गया है कि कुछ सैनिक बड़ा गुमान करते हुए अपनी बगमा को साथ लाए थे, किंतु युद्ध की मार से नस्त होकर उन्हें छोड़कर पलायन कर गए हैं<sup>४</sup> और वे बचारी हाय हाय मचाती हुई खुदा को याद करती हुई अश्रुपात कर रही हैं । परमाल रामो म धनपाल नामक नरेश को आक्रमण के समय अपना रनिवास लाते दिवाया है जा उसकी पराजय होने पर लौट जाता है ।<sup>५</sup> विजयी पक्ष द्वारा शत्रु-पत्नियों की लूट पाट करना एक साधारण घटना भी थी । राजविलास में कवि मान ने दयालदास द्वारा मालपुरे के शाही घाने की लूट का वर्णन करते हुए कहा है कि जय लूट-सामग्री का वितरण किया गया तो बहुत से लोगों को दो दो स्त्रियाँ भी प्राप्त हुई ।<sup>६</sup> विद्यापति ने तुलसीदास की प्रवृत्ति पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि वे त्रिसन्धिशा में निकल पड़ते थे, उस दिशा के राजाओं के रनिवास की स्त्रियाँ बाजारा में बिकने लगती थीं ।<sup>७</sup> इस प्रसंग में यह तथ्य उल्लेख्य है कि महाराज शिवाजी ने अपने सैनिकों को इस प्रवृत्ति से बचाने के लिए यह नियम बना दिया था कि जा भी सैनिक दासी, वेश्या या औरत युद्ध में साथ ले जायगा, उसका शिरच्छेद कर दिया जायगा ।<sup>८</sup>

१ से ८—दे०, रा० वि०, १८१८, वही, १८१४, 'सु० च०', ४।३।१६, 'जग० प० ६०२ ६०४, पर० रा०', ६।१२३, 'रा० वि०', १०।३७, 'कीर्ति०', पृ० ६०, 'एन एडवाल्ड हिस्ट्री आफ इण्डिया, भा० २, पृ० ५२१

## शत्रु-देश मे सन्यासी-वेशी गुप्तचर भेजना

पृथ्वीराज रासो और परमाल रासो मे सन्यासी और सूफियो का वेश धारण किए हुए गुप्तचर शत्रु देश के रहस्यो को ज्ञात करते चित्रित किए गए हैं। महाराज पृथ्वीराज को शाह गोरी के आक्रमण की पूर्व सूचना<sup>१</sup> चार ऐसे गुप्तचर देते हैं, जिनके शरीर भस्म मद्धित थे, सिरों पर जटा जूट बंधे हुए थे तथा जिन्होंने मग चम के लंगोट कस रखे थे।<sup>२</sup> महाराज पृथ्वीराज की राज्य दशा की सूचना लेने आने वाले शाह गोरी के गुप्तचरो का भी प्रहरीवेश दिखाया गया है।<sup>३</sup> अथवा शाह गोरी के गुप्तचरो को सूफी फकीरो के वेश मे भारत आते प्रदर्शित किया गया है।<sup>४</sup> अनेक दरबारो म परिभ्रमण करने वाल भाटो को भी पृथ्वीराज रासो मे शत्रु रहस्यो के अनावरण के हेतु प्रयुक्त करने की प्रथा दिखाई गई है, माघो भाट इसी उद्देश्य से दिल्ली आता है और अपने पट भाया नान और बाक चातुरी से महाराज पृथ्वीराज सहित उनके दरबारियो पर मोहिनी सी डाल देता है।<sup>५</sup> दिल्ली-दरवार के प्रत्येक वक्तांत से अवगत होकर वह उहे शाह गोरी को जा कहता है और आक्रमण का उपयुक्त अवसर बताता है। परमाल रासो मे सन्यासी वेशी गुप्तचरो का महाराज पृथ्वीराज द्वारा मलिकान की सन्य सज्जादि की जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रयोग किया जाता है।<sup>६</sup> क्यामखौ रासो म शाह बाबर को भारत पर आक्रमण करने से पूर्व एक कल-दर के वेश मे यहाँ की राजनीतिक दशा का ज्ञान प्राप्त करने आते दिखाया गया है,<sup>७</sup> जिसे डॉ० दशरथ शर्मा ने काल्पनिक माना है।<sup>८</sup>

उपयुक्त विवरण के विषय म यह निवेदन अप्रासंगिक न होगा कि आचार्य कौटिल्य ने साधु सन्यासी वेशी गुप्तचरो के प्रयोग पर बडा बल दिया है।<sup>९</sup> इस वेश म आने वाले गुप्तचरो को अभीष्ट सिद्धि मे सफलता की महती सम्भावनाएँ रहती होंगी, क्योंकि साधु-सन्यासी और फकीरो की साधारणतया सबत्र पहुँच रहती है। पृथ्वीराज रासो से यह तथ्य भी प्रकाश मे आता है कि इन डोंगो साधुओ के गुप्तचर होने का पता मात्र बादशाह या नरेशो को ही होता था और उनके दरबारी भी वस्तुस्थिति से अनभिन्न रहते थे। इसका प्रमाण यह है कि ये साधुवेशी गुप्तचर आरम्भ मे नरेशो को वास्तविक सन्यासियो की तरह आशीर्वाद देते तथा धार्मिक तत्त्वो का विवेचन करते प्रदर्शित किए गए हैं।<sup>१०</sup>

### धर्म-द्वार से निष्क्रमण

धर्म-द्वार प्रदान करना आलोच्यकाल की उस प्रथा का परिचायक है जिसमे

१ से १०— दे० 'एन एडवांस्ड हिस्ट्री आफ इण्डिया', भाग २, प० ५२०।१२ १३, वही ५२०।१८, प० १०', मो० ३।५२७।६६ ७०, 'प० १०', का० ६१२।६२, वही, ६०४।१२, पर० १०' ५।४५ 'क्या० १० छ० ५१७, 'क्यामखौ रासो' के टिप्पण—पृ० ११६, 'कौट० अथ०', पृ० २६, 'पृ० १०', का० ५२०।६-१०

दुर्ग में घिरे शत्रुओं द्वारा घम की शपथ लेकर यह विश्वास स्थान पर कि वे जाते हुए कोई उपद्रव न करेंगे अभय प्रदान करके दुर्ग से निकल जाने दिया जाता था। कविराज मोहनसिंह ने इन आत्ममपण करने वाले पुरुषों के निष्क्रमण हेतु दुर्ग में एक छोटा सा दरवाजा रखने की परिपाटी प्रदर्शित की है।<sup>१</sup> जीवन मरण की परिस्थिति समुपस्थित होने पर घम-द्वार की याचना तो की जाती थी किन्तु उससे निष्क्रमण करने वाले बड़ी ही दृष्टि से देखे जाते थे।

पृथ्वीराज रासा में शाह गौरी की विशाल वाहिनी हांसी दुर्ग को घेर लेती है। शाह गौरी दुर्ग में घिरे सामंतों के पाम सदेश भेजत हैं कि वे युद्ध में जूझने अथवा घम-द्वार से निष्क्रमण में से कोई सा भी एक माग अपना सकते हैं।<sup>२</sup> सामन्ता में घम-द्वार से निष्क्रमण के सम्बन्ध में मन्त्रणा होती है जिसका कुछ सामन्त यह कहकर विरोध करते हैं कि यह कृत्य क्षत्रिय मर्यादा के प्रतिकूल है।<sup>३</sup> वे यह तक भी देते हैं कि घम द्वार से वे ही पुरुष निकलते हैं जो जारज सन्तान हुआ करते हैं।<sup>४</sup> घम द्वार से निष्क्रमण को अघम मानने की धारणा आगे चलकर भी अभिव्यक्त होती है जब चामुण्डराय जतसिंह और बहू चौहान आदि सामन्त, जिन्होंने इस माग का अनुसरण किया था, बड़ी लज्जा और आत्मश्लाघा का अनुभव करते हैं।<sup>५</sup> महाराज पृथ्वीराज उनके इस कृत्य को देवगति की प्रबलता के कारण हुआ बताकर उन्हें जसे-तसे प्रबोधित कर पाते हैं।<sup>६</sup>

घम-द्वार से निष्क्रमण की प्रथा का वीरचरित्र, शिवा दावनी और छत्रप्रकाश में भी उल्लेख किया गया है। महाराज वीरसिंह देव, राजसिंहजी को भोदछे के दुर्ग में घेर लेते हैं।<sup>७</sup> कवि केशव ने राजसिंहजी अधुपूरित मन्त्रों से, महाराज वीरसिंह देव से घम-द्वार की याचना करते प्रदर्शित किये हैं।<sup>८</sup> महाराज वीरसिंह देव उनकी इस प्राथना को स्वीकार करके उन्हें अभय प्रदान कर दत्त हैं तथा दुर्ग से सुरक्षित निकल जाने देते हैं।<sup>९</sup> वीरचरित्र में कुमार भारथसाहि को भी अपने साथी कृष्णराय को सौंप देने की शत पर कृपाराम द्वारा घम द्वार से निष्क्रमण की सुविधा प्रदान की जाती है, जबकि उनके साथी कृष्णराय का शिरच्छेद कर दिया जाता है।<sup>१०</sup>

भूषण ने महाराज शिवाजी का अनेक गढ़ पतियों को भिक्षुकों की भाँति घम द्वार से निष्क्रमण की याचना करने पर, अनाहत छोड़ना प्रदर्शित किया है।<sup>११</sup>

छत्रप्रकाश में महाराज छत्रसाल अपने पिता के विरोधी घेंघेलों की गद्दी को घेरकर भारकाट आरम्भ कर देते हैं। अन्त में घेंघेले घम द्वार से निष्क्रमण की याचना करके पलायन कर जाते हैं।<sup>१२</sup> गोरेलाल ने युद्ध में अनाहत शत्रु का जीवन-दान प्रदान

१ से १२—६०, 'पृ० रा०', मो० भा० ३, पृ० ३२४, वही, ३३२४३, वही, ३३२८१०, वही, ३३३०१३, वही, ३३४२३७, वही, ३३४३३८, 'श्री० च०', ८५५, वही, ८५६५८, वही, ८५६, वही, १४५८-६०, 'शि० बा०', छ० ३५, 'छ० प्र०', १३४

करने की भी धम द्वा़र देना कहा है। साहकुली की ओर से युद्ध करने वाले नद महाराज के घायल हाकर गिरने पर, तुव सना उह युद्धभूमि में ही पडा छोडकर पलायन कर जाती है। महाराज छत्रसाल का उन पर दया आ जाती है और वे उहें धम द्वा़र देते हुए उनके प्राण बचा लेते हैं।<sup>१</sup>

उपसुक्त उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि 'धम द्वा़र' आलोच्यकालीन युद्धों के उज्वल पक्ष का प्रतीक है, जिसमें क्षीण बल शत्रुओं की व्यथ ही नशस हत्या न करके उहे जीवन दान प्रदान कर दिया जाता था। पथ्वीराज रासो के असिधर्मा धर्मियों का धम द्वा़र से निष्क्रमण में अपमान अनुभव करना, उनके चरित्रोदात्त का प्रतीक है।

### वीरो का जीहर करना

सामान्यतया शत्रु चुगुल से बचने के लिए वीरगणों द्वारा किए जाने वाले आत्मदाह को जीहर की सजा प्रदान की जाती है किंतु पथ्वीराज रासो में मरणांतक युद्ध करने के आकांक्षी वीरो के विशेष प्रकार की सजा सज्जा में युद्धाथ निष्क्रमण को भी जीहर कहा गया है। रासो में महाराज पथ्वीराज के पुत्र 'रेनसी' के दिल्ली-दुग को मुस्लिम आक्राता घेरकर उसे तोडने में समर्थ हो जाते हैं।<sup>२</sup> चित्रित कुमार रेनसी अपने कुलपुरोहित से मंत्रणा करते हैं जो उहे युद्ध करते हुए मुक्ति लाभ करने का परामश दते हैं।<sup>३</sup> कुलगुरु के परामश के अनुसार कुमार अपने साथी राजपूतों के साथ जीहर करने का निश्चय करते हैं<sup>४</sup> और कुसुम्भी रण के वस्त्र पहन कर शत्रुओं पर टूट पडते हैं।<sup>५</sup> उनकी सेना अल्प थी अतः अत्यंत पराक्रम प्रदर्शित करते हुए भी उनकी विजय नहीं हो पाती और सभी राजपूत सैनिक रण समाधि ल लेते हैं।

परमाल रासो में राजकुमार ब्रह्मा द्वारा मरणांतक युद्ध करने के निश्चय को जीहर के स्थान पर 'आवध' युद्ध करने का निश्चय<sup>६</sup> कहा गया है। राजकुमार ब्रह्मा और उसके साथी, अपनी ग्रीवा और भुजाओं में रूद्राक्ष की मालाएँ धारण करते हैं, तथा शरीरागो में केसर मलकर, युद्धाथ प्रयास करते हैं।<sup>७</sup> इसी भाँति आल्हा और उसका दल बाजुओं में रूद्राक्ष की माला तथा ग्रीवा में शालिग्राम पहन कर मरण का खेल खेलने जाते प्रदर्शित किए हैं।<sup>८</sup>

मरण का अंत लेकर युद्धाथ टूट पडने वाले वीरो की त्रिचित्र वेश भूषा का विदेशी यात्रियों ने भी उल्लेख किया है। बनिपर न राजा रामसिंह और उनके सैनिकों को पीले वस्त्र पहन कर जूझने चित्रित किया है। इस तथ्य का और स्पष्ट करते हुए कास्तेबल ने पाद टिप्पणी में कहा है कि राजपूत योद्धाओं में यह प्रथा थी कि वे अपने मरण के निश्चय का अभिव्यक्त करने के लिए अपने हाथ और मुँहों पर हल्दी का लेप चढाकर आते थे। यथा-वदा वे पीले वस्त्रों में भी युद्धाथ आते थे, जो उनके महादेव के अनुयायी होकर आते थे।<sup>९</sup>

१ स ६—१०, छ० प्र० २३१८, 'प० रा०' का० २४६२।१४४, वही, २४६२।१४६, वही, २४६३।१४७ वही, २४६७।१८०, पर० रा०' २६।२४, 'पर० रा०', २६।२६, वही, २७।४०, ४५, 'द्वल्लस इन दि मुगल एम्पायर', बनिपर, पृ० ५२

## निष्कर्ष

शासक और शासित का अन्वय के प्रति दृष्टिकोण सदभाव पर आधारित था। नरेश अपनी प्रजा की पीड़ा को दूर करने के लिए तत्पर रहते थे। प्रजा नरेशों में ईश्वर का अंश विद्यमान समझती थी तथा उनके मुख दर्शन और नाम के जाप को पुण्यकर समझती थी। नरेशों में देवअंश मानते हुए भी दुराचारी शासकों के स्वेच्छाचार को निर्विरोध सहन करने के स्थान पर, प्रजाजन सामूहिक रूप से राजत्याग की घमकी आदिक माध्यम अपनाते थे। प्रजा की आहों में अत्याचारी नरेशों का बर्णन-मूलन कर देने की शक्ति समझने की धारणा के कारण नरेशों को स्वतः ही समाग की ओर उन्मुख होना पड़ता था। विभिन्न प्रकार के राजकीय निष्पत्तियों और उदय-पुष्पन के समय भी नागरिक अपना हृदय अथवा राय व्यक्त करके अपनी राजनीतिक चेतना का प्रकटन करते थे।

बहुत सी रानियाँ राज्य काय में रानिय योग ही नहीं देती थी, अपितु शासन सचालिका तक बन जाती थी। रानियों की तरह राज-पुरोहित की भी यद्यपि मंत्रियाँ म गणना करने की परम्परा तो समाप्त हो चुकी थी, तथापि राज-मन्त्रणाओं में उसके परामर्श का महत्त्व होता था। प्रजा राज-पुरोहित का अपने यजमानानरेश पर सर्वाधिक नतिक प्रभाव ममझती थी और उससे आशा करती थी कि वह जनता के दुःख-दुःख नरेश का बताने हुए उन्हें दूर कराने की चेष्टा करेगा। तत्र मन्त्र का ज्ञान होने की दृष्टि से भी राज-पुरोहित की नरेशों की दृष्टि में अतीव महत्ता होती थी। वह अपने यजमान नरेश की काया को मन्त्र-क्वचा के द्वारा शस्त्राघात से सुरक्षित बनाने तथा युद्धस्थल में मन्त्र का प्रयोग करके विपक्षी दल को हतोत्साहित करने की चेष्टा करता था। हा, पुरोहित का तत्र मन्त्रविद् हाना परवर्तीकाल में नहीं दृष्टिगत होता जबकि राजकीय मन्त्रणाओं में उससे परामर्श लेने की परम्परा ज्यों-की-त्यों विद्यमान थी।

प्रधान या प्रधानमंत्री के अधिकार क्षेत्र में अनेक प्रकार के काय रहते थे। नरेशों की अनुपस्थिति में वह राज्य काय की देखभाल करता था, संधि और विग्रह से सम्बद्ध वार्ताओं के नियमन में उसका प्रमुख हाथ रहता था तथा महत्त्वपूर्ण दायित्वों के लिए भी प्रायः प्रधान ही भेजा जाता था। इसके अतिरिक्त राज्य काय की मध्यस्थता, गुप्तचर विभाग का नियमन तथा शस्त्राम्त्रों की व्यवस्था भी उसके



अधीन होती थी। राजकीय मंत्रणाग्रा में प्रधान से अवश्य परामर्श लिया जाता था। हाँ, यह तथ्य ध्यातव्य है कि प्रधानमंत्री एक प्रकार से समस्त राज्य-कार्यों पर आँख रखता था और ऐसा कोई निश्चित नियम न था कि सभी प्रधानों के अधीन पूर्वोक्त विभाग अवश्य ही रहते हों। उनमें परामर्शों का स्वीकृत अथवा अस्वीकृत करना भी नरेशों की स्वेच्छा पर निर्भर रहता था। क्यामलों रासा आदि ग्रंथों में 'प्रधान' शब्द का बहुवचन में प्रयोग किया गया है, जिससे पता होता है कि उससे प्रधानमंत्री के स्थान पर मंत्रीमात्र का बोध होने लगा था।

हिंदू दरबारा का प्रधान ही मुगल दरबार में वजीर कहा जाता था। वह भी 'प्रधान' की तरह बादशाहों का प्रमुख परामर्शदाता होता था। प्रधान की तरह शन-शन वजीर भी प्रधानमंत्री का आभिवृत्त न रहकर मंत्रीमात्र का शोचन करता था। कदाचित् वजीर के मंत्री अथवा प्रयाग के कारण ही शाह भक्तार, जहाँगीर और शाहजहाँ के काल में उस वकील कहने का प्रचलन था। भंडारी या दीवान कोषाध्यक्ष होता था। मीरबख्शी का काम मनसबदारों को वेतन प्रदान करने और उसका लेखा जोखा रखना था। प्रमुख सेनापति स्वयं नरेश या बादशाह ही होते थे।

मालोच्यकालीन सेनाओं के मुख्य अंग चार ही थे, किन्तु परम्परागत रथ सेना का स्थान, उन रथ या यानों में ल जाई जाने वाली तोपों में ल लिया था। रथों को युद्ध-सामग्री के वहन तथा संचार-व्यवस्था के लिए प्रयुक्त किया जाता था, उनमें बैठकर युद्ध करने का प्रचलन नहीं था।

युद्धस्थल में सेना की स्थिति की दृष्टि से उसके तीन भाग होते थे। अग्रिम दल को हुरावल, मध्यभाग का गान तथा पुष्ठभाग को पुठावरि या चदोल कहा जाता था। हाथियों का दल की अग्रिम पंक्ति में रखकर रक्षा-पंक्ति का निर्माण करने का प्रचलन था। उनकी सूझ में वजहों भी दे दी जाती थी, जिन्हें घुमाकर वह शत्रु-सेना में खलबली मचा देते थे। नरेशों का सवारी में हाथी की द्विविध उपयोगिता रहती थी। उस पर से वह अपनी समस्त सेना पर दृष्टिपात कर सकता था, जबकि ऊँचे हाथी पर सवार नरेश उनके सैनिकों का भी दृष्टिगत होते रहते थे। वीरकाव्य में नरेशों के दिखाई न देने पर उनके सैनिक हतोत्साहित होकर पलायन करते चित्रित किए गये हैं, अतः सेना को दिखाई देने की दृष्टि से अश्वारोहण की अपेक्षा, नरेशों का गजारोहण निश्चय ही उपयोगी रहता था। अश्वारोही सैनिकों की सख्या अथवा प्रकार के सैनिकों की अपेक्षा अधिक होती थी। तदर्थ देश-विदेश से अनेक प्रकार के अश्व अथवा घोड़े लाए जाते थे।

गुदारम्भ से पूर्व घोड़ा अनेक प्रकार के कवचा का प्रयोग करता था, जिनके निर्माण में इस्पात की चट्टान और लौह कड़ियाँ तथा रेशमी वस्त्रों का प्रयोग होता था। पागों पर डाली जाने वाली लौह-कड़ियों से निर्मित जाली भिल्लम कहलाती थी। इनके ऊपर बूड़ों या टाप पहने जाते थे। जब मुख और ग्रीवा की रक्षा के लिए भिल्लम टाप में ही सलमन कर दी जाती थी तो यह शिरस्त्राण भिल्लम टाप कहलाता था। इन

टोपा में भी नाक की रक्षा के लिए एक लौह पत्ती जुड़ी रहती थी किंतु 'घूघ' नामक एक अग्र्य मस्तक त्राण का भी प्रयोग किया जाता था। पदमाकर ने इसी अग्र्य में 'डिमाक-नाक चून' तथा नाक चून का प्रयोग दिखाया है। ग्रीवा की रक्षा के लिए 'कठ-शोभा' नामक ग्रीवा त्राण बांधा जाता था। ग्रीवा से नीचे, टखनों तक के शरीरांगों को शस्त्राघातों से सुरक्षित रखने के लिए लौह कडियों से निर्मित 'जिरह' नामक कुर्त्ता जसा कवच पहना जाता था। यह जिरह ही हिन्दी में भिलम कही जाती थी। इस जिरह या भिलम में जब वक्ष स्थल और पीठ की रक्षा के लिए चार ऐसे लौह-तवे भी लगा दिये जाते थे, जिनके नीचे आड़ी सलाखें लगी रहती थीं, तो यह कवच बख्तर कहलाता था। अधिक सुरक्षा की दृष्टि से सम्पन्न योद्धा जिरहों के ऊपर बख्तर पहना करते थे तथा अग्र्य अपनी स्थिति के अनुसार मात्र जिरह या बख्तर का भी प्रयोग करते थे। बख्तर का छोटा रूप कोठा कहलाता था, जो चद्दर का बना होता था और वक्ष तथा उदर की रक्षा करता था। जोशन कदाचित् कोठे का ही उद् रूपान्तर था। दगल्ला और चिलता नामक कवचों के निर्माण में कच्ची रेशम, रूई और मगर की पसलियाँ आदि का प्राधान्य रहता, जिनके द्वारा ऐसे कवच बनाए जाते थे, जिन पर शस्त्राघात का बहुत कम प्रभाव पड़ता था। कुहनी से उँगलियों तक के बाहु भाग की रक्षा के लिए सहस्रमेखी दस्ताने पहने जाते थे, जबकि टाँगों की रक्षा के लिए पहने जाने वाला कवच 'राग' कहलाता था। अश्व और हाथियों पर भी लौह की कडियों से बुनी हुई रक्षात्मक भूलेँ डाली जाती थी, जो पाखर कहलाती थी।

भालोच्यकालीन शस्त्रास्त्रों में घनुप-बाण का बहु प्रचलन था। बाणों में द्वितीया के चन्द्र-जसी आकृति का फल लगाकर अथवा उन्हें नली भाँदि में रखकर छोड़ने से उनकी प्रहार-क्षमता में अभिवृद्धि कर ली जाती थी। ज्वलनशील पदार्थों से युक्त कुहक बान जैसे अग्र्यस्त्रों का भी प्रयोग किया जाता था, जो सहार के साथ-साथ शत्रु दल में बड़ी अव्यवस्था पैदा कर देते थे। श्रीकृष्ण के सुदशन चक्र के प्रतिरूप 'चक्र' नामक अस्त्र का भी प्रयोग किया जाता था जिसमें उँगली या डंडा ढालकर चलाने पर वह सौ से लेकर दो सौ गज तक मार करता था। सेल साँग तथा बरछा और बरछी पूणतया लाहे से निर्मित होते थे, जिनका भार, उनकी सहार-क्षमता को अवश्य ही द्विगुणित कर देता होगा। भालोच्यकालीन अस्त्रों में विविध प्रकार के तोप, तमचो और बंदूक आदि का भी प्रयोग होता था। घुनुरनाल, ऊँटनाल, जजरवा या जजाल नामक तोपें ऊँटों पर से चलाई जाती थी। तमचे, बच्चो के खिलौने न होकर छोटी बंदूकें थीं। कडाबीन की बंदूक आँसू से निशाना लेकर चलाए जाने के स्थान पर पैतरा बदलकर चलाई जाती थी।

शस्त्रों में गुज भाँदि गण्टाकार शस्त्र प्रयुक्त किये जाते थे। जिरह और बख्तरों को चीरने के लिये नुकील शस्त्रों का प्रयोग किया जाता था। यमघर, विछुमा, पजा-कटार आदि शस्त्र पापने के काम आते थे। तलवारों की अनेक किस्में थीं। उनके नामों में भिन्नता का आघार, उनकी लम्बाई या चौड़ाई में अंतर होना, उनके फल

का भूतान कम या अधिक होता उसे कम म डानी गई साद्यों की सम्पत्ति तथा उक्त विभाग के प्रभु का नाम प्राप्ति तथ्य रहो थे । यह कृति व्याप्त थी कि युद्धाय पूजाया गजिन घोर का तृतीय प्रागुया स गजिन होता चाहिए ।

गिनात घोर पाताया का साता स घट्ट सम्बन्ध था । केन्द्रीय नरेश या यान्ताह की साता म विभिन्न ऐस सागत घोर उमराया की संय-टुकड़ियाँ सम्मिलित होती थीं, जिन्हें प्रायः अपनी धजाया घोर गिनातो के रगने का भी अधिकार हाता था । घन युद्धभयन के विभिन्न भागा म अनेक प्रकार की धजाएँ फहराती दृष्टिगत हाती थीं । गिनात' या गणाद्यो का युद्ध के प्रसंग म कई उद्देश्यो स प्रयोग किया जाता था । उनकी ध्वनि गिनातो स सनिय की युद्ध-गज्या का संदेश दिया जाता था । उन्हें बजाकर पताया करती हुई साता रोनी जाती थी तथा उनकी ध्वनि गिनातो से विजय की सूचना भी जाती थी । विजयी पक्ष की पराजित शत्रु के ध्वजा गिनातो को लूटने स गौरव-वर्द्धि हाती थी जबकि उनका लुट जाना बहुत ही अपमानजनक समझा जाता था ।

युद्ध-गज्या के समय अनेक प्रकार के रण-वाद्यो से भोजात्मक ध्वनियाँ या राग निकाले जात थे । इन्हें सिंधु, मारू और गौरी नामक रागो की सजाएँ दी जाती थी । इन रागो के प्रभाव से योद्धा अपने तन मन धन और गृहिणी आदि के माया मोह से विमुक्त होकर एक अपूर्व युद्धोन्माद से भूमने लगते थे । युद्धरागो के उन्मादक प्रभाव को और भी अधिक अभिव्यक्त करने के लिए ढाढ़ी जागरे, चारण और भाट भोजस्वी कडखे सुनाते थे । इनसे ऐसा दृश्य समुपस्थित हो जाता था कि कायरो के तो अग विकम्पित हांने लगते थे, जबकि घोरों के शरीर अदम्य उत्साह के कारण फूल उठते थे और उनके कबचो की कड़ियाँ तडकने लगती थी ।

आलोच्यवाल के युद्ध कारणो पर दृष्टिपात करते हुए क्षोभ होता है कि उनम से अधिकश मिथ्या स्वाभिमान और पारस्परिक राग द्वेष पर प्राप्त रहते थे । दिग्विजयाय निकले नरेश पराजित नरेशो के राज्यो को अपने राज्यो म नही मिलाते थे । वे उनसे अपनी अधीनता स्वीकार कराकर और भेंट मात्र ग्रहण करके उनके शासन को पूववत चलने देते थे । जिससे इन युद्धों का कोई स्थायी लाभ न होता था । इन्हें अह के तुष्टयय व्यथ के रक्तपात के अतिरिक्त और क्या सजा दी जा सकती है ? विवाहावसरो पर भी प्रायः युद्ध होते रहते थे । ये युद्ध नितान्त काल्पनिक नही है और हमे तो इन युद्धो म हांने वाले रक्तपात के लिए शास्त्रकार दोषी प्रतीत होते हैं जिन्होने धत्रियो के लिए विवाह के आठ प्रकारो म से युद्ध प्रधान 'राक्षस विवाह' पद्धति को प्रशस्त बताया है । आनुवंशिक रूप म चलने वाली शत्रुता म भी भारतीय नरेशो के स य वत का बडा हास होता था । अय युद्ध कारणो के मूल म प्रजा वसलता शरणागत रक्षा, ईर्ष्या-द्वेष स्वाधिकार की प्राप्ति, धम का प्रचार एव धम की रक्षा आदि कारण रहते थे ।

कटी नरेशो को मुक्त करने के शत स्वरूप उनसे अश्व गज और द्रव्य की

माँग के अतिरिक्त उनकी पुत्रिया के डोन भी माँगने की प्रथा बहुत प्रचलित थी। शत्रु के काप स त्राण पान के इच्छुक नरेश अपनी धार से भी इनमे विवाह सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा करते थे। यद्यक के रूप म शत्रु-पुत्रा का भी सेवाथ माँगने का प्रचलन था। शत्रु को लज्जित करन के लिए उसके नितम्बो पर वस्तुत ही दाग लगात की प्रथा थी। अथ दडा म शत्रु के नेत्र निवलवा लना, उस खदक म गिराकर उसम नमक का पानी भरवा देना तथा उसे कोल्हू म पिलवा देना आदि दण्ड प्रणानियाँ प्रचलित थी।

यदि कहा जाय कि आलाच्यकाल वीर-पुरुषा के लिए स्वर्णिम युग था तो अतिशयोक्ति न होगी। 'वीर भाग्या वसुधरा' की उक्ति हमारे आलोच्यकाल के सदम म अथ कानो से अधिक सत्य थी। और रासो का यह उद्धरण कि धरा के उपभोग के लिए सुन्दरता, उच्चकुलीनता या अथ उदात्त गुण आवश्यक नहीं हैं अपितु वह ता अश्व की टापा पर स्थित रहनी है जिसे मात्र कुशल अश्वारोही प्राप्त कर सकता है पूणतया चरिताथ भी मिलती है। वीर-पुरुषो को उत्कृष्ट के अनेक अवसर उपलब्ध थे। अपने पराक्रम के आधार पर वे जागीर प्राप्त करके सामत नियुक्त हो सकते थे। मुगलकाल मे भी शौर्य के आधार पर उच्च मनसब प्राप्त करना और फिर बेतन रूप मे जागीर प्राप्त करके उसके ऐश्वर्यों का उपभोग करना, यह भी वीर-पुरुषा के ही लिए सम्भव था।

आलाच्यकालीन राजनीतिक जीवन से सम्बद्ध कुछ विशेष रीतियाँ पर भी वीरकाव्य से प्रकाश पडता है। इनमे से प्रथम है, वीर लतनाओं की अमरगाथा से सम्बद्ध साका या जौहर की प्रथा जिसमे वे शत्रु के हाथा भ्रष्ट होने की अपथा अपनी इह नीला समाप्त करना वरण्य समझती थी। कदाचित यह प्रथा हमारी आलोच्य कालीन महित राजनीतिक दशा म ही विशेष प्रचलित हुई जिसके कारण को भी वीरकाव्य मे अभिव्यक्ति मिली है। कीर्तिलता और रणमल छद्म नामक कृतियों मे तुक सेना म ऐम घग्गडो की प्रधानता दिखाई गई है जिन्ह न दोन दुनिया की चिन्ता थी और न जोहू-बच्चा की। वे मदिरामत हाकर आठो याम खाते पीते रहते थे। दया उह छू तक न गई थी और शत्रु-पत्नियों को पकडकर बाजारो म वचना उहान अपना व्यवसाय बना रखा था। तात्पर्य यह है कि इ ही कारण से जौहर प्रथा का प्रचनन बडा होगा जबकि हिंदू नरेशो के पारस्परिक युद्धो म जौहर करने की आवश्यकता ही न पडती होगी।

स्त्रियों की तरह पुरुषो म भी जौहर करने की प्रथा थी। जब वे अपनी पराजय की समावना देना थे तो वे बन्धनग्रस्त होकर नाना प्रकार की यातनाएँ सहन करन की अपथा समरागण म वीरगति प्राप्त करना श्रेयस्कर समझते थे। अत तुलसीदल और शाबिग्राम आदि वाँचकर तथा मरण-वरण की आकांक्षा म वे शत्रु के दन पर टूट पडत थे।

महत्त्वपूर्ण युद्धा का नायकत्व करन वाले वीरा का चुनाव करन के लिए पान

के बीड़े का प्रयाग करने की भी प्रथा थी। राजरवार में बत्तन के ऊपर पाना का बीड़ा रग किया जाता था, त्रिसे उग मुझ का भार सहन करने का इच्छुक धीर उठाकर अपनी रीति का प्रकट कर देता था। इसी प्रथा से सादृश्य रगने वाली दूमरी परिपाटी यह थी कि शासन अपनी धीर से ही किसी याददा की मनोनीत करके उसे पान का बीड़ा, बत्तगी एवं धीर प्रदान करके सेवापत्रिय का भार सौंप देते थे। ये प्रथाएँ विशेषतः राजपूत-नरेशों से ही सम्बद्ध थीं। इसी भाँति सत्यासिधियों के वेग में गुप्ताचर भेजने, युद्धाभियानों के समय हरम से जाने तथा प्राण भिक्षा माँगत हुए घम से निष्क्रमण आदि की प्रथाएँ प्रचलित थीं।

# आधार ग्रन्थ-सूची

प्रथम का नाम

१ पृथ्वीराज रासो	सपावरक	तथा ० वि० मो० पाण्ड्या तथा	नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, १९०४ ई०	प्रकाशक
२ पृथ्वीराज रासो	डॉ० श्यामसुंदर दास	कविराज मोहनसिंह	साहित्य संस्थान, राजस्थान विश्वविद्यापीठ, जयपुर, २०१२ वि०	
३ परमाल रासो	डॉ० बाबूराम सक्सेना	डॉ० श्यामसुंदर दास	नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, १९७६ वि०	
४ कीर्तिलता	स० डा० दशरथ शोभा, डॉ० दशरथ शर्मा के 'रास और रासायनिकी काव्य' में संकलित	डॉ० श्यामसुंदर दास	इंडियन प्रेस, लिमिटेड प्रयाग, १९८६ वि०	
५ रणमल छन्द	स० डा० सरयूप्रसाद शर्मावाल	डॉ० श्यामसुंदर दास	नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, २०१६ वि०	
६ राव जत सी रो रासो	'शकवरी दरवार के हिन्दी कवि के परिशिष्ट में प्रकाशित	डॉ० श्यामसुंदर दास	सखनऊ विश्वविद्यालय, २००७ वि०	
७ -नरहरि और तानसेन के प्रशस्ति पत्रके सुष्ठु छन्द	स० डा० श्यामसुंदर दास	डॉ० श्यामसुंदर दास		
८ गग-कवित्त	स० डा० श्यामसुंदर दास	डॉ० श्यामसुंदर दास		
९ रतन बावनी	स० डा० श्यामसुंदर दास	डॉ० श्यामसुंदर दास		
१० वीरचरित्र	स० डा० श्यामसुंदर दास	डॉ० श्यामसुंदर दास		
११ जहाँगीर जत चन्द्रिका	स० डा० श्यामसुंदर दास	डॉ० श्यामसुंदर दास		
१२ न्यामलाई रासो	स० डा० श्यामसुंदर दास	डॉ० श्यामसुंदर दास		
१३ अलिफलाई की पद्यी	स० डा० श्यामसुंदर दास	डॉ० श्यामसुंदर दास		

नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, २०१७ वि०  
हि दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद, १९५९ ई०  
राजस्थान पुरातत्त्व मन्दिर, जयपुर, २०१० वि०

के धीरे का प्रयोग करने की भी प्रथा थी। राजदरबार में बरग दिया जाता था, त्रिगे उग मुठ का भार बहुत कम थापनी स्त्रीवृत्ति का प्रकटा कर देना था। इसी प्रथा में परिपाटी यह थी कि शासन थापनी ओर से ही किसी प्रकार का धीड़ा, कसती एक धीर प्रदान करने सेनापति प्रथाएँ विशेषतः राजपूत-नरेशों से ही सम्बद्ध थीं। इ गुप्ताचर भेजने, मुठामियाओ के समय हरम से जाने से त तित्पमण आदि की प्रथाएँ प्रचलित थीं।

- २६ हम्पीरूठ  
३० भगवन्तराय की विरुदावली  
३१ श्री भगवन्तराय लीची का जगनामा

- अप्रकाशित  
अप्रकाशित  
अप्रकाशित

## सहायक ग्रन्थ-सूची

### संस्कृत

- १ अग्निपुराणम्  
२ वाच्य प्रकाश  
३ बौद्धिकीय सत्यशास्त्र  
४ भवृ हरि शतकत्रयम्  
५ महाभारत  
६ रम गगाधर  
७ बालमीवि रामायण  
८ वाचस्पत्यम्  
९ जन्म कल्पद्रुम  
१० साहित्य दपण  
११ स्मृति सदभ  
१२ हलानुष कोश

- मनसुखराय मोर  
स० वि० ग० झाप्टे  
अनु० प० गगाप्रसाद शास्त्री  
स० दा० घ० कोसेवी  
अनु० प० गगाप्रसाद शास्त्री  
स० मथुरान द शास्त्री  
स० नारायण स्वामी अय्यर  
सक० तारात्राय भट्टाचार्य  
सक० राधाकांत देव  
स० शालिग्राम शास्त्री

- गोपाल प्रिंटिंग वर्क्स, बनकत्ता, १९५७  
अनन्दाश्रय मुद्रणालय, १९२१ ई०  
महाभारत कार्यालय, मालीबाडा, दिल्ली,  
२०१० वि०  
भारतीय विद्याभवन, बंबई  
महाभारत प्रकाश मंडल, दिल्ली  
निणय सागर प्रेस, बंबई, १९३९ ई०  
मद्रास, १९३३  
चौलम्बा संस्कृत मीरीज, बनारस, २०१८ वि०  
बही, १९६१ ई०  
मोतीलाल बनारसीदास, १९६१ ई०  
५ क्लाइव रोड, कलकत्ता, १९५२ ई०  
उत्तरप्रदेश सरकार, लखनऊ, २०१४ वि०



प्रश्न का नाम	सपादक	प्रकाशक
१४ गौरा वादल की कथा	प० अयोध्याप्रसाद शर्मा	तरुण भारत प्रयागवी कार्यालय प्रयाग, १९६१ वि०
१५ शिवराज भूषण	ब्रजरत्नदास	रामनारायण लाल, इन्द्रावावा, १९२० ई०
१६ शिवा नावनी	डा० श्यामसुन्दर दास	नागरी प्रचारिणी मभा, काशी, जन १९०३ ई०
१७ छत्रसाल दशक	स० डा० मोतीलाल मेनारिया	नागरी प्रचारिणी मभा, काशी मन् १९०३ ई०
१८ छत्रप्रकाश	स० राधाकृष्ण दास, विश्वीरोलाल	यही
१९ राजविलास	गोस्वामी	नागरी प्रचारिणी मभा, काशी, १९०८ ई०
२० जगनामा	स० डा० श्यामसुन्दर दास	यही १९८० वि०
२१ हम्मीर रासो	स० राधाकृष्ण दास	नागरी प्रचारिणी मभा, भा० १०, १९८६ वि०
२२ मुजानचरित	—	नागरी प्रचारिणी मभा, काशी, म० २०१६ वि०
२३ करहिया को रायसो	प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वसन्त	दी वित्तय राय रिषी पालक प्रतियर की पत्रिका १९६२ ६३ म प्रकाशित
२४ हिम्मत बहादुर विरदावली	गयावली' म प्रकाशित	इण्डियन प्रेम लिमिटेड, प्रयाग
२५ प्रतापसिंह विरदावली	—	माहेश्वरी बुक डिपो, कलकत्ता म० २००६ वि०
२६ प्रतापरसो	जगन्नाथदास रत्नाकर	
२७ हम्मीरदूठ (चन्द्रशेखर वाजपेयी कृत)	सी० ए० इलियट	
२८ आरूहसण्ड		

- २६ हम्मिरहूठ  
३० भगवन्तराय जी विरुन्धली  
३१ श्री भगवन्तराय लीची या जगनामा

- मन्मथसिंह  
मन्मथसिंह  
मन्मथसिंह

## सहायक ग्रन्थ-सूची

### संस्कृत

- १ चण्डिपुराणम्  
२ वाच्य प्रकाश  
३ कौटिलीय अर्थशास्त्र  
४ भक्त हरि भक्तचरणम्  
५ महाभारत  
६ रत्न गंगाधर  
७ बाल्मीकि रामायण  
८ वाचस्पत्ययम्  
९ शब्द-कल्पद्रुम  
१० साहित्य दण्ड  
११ स्मृति मदनम्  
१२ हनुमत्पुत्र कोश

- मन्मथपुराण मोर  
सं० वि० ग० छाट्ट  
सजु० प० गंगाधरदास गार्हो  
सं० दा० प० सोमेशी  
सजु० प० गंगाधरदास गार्हो  
ग० मधुसूदन गार्हो  
ग० नारायण स्वामी भल्लर  
सत० गाराणय नृनाथ  
गङ्ग० सभाषास्त्र अत्र  
सं० साहित्यमय गार्हो  
स० जयगणेश ओजी

- गोपाल त्रिनिदिय चर्च, कनकना, १९५७  
घाण्ड्यायय मुन्नायय, १९२१ ई०  
मद्राभारत कायायय, मन्मथीशररा, सिन्धी,  
२०१० दि०  
भारतीय सिन्धी-कवय, बम्बई  
महाभारत प्रकाश गणेश, सिन्धी  
सिन्धी गणेश प्रेस, बम्बई, १९३९ ई०  
मद्रास, १९३३  
योगेश्वरगणेश गोरीय, बल्लार २०१८ दि०  
बही, १९६१ ई०  
मोनीशान बनारसीय, १९११ ई०  
५ बल्लार रोड, बल्लार १९५२ ई०  
उत्तरप्रदेश गणेश, गाराज, २०१४ दि०

प्रश्न का नाम	सपादक	प्रकाशक
३४ समाज शास्त्र-मन्त्रिय	प्रो० रामलाल सिंह	रत्न प्रकाशन मन्ट्रि, आगरा, १९५८ ई०
३५ सामाजिक विचारक	अनु० रघुराज गुप्त	भारती भवन, देहरादून, १९६० ई०
३६ हिन्दी शब्द सागर	डॉ० श्यामसुन्दर दास	काशी ना० प्रचारिणी सभा, १९२८ ई०
३७ हिन्दू सत्कार	डॉ० राजबली पाण्डेय	चौखम्बा प्रकाशन, विद्याभवन, वाराणसी, २०१४ वि०
३८ हिन्दी वीरकाव्य	डा० टीकनसिंह तोमर	हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, १९५४ ई०
३९ हिन्दी वीरकाव्य	डॉ० उदयनारायण तिवारी	भारती भवन, सीडर प्रेस इलाहाबाद, २०१२ वि०
४० हिन्दू सभ्यता	डॉ० राधाकुमुद मुखर्जी	राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, १९५५
४१ हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता	डॉ० वेनीप्रसाद	हिन्दुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग, १९३१
४२ हिन्दी साहित्य का बहल इतिहास, भाग १	डॉ० राजबली पाण्डेय	नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
४३ हिन्दू भारत का उत्कर्ष	चिन्तामणि विनायक वध	ज्ञानमंडल यनासय काशी, स० १९८६ वि०
४४ हिन्दी भारत का भ्रत भयावृत्	वही	वही, स० १९८५ वि०
४५ मध्ययुगीन भारत, भाग ३	भगरबद नाहटा	प्राचीन साहित्य शोध-संस्थान, उदयपुर, १९४७ ई०
४६ राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित	प० विश्वनाथ प्रसाद	ना० प्र० सभा, काशी, २०१५ वि०
४७ प्रयो की खोज, भाग २		नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, २०२१ वि०
४८ हस्तलिखित हिन्दी प्रयो का भण्डारखर्चा		
४९ नैमासिक विवरण, १९४१-४३		
५० हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण		



ग्रंथ का नाम	संपादक	प्रकाशक
३४ समाज शास्त्र-परिचय	प्रो० रामलाल सिंह	रतन प्रकाशन मन्दिर, भागरा, १९५८ ई०
३५ सामाजिक विचारक	प्रभु० रघुराज गुप्त	भारती भवन, देहरादून, १९६० ई०
३६ हिंदी शब्द सागर	डॉ० श्यामसुन्दर दास	काशी ना० प्रचारिणी सभा, १९२८ ई०
३७ हिंदू संस्कार	डॉ० राजबली पाण्डेय	चौखम्बा प्रकाशन, विद्याभवन वाराणसी, २०१४ वि०
३८ हिंदी वीरकाव्य	डॉ० टीकमसिंह तोमर	हिंदुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, १९५४ ई०
३९ हिंदी वीरकाव्य	डॉ० उदयनारायण तिवारी	भारती भंडार लीडर प्रेस, इलाहाबाद, २०१२ वि०
४० हिंदू सभ्यता	डॉ० राधाकुमुद मुखर्जी	राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, १९५५
४१ हिंदुस्तान की पुरानी सभ्यता	डॉ० वेणीप्रसाद	हिंदुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग, १९३१
४२ हिंदी साहित्य का बहुत इतिहास, भाग १	डॉ० राजबली पाण्डेय	नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
४३ हिंदू भारत का उत्कर्ष	चिन्तामणि विनायक वध वहो	पानमडल यशालय काशी, स० १९८६ वि० वहो, स० १९८५ वि०
४४ हिंदी भारत का भूत भ्रमति	मध्ययुगीन भारत भाग ३	प्राचीन साहित्य शोध-संस्थान, उदयपुर, १९५७ ई०
४५ राजस्थान में हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज, भाग २	प्र० विश्वनाथ प्रसाद	ना० प्र० सभा, काशी, २०१५ वि०
४६ हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों का भण्डारवा त्रैमासिक विवरण, १९४१-४३		नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, २०२१ वि०
४७ हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण		



- |    |                                                                                                             |                                   |                                                    |
|----|-------------------------------------------------------------------------------------------------------------|-----------------------------------|----------------------------------------------------|
| 8  | Alberuni s India                                                                                            | Dr Edward C Sacha                 | K P T Trubner & Co London,<br>1914                 |
| 9  | Caste In India                                                                                              | J H Hutton                        | Oxford University Press, 1961                      |
| 10 | Contemporary Sociological Theories                                                                          | Sorokin                           | Happer & Brothers, New York,<br>1928               |
| 11 | Encyclopedia of Social Sciences                                                                             | Editor n Chief, R A Selg-<br>mann | The Macmillan Co New York, 1935                    |
| 12 | Early Chauhan Dynasties                                                                                     | Dr Dasharath Sharma               | S Chand & Co Ltd , Delhi, 1959                     |
| 13 | International D,ctionary                                                                                    | Webster                           | H O Houghton & Co Cambridge,<br>1945               |
| 14 | Indian travels of Thevent and<br>Caren                                                                      | Ed Dr S N Sen                     | The National Archives of India,<br>New Delhi, 1949 |
| 15 | Memories on the history, Folklore<br>& distribution of the races of the<br>North Western Provinces of India | Sir Henry, M Elliot               | Trubner & Co , London, 1869                        |
| 16 | Mogul India                                                                                                 | N Manucci                         | John Murray Albemarle street,<br>London, 1907      |
| 17 | Mughul Administration                                                                                       | Dr Jadu Nath Sarkar               | M C Sarkar & Sons, Calcutta,<br>1952               |
| 18 | Military History of India                                                                                   | Sir Jadu Nath Sarkar              | M C Sarkar & Sons, Calcutta,<br>1960               |

ग्रन्थ का नाम	संपादक	प्रकाशक
19 Military History of Sikhs	Dr Fauza Singh Bajwa	Moti Lal Banarasi Dass, Delhi 6.
20 Society & Culture in Mughul age	Dr P N Chopra	Shiv Lal Aggarwal & Co, Agra, 1955
21 The Socio economic history of India	Dr Bharat Pd Majumdar	Farma K L Mukhopadhyay, Calcutta, 1960
22 Society	R M Maciver and H C Page	Macmillan & Co, London, 1957
23 Social life in North India	Dr B N Sharma	Typed copy in the Delhi University Library
24 Theories of Society—Vol II	Talcott Parsons	The Free Press of, Glencol America —1961
25 The army of the Indian Mughuls	William Irvine	Eurasia Publishing house, New Delhi, 1962
26 The Mughul Empire	Dr Asirbadi Lal Srivastava	Shiv Lal Aggarwal and Co Agra, 1959
27 The Socio Religious Condition of North India	Dr Vasudeva Upadhyay	Chowkhamba Skt Series, Banaras, 1964
28 Travels in the Moghul Empire by Francios Bernier	Edtd Archibald constable	Archibald constable and Co, Parliament Street, S W, 1891
29 Travels in India by J B Tavernier	Edtd William Crooke	Oxford University Press, 1925



## शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पक्षित	अशुद्ध	शुद्ध
४४	१३	घनापेक्षा	घनापेक्षी
४६	६	सामेश्वर	सोमेश्वर
४६	३२	उष्ट्रवाही	उष्ट्रवाही
५१	५	बाँमन	बाँमन
५२	२६	बुदक	बुदकद ।
५३	१६	अभिदान	अभियान
५७	१२	प्रियाकुवरि	प्रियाकुँवरि
५७	२१	धम	कम
५७	३०	जगगु	जगनु
५८	५८	क्षत्रिय	क्षत्रियो
६१	१४	दधिपर	दधिपट
६१	२५	काम	नाम
६३	२३	पौरव	पौरव
६४	२७	धाजिन	धाजिन
६८	२	बटादुर	बहादुर
७३	२०	मँठ	मूठ
८०	३२	घर	धर
८३	१७	कार्याघर	कार्याघार
८४	३	सूदो	सूदो
८४	७	यज्ञोपवीत	यज्ञोपवीत
८४	१३	कुक	शुक
८५	२३	भागे	धागे
८६	१०	होम	डोम
८६	१८	डालन	डालन
८६	२४	आप	धाय
८६	१२७	द्व० प्र०	छ० प्र०
८८	१६	शुद्धावसरो	युद्धावसरो

पृष्ठ	पङ्क्ति-	अशुद्ध -	शुद्ध
८८	२४	बालुकाराइ	बालुकाराइ
८८	३०	रष्यि	रष्यि
८९	२९	घर	घर
९०	२४	भट्टहु	भट्टहु
९०	३२	नीति के	नीच जाति के
९४	२	अण्ट	अण्ट
९४	४	दोहते -	छोहते ।
९४	१४	में	से
९४	२१	मेव	भेव
९५	९	मुसलान	मुसलमान
९६	२७	गरुज	गरुभ
९६	२९	कथान	कथान ।
९६	३२	मकट	मकट
९७	१०	नजबवान ;	नजबपान्
९७	१७	तक्षर	तत्तार
९७	१७	बदली	बलकी
१०२	२९	तयेस	तपोस
१०२	१७	रनखी	रनसी
११४	१८	घग्गड	घग्गड
१५०	२४	हको ।	इको
१७१	४	भरग ;	चरग
१७८	२७	अममयी	अथमयी ।
२२७	८	प्रियाकुवरि	प्रियाकुवरि ।
२३०	१८	लाख ;	लाखन
२३१	३	गेंठि	गठि ।
२३१	१२	दाहिनी	दाहिमी
२४५	२७	माणे	भाय
२४७	४	स्वचित्रो	स्व चित्त ।
२५६	२५	मुरण	मुरज
३२५	२०	कलयुग	कलियुग
३३६	१७	प्रववतादि	प्रवालादि ।
३४३	१७	निष्कप	निकप ।
३५०	२०	तल	तेल ।
३७०	२१	भाशाभों	भाजाभो

पृष्ठ	पत्रित	समाद	शुद्ध
३७०	२६	प्रजा	प्रजा जा
३७७	१३	सोयी	सोनी
३७८	२२	मत्रित	मत्रिरर
३८१	१५	हृषपति	हृषपति
३८४	३	सोषा	सोरी
३८५	२	सधिवार	सधिवारी
६८६	१७	तटगीत	तटगीतगर
३८६	२८	घातभयन	घातभयन
३६१	५	को	े
३६४	१०	कटन	कटन
३६८	२४	सूय	सूयं
४०७	२४	कणन	मघन
४०८	२	बाभे	बाभे
४०६	१	जमपर	जमपर
४०६	२	के	का
४०६	१०	हृषनारिका	हृषनारिका
४०६	१०	कति	कति
४०६	११	सर्प	/
४०६	१२	जमुग	जमुग
४०६	१६	गिरिनिका	गिरिनिका
४०६	२१	नका उदरी	नका उदरी
४१०	७	त्रिभंग	त्रिभंग
४११	१	जमपर	जमपर
४११	६	विदम न	त्रिभंग
४१२	३ ७ २२	नका	नका
४१३	१२	गिरन	गिरन

